गुजराती

प्रेमानन्द रसामृत

भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

गुजराती

प्रेमानन्द रसामृत

(ओखा-हरण, नलोपाख्यान, सुदामा-चरित्र)

[नागरी लिपि में मूल गुजराती पाठ तथा हिन्दी गद्यानुवाद]

रचयिता

प्रेमानन्द

अनुवादक

डॉ० गजानन नरसिंह साठे

डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ—२२६००३

'प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ॥'

प्रथम संस्करण—१९८३-८४ ई०

पृष्ठसंख्या—१८×२२÷८=८+४९६=५०४

मूल्य— ३५·०० रुपया

मुद्रक
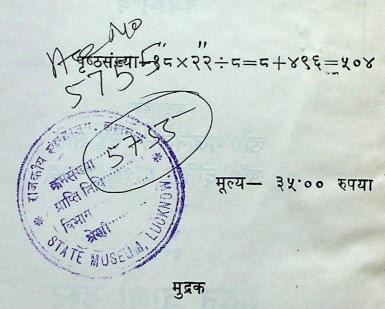
वाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ-२२६००३

विश्वनागरी लिपि

।। ग्रामे-ग्रामे सभा कार्या, ग्रामे-ग्रामे कथा शुभा ।।

सब भारतीय लिपियाँ सम-वैज्ञानिक हैं !

All the Indian Scripts are equally scientific !

भारतीय लिपियों की विशेषता ।

'संसार की लिपियों में नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक है', यह कथन बिलकुल ठीक है। परन्तु यह कहते समय हमें याद रखना चाहिए कि वह सर्वाधिक वैज्ञानिकता, केवल हिन्दी, मराठी, नेपाली, लिखी जानेवाली लिपि में नहीं, वरन् समस्त भारतीय लिपियों में मौजूदहै। क, च, त, प आदि के रूपों में कोई वैज्ञानिकता नहीं है। वैज्ञानिकता है लिपि काध्वन्यात्मकहोना। नियमित स्वरों का पृथक् होना। अधिक सेअधिक व्यंजनोंका होना। सबको एक 'अ' के आधार पर उच्चरित करना। ['अ' अक्षर-स्वर, सकल अक्षरोंका उस भाँति मूल आधार। सकलविश्व का जिस प्रकार'भगवान्'आदि है जगदाधार।]एक अक्षर से केवल एक ध्वनि। एक ध्वनि के लिए केवल एक अक्षर। स्माल्, कैपिटल्, इटैलिक्स् के समान अनेकरूपा नहीं; बस एकही रूप में लिखना, बोलना, छापना और प्रत्येक अक्षर का समान वजन पर एकाक्षरी नाम। उच्चारण-संस्थान

गुजराती - देवनागरी वर्णमाला				
અ अ	આ आ	ઇ इ	ઈ ई	ઉ उ
ઊ ऊ	ઋ ऋ	એ ए	ઐ ऐ	ઓ ओ
	ઔ औ	અં अं	અઃ अः	
ક क	ખ ख	ગ ग	ઘ घ	ઙ ङ
ચ च	છ छ	જ ज	ઝ झ	ઞ ञ
ટ ट	ઠ ठ	ડ ड	ઢ ढ	ણ ण
ત त	થ थ	દ द	ધ ध	ન न
પ प	ફ फ	બ ब	ભ भ	મ म
ય य	ર र	લ ल	વ व	શ श
ષ ष	સ स	હ ह	ળ ळ	ક્ષ क्ष
	ત્ર त्र		જ્ઞ ज्ञ	

के अनुसार अक्षरों का कवर्ग, चवर्ग आदि में वर्गीकरण। फिर प्रत्येक वर्ग के अक्षरों का क्रम से एक ही संस्थान में थोड़ा-थोड़ा ऊपर उठते हुए अनुनासिक तक पहुँचना, आदि-आदि ऐसे अनेक गुण हैं जो अभारतीय लिपियों में एकत्र, एकसाथ नहीं मिलते। किन्तु ये गुण समान रूप से सभी भारतीय लिपियों में मौजूद हैं, अत: वे सब नागरी के समान ही विश्व की अन्य लिपियों की अपेक्षा 'सर्वाधिक वैज्ञानिक' हैं। सब ब्राह्मी लिपि से उद्भूत हैं। ताड़पत्र और भोजपत्र की लिखाई तथा देश-काल-पात्र के अन्य प्रभावों के कारण विभिन्न भारतीय लिपियों के अक्षरों में यत्र-तत्र परिवर्तन, हिन्दी वाली 'नागरी लिपि' को कोई श्रेष्ठता प्रदान नहीं करता। भारत की मौलिक सब लिपियाँ 'नागरी लिपि' के समान ही श्रेष्ठ हैं।

नागरी लिपि को 'भी' अपनाना श्रेयस्कर क्यों ?

"नागरी लिपि" की केवल एक विशेषता है कि वह कमोबेश सारे देश में प्रविष्ट है, जबकि अन्य भारतीय लिपियाँ निजी क्षेत्रों तक सीमित हैं। वहीं यह भी सत्य है कि नागरी लिपि में प्रस्तुत और विशेष रूप से हिन्दी का साहित्य, अन्य लिपियों में प्रस्तुत ज्ञानराशि की अपेक्षा कम और नवीनतर है। अत: समस्त भाषाओं की ज्ञानराशि को, सर्वाधिक फैली लिपि "नागरी" में अधिक से अधिक लिप्यन्तरित करके, क्षेत्रीय स्तर से उठाकर सबको सारे राष्ट्र में, यहाँ तक कि विश्व में ले आना परम धर्म है। विश्व की सब भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान (सत्साहित्य) है आत्मा, और 'नागरी लिपि' होना चाहिए उसका पर्यटक शरीर।

अन्य लिपियों को बनाये रखना भी कर्तव्य है।

वस्तुत: यह परम धर्म है कि समस्त सदाचार साहित्य को नागरी में तत्परता और प्राचुर्य में लिप्यन्तरित करना। किन्तु साथ ही यह भी परम धर्म है कि अन्य लिपियों को उत्तरोत्तर उन्नति के साथ बरक़रार रखना। यह इसलिए कि सबका सब कभी लिप्यन्तरित नहीं हो सकता। अत: अन्य लिपियों के नष्ट होने और नागरी लिपि मात्र के ही रह जाने से अलिप्यन्तरित हमारी समस्त ज्ञानराशि उसी प्रकार लुप्त-सुप्त होकर रह जायगी जैसे पाली, प्राकृत और अपभ्रंश का वाङ्मय रह गया। हमारे ही राष्ट्र का प्राचीन आप्तज्ञान विलुप्त हो जायगा।

नागरी लिपि वालों पर उत्तरदायित्व विशेष !

इन दोनों परम धर्मों की पूर्ति का सर्वाधिक भार नागरी लिपि वालों पर है, इसलिए कि उनको 'सम्पर्क लिपि' का श्रेष्ठ आसन प्रदत्त है। मैं कह सकता हूँ कि उन्होंने अपने कर्तव्य का, जैसा चाहिए था, वैसा निर्वाह नहीं किया। परन्तु उसकी प्रतिक्रिया में अन्य लिपि वालों को भी "अपराध के जवाब में अपराध" नहीं करना चाहिए। 'कोयला' बिहार का है

अथवा सिंहभूमि का है, इसलिए हम उसको नहीं लेंगे, तो वह हमारे ही लिए घातक होगा। कोयले की क्षति नहीं होगी। अपनी लिपियों को समुन्नत रखिए, किन्तु नागरी लिपि को भी अवश्य अपनाइए।

उपर्युक्त परिवेश में नागरी लिपि का पठन और समग्र श्रेष्ठ साहित्य का नागरी में लिप्यन्तरण तो आवश्यक है ही, किन्तु अन्य लिपियाँ भी अपनी लिपि में दूसरी भाषाओं के सत्साहित्य को लिप्यन्तरित तथा अनूदित कर सकती हैं। 'अधिकस्य अधिकं फलम्।' ज्ञान की सीमा नहीं निर्धारित है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने भी अवधी के रामचरितमानस को ओड़िआ भाषा में गद्य एवं पद्य अनुवाद-सहित, ओड़िआ लिपि में लिप्यन्तरित किया है। परन्तु सम्पर्क और एकीकरण की दृष्टि से 'नागरी लिपि' अनिवार्य है।

नागरी लिपि की वैज्ञानिकता मानव मात्र की सम्पत्ति है।

अब एक क़दम आगे बढ़िए। भारतीय लिपियों की सर्वाधिक वैज्ञानिकता युगों की मानव-शृंखला के मस्तिष्क की उपज है। क्या मालूम इस अनादि से चल रहे जगत् में कब, क्या, किसने उत्पन्न किया? भारत संयोग से इस समय इस विज्ञान का कस्टोडियन् है, स्रष्टा नहीं। भारत भी न जाने कब, कहाँ तक और कितना था? अतः हम भारतीयों को नागरी लिपि के स्वामित्व का गर्व नहीं होना चाहिए। वह आज के मानव के पूर्वजों की देन है, सबकी सम्पत्ति है, सकल विश्व उसका समान गौरव से उपयोग कर सकता है। हमारा 'अहम्' उस लिपि की उपयोगिता को नष्ट कर देगा, जिसके हम सँजोये रखनेवाले मात्र हैं। किन्तु विदेशों में बसनेवाले बन्धुओं को भी नागरी लिपि के गुणों को अपने ही पूर्वजों की उपज मानकर परखना चाहिए। ये गुण इस निबन्ध के प्रथम अनुबन्ध में अधिकांशतः वर्णित हैं। न परखने पर उनकी क्षति है, विश्व की क्षति है। अरब का पेट्रोल हम नहीं लेंगे, तो क्षति किसकी होगी? पेट्रोल की नहीं, अपनी ही।

फिर याद दिला देना जरूरी है कि क, प आदि रूपों में वैज्ञानिकता नहीं है। वे काफ़, पे और के, पी, जैसे ही रूप रख सकते हैं, किन्तु लिपि में 'अनुबन्ध प्रथम' में ऊपर दिये हुए गुणों और क्रम को अवश्य ग्रहण करें। और यदि एक बनी-बनाई चीज़ को ग्रहण करके सार्वभौम सम्पर्क में समानता और सरलता के समर्थक हों, तो 'नागरी लिपि' के क्रम को अपनी पैतृक सम्पत्ति मानकर, ग़ैर न समझकर, मौजूदा रूप में भी ग्रहण कर सकते हैं। वह भारत की बपौती नहीं है। आज के मानव के पूर्वजों की वह सृष्टि है। इससे विश्व के मानव को परस्पर समझने का मार्ग प्रशस्त होगा।

नागरी लिपि में अनुपलब्ध विशिष्ट स्वर-व्यञ्जनों का समावेश।

हर शुभ काम में कजी निकालनेवाले एक दूर की कौड़ी यह भी लाते हैं कि "नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक होते हुए भी अपूर्ण है और अनेक स्वर-व्यंजनों को अपने में नहीं रखती। उनको कहाँ तक और कैसे समाविष्ट

किया जाय ?" यह मात्र तिल का ताड़ है। मौजूदा कर्तव्य को टालना है।

अल्बत्ता अन्य भाषाओं में कुछ व्यंजन ऐसे हैं जो नागरी में नहीं हैं— किन्तु अधिक नहीं। भारतीय भाषा उर्दू की क़ ख़ ग़ ज़ फ़, ये पाँच ध्वनियाँ तो बहुत समय से नागरी लिपि में प्रयुक्त हो रही हैं। दुःख है कि आज़ादी के बाद से राष्ट्रभाषा के पक्षधर ही उनको ग़ायब करने पर लगे हैं। इसी प्रकार मराठी ळ है। इनके अतिरिक्त अरबी, इब्रानी आदि के कुछ व्यञ्जन हैं, किन्तु उनको नागरी की दैनिक लिपि में अनिवार्यतः रखना आवश्यक नहीं। विशिष्ट भाषाई कार्यों में उन विशिष्ट भाषाई व्यंजनों को चिह्न देकर दरसाया जा सकता है।

तदर्थ अरबी लिपि का आदर्श सम्मुख।

और यह कोई नयी बात नहीं। नितान्त अपरिवर्तनशील कहे जाने वालों की लिपि 'अरबी' में केवल २७-२८ अक्षर होते हैं। भाषा के मामले में वे भी अति उदार रहे। "अिलम चीन (अर्थात् दूर से दूर) से भी लाओ"— यह पैग़म्बर का कथन है। जब ईरान में, फ़ारसी की नई ध्वनियों च, प, ग, आदि से सामना पड़ा तो उन्होंने उनको अरबी-पोशाक चे, पे, गाफ़ पहना दी। जब हिन्दोस्तान आये तो ट, ड, ड़ आदि से सामना पड़ने पर अरबी ही जामे में टे, डाल, ड़े आदि तैयार कर लिये। यहाँ तक कि सिन्धी में नागरी के सब महाप्राण और अनुनासिक, तथा सिन्धी के विशिष्ट अन्तःस्फुट अक्षरों को भी अरबी का लिबास पहना दिया गया। फिर 'नागरी' वाले तो औदार्य का दावा करते हैं, उनको परेशानी क्या है? और नागरी में भी तो परिवर्तन होते रहे हैं। ऋग्वेद के प्रथम मंत्र में प्रयुक्त ळ को छोड़ चुके हैं, और ड़, ढ़ आदि को अवर्गीय दशा में जोड़ चुके हैं। नागरी लिपि में कुछ ही व्यंजनों का अभाव है। उनमें से कुछ को स्थायी तौर पर और कुछ को अस्थायी प्रयोग के लिए गढ़ सकते हैं। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने यह सेवा बड़ी सरलता, सफलता और सुन्दरता से की है।

स्वर और प्रयत्न (लहजा) का अन्तर।

अब रहे स्वर। जान लीजिए कि प्रमुख स्वर तीन ही हैं— अ, इ, उ; उनसे दीर्घ, संयुक्त (डिप्थांग) आदि बनते हैं। अतिदीर्घ, प्लुत, लघु, अतिलघु आदि फिर अनेक हैं जो विश्व में अनेक रूपों में बोले जाते हैं। भारतीय वैदिक एवं संस्कृत व्याकरण में अनेक हैं। वे स्वतंत्र स्वर नहीं हैं, प्रयत्न हैं, लहजा हैं। वे सब न लिखे जा सकते हैं, न सब सर्वत्र बोले जा सकते हैं। डायाक्रिटिकल मार्क्स कोशों में छाप-छापकर चमत्कार भले ही दिखा दिया जाय, प्रयोग में तो, "एक ही रूप में", अपने निजी शब्द निजी देशों में भी नहीं बोले जाते। स्वर क्या, व्यंजन तक। एक शब्द "पहले" को लीजिए। सब जगह घूम आइए, देखिए उसका उच्चारण किन-किन प्रकार से होता है। एक बिहार प्रदेश को छोड़कर कहीं भी "पहले" का शुद्ध

उच्चारण सुनने को नहीं मिलेगा। पंजाब, बंगाल, मद्रास के अंग्रेज़ी के उद्भट विद्वान् अंग्रेज़ी में भाषण देते हैं—उनके लहजे (प्रयत्न) बिलकुल भिन्न होते हैं। फिर भी न उनका उपहास होता है, न अंग्रेज़ी भाषा का ह्रास।

शास्त्र पर व्यवहार की वरीयता।

शास्त्र और विज्ञान से हमको विरोध नहीं। लिपि की रचना, शोध, परिमार्जन, देश-काल-पात्र के अनुसार करते रहिए, परन्तु व्यवहारिकता को अवरुद्ध मत कीजिए। खाद्यपदार्थ के तत्त्वों का गुण-दोष, परिमाण, संतुलन, न्यूनाधिक्य, और खानेवाले की शक्ति के साथ उनका समन्वय, यह सब स्तुत्य है, कीजिए। किन्तु ऐसा नहीं कि उस समीक्षा के पूर्ण होने तक कोई भूखा रहकर मर ही जाय। थाली रखी है, उसे भोजन करने दीजिए। आज सबसे ज़रूरी है राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का एक-दूसरे की ज्ञानराशि को समझने के लिए एक सम्पर्क लिपि की व्यापकता।

'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने स्थायी और मुक़ामी तौर पर अनेक स्वर-व्यंजनों की सृष्टि की है। दक्षिणी भाषाओं में प्रयुक्त एकार तथा ओकारकी ह्रस्व, दीर्घ—दोनों मात्राएँ हम प्रयोग में ला रहे हैं। पढ़ने दीजिए, बढ़ने दीजिए। समस्त भाषाओं के ज्ञान-भण्डार को निजी क्षेत्रों से उठाकर धरातल पर नागरी लिपि के माध्यम से पहुँचाइए। नागरी लिपि मानव के पूर्वज की सृष्टि है, मानव मात्र की है। यहाँ से योरोप तक उसकी पहुँच है। यूरोपियों की लिपि-शैली नागरी थी। अक्षरों के रूप कुछ भी रहे हों। किन्हीं कारणों से सामीकुलों में भटककर अलफ़ा-बीटा के क्रम को थोड़े अन्तर के साथ अपना लिया। फिर पुराने संस्कारों से याद आया, तो स्वर-व्यंजन पृथक् कर दिये। किन्तु उनके क्रम-स्थान जैसे के तैसे मिले-जुले रहे। सामीकुल की भाषाओं ने भी प्रमुख स्वर तीन ही माने हैं, ज़बर-ज़ेर-पेश (अ इ उ)। ै और ौ का उच्चारण अरबी, संस्कृत, अवधी और अपभ्रंश का एक जैसा है— (अई, अऊ)। किन्तु खड़ी बोली व उर्दू के अै, और औ, ऐनक, औरत जैसे। यह स्वरों की भिन्नता नहीं है, वरन् लहजा (प्रयत्न) की भिन्नता है।

पूर्ण वैज्ञानिक कोई वस्तु मनुष्य के पल्ले नहीं पड़ सकती। "पूर्ण विज्ञान" भगवान् का नाम है। सा-रे-ग-म-प-ध-नी, ये सात स्वर; उनमें मध्य, मन्द, तार; कुछ में तीव्र, कोमल—बस इतने में भारतीय संगीत बँधा है। उनमें भी कुछ अदा नहीं हो सकते, अनुभूति मात्र हैं। किन्तु क्या इतने ही स्वर हैं? संगीत के स्वरों का इनके ही बीच में अनंत विभाजन हो सकता है। जैसे अणु से परमाणु का, और उसमें भी आगे। किन्तु शास्त्र एक वस्तु है, व्यवहार दूसरी। व्यवहार में उपर्युक्त षडज से निषाद तक को पकड़ में लाकर संगीत क़ायम है, क्या उसको रोककर इनके मध्य के स्वरों को पहले तलाश कर लिया जाय? तब तक संगीत को रोका जाय, क्योंकि वह पूर्ण नहीं है? क्या कभी वह पूर्ण होगा? पूर्ण

तो 'ब्रह्म' ही है। "बेस्ट् इज् द ग्रेटेस्ट् ऐनिमी ऑफ् गुड्।" (Best is the greatest enemy of Good.) इसलिए शग़ूल और शोब्दों की आड़ न ली जाय। नागरी लिपि पर्याप्त सक्षम है।

विश्व-व्यापकता के संदर्भ में नागरी लिपि के स्वरों का रूप।

लिखने के भेद— यदि नागरी को हिन्दी क्षेत्र की ही लिपि बनाये रखना है तो इ, उ, ए, ऐ, लिखने के अपने पुरानेपन के मोह में मुग्ध रहिए। और यदि उसे राष्ट्रलिपि अथवा विश्व तक में, यहाँ तक कि सामीकुल में भी आसानी से ग्राह्य बनाना चाहते हैं तो गुजराती लिपि की भाँति अि, अु, अे, अै लिखिए। किन्तु कोई मजबूर नहीं करता। विनोबा जी ने भी इसका आग्रह नहीं रखा। आकार और रूप का मोह व्यर्थ है। पुराने ब्राह्मी-शिलालेखों को देखिए। आपके मौजूदा रूप वहाँ जैसे के तैसे कहाँ हैं?

संस्कृत के तिरस्कार से भाषा-विघटन।

मेरा स्पष्ट मत है कि "संस्कृत" को राष्ट्रभाषा होना चाहिए था। वह होने पर, यह भाषा-विवाद ही न उठता। सबको ही (हिन्दी-भाषी को भी) समान श्रम से संस्कृत सीखने से स्पर्धा-कटुता का जन्म न होता, हमारा अपार ज्ञान-भण्डार सबको प्रत्यक्ष होता, और हिन्दी की पठ में भी प्रगति ही होती। उर्दू-हिन्दी की अपेक्षा, अन्य सभी भारतीय भाषाएँ, संस्कृत के अधिक समीप हैं। इसलिए कि प्रायः सभी भारतीय लिपियों में संस्कृत भाषा उसी प्रकार अबाध गति से लिखी जाती है जिस प्रकार नागरी लिपि में। संस्कृत ही एक भाषा है जिसकी अनेक लिपियाँ अपनी हैं। किन्तु अब वह बात हाथ से बेहाथ है; अब "हिन्दी" ही राष्ट्रभाषा सबको मान्य होना चाहिए। यह इसलिए कि अन्य भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही एक भारतीय भाषा है जो देश के हर स्थल में कमोबेश प्रविष्ट है।

आज क्या करना है?

सार यह कि हुज्जत कम, काम होना चाहिए। शास्त्र पर व्यवहार प्रबल है। समय बड़ा बलवान है, वह आवश्यकतानुसार ढलाई कर देता है। हिन्दी-क्षेत्र में ही घूम-घूमकर प्रतिमा-अनावरण, हिन्दी का महिमा-गान, अनुवादों की धूम, अमुक भाषा की हिन्दी को यह देन, अमुक भाषा में हिन्दी की यह छाप— यह सब दिशाविहीनता, क़िलेबन्दी और अभियान त्यागकर नागरी लिपि में विश्व का साहित्य लाइए। टूटी-फूटी ही सही, हिन्दी बोलना भी— ("ही" नहीं बल्कि "भी") बोलने का अभ्यास कीजिए। लिपि और भाषा की सार्थकता होगी। मानवमात्र का कल्याण होगा। हमारी एकराष्ट्रीयता और विश्वबन्धुत्व चरितार्थ होगा।

—नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ।

गुजराती के मध्ययुगीन सुविख्यात कवि प्रेमानन्द की तीन रचनाएँ
'प्रेमानन्द-रसामृत, खण्ड १' में नागरी में लिप्यन्तरित
करके भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ द्वारा
प्रस्तुत की गयी हैं। साथ ही
उनका हिन्दी गद्यानुवाद
भी प्रकाशित हो रहा है।

'प्रेमानन्द-रसामृत' से हम संकलित कृतियों के
रचयिता श्री प्रेमानन्द का आदरपूर्वक अभिषेक करना
चाहते हैं। जिस प्रकार गंगा-जल गंगा को ही समर्पित करते
हैं, उसी प्रकार हम कवि प्रेमानन्द की इन कृतियों का
यह देवनागरी रूपान्तर उन्हीं को समर्पित
कर रहे हैं।

हम उन कृतियों का यह हिन्दी गद्यानुवाद भी कवि प्रेमानन्द को ही
समर्पित करते हैं और प्रसाद के रूप में उसे उन समस्त
साहित्य-प्रेमियों की सेवा में प्रस्तुत कर
रहे हैं, जो हिन्दी के माध्यम
से अन्यान्य भाषाओं के काव्यामृत का पान
करके अपने आपको धन्य समझते हैं।

बम्बई
१ जनवरी, १९८४

विनीत
गजानन नरसिंह साठे
दीनेश हरिलाल भट्ट

विषय-सूची

प्रेमानन्द-रसामृत

(प्रथम कलश)

ओखा-हरण

[पृष्ठ २५ से १९८]

(द्वितीय कलश)

नलोपाख्यान

[पृष्ठ १९९ से ४३७]

(तृतीय कलश)

सुदामा-चरित्र

[पृष्ठ ४३८ से ४९५]

अनुवादकीय

हमें पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी (मुख्य न्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३) से परिचित होने का सौभाग्य आज से लगभग चौदह साल पहले प्राप्त हुआ। वे स्वयं उस ट्रस्ट के प्रतिष्ठाता हैं। १९६९ ई० में प्रतिष्ठित भुवन वाणी ट्रस्ट का छोटा-सा पौधा विकसित होते-होते आज एक प्रचण्ड, गगन-स्पर्शी वृक्ष के रूप को प्राप्त हो चुका है। भाषाई सेतुकरण के जिस उद्देश्य से प्रेरित होकर ट्रस्ट की स्थापना की गयी, उसकी पूर्ति हो गयी है और अब उस सेतु के दृढ़ीकरण का कार्य चल रहा है। भारतीय भाषाओं के परस्पर आदान-प्रदान के क्षेत्र में अनुवाद तथा एक नितान्त अभिनव प्रयोग के रूप में नागरी लिप्यन्तरण का जो अनोखा कार्य ट्रस्ट द्वारा किया जा रहा है, उसकी बराबरी अब तक कोई भी नहीं कर पाया है। ट्रस्ट का इस क्षेत्र में स्थान एकमेव-अद्वितीय है— न ऐसा कोई अन्य संस्थान है, न ऐसा कोई अन्य वाङ्मयीन यज्ञ सम्पन्न हो रहा है। इसका सम्पूर्ण श्रेय श्री नन्दकुमारजी अवस्थी साहब को ही देना चाहिए। वे सिर्फ़ पुस्तक-प्रकाशन ही नहीं कर रहे हैं, वे अनुवादकों का निर्माण तथा संगठन भी कर रहे हैं। अब भुवन वाणी ट्रस्ट पारिवारिक ट्रस्ट नहीं रहा— ट्रस्ट ही एक विशाल परिवार बन चुका है, जिसके सदस्य हैं— ट्रस्ट के न्यासी, विद्वत्-परिषद् के सदस्य, अनुवादक-मण्डल के सदस्य, ट्रस्ट के हितैषी पाठक, मुद्रणालय के कर्मचारी.........। इस राष्ट्र-व्यापी परिवार के सदस्यों की ट्रस्ट सम्बन्धी आत्मीयता को विकसित करने का कार्य भगीरथ कार्य है। आज भी अपने अदम्य उत्साह से श्री अवस्थी साहब उसे उदारमना, निरीह परिवार-प्रमुख के रूप में कर रहे हैं और उसमें हाथ बँटा रहे हैं ट्रस्ट के उपसचिव श्री विनयकुमारजी अवस्थी। उन्हीं दिनों, जब हमारा श्री अवस्थी पिता-पुत्र से केवल पत्राचार से ही परिचय हुआ, हम उनसे प्रभावित हुए और उन्हीं की प्रेरणा से ट्रस्ट के कार्य में सहयोगी हो गये।

फल-स्वरूप, हमने गुजराती के गिरधर-कृत रामायण के नागरी लिप्यन्तरण और हिन्दी गद्यानुवाद का श्रीगणेश किया। एक अनोखे कार्य को करते रहने के विचार से हमारे दिलो-दिमाग़ पर उन दिनों अजीब-

सी धुन सवार रही और ज्यों-त्यों करके उस विशालाकार ग्रन्थ का अभिनव रूप में प्रकाशन ट्रस्ट द्वारा १९७८ में हुआ। उसे देखकर हमारा उत्साह द्विगुणित हुआ। एक स्वनाम-धन्य गुजराती साहित्यिक ने उसे देखकर कहा था— देखिए, साठे और भट्ट दो भिन्न-भिन्न भाषी व्यक्ति एक तीसरी—-अर्थात हिन्दी भाषा में सराहनीय काम कर सके हैं। उनकी इस प्रशंसोक्ति का हम पर जादू का-सा असर हुआ। इधर श्री अवस्थी साहब गुजराती के काम को गिरधर रामायण तक ही सीमित नहीं रखना चाहते थे। उन्होंने गुजराती के मध्ययुगीन आख्यानकार कवि प्रेमानन्द की महिमा सुनी थी। अतः उन्होंने सुझाया कि प्रेमानन्द के आख्यान काव्यों को ट्रस्ट की नीति के अनुसार (मूल पाठ नागरी लिपि में तथा हिन्दी गद्यानुवाद) 'प्रेमानन्द-रसामृत' के रूप में प्रवाहित कर दिया जाए, जिससे उनका रसास्वादन समस्त भारत के हिन्दी जाननेवाले साहित्य-प्रेमी लोग कर पाएँ। इस 'आदेश' को हमने सिर-आँखों पर किया और आगे बढ़े। हम प्रेमानन्द के समस्त आख्यानों को अनूदित रूप में प्रस्तुत करने के सपने देखने लगे।

काम का शुभारम्भ तो हो गया; किन्तु हमारे सामने व्यावसायिक, पारिबारिक समस्याओं का ताँता बँध गया। फल-स्वरूप गिरधर-रामायण के काम को हम जिस गति से पूर्ण कर सके, उसे अपनाना असम्भव हुआ। कई बार काम ठप्प हो गया। हमारे हाथ शिथिल-से पड़ गये; हमारी गति 'अ-गति'-सी हो गयी और आशंका हुई कि अब हमसे यह काम नहीं बन पाएगा। लेकिन ट्रस्ट का लक्ष्य हमें रुकने नहीं दे रहा था। श्री अवस्थी साहब की सहानुभूतिमय सहनशीलता और खामोशी हमें बता रही थी कि स्वीकृत कार्य को अधूरा छोड़ना ट्रस्ट ने नहीं जाना है, ट्रस्ट ने कभी हार नहीं मानी है; उसका आदर्श है— निर्वाहः प्रतिपन्न-वस्तुषु। 'जिसमें हाथ डाला है, उसे पूर्ण सम्पन्न करना है'। ....हम बार-बार काम में जुट जाते रहे और उसका यह फल है कि 'प्रेमानन्द-रसामृत' के प्रथम खण्ड के प्रकाशन द्वारा आज 'तीन कलश' सुधी पाठकों की सेवा में प्रस्तुत किये जा रहे हैं। ये 'कलश' हैं— ओखा-हरण, नलोपाख्यान और सुदामा-चरित्र।

विश्वास है, 'रसामृत' ट्रस्ट की बलवती अभिलाषा को जिलाये रखेगा। जो अमृत का पान कर चुका है, उसे मृत्यु का भय क्यों हो?

ट्रस्ट इस अभीष्ट कार्य को, कल न सही, परसों कहिए, हमसे न सही, किसी और से, बग़ैर सम्पन्न किये-कराये चैन की साँस नहीं लेगा। अतः सुधी पाठक हमें त्रुटियों के लिए क्षमा प्रदान करते हुए 'प्रेमानन्द-रसामृत' के शेष कलशों को प्रस्तुत कराये जाने की प्रतीक्षा करें।

यह अनुवाद

अनुवाद-कर्ता प्रेमानन्द के आख्यानों के मूल पाठ के प्रति ईमानदार रहे हैं। अनुवाद करते समय उन्होंने यह ध्यान रखा है कि प्रेमानन्द के भाव को सही रूप में प्रस्तुत किया जाए। अतः उन्हें अपनी ओर से न कुछ जोड़ना था, न कुछ छोड़ना था। गुजराती और हिन्दी दोनों भाषाओं को सम्यक् रूप से जाननेवाले इसकी परख कर सकेंगे; लेकिन उनमें से किसी एक भाषा का जानकार दूसरी भाषा में प्रस्तुत मूल वा अनूदित अंश के साथ उसके समानान्तर अंश का मिलान करके देखता जाए, तो उसके उस 'अनजानी' भाषा के ज्ञान में वृद्धि ही हो जाएगी। कवि की अपनी विशिष्ट शैली का ध्यान रखते हुए अनुवाद किया गया है, अतः अनुवाद की भाषा कहीं-कहीं अटपटी भी लग सकती है— ऐसे स्थलों पर हमारे लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, आशा है, पाठक हमारी विवशता को समझ लेंगे।

प्रेमानन्द के ओखा-हरण आदि आख्यान बहुत लोकप्रिय हैं— मौखिक परम्परा द्वारा भी वे प्रसारित होते आये हैं। इसलिए प्रत्येक आख्यान में अनगिनत पाठभेदों की गुंजाइश है। मुद्रित रूपों में मुद्रण की भूलें भी कम नहीं हैं— जान पड़ता है कि वे भी परम्परा-सिद्ध हो चुकी हैं। अतः हमने आवश्यकता के अनुसार एक से अधिक पाठों की शरण ली और 'यद् रोचते तद् ग्राह्यम्'—वाली नीति को अपना लिया है। कथा का वर्णन-कर्ता कथा-काव्य में भूतकालीन घटनाओं के लिए भी प्रायः वर्तमान कालिक क्रिया-रूपों को प्रयुक्त करता है। इन आख्यानों में भी यही बात पायी जाती है। फिर भी काव्य में प्रयुक्त क्रियाओं के वर्तमानकालिक रूपों के अनुवाद में अर्थ और काल के विचार से क्रियाओं के भूतकालिक रूपों का प्रयोग किया है। कवि प्रेमानन्द तथा इस पुस्तक में संकलित उनके तीनों आख्यानों का परिचय इस विभाग में अन्यत्र दिया जा रहा है।

आशा है, साहित्य-रस-प्रेमी पाठकगण 'गिरधर-रामायण' की भाँति 'प्रेमानन्द-रसामृत' का भी स्वागत करेंगे।

आभार

अनुवाद करते समय कुछ शब्दों तथा छन्दों के अर्थ को निर्धारित करने में हमें प्रा० श्रीमती कान्ताबेन भट्ट (प्राध्यापिका, गुजराती विभाग, महाराष्ट्र कालेज, बम्बई) से बहुत सहायता प्राप्त हुई। हम उनके ऋण को हृदय से स्वीकार करते हैं। हमने निम्न-लिखित पुस्तकों से विभिन्न

आख्यानों के पाठ स्वीकार किये हैं तथा संशोधन करने में सहायता ली है। हम उनके सम्पादकों के आभारी हैं :—

१ सस्तुं साहित्य-वर्धक कार्यालय (बम्बई-अहमदाबाद): ओखा-हरण, नळाख्यान (नलोपाख्यान), सुदामा-चरित्र ।

२ श्री अनन्तराय म० रावळ : सम्पादक— नळाख्यान (प्रकाशक— गुर्जर ग्रन्थरत्न कार्यालय, अहमदाबाद) ।

३ श्रीमती प्रणयबाळा के० कोटीया और श्रीमती पन्ना मोदी : सम्पादक— कुँवरबाईनुं मामेरुं अने सुदामा-चरित्र (प्रकाशक— जे० भरत एण्ड कं०, बम्बई ४) ।

प्रकाशक के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन कहीं-कहीं परम्परागत उपचार बन जाता है। परन्तु इस पुस्तक के सन्दर्भ में इस आभार-प्रदर्शन को केवल उपचार समझना सौ प्रतिशत ग़लत होगा। इस स्थिति में हम इतना ही कहना पर्याप्त समझते हैं— हम अनुवादकार हैं; प्रकाशक तथा ट्रस्ट के अधिष्ठाता, सभापति पद्मश्री नन्दकुमारजी अवस्थी 'करानेवाले' हैं। हम अपने आपको 'कर्ता' समझने की धृष्टता करते हुए इस पुस्तक को 'प्रकाश' दिखानेवाले के हृदय से कृतज्ञ हैं।

इत्यलम् ।

विनीत

१४७२, सदाशिव पेठ,
पूना ४११०३०

गजानन नरसिंह साठे

८३, शान्ति-निकेतन, डॉ० आम्बेडकर मार्ग,
माटुंगा, बम्बई ४०००१९

दीनेश हरिलाल भट्ट

१ जनवरी, १९८४

महाकवि प्रेमानन्द

और

उनकी कृतियाँ

मध्यकालीन गुजराती कवियों में महाकवि प्रेमानन्द का स्थान समस्त समीक्षकों द्वारा प्रथम श्रेणी में निर्धारित किया गया है। वे मध्ययुग के सर्वश्रेष्ठ, सर्वाधिक लोकप्रिय आख्यानात्मक काव्यों के रचयिता हैं। आज भी उनकी रचनाएँ घर-घर में पढ़ी जाती हैं। इस दृष्टि से वे 'गुजरात के घर-घर के कवि' माने जाते हैं। अर्थात उनकी रचनाएँ विद्वानों से लेकर साधारण पढ़े-लिखे लोगों तथा बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सबके द्वारा पढ़ी जाती हैं।

प्रेमानन्द के काल के विषय में विद्वानों में थोड़ा-बहुत मतभेद है। श्री नगीनदास पारेख उनका समय ई० स० १६४९ से १७०४ मानते हैं, तो श्री के० का० शास्त्री ई० स० १६४४ से १७०४ बताते हैं। प्रेमानन्द ने स्वयं अपनी विविध रचनाओं के अन्त में उन-उन रचनाओं का काल सूचित किया है। उदाहरणार्थ, उनकी पहली कृति 'चन्द्रहासाख्यान' सं० १७२७ (लगभग ई० १६७०) में लिखी गयी और उनकी अन्तिम कृति 'दशम स्कन्ध' सं० १७६० से १७६४ तक में लिखी जा रही थी, जो उनका स्वर्गवास हो जाने के कारण अधूरी रही। इन समस्त बातों पर विचार करते हुए श्री जयन्त कोठारी ने कहा है कि प्रेमानन्द का काव्य-रचना-काल साधारणतया ई० स० १६६० से १७०० तक और जीवन-काल ई० १६४० से १७०० तक निर्धारित किया जा सकता है (गुजराती साहित्यनो इतिहास, ग्रन्थ २, प्रकाशक— गुजराती साहित्य परिषद, अहमदाबाद)।

प्रेमानन्द के कथनानुसार यह स्पष्ट हो जाता है कि उनका जन्म बीरक्षेत्र वटोदरा (बड़ोदा) में हुआ। सम्भवतः वे उस नगर के 'वाडी' नामक मुहल्ले में रहते थे। कुछ वर्षों के पश्चात वे सूरत में जाकर रह गये। वे कहते हैं, उन्होंने 'नळाख्यान' का श्रीगणेश सूरत में किया।

तदनन्तर वे नन्दुरबार (ज़ि० धुलिया, महाराष्ट्र) गये। वहीं उन्होंने 'नळाख्यान' पूर्ण किया। उन्होंने कुछ वर्ष बुरहानपुर (ज़ि० पूर्व निमाड़, मध्य प्रदेश) में व्यतीत किये। उनके कथनानुसार उन्होंने यह स्थान-परिवर्तन उदर-भरणार्थ किया। 'सुदामा-चरित्र' में उन्होंने लिखा है—उदर निमित्ते परदेस कीधो, सेव्युं नंदरबार। (अथवा पाठ-भेद के अनुसार—उदर निमित्ते सुरत सेव्युं ने गाम नंदरबार।)

प्रेमानन्द मेवाड़ा चौबीसा ('चतुर्वंशी'-चतुर्विंशी ब्राह्मण) थे। अनेक स्थलों पर उन्होंने अपना उल्लेख 'भट प्रेमानन्द', 'विप्र प्रेमानन्द' जैसे शब्दों में किया है। 'भट' शब्द ब्राह्मण वर्ण सूचित करता है।

'नळाख्यान' में वे कहते हैं— कृष्ण-सुत कवि भट प्रेमानन्द। अर्थात उनके पिता का नाम कृष्ण था। कहते हैं कि प्रेमानन्द के बचपन में ही उनके पिता और माता दोनों मृत्यु को प्राप्त हुए। उनकी मौसी ने उनका लालन-पालन किया। यद्यपि उन्होंने 'नळाख्यान' में कहा है— 'गुरु-प्रतापे पद-बन्ध कीधो', फिर भी उनके द्वारा कहीं भी निःसन्दिग्ध रूप में यह नहीं कहा गया है कि उनके गुरु कौन थे और उन्होंने उनसे कितनी और कहाँ शिक्षा पायी। इस सम्बन्ध में यह किवदन्ती प्रचलित है। कहते हैं कि प्रेमानन्द बचपन में जड़मति और मूढ़ थे। इस स्थिति में भी उन्होंने एक विरक्त सत्पुरुष की अनेक महीनों तक भक्तिभावपूर्वक सेवा की। सो प्रसन्न होकर उस सत्पुरुष ने एक शुभ घड़ी पर प्रेमानन्द से कहा कि वे अपनी माता को ले आएँ। परन्तु दुर्भाग्य से उनकी माता उस शुभ घड़ी के अन्दर वहाँ पहुँच नहीं पायी। इसके फल-स्वरूप प्रेमानन्द को संस्कृत के महाकवि होने का भाग्य नहीं प्राप्त हुआ। फिर भी उस सत्पुरुष की कृपा से वे गुजराती के श्रेष्ठ कवि सिद्ध हो सके। जान पड़ता है कि उन्होंने उस सत्पुरुष से संस्कृत की कुछ शिक्षा पायी होगी। उनके इन गुरु का नाम 'रामचरण' था। फिर भी जान पड़ता है कि इस किवदन्ती का आधार कल्पना हो। दूसरी एक किवदन्ती के अनुसार प्रेमानन्द का तत्कालीन कथावाचकों से संघर्ष हुआ; उससे वे कथा-वाचक का काम छोड़कर आख्यान काव्यों की रचना करने के लिए प्रेरित हुए। प्रेमानन्द के अनेक शिष्य कवि भी बताये जाते हैं। फिर भी इन समस्त बातों की प्रामाणिकता बहुत सन्दिग्ध है।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि प्रेमानन्द संस्कृत के अच्छे जानकार थे। उन्होंने श्रीमद्भागवत पुराण, महाभारत और रामायण का अध्ययन

किया था। उनकी अधिकांश रचनाएँ इन ग्रन्थों पर आधारित हैं। वे गायन और वाद्य-वादन कला में निपुण थे। उन्होंने अपने काव्यों के कड़वकों के लिए केदार, गौड़ी, आसावरी, मारू, वसन्त, रामग्री आदि रागों और कतिपय लोक-गीतों की धुनों का प्रयोग किया है। कहते हैं कि वे 'माण' (कटका) बजाते हुए अपने आख्यानों को प्रस्तुत करते थे।

काव्य-गुण-गरिमा और रचनाओं की संख्या —दोनों दृष्टियों से प्रेमानन्द मध्ययुगीन गुजराती कवियों में सर्वोपरि कृतिकार हैं। वैसे तो उनकी पचास से कुछ अधिक कृतियाँ उपलब्ध हैं। उन्होंने कुछ नाटक भी लिखे— परन्तु विद्वान अनुसंधान-कर्ता इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि उनमें से अनेक कृतियाँ और नाटक परवर्ती रचनाकारों द्वारा लिखकर प्रेमानन्द के नाम पर प्रचलित कराये गये हैं। उनको छोड़कर, अब प्रेमानन्द की केवल पचीस कृतियाँ प्रामाणिक मानी जाती हैं। उनमें से निम्न-लिखित कृतियाँ प्रमुख हैं— ओखा-हरण, सुदामा-चरित्र, रुक्मिणी-हरण, नळाख्यान, वामन-कथा, रणयज्ञ, बाळलीला, दानलीला, भ्रमर-पचीसी, चन्द्रहासाख्यान, दशम स्कन्ध इत्यादि। कहना न होगा कि इनके मूलस्रोत श्रीमद्भागवत पुराण, महाभारत और रामायण हैं। हूंडो, कुंवरबाईनुं मामेरुं आदि नरसी मेहता के जीवन-वृत्तान्त पर आधारित हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि प्रेमानन्द रूपान्तर-कर्त्ता व अनुवादक कवि हैं। प्राचीन कथाओं पर आधारित काव्यों में कवि की मौलिकता का परिचय उन कथाओं के प्रस्तुतीकरण से मिलता है, न कि कथावस्तु से। इस दृष्टि से प्रेमानन्द ने अपनी मौलिकता तथा सर्जनशीलता का परिचय अपनी रचनाओं में सम्यक्-रूपेण दिया है।

प्रेमानन्द की भाषा प्रासादिक है। उन्होंने लोकरुचि का ध्यान रखते हुए अपनी कृतियों को बड़े नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया है। उनकी रचनाओं में वीर, श्रृंगार, भक्ति जैसे रसों का उत्कट परिपोष हुआ है। उन्होंने पुरानी कथाओं को तत्कालीन गुजराती लोक-जीवन के रंग में रँग दिया है। रीति-रिवाज, वस्त्राभूषण, खानपान की वस्तुएँ, लोकाचार और कुलाचार आदि के चित्रण में कवि ने तत्कालीन गुजराती जन-जीवन का आधार लिया है। श्री अनन्तराय रावळ ने कहा है— प्रेमानन्द ने पुराण, महाभारत आदि से कथावस्तु ग्रहण की और उसके अस्थि-पंजर में रक्त, मांस और प्राण गुजरात के भर दिये हैं। कविवर नानालाल ने कहा है— प्रेमानन्द समस्त गुजराती कवियों में से (एकमात्र) पूर्णतः 'गुजराती' कवि हैं।

ये अनूदित रचनाएँ

१ ओखा-हरण

'ओखा-हरण' का मूलाधार श्रीमद्भागवत पुराण के दशम स्कन्ध के बासठवें और तिरसठवें अध्याय में वर्णित ऊषा-अनिरुद्ध के विवाह की कथा है। ऊषा दैत्यराज बलि के पुत्र बाणासुर की (पोष्य) पुत्री मानी गयी है, और अनिरुद्ध है श्रीकृष्ण-रुक्मिणी का पौत्र तथा प्रद्युम्न रुक्मवती का पुत्र। यह कथा कविजनों में बहुत प्रिय रही है। इसके पूर्वार्ध में शृंगार तथा उत्तरार्ध में वीररस के परिपोष की पर्याप्त गुंजाइश है। अतः विभिन्न कविजनों ने अपने-अपने ढंग से अपनी-अपनी भाषा में उसे काव्य-रूप में प्रस्तुत किया है। कवि प्रेमानन्द ने भी मूल संस्कृत कथा के मुख्य सूत्रों को लेकर अपनी ओर से इधर-उधर से जुटाकर अनेक छोटे-बड़े सूत्र जोड़ दिये और सबको अपने रंग में रँगकर 'ओखा-हरण' काव्य रूपी अनुपमेय पट का निर्माण किया। भागवत पुराण के इस अंश में कृष्ण-लीला का महिमा-गान है; उसमें कृष्ण पर ध्यान केन्द्रित है, जब कि 'ओखा-हरण' सच्चे अर्थों में ऊषा-अनिरुद्ध की कथा है। बाणासुर द्वारा शिवजी से वरदान और अभिशाप को प्राप्त करना, ओखा की उत्पत्ति, उमाजी द्वारा ओखा को अभिशाप देना और बाणासुर द्वारा ओखा को पुत्री-स्वरूप प्राप्त करना आदि घटनाओं का विशद वर्णन करते हुए कवि ने कथा की मुख्य घटना के लिए पृष्ठ-भूमि अंकित की है। इस काव्य में कवि शृंगार और वीर रसों का चरम सीमा तक परिपोष करने में सफल हुआ। उसने युद्ध का अनूठे ढंग से वर्णन किया है। अलवण व्रत, गौरी-पूजन, हलदी लगाना, कंसार-सेवन, विवाह-विधि, बारात का आना और लौटना— आदि के वर्णन में कवि के समकालीन समाज के रीति-रिवाजों की स्पष्ट झलक दिखायी देती है— इसलिए यह काव्य गुजराती समाज में काफ़ी-लोकप्रिय हो गया है। अलोना व्रत तथा गौरी-पूजन का माहात्म्य आज भी माना जाता है। इस काव्य को सामाजिक तथा सांस्कृतिक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है, यह इससे स्पष्ट दिखायी देता है कि आज भी चैत्र मास में घर-घर ओखा-हरण का पठन किया जाता है।

प्रेमानन्द ने ओखा, बाणासुर, अनिरुद्ध का चरित्र-चित्रण अनूठे ढंग से किया है। ओखा की विरह-व्यथा और भय-कातरता, बाणासुर का उग्रतम दम्भ और वीरता, अनिरुद्ध द्वारा आत्म-विश्वास और साहसपूर्वक संकटों का सामना करना आदि का अंकन देखते ही बनता है।

जान पड़ता है कि प्रेमानन्द का मन 'ओखा-हरण' में सच्चे अर्थों

में रमा है। फल-स्वरूप, वह कृति पाठकों के हृदय में अविचल स्थान प्राप्त कर सकी है।

२ नलोपाख्यान

नलोपाख्यान (नळाख्यान) प्रेमानन्द के आख्यान काव्यों में दूसरी लोकप्रिय रचना है। इस आख्यान का मूलस्रोत महाभारत के आरण्यक वा वनपर्व का 'नलोपाख्यान पर्व' नामक (उप-) पर्व (अध्याय ५२-७९) है। ओखा-हरण की कथावस्तु के गठन के विषय में जो कहा है, वह इस आख्यान के विषय में भी कहा जा सकता है। प्रेमानन्द ने मुख्य कथावस्तु महाभारत से ली है, फिर भी अपने काव्य में अपनी अनूठी सूझ का परिचय दिया है। इस दृष्टि से नल और दमयन्ती के जन्म की कथा और उनके रूप का वर्णन, नल द्वारा दमयन्ती का परित्याग करने का कारण, दमयन्ती का दयनीय स्थिति में विलाप करना, उसका अपनी मौसी के यहाँ आश्रिता बनकर रहना, ऋतुपर्ण को बाहुक द्वारा कुन्दनपुर के प्रति लाना, बाहुक-स्वरूप नल की दमयन्ती द्वारा परीक्षा करना आदि घटनाओं की कुछ बातों के मूल-स्रोत नल-दमयन्ती पर लिखित अन्य आख्यान अवश्य हैं, फिर भी उनमें प्रेमानन्द ने अपने रंग उँडेल दिये हैं। महाभारत के नलोपाख्यान के अनुसार नल अन्त में पुष्कर को द्यूत में पराजित करते हैं; प्रेमानन्द ने इस घटना को नहीं स्वीकार किया; परन्तु उन्होंने यही बताना उचित माना कि कलि द्वारा उकसाया हुआ पुष्कर कलि के नल द्वारा भगा दिये जाने पर, स्वयं उसके प्रभाव से मुक्त हो जाता है और नल की शरण में आ जाता है। अर्थात इसमें कोई शक नहीं कि प्रेमानन्द अपने पूर्ववर्ती गुजराती कवियों से बहुत प्रभावित थे, वे भालण आदि के ऋणी हैं।

इस काव्य में शृंगार, हास्य, करुण और अद्भुत रस की निष्पत्ति हुई है। नल और दमयन्ती के स्वभाव की विशेषताओं को स्पष्ट रूप से अंकित किया गया है।

बृहदश्व ऋषि ने धर्मराज को नल-दमयन्ती की कथा मानव-जीवन का यह कटु सत्य बताते हुए सुनायी थी कि जीवन में नियति बलीयसी होती है; उसकी कठोरता के शिकार बड़े-बड़े राजा-महाराजा, नल जैसे पुण्यश्लोक व्यक्ति भी होते हैं। उस कथा का यह सन्देश जन साधारण तक पहुँचाने में प्रेमानन्द की यह रस-भीनी रचना समर्थ सिद्ध हुई है।

३ सुदामा-चरित्र

प्रेमानन्द ने श्रीमद्भागवत पुराण— दशम स्कन्ध के अस्सीवें और इक्यासीवें अध्याय से 'सुदामा-चरित्र' के लिए कथावस्तु चुनी। कथा के मुख्य सूत्रों को अपरिवर्तित रखते हुए उन्होंने उसमें छोटे-बड़े परिवर्तन भी किये हैं, कुछ बातों का स्वरूप भी बदल दिया है। इन परिवर्तनों से काव्य-सौन्दर्य की वृद्धि अवश्य हुई है; फिर भी कुछ आलोचकों के अनुसार, सुदामा की प्रतिमा को कुछ हानि भी पहुँची है। यथालाभ-सन्तोष-प्रवृत्ति, अयाचक-व्रत —दोनों अवश्य श्रेष्ठ हैं, परन्तु घर में पति तथा दस बच्चों के भरण-पोषण के भार को उठाते-उठाते थकान को प्राप्त हुई स्त्री को जब हम देखते हैं, तो घर में भूखे पेट पौढ़े रहनेवाले सुदामा पाठकों की सहानुभूति के विषय नहीं बने रहते। सुदामा की घर की दयनीय स्थिति का वर्णन, सुदामा-श्रीकृष्ण का गुरु-गृह में घटित घटनाओं के बारे में सम्भाषण, कृष्ण द्वारा उपहार माँगते समय तथा उनके द्वारा रिक्त हाथों से बिदा करने पर सुदामा को अनुभव होनेवाली व्याकुलता —इनसे काव्य-सौन्दर्य वृद्धि को प्राप्त हुआ है। कवि ने चरित्र-चित्रण करते समय सुदामा के स्वभाव के समस्त पहलुओं का ध्यान रखा है।

प्रेमानन्द का रचना-कौशल इस छोटी-सी कृति में विकसित रूप में प्रकट हुआ है। यह कृति आज भी लोकप्रिय है।

अनुवादक-परिचय

प्रा० डॉ० गजानन नरसिंह साठे

एम्० ए (मराठी-अंग्रेज़ी— बम्बई वि० वि०), एम्० ए० (हिन्दी— बनारस हिन्दू वि० वि०), पीएच्० डी (बम्बई वि० वि०), बी० टी०, तथा साहित्य-रत्न हैं। 'स्वयम्भु-कृत पउम-चरिउ और तुलसीदास-कृत रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करके उन्होंने पीएच्० डी० की उपाधी प्राप्त की। ग्यारह साल पूना के माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापक के नाते काम करने के पश्चात बम्बई के रा० आ० पोद्दार वाणिज्य महाविद्यालय में हिन्दी विभाग के व्याख्याता तथा अध्यक्ष के पद पर नियुक्ति हुई। साथ ही उस महाविद्यालय के जूनिअर कॉलेज विभाग के वे छः वर्ष प्रधानाचार्य भी रहे और अप्रैल १९८२ में उन्होंने अवकाश ग्रहण किया। उससे पहले कुछ महीने वे उपर्युक्त महाविद्यालय के उपप्रधानाचार्य भी थे। उनका, नीचे लिखे अनुसार विशिष्ट कार्य है:—
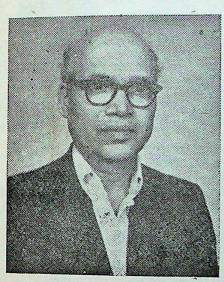
डॉ० गजानन नरसिंह साठे

१ राष्ट्रभाषा प्रचार संस्थाओं तथा पाठशालाओं के लिए अनेक हिन्दी पाठ्य-पुस्तकों का लेखन-सम्पादन, २ बम्बई वि० बि० के हिन्दी विभाग द्वारा संचालित स्नातकोत्तर कक्षाओं में अध्यापन, ३ मराठी-हिन्दी में अनेकानेक लेखों का लेखन, ४ हिन्दी शिक्षक सनद, डिप. एड् की कक्षाओं में अध्यापन, ५ आकाशवाणी तथा दूरदर्शन द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में भाग लेना, ६ राष्ट्रभाषा प्रचार की विभिन्न प्रवृत्तियों में भाग लेना, ७ हिन्दी प्रचारकों— अध्यापकों के अनेक शिविरों में, 'अखिल भारतीय रामायण मेला' में, अहिन्दी-भाषी हिन्दी लेखकों की गोष्ठियों में सहभाग, मराठी-स्वयं-शिक्षक, राष्ट्रभाषा का अध्यापन जैसी पुस्तकों का लेखन, मराठी रामविजय तथा हरिविजय का हिन्दी गद्यानुवाद; गुजराती गिरधर रामायण तथा प्रस्तुत पौराणिक आख्यानमाला "प्रेमानन्द रसामृत" का डॉ० दीनेश भाई भट्ट के सहयोग से हिन्दी गद्यानुवाद। इत्यादि।

डॉ० गजानन साठे भुवन वाणी ट्रस्ट की विद्वत्-परिषद् के वरिष्ठ सदस्य एवं अहर्निश कार्यरत आजीवन न्यासी हैं।

प्रा० डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट

मूलतः गुजरात के अमरेली जनपद के निवासी हैं। वे शिक्षा-दीक्षा के लिए बम्बई आये, और अब बम्बई के निवासी हो गये हैं। उन्होंने बम्बई विश्वविद्यालय से गुजराती में एम्०ए० किया और तदनन्तर गुजराती भाषा और साहित्य का अध्यापन आरम्भ किया। अध्यापन कार्य के साथ ही उन्होंने अध्ययन जारी रखा और 'कवि मूलशंकर मूळानीना नाटको अने गुजराती रंगभूमिना विकास मां फाळो' विषय पर शोध प्रबन्ध लिखकर (गुजराती में) पीएच्० डी० की उपाधी प्राप्त की। डॉ० दीनेश भाई हिन्दी के ज्ञाता हैं और उन्होंने राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति, वर्धा की 'राष्ट्र-भाषा-रत्न' परीक्षा उत्तीर्ण की है। हिन्दी के अलावा वे मराठी के भी जानकार हैं।
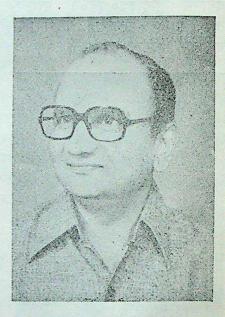
डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट

पिछले लगभग बीस साल वे बम्बई के रामनारायण रुइया महाविद्यालय में गुजराती पढ़ाते हैं और फ़िलहाल गुजराती विभाग के अध्यक्ष हैं। शुरू में उन्होंने रा० आ० पोद्दार वाणिज्य महाविद्यालय, बम्बई १९ में भी अध्यापन किया था। बम्बई विश्वविद्यालय के गुजराती विभाग द्वारा संचालित स्नातकोत्तर कक्षाओं में भी वे अध्यापन करते हैं। डॉ० दीनेश भाई को नाटक-साहित्य तथा नाट्याभिनय में विशेष रुचि है। वे स्वयं अच्छे अभिनेता हैं, निर्देशक हैं; उन्होंने अनेक नाटकों में अभिनय किया। अभिनय के अतिरिक्त उन्होंने पायानो पत्थर, मानवी बनीए, माफ करजो आ नाटक सरोज आदि अनेक गुजराती एकांकियों तथा रेडियो-रूपकों की रचना की है; रेडियो तथा टी० वी० कार्यक्रमों में भाग लिया है। भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित गुजराती गिरधर रामायण तथा प्रस्तुत पौराणिक आख्यानमाला "प्रेमानन्द रसामृत" (नागरी लिप्यन्तरण तथा हिन्दी गद्यानुवाद) के अनुवादकों में से एक हैं।

प्रकाशकीय प्रस्तावना

देवनागरी अक्षयवट

भुवन वाणी ट्रस्ट के 'देवनागरी अक्षयवट' की देशी-विदेशी प्रकाण्ड-शाखाओं में, संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, उर्दू, हिन्दी, कश्मीरी, गुरमुखी, राजस्थानी, सिन्धी, गुजराती, मराठी, कोंकणी, मलयाळम, तमिळ, कन्नड, तेलुगु, ओड़िया, बँगला, असमिया, नेपाली, मागधी, मैथिली, अंग्रेजी, हिब्रू, ग्रीक, अरामी आदि के वाङ्मय के अनेक अनुपम ग्रन्थ-प्रसून और किसलय खिल चुके हैं, अथवा खिल रहे हैं।

हमारे विद्वान-द्वय

इस नागरी अक्षयवट की गुजराती शाखा में प्रस्तुत यह प्रेमानन्द-रसामृत दूसरा पल्लव-रत्न है। इससे पूर्व, सन् १९७८ ई० में, १४६० पृष्ठों का बृहदाकार "गिरधर रामायण" भुवन वाणी ट्रस्ट से प्रकाशित हुआ था। वे ही दो विद्वान, डॉ० गजानन नरसिंह साठे और डॉ० दीनेश भट्ट, दोनों ग्रन्थों के सर्वाङ्ग सफल अनुवादक एवं लिप्यन्तरणकार हैं। वाणी के साधक श्रमशील इन विद्वन्मूर्धन्य-उभय का विस्तृत परिचय एवं कार्य-कलाप, पृष्ठ १७-१८ पर प्रस्तुत है।

डॉ० साठे-जैसे, कर्मठ सहायक ट्रस्ट के लिए स्तम्भ-स्वरूप हैं। भाषाई सेतुबन्ध का कार्यभार अहर्निश जितना उन्होंने सम्हाल रखा है, वह भगवान की ओर से हमारे लिए वरदान है। उनको पाकर हम गौरव अनुभव करते हैं।

विश्वबन्धुत्व और राष्ट्रीय एकीकरण के संदर्भ में लिपि और भाषा

भूमण्डल पर देश-काल-पात्र के प्रभाव से मानव जाति, विभिन्न लिपियाँ और भाषाएँ अपनाती रही है। उन सभी भाषाओं में अनेक दिव्य वाणियाँ अवतरित हैं, जो विश्वबन्धुत्व और परमात्मपरायणता का पथ-प्रदर्शन करती हैं; किन्तु उन लिपियों और भाषाओं से अपरिचित होने के कारण हम इस तथ्य को नहीं देख पाते। अपनी निजी लिपि और अपनी भाषा में ही सारा ज्ञान और सारी यथार्थता समाविष्ट मानकर, दूसरे भाषा-भाषियों को उस ज्ञान से रहित समझते हुए हम भेद-विभेद के भ्रम-जाल में भ्रमित होते हैं।

भूमण्डल की बात तो दूर, हमारे अपने देश 'भारत' में ही अनेक भाषाएँ और लिपियाँ प्रचलित हैं। एक ब्राह्मी लिपि के मूल से उत्पन्न होने के बावजूद उन सबसे परिचित न होने के कारण हम अपने को परस्पर

विघटित समझने लगते हैं। किन्तु सारी लिपियाँ और भाषाएँ सीखना-समझना भी सम्भव नहीं है। सुतरां, यथासाध्य विश्व, और अनिवार्यतः स्वराष्ट्र की सभी भाषाओं के दिव्य वाङ्मय को राष्ट्रभाषा हिन्दी और सम्पर्कलिपि नागरी में सानुवाद लिप्यन्तरित करके, क्षेत्रीय स्तर से बढ़ाकर उसको सारे राष्ट्र को सुलभ कराना, समस्त सदाचार-साहित्य-निधि को सारे देश की सम्पत्ति बनाना, यह संकल्प भगवान की प्रेरणा से सन् १९४७ में मैंने अपनाया, और इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु १९६९ ई० में 'भुवन बाणी ट्रस्ट' की स्थापना हुई।

बिश्वबन्धुत्व के सम्बन्ध में ट्रस्ट की अपेक्षाएँ

ट्रस्ट की यह मान्यता है कि धरातल का समस्त वाङ्मय मानवमात्र की सम्पत्ति है। विज्ञान का कोई अन्वेषण किसी भी भूभाग में हुआ हो, वह मानवमात्र की मिल्कियत हो जाता है। टेलीफ़ोन, वायरलेस, बायुयान का उपयोग करते समय कोई यह विचार नहीं करता कि यह उपलब्धि किस देश की बदौलत है। लिपि, भाषा, ज्ञान सकल धरातल की सम्पत्ति है। लिपि और भाषा के पट को अनावृत कर सकल ज्ञान-भण्डार को सर्वसुलभ बनाना चाहिए। इससे, भले ही मानव की पार्थक्य-भावना का मूलनाश न हो, परन्तु एकीकरण की ओर कर्तव्य करते रहना हमारे लिए श्रेयस्कर है। छोटे से भी छोटा सत्कार्य कभी व्यर्थ नहीं जाता, नष्ट नहीं होता—

"पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
नहि कल्याणकृत्कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।।

—गीता ६ : ४०

नागरी लिपि पर उत्तरदायित्व

अतः नागरी लिपि पर यह उत्तरदायित्व ठीक ही रहा कि राष्ट्र की सभी लिपियों के साहित्य को नागरी जामा पहनाकर उसको राष्ट्र भर में फैलाए। देश का सकल साहित्य देश के कोने-कोने में सुपरिचित हो। नागरी लिपि का ही फैलाव इतना बिशाल है कि इस उत्तरदायित्व को वहन कर सके।

गुजराती-नागरी में साम्य

परन्तु सौभाग्य से यही सामर्थ्य गुजराती लिपि को भी प्राप्त है। गुजराती लिपि प्रायः नागरी के समान है। बहुत थोड़े अक्षर ऐसे हैं, जो नागरी से कुछ भिन्नता रखते हैं। उनमें भी "क" आदि कुछ ऐसे हैं जिनको एक समकोण घुमा देने से वे नागरी वर्णों का रूप ले लेते हैं। नागरी लिपि के मस्तक से शिरोरेखा हटाइए, समझिए गुजराती लिपि की

अनुपम छवि सम्मुख है। गुजराती क्षेत्र को भी यह गौरव स्वतः उपलब्ध है कि वह अधिक से अधिक विभिन्न भाषाई साहित्य को अपने अक्षरों का परिधान देकर राष्ट्रलिपि अथवा राष्ट्र की समस्त भाषाओं में जोड़लिपि का स्थान ग्रहण करे। जो यश नागरी लिपि को प्राप्त है वही यश गुजराती लिपि को भी प्राप्य है। एक-रूप हैं, दोनों का समान आसन है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक, इन तीन के दुरुपयुक्त पाश में बँधा 'भारत' कराह रहा था, जब इन विश्ववन्दनीय दो युगपुरुषों का सौराष्ट्र की पावन भूमि में उदय हुआ। बिगड़े हुए धार्मिक संस्कारों को मिटाकर, सामाजिक भेदभाव और संकीर्णता से सारा देश मुक्त हुआ। हज़ारों वर्षों से चली आ रही गुलामी से आज़ाद भारत में एकच्छत्र जनतंत्र की स्थापना हुई। लोकप्रख्यात इन महापुरुषों की बदौलत आत्म-स्वातंत्र्य की यह स्थिति समग्र देश को प्राप्त हुई, न केवल उनकी जन्मभूमि सौराष्ट्र को। इससे यह निष्कर्ष तो नहीं कि उनको अपनी जन्मभूमि प्रिय न थी। वे समझते थे कि यदि विश्व का कल्याण है तो अपने राष्ट्र भारत का कल्याण है। और जब राष्ट्र का कल्याण है, तब जन्मभूमि सौराष्ट्र अथवा सभी भारतीय अञ्चलों का कल्याण है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' भारत का यही नारा रहा और है।

भाषा और लिपि के मामले में भी इन दोनों महात्माओं ने सही क़दम उठाया। बहुभाषाई विशाल देश को एकसूत्र-बद्ध रखने के लिए, सब भारतीय भाषाओं की उत्तरोत्तर समुन्नति के साथ, नागरी लिपि और हिन्दी भाषा को जोड़ के लिए चुना।

नालन्दकालीन हमारा भाषा-उत्कर्ष

पुरातन काल में भी भारतीय लिपि और तत्कालीन सर्वोत्कृष्ट संस्कृत भाषा ने न केवल भारत, वरन् "ग्रेट एशिया" के विशाल अन्य देशों को ज्ञान और संस्कृति प्रदान की।

नालन्द विश्वविद्यालय में दूर-दूर से विद्वान और अनेक राज्यों के प्रतिनिधि आकर शिक्षा ग्रहण करते थे। वे वहाँ से भारतीय लिपि (आज की भारतीय लिपियों का पूर्व रूप) सीखते थे और अपने देशों में उसी लिपि के आधार पर लिपि की सर्जना करते तथा संस्कृत भाषा के अपरिमित ज्ञान-भण्डार को उसी लिपि में लिप्यन्तरित अथवा अनूदित करते थे। अन्य देश हमारी लिपि को ग्रहण कर गौरव अनुभव करते थे, जब कि विदेश तो दूर, अपने देश में ही आज अपूर्ण और अवैज्ञानिक विदेशी लिपि का गुणगान किया जा रहा है। यह क्यों ?

भाषाई सेतुकरण का मार्ग

शासन और जनता, दोनों की भाषाई नीति है कि सभी भारतीय लिपियाँ और भाषाएँ सदैव बरक़रार रहें, क्योंकि उनमें भारतीय ज्ञान का अपार कोष वर्तमान है। साथ ही वह अपार ज्ञान का भण्डार क्षेत्रीय भाषाञ्चल से उठकर समग्र राष्ट्र को लाभान्वित करे, इसलिए एक जोड़ लिपि आवश्यक है। और सभी भारतीय अञ्चलों में कमोबेश अपनी पैठ रखनेवाली नागरी लिपि ही इसके लिए उपयुक्त है। नागरी लिपि को यह कोई श्रेष्ठता प्रदान नहीं की जा रही है, वरन् एक सेवा उसके सिपुर्द है। यह न भूलना चाहिए कि नागरी भी एक ही ब्राह्मी लिपि से उद्भूत अन्य सभी भारतीय भाषाओं की सम-समान एक परिवार की इकाई है। नागरी लिपि के माध्यम से अन्य सभी भाषाओं का वाङ्मय भी पढ़ा जाय।

हमारी लिपि का देश से बाहर विश्व में प्रसार

भारतीय लिपि ताड़पत्र और भोजपत्र में पृथक् लिखी जाने तथा देश-काल-पात्र के अनेक प्रभावों के फलस्वरूप मिलते-जुलते अनेक रूपों में प्रचलित है। यदि हम आज संगठित और केन्द्रित होते हैं तो विश्व भी हमारी लिपि को आदर के साथ ग्रहण करेगा। भारत की लिपि आज के मानव के पूर्वजों की सृष्टि है। मानवमात्र का उस पर समान अधिकार है। जब हम समृद्धि के उत्कर्ष पर थे, तब हमारी लिपि और भाषा का विश्व में स्वागत हुआ, प्रसार हुआ। उसका नमूना पृष्ठ २३-२४ पर देखिए।

तिब्बती लिपि

तिब्बती लिपि के कुछ नमूने हम दे रहे हैं। सहस्रों वर्ष पूर्व हमारी लिपि की नुकीली रेखा वाली पद्धति भारत में मागधी, मैथिली, असमिया, बँगला, बर्मी (ब्राह्मी) में प्रचलित होने के साथ नेपाल, भूटान, तिब्बत और तत्काल के समृद्ध देश तिब्बत से चलकर मंचूरिया, मंगोलिया, चीन, जापान तक पहुँची। यही नहीं, सामान्य अन्तर के साथ उन देशों में ग्रहीत भारतीय लिपि में संस्कृत के अगणित ग्रन्थ अनुवादित किये गये। पाठकों की जानकारी के लिए नीचे कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं:—

भोटिया (तिब्बती) लिपि के नमूने

लगभग सातवीं शताब्दी में चीन और तिब्बत से विद्वानों ने भारत आकर शिक्षा ग्रहण की। उस समय तक तिब्बत में कोई लिपि प्रचलित न थी। उन्होंने भारतीय लिपि अपनाई और कालान्तर में उनके देश में उस भारतीय लिपि में सामान्य से अन्तर आते रहे।

नास्ति प्रज्ञासमं चक्षुर्नास्ति मोहसमं तमः।
नास्ति रोगसमः शत्रुर्नास्ति मृत्युसमं भयम् ॥

भारत की लिपि के आधार पर बनी तिब्बती लिपि में संस्कृत अनुवादः—

॥ ཤེས་རབ་སྡོང་བུ ॥

॥ ŚES. RAB. SDOṄ. BU ॥

॥ प्रज्ञादण्डः ॥

1

ཤེས་རབ་དང་མཉམ་	མིག་	མེད་དེ།
śes.rab.daṅ.mñam.	mig.	med.de।
प्रज्ञा- समं	चक्षुः	नास्ति।
རྨོངས་པ་དང་མཉམ་	མུན་པ་	མེད།
rmoṅs.pa.daṅ.mñam.	mun.pa.	med।
मोह- समं	तमः	नास्ति।
ནད་འདྲ་བ་ཡི་	དགྲ་བོ་	མེད།
nad.ḥdra.ba.yi.	dgra.bo.	med।
रोग-समः	शत्रुः	नास्ति।
འཆི་བ་དང་མཉམ་	འཇིགས་པ་	མེད༎
ḥchi.ba.daṅ.mñam.	ḥjigs.pa.	med॥
मृत्यु- समं	भयं	नास्ति॥ 105

नागरी लिपि के स्वरों का तिब्बती लिप्यन्तरण में प्रयोग

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ
ཨ	ཨཱ	ཨི	ཨཱི	ཨུ	ཨཱུ	རྀ	རཱྀ
ऌ	ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः।
ལྀ	ལཱྀ	ཨེ	ཨཻ	ཨོ	ཨཽ	ཨཾ	ཨཿ।

क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ।

ཀ ཁ ག གྷ ང། ཅ ཆ ཇ ཛྷ ཉ།

ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न।

ཊ ཋ ཌ ཌྷ ཎ། ཏ ཐ ད དྷ ན།

प फ ब भ म। य र ल व।

པ ཕ བ བྷ མ། ཡ ར ལ ཝ།

श ष स ह क्ष।

ཤ ཥ ས ཧ ཀྵ།

तिब्बती लिपि में 'अ', स्वर नहीं, व्यञ्जन के रूप में प्रयुक्त होता है। "अ" में भी स्वर की मात्राएँ लगती हैं। घ, झ, ढ, ध और भ का उच्चारण प्रयोग में नहीं आता। किन्तु संस्कृत ग्रन्थों का लिप्यन्तरण करते समय ग, ज, ड, द और ब के नीचे ह लगा कर इन व्यञ्जनों को गढ़ लिया है। (कलकत्ता यूनिवर्सिटी से प्रकाशित "भोटप्रकाश:" से साभार।)

आभार-प्रदर्शन

सदाशय श्रीमानों और उत्तरप्रदेश शासन (राष्ट्रीय एकीकरण विभाग) के प्रति हम आभारी हैं, जिनकी अनवरत सहायता से 'भाषाई सेतुकरण' के अन्तर्गत अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन चलता रहता है। वे विविध भाषाई ग्रन्थ नागरी कलेबर में सारे भषाई अञ्चलों में जगमगा कर राष्ट्रीय एकीकरण की ज्योति को प्रदीप्त कर रहे हैं।

सौभाग्य की बात है कि भारत सरकार के राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) तथा शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय ने राष्ट्रभाषा हिन्दी-सहित सभी भाषाओं की समृद्धि और व्यापकता के लिए एक जोड़लिपि "नागरी" के प्रसार पर उपयुक्त बल दिया। उनकी सहायता से कवि प्रेमानन्द प्रणीत ग्रन्थरत्न "प्रेमानन्द रसामृत" का यह प्रकाशन प्रस्तुत वर्ष में सम्पूर्ण हुआ है।

विश्ववाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा।
पहन नागरी-पट, सबने अब भूतल-भ्रमण बिचारा॥
अमर भारती सलिला की "गुजराती" पावन धारा।
पहन नागरी पट, उसने अब भूतल-भ्रमण बिचारा॥

नन्दकुमार अवस्थी

प्रतिष्ठाता, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

प्रेमानन्द-रसामृत

ओखाहरण

कडवुं १ लुं—(वन्दना-प्रकरण)

राग रामग्री

श्रीगुरुगोविंदने चरणे लागुं जी, गणपति शारदा वाणी मागुं जी,
अंतर्गतमां इच्छा छे घणी जी, भावे भाखुं कथा हरितणी जी ।
जे सांभळतां सुख थाये जी, मननी ते चिंता जाये जी,
चतुर्दश लोक जेहने माने जी, तेना गुण शुं लखीए पाने जी ? । १ ।

कड़वक १—(वन्दना प्रकरण)

मैं (भगवान) श्रीगोविन्द-स्वरूप श्रीगुरु के पाँव लगता हूँ। मैं श्रीगणेशजी और शारदा (सरस्वती के पाँव लगते हुए उन) से (दान के रूप में) वाणी (वाक्शक्ति) माँगता हूँ। मेरे अन्तःकरण में बड़ी इच्छा है कि मैं श्रीहरि की कथा (श्रद्धा-) भाव-पूर्वक कह दूँ, जिसे सुनने पर (श्रोताओं को) सुख (प्राप्त) हो जाता है और उनके मन की चिन्ता (दूर हो) जाती है। जिनको चौदहों लोक[1] (सर्वोपरि) मानते हैं, उनके गुणों को (कागज़ के) पृष्ठ पर क्या लिख दें ? । १

---

१ चौदह लोक : (अधोलोक—) अतल, वितल, सुतल, महातल, तलातल, रसातल और पाताल; (मध्यलोक—) भूलोक अर्थात् पृथ्वी; (ऊर्ध्वलोक—) भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक ।

ढाळ

पाने ते लख्या जाये नहि, श्रीगणेशना गुणग्राम,
सकळ कारज सिद्धि पामे, मुखेथी लेतां नाम। २।
गिरिजानन्दन गजनासिका, वळी दंत उज्ज्वळ एक,
आयुध फरसी कर ग्रही, जेणे हण्या असुर अनेक। ३।
शुद्ध (सिद्ध) बुद्ध बे श्यामा छे, सुत लाभ ने वळी लक्ष,
सिंदूर अंगे शोभीतुं, मोदक अमृत भक्ष। ४।
नीलांबर पीतांबर पहेर्यां, चढे सेवंत्रां सेव,
मारा प्रभुजीने प्रथम पूजीए, जय दुंदाळो देव। ५।

श्रीगणेशजी के गुण-समुदाय (कागज़ के) पृष्ठों पर नहीं लिखे जा सकते। मुख से उनका नाम लेने से समस्त कार्य सिद्धि को प्राप्त हो जाते हैं। २ गिरिजा अर्थात् पार्वती के पुत्र गणेशजी की नाक हाथी की (सूँड) -सी है। इसके अतिरिक्त, उनका एक (मात्र) दाँत[1] उज्ज्वल है। उन्होंने परशु (जैसे) आयुध को हाथ में ग्रहण किया है, जिससे उन्होंने अनेक असुरों[2] का वध किया। ३ उनके (दोनों ओर) सिद्धि और बुद्धि (नामक) दो श्यामाएँ अर्थात सुन्दर स्त्रियाँ हैं, जिनसे उनके 'लाभ' तथा उसके अतिरिक्त 'लक्ष्य' नामक (दो) पुत्र (उत्पन्न) हो गये।[3] उन (गणेशजी) के अंग में (विलेपित) सिन्दूर शोभायमान है। अमृत की भाँति मधुर मोदक उनका खाद्य है। ४ उन्होंने नीलाम्बर (नील वस्त्र) तथा पीताम्बर (पीला वस्त्र) पहन लिये हैं। उनकी सेवा में 'श्रीवर्धनी' जाति की सुपारियाँ समर्पित होती हैं। (इस प्रकार के) मेरे प्रभु (श्रीगणेशजी) का (सर्व-) प्रथम पूजन करें। तोंद-धारी देव (श्रीगणेशजी) की जय हो। ५ हे गौरी-नन्दन, हे विश्व के

१ एक दाँत—पौराणिक मान्यता के अनुसार श्रीगणेश का एक दाँत खण्डित है; उसके टूट जाने के विषय में अनेक कथाएँ बतायी जाती हैं। उन्होंने अपने दन्त खण्ड को अपने आयुध के रूप में ग्रहण किया है। एक दाँत के टूट जाने पर उनका एक ही दाँत शेष है। (कहना न होगा कि गणेशजी के 'गज-मुख' होने के कारण हाथी की भाँति उनके मूलतः दो ही दाँत थे।) यहाँ पर उनके एकमात्र शेष दाँत के उज्ज्वल वर्ण की ओर संकेत है।

२ परशु, अंकुश आदि आयुधों से श्रीगणेशजी ने अनेक असुरों का वध किया, जैसे—सिन्दूरासुर, गजासुर, खड्ग, कमलासुर, इत्यादि।

३ सिद्धि-बुद्धि, लक्ष्य-लाभ—तांत्रिकों के अनुसार, गणेशजी की सिद्धि और बुद्धि नामक दो शक्ति-स्वरूपा स्त्रियाँ मानी जाती हैं; यह भी कल्पना की गयी है कि गणशजी के सिद्धि से लक्ष्य और बुद्धि से लाभ दो पुत्र उत्पन्न हुए।

गौरीनंदन विश्ववंदन, भीडभंजन देव,
तेत्रीस क्रोडमां दीपतो, सुर-नर करे तारी सेव। ६ ।
सेवुं ब्रह्मतनया सरस्वती, रूप-मनोहर मात,
तुं ब्रह्मचारिणी भारती, तुं वैष्णवी विख्यात। ७ ।
श्वेत वस्त्र ने श्वेत वपु, श्वेत वाहन हंस,
विश्वंभरी वरदायिनी, करे कोटि विघ्ननो ध्वंस। ८ ।
करुणाकटाक्षी कमलनयनी, कमळभू कन्याय,
वेद कर्म (=क्रम) जटा उपनिषद, धर्मशास्त्र ने न्याय। ९ ।
ब्रह्मविद्या ने योगविद्या, पुराण अष्टादश,
गान तान रसाल ताल, ए सर्व तारे वश। १० ।

लिए वन्दनीय, हे संकटों का नाश करनेवाले देवता, आप तैंतीस करोड़ देवों में (सर्वाधिक) दीप्तिमान हैं। सुर और नर आपकी सेवा करते हैं। ६ (अब) हे ब्रह्मा की तनया सरस्वती, हे मनोहारी रूप-धारिणी माता, मैं आपकी (स्तुति-स्वरूप) सेवा करता हूँ। आप ब्रह्मचारिणी[1] हैं, भारती अर्थात् वाणी की देवी हैं; आप विख्यात वैष्णवी (शक्ति-स्वरूपा) हैं। ७ आपने श्वेत वस्त्र धारण किया है और आपकी देह गौर (वर्ण की) है। आपका वाहन श्वेत हंस है। आप विश्वम्भरी अर्थात् विश्व का भरण-पोषण करनेवाली हैं, वरदायिनी हैं। आप कोटि (-कोटि) विघ्नों को नष्ट करती हैं। ८ आप करुणा भरे कटाक्षवाली हैं, कमल-सदृश नेत्र-धारिणी हैं; आप कमलोद्भव अर्थात् ब्रह्मा की कन्या हैं। वेद, क्रम और जटा[2], उपनिषदें, धर्मशास्त्र और न्याय, ब्रह्म (-ज्ञान-प्राप्ति सम्बन्धी) विद्या (ब्रह्म-ज्ञान सम्बन्धी विद्या या शास्त्र) और योग-विद्या (योग-शास्त्र), अठारह पुराण[3], रसात्मक गायन, तान (अलाप), ताल— ये सब आपके वश हैं। ९-१० दोहा, गाथा और

---

१ 'ब्रह्मचारिणी' संज्ञा से सरस्वती का भी बोध होता है।

२ क्रम-जटा—वेदों के पठन के चार प्रकारों में से एक प्रकार 'क्रम' कहलाता है, जिसके अनुसार संहिता के दो पदों की सन्धि करके उसका विशिष्ट क्रम से पठन किया जाता है। दूसरे एक प्रकार को 'जटा' कहते हैं, जिसके अनुसार संहिता के उपर्युक्त संधि-कृत दो पदों से आगे का तीसरा पद जोड़ते हुए क्रमानुसार पूर्व और उत्तरपद पहले पृथक्-पृथक् और फिर मिलाकर दो बार पढ़े जाते हैं।

३ अठारह पुराण—ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु (अथवा शिव), लिंग, गरुड़, नारद, भागवत, अग्नि, स्कन्द, भविष्य, ब्रह्म-वैवर्त, मार्कण्डेय, वामन, वराह, मत्स्य, कूर्म और ब्रह्माण्ड। (ये महापुराण कहलाते हैं। इनके अतिरिक्त, देवी, वरुण, विष्णु-धर्मोत्तर आदि अठारह उपपुराण हैं।)

दुहा गाथा ने कवित, कथा छंद भेद ने नाद,
ए तरंग तारा सरस्वती, छे शब्दना संवाद। ११।

चतुर्भुज ने चातुरी, वर्णवुं तारा न्यास,
वैशंपायन ने वालमीकि, तुंने माने वेदव्यास। १२।

कवित्त (जैसे छन्द), कथा, छन्दों के भेद और नाद, शब्दों के सम्वाद (सुसंगति-पूर्ण रचना) —हे सरस्वती, ये (समस्त) आपकी तरंगें हैं। ११ आप चतुर्भुज (-धारिणी) हैं, चतुर हैं। मैं आपके न्यास का वर्णन करता हूँ। वैशम्पायन[१] और वालमीकि[२], वेद व्यास[३] आपको मानते हैं। १२ जेमिनी[४] और पुराणों के वर्णन-कर्ता सूत[५] पर आपकी कृपा हो

---

१ वैशम्पायन—ये महर्षि व्यास के चार वेद-प्रवर्तक शिष्यों में से एक थे; ये कृष्ण यजुर्वेद तैत्तिरीय संहिता के प्रणेता थे। उन्हें सम्पूर्ण यजुर्वेद का ज्ञान प्राप्त था। इन्होंने ऋग्वेद के कई मंत्रों की नयी व्याख्या भी प्रस्तुत की। विशम्प वंश में उत्पन्न होने के कारण इन्हें 'वैशम्पायन' कहते हैं।

२ वालमीकि—एक मान्यता के अनुसार वालमीकि मूलत: एक दुराचारी दस्यु ब्राह्मण थे, जो मुनियों के सदुपदेश से तपस्या करके महर्षि पद को प्राप्त हो गये। तपस्या में लीन रहने पर उनके शरीर पर बलमीक अर्थात बमीठा तैयार हो गया। कुछ दिन बाद उन्हीं उपदेशक मुनियों के कहने पर वे बलमीक से बाहर आ गये; तब से वे वालमीकि नाम से विख्यात हो गये। उन्होंने संस्कृत के सर्वप्रथम महाकाव्य रामायण की रचना की; अत: वे आदि कवि कहलाते हैं।

३ वेदव्यास—ये महर्षि पराशर के सत्यवती (अर्थात् काली) नामक एक धीवर-कन्या से उत्पन्न पुत्र थे। इन्हें कृष्णद्वैपायन भी कहते हैं। इन्होंने महाभारत की रचना की। वेदों का विभिन्न संहिताओं में विभाजन तथा शिष्य-परम्परा द्वारा वेदों की रक्षा की सुव्यवस्था आदि इनके विशिष्ट कार्य हैं। इससे उन्हें वेदव्यास कहा जाता है।

४ जेमिनी—ये वेदव्यास के शिष्य थे। ये कौत्स-कुलोत्पन्न थे। ये युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज के रूप में उपस्थित थे। इन्होंने जैमिनी-अश्वमेध, जैमिनी-सूत्र आदि की रचना की।

५ सूत—रोमहर्षण सूत को समस्त्र पुराणों का आद्य कथन-कर्ता माना जाता है। वेदों का पुनर्गठन और पुराणों की रचना करके वेदव्यास ने अपने शिष्य सूत को समस्त पुराण सिखाये। उसके पश्चात् सूत ने समस्त पुराणों की आद्य-संहिता तैयार की।

जैमिनी ने सूत पुराणिक, तेने कृपा तारी हवी,
तें जट भट्टाचार्य कीधो, काळिदास कीधो कवि । १३ ।
करुणाळु तुं ने दयाळु तुं, हुं किंकर तारो माय,
रंक जाणी आप्य वाणी, ग्रंथ पूरण थाय । १४ ।
सहकार-फळ वामणो इच्छे, अपंग तरवा सिंध,
तेम दास तारो हुं इच्छुं छुं, बांधवा पदबंध । १५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पदबंध बांधुं कथा केरो, आख्यान ओखाहरण रे,
वदे विप्र प्रेमानंद मागुं, मा, करो ग्रंथ संपूर्ण रे । १६ ।

गयी । आपने ही जट[१] (= जड़) नामक एक ब्राह्मण को (अपनी कृपा से) भट्टाचार्य (पण्डित और दर्शनशास्त्र का ज्ञाता) बना दिया; कालिदास[२] को कवि बना दिया । १३ आप कृपालु और दयालु हैं। हे माता, मैं आपका किंकर (दास) हूँ। (मुझे) रंक समझकर आप वाक्शक्ति प्रदान कीजिए, जिससे यह ग्रन्थ पूर्ण हो जाए । १४ कोई वामन अर्थात् नाटा मनुष्य (अपने हाथ से ऊँचे) आम्र (वृक्ष से) फल (तोड़ना) चाहता हो, अथवा पंगु (अपने हाथों-पाँवों के बल) तैरकर समुद्र पार करना चाहता हो, (तो उसकी जो स्थिति हो जाएगी, वही स्थिति मेरी भी हो रही है)। मैं वैसे ही आपका दास हूँ और पद्य-रचना करने की इच्छा कर रहा हूँ । १५

मैं ओखा-हरण आख्यान की कथा को पद्यरचना में आबद्ध करने जा रहा हूँ। विप्र प्रेमानन्द कहते हैं— हे माता (सरस्वती), मैं (आपसे वाक्शक्ति का वरदान) माँग रहा हूँ, (कृपा करके) मेरे इस ग्रन्थ को पूर्ण कर दीजिए । १६

---

१ जट (जड़)—एक ब्राह्मण जो मन्दबुद्धि था। परन्तु सरस्वती की कृपा से वह दर्शन-शास्त्र का वेत्ता तथा आचार्य हो गया।

२ कालिदास—कहते हैं कि संस्कृत के विश्वविख्यात कवि तथा नाटककार कालिदास अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् बचपन में एक ग्वाले द्वारा लालित-पालित हो गये। अतः वे विद्यार्जन नहीं कर सके। उनका विवाह कपट से किसी सुन्दर राजकुमारी से कराया गया, जिसने उनकी विद्याहीनता की भर्त्सना की और उन्हें देवी की उपासना करने के लिए भेज दिया। तदनन्तर कालीदेवी की कृपा से उनमें विद्वत्व और कवित्व विकसित हो गया और वे कवि-कुलगुरु उपाधि से विख्यात हो गये। उन्होंने रघुवंश, कुमार-सम्भव, मेघदूत आदि काव्यों और अभिज्ञान-शाकुन्तल आदि नाटकों की रचना की।

कडवुं २ जुं—(शिवजी द्वारा बाणासुर को वरदान देना)

राग रामग्री

एणी पेरे बोल्या श्रीशुकदेवजी, बाणासुरनो उतार्यो अहमेव जी,
हरे आप्या सहस्त्र हाथ जी, चक्रे छेद्या ते वैकुंठनाथ जी। १।

ढाळ

वैकुंठनाथे हाथ छेदीने, उतार्युं अभिमान,
परीक्षित पूछे शुकदेवने, कहो ओखानुं आख्यान। २।

कड़वक २—(शिवजी द्वारा बाणासुर को वरदान देना)

श्रीशुकदेव इस प्रकार बोले, 'श्रीशिवजी ने बाणासुर[1] को एक सहस्त्र हाथ प्रदान किये थे; श्रीवैकुण्ठनाथ भगवान विष्णु (के अवतार श्रीकृष्ण) ने (सुदर्शन) चक्र से उन्हें छेद डाला और उसके अहंकार को छुड़ा दिया। १ श्रीवैकुण्ठनाथ ने उसके हाथों को छेदते हुए उसके अहंकार को छुड़ा दिया।' (यह सुनकर) परीक्षित[2] ने शुकदेव[3] से (उसके विषय में) पूछा (और विनती की) —'ओखा अर्थात ऊषा का आख्यान कहिए।'। २

---

१ बाणासुर—(बाण) भक्त प्रह्लाद के पौत्र असुर-राज वैरोचन-बलि का पुत्र था। दैत्यों के त्रिपुरों में से शोणितपुर नामक नगरी इसकी राजधानी थी। त्रिपुरों के निवासी दैत्य, देवों, ब्राह्मणों को उत्पीड़ित करते थे; अन्त में शिवजी ने अपने बाण से इन्हें जलाना आरम्भ किया, तो शोणितपुराधिपति बाण, जो शिवभक्त था, शिवजी की शरण में आया। उन्होंने प्रसन्न होकर बाण तथा उसकी नगरी को बचा लिया।

२ परीक्षित—परीक्षित कुरु-वंशीय सम्राट था। वह अर्जुन का पौत्र और अभिमन्यु-उत्तरा का पुत्र था। एक बार जब यह मृगया के लिए वन में गया था, तब उसने शमीक नामक ऋषि के गले में साँप डाल दिया; तो उस ऋषि के पुत्र श्रृंगी ने उसे शाप दिया —आज से सातवें दिन तक्षक नाग के दंश से तुम्हारी मृत्यु होगी। इस पर पश्चात्ताप-दग्ध परीक्षित को शुकदेव ने भागवत-पुराण का श्रवण करा दिया; तो वह पूर्णज्ञानी हो गया।

३ शुकदेव—शुक, व्यास ऋषि के पुत्र तथा शिष्य थे। व्यास ने उन्हें सम्पूर्ण वेदों और महाभारत की शिक्षा दी; वे महायोगी, योगशास्त्र के प्रणेता कहे जाते हैं। उन्होंने अपने लौकिक गुरु बृहस्पति से अनेक शास्त्रों और विद्याओं को सीख लिया। वे आरम्भ से ही अत्यन्त विरक्त थे; उन्होंने समस्त भोग्य वस्तुओं का त्याग किया था। उन्होंने अपने पिता से श्रद्धा-पूर्वक भागवत-पुराण का श्रवण किया; यही पुराण उन्होंने राजा परीक्षित को सुनाया।

व्यासनंदन वदे वाणी, वर्णवुं पूर्णानंद,
रसिक कथा भागवत तणी, ते मध्ये दशम स्कंध। ३।
शुकदेव कहे परीक्षितने, सुण बासठमो अध्याय,
आख्यान ओखाहरणनुं, अनिरुद्धहरण कथाय। ४।
परब्रह्मथी एक पद्म प्रगट्युं, तेथी प्रजाकर,
प्रजापतिनो मरीचि, तेनो कश्यप नामे कुंवर। ५।

तो व्यास-नन्दन ने यह बात कही। मैं पूर्ण आनन्द अनुभव करते हुए उसका वर्णन करता हूँ। (श्रीमत्) भागवत की कथा रसात्मक है; उसके अन्दर दशम स्कन्ध (में यह कथा वर्णित) है। ३ शुकदेव परीक्षित से बोले, 'उस (भागवत पुराण के दशमस्कन्ध) के बासठवें अध्याय को सुन लो। उसमें ओखा-हरण का आख्यान तथा अनिरुद्ध-हरण की कथा है। ४

(एक समय) परब्रह्म (-स्वरूप भगवान नारायण की नाभि में) से एक कमल प्रकट हुआ। उसमें से प्रजा-कर अर्थात् ब्रह्मा प्रकट हो गये। उन प्रजापति (ब्रह्मा) से मरीचि (उत्पन्न) हुए; उनके कश्यप नामक एक पुत्र (उत्पन्न) हो गये। ५ उनसे हिरण्यकशिपु[1] (नामक दैत्य) उत्पन्न हो गया, उससे (भक्तप्रवर) प्रह्लाद[2] हुए और प्रह्लाद से विरोचन हो गया। उस विरोचन के बलि[3] नामक बलवान पुत्र (उत्पन्न हो

१ हिरण्यकशिपु—कश्यप और दिति का पुत्र हिरण्यकशिपु नामक सुविख्यात दैत्यराज दैत्य-कुल का आदिपुरुष माना जाता है। अपने बन्धु हिरण्याक्ष का वध होने के पश्चात् उसने उसके वध का बदला भगवान विष्णु से लेने के हेतु, कठोर तपस्या करके ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया। उस वर के बल पर उसने सबका उत्पीड़न आरम्भ किया। उसने अपने विष्णुभक्त पुत्र को अनेक प्रकार से मार डालने का यत्न किया। अन्त में अपने भक्त की रक्षा के लिए भगवान विष्णु ने एक खम्भे में से नरसिंह के रूप में अवतरित होकर उसे गोद में रखकर, संध्या समय अपने नाखूनों से उसका वध किया।

२ प्रह्लाद—दैत्यराज हिरण्यकशिपु का प्रह्लाद नामक पुत्र बचपन से भगवान विष्णु का परम भक्त था। पिता द्वारा बार-बार विरोध करते रहने पर भी वह अविचल रहा। अतः हिरण्यकशिपु ने उसे एक बार विष खिलाकर, दूसरी बार हाथी के पाँवों के नीचे डलवाकर, तीसरी बार पर्वत-शिखर से गिरवाकर, फिर आग में झोंकवाकर मार डालने का यत्न किया। फिर भी प्रह्लाद जीवित रहा। अन्त में भगवान विष्णु ने नरसिंहावतार ग्रहण करके हिरण्यकशिपु का वध कर उसे राज्य प्रदान किया। प्रह्लाद दैत्यकुल का विख्यात राजा माना जाता है।

३ वैरोचन बलि—यह सुविख्यात विष्णुभक्त दैत्यराज-प्रह्लाद का पौत्र तथा विरोचन का पुत्र था और सप्तचिरंजीवों में से एक है। गुरु शुक्राचार्य की प्रेरणा

तेथी हिरण्यकशिपु, प्रह्लादजी, तेथी विरोचन,
विरोचननो बळी बळियो, तेनो बाणासुर राजन। ६ ।
ते शोणितपुरमां राज करतो, ऊपन्यो मन विचार,
वर पामुं ईश्वर आराधुं, वश वरतावुं संसार। ७ ।
तेणे शुक्राचार्यने पूछियुं, लागी गुरुने पाय,
कहो गुरुजी तप कर्यानो, शुद्ध मने उपाय। ८ ।
शुक्र बोल्या हेत करीने, सुण बाणासुर राजान,
सर्व थकी उत्तम उपासन, कहुं परम निधान। ९ ।
गंगातटे जई तप करो, उपासो महादेव,
भोळो शंभु प्रसन्न थई, वर आपशे ततखेव। १०।

गया और हे राजा, बाणासुर उस (बलि) का पुत्र था। ६ वह शोणितपुर में राज करता था। (एक समय) उसके मन में यह विचार उत्पन्न हो गया —मैं ईश्वर की आराधना करूँगा और उनसे वर प्राप्त कर लूँगा; (फिर उसके बल पर समस्त) संसार को अपने वश में कर लूँगा। ७ (तदनन्तर) उसने गुरु शुक्राचार्य[1] के पाँव लगते हुए उनसे पूछा (कहा) —'हे गुरुजी, मुझे शुद्ध अर्थात् दोष-रहित तपस्या करने का उपाय (विधि, मार्ग) बताइए'। ८ (इसपर) शुक्राचार्य प्रेम-पूर्वक बोले, 'हे राजा बाणासुर, सुन लो; मैं सबसे उत्तम परम निधान-स्वरूप उपासना (का विधान) बताता हूँ। ९ गंगा-तट पर जाकर तुम

से इसने स्वर्ग पर आक्रमण करके देवों को पराजित करते हुए इन्द्र की सम्पत्ति चुरायी। परन्तु वह समुद्र में गिर गयी। जब उसकी प्राप्ति के लिए समुद्र-मन्थन किया गया, तो उसमें दैत्यों को कोई लाभ नहीं हुआ। अतः इसने इन्द्र से फिर से युद्ध शुरू किया। अन्त में बलि ने अश्वमेध यज्ञ आरम्भ किया। एक दिन दान के अवसर पर भगवान विष्णु बटुरूप धारण करके उस स्थान पर अवतरित हो गये और उन्होंने तीन पद भूमि दान में माँग ली। बलि ने उसे स्वीकार किया तो उन्होंने प्रथम पद में पृथ्वी को और दूसरे में स्वर्ग को व्याप्त कर लिया। बलि के कहने पर उस बटु वामन ने अपना तीसरा पाँव उसके मस्तक पर रखा और उसे पाताल में धकेल दिया। इस प्रकार भगवान विष्णु ने देवों की रक्षा की और वे स्वयं बलि के द्वारपाल के रूप में पाताल में ठहर गये।

१ शुक्राचार्य—भार्गव कुलोत्पन्न शुक्र नामक ऋषि दैत्यों के गुरु थे। वे भृगु ऋषि से उत्पन्न हिरण्यकशिपु की कन्या दिव्या के पुत्र थे। जब बलि बटु वामन को दान देने लगे तब शुक्राचार्य उदक की झारी की टोंटी में जा बैठे। तब बटु ने दर्भ से टोंटी को साफ किया, तो शुक्राचार्य की एक आँख फूट गयी। तब से ये एकाक्ष बन गये। इन्हें संजीवनी विद्या प्राप्त थी; उससे वे देवासुर संग्राम में मृत दैत्यों को पुनर्जीवित करते थे। परन्तु देवगुरु बृहस्पति के पुत्र कच ने चतुराई से इनसे संजीवनी विद्या प्राप्त की; तब से दैत्यों का बल क्षीण होने लगा।

शुक्रनां वायक सांभळी, थयो बाण मन उल्लास,
तप करवाने चालियो, मन धरीने विश्वास। ११।
कौभांड नामे मोटो मंत्री, तेने सोंप्युं पुर,
कैलास निकटे गंगातटे, जई तप करे असुर। १२।
आसन वाळीने लागी ताळी, जपे भोळो दृढ मन,
शत वरस एम वही गयां, ऊधई वळगी तन। १३।
वृषा, शीत ने ग्रीष्म वेठे, ओढवा अवनि ने आभ,
श्रवणे सुग्रीवे माळा घाल्या, मस्तके ऊग्यो डाभ। १४।
क्षुधा तृषा त्यजीने बेठो, अघोर मांड्युं तप,
माळा फेरवे मन तणी, जपे जोगेश्वरनो जप। १५।
इंद्रे मोकली अप्सरा, तप ध्यान करवा भंग,
बाणासुर चूके नहीं, परभवे नहीं अनंग। १६।

तपस्या करो, महादेव (शिवजी) की आराधना करो। (तब) भोले शम्भु (शिवजी) प्रसन्न होकर तुम्हें तत्क्षण वरदान देंगे'। १० शुक्राचार्य की यह बात सुनकर बाण को मन में उल्लास (अनुभव) हो गया और मन में विश्वास धारण करते हुए वह तपस्या करने चल दिया। ११ कौभाण्ड नामक उसका बड़ा (श्रेष्ठ) मन्त्री था। उस असुर (बाण) ने उसे अपना नगर सौंप दिया और कैलास के निकट गंगा-तट पर जाकर वह तपस्या करने लगा। १२ आसन लगाकर और तन्मय होकर वह अविचल मन से भोला (-नाथ) शिवजी (के नाम) का जाप करने लगा। इस प्रकार (जाप करते-करते) सौ वर्ष व्यतीत हो गये। उसके शरीर में दीमक लग गयी। १३ वर्षा, शीत और ग्रीष्म (गरमी) को उसने सहन किया; (उसके लिए मानो) धरती और आकाश ओढ़ने के लिए थे। कानों और सुन्दर ग्रीवा (गरदन) पर उसने (मानो) घोंसले खोंस लिये। उसके मस्तक पर दर्भ उग गये। १४ वह भूख और प्यास (का विचार) छोड़कर बैठ गया था। उसने (इस प्रकार) बहुत विकट तपस्या आरम्भ की थी। वह मन (के मनकों) की माला फेरता था और योगेश्वर (शिवजी) का जाप करता था। १५ उसके तप और ध्यान को भग्न करने के लिए इन्द्र ने एक अप्सरा को भेज दिया; (परन्तु) बाणासुर चूका नहीं (अर्थात् उसका मन विचलित नहीं हुआ और तपस्या खण्डित नहीं हुई)। उसे अनंग अर्थात कामदेव पराजित नहीं कर सका। १६ (अन्त में) अतिथि का रूप धारण करके शिवजी (अपने नन्दी नामक) वृषभ (बैल) पर आरूढ़ होकर आ गये और उन्होंने राजा

वृषभे चढी शिव आवियां, धरी अतीत केरुं रूप,
बाणासुरने बोलावियो, भावे करीने भूप । १७ ।
नेत्र उघाडीने नीरखियुं, त्यारे दीठा शंकर जाण,
धसी हसीने चरणे लाग्यो, स्तुति करी निरवाण । १८ ।
माग्य माग्य रे महीपति, एम कहे छे उमियानाथ,
बाणासुर कहे नाथजी, मने आपो सहस्रज हाथ । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सहस्र हाथ आपो हरजी, गणो गणपति समान रे,
विपत पडे तो आवजो, एम कही शिव हवा अंतरध्यान रे । २० ।

बाणासुर को प्रेम-पूर्वक बुला लिया। १७ समझिए कि (जब) उसने आँखें खोलकर देखा, तब उसने (अपने सामने) शिवजी को देखा। हँसकर (फिर) वह बड़े वेग से आगे बढ़ते हुए उनके पाँव लगा और उसने उनकी चरम सीमा तक स्तुति की। १८ (उससे प्रसन्न होते हुए) उमानाथ शिवजी इस प्रकार बोले, 'हे महीपति, माँग लो, माँग लो'। तो बाणासुर बोला, 'हे नाथ (शिव) जी, मुझे एक सहस्र हाथ ही प्रदान कीजिए। १९

हे हर (शिवजी), मुझे एक सहस्र हाथ प्रदान कीजिए और (अपने पुत्र) गणेश के समान मान लीजिए।' यह सुनकर शिवजी ऐसा कहते हुए अन्तर्द्धान (अदृश्य) हो गये— 'विपत्ति आ पड़े, तो (मेरे पास) आ जाना'। २०

कडवुं ३ जुं—(शिवजी द्वारा बाणासुर को वरदान देना)

राग-यमन-कल्याण

आव्या आव्या उमया सहित महादेव, दीठी दीठी असुर तणी घणी सेव,
नयने नीरख्यो असुरनो देह, दीठो सूका काष्ठवत् तेह । १ ।

कड़वक ३—(शिवजी द्वारा बाणासुर को वरदान देना)

श्री शिवजी उमा-सहित आ गये— (गंगा-तट पर) आ गये और उन्होंने उस असुर द्वारा की जानेवाली बड़ी (तपस्या-स्वरूप) सेवा देखी, ध्यान से देखी। उन्होंने अपनी आँखों से उस असुर की देह देखी— उन्होंने वह सूखी लकड़ी-सी हुई देखी। १ उसे शिवजी के साथ तन्मयता

तेने लागी शंभुजीशुं ताळी, बाणासुर बेठो आसन दृढ वाळी,
एवां एवां तपनो मांड्यो अभ्यास, माथा उपर फूटी नीकळ्यां घास । २ ।
एना तपनो नहीं आव्यो पार, एम वर्ष गयां छे एक हजार,
एवुं तप जोईने बोल्या त्रिपुरारि, तमे सांभळो पार्वती नारी । ३ ।
एने तपे त्रैलोक बाधु डोले, बाणासुर तो बोलाव्यो नव बोले,
तमे कहो तो एने वर आपुं, ने हुं सत्य वचन करी थापुं । ४ ।
वळतां बोल्यां पार्वती राणी, एवा दुष्टने नापो शूलपाणी,
दूध पाईने उछेरो छो साप, तेथी तमे पामशो महा संताप । ५ ।

प्राप्त हुई थी। (इस प्रकार) बाणासुर आसन लगाये हुए अविचल बैठा हुआ था। उसने तपस्या का इस प्रकार अभ्यास आरम्भ किया था। उसके माथे पर घास उग आयी थी। २ उसके तप का कोई अन्त नहीं आ रहा था। इस प्रकार एक सहस्र वर्ष बीत गये। उसके ऐसे तप को देखते हुए त्रिपुरारि[1] शिवजी बोले, 'हे स्त्री पार्वती, तुम सुन लो। ३ इसके तप के कारण समस्त त्रिलोक (स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल) डोलने लगे हैं। इस बाणासुर को बुलाने पर भी —बोलने के लिए प्रेरित करने पर भी वह नहीं बोल रहा है। तुम कहो, तो इसे वर दे दूँ और मैं अपने वचन को सत्य करके (अपने वचन की सत्यता की स्थापना कर) दिखा दूँ।'। ४

इस पर प्रत्युत्तर स्वरूप रानी पार्वती बोलीं, 'हे शूलपाणि, इस दुष्ट को (कोई वर) न देना। आप साँप को दूध पिलाकर बड़ा कर रहे हैं। उससे आप महा सन्ताप को प्राप्त हो जाएँगे। ५ पहले आपने भस्मांगद[2] को वरदान दिया था। वह वरदान को प्राप्त हुआ और

---

१ त्रिपुरारि—मय दानव ने तीन नगरों का निर्माण किया। इनमें से एक नगर सोने का था, जो स्वर्ग में निर्मित था। दूसरा अन्तरिक्ष में चाँदी का बनाया हुआ था और तीसरा पृथ्वी तल पर लोहे का विरचित था। मय ने ये नगर अपने पुत्रों को प्रदान किये। इन नगरों को त्रिपुर कहते हैं। मय-पुत्रों—तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्मालि ने संसार को बहुत उत्पीड़ित किया, उससे तंग आकर देवों ने शिवजी से रक्षा करने की विनती की, तो उन्होंने एक ही बाण से उन तीनों नगरों को जला डाला और यथासमय उन तीनों दानवों को भी मार डाला। अतः शिवजी 'त्रिपुर के अरि' कहलाते हैं।

२ भस्मांगद—भस्मासुर या भस्मांगद नामक असुर शिवजी की विभूति से उत्पन्न हुआ था। यह शिवजी का परम भक्त था और उसे उनसे यह वरदान प्राप्त हुआ कि वह जिसके सिर पर हाथ रखे, वह तत्काल दग्ध होकर भस्म हो जाएगा। इस वर से उन्मत्त होकर वह दूसरों को संत्रस्त करने, जलाने लगा। अन्त में भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप में उसे मोहित करके अपने अनुकरण में नृत्य करने की प्रेरणा

पहेलां तमे भस्मांगद वरदान दीधुं, वरदान पाम्यो कारज एनुं सीध्युं,
वरदान रावणादिकने आप्यां, तेणे दुष्टे जानकीनाथ संताप्या । ६ ।
ते माटे झाझुं शुं तमने कहिये? हां रे एवा दुष्टथी वेगळा रहिये,
पछे तमने शी शिखामण दीजे, भोळा शंभु रूडुं जाणो तेम कीजे । ७ ।
जाओ नारी पानीए बुद्धि तमारी, वरदान आपतां न राखीए वारी,
एवुं कहीने बोल्या ते भोळो नाथ, दीधो बाणासुरने शिर हाथ । ८ ।
ऊठ ऊठ पुत्र तुं वर माग्य, तुं तो समाधि त्यजीने जाग्य,
वाणी शंभुनी सुणीने जाग्यो, तेणे शिवजी पासे वर माग्यो । ९ ।
स्वामी मने सहस्र हाथज आपो, मुजने पुत्र करीने थापो,
एक एक हस्त एवो कीजे, हस्ती सहस्रगणुं बळ दीजे । १० ।
अस्तु अस्तु कहीने शिवे वर आप्यो, तेने तो पुत्र करीने थाप्यो,
वरदान लईने दानव घेर आव्यो, तेने बधा नग्रलोके रे वधाव्यो । ११ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

वधाव्यो त्यां लोक सर्वे, आनंद घणो मन थाय रे,
आवी राज बेठो बाणासुर, तेने ऊलट अंग न माय रे । १२ ।

उसका कार्य सिद्ध हो गया। आपने (फिर) रावण आदि को वरदान दिया; उस दुष्ट ने जानकीनाथ श्रीराम को सन्तप्त कर दिया । ६ इसलिए मैं आपसे अधिक क्या कहूँ ? हाँ, (इतना ही करें कि) इस दुष्ट से दूर रह जाएँ। फिर हम आपको क्या सिखावन दें ? हे भोला (-नाथ) शिवजी, जो अच्छा समझें, आप वह कर लें।'। ७ 'हे नारी, जाओ, तुम्हारी बुद्धि तलुओं तक ही है अर्थात् सीमित है। अतः वरदान देने में मुझे न रोक दो।' ऐसा कहकर भोलानाथ ने बाणासुर के सिर पर हाथ रखा और वे (उससे) बोले। ८ 'उठो, उठो, हे पुत्र। तुम (कोई) वर माँग लो। समाधि छोड़कर जाग उठो।' शिवशम्भु की वाणी को सुनकर वह जग गया और उसने उनसे वर माँग लिया। ९ 'हे स्वामी, मुझे एक सहस्र हाथ ही प्रदान कीजिए और मुझे अपने पुत्र के रूप में प्रतिष्ठित कर लीजिए। मेरे एक-एक हाथ को ऐसा बना दीजिए— उसे एक-एक सहस्र हाथियों का बल प्रदान कीजिए।'। १० यह सुनकर शिवजी ने '(तथा) अस्तु, (तथा) अस्तु' कहते हुए उसे वर प्रदान किया और उसे अपने पुत्र के रूप में प्रतिष्ठित कर लिया। ११

दी। जब वह नृत्य करने लगा, तो मोहिनी ने एक नृत्य मुद्रा के बहाने अपने सिर पर हाथ रखा; यह देखकर भस्मासुर ने भी अपने मस्तक पर हाथ रखा, तो वह जलकर भस्म हो गया।

तब सब लोगों ने हर्ष पूर्वक उसका स्वागत-सत्कार किया, तो उसको मन में बहुत आनन्द (अनुभव) हो गया। (इस प्रकार अपने नगर में) आते ही बाणासुर राज (-गद्दी) पर बैठ गया। उसके अंग-अंग में उमंग नहीं समा रही थी। १२

कडवुं ४ थुं—(शिवजी द्वारा बाणासुर को अभिशाप देना)

राग केदारो

वर आपी वळ्या विषधारी रे, सहस्र भुज पाम्यो अहंकारी रे,
खोंखारीने कहे पाम्यो हुं जय रे, हुं तो थयो छुं अक्षय रे। १।
अभिमानी बोले एम गर्व वचन रे, पुर विषे आव्यो राजन रे,
सहुने आनंद वाध्यो मन रे। २।

ढाळ

पाय लागे प्रजा पुरनी, आवी मळ्यो परधान,
सहस्र भुज अंबुज फूल्यां, तरुवरने समान। ३।

कड़वक ४—(शिवजी द्वारा बाणासुर को अभिशाप देना)

(अपने कण्ठ में) विष धारण करनेवाले शिवजी[1] वर प्रदान करके लौट गये, तो (इधर) वह अहंकारी (बाणासुर) सहस्र भुजों को प्राप्त हो चुका था। (तदनन्तर) वह (बड़प्पन दिखलाने के हेतु) खाँसते-खखारते हुए (हुँकारते हुए) बोला, 'मैं (अब) जय को प्राप्त हुआ हूँ, मैं तो (अब) अक्षर अर्थात् अमर हो गया हूँ। १ वह अभिमानी राजा इस प्रकार गर्व-पूर्वक बातें कर रहा था। वह अपने नगर में (लौट) आया, तो (उसे देखकर) सबके मन में आनन्द की वृद्धि हो गयी। २ नगर की प्रजा उसके पाँव लगी; मन्त्री आकर उससे मिल गये। (किसी बड़े) वृक्ष (की शाखाओं) के समान (उस राजा के)

---

[1] विषकण्ठ शिवजी—जब देवों और दानवों ने अमृत-प्राप्ति के लिए समुद्र का मन्थन किया, तो उसमें से हलाहल नामक अत्यन्त उग्र विष निकला। वह दिशा-विदिशा में, ऊपर-नीचे सर्वत्र उड़ने और फैलने लगा। उससे बचने के लिए प्रजा-सहित प्रजापति शिवजी की शरण में गये। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर शिवजी ने हलाहल को हथेली पर उठाकर खा लिया, तो उस विष के प्रभाव से उनका कण्ठ नील पड़ गया। कहते हैं, शिवजी ने उसे अपने कण्ठ में धारण किया। अतः वे विषकण्ठ, नीलकण्ठ कहाते हैं।

जाणे जगमां वडडाळ फूली, हस्त एम राजा तणा,
पोहोंचे पोहोंची झगमगे, जेवी शेषनागनी फणा । ४ ।
एक एक हस्ते सहस्र हस्तीबळ, वसुधातळ वश कीधुं,
नागवर्ग ने स्वर्ग जीती, एकचकवे राज कीधुं । ५ ।
चोसठ देश ने चारे दिशा, बाणे वर्तावी आण,
पाय पृथ्वीने ध्रुजावे, जुद्ध जुद्ध वदे मुख वाण । ६ ।
मंत्री साथे वढवुं मागे, बाथ भीडीने अंग,
मातंग हारे हयने पछाडे, पाडे पर्वतशृंग । ७ ।
भरावे बाथ ने हाथ झाटके, मुखे भाखे मेघस्वर,
वढनार पाखे बाण शरीरे, प्रगट्यो प्राक्रमज्वर । ८ ।
गण गांधर्व ने अप्सरा साथे, कैलास गयो राजन,
बाणासुरे शंकरद्वारे, मांड्युं संगीत गान । ९ ।

सहस्र कमल-सदृश हस्त फूट निकले हुए थे । ३ जान पड़ता था कि उस स्थान पर बरगद की शाखा ही फूली हुई हो । उसकी कलाइयों में पहुँचियाँ जगमगा रही थीं, जसे शेषनाग के फन ही हों । ४ उसके एक-एक हाथ में (एक-एक) सहस्र हाथियों का बल था । (उससे) उसने पृथ्वी-तल को (जीतकर अपने) अधीन कर लिया । (फिर) नाग-वर्ग (नाग जाति के लोगों को) तथा स्वर्ग को जीतकर वह एक-चक्र राज करने लगा । ५ बाणासुर ने चौंसठ देशों और चारों दिशाओं पर अधिकार फैला दिया । वह अपने पदों (के आघात) से पृथ्वी को कम्पायमान कर देता था और मुख से 'युद्ध', 'युद्ध', शब्द बोलता था । ६ अंग से अंग भिड़ाकर वह मन्त्री को साथ में लेकर लड़ना चाहता था । वह हाथी को मार डाल सकता था । घोड़े को पछाड़ सकता था और पर्वत-शिखर को ढहा सकता था[1] । ७ (कभी) वह अंग से अंग भिड़ाता, तो (कभी) हाथ (पकड़कर फिर) झटकाता और मुख से मेघ का-सा स्वर निकालता था— मेघ-गर्जन-से स्वर में बोलता था । (प्रति-) योद्धा के अभाव में बाणासुर के शरीर में प्रताप-ज्वर उत्पन्न हो गया । ८ हे राजा, (एक समय) बाणासुर गन्धर्वों और अप्सराओं के समुदाय सहित कैलाश गया और उसने शिवजी

१ श्रीमद्भागवत (दशम स्कन्ध, अध्याय ६२) के अनुसार बाणासुर की बाँहों में लड़ने के लिए इतनी खुजलाहट हुई कि वह दिग्गजों की ओर लपका, तो वे डरके मारे भाग गये; उस समय मार्ग में उसने अपनी बाँहों की चोट से बहुत-से पहाड़ों को तोड़-फोड़ डाला था ।

थैथैकार घमकार घूघरना, अबळापगमां ठमठमता,
मंदिरमांथी महादेव नीकळ्या, रामानी संगे रमता । १० ।
असुर ईश्वर ने अप्सरा नाचे, ते इन्द्रादिक जोय,
चंग मृदंग ने वीणा रसना, शब्द एकठा होय । ११ ।
महादेवजी रसमग्न हवा, रायने थया तुष्टमान,
बाणासुरने कहे उमियावर, माग्य माग्य वरदान । १२ ।
राय कहे प्रभु प्रथम तमे, आप्या सहस्र हस्त,
ते भुजबळ मारुं कोणे न भांग्युं, में जीत्या लोक समस्त । १३ ।
स्वामी बळ आप्युं तो जोद्धो आपो, ए मागवुं छे मारे,
तमे वढो के वढनार आपो, जे मारा मदने उतारे । १४ ।
तव रीस चढी अंतरे ईश्वरने, तुं मागतां चूक्यो मूर्ख,
तारा भुजनो भार उतारशे, त्रिलोकपूजन पुरुष । १५ ।
पुत्री तारीनो वडससरो ते, तारा भुजने हणशे,
थडथी छेदीने कर ताराना कटके कटका करशे । १६ ।

के (निवास-स्थान के) द्वार पर संगीत-शास्त्रानुसार गायन आरम्भ किया । ९ थ-थै-कार सहित अबलाओं-(नारियों) के पाँवों में बँधे घुँघरुओं की झनक-झनक गूँज रही थी । तो शिवजी, जो अपनी पत्नी-सहित लीला कर रहे थे, अपने भवन में से बाहर आ गये । १० (उन्होंने देखा कि) असुराधिपति (बाणासुर) और अप्सराएँ नृत्य (और गायन) कर रहे थे और उसे इन्द्र आदि (देव) देख रहे थे । चंग (डफ), मृदंग और वीणा तथा जिह्वा अर्थात् मुख की ध्वनियाँ एक (-ताल में), हो रही थीं । ११ (यह देखते हुए) शिवजी उस (नृत्य-गान से प्राप्त आनन्द-) रस में मग्न हो गये और उस राजा के प्रति प्रसन्न हो गये । (फिर) उमापति शिवजी बाणासुर से बोले, 'माँगो, वरदान माँग लो' । १२ (तब) उस राजा ने कहा, 'हे प्रभु, पहले आपने मुझे एक सहस्र हाथ प्रदान किये हैं । मेरे उस बाहु-बल को कोई भी भग्न नहीं कर पाया । मैंने समस्त लोक जीत लिये हैं । १३ हे स्वामी, आपने (मुझे) बल तो दिया है, (अब मुझे) कोई योद्धा दे दीजिए— मुझे (आपसे) यही माँगना है । मुझसे आप लड़ लीजिए अथवा लड़नेवाला (योद्धा) दीजिए, जो मेरे मद को उतार सके । ' । १४ तब (यह सुनकर) भगवान शिवजी को क्रोध आ गया (और वे बोले)— रे मूर्ख, तू माँगने में भूल कर रहा है । तेरे बाहुओं के भार को त्रिभुवन-पूज्य पुरुष (अर्थात् भगवान विष्णु) उतार देंगे । १५ वे तेरी पुत्री के ददिया-ससुर होकर तेरी भुजाओं को

तव बाणासुरने शुद्ध हवी, ए तो में माग्यो शाप,
कडाक कडाक कटका थाशे त्यारे, केम खमाशे अदाप ? । १७ ।
भूप कहे सांभळिये स्वामी, तम वचन प्रमाण,
एटलुं मागुं आप कने, आगळथी थाये जाण । १८ ।
शिव कहे तारी धर्मधजा, आफणिए भांगी पडशे,
त्यारे तो तुं जाणजे, रिपु आवी गडगडशे । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

गाजशे शत्रु कही वळाव्यो, नग्रमां आव्यो सोय रे,
आसन बेसी दहाडी बाणासुर, धजा सामुं जोय रे । २० ।

काट डालेंगे । वे तेरे धड़ से तेरे हाथों को काटकर टुकड़े-टुकड़े कर देंगे । ' । १६ तब (यह सुनते ही) बाणासुर को होश आ गया— (और उसकी समझ में आ गया कि) यह तो मैंने अभिशाप माँग लिया । जब, मेरे बाहु कड़ाके के साथ (कटकर) टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे, तब उस दुःख को मुझसे किस प्रकार सहन किया जाएगा । १७ (फिर भी असुरों के उस) राजा ने कहा, ' हे स्वामी, सुनिए, आपका वचन सत्य होगा । मैं आपसे इतना ही माँग रहा हूँ कि इसके आगे (मुझे) ज्ञान (प्राप्त) हो जाए । ' । १८ (इस पर) शिवजी ने कहा, ' तेरी धर्म-ध्वजा (जब) अपने-आप सहसा भग्न हो जाएगी, तब तू समझ लेना कि तेरा शत्रु आकर गरज उठेगा । १९

' (तेरा) शत्रु गरज उठेगा ' कहते हुए (शिवजी ने) उस (बाणासुर) को बिदा किया, तो वह अपने नगर में (लौट) आया । (फिर) प्रतिदिन आसन पर बैठकर वह बाणासुर) अपने ध्वज की ओर देखता रहता । २०

कडवुं ५ मुं—(गणेशजी और ओखा की उत्पत्ति)

राग बिलावल

वळी वळी पूछ्युं परीक्षित रायजी, शुकदेवजी कहोने कथाय जी,
देवकन्या प्रगटी जेह जी, दैत्यपुत्री तणो संदेह जी । १ ।

कड़वक ५—(गणेशजी और ओखा की उत्पत्ति)

राजा परीक्षित ने पुनः पुनः कहा, ' हे शुकदेवजी, (आप ओखा की उत्पत्ति सम्बन्धी) कथा कहिए । (वस्तुतः) जो देवकन्या के रूप में प्रकट हो गयी थी, उसके दैत्य-कन्या हो जाने में (मुझे) सन्देह (हो रहा) है । १

ढाळ

दैत्यपुत्री केम हवी, शुकदेवजी कहोने सत्य,
विस्तारीने वर्णवो, ओखा तणी उतपत्य । २ ।
शुकदेव वळतुं बोलिया, तमे भली पूछी वात,
ओखानी उत्पत्य क्यम हवी, कहुं तमने साक्षात् । ३ ।
एक वार गिरि कैलासथी, शिवजी ते मधुवन जाय,
उमयाजी घेर एकलां, तेणे विचार्युं मनमांय । ४ ।
शिवने दिवस थाशे घणां, नंदी ने भृंगी संग,
संतान मारे कांई नहि, ते माटे ल्योने संग । ५ ।
शिवजी कहे, करजो प्रगट, इच्छा थकी संतान,
तप करवा जाउं छुं, धरवाने हरिनुं ध्यान । ६ ।
एम कहीने शंकर चाल्या, आव्या ते गंगातीर,
दृढ आसन वाळीने बेठा, मनमां राखी धीर । ७ ।
दिवस केटला वही गया, ने चैत्र मास ते आव्यो,
परसेवो उमियाने अंगे, थयो ते तो नव भाव्यो । ८ ।

वह दैत्य-कन्या कैसे हो गयी ? हे शुकदेवजी (इस सम्बन्ध में जो) सत्य (है वह) कह दीजिए। ओखा की उत्पत्ति (सम्बन्धी कथा) विस्तार-पूर्वक कहिए'। २ (इसपर) शुकदेव फिर बोले— (हे राजा) तुमने अच्छी बात पूछी। मैं प्रत्यक्ष कह रहा हूँ कि ओखा की उत्पत्ति कैसे हो गयी ? ३ एक समय शिवजी कैलास पर्वत से मधुवन जा रहे थे (जाना चाहते थे)। (उससे) उमा तो घर में अकेली रह जानेवाली थीं। (तब) उन्होंने मन में यह विचार किया। ४ शिवजी को (वहाँ) बहुत दिन लग जाएँगे; उनके साथ शृंगी और भृंगी[1] हैं। मेरे (साथ) कोई सन्तान (भी) नहीं है। (इससे वह बोलीं,) 'मुझे अपने साथ ले चलिए।'। ५ (यह सुनकर) शिवजी बोले, 'अपनी इच्छा से तुम सन्तान उत्पन्न कर लो। मैं तो तपस्या करने, श्रीहरि का ध्यान धारण करने जा रहा हूँ'। ६ ऐसा कहकर शिवजी चल दिये और गंगा-तट पर आ गये। मन में धैर्य धारण करके वे अविचल आसन लगाकर बैठ गये। ७ कितने ही दिन बीत गये। चैत्र मास आ गया। उमा के शरीर में पसीना आ गया। यह उन्हें अच्छा नहीं लगा। ८ (जब) अपना शरीर

१ शृंगी-भृंगी—शृंगी-भृंगी शिवजी के पार्षद थे। इनमें से शृंगी वेताल और कामधेनु का पुत्र था। वह शिवभक्त था, इसलिए शिवजी ने उसे अपना पार्षद नियुक्त किया। यह सृष्टि की समस्त गो-सन्तति का पिता माना जाता है।

मार्जन करवा इच्छा कीधी, मलिन दीठुं अंग,
सुगंधी तेल ककडावियां, जल उष्ण मूक्युं प्रसंग। ९।
पार्वतीए मन विचार्युं, मंदिरमां नथी कोय,
हुं पुत्र एक प्रगट करुं, जे द्वार आगळ जोय। १०।
पछे दक्षिण अंगथी मेल उतारी, घड्युं पुत्रनुं रूप,
तेना हाथ, पग ने घूंटण, पहानी टूंकडुं अंगस्वरूप। ११।
चतुर्भुज ने फांद मोटी, मोटुं ते मस्तक संग,
कपोल ग्रीवा सुंदर शोभे, विचित्र दीसे अंग। १२।
तेना वाम करमां कमळ आप्युं, बीजे बेरखो जाण,
त्रीजे हाथे जलकमंडल, दक्षिण फरशी पाण। १३।
बाजुबंध ने बेरखा, कुंडळ घाल्यां कर्ण,
कटीए शोभे मेखला ने, घूघरा बांध्या चर्ण। १४।
तेने सर्पनुं उपवीत आप्युं, मोदिक आप्यो आहार,
मूषकनुं वाहन आप्युं, उर सेवंत्रानो हार। १५।

मलिन दिखायी दिया, तो उन्होंने स्नान करने की इच्छा (अनुभव) की (स्नान करना चाहा)। (फिर) उन्होंने पानी उबाला और उस गर्म जल में सुगन्धित तेल प्रसंगानुकूल डाल दिया। ९ (उस समय) पार्वती ने मन में सोचा, ' घर में तो कोई नहीं है। (अतः) मैं एक पुत्र को उत्पन्न कर दूँ, जो द्वार पर (बैठकर) सामने देखता रहे (देखरेख करे)। १० अनन्तर उन्होंने अपने दाहिने अंग से मैल उतारकर उससे एक पुत्र की मूर्ति का निर्माण किया। उसके हाथ, पाँव और घुटने, एड़ियाँ —ये अंग स्वरूप अर्थात् आकार रूप आदि में छोटे-छोटे थे। ११ उसके चार हाथ थे, उसकी तोंद बड़ी थी, साथ ही उसका मस्तक बड़ा था। उसके गाल और ग्रीवा (गरदन) सुन्दर, शोभायमान थे। उसका शरीर विचित्र दिखायी दे रहा था। १२ समझिए कि (उमा ने) उसके बायें हाथ में कमल (थमा) दिया, दूसरे हाथ में रुद्राक्ष माला, तीसरे हाथ में जल का कमण्डल तथा दायें हाथ में परशु (पकड़ा) दिया। १३ उन्होंने (बाहुओं में) बाजूबन्द और रुद्राक्ष-मालाएँ तथा कानों में कुण्डल पहना दिये। उसकी कटि में मेखला शोभायमान थी। (उन्होंने) पाँवों में घुंघरू बाँध दिये। १४ उसे साँप का, अर्थात् सर्प रूपी जनेऊ (पहना) दिया और आहार के लिए मोदक दिया। मूषक का, अर्थात् मूषक (चूहे) के रूप में वाहन दिया और वक्षःस्थल पर सुपारियों का हार पहना दिया। १५

तेनुं घृत सिंदूरे अंग चर्च्युं, काया कंचननी परिधाम,
प्रतिहार करीने थापियो, गणपति धरियुं नाम। १६।
मुखवचन माताजी बोल्या, हुं मार्जन करुं आ वार,
कोई पुरुष आवे आंगणे तो, राखजे ऊभो द्वार। १७।
एकलो बाळक बारणे बीशे, विचार्युं मन मात,
एनी पासे जोड होय तो, बेठां करे बेउ वात। १८।
वाम अंगथी मेल उतारी, घड्युं कन्यास्वरूप,
तेनी शोभा शी वर्णवुं ? शुकदेव कहे सुण भूप। १९।
तेनु वदन पूनमचंद्र सरखुं, नेन निर्मळ जाण,
नासिका शुकचांच सरखी, दशन बीज प्रमाण। २०।
तेना अधर अति ओपे राता, कपोल ग्रीवा जेह,
भुजदंड छे गजसूंढ सरखा, कुच बिजोरां तेह। २१।
तेनी जंघा जाणे कदली सरखी, उर उज्ज्वळ अंग,
तेना चरण जाणे पद्मनां, केसरी कटीनो लंक। २२।

उन्होंने उसके शरीर को घी और सिंदूर से विलेपित किया। उसकी देह पर सोने का (-सा) अधोवस्त्र, अर्थात् पीताम्बर (धारण कराया हुआ) था। (ऐसा रूप धारण करनेवाले) उस पुत्र को प्रतिहारी (द्वारपाल, पहरेदार) के रूप में (उमा ने) स्थापित कर दिया और उसे गणपति नाम धारण कराया। १६ तदनन्तर माताजी—उमा बोलीं, 'इस समय मैं स्नान करती हूँ। (यदि) कोई पुरुष आँगन में आ जाए, तो उसे द्वार पर (बाहर खड़ा) रखना'। १७ (फिर) माता ने मन में सोचा, द्वार पर यह अकेला बालक डर जाएगा; (यदि) इसके पास कोई साथी हो, तो ये दोनों बैठे-बैठे बातें करेंगे। १८ (ऐसा सोचकर) बायें अंग से मैल उतार कर उन्होंने उससे कन्या स्वरूप (मूर्ति) का निर्माण किया। मैं उस (कन्या) की सुन्दरता का वर्णन कैसे करूँ ? शुकदेवजी बोले, 'हे राजा, सुनो। १९ समझ लो, उस (कन्या) का वदन पूर्ण चन्द्रमा-सा था, नयन निर्मल थे, नाक तोते की चोंच सरीखी थी, दाँत बीज-से अर्थात् बहुत छोटे-छोटे थे। २० उसके लाल (-लाल) होंठ, गाल और ग्रीवा (गरदन) अति कान्तिमान थे, भुजदण्ड (बाहु) हाथी की सूँड जैसे थे, स्तन बिजौरों जैसे थे। २१ उसकी जाँघें कदली (-स्तम्भों) के समान थीं, वक्षःस्थल तथा अंग उज्ज्वल था। उसके चरण मानो कमल के (बने हुए) थे, उसकी कटि की लाँग सिंह-की-सी थी। २२ हाथों

कर कंकण ने मुद्रिका, कंठे पुष्पनो हार,
करणे झाल झबूके, पाये नूपुरनो झमकार। २३।
मस्तके गूंथी राखडी, कंठे मुक्तानो हार,
अणवट पगे बीछुवा, कटीमेखला शणगार। २४।
तेने चणियो चोळी पहेराविया, शिर घाटडी परिधाम,
शुकदेव कहे परीक्षितने, तेनुं ओखा धरियुं नाम। २५।
तेने ढींगलां ने ढोलडी, कुंडली कोथळी जेह,
पांच कोडां, दाबडी वेलण, रमवा आप्यां तेह। २६।
कुमकुम चंदन चांदलो, काजल सिंदूर संग,
तेल तंबोल ने नाडाछडी, करी ते पूजा अंग। २७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

करी पूजा अंग सोहिये, कुंवरी कन्या जेह रे,
शुकदेव कहे परीक्षितने, एम ओखा प्रगटी तेह रे। २८।

में चूड़ियाँ और अँगूठियाँ थीं, गले में फूलों का हार था, कानों में (कर्ण-) आभूषण चमक रहे थे, पाँवों में (पहने हुए) नूपुर की झनक हो रही थी। २३ मस्तक पर (अनिष्ट-अशुभ के परिहार हेतु अभिमंत्रित रक्षा (डोरा, राखी) बँधी हुई थी, गले में मोतियों का हार (पहना हुआ) था। पाँवों (के अँगूठे) में अनवट और (अँगुलियों में) बिछुए, कटि में मेखला जैसे श्रृंगार से वह सजी हुई थी। २४ (माता ने) उसे घाघरा और चोली तथा मस्तक पर सुन्दर चुनरी पहना दी। शुकदेवजी परीक्षित से बोले —उसका नाम (माता ने) ओखा (ऊषा) रख लिया। २५ उसे खेलने के लिए गुड्डा-गुड़िया और डफली, कंकड़ तथा (उन्हें रखने के लिए छोटी) थैला, पाँच कौड़ियाँ, उन्हें (रखने के लिए) डिबिया, बेलन दिये। २६ साथ ही कुंकुम और चन्दन का टीका, काजल और सिन्दूर लगा लिया। तेल, ताम्बूल (पान-बीड़ा), (शुभ-सूचक रंगीन) धागा दिया और उसका पूजन ही कर लिया। २७

(इस प्रकार) जो (ओखा नामक) क्वाँरी कन्या थी, उसकी (उमा ने) पूजा की। उस (कन्या) के अंग शोभायमान थे। शुकदेवजी परीक्षित से बोले —इस प्रकार ओखा उत्पन्न हो गयी। २८

कडवुं ६ ठ्ठुं—(नारदजी द्वारा शिवजी के मन में पार्वती के प्रति क्रोध उत्पन्न करना)

राग रामग्री

वळी वळी पूछ्युं परीक्षितरायजी, शुकदेवजी कहोने कथाय जी,
उमया अंगथी ऊपनी जेह जी, दैत्यपुत्री तणो संदेह जी । १ ।

ढाळ

संदेह मारा मन तणो, ते टाळिये ऋषिराय,
ए भ्रात भगिनी द्वारे मूकी, रच्यो कुण उपाय ? । २ ।
त्यारे पूंठे शुं थयुं, मुंने संभळावोने तेह,
विस्तारीने वर्णवो, शुकदेवजी, सर्वे तेह । ३ ।
शुकदेव वळतुं बोलिया, तुं सांभळ राजकुमार,
उमियाए ओखानी प्रत्ये, एम कह्युं तेणी वार । ४ ।
हुं मंदिरमां मार्जन करुं छुं, त्यां दीधी शिखामण,
कोई पुरुष आवे आंगणे तो, करजे मुजने जाण । ५ ।
एम कहीने गयां घरमां, उगार्युं उष्णोदक सार,
बावनचंदन घोळियां ते, कनकपात्र मोझार । ६ ।

कड़वक ६—(नारदजी द्वारा शिवजी के मन में पार्वती के प्रति क्रोध उत्पन्न करना)

राजा परीक्षित पुनः पुनः (शुकदेव से) कह रहे थे —' हे शुकदेवजी, वह कथा कहिए । जो (ओखा) उमाजी के अंग से उत्पन्न हुई उसके दैत्य-कन्या हो जाने में (मुझे) सन्देह है । (उसका निराकरण कीजिए) ' । १

हे ऋषिराज, ' मेरे मन के उस सन्देह को दूर कर दीजिए । (उमाजी ने) उन बन्धु-भगिनी को द्वार पर रखकर कौन-सा आयोजन किया (क्या किया) ? तब (उसके) पश्चात् क्या हुआ ? मुझे वह सुनाइए । हे शुकदेवजी, उस सबका विस्तार-पूर्वक वर्णन कीजिए । ' । २-३ फिर शुकदेव बोले, " हे राजकुमार, तुम सुन लो । उमाजी ने ओखा से उस समय इस प्रकार कहा । ४ ' मैं घर के अन्दर स्नान करती हूँ (करने जा रही हूँ) । ' उसे यह सिखावन दी— ' यदि कोई पुरुष आँगन में आ जाए, तो मुझे उसकी जानकारी करा दो ' । ५ ऐसा कहकर वे घर के अन्दर चली गयीं और उन्होंने अच्छा-सा उष्ण जल उबाल लिया । (फिर) सोने के पात्र में (पानी में) बावन चन्दन (चन्दन विशेष) घोल दिया । ६ (अनन्तर) वस्त्र और आभूषण उतारकर माता उमाजी नहाने

वस्त्र आभूषण त्यजीने, नहाय छे उमया मात,
मोकळे केशे नेत्र मींची, बेठां छे साक्षात । ७ ।

राग मारुनी देशी

ऋषि नारदजी तेणी वार, हूता ब्रह्मसभा मोजार,
ऋषिए मन कर्यो विचार, हूं तो जाउं त्यां निरधार । ८ ।
शिव-उमियाने वढवाड, मांहोमांही करावुं राड,
एवुं विचार्युं ऋषिराय, ज्यां उमियाजी बेठां नहाय । ९ ।
आव्या अंतरिक्षथी ऋषिराय, त्यारे दीठी पार्वतीए छांय,
जाणे पहेरुं ते वस्त्र सुवेखे, रखे उघाडुं अंग रे देखे । १० ।
ते माटे शिरना केश, तेणे ढांक्युं ते अंग सुवेश,
जोई ऋषि नारद सिधाव्या, शिव पासे गंगातटे आव्या । ११ ।
आवी बोल्या शिवशुं वाणी मारी वात सुणो शूलपाणी,
तमे धरी बेठा शुं ध्यान ? घेर प्रगटयां छे बे संतान । १२ ।
एवुं सांभळतां तत्काळ, ऊठी अंगमां मोटी ज्वाळ,
एवुं कहीने चाल्या छे मुन्य, महादेव हवा अति शून्य । १३ ।

लगीं । उन्होंने बाल खोल दिये; और आँखें मूँदकर वे प्रत्यक्ष (स्नान करने के लिए) बैठ गयीं । ७

उस समय ऋषि नारदजी ब्रह्माजी की सभा में (उपस्थित) थे । उन ऋषि ने मन में विचार किया— 'मैं निश्चय ही वहाँ जाऊँगा । ८ (और) शिवजी और उमाजी के बीच झगड़ा (उत्पन्न) करा दूंगा ।' ऋषिराज ऐसा विचार करके, जहाँ उमाजी बैठी हुई थीं, (अर्थात्) नहा रही थीं, वहाँ अन्तरिक्ष से आ गये । तब पार्वती ने उनकी परछाईं देखीं । उन्होंने समझा (सोचा) मैं अच्छी तरह से वस्त्र पहन लूँ; कदाचित कोई मेरा खुला अर्थात् अनावृत अंग देख ले । ९-१० इसलिए उन्होंने मस्तक के बालों से अपने तन को (बैठे-बैठे) अच्छी रीति से ढाँक लिया । यह देखकर नारद ऋषि सिधार गये और गंगा-तट पर शिवजी के पास आ गये । ११ वे आकर शिवजी से यह बात बोले, 'हे शूलपाणि, मेरी बात सुनिए । आप (यहाँ) ध्यान धारण करके क्या बैठे ? (उधर आपके) घर दो सन्तानें उत्पन्न हो गयी हैं ।' । १२ ऐसा सुनते ही शिवजी के शरीर में तत्काल (क्रोध रूपी) अग्नि की ज्वाला उठ गयी (उत्पन्न हो गयी) । (उधर) इस प्रकार कहकर (नारद) मुनि चले गये थे (और इधर) महादेव शिवजी अति (विवेक-) शून्य हो गये । १३ जब शिवजी

शिव घरमां पेसे ज्यारे, पेले जोद्धे वार्या त्यारे,
अल्या चोरटो छे के भिखारी, नहावा बेठां छे मात अमारी। १४।
शिव घरमां पेसे ज्यारे, जोद्धे अटकाव्या त्यारे,
मांहोमांही थयो संग्राम, बेमां कोई न छांडे ठाम। १५।
जटा सहीने नाख्या छे ईश, महादेवने चडी अति रीस,
ढींका पाटु ने गडदो साथ, अन्योअन्य भीडी छे बाथ। १६।
धाया भूत भैरव बैताळ, रणे कोप्यो उमियानो बाळ,
घणुं कोप्या श्रीत्रिपुरारी, गाज्या गणपति बहु रीस धारी। १७।
बेउ सरखा छे बळवंत, घणुं कोप्या ते उमियाना कंथ,
कोप्या गणपति ते बहु अंग, सर्व सेनानो कीधो भंग। १८।
नाठी सेना देखी बळधीश, कोप्या गणपति कोप्या ईश,
बेनुं रूप भयंकर भासे, देखी मुनिवर ना'वे पासे। १९।

घर में प्रवेश कर रहे थे, तब उस योद्धा (गणेश) ने उनको रोक लिया। वह बोला— 'अरे चोर है या भिखारी! हमारी माता स्नान करने बैठी है'। १४ शिवजी जब घर में पैठ रहे थे, तब उस योद्धा ने उन्हें रोक लिया। उन (दोनों) के बीचोबीच संग्राम (आरम्भ) हो गया। उन दोनों में से कोई भी अपना स्थान नहीं छोड़ रहा था। १५ (जब) भगवान महादेव को उस योद्धा (गणेश) ने जटाएँ पकड़कर हटा दिया, तो उन्हें बहुत क्रोध आ गया। (एक-दूसरे पर) घूँसे, लातें और मुक्के जमाते हुए वे एक-दूसरे से भिड़कर लड़ रहे थे। १६ जब रणभूमि में भूत, भैरव और वेताल दौड़कर आ गये, तो उमाजी का वह पुत्र क्रुद्ध हो उठा। (उधर) त्रिपुरारि शिवजी बहुत कुपित हो उठे। (फिर) गणेशजी बहुत क्रोध से गरज उठे। १७ वे दोनों (एक-दूसरे के सम-) समान बलवान थे। (फिर) उमापति शिवजी बहुत क्रुद्ध हो गये। (इधर) गणेशजी भी स्वयं बहुत क्रुद्ध हो गये और उन्होंने शिवजी की समस्त सेना को भग्न अर्थात तितर-बितर कर डाला। १८ बल के उस अधीश (ईश्वर) को देखकर सेना भाग गयी, तो गणेशजी क्रुद्ध हो गये। (उधर) ईश अर्थात शिवजी (भी) कुपित हो उठे। उन दोनों का रूप भयंकर दिखायी दे रहा था। उन्हें देखकर मुनिवर उनके पास नहीं आ रहे थे। १९

ढाळ

जटिल जोगी ने भस्मभोगी, दीसंतो अवधूत,
आज्ञा विना अधिकार न जावा, जो होय पृथ्वीनो भूप । २० ।
वचन एवुं सांभळीने, कोपिया शिवराय,
त्रिशूल मारी शिर छेदियुं, जई पड्युं चंद्ररथ मांय । २१ ।
ओखा मनमां त्रास पामी, देखीने दारुण कर्म,
मातानी पासे कहेवा न गई, नव लह्यो आगळ मर्म । २२ ।
महादेव मंदिरमां गया, झबक्यां ते उमिया मन,
नेत्र उघाडीने नीरखिया, शिरकेशे ढांक्युं तन । २३ ।
वस्त्र पहेरीने थयां बेठां, पूछियुं शिवराय,
बे बाळक तो बारणे मूक्यां, केम आव्या मंदिर मांय ? । २४ ।
शिव कहे शिर छेदियुं, पेलो पुरुष हूतो जेह,
स्त्रीहत्या में नव करी, जीवती तो मूकी तेह । २५ ।
एम कहेतां उमिया पड्यां पृथ्वी, ए शुं कीधुं शिवराय ?
अंग थकी उत्पन्न कर्यां, बेउ बाळक तमारां थाय । २६ ।

'आप जटाधारी योगी और भस्म भोगी कोई अवधूत दिखायी दे रहे हैं। (परन्तु आप) यदि पृथ्वी के राजा (भी) हों, तो भी आपको बिना आज्ञा के (अन्दर) जाने का अधिकार नहीं है।'। २० गणेशजी की ऐसी बात सुनकर शिवराजजी कुपित हो उठे और उन्होंने त्रिशूल मारकर उनका सिर छेद डाला। वह (सिर) जाकर चंद्ररथ नमाक पर्क्षत पर गिर गया। २१ इस दारुण कर्म को देखकर ओखा मन में भय को प्राप्त हो गयी। वह माता के पास (इस सम्बन्ध में कोई समाचार) कहने नहीं गयी। वह आगे के मर्म को नहीं समझ पायी। २२ (तदनन्तर) शिवजी घर के अन्दर गये, तो उमाजी मन में चौंक उठीं। उन्होंने आँखें खोलकर देखा और अपने तन को मस्तक के बालों से छिपा दिया। २३ (फिर) जब वस्त्र पहनकर वे बैठ गयीं तो उन्होंने शिवरायजी से पूछा, 'मैंने दो बालकों को द्वार पर रखा था, तो आप घर के अन्दर कैसे आ गये?'। २४ (इसपर) शिवजी ने कहा, 'जो पुरुष था, मैंने उसका मस्तक छेद डाला। मैंने उस स्त्री की हत्या तो नहीं की —उसे मैंने जीवित ही छोड़ दिया।'। २५ उनके इस प्रकार कहते ही उमाजी भूमि पर लुढ़क गयीं (और बोलीं)— 'हे शिवरायजी, आपने यह क्या किया ? मैंने उन्हें अपने अंग से उत्पन्न किया था। वे दोनों बालक आपके ही थे। २६ अभी मैं अपने प्राण

हमणां ते मारा प्राण कहाडुं, कां जिवाडो एह,
शिव कहे, शिर छेदियुं, जई पड्युं पर्वत तेह। २७।

एक मूरतमांही मस्तक आणी, मेहलो ते एने अंग,
नंदी भृंगीने मोकल्या, जई जोयां पर्वतशृंग। २८।

मस्तक तो लाध्युं नहि, एक हस्ती दीठो वन,
एकदंत ने महा उन्मत्त, जई विदार्युं तन। २९।

मस्तक लईने आविया, शिव उमिया केरी पास,
महादेवे मस्तक चोडियुं, वरदान दीधुं हाथ। ३०।

मारे हाथे दुःख ज पाम्यो, मुज पहेलो पूजाय,
शुभ कामे स्मरण करे, तेनुं सिद्ध कारज थाय। ३१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वरदान एवुं आपियुं, शिव तेणे ठाम रे,
पहेली पूजा करी पोते, गजवदन धरियुं नाम रे। ३२।

निकाल देती हूँ अथवा उन्हें जीवित करा दो।' (यह सुनकर) शिवजी बोले, 'मैंने उसका मस्तक छेद डाला —वह जाकर पर्वत पर गिर गया है। २७ एक मुहूर्त में उस मस्तक को लाकर उसके अंग में जोड़ दो।' ऐसा कहकर उन्होंने नन्दी और भृंगी को भेज दिया। उन्होंने जाकर पर्वत शिखरों पर देखा। २८ (परन्तु) उन्हें (कहीं भी) वह मस्तक नहीं मिला। उन्होंने वन में एक हाथी देखा। वह एक दाँत वाला और महा उन्मत्त था। जाकर उन्होंने उसका शरीर विदीर्ण कर डाला। २९ (तदनन्तर) वे उस (हाथी) के मस्तक को लेकर वे शिवजी और उमाजी के पास आ गये; (तब) शिवजी ने वह मस्तक चिपका दिया और उसपर हाथ रखते हुए यह वरदान दिया— 'तुम मेरे हाथों दुःख को प्राप्त नहीं होओगे और मुझसे पहले तुम पूजे जाओगे; जो शुभ कार्य करते समय तुम्हारा स्मरण करेगा, उसका कार्य सिद्ध (सफलता के साथ पूरा) हो जाएगा'। ३०-३१

शिवजी ने गणेशजी को उस स्थान पर ऐसा वरदान दिया और स्वयं उसका प्रथम पूजन किया तथा उसका नाम गजवदन (गजानन) रख दिया।"। ३२

कडवुं ७मुं—(उमाजी द्वारा ओखा को अभिशाप देना)

राग मारु

उमिया आव्यां ते मंदिर बहार, नव दीठी ते ओखा कुमार,
मीठानी कोठडी हुती ज्यांहे, कन्या नासीने पेठी त्यांहे ।
उमियाने क्रोध चड्यो अपार, ओखाने शाप दीधो तेणी वार,
त्यार पूंठे ते शुं थाय, तेनी कहुं हवे कथाय । १ ।

ढाळ

शाप पुत्रीने हवो, ते सांभळो कहुं राय,
वरस एक लगण पुत्री, रहेजे लवणनी मांय । २ ।
वचन एवुं सांभळीने, दुःख पामी मन,
लवण मध्ये कोमळ काया, केम जाशे वरस दन ? । ३ ।
गद्‌गद कंठे ओखा बोली, दया करो मुज मात,
अपराध किंचित् मात्र छे, तेमां आवडी शी घात ? । ४ ।
में शाप तमारो शीश चडाव्यो, अनुग्रह केम थाय ?
माता कहे महिमा वाधशे, तारो मृत्युलोकनी मांय । ५ ।

कड़वक ७—(उमाजी द्वारा ओखा को अभिशाप देना)

उमाजी (जब) घर के बाहर आ गयीं, तो उन्होंने ओखाकुमारी को नहीं देखा । (वस्तुतः) वह कन्या, भागकर वहाँ प्रविष्ट हो (-कर बैठ) गयी, जहाँ नमक की कोठी थी । (यह देखकर) उमाजी को अपार क्रोध आ गया और उन्होंने उस समय ओखा को अभिशाप दिया । तब उसके पश्चात् क्या हो गया, उसकी कथा मैं अब कहता हूँ । १

हे राजा, (उमाजी से) कन्या (ओखा) को जो शाप प्राप्त हो गया, मैं वह कहता हूँ, सुन लो, 'री पुत्री, एक वर्ष तक तू लवण (नमक) में रह जाना' । २ ऐसा वचन सुनकर वह मन में दुःख को प्राप्त हो गयी । यह कोमल काया (-धारिणी कन्या) लवण में एक वर्ष के (समस्त) दिन कैसे (रह) जाएगी । ३ (तब) गदगद कण्ठ से (स्वर में) ओखा बोली, 'हे माता, मुझपर दया करो । (मेरा) अपराध तो किंचित मात्र है, उसमें (उसके लिए) इतना आघात (दण्ड) कैसा । ४ (फिर भी) मैंने तुम्हारे (दिये) अभिशाप को शिरोधार्य कर लिया (आदरपूर्वक स्वीकार किया, अब बताओ), अनुग्रह कैसे होगा (शाप से मुक्ति कैसे होगी) ।' (यह सुनकर) माता बोलीं, 'मृत्युलोक में तेरी महिमा बढ़ जाएगी' । ५

पछी पार्वतीजीए प्रेम आणी, कह्यो मास ज एक,
वरस आद्ये उत्तम कहिये चैत्र मास विशेक। ६ ।
ते मासे ते लवण केरो, करे संग्रह जेह,
पार्वतीजी पुत्रीने कहे, ते दुःख पामे देह। ७ ।
चैत्र मासे व्रत अलूणुं, करे जे स्त्रीजन,
संसारनां सुख भोगवे, पामे पुत्र कलत्र ने धन। ८ ।
चैत्र केरा दिन त्रीसे, अन्न अलूणुं खाय,
माता कहे सत्य जाणजो, ते स्वर्गवासी थाय। ९ ।
माता कहे, महिमा कहुं, एवो चैत्र निर्मळ जाण;
एक मास अलूणुं न करे, तेनुं मिथ्या जीव्युं जाण। १० ।
व्रत करीने दान करवुं, लवण केरुं जेह,
आख्यान सांभळे पातक जाये, निर्मळ थाये देह। ११ ।
पांच दहाडा पाछला, व्रत करे स्त्रीजन,
करे भोजन लवण पाखे, एक उज्ज्वळ अन्न। १२ ।
हुं शापमोचन तुजने कहुं छुं, ओखाने कहे छे माय,
श्री भगवानकुळमां वर थशे, ते ग्रहशे तारी बांय। १३ ।

अनन्तर पार्वती ने मन में प्रेम लाते हुए अर्थात् अनुभव करते हुए कहा, 'वह (अवधि) एक मास ही हो। वर्ष के आरम्भ में चैत्र मास को विशेष रूप से उत्तम कहते हैं'। ६ पार्वती पुत्री से बोलीं, 'उस मास में जो लवण का संग्रह करे, वह दुःख को प्राप्त हो जाएगा। ७ जो स्त्रियाँ चैत्र मास में अ-लवण (अलोना) व्रत रखें, वे संसार के सुखों का भोग करेंगी, वे पुत्र, (पुत्र-)स्त्री अर्थात् पुत्रवधू, और धन को प्राप्त होंगी। ८ (अतः) चैत्र के तीसों दिन लवण-हीन अन्न खाएँ।' माता ने कहा, 'इसे सत्य समझना कि वह (स्त्री) स्वर्ग की निवासी हो जाएगी (मृत्यु के पश्चात् वह स्वर्ग में निवास को प्राप्त हो जाएगी)'। ९ (फिर) माता ने (आगे) कहा, 'मैं यह माहात्म्य कहती हूँ। चैत्र मास को ऐसा निर्मल (पवित्र) समझना। जो एक मास अलोना व्रत न रखे, उसका जीवित रहना मिथ्या (व्यर्थ) समझना। १० जो (ऐसा) व्रत रखकर लवण दान दे, और (तेरा) आख्यान सुन ले, उसका पातक दूर हो जाएगा और उसकी देह निर्मल (पवित्र) हो जाएगी। ११ स्त्रियाँ पिछले पाँच दिन व्रत रखें, बिना लवण के, (लवण-हीन) उज्ज्वल भोज्य वस्तु का सेवन करें'। १२ माता (उमाजी) ने ओखा से कहा, 'मैं तुझसे शाप-मोचन कहती हूँ। श्री (कृष्ण) भगवान के कुल में तेरा वर (उत्पन्न) हो जाएगा

सर्वे दोष टळशे ते थकी, सांभळ ओखाबाई,
संतोषी एम ए सर्वे कही, आनंद पाम्यां सही । १४ ।
पछे ओखा लवणमां पेठी, शाप मटाडवा काज,
शुकदेव कहे परीक्षितने, कहुं बाणासुरनुं काज । १५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कथा कहुं ते सांभळो, धरीने एक ध्यान रे,
ते पछी शुं नीपज्युं, विस्तारुं राजन रे । १६ ।

और वह तेरी बाँह पकड़ेगा, (तेरा पाणि-ग्रहण करेगा) । १३ री ओखाबाई, सुन ले, उससे तेरे समस्त दोष टल जाएँगे'। इस प्रकार यह सब कहते हुए उमाजी ने उसे सन्तुष्ट कर दिया और वे (स्वयं) सचमुच आनन्द को प्राप्त हो गयीं । १४ अनन्तर ओखा शाप (को भोगकर) मिटाने के हेतु लवण (की कोठी) में प्रविष्ट हो गयी । शुकदेव परीक्षित से बोले— मैं (अब) बाणासुर का कार्य कहता हूँ । १५

मैं जो कथा कहने जा रहा हूँ, उसे एकाग्र ध्यान धारण करके सुन लो । हे राजा, उसके पश्चात् क्या घटित हो गया ? मैं उसका विस्तार (-पूर्वक वर्णन) करता हूँ । १६

कडवुं ८ मुं—(बाणासुर का सन्तान-प्राप्ति के हेतु तपस्या के लिए गमन)

राग वेराडी

एक समे चंडालणी, ऊभी राजद्वार,
वासीहुं वाळी करी कीधुं झाकझमाळ । एक समे० (टेक)
राज ते सूता ऊठिया, अति प्रातःकाळ,
मुख आडी संमार्जनी राखी रे चंडाळ । एक समे० । २ ।

कड़वक ८—(बाणासुर का सन्तान-प्राप्ति के हेतु तपस्या के लिए गमन)

एक समय एक चण्डालिनी (चण्डाल जाति की झाड़ू लगाने का काम करनेवाली दासी) राज-द्वार पर खड़ी थी । उसने कूड़े-करकट को झाड़ू लगाकर (उस स्थान को) स्वच्छ चमकदार (उज्ज्वल) कर दिया । एक समय० । १ राजा (बाण) सोकर बड़े तड़के उठ गया, तो उस चण्डालनी ने बीच में झाड़ू आड़ा धरकर (अपने) मुँह को छिपा लिया । एक समय० । २ यह देखकर बाणासुर ने समस्त (बात) विस्तार-पूर्वक पूछी— 'री नारी, तूने मुख के आड़े झाड़ू क्यों (धर)

ते जोई बाणासुरे पूछियो, सघळो विस्तार,
मुख आडी संमार्जनी, केम राखी ते, नार ? । एक समे० । ३ ।
चंडालणी कहे रायजी, सांभळो महाराज,
वहाणामां मुख केम दाखवुं, जाणी कीधी में लाज । एक समे० । ४ ।
राज कहे सत्य बोल तुं, नहितर देशुं रे दंड,
शा माटे आडी धरी, संमार्जनी रंड ? । एक समे० । ५ ।
वळती चंडालणी एम वदे, सांभळो रे भूपाळ,
साचुं बोलुं छुं हुं हवे, रखे देता रे गाळ । एक समे० । ६ ।
प्रातसमे जोवुं नहीं, वांझियानुं वदन,
तमारे कांई छोरुं नथी, सांभळोने राजन । एक समे० । ७ ।
ते माटे संभार्जनी, आडी कीधी में राय,
साचुं बोली छुं, जे घटे, तेवो करजो रे न्याय । एक समे० । ८ ।
राजाए सत्य मान्युं सही, नव कीधो रे क्रोध,
राज मूकी कैलासे गयो, बाणासुर जोध । एक समे० । ९ ।
तप करवा वेगे गयो, दृढ राखी विश्वास,
ध्यान धर्युं महादेवनुं, मुंने पुत्रनी आश । एक समे० । १० ।

रखा '? । एक समय० । ३ (इसपर) वह चण्डालनी बोली, 'हे राजा, सुनिए । हे महाराज, मैं मुँह-अँधेरे (अपना) मुँह (आपको) कैसे दिखाऊँ ? —ऐसा समझकर (कि मुझे आपको मुँह नहीं दिखाना चाहिए) मैंने (आपके सामने लाज अनुभव करते हुए मर्यादा-पालन के हेतु झाड़ू पकड़कर) ओट (परदा) की' । एक समय० । ४ (इसपर) राजा बोला, 'तू सच(-सच) कह दे, नहीं तो तुझे दण्ड दूँगा । री रण्डी, तूने झाड़ू आड़े क्यों धर दिया ?' । एक समय० । ५ फिर (प्रत्युत्तर में) उस चण्डालिनी ने ऐसा कहा— 'हे भूपाल, सुनिए । मैं अब सच बोल रही हूँ । कदाचित् आप गालियाँ देंगे । एक समय० । ६ प्रातःकाल बाँझ (सन्तानहीन व्यक्ति) का मुँह नहीं देखना चाहिए । हे राजा, सुनिए । आपके कोई सन्तान नहीं है । एक समय० । ७ इसलिए हे राजा, मैंने झाड़ू को आड़े कर लिया । मैंने सच कहा है । जो उचित हो, आप वैसा न्याय करना' । एक समय० । ८ (तब) राजा ने उसे निश्चय ही सत्य माना और उसपर क्रोध नहीं किया । (फिर) वह योद्धा बाणासुर राज्य छोड़कर कैलास पर गया । एक समय० । ९ (मन में) दृढ़ विश्वास रखते हुए वह वेग-पूर्वक तपस्या करने चला गया और अपने लिए पुत्र-प्राप्ति की आशा से उसने महादेव शिवजी का ध्यान धारण किया । एक समय० । १०

कडवुं ६ मुं—(बाणासुर को पुत्री रूप में ओखा की प्राप्ति)

राग मारु

तेणे समे राणी कहेवा रे लागी, जोई राजनुं रूप,
बाणमती एम बोलियां, राय थयो वृद्ध स्वरूप। १।
राय, ए वरने शुं लाविया, तमारी कोण आवशे संग ?
अपत्य शे नव लाविया ? हुं हुलावत उछरंग। २।
बाणमती दुःख पामी कहे, बहु बळ तणुं शुं काम ?
संतान मारे कांई नथी, शिर वांझियानुं नाम। ३।
राये रिधसिध त्याग कीधी, चलियो वन मांहे,
कैलासगिरिए आवियो, बेठा छे शिवजी ज्यांहे। ४।
तातने चरणे लागियो, तव पूछ्युं शिवराय,
संतान मारे कांई नथी, कांई पुत्र पुत्री थाय। ५।
त्यारे पार्वतीजी बोलियां, मारे पुत्र एक गणेश,
ते तो आप्यो जाय नहीं, त्रिलोकनो देवेश। ६।
अपत्य को आपे नहीं, जे पोतानुं संतान,
तेत्रीश कोटीए पूजा करी, मृत्युलोकमां मान। ७।

कड़वक ६—(बाणासुर को पुत्री रूप में ओखा की प्राप्ति)

राजा (बाणासुर) के रूप को देखकर उस समय रानी उससे कहने लगी। (रानी) बाणमती इस प्रकार बोली। (उस समय वह) राजा वृद्ध-स्वरूप हो गया था। १ 'हे राजा, आप यह क्या वर लाये हैं ? आपके साथ कौन आएगा ? आप कोई सन्तान क्यों नहीं (माँग) लाये ? मैं उसे आनन्द से झुला देती ?'। २ बाणमती दुःख को प्राप्त होकर (फिर) बोली, 'बहुत बल का क्या काम (उपयोग) ? मेरे कोई सन्तान तो नहीं है। अतः सिर पर बाँझ नाम लगा है'। ३ (तत्पश्चात्) राजा ने ऋद्धि-सिद्धि का त्याग किया और वन में चला गया। वह कैलास-पर्वत पर आ गया, जहाँ शिवजी बैठे थे। ४ तब वह तात (अर्थात् पिता-स्वरूप) के पाँव लगा, और शिवजी से बोला, 'मेरे कोई सन्तान नहीं है; मेरे कोई पुत्र-पुत्री हो जाए'। ५ तब पार्वतीजी बोलीं, 'मेरे एक पुत्र है गणेश। वह त्रिलोक का देवेश्वर है, वह तो नहीं दिया जा सकता। ६ जो अपनी स्वयं की सन्तान है, वह सन्तान तो कोई (किसी को) नहीं दे सकता। मेरे इस पुत्र का तेंतीस करोड़ देव पूजन करते हैं, मृत्युलोक में (भी) उसका सम्मान होता है। ७ देव और दैत्य में प्रीति नहीं हो सकती, देव और

देव दैत्यमां प्रीत न होय, पिता पुत्र न थाय,
वचन एवुं सांभळी मन झांखो थया ए राय। ८।
पछे उमाए शिवने कह्युं, पुत्री लवणमां छे जेह,
तेने त्रीश दहाडा थया पूरा, आपोने पुत्री तेह। ९।
त्यारे पुत्री कहेवा लागी, सांभळो मुज मात,
कैलासे हुं क्यारे आवुं, सत्य कहोने वात। १०।
फागण वद तृतीयाने दिवस, तुं आवजे मुज पास,
गोर करीश जे पुत्री मारी, तो पूरीश तारी आश। ११।
ते भर्युं भाजन लईने चाल्यो, लवण मध्य कुमार,
माथे चडावी थया मारग, आव्यो नगर मोझार। १२।
पछे भाजन भांगीने कन्या कहाडी, दीठुं ते सुंदर रूप,
पंचामृते पखाळी करी, शणगार सजाव्या भूप। १३।
भाट चारण गुणी गंधर्वने, त्यां आपियां बहु दान,
तरिया तोरण बांधियां, जाणे पुत्री पुत्र समान। १४।
गजे बेसाडी नगर मध्ये, फेरवी लाव्यो राय,
वाजित्र वाजे अति घणां, वळी बंदी जश बहु गाय। १५।

दैत्य एक-दूसरे के पिता-पुत्र नहीं हो सकते'। ऐसी बात सुनकर वह राजा मन में तेजोहीन अर्थात् उत्साह-हीन हो गया। ८ अनन्तर उमाजी ने शिव से कहा, 'जो कन्या लवण (की कोठी) में (बैठी हुई) है, उसे तीस दिन (वहाँ बैठे) पूरे हो गये हैं। वही पुत्री इसे दे देना।'। ९ तब वह कन्या कहने लगी, 'हे मेरी माता, सुनो, मैं कैलास पर कब आऊँ? सच्ची बात कहो'। १० इसपर पार्वती बोलीं, 'फाल्गुन वद्य तृतीया के दिन तू मेरे पास आ जाना। मेरी पुत्री, यदि तू गौरी-व्रत सम्पन्न करेगी, तो मैं तेरी अभिलाषा पूर्ण कर दूँगी'। ११ वह भरा हुआ पात्र लेकर चल दिया। (उस पात्र के अन्दर) लवण में (ओखा-) कुमारी (बैठी हुई) थी। उस पात्र को सिर पर चढ़ाकर वह अपने मार्ग पर चल दिया और नगर में आ गया। १२ अनन्तर उस पात्र को फोड़कर (उसमें से) उसने कन्या को निकाल लिया और उस (के) सुन्दर रूप को देखा। उस राजा ने (अनन्तर) उसे पंचामृत से स्नान कराते हुए श्रृंगार सजा दिया। १३ (फिर) उसने वहाँ भाटों, चारणों, गुणीजनों (कारीगरों), गन्धर्वों को बहुत दान दिये। उसने जरी के तारों से युक्त तोरण बनवा लिये और उस पुत्री को पुत्र के समान मान लिया। १४ राजा उसे हाथी पर बैठाकर नगर के अन्दर घुमा लाया। (उस समय) वाद्य अति घनघोर बज रहे थे। इसके

शुकदेव कहे, परीक्षित सुणो, पहेली देवकन्या राय,
संदेह मननो टाळिये, पछी दैत्यपुत्री थाय । १६ ।
नित्य राजसभामां बाण बेसे, धरे बहु अभिमान,
एवुं जोईने बोलियो कौभांड जे परधान । १७ ।
गर्व न कीजे रायजी, कांई मन विचारी जोय,
पांच दहाडा पुरुषने कांई छाया फरती होय । १८ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

छाया फरती पुरुषने, सरखी सदा न होय रे,
गर्व कदी नव कीजीए, मानो राजा सोय रे । १९ ।

अतिरिक्त बन्दीजन उसका यश बहुत गा रहे थे । १५ शुकदेवजी बोले, 'हे परीक्षित, सुनो । हे राजा, वह (ओखा) पहले देव-कन्या थी और तत्पश्चात् उस दैत्य (बाणासुर) की पुत्री हो गयी । (इसे सुनकर अपने) मन के सन्देह को दूर कर दो' । १६ बाणासुर नित्य राजसभा में बैठता था । उसने मन में बहुत अभिमान धारण किया । ऐसा देखकर कौभाण्ड नामक उसका जो मन्त्री था, वह बोला । १७ हे राजाजी, गर्व न कीजिए । मन में कुछ विचार करके तो देखिए । पुरुष के लिए पाँच दिन में (पश्चात् भाग्य-रूपी) छाया कुछ बदल जाती है । १८

(भाग्य-रूपी) छाया पुरुष के लिए बदलती रहती है । वह सदा समान नहीं होती । (अतः) हे राजा, यह मान लीजिए (और) कभी भी गर्व न धारण कीजिए । १९

कडवुं १० मुं—(बाणासुर द्वारा पुत्री का विवाह न करने का निश्चय करना)

राग रामेरी

बाणासुर नृप ओचर्यो, देशुं ते कन्यादान,
तेने पुण्ये पामशुं फळ, कोटी यज्ञ समान । १ ।

कड़वक १०—(बाणासुर द्वारा पुत्री का विवाह न करने का निश्चय करना)

(असुरों का) राजा बाणासुर बोला, 'हम अब कन्या-दान करेंगे । (अर्थात कन्या ओखा का विवाह करेंगे) । उससे कोटि यज्ञों के फल के समान फल को हम प्राप्त हो जाएँगे ।' । १ (उस समय) आकाश-वाणी

आकाशवाणी एम हती, सांभळजे राय निरधार,
पुत्री इच्छावरे परणशे, कारणरूप कुमार। २ ।
त्यारे राजा विस्मय पाम्यो, छे कांई कारण वात,
आकाशवाणी एम हवी, कांई वरतशे उत्पात। ३ ।
शुक्राचार्यने तेडिया, प्रश्न पूछ्युं राय,
आकाशवाणी सुणीने, मने चिंता मन बहु थाय। ४ ।
जन्मपत्रिका करो एहनी, अशुभ ग्रह जे होय,
तेने हुं करुं पाधरा, कर मूछ घाल्यो सोय। ५ ।
शुक्राचार्य ज बोलिया ए बळ तणुं नहि काम,
विचारीने जोने राजा, मनमां मोटी हाम। ६ ।
ते भविष्य टाळ्युं नव टळे, सहु कहे जे आडे आंक,
निमित्त को छूटे नहीं, त्यां ग्रह तणो शो वांक ?। ७ ।
जन्मपत्रिका करी एहनी, सांभळ राजकुमार,
ए कन्या ज्यारे परणशे, त्यारे वरतशे हाहाकार। ८ ।

इस प्रकार हो गयी, 'हे राजा, निश्चय(-पूर्वक) यह सुन लो—(तुम्हारी) यह पुत्री कारण-स्वरूप अर्थात समस्त रूपों के आदिमूल स्वरूप (से उत्पन्न किसी) श्रेष्ठ कुमार का अपनी इच्छा के अनुसार वरण करेगी।'। २ तब (यह सुनते ही) राजा विस्मय को प्राप्त हो गया (और उसने समझा कि)— अवश्य इस बात का कोई कारण (हो सकता) है। आकाश-वाणी इस प्रकार हुई, तो कुछ उत्पात हो जाएगा। ३ (तदनन्तर) राजा ने (गुरु) शुक्राचार्य को बुला लिया और उनसे प्रश्न किया (और कहा), 'आकाश-वाणी को सुनकर मुझे मन में बहुत चिन्ता हो रही है। ४ आप इस (कन्या) की जन्म-पत्रिका बना लीजिए; यदि (इसके लिए कोई) ग्रह अशुभ हो, तो उसे मैं सीधा कर लूँगा।' (फिर) उसने मूँछों पर हाथ रखा, अर्थात मूँछों पर ताव दिया। ५ तब शुक्राचार्य ही ने कहा, 'यह बल का काम नहीं है। हे राजा विचार करके देखना, (इसके लिए) मन में बड़ा साहस होना चाहिए। ६ सब जो कहते हैं, उसकी कोई एक चरम सीमा होती है; फिर भी भविष्य (होनी) टाले नहीं टलता। कोई भी हेतु (लक्ष्य) से छूटता (चूकता) नहीं (होनी से बच नहीं पाता)। यहाँ (उसमें) ग्रहों का क्या दोष। ७ हे राजा, मैंने इस (कन्या) की जन्म-पत्रिका बना ली है —उसे सुन लो। जब यह कन्या परिणय (विवाह) करेगी, तब हाहाकार मच जाएगा।'। ८ (यह सुनकर) राजा मन में विचार करते हुए शुक्राचार्य से इस प्रकार

मन विचारी राजा बोल्यो, शुक प्रत्ये एम,
ए कन्या नव परणावुं, ए वातनो मारे नेम। ९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नियम मारे ए वातनो जे, परणाववानो हुं नहीं,
विप्र प्रेमानंद कहे ओखाने, माळिये चडावीए सही। १०।

साखी

एम कहीने माळिये, राखी ओखाबाई रे,
रखवाळो बहु मूकिया, सुणो परीक्षितराय रे। ११।

बोला, 'मैं इस कन्या का ब्याह नहीं करूँगा। इस बात के बारे में मेरी यह प्रतिज्ञा है। ९

इस बात के बारे में मेरी यह प्रतिज्ञा है कि मैं (अपनी कन्या का) विवाह नहीं करूँगा।' (कवि) विप्र प्रेमानन्द कहते हैं— (तदनन्तर राजा बाण ने कहा— कन्या) ओखा को निश्चय ही (ऊपर वाली) कोठी में चढ़ा दें। १०

(शुकदेवजी बोले—) हे राजा परीक्षित, सुन लो, ऐसा कहकर (बाणासुर ने) ओखाबाई को (ऊपर वाली) कोठी में रख दिया और (वहाँ) अनेक पहरेदार (रक्षक नियुक्त कर) रख दिये। ११

कडवुं ११ मुं—(उमाजी द्वारा ओखा को वरदान देना)

राग ललित

ऋषि कहे सुण राय अनुभवी, एक कथा मध्य बीजी नवी,
बाणासुर वर पामीने वळ्यो, ते एकलो मृगियाए पळ्यो। १।
महावनमां गयो राय बाण, सारंगने कर्यो सावधान,
मृगियाए गयो ए वनमां तात, ओखा चित्रलेहाए जाणी रे वात। २।

कड़वक ११—(उमाजी द्वारा ओखा को वरदान देना)

(शुकदेव) ऋषि बोले— हे अनुभवी (प्रत्यक्ष ज्ञानी) राजा, इस बीच एक दूसरी नयी कथा सुनो। (कन्या-स्वरूप) वरदान प्राप्त करके बाणासुर लौट आया और (कुछ दिन पश्चात) वह मृगया के लिए अकेला (चला) गया। १ राजा बाण किसी महान वन के अन्दर चला गया और उसने

चित्रलेहाने कहे ओखाय, चालो सहियर पूजीये उमियाय,
चंदनपात्र, कुसुमना रे हार, श्रीफळ फोफळ मूक्यां सार। ३ ।
नैवेद्य बिजोरां ने शर्करा सार, पूजाथाळ ग्रही नार,
उपहार लईने चाल्यां सती, मनमां विरहनी थई चटपटी। ४ ।
गंगा नाहवा गयां उमया मात, ते ओखा चित्रलेहाए जाणी वात;
संगाथे लीधी सहस्त्रज सखी, बांधी आयुध अबला अंगरखी। ५ ।
मदने घेली बन्यो रे जती, थई छे उदय भाग्यनी रती,
जई पार्वतीने लाग्यां पाय मस्तके कर मूक्यो उमियाय। ६ ।
लीधुं चरणामृत अंजली भरी, षोडशोपचारे मानी पूजा करी;
कुसुमहार कंठे धरावती, अगर धूपे करी आरती। ७ ।
पूजा करी फरी लाग्यां पाय, वदे देवी, दीकरी, वर मांग,
कन्या कहे, रूप कंदर्प क्रोड, एवा वरनी मागुं जोड। ८ ।

एक हिरन को सावधान कर दिया। मृगया के लिए पिताजी वन में गये हैं, यह बात ओखा और चित्रलेखा ने जान ली। २ (तब) चित्रलेखा से ओखा बोली, 'चलो सखी, उमाजी का पूजन कर लें।' फिर सुन्दर चन्दन-पात्र, पुष्पहार, श्रीफल (नारियल), सुपारी जैसी वस्तुएँ सजाकर रख दीं। ३ नैवेद्य, बिजौरे और शक्कर से युक्त पूजा की सुन्दर थाली उस नारी ने (हाथ में) ग्रहण की। सती ओखा (ऐसा) उपहार लेकर (गौरी-पूजन के लिए) चल दी। उसको हृदय में (मातृ-) विरह के कारण व्याकुलता (अनुभव हो रही) थी। ४ ओखा और चित्रलेखा ने यह बात जान ली कि माता उमाजी स्नान करने के लिए गंगा (-तट) गयी हुई हैं। (फिर) उसने साथ में सहस्रों सखियों को ही ले लिया। उन (समस्त) अबलाओं ने आयुध (हथियार) और बख्तर (कवच) बाँध लिये। ५ कामदेव (के प्रभाव) से वे दोनों उन्मत्त होकर जा रही थीं। (मानो) भाग्य से वे रति-रूप में उत्पन्न हो गयी थीं। जाकर वे (दोनों) पार्वतीजी के पाँव लगीं, तो उन्होंने— उमाजी ने उनके मस्तक पर हाथ रखा। ६ अंजली भरकर उन्होंने चरण (-तीर्थ रूपी)-अमृत ले लिया और सोलह उपचारों-सहित[1] माता (उमाजी) का पूजन किया। उन्होंने उनके गले में फूलों का हार पहना दिया और अगरू तथा धूप से उनकी आरती उतारी। ७ पूजा करके फिर से वे (दोनों) पाँव लगीं, तो देवी (पार्वती) बोलीं, 'हे कन्या, वर माँग ले।' तो कन्या बोली,

---

१ (पूजा के) सोलह उपचार— (देवता का) आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत (जनेऊ), गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य (भोग), नमस्कार, परिक्रमा और मंत्रपुष्प।

उमया कहे, माग्य बीजी वार, तोये तेणे माग्यो भरथार,
त्रीजी वार कह्युं माग्य फरी, आपो सुंदर स्वामी ओचरी । ९ ।
देवी कहे वरदान हशे खरां, जा कन्या, परणजे त्रण वरां,
ओखा कहे कर्मे दई हाथ, त्रण नाथ ते महा उत्पात । १० ।
में पूज्यां तमने स्वारथ, एम परणे लोकमां हसारथ,
देवी कहे टाळुं संदेह, त्रण वार परणीश तेनो तेह । ११ ।
शुभ स्वामी इच्छे जो तरत, तो जई करजे अलूणुं वरत,
कुंवरी कहे, कंथनुं शुं जाण, व्रत कर्यानुं कुण एंधाण ? । १२ ।
देवी कहे, तेनी चिंता कशी, वैशाख सुदि द्वादशी,
भोगवशे स्वामी अंग तुज तणुं, मध्यरात्रे आवशे स्वपनुं । १३ ।
तुजने व्रेह घणो व्यापशे, चित्रलेहा आणी आपशे,
गयां उमियाजी करुणा करी, ओखा पधार्यां मंदिर भणी । १४ ।

'(जो) रूप में कोटि (-कोटि) कामदेवों-सा (हो), ऐसे वर की संगति मैं माँगना चाहती हूँ ।'। ८ (यह सुनकर) उमाजी बोलीं, 'दूसरी बार माँग ले ।' तो उसने (वैसा ही) पति माँग लिया । (तदनन्तर उमाजी ने) तीसरी बार कहा, 'फिर से माँग ले ।' तो वह बोली, '(मुझे) सुन्दर स्वामी (पति) दे दो ।'। ९ (तब) उमादेवी बोलीं, '(मेरे दिये) वरदान सच्चे होंगे । री कन्या, जा, तू तीन बार परिणय कर (लेगी) ।' (यह सुनकर) ओखा बोली, 'कर्म (दैव) ने रोक लिया (बाधा उत्पन्न कर दी)— तीन पति (पाने का वर) तो महान उत्पात (की बात) है । १० मैंने तो स्वार्थ (के विचार) से तुम्हारा पूजन किया । ऐसा विवाह तो लोक (जगत) में हँसी की बात होगी ।' (इसपर) देवी ने कहा, '(तेरे) सन्देह को दूर कर देती हूँ । तू उसी-उसी (वर) से तीन बार विवाह कर लेगी । ११ यदि तू शुभ अर्थात कल्याणकारी स्वामी (पाने) की इच्छा करती है, तो (घर) जाकर अलोना व्रत रख ले ।' (इसपर) कुमारी (ओखा) बोली, 'पति की क्या पहचान है ? व्रत रखने की क्या रीति है ? (पति को कैसे पहचानें ? व्रत का आचरण कैसे करें ?)'। १२ (तव) देवी (उमाजी) ने कहा, 'उसकी कैसी चिन्ता ? वैशाख मास की शुक्ला द्वादशी के दिन मध्य रात एक स्वप्न (देखने) में आएगा और (उसमें) तेरा स्वामी तेरी देह का उपभोग करेगा । १३ पहले तुझे बड़ा विरह व्याप्त करेगा, (फिर भी) चित्रलेखा (तेरे पति को) लाकर (तुझसे मिला) देगी ।' (इस प्रकार आश्वस्त करके) उमाजी (ओखा पर) करुणा करते हुए चली गयीं और

मृगिया रमीने आव्या तात, पुत्री वर पाम्यानी जाणी वात,
चिंता चित्तमां थई छे उदे, भयदावानल प्रगट्यो हृदे। १५।
विचार उपन्यो अंतर घणो, वडससरो जे पुत्री तणो,
ते सगाई कांईये नहीं गणे, निश्चे मारा भुजने हणे। १६।
पुत्री घडपण पाळे शुंय, माटे ओखाने मारुं हुंय,
ज्यारे नाश पामे ओखा रे बाई, नहीं वेवाई ने नहीं रे जमाई। १७।
वेवाई होय तो छेदे पाण, माटे ओखाने मारुं निर्वाण,
भूपति क्रोधातुर ज थयो, नग्न खड्ग खेंचीने गयो। १८।
जेवे पुत्रीने मारवा जाय, त्यां आव्या ऋषि नारद राय,
नारद कहे, राय, खड्ग ज धरी, क्यां चाल्या तमे क्रोध ज करी ?। १९।
राजा कहे छे मांडीने वात, जाउं छुं पुत्रीनो करवा घात,
एनो वडससरो थाशे जेह, मारा भुजने हणशे तेह। २०।
ऋषि कहे सांभळ भूपाळ, शुं करे पुत्री नानुं बाळ ?
तुजने लागशे स्त्रीहत्याय, माटे करो एक उपाय। २१।

ओखा (भी अपने) घर गयी। १४ पिता (बाणासुर जब) मृगया करके लौट आया, तो उसने पुत्री द्वारा वरदान को प्राप्त हो जाने की बात जान ली। (तब) उसके मन में चिन्ता उत्पन्न हो गयी; हृदय में भय रूपी दावानल उत्पन्न हो गया। १५ उसके मन में यह विचार उभर आया— इस पुत्री का जो ददिया ससुर हो, वह इस सगाई को कुछ भी, अर्थात बिलकुल नहीं मानेगा और निश्चय ही मेरे बाहुओं को काट डालेगा। १६ यह पुत्री (मेरे) बुढ़ापे में (मेरा) क्या पालन करेगी ? इसलिए मैं ओखा को मार डालूँगा। अरे, जब ओखाबाई नाश (मृत्यु) को प्राप्त हो जाएगी, तो न विवाह होगा, न दामाद होगा। १७ (यदि) विवाह होगा, तो वह(ददिया ससुर) मेरे हाथों को छेद डालेगा। इसलिए मैं निश्चय ही ओखा को मार डालूँगा। (ऐसा सोचते हुए) राजा (बाणासुर) क्रोधातुर हो गया और नंगा खड्ग खींचकर चल दिया। १८ जैसे ही वह पुत्री को मारने के लिए जा रहा था, तो वहाँ ऋषिराज नारद आ गये। नारद बोले, 'हे राजा, खड्ग धारण करके और क्रोध करके तुम कहाँ जा रहे हो।'। १९ (इसपर) राजा ने (समस्त) बात विस्तारपूर्वक कही— 'मैं पुत्री का वध करने जा रहा हूँ। इसका जो ददिया ससुर होगा, वह मेरे हाथों को छेद डालेगा।'। २० (यह सुनकर) ऋषि बोले, 'हे भूपाल, सुनो, पुत्री तो नन्ही बच्ची है, वह क्या करेगी। तुम्हें स्त्री-हत्या लग जाएगी। इसलिए एक उपाय

आपण बाळकने परणावीए कांय, राख्य कुंवारी, परणावीश माय,
नहीं जमाई वेवाई कोय, पछे तारे शी चिंता होय ?। २२ ।
गया नारद एवुं कही, बाणे बाळकी मारी नहीं,
नवा घरनो मांड्यो आरंभ, चणाव्यो आवास एकज स्तंभ । २३ ।
ढळाव्युं सीसुं दैत्य नरेश, न होय घरमां पवनप्रवेश,
दस सहस्र मूक्या रखवाळ, मेडी उपर चडावी बाळ । २४ ।
पासे मूकी बाळ सनेह, विधात्री नामे चित्रलेहा तेह,
जोईए अन्न वस्त्र ने पाणी, बांधी दोरीए लीए छे ताणी । २५ ।
रही सखी बे मनमां मोद, खाई पी करे हास्यविनोद,
ऊपजे काम, दृढ मन राखती, घणुं दोह्यला दहाडा नाखती । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नाखती दिवस दोह्यला, सांभळ परीक्षित भूप रे,
एम करतां ओखाने आव्युं, वर वरवानुं रूप रे । २७ ।

कर लो । २१ हम बालिका का विवाह क्यों करें ? उसे क्वाँरी रख लो; उसका विवाह नहीं करेंगे । दामाद-विवाह कुछ नहीं होगा । फिर तुम्हें क्या चिन्ता होगी । २२ ऐसा कहकर नारद चले गये । (उनकी बात को मानकर) बाण ने अपनी कन्या को नहीं मार डाला । उसने नये घर का निर्माण आरम्भ किया और एक ही खम्भे पर ईंटों का एक घर बनवा लिया । २३ दैत्यराज (बाण) ने (उसमें) सीसा ढलवा दिया; (जिससे) उस घर में वायु (तक) का प्रवेश नहीं हो पाता था । उसने (वहाँ) दस सहस्र रखवाले (नियुक्त कर) रखे और (ऊपर के) खण्ड (मंज़िल) में उस कन्या को चढ़ाकर रखा । २४ उसने स्नेह-पूर्वक चित्रलेखा नामक विधात्री (व्यवस्थापिका) को उस बाला के पास रख दिया । (जो) अन्न, वस्त्र और पानी चाहिए, उसे डोरी में बाँधकर वह खींचकर (ऊपर) ले लिया करती थी । २५ वे दोनों सखियाँ वहाँ रहते हुए मन में आनन्द अनुभव करती थीं और खा-पीकर हँसी-ठठोली किया करती थीं । उनके मन में काम (-विकार) उत्पन्न हो गया; (फिर भी) वे मन को दृढ़ (अविचल) रख रही थीं और बहुत कठिन (अर्थात दुःखपूर्ण) दिन व्यतीत कर रही थीं । २६

हे परीक्षित राजा, सुनो, वे (दोनों) दुःखपूर्ण दिन बिताती थीं । ऐसा करते-करते ओखा को (वर का वरण करने अर्थात) विवाह करने योग्य अवस्था प्राप्त हो गयी । २७

कडवुं १२ मुं—(ओखा की व्यथा)

राग गोडी

वर वरवाने जोग थई, प्रगट्यां ते स्त्रीनां चेन जी,
ओखा कहे छे चित्रलेहाने, एक वात सांभळजे बेन रे;
सैयर शुं रे कीजे मारी बेनी रे? दहाडला केम लीजे? । (टेक) । १ ।
जमपें भुंडुं मारुं जोबनियुं ने मदपूरण मुज काय जी,
पिता तो प्रीछे नहि, मारो कुंवारो भव केम जाय रे? । सै० । २ ।
सहु को सासरे जाय ने आवे, सैयरो मुज समाणी जी,
हुं अपराध विण घणुं रे पीडाणी, आंखे भरुं नित्य पाणी रे। सै० । ३ ।
ए रे दुःखे हुं दूबळी, मने अन्न उदक नव भावे जी,
आ आवासरूपी शूळी रे सहेवी, निद्रा ते कई पेरे आवे रे? । सै० । ४ ।
धन्यधन्य ते कामनी, जेणे कंथने कंठ ग्रही राख्यो जी,
हुं अभागणीए परण्या पियुनो, अधरसुधारस न चाख्यो रे। सै० । ५ ।

कड़वक १२—(ओखा की व्यथा)

ओखा वर का वरण करने, अर्थात विवाह करने योग्य हो गयी। उसमें स्त्री के चिह्न (लक्षण) प्रकट हो गये। (एक समय) ओखा चित्रलेखा से बोली, 'अरी बहन, एक बात सुन लो। अरी सखी, क्या करें? मेरी बहन, दिन कैसे बिताएँ? सखी० । १ मेरा यह यौवन (मेरे लिए) यम से (भी) बुरा (हो गया) है। मेरी यह काया (यौवन के) मद से परिपूर्ण (हो गयी) है। (फिर भी) मेरे पिताजी यह नहीं जानते कि मेरा यह क्वाँरा जन्म (इस प्रकार बिना मेरा विवाह हुए) कैसे बीत जाएगा। सखी० । २ मुझ जैसी, अर्थात मेरी अवस्था वाली समस्त सखियाँ (अपनी-अपनी) ससुराल जाती हैं और (वहाँ से मैके) आती हैं। (परन्तु) मैं तो बिना किसी अपराध के बहुत पीड़ित (हो रही) हूँ और नित्यप्रति आँखों में पानी भर रही हूँ। सखी० । ३ अरी, मैं दुःख से दुवली(-पतली) हो गयी हूँ। मुझे अन्न-जल (खाना-पीना) अच्छा नहीं लग रहा है। यह आवास रूपी सूली (मुझे) सहन करनी (पड़ रही) है; (उसमें) नींद तो किस प्रकार आ सकती है? सखी० । ४ धन्य है, धन्य है वह कामिनी, जिसने अपने पति को गले लगाये रखा हो। अभागिन मैंने प्रिय पति के अधर-सुधारस (अधरामृत) को नहीं चखा है। सखी० । ५ पति मर्यादा-पूर्वक मुझे आँखों से संकेत

मरजादा सहित माटे माणस, करे आंखनो अणसारो जी,
ते सुख तो में स्वप्ने न दीठुं, व्यर्थ गयो जन्मारो रे। सैं०। ६।
स्वामी केरो संग नहीं नारीने, एथी बीजुं शुं नरतुं जी?
हवे आशा शी परण्या तणी? मारुं जोबन जाये झरतुं रे?। सैं०। ७।
बीजी वात रुचे नहि, भरथारभोगमां मगन जी,
इहां वर आवे तो तरत वरुं, नव पूछुं जोशीने लगन रे। सैं०। ८।
वचन रसिक कहेतां करुणाभेर, आवे लचकती चाले जी,
प्रेमकटाक्षे पियुने बोलावे, ते हृदिया भीतर साले रे। सैं०। ९।
मरकलडे मुखे ने मधुरे वचने, मर्यादा मन आणी जी,
शाक पाक में पियुने न पीरस्यां, आधो पालव ताणी रे। सैं०। १०।
एवां सुख में नयणे न दीठां, मारुं कर्म अति कठोर जी,
जन्म मारो एळे गयो, जेम वगडानुं ढोर रे। सैं०। ११।
जळ विना जेवुं मानसरोवर, चंद्र विना निशा जेवी जी,
एम कंथविनानी कामनी, हुं अभागणी तेवी रे। सैं०। १२।

कर रहे हैं— ऐसा वह सुख मैंने स्वप्न (तक) में नहीं देखा है (प्राप्त किया है)। (अतः) मेरा जन्म व्यर्थ बीत गया है। सखी०। ६ नारी को पति का संग (प्राप्त) न हो— इससे (उसके लिए) क्या दूसरा अधिक बुरा हो सकता है? अब विवाह होने की क्या आशा है? मेरा यौवन (इस दशा में) झरता जा रहा है। सखी०। ७ (मैं) पति के (साथ) उपभोग में (मन से) मग्न रहती हूँ; (अतः मुझे) कोई दूसरी बात अच्छी नहीं लगती। (यदि) यहाँ वह वर (दूल्हा) आ जाए, तो मैं तत्काल उसका वरण कर लूँगी; ज्योतिषी से मुहूरत (तक) नहीं पूछूँगी। सखी०। ८ (जब मैं ऐसी कल्पना करती हूँ कि किसी स्त्री का) पति (उससे) कृपापूर्वक मधुर रसीली बातें कर रहा है, तो (उसे सुनते ही) वह (नारी) लचकती-ठुमकती चाल से चलती हुई (उसके समीप) आ रही है, (या) वह प्रेम-भरे कटाक्ष (आँख के संकेत) से अपने प्रिय को (अपने समीप) बुला रही है —ये बातें (मेरे) हृदय के भीतर सालती रहती हैं। सखी०। ९ मैंने (कभी भी) मुस्कराहट से युक्त मुख से, अर्थात मुस्कराते हुए, मर्यादा का विचार मन में लाते हुए (मर्यादा-पूर्वक) और घूँघट ओढ़कर अपने पति के लिए साग और मिष्टान्न नहीं परोसा है। सखी०। १० ऐसे सुख मैंने अपनी आँखों से नहीं देखे— मेरा कर्म (भाग्य) अति कठोर है। मेरा जन्म व्यर्थ बीत गया है, जैसे वीरान भूमि में (किसी) पशु (का जीवन व्यर्थ होता) हो। सखी०। ११

अरण्यमां जेम वेली फूली, त्यां नहीं भोगी भमर जी,
तेम वपुवेली जोबन फूल्युं, न मळ्यो भोगी वर रे। सँ०। १३।
जळ विना जेम वेलडी, लवण विना जेम अन्न जी,
भरथार विना जे भामनी, तेने दोह्यला नाखवा दंन रे। सँ०। १४।
ए सुख हुं मिथ्या गणु छुं, हुं तो लेवाई मारे पापे जी,
आ बंधोगीरी करमे कीधी, शूळीए चडावी बापे रे। सँ०। १५।
अकळ गति छे गोविंदजीनी, शुं नीपजशे बहेनी जी ?
गोविंदजीनुं गमतुं रे थाशे, मनडुं मारुं रहे नहीं रे। सँ०। १६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मन मारुं रहे नहीं, विरहवह्नि थयो उदे रे,
एम वलवलती ओखने देखी, चित्रलेहा वाणी वदे रे। १७।

जिस प्रकार बिना जल के मानसरोवर (अर्थहीन) होगा, बिना चन्द्र के रात जिस प्रकार (अर्थहीन) होती है, उसी प्रकार बिना पति के कामिनी (व्यर्थ) होती है —मैं वैसी ही अभागिनी हूँ। सखी०। १२ जिस प्रकार अरण्य में कोई लता फूली हुई हो, (परन्तु) उसके अर्थात उसके फूलों के मधुरस का भोग भ्रमरों ने नहीं किया हो (तो उसका फूलना निरर्थक होता है), उसी प्रकार मेरी इस देह रूपी लता में यौवन (रूपी फूल) विकसित हो गया है, परन्तु उसका उपभोग करनेवाला वर (पति मुझे) नहीं मिला है। (अतः यह शरीर और यह यौवन व्यर्थ सिद्ध हो गया है)। सखी०। १३ जिस प्रकार बिना पानी के लता (सूख जाती) है, बिना लवण के अन्न (स्वादहीन होता) है, उसी प्रकार, जो नारी पति-विहीन होती है (उसका जीवन अर्थहीन होता है), उसे दुःख भरे दिन बिताना कठिन हो जाता है। सखी०। १४ (यहाँ मिलनेवाला) यह सुख मैं मिथ्या (झूठा, आभास मात्र) समझ रही हूँ। मैं तो अपने (पूर्वजन्म में कृत) पाप से लज्जित हो रही हूँ। अपने कर्म (दैव) से मैं यह दासता कर रही हूँ— पिताजी ने (मानो) मुझे सूली पर चढ़ा दिया है। सखी०। १५ (भगवान) गोविन्द की गति अगम्य है। री बहन, इससे क्या उत्पन्न होनेवाला है? गोविन्दजी का मनभाया हो (ही) जाएगा। (फिर भी) मेरा मन (शान्त) नहीं रह रहा है। सखी०। १६

मेरा मन (शान्त) नहीं रह रहा है। उसमें विरह रूपी आग उत्पन्न हो गयी है। ओखा को इस प्रकार विलाप करते देखकर चित्रलेखा ने यह बात कही। १७

कडवुं १३ मुं—(चित्रलेखा का उपदेश ओखा के प्रति)

राग मेवाडानी देशी

शिखामण दे छे चित्रलेहा जो, तुं तो सांभळ बाळसनेहा जो,
एम छोकरवादी नव कीजे जो, बाई बळिया बापथी बीजे जो। १।
एवुं नीच समजवुं तोरुं जो, आपण मोटां माबापनां छोरुं जो,
एम लांछन लागे कुळमां जो, प्रतिष्ठा जाये एक पळमां जो। २।
कीजे कह्युं होय जे ताते जो, नव जईए बीजी वाटे जो,
हुं तो रही छुं रक्षा सारुं जो, बेनी, तुं माणस नहि वारु जो। ३।
में न थयुं तारुं रक्षण जो, बाई तुजमां प्रगट्युं अपलक्षण जो,
तुंमां कामकटकदल प्रगट्युं जो, हवे मारे रहेवुं नथी घटतुं जो। ४।
जोने राय बाणासुर जाणे जो, अंत आपणा बेनो आणे जो,
मंत्री दुःखदायक छे वरती जो, हुं तो भूंडी कहेवाउं तुज मळती जो। ५।
मारा सम, जो तुं करे मन व्यग्र जे, एम स्वामी न पामीए शीघ्र जो,
थाके डगलां न भरीए लांबां जो, उतावळे न पाके आंबा जो। ६।

कड़वक १३—(चित्रलेखा का उपदेश ओखा के प्रति)

चित्रलेखा (ओखा को) सिखावन दे रही है (चित्रलेखा ने ओखा को उपदेश दिया)— देख री बाल-सखी, तू सुन तो ले। देखना, ऐसी बचकानी बात न कर। री बाई, अपने बलशाली पिता से डर। १ तू (स्वयं) बड़े माता-पिता की सन्तान है। (अतः) इस प्रकार (अपने को) तेरा यह छोटा समझना (कैसा) ? देख, इससे कुल में ऐसा कलंक लग जाएगा। देख, एक पल में (कुल की) प्रतिष्ठा मिट जाएगी। २ देखना, पिताजी ने जो कहा हो, वह कर दे। दूसरे (भिन्न) मार्ग से न जा। ठीक से देख ले, मैं तो तेरी रक्षा करने के लिए (नियुक्त कर दी गयी) हूँ। री बहन, तू मनुष्य है, देख, (तेरे लिए) यह अच्छा नहीं है। ३ मुझसे तेरा रक्षण नहीं हुआ। बाई, देखना तुझमें अव-लक्षण (बुरा लक्षण) प्रगट हो गया है। देख, तुझमें कामदेव की सेना प्रकट हो गयी है। अब मेरे द्वारा ऐसा रह जाना शोभा नहीं देता (उचित नहीं है)। ४ देख लेना, यदि राजा बाणासुर यह जान लें, तो वे हम दोनों का अन्त (नाश) कर देंगे। यदि तू (इस प्रकार) वर्ताव करती है, तो (तेरी-मेरी यह) मित्रता दुखदायी (सिद्ध हो जाती) है। (अतः) तुझसे मिलनेवाली मैं तो बुरी कहाऊँगी। ५ मेरी शपथ है, यदि तू अपने मन को (इस प्रकार) व्यग्र कर देगी। ऐसे तो तू पति को शीघ्र

हुं प्रीछी कामनुं कारण जो, बेनी राख्य हैयामां धारण जो,
पियुने मळवुं कोने नथी गमतुं जो, सौने जोबन हींडे छे दमतुं जो। ७ ।
तुं मां ज्ञान अक्कल नथी अर्थ जो, कारागृहमां ते क्यांथी कंथ जो ?
मारी ओखाबाई सलुणां जो, तमे व्रत करोने अलूणां जो। ८ ।
आव्यो चैत्र मास एम करतां जो, पछे ओखाजी व्रत आचरतां जो,
अलवण अन्न जमी दिन खूए जो, दीपक वळे ने भूमिए सूए जो। ९ ।
मात उमियाने आराधे जो, देह दमन करे मन बांधे जो,
थयुं पूरण व्रत एक मासे जो, को ना जाणे एकांत आवासे जो। १० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आवासे एक खंड विशे, व्रत कीधुं ओखाय रे,
थयो स्वप्नसंजोग स्वामीनो, ते भट प्रेमानंद गाय रे। ११ ।

नहीं प्राप्त हो पाएगी। देख, पाँव थक जाएँगे, लम्बे डग न भर दें। उतावली (करने) से आम पकता नहीं है। ६ मैं (तेरी) ऐसी करतूत का कारण समझ चुकी हूँ। देख री बहन, हृदय में धीरज धारण किये रख। प्रिय से मिलना किसे अच्छा नहीं लगता ? यौवन सबको दुःख देता हुआ घूमता रहता है। ७ देख, तुझमें कोई ज्ञान, अक्ल नहीं है, कोई अर्थ नहीं है। इस कारागृह में (तुझे) पति कहाँ से प्राप्त होगा। देख, मेरी सलोनी ओखाबाई, तू अलोना व्रत रख ले। ८

ऐसा करते-करते चैत्र मास आ गया। फिर ओखा ने व्रत रख लिया। लवणहीन (अलोना) अन्न खाकर वह दिन बिताती थी। वह (हर दिन) दीपक जलाया करती थी और भूमि पर सोया करती थी। ९ वह माता उमा की आराधना करती थी, देह-दमन करती थी—अपने मन (के विकारों) से लड़ती थी। एक मास (के अन्त) में व्रत पूर्ण हो गया। (फिर भी) उस एकान्त निवास-स्थान पर इसे कोई नहीं जान पाया। १०

ओखा ने निवास-स्थान के एक खण्ड के अन्दर व्रत का निर्वाह किया। (अनन्तर) उसका (अपने) स्वामी से (जिस प्रकार) मिलन हो गया, उसका गान (वर्णन) कवि भट्ट (विप्र) प्रेमानन्द (अब) करने जा रहे हैं। ११

कडवुं १४ मुं—(ओखा की विरह-व्यथा)

राग केदारो

नाथ विना हुं एकली, केम करीने रहेवाय ?
कामज्वर प्रगट थयो, ज्वाळा केम सहेवाय ? । नाथ विना० (टेक) । १ ।
मातापिता वेरी थयां, जेणे दुःखमां नाखी,
वांक विना विपत घणी, आ शूळीए राखी । नाथ विना० । २ ।
मारो हरख रह्यो, हैडा विषे रंडापो वळग्यो,
कंथविजोग छे दोह्यलो, प्राणजीवन अळगो । नाथ विना० । ३ ।
शणगार सजीने हुं शुं करुं ? देखाडुं कोने ?
सेज बिछावी स्वामी विना, जाउं कोना मोंने ? । नाथ विना० । ४ ।
उज्जड वनमां हुं रहुं, नहीं कोने जोउं,
तस्करनी जेम मातने, कोठीमां रोवुं । नाथ विना० । ५ ।
मारी दिन दिन काया दूबळी, सैयर शुं करीए ?
कंथविजोग छे दोह्यलो, फाटीने मरीए । नाथ विना० । ६ ।

कड़वक १४—(ओखा की विरह-व्यथा)

मैं बिना पति के अकेली हूँ । मुझसे (अब इस स्थिति में) कैसे रहा जाए ? (मेरे शरीर और मन में) काम-ज्वर उत्पन्न हो गया है, उसकी ज्वालाओं को कैसे सहा जाए ? बिना० । १ (मेरे) माता-पिता (मेरे) बैरी हो गये हैं, जिन्होंने (मुझे ऐसे) दुख में डाल दिया है । बिना किसी अपराध के (उन्होंने) मुझे इस सूली पर (धर) रखा है । बिना० । २ मेरा हर्ष (मुझसे) दूर रह गया है । हृदय में रँडापा लगा हुआ है (अर्थात मन में मानो मैं वैधव्य अनुभव करने लगी हूँ) । पति-वियोग दुःसह है; मेरे प्राण-जीवन (मुझसे) दूर हो गये हैं । बिना० । ३ मैं सिंगार सजकर क्या करूँ ? वह मैं किसे दिखाऊँ ? बिना स्वामी के (साथ में रहे) मैं सेज बिछाकर किस मुँह रह जाऊँ (कौन मुँह लिये रह जाऊँ) ? बिना० । ४ मैं मानो उजाड़ वन में रह रही हूँ, (यहाँ) मैं किसी को नहीं देख पा रही हूँ । चोर की माँ की भाँति कोठी में (बैठकर) रो रही हूँ (जैसे चोर की माता पुत्र की चोरी के खुल जाने के भय से, उसे संकट में देखकर प्रकट रूप से रो भी नहीं सकती, उसे घर के अन्दर चोरी-छिपे आँसू बहाने पड़ते हैं, उसी प्रकार ओखा कामज्वर से उत्पन्न अपनी पीड़ा को किसी के सामने प्रकट करने में असमर्थ हो गयी थी । यदि भेद खुल जाए, तो जगहँसाई हो सकती थी ।) बिना० । ५ मेरी काया दिन-ब-दिन दुबली (-पतली)

होय सुख घणुं पियर विषे, तोये ओछुं आवे,
भाई भोजाई मेणां दीए, नठारी कहावे। नाथ विना०। ७।
कोने रे पियु में परभव्यो, पेला भवनी रे मांहे,
ते दैव मुने दंड दीधो, आवी आ भव मांहे। नाथ विना०। ८।
रात वेरण थई माह्यरी, नहीं वहाणुं वाये,
प्रेमानंद प्रभु जो मळे, तो सुखडुं थाये। नाथ विना०। ९।

होती जा रही है। री सखी, (इस स्थिति में) क्या करें? पति का वियोग (मेरे लिए) असह्य हो रहा है। (इसमें तो दर्द से देह) फटकर मर जाएँ (तो अच्छा हो जाएगा)। बिना०। ६ पीहर में सुख तो बहुत होता है; फिर भी (विरह की ऐसी स्थिति में) उसमें कमी आती है अर्थात मन दुखी हो जाता है। भाई-भौजाई ताने देते हैं। (ऐसी कन्या को) बुरा कहा जाता है। बिना०। ७ मैंने पहले (पूर्व) जन्म में किसके पति को पराजित किया था, (जिससे) इस जन्म में आने पर दैव ने मुझे (ऐसा) दण्ड दिया है। बिना०। ८ मेरे लिए रात बैरन हो गयी है, सवेरा नहीं हो रहा है। प्रेमानन्द कहते हैं— (ओखा ने कहा) (यदि इस स्थिति में मेरे) प्रभु अर्थात पति मिल जाएँ, तो (मुझे) सुख (प्राप्त) हो जाएगा। बिना०। ९

कडवुं १५ मुं—(स्वप्न में ओखा का पति से मिलन हो जाना)

राग केदारो

शुकदेवजी वाणी वदे, ओखा भरी छे पूरण मदे,
वैशाख सुदि द्वादश हूती, स्वामी स्वामी करती सूती। १।
सुखे निद्रा करे छे बाळ, तन तप्त ऊठे व्रेहज्वाळ,
व्रेहनी ज्वाळानो ताप न समे, घणा दोह्यला दिवस निर्गमे। २।

कड़वक १५—(स्वप्न में ओखा का पति से मिलन हो जाना)

शुकदेवजी ने (राजा परिक्षित से) यह बात कही— ओखा (यौवन के) मद से पूर्ण भर गयी थी। (उस दिन) वैशाख मास की शुक्ला द्वादशी थी। वह 'स्वामी', 'स्वामी' करते-करते (शब्द रटते-रटते) सो गयी। १ वह बाला सुख से नींद ले रही थी, तो विरह (रूपी अग्नि) की ज्वाला से उसका तन तप्त हो उठा। विरह की ज्वाला के ताप का शमन नहीं हो रहा था। (इस स्थिति में) बहुत दुःसह (दशा में) दिन बीत रहे थे। २ संयोग से सूर्य के अस्त के समय उसने अपने हाथों से अपने कुचों

समयसंजोग सूर्यने अस्ते, कुचमर्दन करे छे स्वहस्ते,
अधर करडे चुंबन दे घेली, बेउ चरण हृदे पर मेली । ३ ।
लडथडती आवे हींडी, चित्रलेहाने पाडे भुज भीडी,
सूतां सज्जाए एकठां वळगी, सैयरने न करे अळगी । ४ ।
पर्यंके प्रेमदा रमे, एम आळे निशा निर्गमे,
कांई लखित वात छे भावी, जुग्म कामनीने निद्रा आवी । ५ ।
ओखा ऊंघमां न जाणती हूती, सखीनी सेजे जईने सूती,
तेने थावा न दे उपरांटी, अन्योअन्य भरावे आंटी । ६ ।
सूती स्वामी स्वामी करतां, थावा लाग्यां स्वप्नांतर त्यां,
थई स्वप्ने ओखा आनंदी, वर मळ्यो छे व्रेहनो फंदी । ७ ।
मंडप मनुष्ये भरायो खचखची, दीठी नौतम चोरी रची,
एक स्वामी ते रूप रसाळो, तेनी साथे मळ्यो हथेवाळो । ८ ।
चार मंगळ फेरा फरियां, कंसारनां भोजन करियां,
दासी गीत गाये छे वरणी, ओखा पियुजीशुं ऊठी परणी । ९ ।

का मर्दन किया । उस पगली ने अपने होठों को दाँतों से काट दिया और चुम्बन किया (और) दोनों चरणों को हृदय से मिला लिया । ३ वह लड़खड़ाती चलती हुई आ गयी और उसने चित्रलेखा को बाँहों में कसकर लिटा दिया । शय्या में वे (एक-दूसरी से) लिपटकर एकत्र सो गयीं । (ओखा अपनी) सखी को (अपने से) अलग नहीं कर रही थी । ४ (इस प्रकार) वे (दोनों) प्रमदाएँ पलंग पर रमण कर रही थीं । इस प्रकार नटखटी में वह रात बीत गयी । (ओखा के भाग्य में) कोई होनी बात लिखित थी । उन दोनों कामिनियों को नींद आ गयी । ५ ओखा तो नींद में यह नहीं समझ पा रही थी (कि वह क्या कर रही है) । वह सखी की शय्या पर जाकर सो गयी (लेट गयी) थी । वह उस (चित्रलेखा) को करवट बदलने (तक) नहीं दे रही थी । (इस प्रकार) वे (दोनों) एक-दूसरी के साथ गूँथी हुई रहीं (एक-दूसरी से कसकर लिपटी हुई रहीं) । ६ वह (पहले तो) 'स्वामी', 'स्वामी' रटते हुए सो गयी थी, (अब) वहाँ (उस स्थिति में) स्वप्नान्तरण होने लगा (वह दूसरा स्वप्न देखने लगी) । स्वप्न में ओखा आनन्दित हो गयी (क्योंकि) उसे (अब) विरह के फन्दे में बाँध रखनेवाला वर (पति) मिल गया था । ७ (उसने स्वप्न में देखा—) मण्डप मनुष्यों से खचाखच भर दिया गया है । उसने नवीनतम (रूप से) चौरी रची हुई देखी । एक रसीले रूप वाले वर (उपस्थित) थे; उन्होंने उसका पाणि-ग्रहण किया । ८ वे चार मंगल

लायक स्तंभ पोतानी मेडी, त्यां पियुजीने लाव्यां तेडी,
पीळी पाघ ने वाघो लाल, शिर तोरो छे फूल गुलाल । १० ।
शोभे भूषण ने नवरंग, हाथे मींढळ शोभे अंग,
बेठां शय्याए श्यामा ने स्वामी, एवुं स्वप्न ते प्रेमदा पामी । ११ ।
व्याप्यो वामाने व्रेहनो रोग, स्वप्ने पामी सुखसंभोग,
नाथ बोलावे करी आदर, प्होंती शामा ते सादर । १२ ।
रतिसंग्राम करे छे निःशंक, ग्रही अधरे देती डंख,
टूट्यो हार वछूटी मेखला, रमे रतिसुख आसन कळा । १३ ।
स्वप्ने नारीने मळियो नृप, कन्या खलित थई कंद्रप,
भांगी नाख्यो ते भोगनो भेद, ऊपन्यो अमृत परस्वेद । १४ ।

भाँवर फिर गये और कसार जैसे मिष्टान्न से युक्त भोजन किया। दासियाँ (उस प्रसंग का) वर्णन करते हुए गीत गा रही थीं। (इस प्रकार) ओखा का अपने प्रिय से परिणय हो गया। ९ उसके अपने घर की ऊपर वाली मंजिल में एक खण्ड सुयोग्य था। वह अपने प्रियतम को वहाँ बुला ले आयी। उस (वर) के सिर पर पीली पाग थी, उसका पहनावा लाल था; मस्तक पर (पहनी हुई पगड़ी का) गुलाल के-से लाल रंग के फूलों का तुर्रा था। १० उसके (धारण किये हुए) आभूषण शोभायमान थे; हाथ में मैनफल (बँधा) था। इस प्रकार उसका (समस्त) अंग शोभायमान था। वह श्यामा (नारी) और उसका पति (दोनों) शय्या पर बैठ गये। वह प्रमदा इस प्रकार स्वप्न(-दर्शन) को प्राप्त हो गयी। ११ उस स्त्री को विरह का रोग व्याप्त कर चुका था। (अब) वह स्वप्न में सम्भोग सुख को प्राप्त होने जा रही थी। उसके पति ने उसे आदर-पूर्वक बुला लिया तो वह स्त्री आदर के साथ (उनके पास) पहुँच गयी। १२ (तदनन्तर) वह निःशंक (निर्भय) होकर रति-संग्राम करने लगी। वह (होंठों से प्रियतम के) होंठ पकड़कर उसे काट देने लगी। उसके गले का हार टूट गया, मेखला छूटकर अलग हो गयी। वह रति-सुख के लिए (सम्भोग के) आसन लगाने की कला के साथ रमण करने लगी। १३ स्वप्न में उस नारी से (पति के रूप में एक) राजा मिल गये। (इस प्रकार) उसके साथ सम्भोग करते-करते उस कन्या का वीर्य स्खलित हो गया। भोग के रहस्य को उसने प्रकट कर डाला। उस (की देह) में स्वेद-जल (पसीना) आ गया। १४ वह जादूगरनी मीठी-मीठी बोली में अपने अन्दर (मन) की बात मुँह से उसके सामने (प्रस्तुत) करने लगी। स्वप्न में वह रात में जागृत रह रही थी। यह उस कन्या को अच्छा लग रहा था। १५ मन ही मन वह तृप्त हो गयी थी। उन दोनों

मधुरी बोले जंतरणी, एम मोढे वात अंतरनी,
स्वपनमां रजनी जागे, ते तो कन्याने रूडुं लागे। १५।
मनमांही ते मन गयुं पेसी, खावुं खाधुं ते एकठां बेसी,
बीठी अरधी करडी नाथे, आपी ओखाजीने हाथे। १६।
खातां मुख मरड्युं बीडी बोटी, पियुने रीस चढी प्रीत खोटी,
अनिरुद्ध विमासे मन, चित्त भांग्युं विचार उत्पन्न। १७।
कहे मुज कुल खोई लाज, रखे जाणे श्री महाराज,
हुं तो थई गयो कामी अंध, परनारी साथे शो संबंध ? । १८।
एम विचारे भरथार, विरहातुर बाणकुमार,
पतिने जोई मोहज पामी, पछी विरहनी वेदना वामी। १९।
बीडी पाननी अरधी करडी, खाधी मन विना मुख मरडी,
भरथारने भ्रांत ज आवी, सेजथी नाथ गयो रिसावी। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रिसावी गयो रमण करतां, स्वप्नांतरनी वात रे,
ओचिंती ऊठी ओखा जागी, साचे मांड्यो आंसुपात रे। २१।

ने इकट्ठा बैठकर खाना खाया। (तत्पश्चात) उसके पति ने पान का बीड़ा (अपने दाँतों से) आधा काट दिया और वह (आधा भाग) ओखा के हाथ में दे दिया। १६ उस जूठे बीड़े को खाते-खाते उसने मुँह टेढ़ा किया, तो उसकी प्रीति को झूठी समझ बैठने से प्रियतम को क्रोध आ गया। (फिर) अनिरुद्ध मन में पछताने लगा; उसका मन उचट गया और उसमें यह विचार उत्पन्न हो गया। १७ वह बोला, मैंने अपने कुल की लाज गँवा दी। कदाचित इसे श्री महाराज (भगवान कृष्ण) जान जाएँगे। मैं तो कामी, अंधा हो गया हूँ। पर-नारी के साथ यह कैसा सम्बन्ध ? । १८ पति इस प्रकार विचार कर रहा था, तो (इधर दैत्यराज) बाण की वह कन्या (ओखा) विरह (की आशंका) से व्याकुल हो गयी। पति को देखकर वह मोह को प्राप्त हो गयी; (फिर) विरह की वेदना नष्ट हो गयी। १९ उसने पान का बीड़ा आधा काट दिया था और मुँह मोड़ते हुए, बिना मन की इच्छा से खाया था। (इससे) पति को भ्रान्ति अनुभव हो गयी। वह रूठकर शय्या से उठकर चला गया। २०

रमण करते-करते वह रूठकर चला गया। यह तो स्वप्न के अन्दर की बात थी। (तत्पश्चात) ओखा अचानक जग गयी, तो उसने सचमुच आँसू बहाना शुरू किया। २१

कडवुं १६ मुं—(ओखा का परिताप)

राग सामेरीनी साखी

सामेरी सजन वळावियो, ताती वेळु मांहे,
हुं न सरजी वादळी, पियुने पळपळ करती छांय रे। १ ।

साहेली, सागर उलट्यो, रतन तणायां जाय,
करमहीणो भरे मूठडी, तेना शंखले हाथ भराय रे। २ ।

सेजे सूतां स्वपनो भयो, पिया गृही मोरी बांहे,
ओचिंतां झबकी गई, पियु न देखुं त्यांहे रे। ३ ।

सूउं त्यारे पियु सांभरे, जागु तो पियु जाय,
रेन के स्वप्नांतरे, क्युं जिऊं मोरी माय। ४ ।

स्वप्नामें पियु आविया, ऊंघे लागो धाय,
बलिहारी ए स्वप्नाकी रे, मत स्वप्ना हो जाय रे। ५ ।

स्वप्नाने तोरा कहा किया, मत जगावे मोय,
जो मोरा पिया ना मिले, तो में मरुंगी सोय रे। ६ ।

कड़वक १६—(ओखा का परिताप)

मैंने गर्म बालू पर (अपने) साथी-संगी सजना को लौटा दिया। (हाय!) मैं बादल का निर्माण न कर सकी, जिससे उसपर प्रतिपल छाया कर पाती। १ री सखी, (मेरी स्थिति ठीक उसी मनुष्य के समान हो गयी है, जिसके सामने) सागर उमड़ रहा था, रत्न बहते जा रहे थे, (फिर भी) वह कर्महीन (अभागा जब) मुट्ठी भर लेने लगा, तो उसके हाथ शंखों से भर दिये जाते थे। २ सेज पर सोते-सोते मैंने एक सपना देखा— मेरे प्रिय ने मेरी बाँहें पकड़ी हैं; (परन्तु) मैं अचानक चौंक उठी और मैं वहाँ प्रिय को न देख पायी। ३ जब सो जाती हूँ, तब प्रिय याद आ जाते हैं (सपने में आ जाते हैं और) जब जग जाती हूँ, तो प्रियतम चले जाते हैं। अरी मैया, रात में या सपने में मैं कैसे जीवित रहूँ। ४ सपने में प्रिय आ गये थे, नींद में मैं उनके (पीछे-पीछे) दौड़ने लगी थी। उस सपने की बलिहारी है— यह सपना (सपना ही) नहीं रह जाए (वह सत्य सृष्टि में उतर जाए तो अच्छा होगा)। ५ सपने ने तेरा कहा (चाहा हुआ पूरा) कर दिया है, (अब) मुझे न जगा दे। यदि मुझसे प्रियतम न मिलें, तो मैं निश्चय ही मर जाऊँगी। ६

राग सामेरी

जागी जागी रे रामा रसभरी, तपासे सेजलडी फरीफरी रे ।रामा०(टेक)।७।
ऊठीने सज्जा पर बेठी, विचार विषे पेठी रे,
चतुरा चक्षुने चोळीने जोती, पछे नेत्रे नीर भरी रोती रे। रामा०। ८।
भुज दईने ललाटे रे बेठी, विरहभरी छे बाळी रे,
थरथर ध्रूजे ने कांई न सूझे, रुवे छे आंसुडां ढाळी रे। रामा०। ९।
मुखे करडे छे आंगळी, में वणसाड्युं थोडाने काजे रे,
में मूई मोहोड्डुं मचकोड्युं, बीडी न खाधी ते दाझे रे। रामा०। १०।
लडथडती चाले ने पालव झाले, भमर भोळी भाळे रे,
करे स्वामीने साद संभारी, नयणे ते आंसुडां ढाळे रे। रामा०। ११।
धबधब गई नारी, तपासी बारी, दीठी ते भोगळ भीडी रे,
जोई चारे खूणे, ने मस्तक धूणे, विलपे विजोगनी पीडी रे। रामा०। १२।

(स्वप्न में प्रियतम से मिलने के कारण) आनन्द से भरी पूरी वह (ओखा) जाग उठी, जाग उठी, तो वह अपनी शय्या में बार-बार (अपने प्रिय को) ढूँढ़ने लगी। वह स्त्री०। ७ (फिर) उठकर वह शय्या पर बैठ गयी और सोच-विचार में पैठ गयी (मग्न हो गयी)। उस चतुर (नारी) ने अपनी आँखों को मलकर देखा। फिर आँखों में आँसू भरकर वह रोने लगी। वह स्त्री०। ८ वह सिर पर हाथ लगाये बैठ गयी। वह बाला विरह (के दुख) से व्याप्त हो गयी थी। वह थरथर काँप रही थी। उसे कुछ सुझायी नहीं दे रहा था। वह आँसू बहाते हुए रो रही थी। वह स्त्री०। ९ वह अपने मुँह अर्थात दाँतों से अँगुलियों को काटने लगी। (वह सोचने लगी—) मैंने तो छोटे-से काम के लिए (छोटी-सी बात के लिए सब कुछ) नष्ट कर डाला। मैं मुई (मरी-निगोड़ी) ने मुँह मोड़ लिया (बिगाड़ लिया)— मैंने बीड़ा नहीं खाया, वह (अब) दुख दे रहा है। वह स्त्री०। १० वह भोली-भाली (नारी) लड़खड़ाती चाल से चलने लगी। उसने साड़ी का आँचल हाथ में पकड़ रखा और वह देखने लगी। वह अपने स्वामी को याद करती हुई पुकारने लगी (प्रिय को बुलाने लगी)। वह आँखों से आँसू बहा रही थी। वह स्त्री०। ११ वह नारी धड़धड़ाते हुए (आगे) गयी। उसने खिड़की (से) तलाश की, उसने देखा कि सिटकिनी बन्द की हुई है। (फिर) उसने चारों कोनों में देखा तो वह सिर धुनने लगी और वियोग से पीड़ित (होकर) वह विलाप करने लगी। वह स्त्री०। १२ वह सिटपिटाती रही। उसके मनोरथ व्यर्थ (सिद्ध हो गये) थे। वह रह-रहकर रोते हुए— शपथ दिलाने लगी। (वह बोली—) तुम्हारे लिए हँसना है, मेरे लिए रोकर मरना है। मैं (अब) किस काम से धीरज धारण करूँ। वह स्त्री०। १३ तुमने सम्भोग-सुख देकर अनन्तर दुःख

करे कालावाला, मनोरथ ठाला, ठणठणती दे छे सम रे,
तमारे हसवुं, मारे रोई मरवुं, धीरज राखुं काम क्यम रे ? । रामा० । १३ ।
आपी संभोगसुख, पछी देवुं दुःख, मारी निर्बळ कर्मनी रेखा रे,
अतीशे मा ताणो, दया मन आणो, तमने बापना सम, द्यो देखा रे । रामा० । १४ ।
जुओ प्रीत तपासी, हुं छुं दासी, दंड द्यो अपराध सारु रे,
करो स्नेह, के वाला तजुं देह, अति घणुं ते नहि वार रे । रामा० । १५ ।
मीटे मीट मांडो ने खट पट छांडो, न बोलो तो कंठ नाखुं वहाडी रे,
बीडी माटे थयां मन खाटां, कहो तो मुखना तंबोळ लउं कहाडी रे । रामा० । १६ ।
अरे नाथजी, न जईए हाडे, राड ते फोगट फांसु रे,
अमो पर न आवे दया, देखी मारी आंखडीए आंसु रे । रामा० । १७ ।
अनेक उपाय कीधा कन्याए, न बोल्यो नाथ, आशा भांगी रे,
वदे विप्र प्रेमानंद, थई गति मंद, पछे ओखा ते रोवा लागी रे । रामा० । १८ ।

दिया । मेरे कर्म (भाग्य) की रेखा दुर्बल है । (अब) बहुत अधिक मत खींचो, मन में दया लाओ (करो) । तुम्हें पिताजी की सौगन्ध है, (मुझे) दर्शन दे दो । वह स्त्री० । १४ मेरी प्रीति की परख करके देखो । मैं तो (तुम्हारी) दासी हूँ । मेरे अपराध के लिए मुझे (कोई दूसरा) दण्ड दो । मुझसे स्नेह करो अथवा हे प्रिय, मैं देह त्याग दूँगी । इसमें (अब) बहुत विलम्ब नहीं होगा । वह स्त्री० । १५ नज़र से नज़र मिला लो और यह खटपट (झंझट) छोड़ दो । (यदि) तुम न बोलोगे, तो मैं अपना गला काट दूँगी । बीड़े के लिए (हमारे) मन खट्टे हो गये । (अब) कहो, तो तुम्हारे मुख में से ताम्बूल (बीड़ा) निकाल (कर खा) लूँ । वह स्त्री० । १६ अहो नाथजी, हड्डियों तक न जाएँ (बहुत अधिक न बढ़ाएँ) । यह झगड़ा तो फोकट का फन्दा है । मेरी आँखों में आँसुओं को देखकर भी तुम्हें मुझ पर दया नहीं आ रही है । वह स्त्री० । १७

(इस प्रकार) उस कन्या ने अनेक उपाय किये, (फिर भी) उससे उसके स्वामी नहीं बोले । (अतः) उसकी आशा भग्न हो गयी । विप्र प्रेमानन्द कहते हैं— उसकी गति मन्द हो गयी । अनन्तर ओखा रोने लगी । वह स्त्री० । १८

कडवुं १७ मुं—(ओखा का विलाप)

राग रसिक मलार

मारो पियु परदेशी थई रह्यो, रिसायो भरथार,
रत्न आव्युं तुं हाथमां, राखी न शकी आणी वार रे । मारो० । १ ।
हवे दोष देवो शो कर्मने, हास्यमां थयुं कल्पांत,
में तो मरकलडे मुख फेरव्युं, मारा नाथने पडी छे भ्रांत रे । मारो० । २ ।
हवे वहेला पधारोने, नाथजी, मारुं हृदय फाटी जाय रे,
सुखसागर वही चालियो, जोबन तणायुं जाय रे । मारो० । ३ ।
व्याकुळ मन कन्या तणुं, केश छूटा छे चारे दिश,
हाथ घसे, कल्पांत करे, हवे शुं थाशे जगदीश ? । मारो० । ४ ।
पेले भवे कर्म शां कर्यां ? पापी पतिविजोगनी ज्वाळ,
हुंश रही हेडा विषे, रंगमां डसियो रे व्याळ । मारो० । ५ ।
चो दिशा भाळे भामिनी, ओचिंतां द्यो दर्शन,
ऊठें बेसे अवनी पडे, जेम जल विना तलपे मीन । मारो० । ६ ।

कड़वक १७—(ओखा का विलाप)

मेरे प्रिय परदेसी बनकर (दूर) रह गये हैं; मेरे पति रूठ गये हैं। (मेरे) हाथ में रत्न आ गया था; (फिर भी) मैं इस बार उसे (हाथ में) रख नहीं पायी। मेरे०। १ अब कर्म को क्या दोष देना है ? हँसी (-ठठोली) में बड़ा उत्पात हो गया। मैंने तो हँसी-दिल्लगी में मुँह मोड़ लिया, (परन्तु) मेरे स्वामी को उससे भ्रम हो गया। मेरे०। २ हे नाथ, अब शीघ्र पधारो; मेरा हृदय फटता जा रहा है। सुख-सागर उमड़ उठा है और यौवन बहता जा रहा है। मेरे०। ३ उस कन्या (ओखा) का मन व्याकुल हो गया था। चारों ओर उसके बाल बिखर गये थे। वह हाथ मल रही थी, बहुत विलाप कर रही थी। हे जगदीश, अब क्या होगा। मेरे०। ४ मैंने पूर्व जन्म में क्या-क्या कर्म किये थे, (जिससे) पति-वियोग की यह पापी ज्वाला (मेरे लिए उत्पन्न हो गयी) है। हृदय के भीतर (भोग की) हविस रही है। (परन्तु) रंग में (मानो आनन्द-प्रमोद के अवसर पर) साँप डँस गया। मेरे०। ५ वह भामिनी चारों ओर देख रही थी। (हे नाथ) अचानक दर्शन दो। वह उठती थी, बैठती थी, भूमि पर गिर जाती थी, जैसे कोई मछली बिना जल के (जल के अभाव से) तड़प रही हो। मेरे०। ६ वह सुन्दरी इस प्रकार

एम रुदन करे सुंदरी, जागी चित्रलेहा तत्काळ,
तेणे हृदिया साथे चांपीने, चुंबन दीधुं गाळ । मारो० । ७ ।
तात तारो जो जाणशे, आपण बेना आणशे अंत,
साचुं कहेने मारी बेनडी, तें शुं दीठुं स्वप्न ? । मारो० । ८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ओखा कहे, सुण बेनडी, मुंने भाव न लगार रे,
भट प्रेमानंद एम कहे, प्राण लावतां शी वार रे । ९ ।

रुदन कर रही थी । (यह सुनकर) चित्रलेखा तत्काल जग गयी । उसने (ओखा को) हृदय से लगाकर उसके गाल का चुम्बन किया । मेरे० । ७ (वह बोली—) यदि तुम्हारे पिता यह जान जाएँ, तो हम दोनों का अन्त कर देंगे । मेरी बहना, सच-सच कहो ना, तुमने कौन-सा सपना देखा । मेरे० । ८

ओखा बोली— सुनो बहन, मुझे कोई कामना बिलकुल नहीं है । भट्ट (विप्र) प्रेमानन्द कहते हैं— (ओखा ने कहा—) प्राणों का अन्त कर लाने में (अब) क्या देर है ? । ९

कडवुं १८ मुं—(ओखा की चित्रलेखा से विनती)

राग वेराडी

आशाभंग थई भामिनी, रूवे स्तुति करे स्वामीनी,
चित्रलेहा भणी ते गई, ऊठ बहेनी, तुं शुं सूई रही ? । १ ।
छे चतुर कौंभाडकुमारी, पूछे वात सफळ विस्तारी,
चित्रलेहा कहे, सुण बाळी, केम रूवे छे आंसुडां ढाळी ? । २ ।

कड़वक १८—(ओखा की चित्रलेखा से विनती)

उस भामिनी की आशा भग्न हो गयी (वह भामिनी निराश हो गयी) । वह अपने स्वामी की स्तुति करने लगी । चित्रलेखा उसके पास गयी (और बोली—) 'बहन, उठ जाओ, तुम क्या सोयी रही ?' । १ (मंत्री) कौभाण्डक की वह पुत्री (चित्रलेखा) चतुर थी । उसने समस्त बात विस्तार-पूर्वक पूछी । चित्रलेखा बोली, 'सुनो बाला, आँसू बहाते हुए तुम क्यों रो रही हो । २ (यह) सखी (नींद में) भयभीत

जागी सैयर बेबाकळी, केम रुए छे कन्या व्याकुळी ?
आवडी ओखा शाने कांपी ? शके ओथारे तुजने चांपी । ३ ।
मारी मीठी तुं रहे छानी, तने रक्षा करे रे भवानी,
कहे बेनी तने शुं हवुं ? स्वप्नमां दीठुं कांई नवुं ? । ४ ।
ओखा कहे छे कर्मे देई हाथ, थोडा सारु दूभ्यो में नाथ,
हसतां रमतां चढी गयो क्रोध, फोगट फांसु थयो विरोध । ५ ।
कर दीवो ने घर निहाळिये, छे आटलामां पियु माळिये,
चित्रलेहा कहे, घेली थई, देवे अहींयां अवाये नहीं ? । ६ ।
आवी न शके प्राणी पंखना, ए तो स्वप्नानी एवी झंखना,
पियु पियु करतां तुं सूती हती, माटे स्वप्नमां दीठो पति । ७ ।
स्वप्ने निर्धन पामे धन, स्वप्ने वंझा प्रसवे तन,
जागे, देखे तो ठालो उछंग, स्वप्न मृगजळना रे तरंग । ८ ।
इंद्रजाळनी जेवी वस्त, ग्रहिये ने ठालो हस्त,
लभ्य न थाय दीठुं स्वप्ने, दर्पण रूप न आवे कने । ९ ।

होकर जग गयी है। व्याकुल होकर यह कन्या क्यों रो रही है ? ओखा इतनी किसलिए काँप रही है ? हो सकता है (कदाचित) तुम्हें किसी भयानक सपने ने दबा दिया हो। ३ मेरी मीठी, तुम चुप रह जाओ। भवानी तुम्हारी रक्षा कर रही है। अरी बहन, कहो तो तुम्हें क्या हो गया ? स्वप्न में तुमने कुछ नई बात देखी क्या ? '। ४ (इसपर) ओखा सिर को हाथ लगाते हुए बोली— ' मैंने थोड़ी-सी बात के लिए नाथ को दुखा लिया। उन्हें हँसते-खेलते क्रोध आ गया। फोकट का फन्दा पड़ गया और (वैर-) विरोध (उत्पन्न) हो गया। ५ हाथ में दीपक लें और घर खोज लें। मेरे प्रिय इतने में यहीं कहीं कोठी में हैं। ' (यह सुनकर) चित्रलेखा बोली, " तुम पागल हो गयी हो। यहाँ किसी देव द्वारा (भी) आया नहीं जा सकता। ६ पंखों के प्राणी अर्थात पक्षी (तक यहाँ) नहीं आ सकते। यह तो (तेरी) स्वप्न की-सी भ्रान्ति है। ' प्रिय ', ' प्रिय ' रटते-रटते तुम सो गयी थी, इसलिए तुमने सपने में पति को देखा (होगा)। ७ सपने में निर्धन मनुष्य धन को प्राप्त करता हो (तो भी जाग उठने पर वह अपने को दरिद्र ही पाता है); स्वप्न में बाँझ पुत्र को जन्म देती है, (फिर भी) जाग उठती है और देखती है कि उसकी गोद व्यर्थ (रिक्त) है। स्वप्न में देखी बात मृगजल की लहर जैसी होती है। ८ इन्द्रजाल (जादू) की कोई वस्तु लें और (फिर) हाथ तो रिक्त (ही रहता) है। जो स्वप्न में देखा है, वह

गांधर्वनगर ने गगनकुसुम, भोग अस्थिर स्वप्नना तेम,
निद्रावश मन क्यांही भमे स्वप्नसुख नहि साचुं क्यमे । १० ।
चित्रलेहाए दीधी ठारण, सखी ओखाने आपे धारण,
कुंवरीनुं मनावा मन, कीधो दीपक फेरव्यो भवन । ११ ।
तपास्युं माळियुं चारे पास, पडी ओखा थईने निराश,
वाधी विरह तणी वेदना, मूर्छागत थई अचेतनी । १२ ।
चित्रलेहाए बेठी करी, हृदये चांपी बे भुज भरी,
कामवश थकी मन लाजतुं, विरहतप्त छे तन दाझतुं । १३ ।
छांटी सखीए पायुं नीर, विरहे व्याकुळ स्वेद शरीर,
चित्रलेहा कहे, सुण सखी, सावधान था तुं, लावुं पति । १४ ।
केम वीसर्युं उमानुं वचन ? स्वप्ने वरशो स्वामिन,
ओखा कहे, मने स्मरणा थई, आणी आप प्रभुने अहीं । १५ ।

प्राप्य नहीं होता । दर्पण में देखा हुआ रूप पास में (प्रत्यक्ष हाथ में) नहीं आता । ९ जिस प्रकार गन्धर्व-नगर और आकाश-कुसुम (भ्रम मात्र) होता है, उसी प्रकार स्वप्न के (देखे-किये) भोग अस्थिर होते हैं । निद्रावश होने पर मन कहीं भी भ्रमण करता है । (उसी प्रकार) स्वप्न में प्राप्त सुख किसी भी प्रकार सच्चा नहीं होता ।" । १० चित्रलेखा ने (इस प्रकार) सखी ओखा को शान्त कर दिया और उसे ढाढ़स बँधाया । फिर (राज-) कुमारी के मन को मनाने के लिए (अर्थात उसकी इच्छा को पूर्ण करते हुए) उसे आश्वस्त करने के लिए, उसने दीपक जलाया और उस घर में घुमा लिया (उसे लेकर वह घर में देखने गयी) । ११ उसने कोठी में चारों ओर खोज की; (परन्तु पति कहीं दिखायी न दिया, अतः) ओखा निराश होकर गिर गयी । (उसके मन में) विरह की वेदना बढ़ गयी; (फिर) वह मूर्च्छा को प्राप्त होकर अचेत हो गयी । १२ (यह देखकर) चित्रलेखा ने उसे बैठा लिया और दोनों बाहों में भरकर हृदय से लगा लिया । कामवश होने से उस (ओखा) का मन लज्जायमान हो गया था; विरह (की आग में) तप्त होकर उसकी देह जल रही थी । १३ सखी (चित्रलेखा) ने उसपर जल छिड़का दिया और पिला दिया । वह विरह से व्याकुल हो गयी थी । उसके शरीर में पसीना आ गया । (फिर) चित्रलेखा ने कहा, 'सखी, सुन लो । सावधान हो जाओ । मैं तुम्हारे पति को लाती हूँ । १४ तुम उमाजी के इस वचन को कैसे भूल गयी— तुम स्वप्न में स्वामी का वरण करोगी ।' (इसपर) ओखा ने कहा, 'मुझे स्मरण हो आया । तुम यहाँ मेरे प्रभु

विधात्री कहे, शुं तेनुं नाम ! स्वप्ने स्वामीनुं कोण गाम ?
कोण जात, पिता ने मात ? लेई आवुं, कहे मांडी वात । १६ ।
ओखा कहे कर्मे देई भुज, वारेवारे शुं पूछे मूढ ?
मन मळवा रह्युं टमटमी, तेनुं रूप अंतरे रह्युं रमी । १७ ।
ओखा कहे, हुं तो घेली थई, नामठाम पूछ्युं नहीं,
नात जात ने मात पिताय, प्रीछी नहि जे प्रथम पुछाय । १८ ।
रूपकळा मने मन गमी, ते स्वरूप रह्युं चित्त रमी,
बाई ! ते नाथे मिथ्या मने दमी, सुखसूरज गयो आथमी । १९ ।
निशा नहि जाये निर्गमी, मळवा मनडुं रह्युं टमटमी,
विरहदुःख न रहेवाय खमी, लाव नाथने चरणे नमी । २० ।
सखी कहे कर्मे देई हाथ, तुं मांडी कहे बधी वात,
तुं कांई एके आशरो वद्य, तारा स्वामीने लावुं सद्य । २१ ।
ओखा बोले छे आळपंपाळ, आहां आवे तो ओळखुं तत्काळ,
घणुं रूप सबळ छे सारुं, तेणे चित्तडुं चोर्युं छे मारुं । २२ ।

(पति) ला दो । '। १५ (यह सुनकर) उससे विधात्री (चित्रलेखा) बोली, 'उनका क्या नाम है ? स्वप्न में आये हुए स्वामी का क्या ग्राम है (पता है) ? कौन जाति है ? उनके पिता और माता कौन हैं ? ठीक से विस्तार-पूर्वक बात कह दो, मैं उन्हें ले आती हूँ । '। १६ तो ओखा कर्म अर्थात सिर को हाथ लगाते हुए बोली, 'अरी मूर्ख, बार-बार क्या पूछ रही हो ? मेरा मन उनसे मिलने के लिए आतुर हो गया है। उनका रूप मेरे अन्तःकरण में रमा रहा है। '। १७ ओखा ने (फिर) कहा, 'मैं तो पागल हो गयी थी; मुझसे उनका नाम-धाम तो पूछा (ही) नहीं गया। ज्ञाति-जाति और माता-पिता (के बारे में) जो पहले पूछा जाता है, नहीं पूछा। १८ उनकी रूपकला (कान्ति) मन में मुझे अच्छी लगी। उनका वह रूप मेरे मन में रमता रह गया है। बाई, उन (मेरे) नाथ ने मुझे व्यर्थ ही दुख दिया; (जिससे मेरा) सुख रूपी सूरज अस्त को प्राप्त हो गया। १९ रात (बीतते) नहीं बीत रही है। उनसे मिलने के लिए मेरा मन उत्कण्ठित हो रहा है। विरह का दुःख (मुझसे) सहन नहीं किया जा रहा है। (इसलिए) उनके चरणों का नमन करके मेरे नाथ को ले आओ। '। २० (यह सुनकर) कर्म अर्थात सिर को हाथ लगाते हुए सखी (चित्रलेखा) बोली, 'तुम समस्त बात ठीक से विस्तार-पूर्वक कह दो। तुम उनका कोई एक पता बता दो, तो तुम्हारे स्वामी को लाकर अभी दे देती हूँ। '। २१ (इसपर) ओखा उसे आश्वस्त करते हुए

लाव सखि! शीघ्र तेहने नहि तो पाडुं मारा देहने,
स्वामी विना तो जीववुं वृथा, माटे पिंड पाडुं सर्वथा। २३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पिंड हुं पाडुं सर्वथा, आज न आवे स्वामी रे,
चित्रलेहा रूप चीतरे, कागळमां बहु कामी रे। २४।

बोली, 'वे यहाँ आ जाएँ, तो मैं उन्हें तत्काल पहचानूँगी। उनका रूप अत्यधिक सबल अर्थात प्रभावकारी, सुन्दर है। उसने मेरे चित्त को चुरा लिया है। २२ अरी सखी, उन्हें शीघ्र ले आओ, नहीं तो मैं अपनी देह को तज दूँगी। बिना स्वामी के जीना व्यर्थ है; इससे मैं इस पिण्ड का (देह का) सब प्रकार से त्याग करूँगी। २३

(यदि) आज (मेरे) स्वामी नहीं आ जाएँ, तो मैं इस देह का सब प्रकार से त्याग करूँगी।' (तत्पश्चात) चित्रलेखा ने कागज़ पर अतिशय काम्य अर्थात कामदेव के-से कमनीय रूप अंकित किये। २४

कडवुं १९ मुं—(चित्र देखकर ओखा द्वारा अनिरुद्ध को पहचानना)

राग नटनी देशी

कागळ रंग लीधो रे विधात्री, भात्यभात्यनां चीतरे स्वरूप,
स्वर्गना सुर, पाताळना पन्नग, लखिया ते भूमिना भूप। का०। १।
वायु, वरुण ने पावक लखिया, जक्षराय ने जम,
ओखा कहे, तुं लघुने मूकीने, वृद्धने देखाडे छे क्यम?। का०। २।
गणेश, ईशने, अंबुईश लखिया, लखिया ते सेनाना धीश,
जुग्म तुरैया सउ जोडाव्या, तोये धुणावे शीश। का०। ३।

कड़वक—१९ (चित्र देखकर ओखा द्वारा अनिरुद्ध को पहचानना)

(ओखा की धात्री अर्थात) अभिभाविका (चित्रलेखा) ने कागज़ और रंग लिया और भाँति-भाँति के रूप (चित्रित) किये। उसने स्वर्ग के देवों, पाताल के सर्पों और पृथ्वी के राजाओं के चित्र अंकित किये। कागज़०। १ उसने वायु, वरुण और अग्नि, यक्षराज (कुबेर) और यम को चित्रित किया। (उन चित्रों को देखकर) ओखा बोली, 'तुम छोटों अर्थात किशोरों-युवाओं को छोड़कर बूढ़ों को क्यों दिखा रही हो?'। कागज़०। २ तत्पश्चात उस (चित्रलेखा) ने गणेशजी, देवेश (इन्द्र) और वरुण का अंकन किया; (देवों के) सेनापति स्कन्द को चित्रित किया। दोनों अश्विनीकुमारों को भी साथ

प्रभाकर, सुधाकर लखिया, गिरिजावर गंभीर,
ओखा कहे एमां कोई नहीं, मारा स्वामीजी केरुं शरीर। का०। ४।
अष्ट वसु गण गांधर्व लखिया, लखिया ते बारे मेह,
सप्त जळनिधि, अष्ट धातुकर, लखी ते तेहनी देह। का०। ५।
वेद मुनि ने जुग्म वीणाधर, लखिया छे चित्रविचित्र,
मारुतगण ने लखिया विद्याधर, सप्त ऋषिजी पवित्र। का०। ६।

में जोड़ लिया। तो भी उस (ओखा) ने सिर हिला दिया (और सूचित किया कि उनमें से कोई भी उसके अपने स्वामी नहीं हैं)। कागज़०। ३ (चित्रलेखा ने अनन्तर) प्रभाकर (सूर्य), सुधाकर (चन्द्र), गम्भीर (स्वभाव के) गिरिजापति शिवजी का चित्रांकन किया। (उन्हें देखकर) ओखा बोली, 'इनमें से कोई भी मेरे स्वामी का शरीर-रूप (चित्र) नहीं है'। कागज़०। ४ (फिर चित्रलेखा ने) आठों[1] वसु (देवों का समुदाय), गन्धर्व गण अंकित किये; (फिर) बारह मेघों (पर्जन्यों) को चित्रित किया। (इनके अतिरिक्त) उसने सात समुद्रों[2], आठ धातुकरों की देहों का चित्रण कर दिया। कागज़०। ५ (तदनन्तर) उसने मुनि वेदव्यासजी और वीणाधारी नारद और तुम्बरु[3], मरुद्गण[4] और विद्याधर[5], पवित्र (-मना) सप्तर्षि[6], चित्र-विचित्र रूप में चित्रित किये। कागज़०। ६ उसने सौ कौरव[7] और पाँच

---

१ आठ वसु—पौराणिक मान्यता के अनुसार, प्रत्येक मन्वन्तर में आठ-आठ वसु नामक विशिष्ट देव होते हैं। वर्तमान मन्वन्तर में ये वसु हैं, जो धर्मऋषि और दक्षकन्या वसु के पुत्र हैं— धर, ध्रुव, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास; अथवा द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष, वसु और विभावसु।

२ सप्त समुद्र—क्षार, इक्षुरस, सुरा, घृत, क्षीर, दधि और शुद्धोदक।

३ तुम्बरु—यह गन्धर्व कश्यप और प्राधा का पुत्र था। यह ब्रह्मा की सभा में नारद के साथ भगवान का गुणगान किया करता था। यह रम्भा पर आसक्त हो गया, तो कुबेर से अभिशप्त होकर यह विराध नामक राक्षस बन गया। रामायण के अनुसार, राम-लक्ष्मण के हाथों इसका वध हुआ, तो यह फिर अपने मूल रूप को प्राप्त हो गया।

४ मरुद्गण—वैदिक मान्यता के अनुसार ये सुविख्यात देव रुद्र के पुत्र हैं। उनका मुख्य कार्य वर्षा करना है। महाभारत और पुराणों में मरुत् संख्या में उनचास बताये गये हैं; वे कश्यप और दिति के पुत्र हैं।

५ विद्याधर—देवयोनियों में से एक योनि (वंश) विद्याधर कहाती है। विद्याधर सुन्दर होते हैं और आकाशगामिनी आदि अनेक विद्याओं के धारी माने जाते हैं। पुराणों में चित्ररथ, चित्रकेतु आदि इनके राजा बताये गये हैं।

६ सप्तर्षि—सप्तर्षियों के नामों को लेकर अनेक परम्पराएँ उपलब्ध हैं। इनमें से ये दो परम्पराएँ बहुत प्रचलित हैं— १ कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वसिष्ठ। २ मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ।

७ सौ कौरव—धृतराष्ट्र और गान्धारी के एक सौ पुत्र थे। कुरुवंश में उत्पन्न होने के कारण वे कौरव कहाते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं— दुर्योधन, युयुत्सु,

शत कौरव ने पांच पांडव, देशदेशना राय,
कन्याना कोई मनमां न आवे, आकुळव्याकुळ थाय। का०। ७।
चित्रलेहा मन मांही विचारे, में लखिया ते ठामोठाम,
विषयी पुरुष भामनीनो भोगी, श्रीकृष्ण तणुं ए काम। का०। ८।
चतुरभुज पीतांबरधारी, लखिया ते श्रीमहाराज,
दीठा श्रीकृष्ण ने ओखा ऊठी, कीधी वडससरानी लाज। का०। ९।
अरे सहियर, ए भियाना रे कुळमां छे मारो भरथार,
तव प्रद्युम्नने लखी देखाड्यो, लाज कीधी बीजी वार। का०। १०।

पाण्डव[1] तथा देश-देश के राजा, चित्रों के रूप में प्रस्तुत किये। (फिर भी उनमें से) कोई भी उस कन्या के मन को नहीं भाया। (अतः) वह आकुल-व्याकुल हो गयी। कागज़०। ७ फिर चित्रलेखा ने मन में विचार किया— मैंने तो स्थान-स्थान पर (के) लोगों के चित्र अंकित किये, (परन्तु) उनमें से कोई भी ओखा के स्वामी नहीं हैं; अतः विषयी पुरुष (भोग-विलास के विषय में रुचि रखनेवाले पुरुष) तथा स्त्रियों के भोगी कृष्ण का ही (यहाँ) काम हो सकता है। कागज़०। ८ (इसलिए) उसने पीताम्बर-धारी चतुर्भुज महाराज श्रीकृष्ण का चित्रांकन किया। ओखा ने श्रीकृष्ण (के चित्र) को (ज्यों ही) देखा, (त्यों ही) वह उठ गयी। उसने ददिया ससुर के सामने (मर्यादापालन के हेतु) घूंघट कर लिया। कागज़०। ९ (वह बोली—) 'अरी सखी, इन बन्धु के कुल में (उत्पन्न पुरुष ही) मेरे

दुश्शासन, दुस्सह, दुश्शल, जलसन्ध, सम, सह, विन्द, अनुविन्द १०, दुर्धर्ष, सुबाहु, दुष्प्रधर्षण, दुर्मर्षण, दुर्मुख, दुष्कर्ण, कर्ण, विविंशति, विकर्ण, शल २०, सत्त्व, सुलोचन, चित्र, उपचित्र, चित्राक्ष, चारुचित्रशरासन (चित्र-चाप), दुर्मद, दुर्विगाह, विवित्सु, विकटानन (विकट) ३०, ऊर्णनाभ, सुनाभ (पद्मनाभ), नन्द, उपनन्द, चित्रबाण (चित्रबाहु), चित्रवर्मा, सुवर्मा, दुर्विरोचन, अयोबाहु, महाबाहु चित्रांग (चित्रांगद) ४०, चित्रकुण्डल (सुकुण्डल), भीमवेग, भीमबल, बलाकी, बलवर्धन (विक्रम), उग्रायुध, सुषेण, कुंडोदर, महोदर, चित्रायुध (दृढ़ायुध) ५०, निषंगी, पाशी, वृन्दारक, दृढ़वर्मा, दृढ़क्षत्र, सोमकीर्ति, अनूदर, दृढ़सन्ध, जरासन्ध, सत्यसन्ध ६०, सदःसुवाक् (सहस्रवाक्), उग्रश्रवा, उग्रसेन, सेनानी (सेनापति), दुष्पराजय, अपराजित, पण्डितक, विशालाक्ष, दुराधर (दुराधन), दृढ़हस्त ७०, सुहस्त, वातवेग, सुवर्चा, आदित्यकेतु, बह्वाशी, नागदत्त, अग्रयायी (अनुयायी), कवची, क्रथन, दण्डी ८०, दण्डधार, धनुर्ग्रह, उग्र, भीमरथ, वीरबाहु, अलोलुप, अभय, रौद्रकर्मा, दृढ़रथाश्रय (दृढ़रथ), अनाधृष्य ९०, कुण्डभेदी, विरावी, प्रमथ, प्रमाथी, दीर्घरोम (दीर्घलोचन), दीर्घबाहु, व्यूढ़ोरु, कनकध्वज (कनकांगद), कुण्डाशी (कुण्डज) और विरजा १००, —(महाभारत; आदिपर्व, अध्याय ११६)

आदिपर्व के ६७वें अध्याय में प्रस्तुत नामावली में कुछ नाम भिन्न पाये जाते हैं।

१ पाँच पाण्डव—पाण्डु राजा के पुत्र पाण्डव कहाते हैं। वे हैं— धर्म, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव।

कन्या कहे अवयव प्रभुना, आ पुरुष कोई वृद्ध,
चित्रलेहाए लखी देखाड्यो, कागळमां अनिरुद्ध । का० । ११ ।
मुगट भमर पर वदन सुधाकर, नेत्र बे अंबुज,
घेली ओखा धाईने भेटी, कागळने भरी भुज । का० । १२ ।
धन्य धन्य नाथजी, हाथ ग्रहीने, न मूकीए ते बीडी सारु,
हृदय अबळानुं होय काचुं, कुण गजुं छे मारुं । का० । १३ ।
ना ना, बोलो मारा सम छे, लाजो छो शा माटे ?
चित्रलेहा कहे न होय स्वामी, वळग्यामां कागळ फाटे । का० । १४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कागळ फाटे कामनी, चित्रलेहा बोली वाणी रे,
ओखा कहे, तुं द्वारिकाथी, आण्य प्रभुने आणी रे । १५ ।

पति हैं ।' तब चित्रलेखा ने प्रद्युम्न का चित्र अंकित करके दिखाया, तो ओखा ने दूसरी बार (लज्जा अनुभव करते हुए) घूंघट किया । कागज़० । १० (उसे देखकर) उस लड़की (ओखा) ने चित्रलेखा से कहा, '(इस चित्र में अंकित) अंग तो (मेरे) प्रभु के हैं, (फिर भी) यह कोई वृद्ध (प्रौढ़) पुरुष (जान पड़ता) है ।' (तदनन्तर) चित्रलेखा ने कागज़ पर अनिरुद्ध को (चित्रांकित करके) दिखा दिया । कागज़० । ११ उसमें मुकुट (एक ओर की) भौंह पर (झुका हुआ अंकित) था; मुख चन्द्र-सा था; नेत्र (मानो) दो कमल (ही) थे । उन्मत्त-सी होकर ओखा ने धाय को गले लगाया और उस कागज़ को बाँहों में भर लिया । कागज़० । १२ (वह बोली—) 'हे नाथजी, धन्य हैं, धन्य हैं । (एक बार मेरी बाँह पकड़कर) बीड़े के कारण (फिर से) उसे न छोड़ दें । अबला का हृदय कच्चा अर्थात कोमल होता है; (फिर) मेरी क्या शक्ति है ? । कागज़० । १३ नहीं, नहीं, बोलिए तो, मेरी सौगन्ध है । आप किसलिए लजा रहे हैं ? ' (यह सुनकर) चित्रलेखा बोली, 'अरी, ये (तुम्हारे) स्वामी नहीं हैं, (कागज़ है), सीने से लगाने से कागज़ फट जाएगा' । कागज़० । १४

चित्रलेखा ने यह बात कही, 'हे कामिनी, (ऐसा करने से) कागज़ फट जाएगा ।' तो ओखा बोली, 'तुम द्वारका से (मेरे) प्रभु को लाकर मुझे दे दो ।' । १५

कडवुं २० मुं—(चित्रलेखा द्वारा अनिरुद्ध का अपहरण)

राग मारु

ओखा कहे छे, सुण साहेली, लाव नाथने वहेली वहेली,
बाई तुं छे सुखनी दाता, लाव स्वामीने थाय सुखशाता। १ ।
ओखा, तने तो पड्या ए हेवा, सखी आण्याना उपाय केवा ?
तने परण्या तणुं मन थाय, नथी लाव्यानो एक उपाय। २ ।
दूर पंथ छे द्वारामती, केम जवाय मारी वती ?
त्यां तो जई न शके राय शक्र, रक्षा कारण फरे छे चक्र। ३ ।
जीवतां तो फरी न अवाय, निश्चे मस्तक छेदन थाय,
जावुं जोजन सहस्र अगियार, तारो केम आवे भरथार ! । ४ ।
नयणे नीरनी धारा वहे छे, कर जोडी कन्या कहे छे,
बाई ! तारी गति छे मोटी, तने तो न करे कोई खोटी। ५ ।
सहियरने सहियर होय वा'ली, बाई ! तें मने हाथे झाली,
आपणे बे बाळसंघाती, तुं तो प्राणदाता छे विधाती। ६ ।

कड़वक—२० (चित्रलेखा द्वारा अनिरुद्ध का अपहरण)

ओखा बोली, 'री सहेली, सुनो। जल्दी से जल्दी (मेरे) पति को ले आओ। री बाई, तुम (मुझे) सुख देनेवाली हो; (मेरे) पति को ले आओ, (जिससे मुझे) सुख और शान्ति (प्राप्त) हो जाएगी।'। १ (इसपर) चित्रलेखा बोली, 'अरी ओखा, तुम्हें तो इसका चस्का लग गया (जान पड़ता) है। (पर) री सखी, उन्हें लाने के क्या उपाय हैं ? तुम्हें (मन में उनसे) विवाह करने की इच्छा हो रही है, (वह स्वाभाविक है; फिर भी) उन्हें लाने का एक (भी) उपाय नहीं (दिखायी दे रहा) है। २ द्वारावती का मार्ग बहुत दूर (का) है। वहाँ तक मुझसे कैसे जाया जाएगा। वहाँ तो (देवों के) राजा इन्द्र (तक) नहीं जा सकते। (वहाँ) सुदर्शन चक्र (नगरी की) रक्षा के हेतु घूम रहा है। ३ (वहाँ जानेवाला) जीवित अवस्था में पुनः (लौट) नहीं आएगा। (उसका) मस्तक निश्चय ही कट जाएगा। ग्यारह सहस्र योजन जाना है; फिर तुम्हारा पति वहाँ से कैसे आ सकेगा (मेरे द्वारा इतनी दूर जाकर उसे कैसे लाया जाएगा)।'। ४ (यह सुनकर) कन्या ओखा की आँखों से (अश्रु-) जल की धारा बहने लगी। (फिर) वह हाथ जोड़कर बोली, 'री बाई, तुम्हारी गति बड़ी है; तुम्हें तो कोई (भी रोककर) विलम्ब नहीं कर पाएगा। ५ सखी को सखी प्यारी होती है। तुमने मुझे हाथ से पकड़ लिया है (तुमने मेरा हाथ

मा बाप वेरी थयां मारां, में तो चरण सेव्यां छे तारां,
चित्रलेहा तुं दीनदयाळ, एम कहीने पगे लागी बाळ । ७ ।
चित्रलेहाए धारणा दीधी, पछी काया पक्षिणीनी कीधी,
बोली चित्रलेहा सत्य वाणी, क्षण एकमां आपुं आणी । ८ ।
तेशुं परणावुं रूडी रीत, तो तुं जाणने मारी प्रीत,
ओखा कहे, रहेजे रुडे आचरणे, रखे अनिरुद्धने तुं परणे । ९ ।
सखि ! सुंदर वरने जाणी, रखे थती तुं पटराणी,
एनो अतिशे छे हाथ रूपाळो, रखे मेळवे तुं हाथेवाळो । १० ।
बाई ! जादवबर छे रूडो, रखे पहेरीने बेसती चूडो,
बाई ! जईने आवजे तर्ते, रखे ते साथे मंगळ वर्ते । ११ ।
सखि ! आवजे वहेली वहेली, वहाणुं वाता पहेली पहेली,
बाई ! तारो छे विश्वास, रखे करती मने निराश । १२ ।

पकड़ा है, मेरी सहायता की है); हम दोनों बचपन की सखियाँ हैं। तुम तो मेरे लिए प्राण-दात्री विधात्री (अभिभाविका, रक्षिका) हो। ६ मेरे माता-पिता (मेरे) वैरी हो गये हैं। मैंने तो तुम्हारे चरणों की सेवा की है (तुम्हारे चरणों का आश्रय प्राप्त कर लिया है)। री चित्रलेखा, तुम दीन-दयालु हो (मुझ जैसी दीन के प्रति दयालु हो)।' ऐसा कहकर वह बाला (चित्रलेखा के) पाँव लगी। ७ (फिर) चित्रलेखा ने उसे आश्वासन दिया (ढाढ़स बँधाया) और पक्षिणी की देह धारण की। फिर चित्रलेखा बोली, 'यह बात सत्य होगी— मैं एक क्षण में (तुम्हारे पति) लाकर (तुम्हें) दे दूँगी। ८ अच्छी रीति से उनसे तुम्हारा विवाह कराऊँगी, तो तुम मेरी प्रीति को समझ सकोगी।' (तदनन्तर) ओखा ने कहा— 'तुम अच्छा आचरण करके रह जाना; (नहीं तो हो सकता है) कदाचित तुम ही अनिरुद्ध से विवाह करोगी। ९ सखी, वर को सुन्दर जानकर कदाचित तुम (ही उसकी) पटरानी बन जाओगी। उनका हाथ अतिशय सुन्दर है; (इसलिए) कदाचित तुम ही उनके साथ हाथ मिलाओगी (उनसे विवाह करोगी)। १० बाई, यादव कुलोत्पन्न वह वर अच्छा है; (इसलिए) कदाचित, तुम ही (विवाह का) कंगन पहनकर बैठोगी। बाई, जाकर तत्काल लौट आना; (नहीं तो उससे पहले) कदाचित उनका मंगल (विवाह) सम्पन्न हो जाएगा। ११ अरी सखी, शीघ्र से शीघ्र, सुबह होने से पहले-पहले तुम आ जाना। बाई, (मुझे) तुम्हारे प्रति विश्वास है। (फिर भी डर है) कदाचित तुम मुझे निराश करोगी। १२ ऐसा करना कि इसे कोई जान न पाए। स्वामी को

कोई न जाणे एवुं करजे, वेगे स्वामीने लईने फरजे,
जो जाणशे पिता बाण, तो तो आपणा लेशे प्राण । १३ ।
तुं तो करजे स्वामीनुं जतन, मुज रांकने हाथ रतन,
पछे पंथे वळावी विधात्री, पक्षिणी मन वेगे जाती । १४ ।
द्वारिका पहोंची कामिनी, छेल्ली दोढ पहोर जामिनी,
जावा कीधुं नगरमां मन, एवे आव्युं सुदर्शन । १५ ।
जेवुं मस्तक छेदे बळमां, कन्या पेठी गोमतीना जळमां,
एवे नारद ऋषि त्यां आवी, चक्रभय थकी कन्या मुकावी । १६ ।
कहे नारद, सुदर्शन, एने लई जवा देजे तन,
ए तो काम छे कृष्णने गमतुं, माटे रखे तूं एने दमतुं । १७ ।
पछे उदकनी अंजलि लीधी, मंत्री विधात्री निर्भय कीधी,
तामसी विद्या ऋषिए आपी, पछे पीठ प्रमदानी थापी । १८ ।
हवे अल्प रही छे रात्री, जा ले अनिरुद्धने तुं विधात्री,
गयुं चक्र ते पश्चिम पासे, ऋषि नारद वळिया आकाशे । १९ ।

लेकर वेगपूर्वक घूमकर (लौटकर) आ जाना। यदि पिताजी, बाण, जान जाएँगे, तो वे हमारे प्राण ले लेंगे। १३ तुम मेरे स्वामी, मुझ रंक के हाथ के रत्न की रक्षा करना'। अनन्तर उसने (अपनी) अभिभाविका को मार्ग में बिदा कर दिया। तो वह पक्षिणी-स्वरूपा (चित्रलेखा) मन के-से वेग से चली गयी। १४ जब वह द्वारका पहुँची, तो रात पिछले डेढ़ पहर (शेष) थी। उसका मन नगर के अन्दर जाने को हुआ, इतने में सुदर्शन चक्र (उसे रोकने के लिए) आ गया। १५ जैसे ही वह बलपूर्वक कन्या (चित्रलेखा) का मस्तक काटने जा रहा था, तो वह गौतमी नदी के जल में पैठ गयी। इतने में नारद ऋषि ने वहाँ आकर उस कन्या को भय से मुक्त कर दिया। १६ नारदजी बोले, 'सुदर्शन, इसे तन लेकर, अर्थात सशरीर जाने दो। यह (इस प्रकार रोकना) तो कृष्ण को भाने-वाला कार्य है; इसलिए कदाचित तुम उसका दमन करनेवाले हो (पीड़ा पहुँचानेवाले हो)'। १७ (इस डर से) अनन्तर उन्होंने पानी से अंजली भर ली और उस (जल) को अभिमंत्रित करके (छिटकते हुए) उस कन्या को भय-मुक्त कर दिया। (तत्पश्चात) ऋषि (नारद) ने उस प्रमदा को तामसी विद्या प्रदान की और फिर उसकी पीठ थपथपायी। १८ (वे बोले—) 'अब रात थोड़ी (ही शेष) रह गयी है। री विधात्री, तुम अनिरुद्ध को ले जाओ।' (तब तक) वह चक्र पश्चिम की ओर चला गया और नारद आकाश में लौट गये। १९ (इधर) चित्रलेखा उस नगर को

चाली चित्रलेहा जोती गाम, सामसामां शोभीतां छे धाम,
सप्त भोमिना भवन ते भासे, जोतां भूख तरस ते नासे। २०।
बहु कळश धजा बिराजे, जोतां अमरापुरी तो लाजे,
शोभे छजां झरूखा ने माळ, मणिमय थंभ झाकझमाळ। २१।
वांकी बारी ने गोखे जाळी, नीला काच मूक्या छे ढाळी,
झळके मंडप हेमनी थाळी, पटमांहे जडी परवाळी। २२।
लींपी भींते सोनानी गार, चळके काम ते मीनाकार,
भला चौटां शेरी ने पोळ, सामसामी हाटनी ओळ। २३।
घेरघेर ते वाटिका कुंज, करे भमर ते गुंजागुंज,
मोटा मातंग घूमे ने डोले, गुणगान बंदीजन बोले। २४।
दीसे द्वारिका वैकुंठ सरखी, चित्रलेहाए नगरी नीरखी,
दुर्ग कोसीसां रूडां बिराजे, चारे पासे रत्नाकर गाजे। २५।
त्यां तो गोमतीनो संगम, उद्धरे स्थावर ने जंगम,
शके आवास अडशे व्योम, जाणे वैकुंठ आण्युं भोम। २६।

देखती हुई चली जा रही थी। वहाँ भवन आमने-सामने शोभायमान थे। वह नगर (मानो) सप्त लोकों का भवन ही आभासित हो रहा था (जान पड़ता था)। उसे देखते ही भूख और प्यास नष्ट हो जाती थी। २० (उसने देखा—) उसमें बहुत कलश और ध्वज विराजमान हैं। उसे देखकर अमरावती (तक) लज्जित हो जाती है। उसमें अटारियाँ, झरोखे और मंज़िलें शोभायमान हैं। रत्नमय स्तम्भ जगमगा रहे हैं। २१ बाँकी खिड़कियों और गवाक्षों में जालियाँ लगी हैं। (वहाँ) नीले काँच ढालकर डाल दिये हैं। मण्डप जगमगा रहे हैं, मानो सुवर्ण के बने थाल ही हों; उसमें लगे वस्त्रों में मूँगा नामक रत्न जड़े हुए हैं। २२ दीवारें सोने के गारे से लीपी हुई हैं, उनमें मीनाकारी का काम चमक रहा है। अच्छे-अच्छे बाजार, गलियाँ और वीथियाँ हैं; आमने-सामने हाटों (बाज़ार की दूकानों) की पंक्तियाँ हैं। २३ घर-घर वाटिकाएँ और कुंज हैं; उनमें भ्रमर गुंजन कर रहे हैं। बड़े-बड़े हाथी घूम रहे हैं, झूम रहे हैं। वन्दीजन गुणगान कर रहे हैं। २४ द्वारका नगरी वैकुण्ठ जैसी दिखायी दे रही है। चित्रलेखा ने ऐसी उस नगरी का निरीक्षण किया। (वहाँ) दुर्ग (की चहारदीवारी) पर सुन्दर कंगूरे (बुर्ज़) विराजमान हैं; चारों ओर समुद्र गरज रहा है। २५ वहाँ तो गोमती (नदी और समुद्र) का संगम है, (जहाँ) स्थावर और जंगम (अचेतन और सचेतन) उबर जाते हैं। कदाचित आवास-स्थान (भवन) आकाश को छू रहे हों। जान पड़ता है, वैकुण्ठ

घेरघेर हरिगुण गाय, चित्रलेहा ते जोती जाय,
वासुदेवनां घर निहाळी, गई ज्यां वसे श्रीवनमाळी । २७ ।
सोळ सहस्र नारी विहारी, दीठा घेरघेर देव मुरारी,
हरिनां साठ लाख छे तन, जोयां तेह तणां भवन । २८ ।
जोयुं कामधाम धातकार, दीठो मेडीए कामकुमार,
अनिरुद्ध सूतो छे हिंडोळे, त्यां दासीओ वायु ढोळे । २९ ।
शोभे दीपक चारे पास, बे चरण तळांसे दास,
त्यां बावनांचंदन बेहेके, बहु हिंडोळे फूमतां लहेके । ३० ।
कामकुंवर ते काम ज जेवो, चित्रलेहाने चोरी लेवो,
लेवा कुंवरनुं कारण, समर्युं निद्रानुं धारण । ३१ ।
राते जे कोई जागतुं हूतुं, ते तो जे जेम ते तेम सूतुं,
धारण भारण भारी काया, व्याप्तमान थई जोगमाया । ३२ ।
अनिरुद्ध तणी किंकरी, ते तो सुती निद्राए भरी,
चित्रलेहा घरमां गई, पण कुंवर तो जाग्यो नहीं । ३३ ।

लोक पृथ्वी पर (उतर) आ गया हो । २६ घर-घर (लोग) श्रीहरि (कृष्ण) के गुण गा रहे हैं । —चित्रलेखा (ऐसे दृश्यों को) देखती जा रही थी । वह वासुदेवों (वसुदेव के कुल में उत्पन्न व्यक्तियों) के घरों को देखते हुए (वहाँ) गयी, जहाँ श्रीवनमाली अर्थात कृष्ण निवास करते थे । २७ सोलह सहस्र नारियों के साथ विहार करनेवाले मुरारि देव कृष्ण को उसने घर-घर देखा । कृष्ण के साठ लाख पुत्र थे; (चित्रलेखा ने) उनके भवन (भी) देखे । २८ उसने (कृष्ण के पुत्र) कामदेव अर्थात प्रद्युम्न का जगमगाता हुआ भवन देखा; (तदनन्तर) एक कोठी में कामदेव के पुत्र अनिरुद्ध को देखा । अनिरुद्ध झूले पर सोये हुए थे । वहाँ दासियाँ (पंखों से) हवा कर रही थीं । २९ चारों ओर दीपक शोभायमान थे । सेवक दोनों चरण चाँप रहे थे । वहाँ मलयगिरि चन्दन महक रहा था । उस झूले पर बहुत सी कलँगियाँ झूम रही थीं । ३० वे काम-कुमार अनिरुद्ध, कामदेव जैसे ही थे । चित्रलेखा को उन्हें चुरा लेना था । कुमार अनिरुद्ध को ले जाने के हेतु उसने निद्रा लानेवाली औषधी का स्मरण किया । ३१ उससे रात को जो कोई जाग्रत था, वह जैसा का वैसा सो गया । उस औषधी के जादू के प्रभाव रूपी भार से उनकी कायाएँ भारी (सुस्त) हो गयीं । मानो उनमें योगमाया ही व्याप्त हो गयी । ३२ अनिरुद्ध की (जो) दासी थी, वह निद्रा से व्याप्त होकर सो गयी । (फिर) चित्रलेखा घर के अन्दर गयी; परन्तु कुमार अनिरुद्ध तो नहीं जाग उठे । ३३ (तब) वहाँ

त्यां विचार अंतरमां कीधो, कडां काढी हिंडोळो लीधो,
बे बे डांडी करमां झाली, खेचरी गते चतुरा चाली । ३४ ।
करे यत्न अंतरमां वहाल, एवी ऊडी जे आवे न आल,
गोविंदे गोठवणी कीधी, जाणी जोईने जावा दीधी । ३५ ।
घेर ओखा जुवे छे वाट, ना'व्या नाथ ने थाय उचाट,
एवे सांभळी पांखज वागी, त्यारे ओखानी आरत भांगी । ३६ ।
लावी चित्रलेहा कहेवा लागी, आप वधामणी मुखमागी,
आ नाथ तारो हिंडोळे, नरनारी मळो तमे टोळे । ३७ ।

साखी

टोळे मळो तमे तारुणी, आ तारो भरथार,
पछे ओखाए चित्रलेहाने, दीधी सोळ शणगार । ३८ ।

(इस स्थिति में) उसने मन में (कुछ) विचार किया और कोंढ़े निकालकर झूला (उठा) लिया। उसकी दो-दो डाँड़ियाँ (एक-एक) हाथ में लेकर वह चतुरा (नारी) पक्षिणी की गति से चल दी। ३४ (उसके) मन में (ओखा के प्रति) प्रेम था। (इसलिए) वह ऐसा यत्न कर रही थी— ऐसे उड़ रही थी कि जिससे (झूले को कोई) झपट्टा न लग जाए। भगवान गोविन्द ने ऐसी व्यवस्था की कि उसे जानते-देखते (जान-बूझकर) जाने दिया। ३५ (इधर) घर में ओखा (चित्रलेखा की) प्रतीक्षा कर रही थी। स्वामी (अभी तक) नहीं आये। (अतः) उसे चिन्ता (अनुभव) होने लगी। इतने में उसने सुना— पाँख बज रही है (पाँख की ध्वनि हो रही है)। तब ओखा की कठिनाई (चिन्ता) नष्ट हो गयी। ३६ चित्रलेखा उसके पति को ले आयी और कहने लगी— '(मुझे) मुँहमाँगी बधाई (के उपलक्ष्य में पुरस्कार) दे दो। झूले पर ये तुम्हारे स्वामी हैं। (अब तुम) पुरुष और स्त्री इकट्ठा (एक-दूसरे से) मिल लो। ३७

हे तरुणी, तुम इकट्ठा (एक-दूसरे से) मिल जाओ। ये हैं तुम्हारे पति।' अनन्तर ओखा ने चित्रलेखा को सोलह (प्रकार के) सिंगार[1] (पुरस्कार के रूप में सजा) दिये। ३८

---

[1] सोलह सिंगार—तैलाभ्यंगस्नान, चीर (वस्त्र), कंचुकी, कुंकुम, काजल, कुण्डल, हार, मोती, केश (-पाश), नूपुर, चन्दन, करधनी, तोड़े, ताम्बूल, चूड़ियाँ और करदर्पण (अँगूठे में पहना जानेवाला एक प्रकार का आभूषण, जिसमें छोटा-सा दर्पण जड़ा हुआ होता) है। (कुछ अन्य सूचियाँ भी उपलब्ध हैं।)

कडवुं २१ मुं—(ओखा-अनिरुद्ध-भेंट)

राग मारुनी देशी

ओखा कहे छे चित्रलेहाने, तें आप्युं प्राणनुं दान,
सखी कहीने केम बोलावुं? तुं छे देवी समान। १।
दीपक जागतो करीने कन्या, परण्यानी पासे आवी,
शुं सूता निद्रावश स्वामी, हिंडोळो सोहावी। २।
कामकुंवरने आ शी निद्रा? सूवुं सारुं लागे,
दूर पंथथी कंथ पधार्या, तोये सूता नव जागे। ३।
रजनी अल्प रही छे राणा, ऊंघ ते तमने आ शी?
जोने सखी, ए भिया दिसे छे, कुंभकरणना उपासी। ४।
ऊंचे स्वरे जईने बोलावे, चरणनेपुर वजाडे,
हस्या मिषे हींडोळो हलावे, तोये नव आंख उघाडे। ५।
वायु ढोळे ने चरण तळांसे, मुख करे स्तवंन,
एवे समे अनिरुद्धने आव्युं, निद्रावशमां स्वपंन। ६।
कोईक नारी मुजने लावी छे, हिंडोळो करीने हरण,
एकांतवासमां राजकन्यानुं, कीधुं में पाणिग्रहण। ७।

कड़वक—२१ (ओखा-अनिरुद्ध-भेंट)

ओखा ने चित्रलेखा से कहा, "तुमने मुझे प्राणों का दान (प्राणदान) दिया। मैं तुम्हें 'सखी' कहकर कैसे बुला लूँ (सम्बोधित करूँ)? तुम तो देवी-समान हो"। १ (तदनन्तर) दीपक को जागृत करके अर्थात जलाकर वह लड़की (ओखा अपने) वर के पास आ गयी। (उसने सोचा—) क्या स्वामी निद्रावश होकर, झूले को शोभायमान करते हुए सो गये हैं। २ कामदेव के पुत्र (अनिरुद्ध) की यह कैसी निद्रा? उन्हें सो जाना अच्छा लगता हो। (मेरे) पति मार्ग से दूर (यहाँ) पधारे हैं, तो भी वे सोते हुए नहीं जाग उठे। ३ हे राजा, रात तो थोड़ी (शेष) रह गयी है। (फिर) तुम्हें यह कैसी नींद (आ गयी) है? अरी सखी, देखो तो ये भाई कुम्भकर्ण के भक्त जान पड़ते हैं। ४ उसने उन्हें ऊँचे स्वर में (ज़ोर से) पुकारा, (फिर) चरणों में बँधे नूपुर बजा लिये। हँसी-ठठोली के बहाने झूला हिला दिया; फिर भी उन्होंने आँखें नहीं खोलीं। ५ उसने (पंखे से) हवा की, उनके पाँवों को धीमे-धीमे दबा लिया; (फिर) उसने मुँह से उनकी स्तुति की। ऐसे समय पर अनिरुद्ध को निद्रावशता की दशा में स्वप्न देखने में आया। ६ (उसने स्वप्न में देखा—) कोई एक नारी

तेना पिताए मुजने बांध्यो, हाक ते चौदश वागी,
लाव्य भोगळ, मारुं सेनाने, साचे ते ऊठ्यो जागी। ८।
हसी खसी ओखा रही अळगी, हाकी ऊठ्यो आ शुंय,
अनिरुद्ध गाभरो थईने कहे छे, क्यां आव्यो छुं हुंय ? । ९।
हिंडोळो ए निश्चे मारो, नोहे ए मेडी मारी,
दासी चार दीसती नथी, आ बे राजकुमारी। १०।
ओखाए चित्रलेहाने प्रेरी, ते बोली शिर नामी,
हुं तमने हरी लावी छुं, क्रोध न करशो स्वामी। ११।
आ बाला छे बाणासुरनी, ओखा छे एनुं नाम,
स्वप्नांतरमां वरी गया छो, तम आवे थयो विश्राम। १२।
आ नारी प्रभुजी ! तमारी, शमाववो तननो ताप,
स्त्री भरथार बंन्यो रहो छानां, न जाणे एनो बाप। १३।
वचन सांभळी विधात्रीनां, चढी अनिरुद्धने रीस,
शुं करुं जे खड्ग नथी, नहि तो छेदत बंन्योनां शीश। १४।

मेरे झूले का अपहरण करके मुझे (एक स्थान पर) लायी है। मैंने एकान्त वास में एक राजकन्या का पाणिग्रहण किया। ७ (फिर) उसके पिता ने मुझे आबद्ध कर लिया, तो चारों दिशाओं में आतंक छा गया। (त्योंही) 'अगरी (बेलन) लाओ, मैं सेना को मार दूँगा' —(कहते हुए) वह सचमुच जाग उठा। ८ हँसकर (कुछ) हटते हुए ओखा दूर खड़ी रह गयी। (उसे आश्चर्य हो गया कि) वे गरजते हुए कैसे उठ गये। (फिर) अनिरुद्ध ने भयभीत होकर पूछा— 'मैं (यहाँ) कहाँ आ गया हूँ ? । ९ यह झूला निश्चय ही मेरा है; परन्तु यह भवन-खण्ड (मंज़िल, कोठी) तो मेरा नहीं है। मेरी चारों दासियाँ (यहाँ) नहीं दिखायी दे रही हैं। ये तो दो राजकन्याएँ हैं।'। १० (तब) ओखा ने चित्रलेखा को प्रेरित किया, तो वह सिर नवाकर बोली, 'मैं अपहरण करके आपको लायी हूँ। हे स्वामी, आप क्रोध न करना। ११ यह बाणासुर की कन्या है। इसका नाम ओखा है। आप स्वप्न में इसका वरण कर गये थे। (फिर) आप आ गये हैं, तो इसे विश्राम (प्राप्त) हो गया है। १२ हे प्रभु, यह नारी आपकी (स्त्री) है। (अतः अब) इसकी देह के (विरह-जन्य) ताप का शमन कीजिए। आप स्त्री और पति दोनों (यहाँ) गुप्त रूप से रह जाइए, (जिससे) इसके पिता (इस घटना को) जान न पाएँ।'। १३ अभिभाविका (चित्रलेखा) की इस बात को सुनकर अनिरुद्ध को क्रोध आ गया। (उन्होंने सोचा—) 'क्या करूँ जो (मेरे पास अभी) खड्ग नहीं

गाम मुकाव्युं ने धाम मुकाव्युं, मुकाव्युं रे स्वजन कुटुंब,
केम वरुं असुरनी कन्या ? हुं जादवकुळनो तंन । १५ ।
परुं जोईने ओखा कहे छे, जादवकुळ तो पवित्र,
विचारीने बोलो नाथजी, जाणुं पितामहनां चरित्र । १६ ।
रींछसुता ने कुब्जा दासी, तेथी हुं नथी नरती,
तात तमारो परणीने लाव्या, ते तो प्रगट नथी करती । १७ ।
अनिरुद्धने तव हास्य आव्युं, रीस गई ऊतरी,
अवळे मुखे शुं रे बोलो छो ? जुवोने पाछां फरी । १८ ।

है; नहीं तो इन दोनों के मस्तक मैं काट डालता । १४ (इन्होंने) नगर और स्थान (नगर और मेरे घर) को छुड़ा दिया, घर को छुड़ा दिया, मेरे स्वजन (सगे-सम्बन्धी) तथा परिवार छुड़ा दिया (मुझे स्थान, घर, परिवार से दूर कर दिया) । मैं असुर की कन्या का वरण कैसे करूँ ? मैं तो यदुकुल का पुत्र हूँ ।' । १५ उन्हें क्षुब्ध देखकर ओखा बोली, 'यदुकुल पवित्र है; (फिर भी) हे नाथजी, आप विचार करके बोलिए। आपके पितामह (कृष्ण) का चरित मैं जानती हूँ। १६ रीछ की कन्या (जाम्ववती)[1] और (कंस की) दासी कुब्जा[2] से तो मैं बुरी नहीं हूँ। आपके पिता(-मह) उनसे विवाह करके उन्हें ले आये। यह तो मैं प्रकट (रूप से घोषित) नहीं कर रही हूँ।'। १७ (यह सुनकर) तब अनिरुद्ध को हँसी आ गयी और उनका क्रोध उतर गया

१ रीछ-कन्या (जाम्बवती)—अनुपम सुन्दरी जाम्बवती ऋक्षराज जाम्ववान की कन्या तथा श्रीकृष्ण की अष्ट नायिकाओं में से एक थी । जाम्बवान ने वन में सिंह को मारकर स्यमन्तक मणि प्राप्त की थी, जिसे चुराने का दोषारोप श्रीकृष्ण पर लगाया जा रहा था । इस दोषारोप से मुक्त हो जाने के हेतु, श्रीकृष्ण उस मणि की खोज करते-करते जाम्बवान की गुफा में आ पहुँचे । उस समय जाम्बवान और कृष्ण एक-दूसरे से लड़ने लगे । अट्ठाईस दिन की लड़ाई के पश्चात जाम्बवान पराजित होने लगा । उस समय उसने प्रतिद्वंद्वी विजेता श्रीकृष्ण को देखकर पहचान लिया कि वे भगवान विष्णु हैं, उसके अपने स्वामी प्रभु रामचन्द्र हैं, जो अब कृष्ण-रूप में अवतरित हैं । तत्काल उसने स्यमन्तक मणि सहित अपनी कन्या जाम्बवती कृष्ण को समर्पित की ।

२ कुब्जा—कंस की दासी थी, जो शरीर के तीन अंगों में टेढ़ी, परन्तु सुन्दर मुख-वाली थी । कंस ने धनुर्याग के लिए कृष्ण और बलराम को बुलाया । जब वे मथुरा के राजमार्ग से आगे बढ़ रहे थे, तो उन्होंने हाथ में चन्दन का पात्र लेकर जानेवाली कुब्जा को देखा । उसने कृष्ण पर रीझकर अंगराग तथा हृदय न्यौछावर किया । कृष्ण ने अपने दर्शन का प्रत्यक्ष फल दिखाने के हेतु, अपने चरणों से कुब्जा के पैर के पंजों को दबा लिया, हाथ की दो अंगुलियाँ उसकी ढोड़ी में लगायीं और उसके शरीर को तनिक उचका दिया । तत्काल उसके अंग सीधे और समान हो गये— वह अनुपम सुन्दरी बन गयी । उसकी अनुराग-भरी विनती स्वीकार करके कृष्ण स्वयं उसके घर रह गये और उन्होंने उसकी कामनाएँ पूर्ण कर दीं ।

एवे समे ऋषि नारद आव्या, ईश्वरी इच्छाय,
गांधर्वविवाह तत्क्षण कीधो, परणाव्यां वरकन्याय । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वरकन्या परणावियां, नारद हवा अंतर्धान रे,
नरनारी सुख भोगवे, इंद्र-इंद्राणी समान रे । २० ।
नरनारी आनंद घणो, वाध्यो प्रेम अपार रे,
विधात्री तुजने नमुं, मुंने मेळव्यो भरथार रे । २१ ।

(दूर हो गया) । (फिर ओखा बोली—) ‘ उल्टा मुँह करके (मेरी ओर पीठ करके) क्या बोल रहे हैं ? (कुछ) पीछे मुड़कर तो देखिए । ’ । १८ उस समय भगवान की इच्छा से ऋषि नारदजी वहाँ आ गये । उन्होंने तत्क्षण (उनका) गान्धर्व विवाह करा दिया, उन वर और कन्या (वधू) का परिणय करा दिया । १९

नारद ने वर और कन्या (वधू) का परिणय करा दिया और वे अन्तर्धान हो गये । (तदनन्तर) वे पुरुष और स्त्री, इन्द्र-इन्द्राणी के समान सुख भोगने लगे । २० उन नर-नारी को बहुत आनन्द हो गया । उनमें अपार प्रेम की वृद्धि हो गयी । (फिर) ओखा बोली, ‘ री धात्री (चित्रलेखा), मैं तुम्हें नमस्कार करती हूँ; तुमने मुझे पति प्राप्त कर दिया । ’ । २१

कडवुं २२ मुं—(ओखा-अनिरुद्ध-मिलन)

राग चोपाई

शुकजी बोल्या परम वचन, सांभळ परीक्षित राजन,
मळी बेठी बेउ सैयारी, बोली वचन कौभांडकुमारी । १ ।
सुख भोगवे श्यामा ने स्वामी, चित्रलेहा कहे शिर नामी,
अन्न बेनुं आपे छे राय, त्रीजुं माणस केम समाय ? । २ ।

कड़वक २२—(ओखा-अनिरुद्ध-मिलन)

शुकजी ने परम (उत्तम) बात (इस प्रकार) कही— हे राजा परीक्षित, सुनिए । वे दोनों सखियाँ मिलकर (एक स्थान पर) बैठ गयीं, तो (उनमें से) कौभाण्ड की पुत्री (चित्रलेखा) बोली । १ (उसने मन-ही-मन सोचा— यहाँ) यह स्त्री और उसके पति (मिलन-) सुख भोगते रहेंगे ।

तमे नरनारी क्रीडा कीजे, बाई मुजने तो जावा दीजे,
रडती ओखा ते वळतु भाखे, बाई ! केम जीवुं तुज पाखे। ३ ।
तमे तातने घेर न जवाय, जो जाओ तो वात चर्चाय,
रही एकठां दहाडा निर्गमशुं, आपणे त्रणे वहेंची अन्न जमशुं। ४ ।
बाई रहीश कदी हुं भूखी, नहि तुजने थावा देउं दुःखी,
तने आपीश मारो भाग, नथी हमणां जवानो लाग। ५ ।
दुःख थाशे तो दईशुं थावा, पण नहि देउं बेनडी जावा,
चित्रलेहा कहे, सुण शाणी, रखे आंखे तुं भरती पाणी। ६ ।
प्रधानपुत्री कहेवाउं छुं मात्र, हुं छुं ब्रह्माणी मानवमात्र,
तुज अर्थे लीधो अवतार, माटे मेळव्यां स्त्री-भरथार। ७ ।
एम कहीने थई अदर्शन, चित्रलेहा गई ब्रह्मसदन,
ओखाए रोई आंखो भरी, कंथे आसनावासना करी। ८ ।
स्वामीए संबोधी नारी, सुखे विधात्री मेली विसारी,
बेउने विसरी विजोगनी पीडा, नरनारी करे कामक्रीडा। ९ ।

(फिर) चित्रलेखा सिर झुकाकर बोली, 'राजा खाना तो दो का भेजते हैं, उसमें तीसरा मनुष्य कैसे समा जाए। २ (अतः) आप नर-नारी (यहाँ प्रणय-) क्रीड़ा करते रहिए। बाई, मुझे (अब) तो जाने दीजिए।' (यह सुनकर) रोते-रोते ओखा प्रत्युत्तर में बोली, 'बाई, मैं बिना तुम्हारे कैसे जीवित रह सकूँगी। ३ तुम्हें अपने पिताजी के घर नहीं जाना है। यदि जाओगी, तो इस बात की चर्चा होगी। (अतः यहाँ हम तीनों) इकट्ठा रहकर दिन बिताएँगे। हम तीनों खाना बाँटकर भोजन करेंगे। ४ बाई, मैं कभी भूखी रहूँगी; फिर भी तुम्हें दुखी नहीं होने दूँगी। मैं तुम्हें अपना भाग दूँगी। अभी (तुम्हारे) जाने के लिए उचित समय नहीं है। ५ (यदि कुछ) दुख होगा, हम उसे हो जाने देंगे, अर्थात उसे सहन करेंगे। परन्तु बहन, तुम्हें जाने नहीं दूँगी'। (इसपर) चित्रलेखा ने कहा, 'सुनो, अरी सयानी (बहन), तुम कदाचित आँखों में पानी भर रही हो। ६ मैं मन्त्री की पुत्री मात्र कहाती हूँ, (फिर भी) मैं मानवी के रूप में केवल ब्रह्माणी (माया) हूँ। तुम्हारे लिए मैंने (मानव स्त्री का) अवतार ग्रहण किया है। मैंने (तुम) स्त्री और पति को (एक-दूसरे से) मिला दिया है।'। ७ ऐसा कहकर चित्रलेखा ओझल हो गयी और (वहाँ से फिर) ब्रह्मा के घर चली गयी। (इससे) ओखा ने रो-रोकर (आँसुओं से) आँखें भर दीं, तो पति ने उसे (ढाढ़स बँधाते हुए) आश्वस्त किया। ८ (तदनन्तर) पति ने उस नारी को समझा दिया, तो उसने सुख के साथ

आसनभेदे बंनो छे पूरां, नरनारी रतिजुद्धे शूरां,
बेनी छे चडती जोबनकाया, प्रीतिबंधने बांधी माया। १०।
स्नेहअर्णव ओखा नारी, झीले अनिरुद्ध नाथ विहारी,
जे जे जोईए ते उपर आवे, भक्ष भोजन करे मन भावे। ११।
पहोंच्यो ओखानो अभिलाष, पछे आव्यो वैशाख मास,
जाळीए बारीए वायु वाये, त्यम त्यम हर्ष ते अधिक थाये। १२।
आव्या वर्षाकाळना दिन, गाजे वरसे ने थाय पर्जन्य,
थाय आकाशे वीजळी पूरी, बोले कोकिला वाणी मधुरी। १३।
त्यां तो मोर-बपैया बोले, महातपसीनां मनडां डोले,
मळिया तळे सागर गाजे, अंगे नव सप्त शणगार साजे। १४।
तैलमर्दन मंजन अंगे, चर्चे चंदन केसर संगे,
नेत्रे अंजन आभरण सार, मुखे तांबूल केरो आहार। १५।

अपनी अभिभाविका (धाय) को भुला दिया। (फिर) उन दोनों को (अभिभाविका चित्रलेखा के) वियोग की व्यथा भूल गयी और वे नर-नारी काम-क्रीड़ा करने लगे। ९ (सम्भोग के) आसनों के भेद (के ज्ञान) में वे दोनों पूर्ण (प्रवीण) थे। वे पुरुष और स्त्री रति-युद्ध में शूर थे। दोनों की काया यौवन से विकसित होती जा रही थी, तो माया अर्थात चित्रलेखा ने (उन्हें) प्रीति के बन्धन में आबद्ध कर दिया। १० नारी ओखा तो (मानो) स्नेह का सागर थी। विहार करनेवाले पति अनिरुद्ध उसमें जल-क्रीड़ा करने लगे। उन्हें जो जो चाहिए था, वह ऊपर आता था। वे मन को (जो) भाता था, वैसा भोजन करते थे। ११ (इस प्रकार) ओखा की अभिलाषा पूरी हो गयी। (यथाकाल) फिर वैशाख मास आ गया। (जैसे-जैसे) गवाक्ष और खिड़की में से हवा बहती, वैसे-वैसे (उन्हें) अधिकाधिक हर्ष होता। १२ (तदनन्तर) वर्षाकाल (ऋतु) के दिन आ गये। मेघ गरजते थे, और साथ में बरसात होती थी। आकाश में बिजली पूर्ण रूप से (बहुत) चमकती थी। कोयल मधुर वाणी में बोलती थी। १३ वहाँ (तब) मोर और पपीहा बोलते थे। (इसके प्रभाव से) महान तपस्वियों के मन डोल रहे थे (विचलित हो रहे थे), (तो ओखा और अनिरुद्ध के मन की क्या कहें!)। उस कोठी के तले सागर गरज रहा था। (एक दिन उसने) अंग में सोलह श्रृंगार सजा लिये। १४ उसने अंग में तेल लगाकर मर्दन किया और स्नान किया। केसर के साथ चन्दन (मिलाकर) लगा लिया। आँखों में अंजन लगाकर सुन्दर आभूषण धारण किये और मुख से ताम्बूल का सेवन किया। १५ भाल पर बिन्दी वैसे चमक रही थी, जैसे शरदपौणिमा का चाँद

तपे निलवट चांदलो तेवो, चंद्र शरदपूनमना जेवो,
शिर राखडी शोभा घणी, चोटलो जाणे नागनी फणी । १६ ।
शीशफूल सेंथे सिंदूर, तेणे मोह्यो अनिरुद्ध शूर,
काने झाल अमूलक जोई, कामकुंवर रह्यो छे मोही । १७ ।
नाके सोहे मोतीनी वाळी, तेने अनिरुद्ध रह्यो छे न्याळी,
नारी तारी नासिकानो मोर, नो'य भूषण चित्तनो चोर । १८ ।
रक्त अधर हसे मंदमंद, नहि हास्य ए मोहनो फंद,
पंकजमां मेघबिंदु पडतां, मोती मोरनां अधरे अडतां । १९ ।
चपळ नेत्र झीणुं अंजन, जाणे जाळे पड्यां खंजन,
मोह्यो मोह्यो ते मुखने मोडे, मोह्यो मोह्यो भ्रकुटिने जोडे । २० ।
मोह्यो मोह्यो स्नेहने संधे, मोह्यो मोह्यो हार गळबंधे,
मोह्यो मोह्यो ते हस्तकमळे, मोह्यो मोह्यो उर-गळस्थळे । २१ ।
मोह्यो मोह्यो अलकालटे, मोह्यो मोह्यो केसरी कटे,
मोह्यो मोह्यो ते पेरण फाळी, मोह्यो मोह्यो ते क्षुद्रघंटाळी । २२ ।

(चमकता) है । सिर पर रक्षा की बहुत शोभा (दिखायी दे रही) थी और (ओखा की) चोटी नाग के फन (जैसी) थी । १६ माँग में सिन्दुर और शीशफूल (शोभायमान) था । उससे वीर अनिरुद्ध मोहित हो गये । कानों में पहने अनमोल झुमके देखकर अनिरुद्ध मोहित होकर (खोये-से) रह गये । १७ नाक में मोतियों की नथनी शोभायमान थी; अनिरुद्ध उसे ध्यान से निहार रहे थे । (वे बोले—) 'री नारी, तुम्हारी नाक में पहना हुआ यह मोर (नामक आभूषण), आभूषण नहीं है, वह तो चित्त का चोर है । १८ (तुम्हारे) लाल-लाल होंठ मन्द-मन्द हँस अर्थात मुस्करा रहे हैं । यह हास्य नहीं है, यह तो मोह का फन्दा है । (नाक में पहने हुए) मोर के मोती (जब) होंठों को छू जाते हैं, तो जान पड़ता है कि मेघ से जल-बिन्दु कमल में गिर रहे हों । १९ (तुम्हारे) चंचल नेत्रों में झीना-झीना अंजन (लगाया हुआ) है; मानो खंजन पक्षी जाले में (फँस) पड़े हों ।' अनिरुद्ध उस (ओखा) के मुख के हावभाव से (मुख पर झलकनेवाली भाव-भंगिमा से) मोहित हो गये, मोहित हो गये । (उसकी) भौंहों के जोड़ से वे मोहित हो गये, मोहित हो गये । गले में पहने हुए हार से वे मोहित हो गये, मोहित हो गये । उसके हस्त-कमलों के प्रति वे मोहित हो गये, मोहित हो गये; उसके वक्ष:स्थल और कण्ठ से वे मोहित हो गये, मोहित हो गये । २०-२१ उसके बालों की लटों के प्रति वे मोहित हो गये, मोहित हो गये; वे उसकी सिंह-(की-सी पतली) कटि से मोहित हो गये, मोहित हो गये ।

मोह्यो मोह्यो अरगजाने बहेके, मोह्यो मोह्यो चालने लेहेंके,
मोह्यो मोह्यो झांझरने झमके, मोह्यो मोह्यो घूघरीने घमके । २३ ।
मोह्यो मोह्यो ते प्रेमने पाशे, मोह्यो मोह्यो ते मंदमंद हासे,
देखी एक स्थंभनुं धाम, तेथी वीसर्युं द्वारिका गाम । २४ ।
घणुं भक्ष भोजन पाम्यो आप, तेणे वीसरी गयां मा बाप,
पाम्यो अधरामृतनुं पान, गयुं वीसरी हरिनुं ध्यान । २५ ।
निरंकुश विषयनो स्वाद, तेणे वीसरी कुळमरजाद,
ओखा स्नेह तणो सागर, तेणे वीसर्यो रत्नाकर । २६ ।
अनिरुद्धनी चाल छे गमती, हींडे नारी नेहथी नमती,
महिला ! महिला ! एम ओचरतो, हींडे नारीनी पूंठे फरतो । २७ ।

वे उसके वस्त्र तथा दुपट्टे से मोहित हो गये, मोहित हो गये; वे किंकिणी से मोहित हो गये, मोहित हो गये । २२ वे (उसके द्वारा लगाये हुए) अरगजा की महक से मोहित हो गये, मोहित हो गये; वे उसकी चाल की लचक (ठुमक) से मोहित हो गये, मोहित हो गये । वे उसके नूपुर की झनकार से मोहित हो गये, मोहित हो गये । घुँघरुओं के कलरव से मोहित हो गये । २३ वे प्रेम के पाश से मोहित हो गये, मोहित हो गये; वे उसके मन्द-मन्द हास्य से मोहित हो गये, मोहित हो गये । उस एक स्तम्भ पर बने भवन (मीनार)[1] को देखने पर उससे वे (अपनी) द्वारका नगरी को भूल गये । २४ वे स्वयं बहुत खाद्य (वस्तुओं से युक्त) भोजन को प्राप्त हो जाते थे; उससे वे अपने माता-पिता को (भी) भूल गये । वे (ओखा के) अधरामृत के पान को प्राप्त हो जाते थे । उससे उनको भगवान हरि का ध्यान भूल गया । २५ उन्हें निरंकुश रूप से (बिना किसी रोक-टोक के) विषय-भोग का स्वाद प्राप्त होता था; उससे वे कुल-मर्यादा को भूल गये । ओखा तो स्नेह का सागर थी; उससे वे (द्वारका नगरी के समीपवर्ती) सागर को भूल गये । २६ उस नारी को अनिरुद्ध का चाल-चलन (आचरण-व्यवहार) अच्छा लगता था; इसलिए वह स्त्री स्नेह (के प्रभाव रूपी बोझ) से झुककर घूमती थी । वे भी 'महिला', 'महिला' कहते (रटते) थे और उस नारी के पीछे (-पीछे) घूमते थे । २७ उस मृगनयनी ने उन्हें पागल बना दिया था । वे दिवस या रात नहीं जानते

१ स्तम्भ-भवन—कहते हैं कि बाणासुर ने एक ऊँचे स्तम्भ का निर्माण कराकर उसपर एक कोठी बनवायी । उसका उल्लेख इस काव्य में 'स्तम्भनुं धाम', 'माळियुं' आदि शब्दों से किया गया है । उस कोठी में ओखा को चित्रलेखा की निगरानी में रखा गया । (इस अनुवाद में 'कोठी' शब्द का प्रयोग किया जा रहा है ।)

घेळो कीधो छे मृगयानेणी, नव जाणे दिवस के रेणी,
अंगोअंग काम रह्यो रमी, चारे नेत्र झरी रह्यो अमी । २८ ।
स्त्रीए मोहिनी मदिरा पाई, आलिंगन दे धाई धाई,
शुद्ध बुद्ध तो वीसरी गई, एम चोमासुं गयुं वही । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

गयुं चोमासुं विषय रमतां, आव्यो आश्विनी मास रे,
कन्या टळी नारी हवी, ओखा पामी विलास रे । ३० ।

थे । उनके अंग-अंग में काम रमा रह गया था और उन (दोनों) के चारों नेत्रों से अमृत झरता था । २८ उस स्त्री ने उन्हें मोहिनी-स्वरूपा मदिरा पिला दी थी । उससे वे दौड़-दौड़कर उसका आलिंगन किया करते थे । उन्हें सुध-बुध भूल गयी । इस प्रकार चौमासा बीत गया । २९

उनके विषय-भोग में रममाण रहते, चौमासा बीत गया और आश्विन मास आ गया । (इतने दिनों) ओखा (भोग-) विलास को प्राप्त होती रही । उससे उसका कन्या-रूप दूर होकर वह (यौवन से परिपूर्ण) नारी (रूप में विकसित) हो गयी । ३०

कडवुं २३ मुं—(बाणासुर द्वारा कौभाण्ड को ओखा के पास भेजना)

राग देशाख

वर्षाऋतु वही गई रे, रमतां रमतां रंगविलास,
सुख पाम्यां घणुं रे, तव आव्यो कांई आश्विन मास । १ ।
एक समे सही रे, शरदऋतु समे नर ने नार,
माणेकठारी पूर्णिमा रे, उत्तम दिवस आव्यो सार । २ ।

कड़वक २३—(बाणासुर द्वारा कौभाण्ड को ओखा के पास भेजना)

(ओखा और अनिरुद्ध द्वारा इस प्रकार रति-) रंग-विलास (रति-क्रीड़ा) करते-करते वर्षाऋतु बीत गयी । (उससे) वे बहुत सुख को प्राप्त हो गये । तब कुछ (दिन) पश्चात आश्विन मास आ गया । १ शरदऋतु के समय (दिनों में) एक बार वे नर-नारी ठीक ऐसे ही (विलास में लगे हुए) थे । शरदपौर्णिमा का सुहावना उत्तम दिन आ गया । २ वे नर और नारी चन्द्र-किरणों में, अर्थात चाँदनी में झूले पर बैठे हुए थे

चंद्रकिरण चांदनी रे, बेठां हिंडोळे नर ने नार,
हास्यविनोदशुं रे करतां, क्रीडा विविध प्रकार । ३ ।
रक्षक रायना रे, तेणे दीठी राजकुमार,
कन्यारूप क्यां गयुं रे ? ओखाजी दीसे छे हवे नार । ४ ।
चित्रलेहा छे नहीं रे, एकलडी दीसे छे एह,
राती राती आंखडी रे, प्रफुल्लित दीसे एनी देह । ५ ।
हींडे उर ढांकती रे, शके थया छे नखपात,
अधर पर शामता रे, छे कोई पुरुषदंतना घात । ६ ।
सेवक संचर्या रे, कांई एक देखी मन विचार,
मंत्री कौभांडने रे, जईने कह्या समाचार । ७ ।
प्रधान परवर्यो रे, ज्यां छे असुर केरो नाथ,
रायजी, सांभळो रे, मंत्री कहे छे जोडी हाथ । ८ ।
लौकिक वारता रे, कंईक आपणने लांछन,
रसना छेदीए रे, हुं केम कहुं कठण वचन ? । ९ ।
बाळकी तम तणी रे, ते तो थई छे नारीरूप,
वारता सांभळी रे, आसनथी डगियो छे भूप । १० ।

और हँसी-ठठोली के साथ विविध प्रकार से (प्रणय-) क्रीड़ा कर रहे थे । ३ (तब) राजा के (जो) रक्षक (नियुक्त) थे, उन्होंने राजकुमारी (ओखा) को देखा । (वे सोचने लगे—) ओखाजी अब (पूर्ण रूप से विकसित) नारी दिखायी दे रही हैं, उनका (वह) कन्या-रूप कहाँ गया ? । ४ चित्रलेखा (भी कहीं दिखायी) नहीं (दे रही) है । ये तो अकेली दीख रही हैं । इनकी आँखें लाल-लाल हैं; इनकी देह प्रफुल्लित (अर्थात पूर्ण विकसित) दिखायी दे रही है । ५ वे अपने वक्ष:स्थल को ढाँकती हुई घूम रही हैं; कदाचित उस पर नखाघात (नखक्षत) हो गये हैं । उनके अधरों पर श्यामता (कालापन) है; (कदाचित) उनमें किसी पुरुष के दाँतों से घाव (क्षत) हो गये हैं । ६ (ऐसा) कुछ एक देखकर मन में विचार करते हुए वे सेवक चले गये और जाकर उन्होंने मन्त्री कौभाण्ड से (समस्त) समाचार कह दिये । ७ (तत्काल) वह मन्त्री (वहाँ) गया, जहाँ असुरों का स्वामी (बाण बैठा हुआ) था । हाथ जोड़कर मन्त्री बोला, 'हे राजा, सुनिए । ८ लोगों में (ऐसी) बात (फैली हुई) है । (उसमें) कुछ एक अपने लिए लांछन है । (यदि अनुचित हो तो) मेरी जिह्वा काट दें— मैं (यों ही) कठोर बात कैसे (क्यों) कहूँ । ९ आपकी (जो) कन्यका है, वह (अब) नारी-स्वरूपा (नारी-रूप में पूर्ण विकसित) हो गयी है ।'

धजा भांगी पडी रे, ते तो आफूडी अकस्मात्,
बाण कोप्यो घणुं रे, मंत्री साची कहोने वात। ११।
शिवे कह्युं ते थयुं रे, तारी धजा थाशे पतन,
त्यारे तुं जाणजे रे, कोई शत्रु थयो उत्पन्न। १२।
जाओ मंत्री तमे रे, जुओ पुत्रीनी शी छे पेर?
कोई जाणे नहीं रे, तेम तेडी लावोने घेर। १३।
परधान परवर्यो रे, साथे डाह्या डाह्या जन,
ओखाजीने माळिये रे, हेठा रही वदे रे वचन। १४।
कौभांड ऊचर्यो रे, ओखाजी द्योने दर्शन,
चित्रलेहा क्यां गई रे? चालो, तेडे छे राजन। १५।
थरथर ध्रूजती रे, पडी कांई पेटडियामां फाळ,
शुं थशे नाथजी रे? आवी लागी महा जंजाळ। १६।
तमो रखे बोलता रे, कंथजी देशो मा दर्शन,
मुख ऊडी गयुं रे, थयां सजळ बंन्यो लोचन। १७।
बाळा बेबाकळी रे, कंपी कदली सरखा चर्ण,
कसण कस्या विना रे, कंचुकी अवळां छे आभ्रण। १८।

यह समाचार सुनकर राजा आसन (पर) से डगमगा उठा। १० (उसने देखा—) उसकी (जो) ध्वजा (है, वह) अपने आप अकस्मात भग्न होकर गिर गयी है। (इससे) बाण बहुत क्रुद्ध हो उठा (और बोला—) "हे मन्त्री, सच्ची बात बता दो। ११ शिवजी ने कहा था— 'जब तुम्हारी ध्वजा टूट जाएगी, तब तुम समझ लेना कि (तुम्हारे लिए) कोई शत्रु उत्पन्न हो गया है।'। १२ (इसलिए) हे मन्त्री, तुम जाओ (और) देख लो कि (हमारी) कन्या (ओखा) का क्या (रंग-) ढंग है। कोई जान न पाए, उस प्रकार तुम उसे घर लिवा ले आओ।"। १३ (यह सुनकर) मन्त्री चला गया। उसके साथ समझदार-समझदार (बुद्धिमान, चतुर) लोग थे। ओखा के स्तम्भ-भवन (कोठी) के नीचे (खड़े) रहकर वह यह बात बोला। १४ कौभाण्ड बोला, 'हे ओखाजी, दर्शन दो न। चित्रलेखा कहाँ गयी? चलो, राजा (तुम्हें) बुला रहे हैं।'। १५ (यह सुनकर) ओखा थरथर काँप उठी। वह बहुत घबड़ा गयी। (वह बोली—) 'हे नाथजी, (अब) क्या होगा। बड़ा जंजाल आ गया है। १६ आप कदाचित कहेंगे, (फिर भी) हे कान्त, आप दर्शन नहीं देंगे (आप दिखायी नहीं देंगे)।' (यह कहते-कहते) उसका मुख फीका (निस्तेज) पड़ गया। उसकी दोनों आँखें सजल हो गयीं। १७ वह बाला आकुल-व्याकुल

बारीए बाळकी रे, ऊभी रही छे त्यां आवी,
कौभांडे कुंवरीने रे, अभय वचने बोलावी । १९ ।
चित्रलेहा क्यां गई रे ? तुं एकली क्यम देखाय ?
कन्यारूप क्यां गयुं रे ? केम तुं नारीवेश जणाय ? । २० ।
शरीर संकोचती रे, कां बेबाकळी तुं बेनी ?
घरमां कुण छे रे ? शीघ्रे साचेसाचुं के'नी । २१ ।
गलस्थळे करेल दीसे रे, कोई पुरुषदंतना घात,
शणगट ताणती रे, बोले आखी भागी वात । २२ ।
दिल वारु नथी रे, कीधुं चित्रलेहाए शयन,
तेणे हुं व्याकुळी रे, दुःखणी भरुं छउं लोचन । २३ ।
मंत्री ओचरे रे, बाई ! कां बोलो आळपंपाळ ?
हेठां ऊतरो रे, नहि तो चढीने जोशुं माळ । २४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

माळ जोईशुं तम तणो, भागशे तमारो भार रे,
एवुं जाणी हेठां ऊतरो, राय कोप्यो छे अपार रे । २५ ।

हो गयी । उसके चरण कदली जैसे काँपने लगे । कंचुकी के डोरों के कसकर बाँधे न रहने से उसके आवरण (बेठन) उल्टे हो गये थे । १८ (इस दशा में) वह बाला वहाँ आकर खिड़की में खड़ी रह गयी, तो कौभाण्ड ने उस कुमारी को अभय (दान देते हुए) वचन से सम्बोधित किया (कहा) । १९ 'चित्रलेखा कहाँ गयी ? तुम अकेली कैसे दिखायी दे रही हो ? री, तुम्हारा कन्या-रूप कहाँ गया ? तुम नारी-वेश अर्थात रूप कैसे दिखा रही हो ? । २० अरी बहन, शरीर को सिकोड़ती हुई तुम सहमी क्यों (हो गयी) हो ? घर में (और) कौन है ? शीघ्रता से सच-सच कह देना । २१ तुम्हारे गालों पर किसी पुरुष द्वारा किये हुए दाँतों के घाव (दन्तक्षत दिखायी दे रहे) हैं ।' तो घूँघट ओढ़ती हुई उसने टूटी-फूटी बात (इस प्रकार) कह दी । २२ 'मेरा मन ठीक नहीं है । चित्रलेखा सो गयी है । उससे मैं व्याकुल हो गयी हूँ; मैं दुखिया (आँसुओं से) आँखें भर रही हूँ ।' । २३ (यह सुनकर) मन्त्री बोला, 'अरी बाई, झूठमूठ क्यों बोल रही हो ? नीचे उतर जाओ, नहीं तो मैं चढ़कर कोठी में देख लूँगा । २४

मैं तुम्हारी कोठी देख लूँगा, तो तुम्हारा (मन का भय रूपी) बोझ दूर हो जाएगा । ऐसा समझकर नीचे उतर जाओ । राजा अपार क्रुद्ध हुए हैं । ' । २५

कडवुं २४ मुं—(ओखा द्वारा कौभाण्ड को डाँटना और अनिरुद्ध द्वारा ओखा को गोद में लेकर बैठना)

राग रामकली

कन्याए क्रोध जणावियो, हाकट्यो परधान,
लंपट बोलतां लाजे नहीं, घडपणे गई सान । कन्याए० । १ ।
पापी प्राण लेवा क्यांथी आवियो ? बोलतो क्षुद्र वचन,
एवा सारु कीधी जोईशे, जीभलडी छेदन । कन्याए० । २ ।
हुं तो डाह्यो दानव तुंने जाणती, भारेखम कौभांड,
एवुं आळ कोने न चढावीए, भांगी पडे रे ब्रह्मांड । कन्याए० । ३ ।
के'वा देनी तुं मारी मातने, पछे तारी रे वात,
हत्या आपुं हुं तुजने, करुं झंपापात । कन्याए० । ४ ।
कौभांड लाग्यो कंपवा, पुत्री परम पवित्र,
पछे कालावाला मांडिया, न जाण्युं स्त्रीनुं चरित्र । कन्याए० । ५ ।
बाई राजाए मुजने मोकल्यो, लोके पाड्यो विरोध,
पूछ्या माटे शुं आवडो, रंक उपर क्रोध ? । कन्याए० । ६ ।

कड़वक २४—(ओखा द्वारा कौभाण्ड को डाँटना और अनिरुद्ध द्वारा ओखा को गोद में लेकर बैठना)

उस कन्या ने क्रोध जतला दिया और मन्त्री (कौभाण्ड) को (ज़ोर से यह कहते हुए) धमका दिया, 'अरे लम्पट, तुम ऐसा बोलते हुए लज्जित नहीं हो रहे हो। बुढ़ापे में (तुम्हारी) बुद्धि (मारी) गयी है। उस कन्या ने०। १ अरे पापी, (मेरे) प्राण लेने के लिए कहाँ से आ गये हो ? तुम क्षुद्र (नीच) बातें बोल रहे हो। इसलिए, तुम जीभ को काट डाले हुए देखोगे। उस कन्या ने०। २ कौभाण्ड, मैं तो तुम्हें समझदार दानव, बड़ा गम्भीर (दानव) समझती थी। ऐसा दोषारोप किसी पर न चढ़ाएँ (लगाएँ)। इससे ब्रह्माण्ड भग्न होकर रह जाएगा। उस कन्या ने०। ३ फिर तुम मेरी माँ से अपनी बात कह देना। मैं अपनी हत्या (का दोष) तुम्हें दे रही हूँ— मैं (अभी) छलाँग लगा दूँगी (ऊपर से कूद पड़ूँगी)'। उस कन्या ने०। ४ (यह सुनकर) कौभाण्ड काँपने लगा। (उसे लगा कि) यह कन्या तो परम पवित्र है। अनन्तर वह गिड़गिड़ाने लगा। (उसने स्वीकार किया—) मैं स्त्री के चरित्र को नहीं जान पाया। उस कन्या ने०। ५ हे देवी, लोगों ने (इस बात का) विरोध किया, इसलिए राजा ने मुझे (यहाँ) भेज दिया। मेरे द्वारा पूछताछ करने पर (मुझ) रंक पर इतना क्रोध क्यों

एवुं कहेतां सेवक मोकल्यो, बाणासुरनी रे पास,
राजाए मंत्रीने कहावियुं, चढी जुओने आवास । कन्याए० । ७ ।
कौभांड क्रोध करी गाजियो, वजडाव्यां निशान,
माळियेथी बंन्यो ऊतरो, बाणासुरनी आण । कन्याए० । ८ ।
दासने आपी आज्ञा, स्थंभ करोने छेदन,
ओखाए आंसुडां ढाळियां, चंपाशे स्वामिन । कन्याए० । ९ ।
होंकारो असुरनो सांभळी, ऊभो थयो अनिरुद्ध,
मेघनी पेरे गाजियो, कांपी नगरी रे बद्ध । कन्याए० । १० ।
मंत्री कहे, सुभट सांभळो, को बोल्यो जोद्धो अहीं,
आपणे नादे हांकी ऊठियो, मेघ शब्दथी सहीं । कन्याए० । ११ ।
ओखाए नाथ बाथ घालियो, शुं जाओ छो वही ?
मरडी मरडी जाओ जुद्धने, दैवडा जाउं कहीं । कन्याए० । १२ ।
आ शो ऊजम वढवा तणो, सामुं नथी कामधाम,
दानवने मानव जीते नहीं, न होय ऋतुसंग्राम । कन्याए० । १३ ।

(कर रही हो) ? '। उस कन्या ने०। ६ ऐसा कहते हुए उसने बाणासुर के पास सेवकों को भेज दिया। (उनकी बात सुनने पर) राजा (बाण) ने मन्त्री को कहलवा दिया— 'निवास-स्थान पर चढ़कर देख लेना'। उस कन्या ने०। ७ (तब) कौभाण्ड क्रोध करके गरज उठा; उसने नगाड़े बजवा दिये। (वे बोले—) 'कोठी पर से दोनों उतर जाओ, तुम्हें बाणासुर की आज्ञा है'। उस कन्या ने०। ८ (फिर) उसने सेवकों को आदेश दिया— 'इस स्तम्भ (भवन) को छेद डालो (तोड़कर ढहा दो)।' (यह देखकर) ओखा ने आँसू बहाना आरम्भ किया। (उसे लगा कि अब इससे मेरे) स्वामी दब जाएँगे। उस कन्या ने०। ९ उस असुर की चीत्कार सुनकर अनिरुद्ध खड़े हो गये और मेघ की भाँति गरज उठे; तो समस्त नगरी (आतंक से) काँपने लगी। उस कन्या ने०। १० (अनन्तर) मन्त्री बोला, 'रे सुभटो, सुन लो। कोई योद्धा यहाँ बोल रहा है। (मानो) किसी सिंह ने मेघ की-सी अपनी ध्वनि में (अपने स्वर में) हुंकार भर दी है (गर्जन किया है)। उस कन्या ने०। ११ (फिर) ओखा ने अपने स्वामी को हृदय से लगा लिया (और पूछा)— 'क्या तुम बहते हुए (बहकते हुए) जा रहे हो (ऐसा बिना सोचे-समझे क्या कर रहे हो) ? युद्ध के लिए अकड़-अकड़कर क्या जा रहे हो ? हे देव, मैं कहीं (अन्यत्र) जाती हूँ। उस कन्या ने०। १२ लड़ने का यह क्या उद्योग है। सामने कामदेव का कोई भवन तो नहीं है। मानव तो दानव को जीत

नाथ कहे, सुणो सुंदरी, वात सघळे रे थई,
हवे चोरी शानी आपणे, बेसीए बारीए जई । कन्याए० । १४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जई बेठां नरनारी बंन्यो, वात विपरीत कीधी रे,
छजे भजे कामकुंवर, ओखा उछंगे लीधी रे । १५ ।

नहीं पाता । यह कोई रति-युद्ध तो नहीं है'। उस कन्या ने० । १३
(इसपर) उसके स्वामी ने कहा, 'री सुन्दरी, सुनो । सब में बात हो गयी है । (फिर) हमें अब किसकी चोरी है । हम जाकर (बिना किसी डर या संकोच के) खिड़की में बैठ जाएँ'। उस कन्या ने० । १४

(तदनन्तर) वे नर और नारी दोनों (खिड़की में) बैठ गये । उन्होंने यह विपरीत बात की । कामदेव के पुत्र अनिरुद्ध छज्जे में शोभायमान हो रहे थे । उन्होंने ओखा को गोद में बैठा लिया । १५

कडवुं २५ मुं—(कौभाण्ड-अनिरुद्ध-संवाद)

राग रामग्री

जोडी जोवा मळ्या जोद्ध टोळे जी, ओखा लीधी अनिरुद्धे खोळे जी,
कंठे बांहेडी ग्रही छे बाळा जी, देखी कौभांडने प्रगटी ज्वाळा जी । १ ।

ढाळ

ज्वाळा प्रगटी ने भाल भ्रूकुटी, सुभट तेड्या जमला,
मंत्री कहे, भाई सबळ शोभे, जेम हरि उछंगे कमळा । २ ।

कड़वक २५—(कौभाण्ड-अनिरुद्ध-संवाद)

उस जोड़े (दम्पती) को देखने के लिए योद्धा एकत्रित हो गये । (उस समय) अनिरुद्ध ने ओखा को (अपनी) गोद में बैठा लिया था । उन्होंने उस वाला को गले में हाथ डालकर (थाम) रखा था । यह देखकर कौभाण्ड (के मन) में (क्रोधाग्नि की) ज्वाला उत्पन्न हो गयी । १

वह ज्वाला उसके भाल तथा भौंहों में प्रकट (दिखायी दे रही) थी । (फिर) उसने कुल (समस्त) अच्छे-अच्छे योद्धाओं को बुला लिया । वह (मन ही मन) बोला, 'अरे भाई, यह (ओखा) तो (वैसे ही) बड़ी शोभायमान है, जैसे श्रीहरि की गोद में कमला (लक्ष्मी शोभायमान होती)

लघुरूप कोई लक्षणवंतो, सुतानी संगे बेठो,
प्रवेश नहीं ज्यां पवनकेरो, तो मळियामां केम पेठो ? । ३ ।
निःशंक निर्भय थईने बेठां, निर्लज्ज नर ने नारी,
कुचग्रहण, चुंबन करे, कांई लज्जा न आणे हमारी । ४ ।
ओखाए उत्पात मांडियो, धाई धाई दे सांई,
प्रधान कहे, कोई पुरुष मोटो, कारण दीसे छे कांई । ५ ।
अंबुजवरणी आंखडी, ए भ्रूकुटी मुगटे चांपी,
रोमावळी वांकी वळी, वढवाने रह्यो छे टांपी । ६ ।
माळ घेर्यो सुभट सर्वे, बोलता अताड,
अहो ! व्यभिचारी जन, ऊतर हेठो एम कहे कौभांड । ७ ।
अरे ! अल्प आयुष्यना धणी, यमपुरीना मार्गस्थ,
असुरेश सरखो रिपु मस्तक, केम बेठो थई स्वस्थ । ८ ।
बाणरायनी किंकरी, तेनी अमरे न थाये आळ,
ते तुं राजकन्यानी संगे, चढी बेठो केम माळ ? । ९ ।

हो । २ (शुभ) लक्षणों से युक्त कोई (पुरुष) लघु रूप में (लघु रूप, किशोर रूप धारण करके) इस कन्या के साथ बैठा हुआ (जान पड़ता) है । जहाँ पवन (तक) का प्रवेश नहीं हो पाता, वहाँ इस कोठी में यह कैसे पैठ गया । ३ ये निर्लज्ज पुरुष और नारी निःशंक और भय-रहित होकर बैठे हैं । यह उसके कुचों को पकड़कर उसका चुम्बन कर रहा है । यह हमारा कुछ लिहाज़ नहीं कर रहा है । ’ । ४ (फिर) ओखा ने उत्पात आरम्भ किया । वह दौड़-दौड़कर (अनिरुद्ध का) आलिंगन करने लगी । (यह देखकर) मन्त्री ने कहा (सोचा)— यह कोई बड़ा (प्रतापी) पुरुष (जान पड़ता) है । इसका कुछ (ऐसा ही) कारण दिखायी दे रहा है । ५ उसके कमल के वर्ण वाले अर्थात लालिमा से युक्त नेत्र हैं; उसकी एक भौंह मुकुट से दबी (हुई-सी जान पड़ती) है । उसकी रोमावली टेढ़ी हुई है । फिर वह लड़ने के लिए उत्सुक हुआ (जान पड़ता) है । ६ (तदनन्तर) ज़ोर से बोलते-बोलते समस्त वड़े योद्धाओं ने उस भवन को घेर लिया । (उस समय) कौभाण्ड ने ऐसा कहा— ‘अहो व्यभिचारी जन, नीचे उतर जाओ । ७ अरे अल्प आयु के स्वामी, यमपुरी के पथिक, असुरेश (बाण) जैसे रिपु तुम्हारे मस्तक पर (बैठे) हैं, तो तुम चुप होकर क्यों बैठे हो । ८ बाणराज की कोई दासी हो, तो उसको पाने का हठ किसी देव द्वारा भी नहीं किया जा सकता । तुम तो (उस) राजा की (साक्षात) कन्या के साथ कोठी में चढ़कर कैसे बैठ गये हो ? । ९ सच कहो, जिससे

साचुं कहे जेम शीश रहे, कुण न्यात कुळ ने नाम ?
जथारथ होय ते बोलजे, केम सेव्युं ओखानुं धाम ? । १० ।
अनिरुद्ध वळतुं बोलियो, तमे सांभळो सुभट मात्र,
हुं क्षत्रीनंदन इच्छाथी आव्यो, बाणासुरनो जामात्र । ११ ।
मंत्री कहे अल्या बोल विचारी, ऊतरशे अभिमान,
जामात्र शानो बाळका ? कोणे आप्युं कन्यादान । १२ ।
अपराधी प्राणी ऊतर हेठो, छे बाणासुरनी आण,
आ दैत्य तारा प्राण ज लेशे, मरण आव्युं तुंज जाण । १३ ।
जीववानो उपाय नहीं, पडी जे वारे चूक,
होय केसरी तो हांकी ऊठे, पण दीसे छे जंबूक । १४ ।
बोल बळना सांभळी, बळे बोल्यो कामबाळ,
बारीनी भोगळ करमां लीधी, इच्छा कीधी देवा फाळ । १५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

फाळ देउं ने अंत लेउं, होकारो जव कीधो रे,
ओखाए अनिरुद्धने ऊंचकी घरमां लीधो रे । १६ ।

तुम्हारा सिर (बचा) रहे— तुम कौन जाति हो ? (तुम्हारा) कौन कुल है और क्या नाम है ? जो यथार्थ हो, वह कहना, तुमने ओखा के घर का आश्रय क्यों (कैसे) कर लिया ? '। १० (इसपर) अनिरुद्ध प्रत्युत्तर में बोले— ' हे सुभट, तुम मात्र सुन लो । मैं क्षत्रिय का पुत्र (हूँ), बाणासुर का दामाद (बनकर यहाँ) अपनी इच्छा से आ गया हूँ । '। ११ (यह सुनकर) मन्त्री बोला, ' अरे विचार करके बोल, (नहीं तो) तेरा अभिमान उतर जाएगा । अरे बालक, तू किसका दामाद ? तुझे किसने कन्यादान दिया ? । १२ अरे अपराधी प्राणी, नीचे उतर जा, यह बाणासुर की आज्ञा है । ये दैत्य (-राज) तेरे प्राण ही लेंगे । तू ही समझ ले, तेरी मौत (निकट) आ गयी है । १३ यदि जीवित रहने का कोई (अन्य) उपाय नहीं रहता, जिस समय कोई त्रुटि हुई रहती है, तो कोई सिंह (के समान प्रतापी हो, तो) गरज उठता है । परन्तु तू तो जम्बुक (सियार) दिखायी देता है । '। १४ उस बलवान (कौभाण्ड) के ये वचन सुनकर कामदेव के पुत्र अनिरुद्ध ज़ोर से बोलने लगे । उन्होंने खिड़की की अगरी (बेलन) हाथ में उठा ली और (नीचे लड़ने के लिए) कूद पड़ना चाहा । १५

' (अभी) कूद पड़ता हूँ और (शत्रु का) अन्त कर डालता हूँ ' —(ऐसा कहते हुए) जब अनिरुद्ध ने हुँकारी भर दी, तो ओखा ने उन्हें उठाकर घर के अन्दर रख लिया । १६

कडवुं २६ मुं—(ओखा द्वारा अनिरुद्ध को समझाने का यत्न)

राग सोरठी

कामनीए त्यारे कटक ज दीठुं, अने थई निराश,
अरे दैव, तें ए शुं कीधुं ? मने हुती मोटी आश ।
बा'ला, केम वढशो रे? मारा नांधडीआ भरथार। वा'ला० (टेक)।१।
बोलावी बोले नहीं, पडी थई आशाभंग,
उठाडी बेठी करी, तेनुं वदन निहाळे कंथ । वा'ला० । २ ।
स्वामी, तुं केम सांखीओ रे ? रांकने घेर रतन,
घाडे कष्टे हुं पामी, मारो मदनमनोहर कंथ । वा'ला० । ३ ।
तीव्र बाण ज्यारे छूटशे रे, केम सहेशो कोमळ शरीर?
एवुं श्रवणे सांभळीने, हांकी ऊठ्यो वीर । वा'ला० । ४ ।
मारा पिताने रे जाण थयुं छे, कटक मोकल्युं प्रौढ,
बाणासुर नथी जाणतो, एवो केम थयो छे ते मूढ ? । वा'ला० । ५ ।
अरे स्वामी तमे ठाले हाथे, आयुध नथी रे एक,
चार लाख वीर पाठव्या, सामा थतां धरो विवेक । वा'ला० । ६ ।

कड़वक २६—(ओखा द्वारा अनिरुद्ध को समझाने का यत्न)

उस कामिनी (ओखा) ने तब सेना ही को देखा और वह निराश हो गयी । (वह बोली—) अरे दैव, तूने यह क्या किया ? मुझे तो बड़ी आशा थी । हे प्यारे, मुझ निराधार के स्वामी, तुम (इस सेना से अकेले) कैसे लड़ोगे ? । हे प्यारे० । १ (तदनन्तर) आशा भग्न होने से वह गिर गयी । वह बुलाने पर (भी) बोल नहीं रही थी । तब उसके पति ने उसे उठाकर बैठा लिया और वे उसके मुँह को निहारने लगे । हे प्यारे० । २ (वह बोली—) 'हे स्वामी, तुम कैसे सहन करोगे । तुम मुझ रंक के घर के रत्न हो । मैं अपने मदन-से मनोहारी कान्त को बहुत कष्ट से प्राप्त हो चुकी हूँ । हे प्यारे० । ३ जब पैने बाण छूटेंगे, तब अपने इस कोमल शरीर पर तुम उन्हें कैसे सहन करोगे ? ' कानों से ऐसा सुनते ही वे वीर (पुरुष अनिरुद्ध) हुंकार भर उठे (गरज उठे) । हे प्यारे० । ४ मेरे पिता को (हमारे सम्बन्ध में) जानकारी हो गयी है, (इसलिए) उन्होंने बड़ी सेना भेज दी । (अनिरुद्ध बोले—) 'बाणासुर नहीं जानता । वह ऐसा मूढ़ कैसे हो गया है ? ' । हे प्यारे० । ५ (ओखा बोली—) 'हे स्वामी, तुम तो रीते हस्त से कैसे लड़ोगे ? (तुम्हारे पास) एक भी आयुध नहीं है । उन्होंने चार लाख वीर (सैनिक) भेजे हैं । उनके सामने आते हुए विवेक

अबळा तुंने शुं कहुं रे, तुं तो थई रे अजाण,
बार तणी भोगळ कहाडीने, लेउं सर्वना प्राण । वा'ला० । ७ ।
ओखा, तुंने शुं कहुं रे, तुं तो घेली नार,
तारा बापे वीर मोकल्या, ते तो मारे लेखे चार । वा'ला० । ८ ।
अजा तणां तांह जूथ मळियां, पंचानन मळियो एक,
तेनुं प्राक्रम केटळुं, तमे कहोनी, विनता विशेक । वा'ला० । ९ ।
एम करतां नहीं छूटीए रे, कालावाला ते फोक,
जुओने वहाली, हुं जुद्ध करुं जेम जुए गामना लोक । वा'ला० । १० ।
अनिरुद्ध मरडीने नीसर्या रे, ओखाए सहायो हाथ,
प्रीतम वढवा नहीं दउं, मारा मदनमनोहर नाथ । वा'ला० । ११ ।

धारण कर लो ' । हे प्यारे० । ६ (यह सुनकर अनिरुद्ध बोले—) ' अरी अबला, तुझे क्या बताऊँ ? तू तो अनजान हो गयी है । मैं द्वार की अगरी निकालकर उससे सबके प्राण ले लूँगा । हे प्यारे० । ७ ओखा, तुझसे क्या कहूँ ? तू तो पगली नारी है । तेरे पिता ने (जो चार लाख) वीर भेजे हैं, वे तो मेरे लेखे चार (ही) हैं । हे प्यारे० । ८ वहाँ (उस पक्ष में मानो) बकरियों का झुंड इकट्ठा हो गया है (और इस ओर) एक (मात्र) सिंह मिल गया है । अरी वनिता, तू ही कह दे न, उनका कितना खास पराक्रम (हो सकता) है । हे प्यारे० । ९ ऐसा करने से हम नहीं छूटते । तेरी यह गिड़गिड़ाहट व्यर्थ है । प्यारी, देख तो, मैं ऐसा युद्ध करूँगा जैसा कि इस नगर के लोग देखते रहें ' । हे प्यारे० । १० (ऐसा कहते हुए) अनिरुद्ध ऐंठते हुए चले गये (चले जाने लगे) तो ओखा ने उनका हाथ थाम लिया (और कहा—) ' हे प्रीतम, मेरे मदन-से मनोहारी नाथ (मदन के मन का भी हरण करनेवाले नाथ), मैं तुम्हें लड़ने नहीं दूँगी ' । हे प्यारे० । ११

कडवुं २७ मुं—(ओखा की विनती अनसुनी करके अनिरुद्ध द्वारा युद्ध करना)

राग मारुनी देशी

ओखा कहे कंथ, एम न कीजे, बळियाशुं वढतां बीहीजे,
ए घणा, तमो एक जाते, सेना मोकली मारा ताते । १ ।

कड़वक २७—(ओखा की विनती अनसुनी करके अनिरुद्ध द्वारा युद्ध करना)

ओखा बोली, ' हे कान्त, ऐसा न करना । बलवान से झगड़ा करते तुम (ज़रा) डरना । वे बहुत हैं और तुम स्वयं एक हो । मेरे पिता ने

दैत्यने वाहन ने तमे पाळा, नाथजी, तमे ठालामाला,
एने टोप, कवच ने बख्तर, तमारे अंगे सोहे पीतांबर। २ ।
दैत्यने सांग बाण बहु भाला, ए कठण, तमे सुंवाळा,
ए तो मदोन्मत बहु बळिया, तमे सुकोमळ पातळिया। ३ ।
स्वामी, पछे असुरने भेदे, पहेळां मस्तक मारुं छेदो,
तमने देखीदेखीने रे मोहुं, तमे जुद्ध करो ते केम जोउं ? । ४ ।
इच्छा अंतरनी गई फीटी, दैत्ये माळियुं लीधुं रे वींटी,
प्रभु प्राण कंपे छे मारा, मूवा दैत्य करे छे होंकारा। ५ ।
घणुं क्रोधी विरोधी छे बाण, हांके इंद्रनुं जाये ओसान,
जक्त भय पामे बाणनी हाके, बाणे पृथ्वी चढावी चाके। ६ ।
जेने नादे मेरु हाले, चक्रवर्ती साथे नहीं चाले,
क्षत्री साथे रहे सर्वे बीहीतो, नाथजी, तमे कई पेरे जीतो ? । ७ ।
मंत्री दांत रह्यो छे करडी, शुं जुओ छो मूछ रे मरडी ?
माटे पहेलां ते मुजने मारो, पछे नाथजी, रणमां पधारो। ८ ।

सेना भेज दी है। १ दैत्यों के (पास) वाहन हैं और तुम पदाती हो। हे नाथजी, तुम रीते (हाथ, शस्त्रहीन) हो। इनके पास टोप, कवच और बख्तर हैं (और) तुम्हारे शरीर पर (केवल) पीताम्बर शोभायमान है। २ दैत्यों के पास बहुत साँग, बाण, भाले हैं। ये कठोर हैं, तो तुम सुकुमार हो। ये तो मदोन्मत्त, बहुत बलवान हैं, तो तुम सुकोमल, दुबले-पतले (इकहरे बदन के) हो। ३ हे स्वामी, पहले मेरा मस्तक काट दो, अनन्तर असुरों को मार दो। तुम्हें देख-देखकर मैं मोहित होती जाती हूँ, (फिर) तुम युद्ध करोगे, तो उसे मैं कैसे देख सकूँगी (कैसे सहन कर सकूँगी)। ४ मेरे अन्तःकरण की इच्छा मिट गयी— दैत्यों ने इस कोठी को घेर लिया है। हे प्रभु, मेरे प्राण काँप रहे हैं। वे मुए दैत्य हुँकारी लगा रहे हैं। ५ (मेरे पिता) बाण बहुत क्रोधी शत्रु हैं। उनके आतंक से इन्द्र का धैर्य छूट जाता है। (उस) बाण की धाक से जगत भय को प्राप्त हो जाता है। बाण ने पृथ्वी को चाक पर चढ़ा रखा है (पृथ्वी की दुर्गत कर रखी है)। ६ हे नाथजी, जिसकी ध्वनि से मेरु हिलने लगता है, जिसके साथ चक्रवर्ती (राजा तक) चल नहीं सकते, जिसके साथ रहते समस्त क्षत्रिय डरे रहते हैं, उस बाण को तुम कैसे जीत पावोगे। ७ मन्त्री दाँत (-होंठ) चबा रहा है, तो तुम मूँछ मरोड़ते हुए क्या देख रहे हो ? (इससे कुछ नहीं होगा।) इसलिए उनसे पहले तो मुझे मार डालो। हे नाथजी, (उसके) पश्चात रणभूमि

शशी सूर्यवंशी नृप जेह, तेनी थरथर ध्रूजे देह,
प्रधान क्रोधी पावकनी ज्वाळ, तेथी विशेष बाण भूपाळ। ९ ।
एम कही भरती लोचन, देखी वारे छे स्वामिन,
कंथ कहे, न करुं संग्राम, तो नासी जवानो कुण ठाम ?। १० ।
अंत्ये जीवतां छूटशुं नहीं, कां न मरीए सामा थई ?
नथी ऊगरवानो उपाय, माटे भय पामे शुं थाय ?। ११ ।
नाठे लांछन लागे कुळमां, प्रतिष्ठा जाये एक पळमां,
मौअर बोले ने मणिधर डोले, न डोले तो सर्पने तोले। १२ ।
घन गाजे केसरी दे फाळ, न ऊछळे तो जाणवो शियाळ,
क्षत्री नासे देखीने दळ, न होय पुरुष जाणवो व्यंडळ। १३ ।
हांक्यो वाघ न मांडे कान, शार्दूल नहीं जाणवो श्वान,
घरमां गोझारो रहे पेसी, युद्धे चरणवहोणो रहे वेसी। १४ ।
एम कहीने ओखा अळगी कीधी, भड गाज्यो न भोगळ लीधी,
असुरसेना पर कोपियो, छजे थकी ठेकीने पडियो। १५ ।

में पधारो। ८ जो चन्द्रवंशी (और) सूर्यवंशी राजा हैं, उनकी देह (बाण का नाम सुनते ही) थरथर काँपने लगती है। मन्त्री क्रोधी है, (मानो) वह अग्नि की ज्वाला है। उससे भी विशेष (अधिक) है भूपाल बाण।'। ९ ऐसा कहते हुए ओखा ने आँसुओं से आँखें भर लीं। यह देखकर स्वामी (अनिरुद्ध) ने उसे रोक लिया। फिर पति (अनिरुद्ध) बोले, '(यदि) संग्राम न करूँ, तो भाग जाने के लिए कौन स्थान है ?। १० अन्त में जीवित तो छूटूँगा नहीं, तो (फिर) सामने होकर क्यों न मरें। (अब) बचने का कोई उपाय नहीं है। इसलिए भय को प्राप्त होने से क्या होगा। ११ भाग जाते हैं, तो कुल में लांछन लगता है। एक पल में (कुल की तथा अपनी) प्रतिष्ठा नष्ट हो जाएगी। मुरली (बीन) बोलती (बजती) है और (जो सच्चा) मणिधारी नाग हो, वह डोलने लगता है; यदि कोई न डोले, तो वह (साधारण) साँप के तुल्य (समान) होता है। १२ मेघ गरजता है, तो सिंह दहाड़ने लगता है। यदि उस समय वह आवेश को प्राप्त न हो जाए, तो उसे सियार समझना (पड़ता) है। यदि (शत्रु-) सेना को देखकर कोई क्षत्रिय भाग जाता हो, तो वह पुरुष नहीं है; उसे नपुंसक समझना (पड़ता) है। १३ बाघ ने गर्जन किया हो और (यदि) कोई प्राणी कान खड़े न करे, तो वह सिंह नहीं, उसे कुत्ता समझना है। कोई गो-हत्यारा पापी (ही ऐसे समय) घर में पैठकर (चुप) बैठता है, युद्ध (-भूमि) में (मानो) चरणहीन होकर बैठता है।'। १४ ऐसा

जेम ग्राह पेसे बहु जळमां, तेम अनिरुद्ध पेठो दळमां,
जेम इंदु पेसे वादळमां, तेम अनिरुद्ध धायो बळमां। १६।
दैत्यने आव्यो मृत्युनो दहाडो, गाज्यो अनिरुद्ध घन अखाडो,
पडतामां बहु पडताळ्या, भोगळप्रहारे धरणीए ढाळ्या। १७।
कौभांडे सेनाने प्रेरी, जादव जोद्धो लीधो घेरी,
गजजूथमां लघु केसरी, बहु वींटी वळ्या छे वेरी। १८।
चंदनने बावळिये झींटी, असुरे अनिरुद्धने लीधो वींटी,
दानव कहे मानव शूंय, अमे सिंहमां मृगबाळ तूंय। १९।
मुगट मंत्रीने चरणे धरे, तो तो मृत्यु थकी ऊगरे,
मंत्रीवायक एवां सांभळी, धायो अनिरुद्ध बहु ऊकळी। २०।
नाखे दैत्य भारी मुद्‌गल, तेम अनिरुद्ध भुजभोगळ,
वीश सहस्र असुर त्यां तूट्या, एकीवारे शर बहु छूट्यां। २१।

कहते हुए उन योद्धा (अनिरुद्ध) ने ओखा को अलग (दूर) कर दिया; वे गरज उठे और उन्होंने हाथ में अगरी का डण्डा ले लिया। वे असुर-सेना पर क्रुद्ध हो उठे थे। (फिर वे) छज्जे पर से छलाँग लगाकर कूद पड़े। १५ जिस प्रकार मगर बड़े जल में प्रविष्ट हो जाता है, उसी प्रकार वे (असुर-) सेना में घुस गये। जिस प्रकार चन्द्र वादल में पैठ जाता है, उसी प्रकार अनिरुद्ध (शत्रु-) सेना के अन्दर दौड़ गये। १६ दैत्यों के लिए (मानो) मृत्यु का (ही) दिन आ गया। अनिरुद्ध आषाढ़ मास के मेघ जैसे गरज उठे। उनके (ऊपर से नीचे कूद) पड़ते ही बहुत (वीर) पटक दिये गये (कुचल दिये गये)। (फिर) अगरी के डण्डे के प्रहार से धरती पर ढहा दिये (गये)। १७ (तदनन्तर) कौभाण्ड ने सेना को उकसा दिया, तो उसने यदु-कुलोत्पन्न उन वीर (अनिरुद्ध) को घेर लिया। हाथियों के झुण्ड में (जैसे कोई) छोटा सिंह हो, (उसी प्रकार) बहुत-से शत्रु (-सैनिकों) ने उन्हें घेर लिया। १८ जिस प्रकार चन्दन (वृक्ष) को बबूल वृक्ष घेर लें, उसी प्रकार असुरों ने अनिरुद्ध को घेर लिया। (तदनन्तर) दानव (कौभाण्ड) ने कहा— 'तू मानव क्या है ? हम सिंहों में तू मृग-शावक है। १९ (यदि) तू (अपना) मुकुट (उतारकर मुझ) मन्त्री के चरणों में रख ले, तो (ही) तू मौत से बच जाएगा।' मन्त्री के ऐसे वचन सुनकर अनिरुद्ध क्रुद्ध होकर दौड़े। २० दैत्यों ने भारी मुद्‌गल फेंक दिये, तो अनिरुद्ध के हाथ में अगरी थी। (उसके आघात से) वहाँ बीस सहस्र असुर कट गये। एक ही वार बहुत-से बाण छूट रहे थे। २१ (इस प्रकार) आयुधों की धारा (अनिरुद्ध पर) बरस रही थी। परिघ, पट्ट

आयुधधारा रही छे वरसी, पडे परीघ पट्टी ने फरसी,
दानव धाया छे टोळेटोळां, वरसे भिंडीमाळ ने गोळा। २२।
थाय दुंदुभिना गडगडाट, थाय खांडा तणा खडखडाट,
हांक्या हस्ती दे हलकार, थाय खड्ग तणा चळकार। २३।
मंत्र अग्निना घुघवाट, बोले बाण तणा सुसवाट,
रथ चक्र गाजे गगडाट, होय हय तणा हणहणाट। २४।
छूटे बाणो सणसणाट, थाय गगने धजा फडफडाट,
देखी दोहेलो नाथनो घाट, थाय ओखाने उचाट। २५।
दानवनो वाळ्यो दाट, अनिरुद्ध मुकामे वाट,
कोईने झीक्या झालीने केशे, कोईने उडाड्या पगनी ठेशे। २६।
कोईने हण्या भोगळने भडाके, कोनां मुख भाग्यां लपडाके,
कोई अधसरता कोई पूरा, एम सेना करी चकचूरा। २७।
ते रण भयानक भासे, बळ देखीने ओखा उल्लासे,
में तो आवडुं नहोतुं जाण्युं, चित्रलेहाए रत्न ज आण्युं। २८।

और परशु गिर रहे थे। दानव टोली-टोली में दौड़ रहे थे। भिंडिपाल और (आग-भरे) गोले बरस रहे थे। २२ दुन्दुभियों की गड़गड़ाहट हो रही थी; खाँडों की खनखनाहट हो रही थी। ज़ोर से पुकारते हुए उन्होंने हाथियों को हाँक लिया। खड्गों का चमकारा हो रहा था। २३ मन्त्र से अभिभूत अग्नि (अग्नि-अस्त्रों) की गर्जना (घहराहट) हो रही थी। बाणों की साँय-साँय हो रही थी। रथ के पहिये गड़गड़ाहट के साथ गरज रहे थे। घोड़ों की हिनहिनाहट चल रही थी। २४ बाण साँय-साँय के साथ छूट रहे थे; आकाश में ध्वजाओं की फहराहट हो रही थी। अपने स्वामी की स्थिति कठिन हुई देखकर ओखा को चिन्ता होने लगी। २५ अनिरुद्ध जिस-जिस स्थान के रास्ते (जा रहे) थे, उसपर उन्होंने दानवों का विनाश कर डाला। कुछ एक को उन्होंने बाल पकड़कर पटक डाला, तो कुछ एक को पाँव की ठोकर से उड़ा दिया। २६ किसी-किसी को अगरी (के डण्डे) से मार डाला, तो किसी-किसी के मुख को थप्पड़ से भग्न कर डाला। कोई नीचे गिर जाता, तो कोई पूरा गिर जाता (मर जाता)। इस प्रकार अनिरुद्ध ने समस्त सेना को चकनाचूर कर डाला। २७ वह रणभूमि भयानक दिखायी दे रही थी। (अनिरुद्ध के) बल को देखकर ओखा उल्लास को प्राप्त हो गयी। (उसने सोचा—) मैंने तो इतना नहीं समझा था। (सचमुच) चित्रलेखा रत्न ही ले आयी। २८ उनके शरीर में रक्त और पसीना आ गया है। मेरे नाथजी

शोणित स्वेद थयो छे डीले, नाथजी रण रुधिर झीले,
भड गाज्यो ने पड्युं भंगाण, नाठो कौभांड लईने प्राण । २९ ।
हवुं बाणासुरने जाण, एक पुरुषे वाळ्यो घाण,
असुरेशने चढियो कोप, सज्यां कवच आयुध ने टोप । ३० ।
सर्वे सैन्य ते तत्पर कीधुं, चढ्यो राय ददामुं दीधुं,
चढ्यो राये क्रोधे गडगडियो, जाण्युं ओखाए रण तात चढियो । ३१ ।
सैन्यना लोक आगळ चाल्या, करमां बहु भाला झाल्या,
वागी हाक ने चढियो बाण, ते तो थयुं ओखाने जाण । ३२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जाण थयुं जे तात चढियो, कुण जीतशे सहस्र हाथ रे,
आंसुडां भरती ने शोक धरती, ओखा साद करती नाथ रे । ३३ ।

रणभूमि में, रक्त में जलकेलि कर रहे हैं । वे योद्धा गरज उठे और सेना में भंग पड़ गयी (सेना बिखर गयी), तो (इधर) कौभाण्ड जी लेकर भाग गया । २९ बाणासुर को यह जानकारी (प्राप्त) हो गयी कि एक (मात्र) पुरुष ने सबको नष्ट कर डाला है, (तब) उस असुरेश को क्रोध आ गया । उसने कवच, आयुध और टोप धारण किये । ३० उस राजा ने समस्त सेना को तैयार किया, उसने आक्रमण किया और दुन्दुभि पर चोट कर दी । (जब) राजा ने आक्रमण किया, तो क्रोध से उसने गर्जन किया । (उसे सुनकर) ओखा ने जान लिया कि उसके अपने पिता रणभूमि की ओर चढ़ दौड़े हैं । ३१ सेना के लोग (सैनिक) आगे(-आगे) चल रहे थे । उन्होंने हाथों में बहुत भाले पकड़ रखे थे (ग्रहण किये थे) । बाण ने आक्रमण किया और (उसके फलस्वरूप) आतंक छा गया —ओखा को इसकी जानकारी हो गयी । ३२

उसे यह जानकारी हो गयी । यदि पिताजी ने आक्रमण किया, तो उनके सहस्र हाथों को कौन जीत पाएगा ? (इस विचार से चिन्तित होकर) ओखा आँखों में आँसू भरती रही और शोक करती रही । वह (फिर अपने) नाथ को पुकारने लगी । ३३

कडवुं २८ मुं—(अनिरुद्ध द्वारा ओखा की विनती अस्वीकार करना)

राग मारु

मारा स्वामीजी चतुरसुजाण, बाणदळ आव्युं रे जादवजी,
दीसे सैन्य ते चारे रे पास, हवे शुं थाशे रे जादवजी। १ ।
ए बळिया साथे बाथ, नाथ केम भीडो रे जादवजी,
हुं कहुं छुं तमारी दासी, नासीने हींडो रे जादवजी। २ ।
ओ दळ आव्युं बळवंत, दीसे रीसे राता रे जादवजी,
एकलडा असुरने मुखे, रखे तमे जाता रे जादवजी। ३ ।
ओ गज आवे बळवंत, दंत केम सहेशो रे जादवजी,
असुर अर्णव धाया, तणाया जाशो रे जादवजी। ४ ।
एवुं जाणीने ओसरीए, न करीए क्रोध रे जादवजी,
एकलडाने आशरो शानो ? मानो प्रतिबोध रे जादवजी। ५ ।
धीरा थाओ, ने धाओ, वढो तो फांसु रे जादवजी,
मारी जमणी फरके छे आंख रे, वरसे आंसु रे जादवजी। ६ ।
मने दिवस लागे छे झांखो, नाखोने भोगळ रे जादवजी,
ते तो न समजे समजाव्युं, आव्युं ए दळ रे जादवजी। ७ ।

कड़वक २८—(अनिरुद्ध द्वारा ओखा की विनती अस्वीकार करना)

मेरे चतुर सुजान स्वामीजी, हे यादवजी, बाण की सेना आ गयी। चारों ओर वह सेना दिखायी दे रही है। हे यादवजी, अब क्या होगा ? । १ हे नाथ, हे यादवजी, उन बलवानों के साथ हाथ से कैसे लड़ोगे ? हे यादवजी, मैं तुम्हारी दासी (तुमसे) कह रही हूँ— (यहाँ से) भागकर (अन्यत्र) घूमते रहो। २ हे यादवजी, वह बलवती सेना आ गयी है। उनके मुँह लाल-से दिखायी दे रहे हैं। हे यादवजी, कदाचित तुम अकेले उन असुरों के मुँह में (डाल दिये) जाओगे। ३ वे बलवान हाथी आ रहे हैं। उनके दाँत (दाँतों के आघात), हे यादवजी, तुम कैसे सहन करोगे ? हे यादवजी, असुर (-सेना) रूपी सागर (उमड़ते हुए) दौड़ रहा है, तुम उसमें बह जाओगे। ४ हे यादवजी, ऐसा जानकर पीछे हट जाएँ, क्रोध न करें। हे यादवजी, तुम अकेले के लिए किसका आश्रय (आधार) है। हे यादवजी, (मेरा यह) परामर्श मान लो। ५ हे यादवजी, धीर (धैर्यशाली) बनो और दौड़ो। यदि लड़ोगे (लड़ने जाओगे), तो मैं तुम्हें फंदे में जकड़ लेती हूँ। हे यादवजी, मेरी दाहिनी आँख फड़क रही है। (आँखों से) आँसू बरस रहे हैं। ६ हे यादवजी, मुझे (आज का) दिन

तमे मुज देहडीना हंस, मूकोने जुद्ध रे जादवजी,
पाछा वळो जी लागुं पाय, मानो मारी बुद्ध रे जादवजी। ८।
घेली दीसे घरुणी, तरुणी मूको तारी टेव रे राणीजी,
अमो बाण थकी नहि ओसरशुं, शें करुं सेव रे राणीजी। ९।
अनिरुद्ध जो रणथी भाजे, लाजे श्री गोपाळ रे राणीजी,
नाठे अर्थ न एके सीझे, शी कीजे चाल रे राणीजी। १०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चाल शी कीजे अंत आव्यो, उगारशे मोरार रे,
धस्यो नाथ ने हाथ घसिया, रोवा लागी नार रे। ११।

फीका-फीका लग रहा है, (इसलिए) यह अगरी (का डण्डा) फेंक दो न। हे यादवजी, तुम तो समझाने पर भी नहीं समझ रहे हो— यह सेना आ गयी है। ७ हे यादवजी, तुम मेरी देह के हंस अर्थात प्राण हो। (अतः) युद्ध (का) विचार छोड़ दो न। हे यादवजी, पीछे मुड़ जाओ; मैं (तुम्हारे) पाँव लगती हूँ। मेरी बुद्धि अर्थात मेरा परामर्श मान लो। ८ (इसपर अनिरुद्ध ने कहा—) 'यह घरनी तो पागल दिखायी दे रही है। री तरुणी, हे रानी, तुम अपनी यह आदत छोड़ दो। मैं बाण से पीछे नहीं हटूँगा। हे रानी, उसकी सेवा (क्यों) करूँ? । ९ हे रानी, यदि अनिरुद्ध युद्धभूमि से भाग जाए, तो श्रीगोपालकृष्ण लज्जित हो जाएँगे। हे रानी, (जीवन के चारों) अर्थ नष्ट हो जाएँगे, उनमें से एक भी सिद्ध नहीं होगा। (अतः) कैसी चाल स्वीकार करें? । १०

कैसी चाल स्वीकार करें? (अब) अन्त (निकट) आ गया है, तो श्रीमुरारि (कृष्ण) उद्धार करेंगे।' (ऐसा कहते हुए ओखा के) पति (आगे) धँस गये और (इधर) वह नारी हाथ मलती रही— वह (फिर) रोने लगी। ११

कडवुं २६ मुं—(ओखा का अनुरोध अनिरुद्ध के प्रति)

राग मेवाडो

ओखा करती ते कंथने साद, हो रे हठीला राणा,
ए शा सारु उन्माद? हो रे हठीला राणा। १।

कड़वक २६—(ओखा का अनुरोध अनिरुद्ध के प्रति)

ओखा अपने कान्त को ज़ोर से पुकारकर कह रही थी— हे हठीले

हुं तो लागुं तमारे पाय, हो रे हठीला राणा,
आवी बेसो ते माळिया मांह्य, हो रे हठीला राणा। २ ।
हुं तो बाणने करुं प्रणाम, हो रे हठीला राणा,
छे कालावालानुं काम, हो रे हठीला राणा। ३ ।
ए तो बळिया साथे बाथ, हो रे हठीला राणा,
ते तो जोईने भरि नाथ, हो रे हठीला राणा। ४ ।
ए तो तरवुं छे सागरनीर, हो रे हठीला राणा,
बळे न पामीए पेलुं तीर, हो रे हठीला राणा। ५ ।
अनेकमां एक कोण मात्र ? हो रे हठीला राणा,
सामा मळ्या छे कुपात्र, हो रे हठीला राणा। ६ ।
मने थाय छे मानशुकन, हो रे हठीला राणा,
मारुं जमणुं फरके लोचन, हो रे हठीला राणा। ७ ।
मारो तूट्यो मोतीनो हार, हो रे हठीला राणा,
डाबे नेत्रे वहे जळधार, हो रे हठीला राणा। ८ ।
दीसे नगरी ते उज्जड रान, हो रे हठीला राणा,
दीसे गगने झांखो भाण, हो रे हठीला राणा। ९ ।
रूवे श्वान, वायस ने गाय, हो रे हठीला राणा,
एवा माठा शुकन थाय, हो रे हठीला राणा। १० ।

राणा, हे हठीले राणा, यह उन्माद किसके लिए है ? । १ हे हठीले राणा, मैं तो तुम्हारे पाँव लगती हूँ। हे हठीले राणा, आकर इस कोठी के अन्दर बैठ जाओ । २ हे हठीले राणा, मैं बाण को प्रणाम करती हूँ (करूँगी) । हे हठीले राणा, यह गिड़गिड़ाने से होनेवाला काम है । ३ हे हठीले राणा, यह तो बलवान से टक्कर है। हे हठीले राणा, हे नाथ, इसे तो देखकर ही गले लगाएँ (स्वीकार करें)। ४ हे हठीले राणा, यह तो सागर के पानी में तैर(कर पार)जाना(जैसा)है। हे हठीले राणा, (अपने)बल पर उस पार को प्राप्त नहीं हो पाएँगे। ५ हे हठीले राणा, अनेकों में एक मात्र से क्या हो सकता है ? हे हठीले राणा, सामने (अनेक) कुपात्र (बुरे लोग) मिल गये हैं। ६ हे हठीले राणा, मुझे अपशकुन हो रहे हैं। हे हठीले राणा, मेरी दाहिनी आँख फड़क रही है। ७ हे हठीले राणा, मेरा मोतियों का हार टूट गया। हे हठीले राणा, (मेरी) बायीं आँख से जल-धारा बह रही है। ८ हे हठीले राणा, यह नगरी उजाड़-वीरान दिखायी दे रही है। हे हठीले राणा, आकाश में सूर्य निस्तेज दिखायी दे रहा है। ९ हे हठीले राणा, कुत्ता, कौआ और गाय रो रहे हैं। हे हठीले राणा, ऐसे अशुभ

हुं तो ध्रूजती देखुं धरण, हो रे हठीला राणा,
ए तो सागर शोणित वरण, हो रे हठीला राणा। ११।
आव्या अगणित अस्वार, हो रे हठीला राणा,
अहीं थाय छे हाहाकार, हो रे हठीला राणा। १२।
ओ दुंदुभिए वाळियो घाय, हो रे हठीला राणा,
ए सैन्य तम पर धाय, हो रे हठीला राणा। १३।
आ आव्युं दळ-वादळ, हो रे हठीला राणा,
ओ झळके भालानां फळ, हो रे हठीला राणा। १४।
पाखर बख्तर पहेर्यां टोप, हो रे हठीला राणा,
दैत्य भराया आवे कोप, हो रे हठीला राणा। १५।
ओ वाजे घूघरमाळ, हो रे हठीला राणा,
अश्व देता आवे फाळ, हो रे हठीला राणा। १६।
ए तो शूरवीर महाकाळ, हो रे हठीला राणा,
पडे पेटडियामां फाळ, हो रे हठीला राणा। १७।
नाथ जुओ विचारी मन, हो रे हठीला राणा,
जुद्ध रहेवा द्यो राजन, हो रे हठीला राणा। १८।
जो लोपो मारी वाण, हो रे हठीला राणा,
तमने पितामहनी आण, हो रे हठीला राणा। १९।

शकुन हो रहे हैं। १० हे हठीले राणा, मैं तो धरती को काँपती हुई देख रही हूँ। हे हठीले राणा, यह सागर रक्तवर्ण हो गया है। ११ हे हठीले राणा, अनगिनत (घुड़-)सवार आ गये हैं। हे हठीले राणा, यहाँ हाहाकार मच रहा है। १२ हे हठीले राणा, दुन्दुभि पर चोट की जा रही है (दुन्दुभि बज रही है)। हे हठीले राणा, यह सेना तो तुम्हारी ओर दौड़ रही है। १३ हे हठीले राणा, यह भारी सेना (रूपी आँधी) आ रही है। हे हठीले राणा, ये भालों के फाल चमक रहे हैं। १४ हे हठीले राणा, उन्होंने पाखर (लोहे की झूल), बख्तर और टोप पहन लिये हैं। हे हठीले राणा, क्रुद्ध होकर दैत्य आ रहे हैं। १५ हे हठीले राणा, वह घुँघरुओं की माला बज रही है। हे हठीले राणा, घोड़े छलाँग लगाते हुए आ रहे हैं। १६ हे हठीले राणा, ये तो शूरवीर महाकाल (जैसे) हैं। हे हठीले राणा, (भय से) कलेजा मुँह को आ रहा है। १७ हे नाथ, हे हठीले राणा, मन में विचार करके देखो। हे हठीले राणा, हे राजन, युद्ध रहने दो (न होने दो)। १८ हे हठीले राणा, यदि मेरी बात का लोप करोगे (न मानोगे), तो हे हठीले राणा, तुम्हें तुम्हारे अपने पितामह की सौगन्ध है। १९

आव्यो बाण ते प्रलयकाळ, हो रे हठीला राणा,
मेघाडंबर छत्र विशाल, हो रे हठीला राणा। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मेघाडंबर छत्र बिराजे, ऊलटी नगरी बद्ध रे,
अगणित अस्वार आविया, तेणे वींटी लीधो अनिरुद्ध रे। २१।

हे हठीले राणा, बाण आ गया है— (मानो) वह प्रलयकाल है। हे हठीले राणा, अम्बारी पर विशाल छत्र है। २०

अम्बारी पर छत्र विराजमान है। समस्त नगरी उमड़ कर आ गयी। अनगिनत (घुड़-)सवार आ गये और उन्होंने अनिरुद्ध को घेर लिया। २१

कडवुं ३० मुं—(युद्ध में बाणासुर द्वारा अनिरुद्ध को नागपाश में आबद्ध करना)

राग सामेरी

आवी सेना असुरनी, अनिरुद्ध लीधो घेरी,
कामकुंवरने मध्ये आणी, वींटी लीधो चोफेरी। १।
अमर कहे शुं नीपजशे, इच्छा ते परमेश्वरी,
रिपुगजना यूथमां, अनिरुद्ध लघु केसरी। २।
बाणरायने शुं करे ? भोगळ लीधी फोकट,
वेरी वायस कोटी मळ्यो, त्यां केम जीवे पोपट ?। ३।
बाणासुरे सुभट वार्या, कोई न करशो घात,
छे वीर थोडी वय तणो, हुं पूछुं एने वात। ४।

कड़वक—३० (युद्ध में बाणासुर द्वारा अनिरुद्ध को नागपाश में आबद्ध करना)

असुरों की सेना आ गयी। उसने अनिरुद्ध को घेर लिया। उसने कामदेव (प्रद्युम्न) के उन कुमार को (अपने) बीच में (रख) लेते हुए चारों ओर से घेर लिया। १ (तब आकाश में इकट्ठा हुए) देव (यह देखकर) बोले, '(इससे) क्या उत्पन्न हो जाएगा ? यह तो भगवान की इच्छा (जान पड़ती) है। शत्रु रूपी हाथियों के झुंड में अनिरुद्ध रूपी छोटा सिंह (सिंह-शावक फँस गया) है। २ वह बाणराज का क्या कर सकता है (क्या बिगाड़ सकता है) ? उसने व्यर्थ ही (हाथ में) अगरी (पकड़) ली है। वैरियों के रूप में करोड़ों कौए इकट्ठा हो गये हों, तो वहाँ (ऐसी स्थिति में उनके बीच) तोता कैसे जीवित रह सकता है ?'। ३

माळियेथी ओखा नीरखे, रुदन मूक्युं छोडी,
ओ जीवन पूंठे योद्धा ऊभा, रह्या बेउ कर जोडी। ५।
बळवंत बहेके अति घणुं, सेना छे बिहामणी,
ओ पवनवेगी पाखरा, हय आव्या ते हणहणी। ६।
ए सुभटे भाथा भीडिया, हींडिया स्वामी भणी,
ओ खड्ग खेडां झळकतां, चळकतां भालांनी अणी। ७।
ओ गज आव्या सामटा, हय हीसंता हणहणी,
टोप टोडर पहेर्यां बख्तर, छे सेना बिहामणी। ८।
आ दळ बळनुं केम सहेशो, स्वामी कोमळ ?
प्राणनाथ पीडशे प्रगट्यां, ते कर्मनां फळ। ९।
देवना दीधां दैत्यने, दया नहीं लवलेश,
लघुवयमां छो कंथजी, नथी आव्या मूछे केश। १०।
चार दिवसनुं चांदरणुं, सुखडुं गयुं ते वही,
पापी पीडे छे प्रभुने, करमडा जाउं क्यहीं। ११।

बाणासुर ने (अपने) बड़े-बड़े योद्धाओं को (यह कहते हुए) रोक लिया, '(इसपर तुममें से) कोई भी आघात न करे। यह वीर तो छोटी अवस्था वाला है। इससे मैं (एक) बात पूछता हूँ।'। ४ कोठी पर से ओखा यह देख रही थी। उसने (अब) रोना बन्द किया था। (उसने मन ही मन कहा—) ओ मेरे जीवन, (तुम्हारे) पीछे (चारों ओर अपने स्वामी के सामने) दोनों हाथ जोड़े योद्धा खड़े रह गये हैं। ५ वे बलवान (सैनिक) अत्यधिक बहक रहे हैं (आपे से बाहर होते जा रहे हैं)। वह सेना भयावह है। पवनवेगी पक्षियों जैसे ये घोड़े हिनहिनाते हुए आ गये हैं। ६ उन योद्धाओं ने भाथे कसकर बाँध लिये हैं; वे (आप मेरे) स्वामी की ओर चले आ रहे हैं। (उनके) खड्ग और ढालें चमक रहे हैं; भालों की अनियाँ (फल) चमक रही हैं। ७ हाथी इकट्ठा होकर आ गये हैं; घोड़े हिनहिनाते हुए उत्कण्ठित हो रहे हैं। योद्धाओं ने टोप, टोड़र और बख्तर धारण किये हैं। यह सेना डरावनी (दिखायी दे रही) है। ८ हे मेरे सुकुमार स्वामी, इस शक्तिशाली सेना को तुम कैसे सहन कर पाओगे ? हे मेरे प्राणनाथ, वे (सैनिक) तुम्हें पीड़ा पहुँचाएँगे। (हमारे पूर्वकृत) कर्मों के फल (ही मानो उस सेना के रूप में) प्रकट हो गये हैं। ९ इन दैत्यों को देव द्वारा दया का लवलेश (तक) नहीं दिया हुआ है। हे कान्त, तुम तो छोटी अवस्था के हो; तुम्हारे मूँछें (तक) नहीं निकल आयी हैं। १० चाँदनी चार दिन की होती है। (हमारा मिलन का) वह

कंथजी मारो एकलो, वींटी वळ्या असुर,
एवुं जाणीने सहाय करजो, शामळिया श्वसुर। १२।
कष्टनिवारण कृष्णजी, हुं थई तमारी वधू,
जो आशा अमारी भांगशो, लाजशे जदुकुल बधुं। १३।
प्रजा प्रतिपालन करो छो, पनोता श्रीमुरारी,
संभाळ सर्वनी कीजीए, न मूकीए विसारी। १४।
अमने आशा तम तणी छे, अमो तमारां छोरुं,
लाज लागे वृद्धने, कोई कहेशे काळुं गोरुं। १५।
एवुं जाणी आवजो, छो दामोदरजी दक्ष,
पक्षी पलाणो प्रभुजी, पुत्रनी करवा पक्ष। १६।
भगवंत भजती भामनी, भरथार रिपुदल मध्य,
कोई कहे पिता बाणने, ए बाळक ने तुं वृद्ध। १७।
गद्‌गद कंठे गोरडी, गतिभंग जाणे घेली,
एवुं इच्छुं छुं जे प्राण ज काढुं, मरुं ते संग्राम पहेली। १८।

सुख समाप्त हो गया। वे पापी (अब) मेरे प्रभु को पीड़ा पहुँचा रहे हैं। रे दैव, मैं (इस स्थिति में) कहाँ जा सकती हूँ ?। ११ मेरे कान्त (पति) अकेले हैं; उनको असुर घेर चुके हैं। हे साँवरिया श्वसुर (श्रीकृष्णजी), ऐसा जानकर सहायता करना। १२ हे कष्ट-निवारण करनेवाले कृष्णजी, मैं तुम्हारे (कुल की) बहू हो गयी हूँ। (अतः) यदि हमारी आशा को भग्न कर दोगे, तो समस्त यदुकुल लज्जा को प्राप्त हो जाएगा। १३ हे मंगल-कर्ता श्रीमुरारि, तुम प्रजा का पालन किया करते हो। (अतः) सबकी देखभाल (रक्षा) करो। हमें भुला देकर न छोड़ो। १४ हमें तुम्हारी (ही) आशा है। हम तुम्हारी सन्तान हैं। (बुरे हेतु का आरोप लगाते हुए) कोई हमें भला-बुरा कहेगा, तो (कुल के) वृद्धों अर्थात् बड़े-बूढ़ों पर दोष आता है। १५ ऐसा समझकर (हमारी सहायता के लिए) आ जाना। हे दामोदरजी, तुम दक्ष हो। हे प्रभुजी, अपने पुत्र (के पुत्र) का पक्ष लेने के लिए (गरुड़) पक्षी पर विराजमान होते हुए धावा बोल दीजिए। १६ हे भगवान, यह भामिनी (स्त्री) तुम्हारी भक्ति कर रही है। मेरे पति शत्रु-दल के बीच में (फँस गये) हैं। कोई मेरे पिता बाण से कह दे— यह (अनिरुद्ध) बालक है और तुम वृद्ध हो (अतः तुम्हारा यह व्यवहार उचित नहीं है)। १७ वह गोरी (ओखा) गद्‌गद हो गयी (उसका गला रुँध गया)। किसी पागल की भाँति उसकी (विचार की) गति भग्न हो गयी— अर्थात् वह अधिक

मुख वक्र बिहामणां छे, मूछ मोटी मोटी,
एवा असुर आवी मळ्या, संख्या थई सप्त कोटि। १९।
दळवादळ सैन्य ऊलट्युं, मध्य आण्यो अनिरुद्ध,
वीर वींट्यो वेरीए, जेम मक्षिकाए मध। २०।
धनुष धरियां पांच सें, बाणे चढाव्यां बाण,
राग मारु गाय गुणीजन, गडगडियां निशान। २१।
गगने आभ ज ढांकियो, शोभियो जेम इंदु,
उपमा ते उडुगण तणी, ललाटे स्वेदनां बिंदु। २२।
लघु कुंजरनी सूंढ सरखा, शोभीता बे भुज,
शरासन सरीखी भ्रूकुटी ने, नेत्र बे अंबुज। २३।
तृण मात्र त्रेवडतो नथी, बाणने ते महाबाहु,
असुर हाथे शोभियो, जेम चंद्रमा ने राहु। २४।
जादवे जोयुं वक्र दृष्टे, रातां कीधां चक्ष,
वपु शोभे भुज फूल्युं, जेम अरण्यनुं वृक्ष। २५।

सोचने में असमर्थ हो गयी। वह अबला मन में यह चाह रही थी— (इनके) उस संग्राम के पहले मैं मर जाऊँ। १८ उन (असुरों) के मुख टेढ़े-मेढ़े थे, डरावने थे। उनकी मूँछें बड़ी-बड़ी थीं। ऐसे वे असुर आ (-आ) कर इकट्ठा हो गये। उनकी संख्या सात करोड़ हो गयी। १९ दल-बादल अर्थात् बहुत बड़ी सेना उमड़ आयी। उसने अपने बीच में अनिरुद्ध को ला रखा (घेर रखा)। जैसे मधु (-बिन्दु) को मक्खियाँ घेर लेती हैं, वैसे ही शत्रु ने उस (अकेले) वीर को घेर लिया। २० बाण ने (अपने एक सहस्र हाथों में) पाँच सौ धनुष ग्रहण किये और उन पर बाण चढ़ा दिये। गुणीजन अर्थात् गायक कलाकार मारू राग अलाप रहे थे। नगाड़े बज रहे थे। २१ बादलों से आकाश ढक गया हो तो चन्द्र (जैसे) शोभायमान होता है; (वैसे शत्रु-दल से घिरे हुए अनिरुद्ध शोभायमान जान पड़ते थे)। उनके ललाट पर पसीने की बूँदें थीं; उनके लिए उडुगण अर्थात् तारों के समूह की उपमा (योग्य) है। २२ उनके दोनों बाहु छोटे हाथी की सूँड़ के समान शोभायमान थे। उनकी भौंहें धनुष जैसी थीं, उनके दोनों नेत्र (मानो) कमल थे। २३ ऐसे वे अनिरुद्ध महाबाहु बाणासुर को घास मात्र— घास (के तिनके) के बराबर तक नहीं गिनते थे। वह असुर (बाण) और अनिरुद्ध वैसे ही शोभायमान थे, जैसे राहु और चन्द्रमा (शोभायमान दिखायी देते) हों। २४ यादव (वीर अनिरुद्ध) ने (उस असुर की ओर) टेढ़ी दृष्टि से देखा— उसने अपने नेत्रों

आ समे, जो होत कुहाडो, अथवा भोगळे धार,
असुरने हळवे करत, उतारत भुजनो भार। २६।
शुं वस्युं बाणनुं दिल छे, तेमां वसे सर्पनो साथ,
पंडमां पूर्वज रह्या, पिंड लेवा काढे हाथ। २७।
काष्टना के लाखना, शुं मीणना चोहोड्या कर,
अथवा कोई पक्षी दीसे छे, विफराव्या छे पर ?। २८।
तव हास्य आव्युं बाणने, बाळक केवळ बाळ,
कौभांड कहे अज्ञान नथी, राय तमने दे छे गाळ। २९।
बळीसुत अंतर बळियो, बोल्यो बाळक बळवान,
शुं करुं जे लांछन लागे, नहीं तो देत कन्यादान। ३०।
सुभट निकट राय सर्वे, बोलिया बहु गर्वे,
निपट लंपट नथी वीतो, धाया हणवा सर्वे। ३१।
कुळलजामणो कुण छे, तस्कर नर निर्लज्ज,
अपराध करी केम ऊगरशे, सिंहना मुखथी अज ?। ३२।

को (क्रोध से) लाल बना लिया था। उसके शरीर में (एक सहस्र) हाथ शोभा दे रहे थे— मानो अरण्य का कोई वृक्ष फूल गया हो। २५ (यह देखकर अनिरुद्ध ने कहा—) इस समय यदि (मेरे पास) कुल्हाड़ा (परशु) होता, अथवा (मेरे पास की) इस अगरी की धार (तीक्ष्ण) होती, तो मैं इस असुर को हलका कर देता— इसके बाहुओं के बोझ को उतार देता। २६ क्या बाण का शरीर कोई बिल है और उसमें उसे साँपों का साथ रहता है ? (अथवा) उसके शरीर में उसके पूर्वज रह रहे हों, और उन्होंने पिंड लेने के लिए हाथ (बाहर) निकाले हों। २७ क्या उसने काठ के अथवा लाख के या मोम के हाथ (बनाकर अपने शरीर में) चिपका लिये हैं ? अथवा यह कोई पक्षी दिखायी दे रहा है, जिसने अपने परों को फैला दिया है। २८ तब बाण को हँसी आ गयी। (वह बोला—) यह बालक केवल बच्चा (अज्ञान) ही है। इसपर कौभाण्ड बोला— यह अज्ञान नहीं है। हे राजा, यह तुम्हें गालियाँ दे रहा है। २९ (यह सुनकर दैत्यराज) बलि का पुत्र (बाणासुर) अन्तःकरण में जल उठा और बोला— यह बालक बलवान (जान पड़ता) है। क्या करूँ जो लांछन लग जाएगा— नहीं तो मैं उसे कन्या दान दे देता। ३० (फिर) राजा (बाण) उस सुभट (बड़े योद्धा, अनिरुद्ध) के पास आ गया और बहुत घमण्ड से बोला, 'हे निपट लम्पट, तुझे मार डालने के हेतु सब दौड़े, (फिर भी) तू नहीं डर रहा है। ३१ अपने कुल को लज्जित कर देनेवाले चोर, निर्लज्ज नर, तू कौन

गम नहि अमरने, तो केम आवतां फाव्युं ?
अज्ञाने आवी चड्यो, के भूते मनडुं भमाव्युं ? । ३३ ।
शके स्वर्गथी नांखियो, कांई कारण सरखुं भासे,
साचुं कहीश तो नहीं हणुं, बाळ, रहेजे विश्वासे । ३४ ।
कोण कुळमां अवतर्यो ? कोण मात तात ने गाम ?
अनिरुद्ध कहे, विहीवा मळ्यो, हवे न्यातकुळनुं शुं काम ? । ३५ ।
पितु पितामह माहरा, ते प्रसिद्ध छे संसार,
चोरी छत्रपतिनी करी, तुं चतुर होय तो विचार । ३६ ।
जादवकुळ छे मुज तणुं, मुज नाम छे अनिरुद्ध,
जो छेडशो तो समुद्र मांही, नाखीश नगरी बद्ध । ३७ ।
बाण सामुं जोईने, कौभांड वळतुं भाखे,
चोरी करी कन्या वरे, कुण विना जादव भाखे ? । ३८ ।
पौत्र जाणी कृष्णनो, बाणे ते घसिया कर,
नीच वरे कन्या वरी, करमडा बेठुं घर । ३९ ।

है ? अपराध करके बकरा सिंह के मुख से कैसे बचेगा । ३२ (जहाँ) देवों का भी गमन नहीं हो पाता, (वहाँ) तुझे आते कैसे बना ? तू अज्ञान में आकर (ऊपर) चढ़ गया है; अथवा किसी भूत-पिशाच ने तेरे मन को भ्रम में डाल दिया ? । ३३ जान पड़ता है, किसी कारण से इन्द्र ने तुझे स्वर्ग में से फेंक दिया है । रे बालक, विश्वास में रहना (विश्वास कर) —सच्चा कहेगा, तो नहीं मार डालूँगा । ३४ तू किस कुल में उत्पन्न हुआ ? तेरे माता, पिता और ग्राम कौन है ? ' (यह सुनकर) अनिरुद्ध बोले— मैं विवाह के लिए (ओखा से) यहाँ मिल गया हूँ; अब जाति-कुल (पूछने और जानने) से क्या काम ? । ३५ मेरे (जो) पिता, पितामह (हैं, वे) संसार में विख्यात हैं । मैंने छत्रपति (राजा) की (कन्या की) चोरी की है; तुम चतुर हो, तो विचार करो (और देख लो) । ३६ मेरा कुल यादवकुल है, मेरा नाम अनिरुद्ध है । यदि (मुझे) छेड़ोगे, तो मैं यह समस्त नगरी समुद्र में फेंक दूँगा । ३७ बाण को सामने (बाण की ओर) देखकर कौभाण्ड ने उलटे (प्रत्युत्तर में) कहा— ' चोरी करके कन्या का वरण (जिसने) किया है, वह यादव के सिवा (और) कौन हो सकता है ? ' । ३८ (तब अनिरुद्ध को) कृष्ण का पोता जानते ही बाण हाथ मलने लगा । (उसने कहा—) नीच (कुल में उत्पन्न) वर ने (मेरी) कन्या का वरण किया है और हे दैव, मैं घर में (चुप) बैठा हूँ । ३९ (फिर) गुस्से से उसका अन्तःकरण जल उठा । तो बाण ने धनुष ग्रहण किये ।

रीसे ते अंतर परजळ्यो, धनुष धरियां बाण,
मंत्रीने महाराज कहे छे, जोद्धो मोटो जाण। ४०।
हांकीने अनिरुद्ध वकार्यो, थयो ते दारुण शोर,
ओखा नेत्रे नीर भरे जे, कंथने पहोंचे जोर। ४१।
असुर बळिया प्राक्रमी, ऊछळता दे फाळ,
दशे दिशाथी वछूट्या, कहे न जाय जीवतो बाळ। ४२।
परिघ पट्टी गुरज गदा, त्रिशूल ने तोमर,
मोगरी मुसळ सरस कांती, ढाकी लीधो कुंवर। ४३।
अंधकार माया आसुरी, वरसे शल्या शिखर,
पडे हय हस्तीने चंमर, वहे मांस ने रुधिर। ४४।
हय गज रथ लथबथ अटके, लटके छे वाहन,
दुंदुभि गडगडे खेडां खडखडे, रणमां पड्या बहुजन। ४५।
सांग सळके खड्ग चळके, झळके भालानी अणी,
रिपुलाखनी लाखमां, अनिरुद्ध जडियो छे मणी। ४६।
फेरवी भोगळ बळ करी, रिपुदल दळ्युं जदुजोद्ध,
ताड्या पछाड्या आडा पड्या, करी कामकुंवरे क्रोध। ४७।

(यह देखकर) कौभाण्ड ने राजा (बाण) से कहा— 'इसे बड़ा योद्धा समझिए (छोटा नहीं)।'। ४० (तदनन्तर) उसने (बाण ने) हाँक लगाते हुए अनिरुद्ध को उकसाते हुए क्रुद्ध कर दिया, तो दारुण शोर मच गया। (इधर) ओखा आँखों में अश्रुजल भरने लगी (आँखों से आँसू बहाने लगी), जो उसके पति को ज़ोर (बल) पहुँचा रहा था। ४१ बलवान प्रतापी असुर उछलते हुए छलाँगें लगाने लगे। वे दसों दिशाओं से (आगे) निकल पड़े। वे कह रहे थे— यह बच्चा जीवित (छूट) न जाए। ४२ उन्होंने उस कुमार को परिघों, पट्टों और मुद्गरों, गदाओं, त्रिशूलों और तोमरों, मुगरियों, मूसलों और परशुओं से (मानो) ढाँक लिया। ४३ आसुरी माया से निर्मित अँधेरे में शिलाओं और (पर्वत-) शिखरों की वर्षा होने लगी। घोड़े, हाथी और चामर गिरने लगे और मांस तथा रक्त बहने लगा। ४४ घोड़े, हाथी, रथ (रक्त से) लथपथ होने से वाहन (बीच में ही) अटक रहे थे। दुन्दुभियाँ घहरा रही थीं, ढालें खड़खड़ा रही थीं। युद्धभूमि में बहुत लोग गिर गये। ४५ साँगें खटखटा रही थीं, खड्ग चमक रहे थे और भालों की अनियाँ चमक रही थीं। लाखों शत्रु रूपी लाक्षा में अनिरुद्ध मानो रत्न (की भाँति) जड़े हुए (जान पड़ते) थे। ४६ वे बलपूर्वक अगरी घुमा रहे थे। उन्होंने

अंग रातां शीश फाट्यां, शूरा धरणीए पाड्या,
पलवट वाळी प्राक्रमी, बहु जोद्धाने नसाड्या । ४८ ।
भुज विशे भोगळ धरी, देतो अनिरुद्ध मार,
हय गज रथ पाळा सर्व नाठा, हवो तो हाहाकार । ४९ ।
प्रहार पूरण रथ चरण, गज अश्व पाछा वळ्या,
शोणितपुर भणी चाल्या, वीर धरणी उपर ढळ्या । ५० ।
रणमां ते रोळी मूकतो, अनिरुद्ध इंद्र समान,
असुर सुरथी नासता, शार्दलथी जेम श्वान । ५१ ।
हैडुं ते हरख्युं नारनुं, सुणी नाथने होंकार,
अनिरुद्ध तारुणी देखतां, कीधुं सैन्य तारेतार । ५२ ।
दश सहस्र जोद्धा बाणना, मारी कीधा चकचूर,
समुद्रमां संगम हवो, वह्युं ते शोणित पूर । ५३ ।
बुंबाण पड्युं रण विषे, करे असुर नासानास,
भंगाण देखी बाण धसियो, सज्यो ते नागपाश । ५४ ।

शत्रुदल को पीस डाला । उन काम-कुमार ने क्रोध करते हुए (क्रुद्ध होकर शत्रुपक्ष के वीरों को) पीट दिया, पछाड़ डाला, आड़े गिरा दिया । ४७ उन (वीरों) के अंग रक्त से लाल हो गये; उनके मस्तक फट गये । उन शूरों को (अनिरुद्ध ने) धरती पर गिरा डाला । (इसके अतिरिक्त) उन पराक्रमी (कुमार) ने बहुत योद्धाओं को भगा दिया । ४८ हाथों में अगरी पकड़कर अनिरुद्ध उससे (असुरों पर) आघात कर रहे थे । (उससे) घोड़े, हाथी, रथ, पदाती —सब भाग गये, तो हाहाकार मच गया । ४९ (अगरी के) प्रहार से रथ पूर्णतः चूर-चूर हो रहे थे । हाथी, घोड़े पीछे लौटने लगे और शोणितपुर की ओर जाने लगे । वीर धरती पर ढहते जा रहे थे । ५० (सबको) चूर-चूर करके अनिरुद्ध इन्द्र के समान (शोभायमान दिखायी दे रहे) थे । जिस प्रकार कुत्ते सिंह से (डरकर) भाग जाते हैं, उस प्रकार असुर (अनिरुद्ध-स्वरूप) देव से भागते जा रहे थे । ५१ (यह देखकर) उस नारी (ओखा) का हृदय आनन्दित हो उठा । उसने अपने पति की हुँकारी सुनी । (इधर) अनिरुद्ध ने (भी) उस तरुणी के देखते रहते, (शत्रु-) सेना को तार-तार कर डाला (तितर-बितर कर डाला) । ५२ उन्होंने बाण के दस सहस्र योद्धाओं को मार-मारकर चकनाचूर कर डाला । रक्त का रेता बहने लगा । उसका समुद्र में संगम हो गया । ५३ रणभूमि में शोर मच गया । असुर (जी लेकर) भाग रहे थे । इस विनाश को देखकर बाण आगे धँस (घुस) गया । उसने

भोगळ छेदी भुज तणी, मूक्या ते सहस्र ज सर्प,
कामकुंवरने बांधियो, पछे गाजियो छे नृप । ५५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नगरपति गाजियो मेघनी पेरे, उतरावी ओखाय रे,
वरकन्याने बंधन करी, पछे बाण मंदिर जाय रे । ५६ ।

नागपाश सज्ज किया । ५४ उस राजा ने (अनिरुद्ध के) हाथों की अगरी को छेद डाला और सहस्रों सर्पों को छोड़ दिया, काम-कुमार को आबद्ध कर डाला और वह गरज उठा । ५५

(शोणितपुर) नगर का अधिपति (बाण) मेघ की भाँति गरज उठा और उसने ओखा को (स्तम्भ-भवन से) उतरवा लिया । (तदनन्तर) वर (अनिरुद्ध) और (अपनी) कन्या को आबद्ध करके वह फिर अपने प्रासाद (की ओर) चला गया । ५६

कडवुं ३१ मुं—(अनिरुद्ध को देखकर लोगों का प्रभावित होना)

राग रामग्री

बंन्योने बाणे बांधियां, नौतम नर ने नार,
अनिरुद्ध राख्यो मुख आगळे, गुप्त राखी कुमार । बंन्योने० । १ ।
चौटामां चोर जणावियो, ढांक्यो व्यभिचार,
छानी ओखा मंदिर मोकली, राख्यो कुळनो रे भार । बंन्योने० । २ ।
छे शरदऋतु तडको घणो, तपे तावड शिर,
केसर रंगनी अर्चना, भींज्युं सघळुं शरीर । बंन्योने० । ३ ।

कड़वक ३१—(अनिरुद्ध को देखकर लोगों का प्रभावित होना)

बाण ने उन दोनों को, अर्थात् नवतम पुरुष और स्त्री को (अभी-अभी परिणीत अनिरुद्ध-ऊषा को) बाँध लिया । उसने अनिरुद्ध को अपने मुख के सामने रखा और कुमारी (ओखा) को गुप्त अर्थात् छिपाये रखा । उन दोनों को० । १ उसने उन (अनिरुद्ध) को (नगर के) हाटों में चोर जतला दिया । इस प्रकार (उन दोनों के) उस व्यभिचार को छिपा रखा । उसने ओखा को प्रासाद में गुप्त रीति से छोड़ दिया और (इस प्रकार) कुल की प्रतिष्ठा की रक्षा की । उन दोनों को० । २ (उन दिनों) शरदऋतु थी; धूप कड़ी थी; सिर पर धूप लग रही थी । (अनिरुद्ध के मस्तक पर) केसरिया रंग का तिलक लगा हुआ था ।

लक्षणवंतो हींडे लहेकतो, बहेकतो बहु वास,
दैत्यनुं दळ पूंठे पळे, दोरी हींडे छे दास । बंन्योने० । ४ ।
पेच छूट्यो पाघडी तणो, आव्यो पाग प्रमाण,
चोरे मोरज मारियो, करे लोक वखाण । बंन्योने० । ५ ।
ओखा जो पुनरपि परणशे, हशे भव्य भरथार,
ते स्वामीशुं सुख पामशो, लीधो एणे सार । बंन्योने० । ६ ।
को कहे दैवत एहमां, दीसे रूप रसाळ,
कटाक्षमां कामनी पडे, जोवामां मोहजाळ । बंन्योने० । ७ ।
भुलवणी भ्रूकुटी विषे, भली भूले रे नार,
कुंवारी कन्याने कामण करे एवो कामकुमार । बंन्योने० । ८ ।
चिह्न कंठे काकण तणां, पड्यां भामनी भुजदंड,
ओखाए अमृत चाखियुं, कीधो अधरने खंड । बंन्योने० । ९ ।

(स्वेद-जल से) उनका समस्त शरीर भीग गया । उन दोनों को० । ३ सुलक्षणों से युक्त वे (अनिरुद्ध) झूमते हुए चल रहे थे । वे (मानो) उस सुगन्ध से मारे नशे के चूर हो गये थे । दैत्यों का दल उनके पीछे-पीछे चल रहा था । दास दौड़ते हुए जा रहे थे । उन दोनों को० । ४ उनकी पगड़ी का पेंच खुल गया और वह पाँवों तक (लटकता हुआ) आ गया । (मानो) चोर अधिक प्रभावशाली हो गया । लोग (उस चोर अर्थात् अनिरुद्ध की) प्रशंसा कर रहे थे । उन दोनों को० । ५ (वे कह रहे थे—) यदि ओखा फिर से भी परिणय करे, तो (उसके लिए) यह गौरवशाली पति (सिद्ध) होगा । वह इस पति से सुख को प्राप्त हो जाएगी । उसने इससे अच्छी बात ग्रहण की है । उन दोनों को० । ६ कोई-कोई कह रहा था— इसमें देवत्व (अर्थात् देव के लक्षण, दिव्यत्व) है । (इसलिए तो उसका) रूप (इतना) सुन्दर दिखाई दे रहा है । वह देखने में मोह का जाल है, जिस पर दृष्टिपात करते ही कामिनियाँ उसमें पड़ जाएँगी (मोहित होंगी, मोह-जाल में उलझ जाएँगी) । उन दोनों को० । ७ उसकी भौंहों में मोहिनी है, जिससे भली-भली नारियाँ (भी) भुलावे में आ-जा सकती हैं । वह क्वाँरी कन्याओं को सम्मोहित करके अपने वश में कर सकता है —ऐसा है यह कामदेव (प्रद्युम्न) का पुत्र । उन दोनों को० । ८ उसके कण्ठ में कंकण के चिह्न अंकित हैं —(जान पड़ता है कि ओखा जैसी किसी) कामिनी के बाहु उसमें डाले हुए हों । ओखा ने (स्वयं) उसके अधरामृत को चख लिया है और उसने उसके होंठों को काट लिया है । उन दोनों को० । ९ उनके शरीर के अंगों को देखते हुए एक सखी

सखी प्रत्ये सखी कहे, देखी अंगअवेव,
बांध्यो ए जुवे आपण भणी, एनी एवी शी टेव ? । बंन्योने० । १० ।
आशा पहोंती मास चारमां, लीधो स्नेहनो स्वाद,
सुखेथी भरम भाग्यो घणो, लाग्यो लोकापवाद । बंन्योने० । ११ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

लाग्यो लोक अपवाद रे, पाम्यो देवकन्याय रे,
बाणासुरे अनिरुद्धने राख्यो, कारागृहनी मांह्य रे । १२ ।

दूसरी सखी से बोली— बाँधे हुए होने पर भी वह हमारी ओर देख रहा है। इसकी यह ऐसी क्या टेव है ? उन दोनों को० । १० (ओखा की) आशा चार मासों में पूरी हो गयी है। उसने उनके स्नेह का स्वाद भी (जान) लिया है। अब निःसन्देह उसका भ्रम भंग हो गया है और उसे लोकापवाद लग गया है। उन दोनों को० । ११

उसे लोकापवाद तो लग गया, फिर भी वह इस देव-कन्या को प्राप्त हो गया है। (तदनन्तर) बाणासुर ने ओखा और अनिरुद्ध को कारागृह में रख दिया। १२

कडवुं ३२ मुं—(नारद-अनिरुद्ध-भेंट)

राग आशावरी

श्री शुकदेवजी एम कहे कथा, सांभळ परीक्षित राय,
कामकुंवर ने कन्या राख्यां, कारागृहनी मांह्य । १ ।
नानाविधनां बंधन बांध्यां, कहाडी न शके श्वास,
एक एकना मुख देखी दयामणां, थाय अति उदास । २ ।
बीक बाणासुर तणी, राणी भरे छे चक्ष,
पुत्री जमाईने भूख्यां जाणी, छानुं मोकले भक्ष । ३ ।

कड़वक ३२—(नारद-अनिरुद्ध-भेंट)

श्री शुकदेवजी इस प्रकार कथा कहते हैं— हे राजा परीक्षित, सुनो। (बाणासुर ने) काम-कुमार (अनिरुद्ध) और (अपनी) कन्या (ओखा) को कारागृह में रख लिया। १ उसने उन्हें नाना प्रकार के बन्धन बाँध दिये, (जिससे) वे (ठीक से) साँस (तक) नहीं ले पाते थे। वे (दोनों कारागृह के अन्दर) एक-दूसरे के दयनीय मुख को देखते हुए अति उदास हो जाते थे। २ बाणासुर के भय से रानी आँखों को अश्रुजल से भरती थी। अपनी (पुत्री) तथा दामाद को भूखे जानकर वह खाना गुप्त

बंधन देखी कंथनुं, ओखा भरे छे नयणे नीर,
अनिरुद्ध आपबळे करी, अबळाने आपे धीर । ४ ।
आदरुं तो असुर कुळने, त्रेवडुं तृण मात्र,
शोभा राखवा श्वसुरनी, बंधाव्युं छे में गात्र । ५ ।
मरडीने ऊठुं तो शीघ्र छूटुं, दळुं दानव दई दुःख,
शुं करुं जे श्वसुरपक्षमां राखवुं छे सुख । ६ ।
शा माटे चिंता करो छो ? गोविंद छेदशे बंध,
आकाश अवनी एक थाशे, एवुं करशे जुद्ध । ७ ।
अग्न्यास्त्रनी धूम चालशे, असुर थाशे अंध,
सहाय करशे श्याम रामजी, बेउना छूटशे बंध । ८ ।
महारा सम जो सुंदरी, झांखो करो मुखचंद,
आ बंधनथी दुःख अधिक छे, तारां आंसुडांनां बुंद । ९ ।
एम कीधी आसवासना, हरि आव्यानुं हारद,
कोई ए न जाणे तेम कारागृहमां, आविया ऋषि नारद । १० ।

रीति से भेजती थी । ३ अपने पति के बन्धन को देखकर ओखा आँखों में अश्रुजल भर लिया करती थी; तो अनिरुद्ध स्वयं (अपनी शक्ति के अनुसार ऐसा कहते हुए) उस अबला को धीरज (सान्त्वना) दिया करते थे । ४ मैं असुर-कुल का आदर करता हूँ— (फिर भी) उसे तृण मात्र (घास के तिनके के बराबर) गिनता (मानता) हूँ । (केवल) श्वसुर की शोभा (प्रतिष्ठा) रखने के लिए मैंने अपने शरीर को आबद्ध करवा लिया है । ५ (यदि) मैं ऐंठकर उठ जाऊँ, तो शीघ्र ही छूट जाऊँगा, दुख देते हुए दानवों को कुचल डालूँगा । क्योंकि, क्या करूँ, (जो) श्वसुर के पक्ष में मुझे सुख रखना है । ६ चिन्ता किसलिए कर रही हो ? गोविन्दजी (श्रीकृष्ण) बन्धन काट देंगे । वे ऐसा युद्ध करेंगे कि आकाश-पृथ्वी एक हो जाएँगे । ७ अग्नि-अस्त्र का धुआँ (उठकर फैलता हुआ) चलेगा, तो असुर अन्धे हो जाएँगे । श्रीकृष्ण और बलरामजी सहायता करेंगे और (हम) दोनों के बन्धन खुल जाएँगे । ८ री सुन्दरी, अपने मुखचन्द्र को म्लान करोगी, तो मेरी शपथ है । इस बन्धन से भी तुम्हारी आँखों के अश्रु-बिन्दु अधिक दुखदायी हैं । ९ (अनिरुद्ध ने) श्रीकृष्ण के आ जाने के रहस्य के बल पर उसे इस प्रकार सान्त्वना दी (आश्वस्त किया) । (फिर) नारद ऋषि उस कारागृह के अन्दर उस प्रकार आ गये कि उसे कोई जान नहीं पाया । १० (उनको देखते ही) कामदेव के पुत्र अनिरुद्ध लज्जा को प्राप्त हो गये और उन्होंने आँखों को गिरा लिया (सिर झुका लिया) । उनका

लज्जा पाम्यो कामकुंवर ने, नीची कीधी दृष्ट,
शरीर ध्रूजे अति घणुं, बोली न शके स्पष्ट। ११।
शें लाजछे तुं प्राक्रमी ? हसी बोल्य मुंज संगाथ,
बाणनी बाळकी वर्यो, तारी पृथ्वीमां थई ख्यात। १२।
दिपाव्यो वंश वासुदेवनो, वधांये लांछन शूंय,
काल्य माधव मोकलुं जई, द्वारकाथी हुंय। १३।
घोडे चडे ते पडे पृथ्वी, भणे ते नर भूले,
ऊंडळमां ते आभ लीधुं, अंतर शें नहीं फूले ?। १४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अंतर शें न फूले जुद्ध ? मुकावशे भगवान रे,
अनिरुद्धनी आज्ञा लई ऋषि हवा अंतरध्यान रे। १५।

शरीर अत्यधिक काँपने लगा। वे स्पष्ट रूप से बोल नहीं पा रहे थे। ११ (यह देखकर नारद बोले—) हे प्रतापी, लज्जित क्यों हो रहे हो ? मुझसे हँसते हुए बातें करो। तुमने बाण की पुत्री का वरण किया है, इससे पृथ्वी (भर) में तुम्हारी ख्याति हो गयी है। १२ तुमने वासुदेव के वंश को उज्ज्वल बना दिया है। (अत:) बाँध दिये जाने में क्या लांछन है ? मैं कल ही जाकर द्वारिका से माधव (श्रीकृष्ण) को भेज दूँगा। १३ जो घोड़े पर चढ़ता है, वह भूमि पर गिर सकता है; जो पढ़ता है, वह मनुष्य भूल भी कर सकता है। जिसने बाँहों में आकाश भर लिया है, उसका मन उसमें किसलिए गर्वित (न) हो उठे। १४

'युद्ध करने में (तुम्हारा) मन किसलिए गर्व से नहीं भर उठता है ?' (यह कहकर नारद) ऋषि अनिरुद्ध से आज्ञा (बिदा) लेकर अन्तर्धान को प्राप्त हो गये। १५

कडवुं ३३ मुं—(ओखा की विनती बलराम-कृष्ण के प्रति)

राग बेहाग

दया न आवी, ओखा रडे रे, दैत्यपति दुरमत, मारी सजनी।
बाकरी बांधी वीरवर साथे, वेर वधायुं सत्य। मारी सजनी। १।

कड़वक ३३—(ओखा की विनती बलराम-कृष्ण के प्रति)

ओखा रो रही थी (और रोते-रोते बोल रही थी)— री मेरी सजनी, इस दुर्मति दैत्यपति (मेरे पिता बाणासुर) को दया नहीं आ रही

पातळिया पंकज, पियुजीने नागपाशना बंध, मारी सजनी ।
बांधी लीधो बळ करीने, कोमळरूप मदन । मारी सजनी । २ ।
धाजो रे धरणीधर श्रीवर, आपदा पामे नाथ, मारी सजनी ।
पुत्र तमारा उपर प्रहारज, करे छे दैत्यनो साथ । मारी सजनी । ३ ।
भारे दळ कौभांडे महेलियुं, वकार्यो बळी वीर, मारी सजनी ।
तोये रणथी नव ओसरियो, सागरनुं जेम नीर । मारी सजनी । ४ ।
भेद करीने बांधी लीधो, शा नागपाशना बंध, मारी सजनी ।
श्वास न माये, बहु अकळाये, अंग आकर्ष्या संध । मारी सजनी । ५ ।
ताप समाय नहीं स्वामीने, हुं करुं देहनी पात, मारी सजनी ।
वाद लागे लक्ष्मीवर तमने, तो थाशे महा उत्पात । मारी सजनी । ६ ।
कमळमुख श्रमथी सुकायुं, कन्या करे आक्रंद, मारी सजनी ।
अनिरुद्ध समरे शामळियाने, कमळावर गोविंद । मारी सजनी । ७ ।

है। री मेरी सजनी, उन्होंने पूर्वग्रह के कारण वैर-भाव रखते हुए (अनिरुद्ध जैसे) वीरवर के साथ सचमुच शत्रुता बढ़ा दी है। १ री मेरी सजनी, कमल के समान सूक्ष्म (दुबले-पतले, कोमल) शरीरधारी मेरे प्रिय (पति) पर उन्होंने नागपाश के बन्धन डाल दिये हैं। री मेरी सजनी, उन्होंने मदन (जैसे) कोमल रूपधारी को बलपूर्वक बाँध लिया है। २ (ओखा बोली—) हे धरणीधर (शेष के अवतार बलरामजी) ! हे श्रीवर (लक्ष्मीपति विष्णु के अवतार कृष्णजी) ! दौड़ो। मेरे नाथ विपदा को प्राप्त हो गये हैं। मेरी सजनी०। दैत्यों का समूह (दल) तुम्हारे पुत्र (के पुत्र) पर प्रहार ही करते रहे। मेरी सजनी०। ३ कौभाण्ड ने बड़ी भारी सेना भेज दी। उसने बलवान वीर (अनिरुद्ध) को (उकसाते हुए) युद्ध कर दिया। मेरी सजनी०। फिर भी समुद्र के पानी के समान (बढ़ते-उछलते रहते हुए) वे रणभूमि से पीछे नहीं हट रहे थे। मेरी सजनी०। ४ भेदभाव से उन्होंने कैसे नागपाश के बन्धन में बाँध डाला है। मेरी सजनी०। उनकी साँस (तक) नहीं समा रही है (वे ठीक से साँस तक नहीं ले पा रहे हैं)। वे बहुत व्याकुल हो रहे हैं। (समस्त) अंग (नागपाश द्वारा) खींचे गये हैं (कसे गये हैं)। मेरी सजनी०। ५ मेरे स्वामी में यह ताप नहीं समा रहा है (अर्थात स्वामी की शक्ति से वह अधिक हो गया है)। (अतः) मैं देह-त्याग करूँगी। मेरी सजनी०। हे लक्ष्मीवर ! (यदि) तुमको अपवाद लग जाए, तो महान उत्पात हो जाएगा। मेरी सजनी० ६ उस कन्या अर्थात् ओखा का मुख-कमल इस श्रम से सूख गया; वह क्रन्दन कर रही थी। मेरी सजनी०।

त्राहे त्राहे रे त्रिकमजी, सुतनी करजो सहाय, मारी सजनी।
विपतवेळा वहारे चडीने, करो भगतनी रक्षाय। मारी सजनी। ८।
गजग्राहथी मुक्त पमाड्यो, कीधी हरिश्चंद्र रक्षाय, मारी सजनी।
दानवकुळ निकंदन कीधां, कीधी प्रह्लादनी सहाय। मारी सजनी। ९।
आज आंखेथी आंसुडां चाले, जाशे मारा प्राण, मारी सजनी।
सुख शरीर शाता नहीं अंगे, लाग्यो दव निर्वाण। मारी सजनी। १०।

(इधर) अनिरुद्ध कमलावर गोविन्द अर्थात् साँवले (श्याम कृष्ण) का स्मरण कर रहे थे। मेरी सजनी०। ७ (वह बोली)— हे त्रिविक्रमजी, रक्षा करो, रक्षा करो। अपने पुत्र (के पुत्र) की सहायता करना। मेरी सजनी०। विपत्ति के समय सहायक होकर अपने भक्त की रक्षा करो। मेरी सजनी०। ८ तुमने गज को ग्राह से मुक्ति को प्राप्त कराया[1] और तुमने हरिश्चन्द्र[2] की (भी) रक्षा की थी। मेरी सजनी०। दानवकुलों को नष्ट किया और प्रह्लाद की सहायता की[3]। मेरी सजनी०। ९ आज (मेरी) आँखों से आँसू बह रहे हैं। मेरे प्राण निकल जाएँगे। मेरी सजनी०। शरीर को सुख और शान्ति नहीं प्राप्त हो रही है। अंग

---

१ गज का ग्राह से उद्धार— कर्दम प्रजापति के देहहूति से उत्पन्न जय और विजय नामक दो पुत्र भगवान विष्णु के परम भक्त तथा यज्ञकर्म-कुशल थे। एक समय मरुत राजा द्वारा आयोजित यज्ञ-कर्म में दक्षिणा के वितरण के विषय में उन दोनों में विवाद आरम्भ हो गया। तब जय ने विजय को 'नक्र (मगर)' हो जाने का अभिशाप दिया। इधर विजय ने भी जय को 'गज (हाथी)' हो जाने का अभिशाप दिया। परन्तु शीघ्र ही पछताते हुए वे दोनों भगवान विष्णु की शरण में गये, तो उन्होंने यथासमय उनका उद्धार करने का अभिवचन दिया। उपरोक्त अभिशाप के फलस्वरूप जय-विजय क्रमश: गज और नक्र होकर गण्डकी नदी के समीप रहने लगे। एक दिन कार्तिकस्नान के हेतु गज जब पानी में प्रविष्ट हो गया, तो नक्र ने उसका पैर पकड़कर उसे अन्दर खींचना आरम्भ किया। उस समय गज ने भगवान विष्णु की आर्तरव में स्तुति करते हुए रक्षा करने की विनती की। उसे सुनते ही भगवान तत्काल वहाँ प्रकट हुए और नक्र का वध करके उससे गज की रक्षा की —इस प्रकार उन दोनों को अभिशाप से मुक्त करके उनका उद्धार किया।

२ हरिश्चन्द्र— ये इक्ष्वाकु कुलोत्पन्न विख्यात राजा त्रिशंकु के पुत्र थे। इन्होंने विश्वामित्र का अपमान किया, तो वे परम्परागत पौरोहित्य छोड़कर इन्हें अनेक प्रकार से उपद्रव पहुँचाने लगे। ब्रह्मपुराण के अनुसार, विश्वामित्र की दक्षिणा की पूर्ति करने के लिए इन्होंने अपने आप को, पत्नी तारामती और पुत्र रोहित को बेच दिया। विश्वामित्र ने माया से रोहित को सर्पदंश करवाकर मृत्यु को प्राप्त कराया, तो तारामती अग्नि-प्रवेश करने को उद्यत हो गयी। इस संकट के अवसर पर वसिष्ठ और देवों ने इनकी रक्षा की। इनकी कथा अनेक पुराणों में कही गयी है।

३ प्रह्लाद की रक्षा तथा दानवकुल का संहार— देखिए टिप्पणियाँ पृ० ३१-३२ (कड़वक २)

मनसा वाचा ए वर वरियो, अवर ते मिथ्या जाण, मारी सजनी।
रूप अने गुणवंतो स्वामी, सत्य कहुं छुं, प्राण। मारी सजनी। ११।
तात कठोर, दया नहीं हृदये, कोमळ मारो कथ, मारी सजनी।
प्रहार करीने बांधी रे लीधो, श्रीहरि वेगळे पंथ। मारी सजनी। १२।
कोण सहोदर आवे अवसर शोध करवाने जाय? मारी सजनी।
नात भ्रातने जाण नहीं तो, कुण ऊठीने धाय? मारी सजनी। १३।
पिता पियुजीने वेर रे देखे, परभवे बहु पेर, मारी सजनी।
नाग तणा फुत्कार हळाहळ, फेरवी नाखे ल्हेर। मारी सजनी। १४।
टळवळे अंग, अग्नि रे ऊठ्यो, कंठे पडियो शोष, मारी सजनी।
पूर्व तणां कर्म आवी नडियां, कोने दीजे दोष? मारी सजनी। १५।
तात कहे तो काया रे पाडुं, विष खाउं आ वार, मारी सजनी।
स्नेह न जाणे कोई रे मननो, कां पीडे भरथार? मारी सजनी। १६।
तात तणे मन कांई नहीं, मुंने सबळो लागे स्नेह, मारी सजनी।
छोरुं पोताना जाणी कीजे, दयाळ, न दीजे छेह। मारी सजनी। १७।

(अंग) में चरम सीमा तक दावाग्नि लग गयी है। मेरी सजनी०। १० मन से, वाणी से मैंने इस वर का वरण किया है (अतः) किसी अन्य को मिथ्या समझ लो। मेरी सजनी०। मैं सत्य कह रही हूँ। मेरे स्वामी रूपवान तथा गुणवान हैं, वे मेरे प्राण हैं। मेरी सजनी०। ११ मेरे पिता कठोर हैं, उनके हृदय में कोई दया नहीं है और (इधर) मेरे पति कोमल हैं। मेरी सजनी०। हे श्रीहरि! उन्होंने उन पर प्रहार करते हुए उन्हें बाँधकर दूर ले लिया है (दूर ले गये हैं)। हे सजनी०। १२ ऐसे समय पर कौन सहोदर (बन्धु) होगा, जो उनको खोजने के लिए जाए। मेरी सजनी०। नातेदारों और भाइयों को कुछ ज्ञान (पता) नहीं है, तो (उनमें से) उठकर कौन दौड़ेगा। मेरी सजनी०। १३ (मेरे) पिता (मेरे) प्रिय को वैर-भाव से देखते हैं और उन्हें बहुत प्रकार से पराजित कर रहे हैं। मेरी सजनी०। नागों के फूत्कार (वायु की) लहरों को हलाहल में बदल दे रहे हैं। मेरी सजनी०। १४ उनका अंग सटपटा रहा है। उसमें आग उठ (जल) रही है और कण्ठ में शोष अनुभव हो रहा (गला सूख रहा है)। पूर्व (जन्म) के कर्म आकर बाधा उत्पन्न कर रहे हों, तो किसको दोष दें। मेरी सजनी०। १५ (यदि) पिता कह दें, तो इस समय मैं देह-त्याग कर दूँगी, विष (तक) खा लूँगी। मेरी सजनी०। मेरे मन के स्नेह को कोई नहीं जानता। वे मेरे पति को क्यों पीड़ित कर रहे हैं। मेरी सजनी०। १६ मेरे पिता के मन में कुछ भी नहीं है;

बाणासुर महापुरुष ज्ञाता, जेथी चूक न थाय, मारी सजनी।
बाळक उपर प्रहार शो करवो? जदपि होय अन्याय। मारी सजनी।१८।
वहाला थई ने वेर ज वाळो, शुं नथी आवती लाज? मारी सजनी।
नीच पदारथ, नथी कुळ नीचुं, कृष्णकुंवर महाराज। मारी सजनी।१९।
नीचुं नाक न होय एथी, निरर्थक संग्राम, मारी सजनी।
मोटा साथे विरोध न करीए, नहीं निर्बळ हळधर श्याम। मा० स०।२०।
सकळ पृथ्वी चाके चढावी, असुरनो फेड्यो ठाम, मारी सजनी।
वेर वधारी विट्ठल साथे, क्यां करशे विश्राम? मारी सजनी। २१।
स्वामी मारा ने शिर समरथ, तेने चडशे कोप, मारी सजनी।
भद्र ईच्छे जो तात पोतानुं, विषनुं बीज मा रोप। मारी सजनी। २२।
जुद्धसमे आकाशे रहीने, जुए छे नारद देव, मारी सजनी।
भय मा आणीश, अमो जाशुं द्वारामती, जुद्ध करशुं ततखेव। मा०स०।२३।
निर्भय राखी वीणाधर गया, परवरिया आकाश, मारी सजनी।
पहोंता ऋषि ऊतरिया हेठा, भेट्या श्रीअविनाश। मारी सजनी। २४।

(परन्तु) मुझे (अनिरुद्ध से) बहुत बड़ा स्नेह हुआ है। मेरी सजनी०। हे दयालु (भगवान कृष्ण), (इस स्थिति में) हमें अपनी सन्तान समझ लो और हमें त्याग न दो। मेरी सजनी०। १७ बाणासुर (ऐसे) ज्ञाता महापुरुष है, जिससे कोई भूल न होनी चाहिए। फिर (उसके द्वारा) अन्याय हो जाए, तो भी बालक के ऊपर क्या प्रहार करना है? मेरी सजनी०। १८ प्रिय होने पर भी उन्होंने वैर बढ़ाया है, क्या इसमें लज्जा नहीं आ रही है? मेरी सजनी०। महाराज कृष्ण के कुमार तो नीच वस्तु नहीं हैं; न उनका कुल नीच है। मेरी सजनी०। १९ इससे नाक (प्रतिष्ठा) नीची न हो जाए। यह संग्राम निरर्थक है। मेरी सजनी०। बड़े के साथ विरोध, वैर न करें। हलधर बलराम और श्याम (कृष्ण) बलहीन नहीं हैं। मेरी सजनी०। २० उन्होंने समस्त पृथ्वी को आतंकित कर डाला; असुरों के स्थान मिट्टी में मिला दिये। मेरी सजनी०। विट्ठल अर्थात् भगवान कृष्ण के साथ वैर बढ़ाकर वे विश्राम कहाँ करेंगे? मेरी सजनी०। २१ और मेरे स्वामी समर्थ हैं। उन्हें क्रोध आएगा। मेरी सजनी०। हे तात! यदि अपना भला चाहते हो, तो विष का बीज न बोओ। मेरी सजनी०। २२ युद्ध के समय आकाश में (उपस्थित) रहकर देवर्षि नारद यह देख रहे थे। मेरी सजनी०। वे बोले— भय मत अनुभव करो। मैं द्वारावती जाऊँगा और तत्क्षण युद्ध कर दूंगा। मेरी सजनी०। २३ उसे निर्भय करके वीणाधारी नारद आकाश (मार्ग से) चले

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भेट्या श्रीअविनाशने, कुशळ वार्ता पूछे वळी,
कहे नारद, अनिरुद्धने राख्यो, कारागृहमां दैत्ये मळी । २५ ।

गये । मेरी सजनी० । वे ऋषिवर (द्वारावती के समीप) पहुँच गये और नीचे उतर गये । (तदनन्तर) वे अविनाशी भगवान श्रीकृष्ण से मिले । मेरी सजनी० । २४

नारद अविनाशी भगवान श्रीकृष्ण से मिले, तो उन्होंने फिर कुशल समाचार पूछा । तो नारद बोले— दैत्यों ने मिलकर अनिरुद्ध को कारागृह में डाल रखा है । २५

कडवुं ३४ मुं--(श्रीकृष्ण का शोणितपुर के पास आगमन)

राग वेराडीनी चाल

शुकदेव कहे परीक्षितने, बांध्यो ते जादव जोध,
हवे द्वारिकानी कहुं कथा, जाधव करे शोधाशोध । १ ।
हिंडोळा सहित कुंवर हरियो, रुए छे किंकरी,
हाहाकार हावो पुर विषे, अनिरुद्धनी थई चोरी । २ ।
रति अति आक्रंद करे छे, मळ्यां विनतानां वृंद,
रुकिमणी रोहिणी देवकी, सर्वे करे आक्रंद । ३ ।
जादवे सर्वे कह्युं माधवने, शुं बेठा छो स्वामी ?
वार विलंब न कीजीए, एम कुळने लागे स्वामी । ४ ।

कड़वक ३४--(श्रीकृष्ण का शोणितपुर के पास आगमन)

शुकदेव परीक्षित से कहते हैं— (बाणासुर ने) यादव योद्धा (अनिरुद्ध) को (नागपाश) में बाँध लिया । अब मैं द्वारका की कथा कहता हूँ । (उधर समस्त) यादव (अनिरुद्ध को) खोज रहे थे । १ झूले सहित कुमार का अपहरण हो गया —इसलिए (उनकी) दासी रो रही थी । अनिरुद्ध की चोरी हो गयी; (इसलिए) नगर में हाहाकार मच गया । २ रति[1] रुदन कर रही थी । नारियों का वृन्द (समुदाय) इकट्ठा हो गया । रुक्मिणी, रोहिणी, देवकी सब रुदन करने लगीं । ३ (तत्पश्चात्) समस्त यादवों ने माधव (श्रीकृष्ण) से कहा, 'हे स्वामी !

१ कामदेव कृष्ण-पुत्र प्रद्युम्न के रूप में अवतरित थे, तो कामदेव की स्त्री रति भी प्रद्युम्न की पत्नी के रूप में अवतरित थी ।

वसुदेव कहे शाम रामने, शुं बेठा छो भूप ?
शोध करो अनिरुद्धनी, क्यां गयो कुंवर अनूप ? । ५ ।
उग्रसेन कहे, आश्चर्य मोटुं, केम हर्यो हिंडोळो ?
देव दैत्य राक्षसनुं कारण, ते खप करीने खोळो । ६ ।
साथने जदुनाथ कहे छे, शाने कीजे श्रम ?
गोत्रदेवीने एम ज गमतुं, कुंवर हर्यानुं कर्म । ७ ।
अगियार वरस अमे गोकुळ सेव्युं, मामाजीना त्रासे,
प्रद्युम्ने शंबरे हर्यो ते, आव्यो सोळमे वरसे । ८ ।
फरी अनिरुद्ध तेम आवशे, साचवशे कुळदेवी,
कृष्णे कुटुंबने रोतुं राख्युं, आशा दीधी एवी । ९ ।
पांच मास एम वही गया, जादव छे सर्वे दुःखी,
शोणितपुरथी कृष्णसभामां आव्या नारद ऋखी । १० ।

आप (चुप) क्या बैठे हैं ? विलम्ब न कीजिए । ऐसे तो कुल में कलंक लग जाएगा । ' । ४ वसुदेव ने बलराम और श्याम कृष्ण से कहा, ' हे राजा ! तुम (चुप) क्या बैठे हो । अनिरुद्ध की खोज कर लो । वह अनुपम कुमार कहाँ गया ? ' । ५ उग्रसेन बोले, ' बड़ा आश्चर्य है, झूला कैसे हर लिया (गया) । यह तो किसी देव, दैत्य (अथवा) राक्षस का काम (जान पड़ता) है । अतः झट से उसे खोज लो । ' । ६ इसके साथ (प्रत्युत्तर में) यदुनाथ कृष्ण ने कहा, ' श्रम किसलिए करें ? कुमार को अपहृत करने का यह काम गोत्रदेवी को ऐसे ही अच्छा लगता हो । ७ मामाजी (कंस) के भय से हमने ग्यारह वर्ष गोकुल में आश्रय लिया (निवास किया) । (दूसरे) प्रद्युम्न का शम्बर ने अपहरण किया; वह सोलहवें वर्ष में (लौट) आया[1] । ८ फिर अनिरुद्ध (भी) वैसे ही (लौट) आएगा । कुलदेवी उसकी रक्षा करेगी । ' श्रीकृष्ण ने इस प्रकार यह आशा दिखा दी और परिवार (के लोगों) को रोने से रोक लिया (चुप कर दिया) । ९ इस प्रकार पाँच मास बीत गये । (इस अवधि में) समस्त यादव दुखी थे । (उस समय एक दिन) नारद ऋषि शोणितपुर से श्रीकृष्ण की सभा में आ गये । १० श्रीकृष्ण आदि

---

१ प्रद्युम्न का अपहरण— शिवजी द्वारा कामदेव को जला डालने के पश्चात् शम्बरासुर रति (जो उस समय मायावती के रूप में उत्पन्न हो गयी थी) को भगा ले गया । अपनी पत्नी को मुक्त कर देने और शम्बरासुर से बदला लेने के हेतु कामदेव कृष्ण-रुक्मिणी के पुत्र प्रद्युम्न के रूप में अवतरित हो गया । जब इस रहस्य का पता शम्बरासुर को चला, तो वह प्रसूति-गृह में जाकर छः दिन की अवस्था वाले प्रद्युम्न को चुराकर भाग गया और शिशु को समुद्र में फेंक आया ।

हरि आदे जादव थया ऊभा, मान मुनिने दीधुं,
आदरशुं आसन आपीने, अर्घ्यपूजन कीधुं । ११ ।
समाचार सर्वे कृष्णे पूछ्या, नारद वळतुं भाखे,
उत्पात वात जे तमारा कुंवरने, बाण बांधीने राखे । १२ ।
ईश्वरी इच्छाए ओखाने परण्यो, संबंध एवो सांध्यो,
आपदा अनिरुद्ध वेठे, बाणासुरे बांध्यो । १३ ।
वात सांभळी वधामणीनी, वगडाव्यां निशान,
शाम, राम, काम थया तत्पर, जीतवा राय बाण । १४ ।
सज्जन सर्वे अति सुख पाम्या, छे कुंवर ने कुशळ,
गरुड खेड्यो गोविंदजीए, लीधी सेना सकळ । १५ ।

(समस्त) यादव खड़े हो गये और उन्होंने मुनि (नारद) का सम्मान किया; आदर-पूर्वक आसन देते हुए अर्घ्य सहित उनका पूजन किया । ११ श्रीकृष्ण ने समस्त समाचार पूछ लिये, तो प्रत्युत्तर-स्वरूप नारद बोले— उत्पात की यह बात है जो कि बाण ने तुम्हारे पुत्र को बाँधकर रखा है । १२ ईश्वर की इच्छा के अनुसार उसने ओखा से परिणय किया और इस प्रकार का सम्बन्ध स्थापित किया । (उससे) संकट ने अनिरुद्ध को घेर लिया है— बाणासुर ने उसे आबद्ध कर लिया है । १३ बधाई अर्थात् शुभ बात सुनते ही (श्रीकृष्ण ने) नगाड़े बजवा दिये । श्याम (श्रीकृष्ण), बलराम, कामदेव के अवतार प्रद्युम्न राजा बाण को जीत लेने के लिए तत्पर हो गये । १४ इसी में कुमार (अनिरुद्ध) की कुशल है, (यह जानकर) स्वजन (परिवार के लोग) बहुत सुख को प्राप्त हो गये । (फिर) गोविन्दजी (श्रीकृष्ण) ने गरुड़ को बुला लिया; (साथ में) समस्त सेना (भी) ली । १५ साथ में (एक) संकर्षण[1], (दूसरे) सात्यकि[2] और तीसरे प्रद्युम्न थे । श्रीकृष्ण ने इन तीन योद्धाओं को पास में

१ संकर्षण— बलराम का एक नाम । पांचरात्र मत के अनुसार, इसे संकर्षण कहा जाता है और जीव का प्रतीक माना जाता है । कृष्णावतार के समय शेष भगवान कृष्ण के बड़े भाई बलराम के रूप में अवतरित थे ।

२ सात्यकि— सात्यकि (जो युयुधान नाम से भी विख्यात था) वृष्णिकुलोत्पन्न वीर पुरुष था । वह सत्यप्रतिज्ञ, फिर भी बहुत क्रोधी था । इसने श्रीकृष्ण से अस्त्र-विद्या तथा अर्जुन से युद्धकला सीखी थी । इसका नाम महाभारतकालीन श्रेष्ठ वीरों में गिना जाता है । इसने आजीवन श्रीकृष्ण और अर्जुन की सहायता की । श्रीकृष्ण के द्वारा किये गये प्रत्येक युद्ध में वह उनके पक्ष में सम्मिलित होता रहा । बाणासुर पर जब श्रीकृष्ण ने आक्रमण किया, तो यह उनके साथ युद्धभूमि में गया । इसने कौभाण्ड से युद्ध किया ।

संकर्षण ने सात्यकी, संगाथे त्रीजो प्रद्युम्न,
त्रण जोद्धा पासे बेसाडी, कृष्णे खेड्यो खगजन। १६।
एक पहोरमां पंखी पहोंतो, असुरे सांभळी पंख,
रिपुहृदय विदारवा, शामळे ते फूंक्यो शंख। १७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शंख फूंक्यो शामळे, ऊछळ्यो सहस्रपाण रे,
त्रासे नासे लोक पुरना, पड्युं बहु बुंबाण रे। १८।

बैठाकर सेवक पक्षी (गरुड़) को चला लिया (चलने को प्रेरित किया)। १६
वह पक्षी एक पहर में (शोणितपुर) पहुँच गया। असुरों ने उसके पंखों (की ध्वनि) को सुन लिया। (फिर) श्याम अर्थात् श्रीकृष्ण ने शत्रु के हृदय को (मानो) विदीर्ण करने के हेतु अपना शंख बजा दिया। १७

श्रीकृष्ण ने शंख बजा दिया, तो (उसे सुनते ही) सहस्रपाणि बाणासुर उछल उठा। (इधर) नगर के लोग भाग जाने लगे। बहुत कोलाहल मच गया। १८

कडवुं ३५ मुं—(कृष्ण और शिवजी का युद्धभूमि में आगमन)

राग सारंग

शंख शब्द विषे कारण, रिपुदळनुं विदारण,
कृष्णनुं जाण ते बाणने थयुं, बाणप्राक्रम ते क्यां गयुं ?। १।
अनिरुद्ध कहे, सुण सुंदरी, शंख वागियो आव्या हरि,
छूट्यां बंधन जादव थकी, गाज्या हळधर ने सात्यकी। २।

कड़वक ३५—(कृष्ण और शिवजी का युद्धभूमि में आगमन)

शंख की ध्वनि करने (शंख बजाने) में (श्रीकृष्ण का) उद्देश्य शत्रुसेना को (भय से) विदीर्ण करना था। (उसे सुनते ही) बाण को कृष्ण (के आगमन) का ज्ञान हो गया, तो उसका प्रताप (न जाने) कहाँ (चला) गया। १ (उस ध्वनि को सुनकर) अनिरुद्ध बोले, 'सुनो सुन्दरी, शंख बजा है, (इससे स्पष्ट है कि) कृष्ण आ गये हैं। (समझ लो कि) यादवों के द्वारा (हमारे) ये बन्धन छूट गये। हलधर बलरामजी[1] और

[1] हलधर— कृष्ण के अग्रज राम हलधर, हली, हलायुध आदि नामों से विख्यात हैं। हल और मूसल उनके प्रमुख आयुध थे। जरासन्ध का वध करने के हेतु उन्होंने तपस्या की और फलस्वरूप 'संवर्तक' नामक हल और 'सौनन्द' नामक मूसल उन्होंने आयुधों के रूप में प्राप्त किये। हल को धारण करने के कारण वे 'हलधर' कहलाये। असाधारण बल से युक्त होने के कारण ये राम 'बलराम' कहाने लगे।

बोले प्रद्युम्न मोटे स्वरे, बाण पाण छेदायां खरे,
गोविंद गत्य न जाये कळी, जादव सेना आवीने मळी । ३ ।
मंत्री कहे सुणो असुरेश, दळ जादवनुं चांपे देश,
अनुचर आव्या ने लाव्या वात, दळ दीसे छे असंख्यात । ४ ।
मंत्रीने कीधी नेत्रसमश्याय, सैन्य तत्पर आपी आज्ञाय,
दुंदुभि नानाविध गडगडे, शस्त्र धरी वीर वाहन चडे । ५ ।
पाताळना भूप कहाड्या लखी, सेना टोप सजे जीवरखी,
पाखर बखतर घूघरमाळ, डचकारे घोडा दे फाळ । ६ ।
मोर दामणी फूमतडां फरके, छाया पोतानी देखीने भडके,
भला अस्वार उपर लटके, हींसे हय हींडे ने अटके । ७ ।
वादळिया वेगे नाचंत, छूटा पग जेम पाणिपंथ,
काबरा, काळा ने कलंकी, पंखाळा ऊडे छे अबलंकी । ८ ।

सात्यकि गरज उठे हैं'। २ (उधर) प्रद्युम्न उच्च स्वर में बोले, '(अब) बाण के हाथ सचमुच छेद डाले गये (समझो)।' भगवान गोविन्द की गति समझ में नहीं आ सकती। (उधर) यादव-सेना आकर एकत्रित हो गयी। ३ (यह जनकर) मंत्री (कौभाण्ड) बोला, 'हे असुरेश, सुनिए। यादवों की सेना देश को कुचल रही है। अनुचर (दूत) आ गये हैं और ऐसा समाचार लाये हैं कि उनका दल असंख्य (सैनिकों से युक्त) अर्थात अपार है'। ४ (यह सुनकर राजा बाण ने) मंत्री को आँखों से संकेत किया और सेना को तैयार करने की आज्ञा दी। (त्यों ही) नाना प्रकार की दुन्दुभियाँ गड़गड़ाने लगीं और शस्त्रों को धारण करके वीर सैनिक वाहनों पर सवार हो गये। ५ उसने पाताल के राजाओं को लिखकर कहला दिया (कि वे सहायता के लिए आ जाएँ)। सेना ने जीव-रक्षक टोप धारण किये। झूलों, बख्तरों और घुँघरुओं की मालाओं से युक्त घोड़ों को घुड़सवारों ने टिटकारा, तो वे छलाँग लगाने लगे। ६ मोर(-चिह्न, कलगियाँ), रस्सियाँ (लगामें), झुमके झूम रहे थे। वे (घोड़े) अपनी परछाहीं को (भी) देखकर भड़क उठते थे। अच्छे-अच्छे सवार उनपर (मानो) झूम रहे थे। घोड़े हिनहिना रहे थे, चल (दौड़) रहे थे और (अचानक) रुक (भी) जाते थे। ७ पागल-से होकर वे वेगपूर्वक नाच रहे थे। उनके पैर भूमि पर से ऐसे छूट अर्थात उठ रहे थे, जैसे वे जलपथ पर ही चल रहे हों। उनमें से कुछ कबरे थे, (कुछ) काले थे, कुछ काले धब्बों से युक्त थे। अब तक घोड़े मानो पंखों से युक्त हुए-से उड़ रहे थे। ८ कुम्मैत,

कुमेद, लीला ने पंचवरणा, उज्ज्वळ आरबी घोडा हरणा,
पाधरा पवनवेगी घोडा, अस्वार बहु जुद्धे जोडा । ९ ।
सजळ वादळ जेवा हाथी, ते उपर मोटा महारथी,
रथ, पाळा, अस्वार अनंत, धीर धसे ने करडे दंत । १० ।
प्रचंड पीठ मोटा पहाड, सळके जीभ ललकावे हाड,
पुर-पोळे सेना नव माय, हणो जादव कहेता जाय । ११ ।
टोळां उपर टोळां आवे, पगने प्रहारे धरणी ध्रूजावे,
दीसे अंतरमां हडहडियो, जुद्धे राय बाणासुर चडियो । १२ ।
दशे दिशना मार्ग बुराया, कोटी शंख साथे पुराया,
झटक्या भुज बाणासुर मल्ल, पृथ्वी थवा मांडी उथल्ल । १३ ।
गर्जना कीधी महीपाळ, खळभळियां साते पाताळ,
ब्रह्मलोक जई पहोंच्यो नाद, श्रीकृष्णने बाणे कीधो साद । १४ ।

नीले-काले और पँचरंगी, सफ़ेद अरबी घोड़े, उत्तम (जाति) के पवन-वेगी बहुत से घोड़े सवारों ने युद्ध के लिए प्रयुक्त किये । ९ (सेना में) सजल बादलों-जैसे (दिखायी देनेवाले) हाथी थे । उनपर बड़े-बड़े महारथी अर्थात श्रेष्ठ योद्धा (आरूढ़) थे । (उसमें) रथ, पदाति (सैनिक), (घुड़-) सवार अनगिनत थे । वे धैर्यशाली (योद्धा) आगे धँसे जा रहे थे; दाँत चबा रहे थे । १० उन (हाथियों) की पीठ प्रचण्ड थी । वे मानो बड़े-बड़े पहाड़ ही थे । उनकी जीभ (मानो विपक्षी को निगल डालने के लिए) लालायित हो रही थी । उनके शरीर (डील-डौल मानो) ललक रहे थे । नगर की गलियों में वह सेना नहीं समा रही थी । वे ' यादवों को मार डालो ' कहते हुए चल रहे थे । ११ उनके दल पर दल आ रहे थे । पाँवों के प्रहार से वे धरती को कँपा रहे थे । राजा बाण तो अन्तःकरण में हड़बड़ाया हुआ दिखायी दे रहा था । (इस स्थिति में) वह युद्धभूमि में चढ़ दौड़ा । १२ दसों[1] दिशाओं के मार्ग (सैनिकों से) भर गये । मानो करोड़ों, शंखों[2] सैनिकों से वे अवरुद्ध हो गये । (जब) मल्ल बाणासुर ने हाथों को झटक दिया, तो पृथ्वी में उथल-पुथल होने लगी । १३ उस राजा ने जब गर्जन किया, तो सातों पाताल[3] क्षुब्ध

---

१ दस दिशाएँ : (चार मुख्य दिशाएँ-) पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर; (चार उपदिशाएँ-) आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य और ईशान; तथा (दो स्थितिसूचक दिशाएँ-) ऊर्ध्व और अधस् ।

२ शंख = एक लाख करोड़ ।

३ सप्त पाताल : अतल, वितल, सुतल, रसातल, महातल, तलातल और पाताल । अथवा : अहितल, महितल, सुतल, कर्मतल, वितल, शंकातल और रसातल ।

खगारूढ आव्या छो खप करी, नहीं जावा दउं कुशळे करी,
उन्मत्त जादव उच्छंकळ, तमो दमो संसार सकळ । १५ ।
कुंवारी कन्याने कपटे वरो, क्षत्री खळनां लक्षण करो,
सघळे वांका थईने फरो, दरमां सर्प पेसे पाधरो । १६ ।
कूडुं कर्म कीधुं कुंवरे, शुं आव्या छो ते उपरे ?
त्यारे हसी बोल्या भगवान, अमो लई आव्या छुं जान । १७ ।
जो विधात्राए कीधो संबंध, वरकन्याना छोडो बंध,
बाणने मन चडियो काळ, संबंध शानो रे गोवाळ ? । १८ ।
एवी आपीश पेरामणी, सउने मोकलुं जमपुरी भणी,
एम बाणासुर बोल्यो वंक, श्रीकृष्णे सज्युं सारंग । १९ ।
कडाझूड कटक बे थयां, उघाडां आयुध करमां ग्रह्यां,
नेजां फरके फरे तलवार, द्वंद्व जुद्ध थयुं तेणी वार । २० ।

हो उठे (सातों पातालों में खलबली मच गयी) । वह स्वर ब्रह्मलोक (तक) जा पहुँचा । तब (तदनन्तर) बाणासुर ने श्रीकृष्ण को चिल्लाते हुए बुला लिया (सम्बोधित करते हुए कहा) । १४ वह बोला— 'तुम हेतुपूर्वक (अपने गरुड़) पक्षी पर आरूढ़ होकर आये हो । (परन्तु) मैं तुम्हें कुशलपूर्वक जाने नहीं दूँगा । तुम यादव उन्मत्त हो, उच्छृंखल हो । तुमने समस्त संसार का दमन किया है, (संसार को पीड़ित करते हुए अपने अधीन कर रखा है) । १५ तुम क्वारी कन्याओं का कपट-पूर्वक वरण करते हो । (इस दृष्टि से) क्षत्रिय होकर भी खल जनों के लक्षण प्रदर्शित कर रहे हो । सब वक्र होकर (बाँके बनकर, अनुचित आचरण करते हुए) घूम रहे हो । बिल में सर्प-जैसे सीधे होकर प्रविष्ट हो जाते हो । १६ तुम्हारे पुत्र ने बुरा काम किया, तो तिसपर भी तुम क्या (कैसे) आ गये हो ।' तब भगवान कृष्ण हँसकर बोले— 'हम तो बारात लेकर आ गये हैं । १७ यदि विधाता ने यह सम्बन्ध स्थापित कर दिया है, तो वर और कन्या (वधू) के बन्धन छुड़ा दो ।' (यह सुनकर) बाण के मन में (मानो) काल ही सवार हो गया (और वह बोला—) 'रे गोपाल, किसका सम्बन्ध ? । १८ मैं ऐसा नज़राना (बधावा) दूँगा कि सबको यमपुरी की ओर भेज दूँगा ।' बाणासुर इस प्रकार टेढ़ी बात बोला, तो श्रीकृष्ण ने अपना शाङ्‌र्ग धनुष सज्ज किया । १९ दोनों सेनाएँ (अपने-अपने स्थान पर) अड़ गयीं (दृढ़ता से जम गयीं) । उन (सैनिकों) ने नंगे शस्त्र हाथों में धारण कर लिये । झण्डे फहर रहे थे । तलवारें घूमने लगीं । उस समय द्वन्द्व युद्ध

तोमर त्रिशूळ धर्यां मुशळ, गाज्या हळधर कर धरी हळ,
छप्पन कोटी जादव गडगडिया, दानव उपर तूटी पडिया । २१ ।
मानवथी दानवदळ दळाय, देखी बाणासुर अकळाय,
बोल्यो बाण धरी अभिमान, कृष्ण तणुं उतारुं मान । २२ ।
वाध्या जादव असुर समान, बाणे धरियुं शिवनुं ध्यान,
अगियार कोटी गणनी सेनाय, लई पधार्या शंकरराय । २३ ।
भूत प्रेत भैरव वैताळ, सप्त ज्वर व्याधि ने व्याळ,
शिकोतरी शाकणी सिंहारी, ते लईने आव्या त्रिपुरारी । २४ ।
वृषभे चडी आव्या बाणनाथ, जादव सेनानो करवा घात,
वागे शींग डमरु ने डाक, गाज्या हरि हर दईने हाक । २५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

हाक मारी शंकरे, क्यां गया केशव राम रे ?
भट प्रेमानंद कहे कथा, हरिहरनो संग्राम रे । २६ ।

(आरम्भ) हो गया । २० (सैनिकों ने) तोमर, त्रिशूल और मूसल धारण किये थे । हलधर बलराम हल ग्रहण करके गरज उठे । तो छप्पन करोड़ यादव (योद्धा मेघों के-से) गड़गड़ाने लगे और दानवों पर टूट पड़े । २१ मानवों से दानव-सेना कुचली जा रही है, यह देखकर बाणासुर आकुल-व्याकुल हो गया । (फिर भी) वह (बाण) अभिमान धारण करके बोला, ‘ रे कृष्ण, मैं तेरा अभिमान छुड़ा लूँगा ’। २२ (जब) यादव और असुर समान रूप से आगे बढ़े, तब बाण ने शिवजी का ध्यान धारण किया (बाण शिवजी का ध्यान करने लगा) । (फलतः) शिवराजजी ग्यारह करोड़ गणों की सेना लेकर पधारे । २३ (उनके साथ) भूत, प्रेत, भैरव, वैताल, सातों ज्वर[1] व्याधियाँ और सर्प थे । त्रिपुरारि शिवजी (अपने साथ) शिकोतरी, शाकिणी, सिंहारि (आदि) को (भी) लेकर आ गये । २४ बाण के स्वामी (शिवजी) यादवों की सेना का संहार करने के लिए बैल (नन्दी) पर आरूढ़ होकर आ गये । सींग, डमरू और डफ बज रहे थे । (फिर) शिवजी हरि (कृष्ण) को पुकारकर) गरज उठे । २५

शिवजी पुकार उठे— ‘ अरे, केशव (कृष्ण) और (बल-) राम कहाँ गये ? ’ (अब) भट्ट प्रेमानन्द हरि और हर के संग्राम की कथा कहने जा रहे हैं । २६

---

१ सप्त ज्वर : कालज्वर, एकान्तरज्वर, शीतज्वर, तरियाज्वर, पित्तज्वर, वातज्वर, सद्यघात कालज्वर ।

कडवुं ३६ मुं—(शिवजी की सेना द्वारा युद्ध आरम्भ करना)

राग सामेरी

आव्या जुद्धे ते शंकर रायजी, सेवकनी करवा सहाय जी,
भोळोनाथ ने श्रीभगवानजी, देखी रीझ्यो असुर राजानजी । १ ।

ढाळ

राय रीझ्यो असुरनो, ते शरण शंकरने गयो,
पाय लागी पंचवदनने, समाचार सघळो कह्यो । २ ।
पुत्र प्रद्युमन तणो, तेणे लगाड्युं लांछन,
जामात्रा पदवी भोगवी, छानुं सेव्युं ओखानुं भवन । ३ ।
बंधने अनिरुद्ध राख्यो, मने हणतां ते दया आवी,
एवा अपराध उपर आव्या, कृष्ण कटकने चडावी । ४ ।
वात विरोधनी सांभळी, शिवने ते चडियो क्रोध,
जाओ जादवनी सेना संहारो, शिवे वकार्या जोध । ५ ।
शाकणी शिकोतरी संचरी, भक्ष भक्ष वदती वाच,
जुद्धें चाल्या भूत भैरव, प्रेत ने पिशाच । ६ ।

कड़वक ३६—(शिवजी की सेना द्वारा युद्ध आरम्भ करना)

अपने सेवक की सहायता करने के लिए शिवराजजी युद्ध (-भूमि) में आ गये । असुरराज (बाण) भगवान भोलानाथ शिवजी को देखकर प्रसन्न हो गया । १ असुरों का राजा बाण प्रसन्न हो गया और शिवजी की शरण में गया । उसने पंचवदन (शिवजी) के पाँव लगते हुए समस्त समाचार कह दिया । २ (उसने कहा—) प्रद्युम्न के अनिरुद्ध (नामक) एक पुत्र है । उसने (हमें) लांछन लगा दिया है । उसने जामाता का पद धारण करते हुए ओखा के भवन में गुप्त रूप से आश्रय कर लिया था । ३ मैंने (इसलिए) अनिरुद्ध को बन्धन में (बन्दी बनाकर) रखा है; (क्योंकि) उसका वध करने में मुझे उसपर दया आ गयी (अतः मैंने उसे नहीं मार डाला) । इतने अपराध के होने पर भी कृष्ण सेना के साथ चढ़ाई करते हुए आ गये हैं । ४ ऐसे विरोध (बैर) की बात सुनकर शिवजी को क्रोध आ गया । तो 'जाओ, यादवों की सेना का संहार करो'—(कहते हुए) शिवजी ने योद्धाओं को उकसा दिया । ५ फलस्वरूप शाकिनियाँ, शिकोदरियाँ संचार करने लगीं । वे वाणी (मुंह) से 'खा डालो', 'खा डालो' बोलने लगीं । भूत, भैरव, प्रेत और

महासुभट बळिया प्राक्रमी, द्वंद्व जुद्धनुं करुं शुं वखाण ?
गडगडिया सात्यकी अहंकारी, सन्मुख मूके बाण। ७।
बाणासुर बळिभद्र सामो, शंकर ने श्रीकृष्ण,
सात्यकी ने स्वामी कार्तिक, नंदी ने चारुद्रष्ट। ८।
कृतवर्मा कौभांड सामो, सांब ने धूम्रलोचन,
शोणिताक्ष ने सोमकेतु, गणपति ने प्रद्युमन। ९।
रथी सामा रथी आव्या, हस्ती सामा हस्ती,
जादवने श्रीहरि होंकारे, हणो शिवना उपस्ती। १०।
असुर जादव मळ्या एकठा, सामेसामा धीर,
छप्पन कोटी ने बोतेर कोटी, वढतां पाडे वीर। ११।

पिशाच युद्धभूमि की ओर चल दिये। ६ वे महान योद्धा बलवान और पराक्रमी थे। (कवि कहता है—) मैं उनके द्वन्द्व युद्ध का क्या वर्णन करूँ! सात्यकि अहंकारपूर्वक गरज उठा। वह सामने (आकर) बाण चलाने लगा। बाणासुर और बलभद्र तथा शिवजी और कृष्ण सामने-सामने आ गये। सात्यकि और कार्तिक स्वामी[1], नन्दी और चारुदृष्ट, कृतवर्मा और कौभाण्ड, साम्ब और धूम्रलोचन, शोणिताक्ष और सोमकेतु, गणेशजी और प्रद्युम्न (लड़ने के लिए) आमने-सामने आ गये। ७-९ रथियों के सम्मुख रथी और हस्तियों के सामने हाथी (अर्थात हाथियों पर आरूढ़ योद्धा एक-दूसरे के) सम्मुख आ गये। श्रीकृष्ण ने यादवों को चिल्लाते हुए आगे बढ़ने को प्रेरित किया (और कहा)— 'शिवजी के सेवकों को मार डालो'। १० असुर और यादव सामने-सामने इकट्ठा हो गये। (इधर से) छप्पन करोड़ और (उधर से) बहत्तर करोड़ वीर लड़ाई करने लगे। ११ अगरी पर अगरी पड़ (टकरा) रही थी।

---

१ कार्तिक स्वामी : तारकासुर नामक असुर ने तपस्या द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न कर लिया और उनसे अवध्यत्व का वरदान प्राप्त किया। फिर भी ब्रह्मा ने कहा कि केवल सात दिन अवस्था का शिशु ही उसे मार डालेगा। तारकासुर ने समस्त ब्रह्माण्ड को उत्पीड़ित किया। अन्त में देवों ने शिवजी से विनती की कि वे पार्वती से विवाह करके पुत्रोत्पत्ति करें। उसके अनुसार शिव-पार्वती के एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम 'स्कन्द' था। देवों ने उसे अपना सेनापति नियुक्त किया। जन्म होते ही उसे विष्णु आदि देवों ने विविध अस्त्र प्रदान किये। छः दिन की अवस्था में उसने विद्यार्जन किया और सातवें दिन तारकासुर का वध किया। एक मान्यता के अनुसार कृत्तिकाओं के गर्भ से उसका जन्म हुआ अथवा कृत्तिकाओं ने उस गर्भस्थ बालक की रक्षा की, अतः उसे कार्तिकेय अथवा कार्तिक स्वामी कहते हैं। उसके छः मुख थे, अतः उसे षण्मुख या षडानन भी कहते हैं।

भोगळ भोगळ पडे फरसी, गुरजना झळकारा,
गगनमां जेम वीजळी चमके, तेम खड्गतणा चळकारा। १२।
सांग लीधी परीघ भाला, भोगळ ने भींडीमाळ,
शूर चक्रथी चूर थता, वढे वीर विकराळ। १३।
सरखा ने महा सुभट बळिया, थयो रणसंहार,
हस्त चरण ने श्रवण नासिका, छेदे थाय हाहाकार। १४।
प्रबळ माया आसुरी, थया घोर अंधकार,
शूर चक्रे चर थातां, वही शोणितनी धार। १५।
अस्थी चर्म ने मेद कादव, जादव दैत्य दयाळ,
धर्म चूकी, माम मूकी, कायर पुरुष पलाय। १६।
शोणितनी सरिता वही, भयानक भासे भोम,
पगप्रहारे रुधिर उडाडे, शुं सायर थाशे व्योम ?। १७।
कुतूहल देखी देव कांप्या, हवो ते हाहाकार,
बळभंग भूजंग हवो, केम सहेशे ते भूमिभार ?। १८।

परशुओं और मुद्गरों का चमकारा हो रहा था। जैसे आकाश में बिजलियाँ चमकती हैं, वैसे खड्गों का चमकारा हो रहा था। १२ किसी ने साँग ग्रहण की, तो किसी-किसी ने परीघ, भाला, अगरी और भिण्डिपाल। शूर योद्धा चक्रों से चूर-चूर होने लगे। (इस प्रकार) विकराल रूप से वीर लड़ रहे थे। १३ और भले-भले योद्धा सम-समान बलवान थे। युद्धभूमि में (बड़ा) संहार हो गया। वे (एक-दूसरे के) हाथ, पाँव, और कान, नाक काट रहे थे। हाहाकार हो रहा था। १४ असुरों की माया प्रबल थी। उससे घोर अन्धकार (उत्पन्न) हो गया (असुरों ने माया से घना अँधेरा फैला दिया)। शूर पुरुष चक्रों (के आघात) से चूर-चूर होते जाते रहने से रक्त की धारा बहने लगी। १५ हड्डियों, चमड़े और मेद का (मानो) कीचड़ निर्मित हो गया। यादव दैत्यों को पीस डाल रहे थे (यादव और दैत्य एक-दूसरे को पीस डाल रहे थे। (क्षत्रिय-) धर्म को छोड़कर, हिम्मत खोकर कायर पुरुष (अर्थात् योद्धा कायरता को प्राप्त होकर) भागने लगे। १६ रक्त की नदी बहने लगी। (इससे) धरती भयानक दिखायी देने लगी। (योद्धा) पाँवों के आघात से रक्त उड़ा-उछाल रहे थे। क्या (इससे) आकाश (रक्त का) सागर तो (नहीं) बनने जा रहा था ?। १७ इस कौतुक (लीला) को देखकर देव काँप उठे। (तब) हाहाकार मच गया। भुजंग अर्थात् (शेष) नाग का बल भग्न हो गया, तो वह (अपने

नयणे नीरखी नव शके, शाम रुधिरप्रवाह,
जोगणीनुं भक्षण चाल्युं, सखी सींचाणा थाय। १९।
व्याघ्र सिंह ने भूत प्रेत, शिव सेनानी वृत्य,
संतोष पामी शाकिणी, कल्लोल करती कृत्य। २०।
ओखा अनिरुद्ध कारणे, रोळाणा ते राणीजाया,
कुसुमसज्जाए पहोढता, ते रुधिरनदीए तणाया। २१।
सागरशुं संगम मळ्यो, शोणितनी सरिता वही,
अस्थी, चर्म ने मांसनी, बे पाळ बंधन थई रही। २२।
मातंग अंग मस्तक विना, शुं ग्राह छे विकराळ ?
कुंभस्थळ जाणे काचबा, नरशीश-केश शेवाळ। २३।
भासे भुजंग सम नरकरो, मुखकमळशुं कमळ,
नेत्र मच्छ ने मुगट बगला, नरनाभ शुं वमळ। २४।
प्रवाहे तणाया रथ जाता, शोभीतां शुं वहाण,
देखीने दारुण नदी, कोपे चढ्या त्रिशूलपाण। २५।

सिर पर) भूमि का भार कैसे सहन कर सकता है ? । १८ श्याम कृष्ण रक्त के उस प्रवाह को आँखों से देख नहीं सकते थे। (इधर) योगिनियों द्वारा (सैनिकों के शवों का) भक्षण चल रहा था। बाज़ पक्षी (मानो) उनकी सखियाँ बन गये। १९ शिवजी की सेना की प्रवृत्ति बाघों, सिंहों और भूतों, प्रेतों की-सी हो गयी थी। (इससे) शाकिनियाँ सन्तोष को प्राप्त हो गयीं और आनन्दपूर्वक नृत्य कर रही थीं। २० ओखा और अनिरुद्ध के कारण (अनेकों) रानी-पुत्र (राजकुमार) नष्ट-भ्रष्ट (-से) हो गये। जो पुष्प-शय्या पर पौढ़ते, वे (आज) रक्त की नदी में बहते जा रहे थे। २१ रक्त की नदी बहती जा रही थी और उसका सागर के साथ संगम हो गया। (उस नदी के लिए मानो) हड्डियों, चर्मों और मांस के दो बाँध (कछार) बने हुए थे। २२ अंगों और मस्तक से रहित हाथी (जो बहते जा रहे थे), क्या वे विकराल ग्राह (घड़ियाल) थे ? (हाथियों के) कुम्भस्थल मानो कछुए थे। नर-मस्तकों के केश (मानो) शैवाल थे। २३ मानव-हाथ साँपों के समान आभासित हो रहे थे और मुख-कमल कमल-जैसे (जान पड़ते) थे। नेत्र मत्स्य और मुकुट बगुले थे। नर शरीर की नाभियाँ मानो भँवर थे। २४ (रक्त के) प्रवाह में बहते जाते हुए रथ मानो जहाज़ों-से शोभायमान हो रहे थे। यह (रक्त की) दारुण नदी देखकर त्रिशूलपाणि शिवजी क्रुद्ध हो उठे। २५

वलण (तर्ज़ बदलकर)

त्रिशूलपाणि सोंढिया, वृषभ हांक्यो भूधर भणी,
भट प्रेमानंद कहे कथा, हवे कहुं राड हरिहर तणी। २६।

त्रिशूलपाणि शिवजी चल पड़े; उन्होंने भू-धारी अर्थात् शेष के अवतार बलराम की ओर अपने वृषभ (नन्दी) को चला लिया। भट्ट प्रेमानन्द अब हरि (कृष्ण) और हर (शिवजी) के युद्ध की कथा कहने जा रहे हैं। २६

कडवुं ३७ मुं—(शिवजी और कृष्ण की सेनाओं का युद्ध)

राग सारंग

शंकर आव्या छे संग्रामे, धर्युं चाप ते सुंदर श्यामे,
गाजे गरुडे छेलछबीलो, हांके पोठियो हरजी हठीलो। १।
कृष्णे चक्र चढाव्युं चाक, मूक्युं शंकरे पिनाक,
आवी मळिया बे भगवान, थयो संसार आंदुलमान। २।
वागी हरिहर तणी हाक, पुरमां रांध्या रह्या छे पाक,
चळ्या विधात्रीना लेख, ध्रूजे धरा ने सळक्यो शेष। ३।
फाट्युं आकाश, तूट्यां अभ्र, पड्या गर्भवंतीना गर्भ,
करी चाप ते मंडलाकार, शिवे बाण मूक्यां छे बार। ४।

कड़वक ३७—(शिवजी और कृष्ण की सेनाओं का युद्ध)

(इधर) शिवजी संग्राम (-भूमि) में आ गये, तो (उधर) श्याम सुन्दर कृष्ण ने धनुष धारण किया। गरुड़ पर (विराजमान) छैलछबीले (मोहक और रूपवान युवा पुरुष) कृष्ण गरज उठे, तो हठीले शिवजी ने नन्दी को हाँक दिया (चलने को प्रेरित किया)। १ (उधर) कृष्ण ने (अपना सुदर्शन) चक्र गोल-गोल घुमाना आरम्भ किया, तो (इधर) शिवजी ने पिनाक धनुष (पर बाण चढ़ाकर) चला दिया। (इस प्रकार) वे दोनों देव आकर (एक-दूसरे से युद्ध-भूमि में) मिल गये, तो संसार दोलायमान हो उठा। २ हरि अर्थात कृष्ण और शिवजी की धाक (जगत में) जम गयी। नगर में अन्न पकाया हुआ (वैसा ही) धरा रहा (किसी से भोजन करना नहीं बना)। विधात्री अर्थात भाग्य की अधिष्ठात्री देवी के लिखे लेख (मानो) विचलित होने लगे। पृथ्वी काँप उठी और (उसका भार वहन करनेवाला) शेष कुलबुला उठा। ३ आकाश (मानो) फट गया; बादल टूट गये; (डर के मारे) गर्भवती

जादवसेना नाखी उराडी, लई समुद्र मांही पाडी,
आवे बाण ते मेघनी धार, करे भूत प्रेत पुकार। ५।
ते पूंठे मूक्यां पंचवीश, छेद्यां आवतां श्रीजुगदीश,
शत सहस्र अयुत लक्ष कोट, वरसे बाण ने दोटादोट। ६।
छूटे बंधूक नाळ ने गोळा, फेरवे क्रोधे भींडीमाळा,
सणसणतां शर बहु छूटे, तेणे कपाळ भडनां फूटे। ७।
वळगे भूत प्रेत आवर्ण, वढे चुडेल अवळे चर्ण,
मस्तक सगडी धिकधिकावे, किलकिल करती उपर आवे। ८।
हरखी शाकिणी डाकिणी सर्व, आव्युं जाणे उजाणीनुं पर्व,
चूसे कंठ ने घूंटडा भरे, मुखे रुधिरना रेला ऊतरे। ९।
केटली वारुणीमां थई मग्न, वस्त्रवोणी फरे छे नग्न,
ग्रही भमावे जोद्ध गग्न, जादवसेना कीधी भग्न। १०।

नारियों के गर्भ गिर गये। धनुष को मण्डलाकार बनाते हुए (प्रत्यंचा खींचकर) शिवजी ने बारह बाण चला दिये। ४ (उन बाणों से) उन्होंने यादव सेना को उड़ा दिया और ले जाकर समुद्र में गिरा डाला। बाण क्या? वे मेघजल की धाराएँ ही थे— बाण मेघ (जल-) धाराओं की भाँति आ गये। (शिवजी के अनुयायियों में से) भूत और प्रेत चीखने-पुकारने लगे। ५ उनके बाद श्रीजगदीश कृष्ण ने पचीस बाण चला दिये और (उन शिवजी के) बाणों को आते हुए छेद डाला। (फिर) सौ, सहस्र, दस सहस्र, लक्ष, करोड़ बाण बरस रहे थे, तो भाग-दौड़ हो गयी। ६ बन्दूक़ों की नालों से गोले छूटने लगे। वे (योद्धा) क्रोध से गोफनें घुमाने लगे। साँय-साँय करते हुए बहुत बाण छूट रहे थे और उनसे योद्धाओं के मस्तक फूट-टूट रहे थे। ७ भूत, प्रेत आच्छादन-से छा गये। चुड़ैलें उलटे पाँवों लड़ने लगीं। उनके मस्तकों पर अँगीठियाँ धधक रही थीं। वे किलकारियाँ भरती हुई ऊपर आ रही थीं। ८ सब शाकिनियाँ, डाकिनियाँ आनन्दित हो गयीं; (क्योंकि) उनके लिए मानो किसी उत्सव का पर्व ही आ गया हो। वे (मृत योद्धाओं के) कण्ठ (-नाल) चूसतीं और (रक्त का) घूंट लेती थीं। (उस समय मानो) उनके मुख के अन्दर रक्त का रेला उतर जाता था। ९ कितनी ही (डाकिनियाँ, शाकिनियाँ) मद्य (के नशे) में मग्न (चूर) होते हुए वस्त्रहीन होकर नंगी घूमती थीं। वे योद्धाओं को पकड़-पकड़कर आकाश में घुमा देती थीं। (इससे) यादव सेना भग्न (उद्ध्वस्त) हो गयी। १० कितनी ही की आँखें, गाल, किसी-किसी के मुख मानो बड़ी-बड़ी गलियों जैसे थे। कुछ लम्बे स्तन वाली थीं; कुछ

केटलीनी ते आंख कपोळ, कोनां मुख जाणे मोटी पोळ,
लंबस्तनी विपरीत वान, कोना भूमिए भराये कान। ११।
जीभ सळके सर्पाकार, मुखे किलकिल करे उच्चार,
घणा जादव खाधा करडी, नाठी सेना ते मारग मरडी। १२।
धाया राक्षस देता मार, जदुसेनाए खाधी हार,
छूटे दुर्ग नाळ ने गोळा, नाठा जादव टोळेटोळा। १३।
प्रगट्यो महादेवने वळी खार, वाळ्यो जादवनो संहार,
वढे डाकिनी शाकिणी संहारी, एम कोप्या श्री त्रिपुरारी। १४।
नाठुं सैन्य दीठुं चोपास, त्यारे कोपिया श्री अविनाश,
हरिए चक्षु कीधी वक्र, पछे मूक्युं सुदर्शन चक्र। १५।
छेद्यां डाकिणी शाकिणीनां शीश, रंडा नासे ने पाडे चीस,
कोने भाला वाग्या भचोभचच, कोईनां नाक छेदायां टचच। १६।
छेद्यां हस्त, श्रवण ने चरण, नयणे ऊडे रुधिरनां झरण,
फरी जादव जुद्धे वळिया, ठाम ठामथी आवीने मळिया। १७।

विपरीत क़द (डीलडौल) की थीं। कुछ के कान (लम्बे थे, वे) धरती पर उलझ रहे थे। ११ किसी एक की जीभ सर्पाकार लपलपा रही थी। कोई एक किलकिल ध्वनियों का उच्चारण करती थी। उन्होंने बहुत-से यादवों को दाँतों से काट-काटकर खा डाला। तो मार्ग बदलकर वह सेना भाग गयी। १२ राक्षस आघात करते हुए दौड़ रहे थे। (इससे) यादव सेना ने हार मान ली। दुर्ग पर से नाल और गोले छूट रहे थे। (अतः) यादवों के झुण्ड के झुण्ड भाग गये। १३ इसके अतिरिक्त महादेव शिवजी में ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी थी। (अतः) उन्होंने यादवों के संहार द्वारा (वैर का हिसाब) अदा किया। (विपक्षी वीरों का) संहार करते हुए डाकिनियाँ-शाकिनियाँ लड़ रही थीं। इस प्रकार श्रीत्रिपुरारि शिवजी क्रुद्ध हो गये थे। १४ अविनाशी श्रीकृष्ण ने चारों ओर देखा कि सेना भागती जा रही है, तो वे कुपित हो उठे। श्रीहरि (कृष्ण) ने फिर दृष्टि वक्र की और अनन्तर सुदर्शन चक्र चलाया। १५ वे उससे उन डाकिनियों और शाकिनियों के सिर छेद डालने लगे, तो वे रंडियाँ भागने लगीं और चीख़ने-चिल्लाने लगीं। किसी-किसी के बीचोबीच भाले घाव करते हुए लग गये। किसी-किसी की नाक टचकार (ध्वनि) के साथ काट डाली। १६ कुछ के हाथ छेद डाले, कुछ के कान और पाँव काट डाले। कुछ की आँखों से रक्त के झरने उछलते कूदते हुए झरने लगे। फिर यादव युद्धभूमि में लौट आये। वे स्थान-स्थान से आकर इकट्ठा हो गये। १७

आव्या सामा जादव जन, देखी खीज्या पंचवदन,
मूके शिव अपरिमित बाण, भाला सुभट तजे छे प्राण । १८ ।
कृष्णे मूक्युं मोहास्त्र बाण, मोह पाम्या पिनाकपाण,
कीधुं पोठिया उपर शयन, सांभळ परीक्षित राजन । १९ ।
रणे कोप्यो बळीनो बंध, धाया गणपति ने वळी स्कंध,
महाक्रोध अभ्यंतर आणी, धाया धनुष विषे शर ताणी । २० ।
घणी जादवसेना मारी, क्रोध थकी को न उगारी,
धस्या राक्षस करता मार, जादवमां थयो हाहाकार । २१ ।
त्यारे धायो सात्यकी शूर, कीधी असुरसेना ने चर,
प्रगट्युं माया तणुं तिमिर, मंत्रे निवारे ते जदुवीर । २२ ।
छेद्यां कवच भाला ते छेक, नाठा असुर मूकीने टेक,
गाज्यो बाणासुर उन्मत्त, ताण्या धनुष ते पंच शत । २३ ।
नाखे बाण ते दानव दक्ष, शत सहस्र अयुत ने लक्ष,
नाठी सेना ते भडभडाट, हस्ती चीस पाडे चडचडाट । २४ ।

(जब) यादव जन सम्मुख आ गये, तो (उन्हें देखते ही) पंचवदन शिवजी खीझ उठे । फिर शिवजी अनगिनत बाण व भाले चलाने लगे । (उससे) भले-भले योद्धाओं ने प्राण त्याग दिये । १८ (तदनन्तर) कृष्ण ने मोहास्त्र (से युक्त) बाण चला दिया, तो (फलतः) पिनाकपाणि शिवजी मोह (मूर्च्छा) को प्राप्त हो गये । हे राजा परीक्षित, सुनो । वे नन्दी (की पीठ) पर सो गये । १९ (इधर) बलि राजा को आबद्ध करनेवाले भगवान विष्णु के अवतार कृष्ण रणभूमि में क्रुद्ध हो गये थे, तो (उधर) गणेशजी तथा उनके अतिरिक्त स्कन्ध दौड़े । अन्तःकरण में बड़ा क्रोध करते हुए वे धनुष पर बाण (चढ़ाकर उसे) खींचते हुए दौड़े । २० उन्होंने बहुत-सी यादव सेना मार डाली थी । उनके क्रोध से कोई नहीं बच पाया था । राक्षस आघात करते हुए (आगे-आगे) धँसते आ रहे थे; तो यादवों में हाहाकार मच गया । २१ तब शूर सात्यकि (आगे) दौड़ा और उसने असुर-सेना को चूर-चूर कर डाला । फिर (राक्षसों की) माया से अँधेरा उत्पन्न हो गया, तो यदुवीर ने मंत्र से उसका निवारण किया । २२ उसने कवच और भाले पूर्णतः छेद डाले, तो असुर टेक (प्रण) छोड़कर भाग गये । (यह देखते ही) उन्मत्त (होकर) बाणासुर दौड़ा । उसने पाँच सौ धनुष तान लिये । २३ सावधानी से उस दानव ने सौ, सहस्र, दश सहस्र और करोड़ बाण चलाये । उससे हड़बड़ाहट के साथ सेना भाग गयी । हाथी चिंघाने-चीत्कारने लगे । २४ यादवों में बहुत टूट-फूट हुई । तब सारंग अर्थात

पडे जादवमां बहु भंग, त्यारे कोप्या श्री सारंग,
श्यामे आकर्ष्युं सारंग, बाणे भेद्युं ते बाणनुं अंग । २५ ।
कृष्णे छेद्यो धजानो दंड, रथ कीधो ते शतखंड,
छेद्यां छत्र अति अनोप, काप्यां कवच आयुध ने टोप । २६ ।
बाणे पाड्यो मस्तकनो टोप, देखी कृष्णने चडियो कोप,
कीधा वाहन विना वीर, गतिभंग थयां शरीर । २७ ।
छेदवा मांड्या ज्यारे हाथ, आवी बाणासुरनी मात,
कोटरा एवुं तेनुं नाम, देखी नग्न ने लाज्या श्याम । २८ ।
नव मूक्युं तव सुदर्शन, नासी छूट्यो बाण राजन,
पाछो क्रोध करी ते वार, थयो जुद्ध करवा तैयार । २९ ।
राये फरी कटक सज कीधुं, बाणे वढवा ददामुं दीधुं,
ज्यां ऊभा श्याम ने राम, आवी कीधो महासंग्राम । ३० ।
पछे मांड्युं आसुरी कर्म, वरसे मांस रुधिर ने चर्म,
धायो समुद्र वाधे जेम पर्व, वरसे तांहां अस्थि-उपद्रव । ३१ ।

शाङ्‌र्गधनुषधारी श्रीकृष्ण क्रुद्ध हो उठे । श्याम कृष्ण ने फिर शाङ्‌र्ग धनुष चढ़ाकर खींच लिया और बाण से बाणासुर के अंग को छिन्न-भिन्न कर डाला । २५ कृष्ण ने उसके ध्वज-दण्ड को काट डाला; उसके रथ के सौ (-सौ) टुकड़े कर डाले । उसके अति अनुपमेय छत्र को छेद डाला; उसके कवच, आयुध और टोप को काट डाला । २६ बाण ने मस्तक के टोप को गिराया है, यह देखने पर कृष्ण को क्रोध आ गया । (फिर) उन्होंने उन वीरों को वाहन-हीन कर दिया, तो (मानो) उनके शरीर भग्न-गति अर्थात गतिहीन हो गये । २७ जब (कृष्ण ने) हाथ काटना आरम्भ किया, तब बाणासुर की माता (वहाँ) आ गयी । उसका नाम कोटरा था । श्याम कृष्ण ने उसे नग्न देखा, तो वे (स्वयं) लज्जित हो गये । २८ तब उन्होंने सुदर्शन चक्र नहीं छोड़ा; तब राजा बाण भागकर छूट गया (बच गया) । फिर उस समय क्रोध करते हुए वह युद्ध करने को तैयार हो गया । २९ उस बाण राजा ने सेना को फिर से सज्ज किया और लड़ने के लिए नगाड़े पर चोट की । जहाँ कृष्ण और बलराम खड़े थे, वहाँ आकर उसने बड़ी लड़ाई की । ३० अनन्तर उसने आसुरी (माया-) कर्म आरम्भ किया । वह मांस, रक्त और चमड़े बरसाने लगा । (सहायता के लिए मानो) समुद्र (ज्वार में आकर) दौड़ा, जैसे कोई पर्वकाल हो । वहाँ वह हड्डियों के रूप में उपद्रव ही बरसाने लगा । ३१ समस्त बलवान यादव भाग जाने लगे । भले-भले योद्धाओं ने (अपनी वीरता सम्बन्धी घमण्ड त्याग दिया ।

नासे जादव बळिया सर्व, भला सुभट तजे गर्व,
हलधर नाठा मूकी माम, दैत्ये दारुण कीधो संग्राम। ३२।
नाखे कर्दम कांटा सर्प, वरसे शल्या दानवनर्प,
पाड्युं जादवमां भंगाण, नाठा हलधर लईने प्राण। ३३।
दानवराय मूके दोट, कोनी ग्रहीने मरडे कोट,
बेनां ग्रही अफाळे शीश, खेद पाम्या श्री जगदीश। ३४।
गरुड थयो छे गतिभंग, शल्याप्रहारे भांग्युं अंग,
रथवहोणा कीधा राम, मूकी माम ने नाठा काम। ३५।
सुंदरश्यामजी, कीजे सहाय, जादव करे छे त्राह्य त्राह्य,
देखीने देव पाम्या बीक, बाणे वाळी रुधिरनी नीक। ३६।
खीज्या कृष्ण, खेड्यो खगजन, अति क्रोध चढ्यो छे मन,
चक्र लीधुं छेदवा हाथ, कीधी ईच्छा ते वैकुंठनाथ। ३७।
एम कोप्या श्री जदुनाथ, हवे छेदुं बाणना हाथ,
मूक्युं चक्र ते बीजी वार, दैत्यमां थयो हाहाकार!। ३८।

हिम्मत खोकर हलधर बलराम भाग गये। (इस प्रकार) उस दैत्य ने महान संग्राम किया। ३२ वह दानव राजा कीचड़, काँटे, साँप (ऊपर से नीचे) फेंकने लगा। वह शिलाएँ (भी) बरसा रहा था। यादवों में उसने भगदड़ उत्पन्न कर दी। उससे हलधर बलराम तो जी लेकर भाग गये। ३३ दानवराज (बाण) दौड़ने लगा, (न जाने) वे किस (किस) की गरदन पकड़कर मरोड़ डालता। उसने उन दोनों (वीरों) के मस्तक पकड़कर उन्हें पटक दिया, तो जगदीश श्रीकृष्ण (यह देखकर) खेद को प्राप्त हो गये। ३४ गरुड़ तो कुण्ठित-गति हो गया, उससे चलना-उड़ना नहीं बन पड़ रहा था, (क्योंकि) शिलाओं के आघात से उसका अंग भग्न हो चुका था। (उस असुर ने) बलराम को रथ-विहीन कर डाला था। कामदेव के अवतार प्रद्युम्न ने हिम्मत खो दी और वे भाग गये। ३५ (भागते-भागते वे बोले,) 'हे श्यामसुन्दरजी, सहायता कीजिए।' यादव त्राहि-त्राहि कर रहे हैं। देव भय को प्राप्त हो गये हैं। —यह देखकर बाण ने फिर रक्त की नाली बहा दी। ३६

(यह देखकर) कृष्ण खीझ उठे। उन्होंने खगजन अर्थात (सेवक) गरुड़ को बुला लिया। उनके मन में बहुत क्रोध उत्पन्न हो गया था। उन्होंने (बाणासुर के) हाथों को काट डालने के लिए चक्र (हाथ में) ले लिया। वैकुण्ठनाथ भगवान के अवतार कृष्ण ने ऐसी इच्छा की। ३७ इस प्रकार यदुनाथ कृष्ण क्रुद्ध हो उठे। वे बोले, 'मैं अब बाण

नाठो बाण वाळीने मूठ, हरिए चक्र ते मूक्युं पूंठ,
अंगोअंगमां लागी ज्वाळ, जेम छेदे को वडनी डाळ। ३९।
एम कपाय बाणना पाण, त्राह्य त्राह्य वदे मुख वाण,
अंगे वहे शोणितनी धार, काप्या कर बाणना ते वार। ४०।
आवी बेठुं सुदर्शन, अकळायो बाण राजन,
जेम छेदे वृक्षनी डाळ, तेम कर काप्या गोपाळ। ४१।
जेम झूडे वृक्षने वन, तेम कर कीधा छेदन,
पछे राख्या कर त्यां चार, पड्यो बाण ते भूमि मोझार। ४२।
अंगे रुधिर वहे विवर्ण, जेम पर्वतथी नीसरे झरण,
सूतो करे शिवनुं ध्यान, प्रभु राखो सेवकनुं मान। ४३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बाणासुर पृथ्वी पड्यो, पीडा पाम्यो पंड रे,
वळी सदाशिव कोपे चढ्या, कंप्यां चौद ब्रह्मांड रे। ४४।

के हाथ काट देता हूँ।' (यह सोचकर जब) उन्होंने दूसरी बार चक्र चला दिया, तो दैत्यों में हाहाकार मच गया। ३८ (यह देखते ही) बाण मानो दुम दबाकर भागने लगा, तो कृष्ण ने चक्र उसके पीछे छोड़ दिया। उससे उस (बाणासुर के) अंग-अंग में ज्वाला (-सी) लग गयी; (जान पड़ा) जैसे कोई बरगद की शाखाओं को ही काट रहा हो। ३९ इस प्रकार (कृष्ण ने) बाण के हाथ काट डाले, तो वह 'त्राहि-त्राहि' ('बचाओ-बचाओ') जैसे शब्द बोलने लगा। जब बाण के हाथ काट दिये, तो उसके अंग से रक्त की धारा बहने लगी। ४० (तत्पश्चात) सुदर्शन चक्र (लौटकर) आते हुए (अपने स्थान पर) बैठ गया। इस (आघात) से राजा बाण आकुल-व्याकुल हो उठा। जिस प्रकार वृक्ष की डालें छेद डालते हैं, उसी प्रकार गोपाल कृष्ण ने उसके हाथ काट डाले। ४१ जिस प्रकार वृक्षों के वन (समूह) पर प्रहार करते हैं (और उसे काट डालकर नष्ट कर देते हैं), उस प्रकार (कृष्ण ने) उसके हाथ छेद डाले। फिर वहाँ (उसके शरीर में) केवल चार हाथ (शेष) रख लिये। (इस स्थिति में) बाण भूमि पर गिर गया। ४२ जैसे पर्वत से झरना निःसृत होता रहता है, वैसे उस नीच (असुर) के शरीर से रक्त बह रहा था। (तदनन्तर) उसने लेटे-लेटे शिवजी का ध्यान किया (और कहा)— हे प्रभु, (अपने इस) सेवक के सम्मान की रक्षा करो। ४३

बाणासुर पृथ्वी पर गिर गया। उसकी देह पीड़ा को प्राप्त हो गयी

थी। फिर सदाशिवजी क्रोधपूर्वक (विपक्षी की ओर) चढ़ दौड़े, तो चौदह ब्रह्माण्ड (भुवन) काँप उठे। ४४

कडवुं ३८ मुं—(श्रीकृष्ण और शिवजी का विकराल युद्ध)

राग रामग्री

जाग्यो रे जोगी पूरण क्रोध जी, छेक तणाया वाध्यो विरोध जी,
बाणने लाव्योऊचकी कौभांडजी, सेवक दीठो मांसनो पिंड जी। १।

चाल

पिंड जाणे मांसनो एवी, दीठी असुरनी काय;
विश्वप्रलेनी इच्छा कीधी, धनुष धर्युं शिवराय। २।
क्रोधे भाळी कहे कपाळी, तें टाळी मारी मरजाद,
ए पण मारुं जे सर्व संहारुं, उतारुं उन्माद। ३।
वृषभ हांक्यो ने गरुड ताक्यो, मुखे बोल्यो मेघस्वर,
मंत्र फूंक्यो ने कृष्ण ढूंकया, मूक्यो काळज्वर। ४।
जादवसेना थई आकळी, तावे ते पीड्यां तन,
कृष्णे मूक्यो एकांतरो, तेणे खीज्या पंचवदन। ५।

कड़वक ३८—(श्रीकृष्ण और शिवजी का विकराल युद्ध)

योगीश्वर शिवजी में पूरा-पूरा क्रोध जग उठा (उत्पन्न हो गया)। उनमें विरोध (का भाव) बढ़ गया और उसमें वे पूर्णतः बह गये। (इधर) कौभाण्ड बाण को उठाकर ले आया। सेवकों ने उसे मांस-पिण्ड (-सा) देखा। १

उस असुर की काया मांस-पिण्ड-जैसी देखी, तो शिवजी ने विश्व में प्रलय कर देने की इच्छा की और धनुष धारण किया। २ क्रोधपूर्वक देखते हुए कपाली शिवजी बोले, 'तुमने मेरी मर्यादा (प्रतिष्ठा) टाल दी है (मुझे अप्रतिष्ठा को प्राप्त कराया है)। अतः मैं इस सबका संहार कर डालूंगा, तुम्हारे उन्माद को भी उतार दूंगा'। ३ उन्होंने अपने नन्दी बैल को हाँक लिया, और गरुड़ की ओर ताक लिया। वे मुख से मेघ के-से गम्भीर स्वर (में) बोलने लगे। उन्होंने मंत्र फूंक लिया और कृष्ण के पास गये। उन्होंने काल-ज्वर (से युक्त अस्त्र) चला दिया। ४ (उससे) यादव सेना आकुल-व्याकुल हो गयी। उन (सैनिकों) के शरीर ताप से पीड़ित हो गये। (तदनन्तर) कृष्ण ने एकान्तर ज्वर को चला दिया, तो

शिवे हंकार्यो टाढियो, वरसे जेम हुताशन,
तरियो मूक्यो त्रिकमे, तेणे दम्या दानवजन। ६ ।
पशुपाळे मूक्यो पित्तज्वर, वातज्वर मूक्यो लक्ष्मीवर,
महादेवे पछे मूक्यो, सद्यघात कालज्वर। ७ ।
लोहदंड तेना हाथमां, छे नेत्र लोहीवरण,
धस्यो पण पाछो खस्यो, जोई अशरणशरण। ८ ।
कृष्णे मूक्या जेटला, तेणे राखी शिवनी लाज,
सप्तज्वर स्तुति करे, तमो बंन्यो छो महाराज। ९ ।
ज्वरने वर हरिए आप्यो, हरिकथा भजे जेह,
निंदा करे शिवजी तणी, पीडजो तेनी देह। १० ।
ओखाहरण जे सांभळे, अंतर आणी वहाल,
कष्ट होये जो ज्वर तणुं, मूकजो तेनो ख्याल। ११ ।
पछे अग्न्यास्त्र मूक्युं शंकरे, प्रगट्यो ते हुताशन,
सेना दीठी दाझती, हरिए प्रेर्यो परजन्य। १२ ।

पंचवदन शिवजी खीझ उठे। ५ (फिर) शिवजी ने चिल्लाते हुए बुला लेकर शीतज्वर चला दिया। वह होम की अग्नि की तरह (मानो) बरस रहा था। (तदनन्तर) त्रिविक्रम विष्णु अर्थात कृष्ण ने तरिया ज्वर छोड़ दिया; उससे दानव जन थकावट को प्राप्त हो गये। ६ (फिर) पशुपाल (शिवजी) ने पित्तज्वर छोड़ दिया, तो लक्ष्मीवर विष्णु के अवतार कृष्ण ने वातज्वर चला दिया। अनन्तर महादेव शिवजी ने सद्यघात कालज्वर चलायमान कर डाला। ७ (उस ज्वरस्वरूप कालपुरुष के) हाथ में लौह-दण्ड थे। उसके नेत्र रक्त-वर्ण (लाल-लाल) थे। वह आगे धँस तो गया, लेकिन अशरण-शरण भगवान को देखते ही पीछे खिसक गया। ८ कृष्ण ने जितने (ज्वरयुक्त अस्त्र) चला दिये थे, उन्होंने शिवजी की प्रतिष्ठा की रक्षा (ही) की। (तब) उन सप्त ज्वरों ने (इस प्रकार) स्तुति की, 'आप दोनों महाराजा हैं'। ९

(तदनन्तर) हरि-कृष्ण ने उन ज्वरों को वरदान दिया— जो हरि-कथा का भजन करता हो, परन्तु शिवजी की निन्दा करता हो, तुम उनकी देह को पीड़ा को प्राप्त कर देना। १० अन्तःकरण में प्रेम (भक्ति-भाव) रखते हुए जो ओखा-हरण (की कथा) सुनेगा, यदि उसे ज्वर से कष्ट हो रहा हो, तो तुम उसका ख्याल छोड़ देना (अर्थात उसे पीड़ा न पहुँचाना)। ११

अनन्तर शिवजी ने अग्नि-अस्त्र छोड़ दिया। उससे हुताग्नि प्रकट हो गयी। (जब) सेना को जलते देखा, तो श्रीहरि ने वर्षा को प्रेरित किया। १२

वरसादे वह्नि समावियो, थई दैत्य उपर वृष्ट,
पवनास्त्र मूक्युं शंकरे, टाळ्युं असुरनुं कष्ट । १३ ।
धूळकोट थयो वायुथी, रजे भराणां जादव-चक्ष,
सर्पास्त्र मूक्युं त्रिक्रमे, तेणे वायु कीधो भक्ष । १४ ।
सेना नासे बाणनी, प्रगट्या ते सर्प अपार,
पछे महादेवे गरुडास्त्र मूक्युं, तेणे कीधो नागसंहार । १५ ।
खगे चंचुना प्रहार मांड्या, दम्या जादव शूर,
कृष्णे शल्याकोट प्रगटी, गरुड कीधा चूर । १६ ।
शंकरे वज्रास्त्र मूक्युं, पर्वत कीधा शत खंड,
भूधरे ब्रह्मास्त्र मूक्युं, डोल्यां त्रण ब्रह्मांड । १७ ।
महादेवे रुद्र रूप कीधुं, बाळुं सर्व संसार,
पशुपताका कहाडियुं, त्यारे हवो हाहाकार । १८ ।

उस बरसात ने आग को बुझा डाला और दैत्यों पर वृष्टि हो गयी। (यह देखकर) शिवजी ने पवनास्त्र चला दिया और असुरों के (वर्षा-जन्य) कष्ट को दूर कर दिया । १३ (इधर फिर) उस वायु से धूल का दुर्ग-सा (उत्पन्न) हो गया; यादवों के नेत्रों को धूल ने व्याप्त कर डाला। तो त्रिविक्रम विष्णुस्वरूप कृष्ण ने सर्पास्त्र चला दिया, तो उस (अस्त्र) ने वायु को (मानो) खा डाला । १४ (जब) अनगिनत सर्प प्रकट हो गये, तो बाण की सेना भागने लगी। अनन्तर महादेव शिवजी ने गरुड़ास्त्र चला दिया, तो उसने उन नागों का संहार कर डाला । १५ (उस अस्त्र से उत्पन्न) गरुड़ों ने (अपनी-अपनी) चोंच से प्रहार करना आरम्भ किया, तो शूर यादव थकावट को प्राप्त हो गये। (तब) कृष्ण ने शिलाओं का एक कोट (दुर्ग) उत्पन्न करके उन गरुड़ों को चूर-चूर कर डाला । १६ (तदनन्तर) शिवजी ने वज्रास्त्र छोड़कर उन शिलाओं के पर्वतों के सैकड़ों टुकड़े कर डाले। (यह देखकर) गिरिधर कृष्ण ने ब्रह्मास्त्र चला दिया, तो तीनों ब्रह्माण्ड[1] डोल उठे । १७ (फिर) महादेव शिवजी ने रुद्र रूप धारण किया, (मानो उन्होंने सोचा कि—) समस्त संसार को जला दूं। फिर उन्होंने (अपना) दिव्य पाशुपत नामक अस्त्र निकाला, तब हाहाकार मच गया । १८ (फलतः) ध्रुव[2] काँपने लगे और मेरुपर्वत डगमगाने

१ तीन ब्रह्माण्ड— (यहाँ) स्वर्ग, मृत्यु और पाताल नामक तीनों लोक। ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक।

२ ध्रुव निश्चलता-स्थिरता के प्रतीक माने जाते हैं।

धूजे ध्रुव ने मेरु डगियो, खळभळ्यां सप्त पाताळ,
सागरे मरजाद मूकी, डोल्या दश दिक्पाळ । १९ ।
शिवने क्रोधे शेष सळक्यो, डोलिया दिग्गज,
चंद्र-सूरज झांखा थया, आपदा पाम्यो अज । २० ।
अष्ट पर्वत गाळ्या भूमिए, थई सूकी वनस्पति भू सर्व,
जक्ष, किन्नर, विद्याधर कांप्या, अप्सरा ने गंधर्व । २१ ।
चूक्या तापस तपथी, ध्यानथी चूक्या भगत,
क्रोधज्वाळा जोगेश्वरनी, बळे संधुं जगत । २२ ।
त्रैलोक्यमां बुंबाण वरत्युं, थाय गर्भना पात,
वायु रुंधायो विश्वनो, थई कोटी जीवनी घात । २३ ।
कष्ट जाणी सृष्टिनुं, श्री वैदरभीवल्लभ,
बाण मूक्युं संजीवन, थयुं जगत नवपल्लव । २४ ।

लगे। सातों पाताल[1] क्षुब्ध हो गये। सागरों ने मर्यादा त्याग दी। दसों दिक्पाल[2] डोलने लगे। १९ शिवजी के क्रोध से शेष कुलबुला उठा; दिग्गज विचलित हो उठे। चन्द्र-सूर्य निस्तेज हो गये और ब्रह्माजी विपत्ति को प्राप्त हो गये। २० भूमि पर अष्ट (कुल) पर्वत[3] गलने लगे। समस्त भूमि पर की वनस्पतियाँ सूख गयीं। यक्ष, किन्नर, विद्याधर, अप्सराएँ और गन्धर्व काँपने लगे। २१ (भयभीत होकर) तापस तपस्या से विचलित हुए; भक्तजन ध्यान-धारणा से चूक गये (विचलित हुए)। योगेश्वर शिवजी के क्रोध (रूपी अग्नि) की ज्वाला से समस्त जगत जलने लगा। २२ त्रिलोक में चीख-चीत्कार (कोलाहल) मच गया। (मारे डर के गर्भवती स्त्रियों के) गर्भ गिर गये। विश्व की (प्राण-) वायु रुँध गयी, तो कोटि-कोटि जीवों का नाश होने लगा। २३ वैदर्भी (अर्थात विदर्भ देश के राजा भीष्मक की लक्ष्मीस्वरूपा कन्या रुक्मिणी) के वल्लभ श्रीकृष्ण ने सृष्टि के कष्ट को जानते ही संजीवन बाण चला दिया। २४

---

१ पाताल सात माने गये हैं— अतल, वितल, सुतल, रसातल, महातल, तलातल और पाताल। अथवा— अहितल, महितल, सुतल, कर्मतल, वितल, शंकातल और रसातल।

२ दस दिक्पाल— सृष्टि की दसों दिशाओं में उसकी रक्षा के लिए प्रतिष्ठित दस देवता : इन्द्र-पूर्व, अग्नि-आग्नेय, यम-दक्षिण, निर्ऋति-नैर्ऋत्य, वरुण-पश्चिम, मरुत्-वायव्य, कुबेर-उत्तर, ईश-ईशान्य, ब्रह्मा-ऊर्ध्व और शेष-अधस्।

३ अष्ट (कुल) पर्वत : सृष्टि के आधार-भूत आठ मुख्य पर्वत— नील, निषध, विन्ध्य, माल्यवान, मलय, गन्धमादन, हेमकूट और हिमालय। अथवा— पारियात्र, ऋष्यवान, विन्ध्य, सह्य, मलय, महेन्द्र, शुक्तिमान और ऋक्षवान।

पुनरपि पल्ले मांडियो, विष्णुए मांड्यो वाद,
मुनिवर अमर आविया, ते करे आरत नाद । २५ ।
सुरराय ने सरस्वती, करे छे वेदस्तवन,
तोये क्रोध मूके नहीं, पछे आव्या कमलासन । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कमळभू अंतरिक्षथी आव्या, क्षमा क्षमा एम ओचरे,
शुकदेव कहे परीक्षितने, पछे ब्रह्मा स्तुति केवी करे । २७ ।

विष्णु के अवतार कृष्ण ने पुनश्च (युद्धस्वरूप) प्रलय आरम्भ किया, विवाद अर्थात संघर्ष आरम्भ किया । (यह देखकर) मुनिवर (और) देव (वहाँ) आ गये । वे आर्तनाद कर रहे थे । वे आर्त स्वर में बोलने लगे । २५ सुरराज इन्द्र और सरस्वती, वेद-स्तवन करने लगे । फिर भी उन्होंने क्रोध नहीं त्याग दिया, तो फिर कमलासन ब्रह्माजी (स्वयं वहाँ) आ गये । २६

कमलोद्भव ब्रह्माजी अन्तरिक्ष से (स्वयं वहाँ) आ गये । वे 'क्षमा करो', 'क्षमा करो'—ऐसा बोल रहे थे । शुकदेव परीक्षित से बोले— अनन्तर ब्रह्माजी ने उन दोनों— शिवजी और विष्णुस्वरूप कृष्ण —की इस प्रकार स्तुति की । २७

कडवुं ३६ मुं—(ब्रह्माजी आदि द्वारा शिवजी और विष्णुस्वरूप कृष्ण की स्तुति करना)

राग केदारो

स्तुति करे छे ब्रह्माय रे, नमो नमो,
हुं तो बेउने लागुं पाय रे, नमो नमो ।
छो त्रिभुवनना तात रे, नमो नमो,
कांई आरंभ्यो उत्पात रे, नमो नमो । १ ।

कड़वक ३६—(ब्रह्माजी आदि द्वारा शिवजी और विष्णुस्वरूप कृष्ण की स्तुति करना)

ब्रह्माजी स्तुति करने लगे— (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है । मैं तो (आप) दोनों के पाँव लगता हूँ । नमस्कार है, नमस्कार है । आप त्रिभुवन के पिता हैं । (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है । आपने कुछ उत्पात करना आरम्भ किया है । (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है । १ ब्रह्माजी हाथ जोड़कर खड़े थे; (वे बोले— आपको) नमस्कार

ब्रह्मा जोडी उभा हाथ रे, नमो नमो,
जुद्ध मूकी दो दीनानाथ रे, नमो नमो।
छो गंगाधर पशुपाळ रे, नमो नमो,
तमो गरुड चड्या गोपाळ रे, नमो नमो। २।
जटाधारी भस्माधार रे, नमो नमो,
मोरपींछना धरनार रे, नमो नमो।
उमियावर जोगेश रे, नमो नमो,
महासिद्ध छो ऋषिकेश रे, नमो नमो। ३।
जय पिनाक-त्रिशूलपाणि रे, नमो नमो,
सारंगधर पुरुष पुराणी रे, नमो नमो।
तमे जगत्पिता कहेवाओ रे, नमो नमो,
प्रजाने कां मृत्यु उपजाओ रे, नमो नमो। ४।
सुख आपी दुःख कोई नापे रे, नमो नमो,
उछेरी वृक्ष कोई ना कापे रे, नमो नमो।
तेडी घरमां न कीजे घात रे, नमो नमो,
सुधा कहीए विश्वनी वात रे, नमो नमो। ५।

है, नमस्कार है। हे दीनानाथ, युद्ध छोड़ दीजिए (बन्द कर दीजिए)। नमस्कार है, नमस्कार है। आप गंगाधर हैं, जीव रूपी पशुओं के पालक हैं। नमस्कार है, नमस्कार है। हे गोपाल, आप गरुड़ पर आरूढ़ हो गये हैं। नमस्कार है, नमस्कार है। २ हे जटाधारी, हे भस्मधारी, नमस्कार है, नमस्कार है। हे मोरपंखों के धारी (कृष्ण), नमस्कार है, नमस्कार है। हे उमावर, योगेश, नमस्कार है, नमस्कार है। हे हृषीकेश, आप महान सिद्ध हैं। नमस्कार है, नमस्कार है। ३ जय हो, हे पिनाक-त्रिशूलपाणि (हे शिवजी, जिनके हाथों में पिनाक नामक धनुष और त्रिशूल है), नमस्कार है, नमस्कार है। हे शाङ्‌र्ग नामक धनुष के धारी पुराणपुरुष, नमस्कार है, नमस्कार है। आप तो जगत्पिता कहलाते हैं। नमस्कार है, नमस्कार है। (फिर) प्रजा के लिए मृत्यु क्यों उत्पन्न कर रहे हैं ? नमस्कार है, नमस्कार है। ४ (पहले) सुख देकर (तत्पश्चात) कोई दुःख नहीं देता। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। (स्वयं) पानी से सींचकर बढ़ाया हुआ वृक्ष कोई नहीं काट डालता। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। घर में बुलाकर घात न कीजिए। नमस्कार है, नमस्कार है। अब विश्व की बात को सँवार लीजिए (ठीक कर लीजिए)। नमस्कार है, नमस्कार है। ५ (पहले) लाड़ लड़ाकर (अब)

छेह न दीजे लाड लडावी रे, नमो नमो,
नव नाखिये ऊंचा चढावी रे, नमो नमो।
न घटे स्नेह जे तूटे रे, नमो नमो,
तो प्रजानुं आयुष खूटे रे, नमो नमो। ६ ।
खीजे युद्ध करता मातंग रे, नमो नमो,
थाय द्रुमवेलीनो भंग रे, नमो नमो।
सामा सागर जुद्धे जाय रे, नमो नमो,
तेथी जगत बधुं तणाय रे, नमो नमो। ७ ।
कोप मांड्यो सदाशिवे रे, नमो नमो,
तो प्रजा कई पेरे जीवे रे, नमो नमो।
आवी स्तवे छे ऋषि सप्त रे, नमो नमो,
स्वामी विश्व थयुं छे तप्त रे, नमो नमो। ८ ।
स्तवे भारती रही एकमन रे, नमो नमो,
गुण गाय चार निगम रे, नमो नमो।
स्तवे नाग पाम्या छे कष्ट रे, नमो नमो,
स्तवे शिवने पर्वत अष्ट रे, नमो नमो। ९ ।

त्याग न कर दीजिए। नमस्कार है, नमस्कार है। ऊँचा चढ़ाकर (अब) नीचे न फेंक दीजिए। नमस्कार है, नमस्कार है। वह स्नेह उचित नहीं है, जो (आगे चलकर) टूट जाना हो। नमस्कार है, नमस्कार है। (इससे) तो प्रजा की आयु समाप्त हो जाएगी। नमस्कार है, नमस्कार है। ६ नमस्कार है, नमस्कार है। क्रुद्ध होकर (जब) हाथी युद्ध करते हैं, तो (उससे) वृक्षों और लताओं का नाश हो जाता है। नमस्कार है, नमस्कार है। नमस्कार है, नमस्कार है। सागर आमने-सामने (आकर) युद्ध में (जुट) जाते हों, तो उससे समस्त जगत बह जाएगा। नमस्कार है, नमस्कार है। ७ नमस्कार है, नमस्कार है। सदाशिव ने कोप आरम्भ किया हो, तो प्रजा किस प्रकार जीवित रह जाए? नमस्कार है, नमस्कार है। (ब्रह्मा द्वारा इस प्रकार स्तुति करने के पश्चात) सप्त ऋषियों[1] ने आकर स्तुति (आरम्भ) की। नमस्कार है, नमस्कार है। (वे बोले,) हे स्वामी, विश्व तप्त हो गया है। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। ८ (तदनन्तर) एकाग्रमन होकर सरस्वती स्तुति करने

---

१ सप्त ऋषि— कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वसिष्ठ। अथवा मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ।

नमे तापस ने संन्यासी रे, नमो नमो,
स्तवे सहस्र ऋषि अठ्यासी रे, नमो नमो।
नमे दैत्य थया कायर रे, नमो नमो,
करे स्तुति सात सायर रे, नमो नमो। १०।
एम स्तुति सर्वे कीधी रे, नमो नमो,
न मूके शिवे वात लीधी रे, नमो नमो।
हाकी ऊठ्या कृष्णने हर रे, नमो नमो,
क्रोधपूरित कमळावर रे, नमो नमो। ११।
क्रोधदृष्टि अन्योअन्य रे, नमो नमो,
व्याप्यो काळ बंन्योने मन रे, नमो नमो।
शिवे वाद विपरीत मांड्यो रे, नमो नमो,
बेउए भार ब्रह्माजीनो छांड्यो रे, नमो नमो। १२।

लगी— नमस्कार है, नमस्कार है। (तदनन्तर) चारों निगम (वेद) स्तुति करने लगे— नमस्कार है, नमस्कार है। (फिर) नागों ने स्तुति की। वे कष्ट को प्राप्त हो गये थे। (वे बोले—) नमस्कार है, नमस्कार है। (तदनन्तर) आठों पर्वतों ने शिवजी की स्तुति की, नमस्कार है, नमस्कार है। ९ तापसों और संन्यासियों ने (शिवजी और विष्णुस्वरूप कृष्ण को) नमस्कार किया— नमस्कार है, नमस्कार है। अठासी सहस्र ऋषियों[1] ने (उन दोनों को) नमस्कार किया— नमस्कार है, नमस्कार है। दैत्यों ने (उनका) नमन किया, (क्योंकि) वे (स्वयं शिव-कृष्ण के संघर्ष को देखकर) साहसहीन हो गये थे। —नमस्कार है, नमस्कार है। सप्त सागरों[2] ने उनकी स्तुति की— नमस्कार है, नमस्कार है। १०

इस प्रकार सबने उनकी स्तुति की— नमस्कार है, नमस्कार है। (फिर भी) शिवजी उस बात को छोड़ नहीं रहे थे, जो उन्होंने ठान ली थी। नमस्कार है, नमस्कार है। शिवजी कृष्ण के प्रति चिल्ला उठे। नमस्कार है, नमस्कार है। तो कमलापति विष्णु के अवतार कृष्ण क्रोध से पूर्ण भर उठे। नमस्कार है, नमस्कार है। ११ वे दोनों एक-दूसरे के प्रति क्रोध-भरी दृष्टि से युक्त हो गये। नमस्कार है, नमस्कार है। उन दोनों के मन को (मानो) काल ने व्याप्त कर डाला था। नमस्कार है, नमस्कार है। शिवजी ने विपरीत रूप से झगड़ा आरम्भ किया।

१ पौराणिक मान्यता है कि ऋषि कुल अठासी सहस्र हैं।

२ सप्त सागर— सृष्टि के आदिकाल से, पुराणों के अनुसार सात सागर हैं— क्षार, इक्षुरस, सुरा, घृत, क्षीर, दधि और शुद्धोदक।

चेत वनवासी गोवाळ रे, नमो नमो,
हुं प्रीछुं छुं पशुपाळ रे, नमो नमो ।
काम बहु शामाना संजोगी रे, नमो नमो,
खरा भीलडी केरा भोगी रे, नमो नमो । १३ ।

स्त्रीहत्याए देह थई काळी रे, नमो नमो,
शुं केवडावो छो, कपाळी रे ? नमो नमो ।
हो निर्दय मामाना मारण रे, नमो नमो,
हो श्वशुरना संहारण रे, नमो नमो । १४ ।

नमस्कार है, नमस्कार है। उन दोनों ने ब्रह्माजी का (कार्य-) भार छोड़ दिया[1]। नमस्कार है, नमस्कार है। १२ शिवजी बोले, 'रे वनवासी गोपाल, सावधान हो जाओ।' नमस्कार है, नमस्कार है। (यह देखकर कृष्ण बोले—) 'रे पशुपति, मैं तुम्हें जानता-पहचानता हूँ।' नमस्कार है, नमस्कार है। (शिवजी बोले—) 'तुम कामभाव से बहुत स्त्रियों के साथ संयोग कर चुके हो।' नमस्कार है, नमस्कार है। (इसपर कृष्ण बोले—) 'तुम तो सचमुच एक भीलनी[2] का उपभोग करनेवाले (ठहरे) हो।' नमस्कार है, नमस्कार है। १३ (शिवजी बोले—) 'तुम्हारी देह स्त्री-हत्या[3] (के पाप) के फलस्वरूप काली हो गयी है।' नमस्कार है, नमस्कार है। (कृष्ण बोले—) 'अरे, तुम तो कपाली कहे जाते हो।' नमस्कार है, नमस्कार है। (शिवजी बोले—) 'तुम निर्दय (अपने) मामा के वधिक[4] हो।' नमस्कार है, नमस्कार है।

---

१ ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी नामक तीन देवों में से ब्रह्मा का कार्य सृष्टि-निर्माण है। यहाँ विष्णु (कृष्ण) और शिवजी इस प्रकार युद्ध में संलग्न हो गये कि ब्रह्मा का निर्माण-कार्य मानो ठप हो गया और केवल वे दोनों संहार-कार्य ही करने लगे।

२ एक बार पार्वती द्वारा शिवजी द्यूत में पराजित हो गये। इस सम्बन्ध में नारद ने उनका मज़ाक़ उड़ाते हुए उन्हें उकसा दिया। तो शिवजी रूठकर वन में जाकर अकेले तपस्या में लीन हो गये। पार्वती उनकी खोज करती हुई वहाँ पहुँच गयी। इस रूप में उनसे मिलना उचित नहीं होगा—इस विचार से उसने भीलनी का वेश धारण करके नृत्य द्वारा शिवजी को विचलित किया। वे उससे आसक्त होकर उसका पाणिग्रहण करने के लिए तैयार हो गये। फिर पार्वती उन्हें चतुराई से कैलास पर ले गयी और उसने उनका पूजन किया। तदनन्तर उसने अपना परिचय दिया।

३ यह घटना बालकृष्ण द्वारा पूतना राक्षसी को मार डालने की घटना की ओर संकेत करती है। विष-लगे स्तनों को चूसकर बालकृष्ण ने उसे मार डाला था। कहते हैं, उस विष के प्रभाव से उनका शरीर काला हो गया।

४ इसमें कंस-वध की ओर संकेत है।

तें जाची ऋषिनी नारी रे, नमो नमो,
खरा जन्म तणा भिखारी रे, नमो नमो।
गयो जन्म ओढतां कांबळी रे, नमो नमो,
कंई कथा रूडी न सांभळी रे, नमो नमो। १५।

हो बळिना द्वारपाळ रे, नमो नमो,
छो जी बाण नग्र-रखेवाळ रे, नमो नमो।
एवुं कहेतां शिव दाध्या रे, नमो नमो,
गया हाड बंन्यो जुद्धे बाध्या रे, नमो नमो। १६।

(यह सुनकर कृष्ण बोले—) 'तुम (अपने) ससुर के संहारक[1] हो।' नमस्कार है, नमस्कार है। १४

(शिवजी बोले—) 'तुमने ऋषि की नारी की याचना की।' नमस्कार है, नमस्कार है। (कृष्ण बोले—) 'तुम सचमुच जन्म से भिखमंगे हो।' नमस्कार है, नमस्कार है। (शिवजी बोले)-- 'तुम्हारा जन्म (भिखारी की भाँति) कम्बल ओढ़ते-ओढ़ते बीत गया।' नमस्कार है, नमस्कार है। (कृष्ण बोले—) 'तुम्हारे बारे में मैंने कोई भी अच्छी कथा (बात) नहीं सुनी है।' नमस्कार है, नमस्कार है। १५ शिवजी बोले—) 'तुम बली के द्वारपाल हो[2]।' नमस्कार है, नमस्कार है। कृष्ण बोले—) 'तुम तो बाण के नगर-रक्षक हो।' नमस्कार है, नमस्कार है। (कृष्ण द्वारा) ऐसा कहने पर शिवजी (मारे क्रोध के) जल उठे। नमस्कार है, नमस्कार है। तो उन दोनों का धैर्य नष्ट हो गया (वे अधीर हो उठे) और लड़ने लगे। नमस्कार है, नमस्कार है। १६

१ सीता का रूप धारण करके सती ने राम की परीक्षा करने का यत्न किया था। शिवजी को यह बात अच्छी नहीं लगी, अतः उससे वे विरक्त रहे। उन दिनों सती के पिता दक्ष प्रजापति ने यज्ञ किया। सती उसे देखने के लिए अपने मायके चली गयी। वहाँ उसने देखा कि यज्ञ में शिवजी के लिए भाग नहीं रखा गया था। सबने उसका अनादर भी किया था। अतः वह आग जलाकर स्वयं उसमें जल गयी। यह समाचार सुनकर शिवजी ने वीरभद्र का निर्माण किया। शिवगणों ने यज्ञ ध्वस्त कर डाला और वीरभद्र के हाथों दक्ष प्रजापति मारा गया।

२ भगवान विष्णु ने वामनावतार ग्रहण करके दैत्यराज बलि वैरोचन से दान में तीन पद भूमि माँग ली; फिर विराट् रूप धारण करके उसे पाताललोक में जाने के लिए बाध्य किया। बलि की स्त्री विन्ध्यावली ने भगवान वामन से उसके उद्धार के हेतु प्रार्थना की, तो उन्होंने बलि से कहा— तुम अभी पाताललोक में निवास करो; मैं वहाँ तुम्हारा द्वारपाल बनूंगा; मेरा सुदर्शन चक्र तुम्हारी नित्य रक्षा करता रहेगा। आगे चलकर सावर्णि मन्वन्तर में तुम इन्द्र बन जाओगे।

वलण (तर्ज बदलकर)

बाध्या बंन्यो मरजाद मूकी, जगत प्रल्ले थाय रे,
वाहन मूकी धस्या बंन्यो, मध्ये पड्या ब्रह्माय रे। १७।

मर्यादा छोड़कर वे दोनों लड़ने लगे। (फलस्वरूप) जगत में प्रलय मच गया। वे दोनों अपने-अपने वाहन को छोड़कर (एक-दूसरे के प्रति) लपक गये, तो ब्रह्माजी बीच में आ गये। १७

कडवुं ४० मुं—(ब्रह्मा द्वारा कृष्ण और शिवजी की स्तुति करना)

राग केदारो

फरी स्तुति ब्रह्मा करे, नमो नमो,
विनय वाचक ओचरे, नमो नमो।
जय जय त्रिभुवनराय रे, नमो नमो,
शिव तमने नमुं छुं पाय रे, नमो नमो। १।
जे जे वैकुंठराय रे, नमो नमो,
जे जे पति कैलास रे, नमो नमो।
जे जे देवमुरारि रे, नमो नमो,
जे जे त्रिपुरारि रे, नमो नमो। २।
जे जे त्रिगुणातीत रे, नमो नमो,
जे जे इंद्रजित रे, नमो नमो।

कड़वक ४०—(ब्रह्मा द्वारा कृष्ण और शिवजी की स्तुति करना)

ब्रह्मा (इस प्रकार) स्तुति कर रहे हैं— '(आपको) नमस्कार है, नमस्कार है।' उन्होंने विनयपूर्वक ये वाक्य (वचन) कहे— नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो। हे त्रिभुवन के राजा (कृष्ण), नमस्कार है, नमस्कार है। हे शिवजी, मैं आपके चरणों का नमन करता हूँ। नमस्कार है, नमस्कार है। १ जय हो, जय हो, हे बैकुण्ठराय (भगवान विष्णु के अवतार कृष्ण), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे कैलास-पति (शिवजी), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे मुरारि देव, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे त्रिपुरारि, नमस्कार है, नमस्कार है। २ जय हो, जय हो, हे (सत्त्व, रज और तम —इन) तीनों गुणों से परे (भगवान विष्णुस्वरूप कृष्ण), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे इन्द्रियजित् (जितेन्द्रिय भगवान शिवजी), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे गरुड़ारूढ़

जे जे गरुडारूढ रे, नमो नमो,
जे जे वाहन पशु प्रौढ रे, नमो नमो। ३।
जे जे कमळावर रे, नमो नमो,
जे जे उमयाधर रे, नमो नमो।
जे जे कोटीमदन रे, नमो नमो,
जे जे पंचवदन रे, नमो नमो। ४।
जे जे पीतांबर रे, नमो नमो,
जे जे वाघांबर रे, नमो नमो।
जे जे रूपे चित्तचोर रे, नमो नमो,
जे जे कर्पूरगौर रे, नमो नमो। ५।
जे जे परात्पर रे, नमो नमो,
जे जे दिगंबर रे, नमो नमो।
जे जे प्रभु परमेश्वर रे, नमो नमो,
जे जे जोगेश्वर रे, नमो नमो। ६।
जे जे पति वैकुंठ रे, नमो नमो,
जे जे नीलकंठ रे, नमो नमो।

भगवान, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे प्रचण्ड पशु (बैल) स्वरूप वाहन वाले (शिवजी), नमस्कार है, नमस्कार है। ३ जय हो, जय हो, हे कमलावर, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे उमावर, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे कोटि (-कोटि) कामदेवों-से सुन्दर, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे पंचवदन (शिवजी), नमस्कार है, नमस्कार है। ४ जय हो, जय हो, हे पीताम्बरधारी (भगवान विष्णु), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे व्याघ्राम्बरधारी (शिवजी), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे (अपने सुन्दर) रूप से (लोगों के) चित्त को चुराने वाले (भगवान विष्णुस्वरूप कृष्ण), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे कर्पूरगौर (वर्णवाले), नमस्कार है, नमस्कार है। ५ जय हो, जय हो, हे परात्पर (ब्रह्मस्वरूप), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे दिगम्बर, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे प्रभु परमेश्वर (विष्णुस्वरूप कृष्ण), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे योगेश्वर शिवजी, नमस्कार है, नमस्कार है। ६ जय हो, जय हो, हे वैकुण्ठपति, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे नीलकण्ठ शिवजी, नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो; (हे भगवान),

जे जे टाळो जगतना ताप रे, नमो नमो,
जे जे उतारो बेउ आप रे, नमो नमो। ७।
जे जे स्तवे चतुर्मुख रे, नमो नमो,
त्यारे शिवे नाख्युं धनुष रे, नमो नमो।
जे जे अशरण शर्ण रे, नमो नमो,
जे जे ऊतर्या धर्ण रे, नमो नमो। ८।
जे जे आदि-अंत रे, नमो नमो,
जे जे भोळा बळवंत रे, नमो नमो।
दीन वचन ब्रह्माए भाख्यां रे, नमो नमो,
त्यारे धनुष बंन्योए नाख्या रे, नमो नमो। ९।
वढता हरिहर भेटाड्या रे, नमो नमो,
पडिया जोद्धा करीने उठाड्या रे, नमो नमो।
पछी तेड्यो बाणासुर राय रे, नमो नमो,
ते तो नम्यो हरिने पाय रे, नमो नमो। १०।

आप जगत के तापों को टाल दीजिए। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, (आप) दोनों (अपने-अपने) धनुष उतार दीजिए (नीचे रखिए)। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। ७ जय हो, जय हो'। चतुर्मुख ब्रह्मा स्तुति कर रहे हैं। '(आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। तब शिवजी ने धनुष को त्याग दिया। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, शरणहीनों के हे आश्रय (-स्थान), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, आप धरती पर उतर आये हैं। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। ८ जय हो, जय हो, हे जगत के आदि और अन्त (जगत की उत्पत्ति तथा विलय करनेवाले), नमस्कार है, नमस्कार है। जय हो, जय हो, हे भोले और बलवान, नमस्कार है, नमस्कार है।' (इस प्रकार) ब्रह्मा ने दीन वचन कहे— (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। तब दोनों ने (अपने-अपने) धनुष त्याग दिये। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। ९ (एक-दूसरे से) लड़नेवाले श्रीहरि और हर (शिवजी) को (एक-दूसरे से प्रेमपूर्वक) मिला दिया। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। (युद्ध में) काम आये हुए योद्धाओं को फिर से (जीवित कर) उठा दिया। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। अनन्तर राजा बाणासुर को बुला लिया। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। उसने श्रीहरि के पाँवों को नमस्कार किया। (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। १०

वलण (तर्ज़ बदलकर)

संसार आनंद पामियो, प्रसन्न थया ब्रह्माय रे,
विप्र प्रेमानंद कहे कथा, हवे विवाह केई पेरे थाय रे ? । ११ ।

(फलस्वरूप) संसार आनन्द को प्राप्त हो गया। ब्रह्माजी प्रसन्न हो गये। विप्र प्रेमानन्द (कवि) अब यह कथा कहने जा रहे हैं कि (ओखा और अनिरुद्ध का) विवाह किस प्रकार हो गया। ११

कडवुं ४१ मुं—(बाणासुर द्वारा ओखा के विवाह के लिए सबको निमंत्रित करना)

राग सारंग

वळी शुकजी वदे रे वचन, सांभळ परीक्षित राजन।
ब्रह्माए हरिहरने भेटाड्या, पड्या जोद्धा ते फरीने उठाड्या। १ ।
तमो बंन्यो करो एवां काम, तो पृथ्वीनो कुण ठाम ?
इंद्रे कीधो अमृत परजान, ऊठ्या जोद्धा ते नवजोबन। २ ।
छूट्युं बंधन, अनिरुद्ध मळिया, घणा दिवस विजोग टळिया।
बाणासुर ते पाये नमियो, हाथ काप्या ते दुःख समियो। ३ ।
ज्वर प्रगट्या हुता जे सात, ब्रह्मा प्रत्ये कहे छे वात।
ज्वरे ब्रह्मा प्रत्ये कह्युं, स्वामी, आज्ञा आपो त्यां रहुं। ४ ।

कड़वक ४१ —(बाणासुर द्वारा ओखा के विवाह के लिए सबको निमंत्रित करना)

(अनन्तर) फिर शुकजी बोले, 'हे परीक्षित राजा, यह बात सुन लो। ब्रह्माजी ने श्रीहरि अर्थात कृष्ण और शिवजी को मिला दिया; (तदनन्तर युद्ध में काम आये हुए) योद्धाओं को फिर से (जीवित कर) उठा लिया। १ ब्रह्माजी (फिर उनसे बोले—) 'तुम दोनों (यदि) ऐसे काम करते रहोगे, तो पृथ्वी के लिए (रक्षा-हेतु आश्रयस्वरूप) कौन ठौर (शेष) है ?' तदनन्तर इन्द्र ने अमृत की वृष्टि की, तो (उसके फलस्वरूप मृत) योद्धा (पुनश्च) नवयौवन से (मानो) युक्त होकर उठ गये। २ बन्धन छूट गया, तो अनिरुद्ध (मुक्त होकर सबसे) मिल गये। बहुत दिनों का वियोग समाप्त हुआ। बाणासुर ने उनके चरणों का नमन किया। हाथों के काटे जाने का उसका दुःख नष्ट हो गया। ३ जो सात ज्वर (युद्ध के दौरान) प्रकट हो गये थे, उन्होंने ब्रह्माजी से यह बात कही। उस ज्वर (-समूह) ने कहा 'हे स्वामी, आप (जहाँ रहने की) आज्ञा देंगे, वहाँ मैं रहूँगा'। ४ (यह सुनकर) ब्रह्माजी ने यह बात कही, 'तुम संसार में जान (-बूझ) कर (इस प्रकार) रह जाना— आधे मनुष्य-देह के द्वार पर

ब्रह्माजी कहे छे वाणी, तमे रहेजो जगतमां जाणी।
अर्धा मनुषदेहने द्वार, अर्धा वनस्पति मोझार। ५।
त्यां रहेजो तमारो वास, एम ज्वरनी पूरी आश।
ओखाहरण सुणे धरी भाव, तेनो जाय अजीरण ताव। ६।
शुकदेव कहे, सुण राय, हरिहर तणो समुदाय।
कहे हरिने, तेडावो जान, विधिए आपुं कन्यादान। ७।
आपी आज्ञा श्रीकृष्णे आवी, जादवने लावो समजावी।
अक्रूर सात्यकि बंन्यो गया, जादव कुटुंब सहु लाविया। ८।
हींडे जादवराणी मोडामोड, टोळे थाती ते छप्पन क्रोड।
राय लखीलखी पत्र तेडावे, ठामठामथी सहु को आवे। ९।
राये रचना कीधी सारी, लींप्यो मंडप कनकनी गारी।
हेमगिरि विंध्याचळ बोलाव्या, उदयाचळ अस्ताचळ आव्या। १०।
त्रिकूटाचळ मेरु मैनाक, गंधमादन गिरि चक्रवाक।
अजमेल गिरि सुशीलश्रृंग, ब्रह्मगिरि नताल अभंग। ११।

रहो (जिससे कि चाहे जब अन्दर पैठ सको और) आधे वनस्पतियों में रह जाओ। ५ वहाँ तुम्हारा निवास हो जाए।' इस प्रकार उन्होंने उन ज्वरों की इच्छा पूर्ण की। (कवि कहता है—) जो श्रद्धा या प्रेम धारण करके, अर्थात प्रेम-पूर्वक यह 'ओखाहरण' सुनेगा, उसका अपाचन तथा ज्वर दूर हो जाएगा। ६

श्री शुकदेव ने कहा, 'हे राजा, सुनो। (वहाँ) श्रीहरि अर्थात कृष्ण और शिवजी (के अनुयायियों) का समुदाय था। (तब) बाणासुर ने कृष्ण से कहा, 'बारात को बुलवा लाइए। मैं विधि के अनुसार कन्यादान कर देता हूँ'। ७ तो श्रीकृष्ण ने आकर आदेश दिया, 'यादवों को समझा-बुझा कर ले आओ।' (यह सुनकर) अक्रूर और सात्यकि दोनों चले गये; वे समस्त यादवपरिवार को ले आये। ८ (वहाँ आकर) यादवों की स्त्रियाँ घमण्ड के साथ घूमने लगीं। वे टोली अर्थात संख्या में कुल मिलाकर छप्पन करोड़ थीं। (बाण) राजा पत्र लिख-लिखकर (लोगों को) बुलाता रहा। (फलस्वरूप) स्थान-स्थान से सब कोई आ गये। ९ राजा ने (भवन-निवास-स्थान आदि का सुन्दर निर्माण किया (घर आदि बनवा लिये)। स्वर्ण के गारे से मण्डप को लीप-पोत लिया। उसने हिमालय, विन्ध्याचल को बुला लिया; उदयाचल-अस्ताचल (बुलाने पर) आ गये। १० त्रिकूट-अचल, मेरु, मैनाक, गन्धमादनगिरि, चक्रवाक, अजमेलगिरि, सुशीलश्रृंग, ब्रह्म-गिरि, नताल, अभंग, माग्या, तुंग्या, माधवगिरि-सहित (आनन्द-उमंग को)

माग्या तुंग्या शहेरमां भेर, घड मादवगिरिशा ल्हेर ।
देवगिरि कनकाचळ पधराव्या, अष्टकुळ पर्वत त्यां आव्या । १२ ।
आव्या देव कोटी तेत्रीश, ऋषि सर्वे दे आशिष ।
नव कुळ तेडाव्या नाग, आव्या मोटा राय सुहाग । १३ ।
तेड्यां राजकुळ छत्रीस, जाचक जन आव्या बहु दिश ।
अनिरुद्धने पीठी चोळाय, शुभ नारीओ मंगळ गाय । १४ ।
पीठी चडावो पटराणी, जादव स्त्रीओ गाये साधु वाणी ।
पंच शब्द दुंदुभिनाद, वाजे वाजित्र शोभा वाद । १५ ।
जोवा त्रिभुवनथी सहु आव्या, राय बाणने मन घणुं भाव्या ।
बाण उतारे उतरावे, कृष्णजी ग्रहशांतिक करावे ।
विवाहमंगळनी रचनाय, सजाई वरघोडानी थाय । १६ ।

लहर के साथ नगर में झट से आ गये । देवगिरि, कनकाचल पधराये (अर्थात बुलाकर लाये) गये । वहाँ अष्टकुलाचल[1] आ गये । ११-१२ तेंतीस करोड़ देव आ गये । समस्त ऋषियों ने (आकर) आशीर्वाद दिया । (बाणासुर ने) नौ कुलों के नागों[2] को निमन्त्रित किया था (अत: वे भी आ गये) । सौभाग्यशाली बड़े-बड़े राजा बुलाये गये (अत: वे भी उपस्थित हो गये) । १३ बहुत दिशाओं से याचक जन आ गये । नारियाँ अनिरुद्ध को हल्दी लगाने लगीं और वे मंगल गीत गाने लगीं । 'हे पटरानी, (अब) हल्दी लगा लो ।' —ऐसा कहते हुए यादव स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं । १४ पाँच प्रकार के वाद्यों[3] का सम्मिलित स्वर और दुन्दुभी की ध्वनि हो रही थी । विभिन्न रागों के सुन्दर (सुरीले) मुख्य स्वरों में वाद्य बज रहे थे । १५ (यह विवाहोत्सव देखने के लिए) सब (लोग) आ गये । यह बात राजा बाण के मन को अच्छी लगी । बाण ने विश्राम-स्थानों में सबको ठहरा दिया । कृष्ण ने ग्रह-शान्ति (नामक विशिष्ट धार्मिक विधि) सम्पन्न करा दी । मंगल विवाह की तैयारियाँ हो गयीं । १६

---

१ अष्टकुलाचल— पौराणिक मान्यता के अनुसार पृथ्वी के लिए आधार-स्वरूप आठ मुख्य पर्वत हैं । उन पर्वतों को 'कुलाचल', 'कुलपर्वत' कहते हैं । ये पर्वत हैं : (अ) नील, निषध, विन्ध्याचल, माल्यवान, मलय, गन्धमादन, हेमकूट और हिमालय । (आ) पारियात्र, ऋष्यवान, विन्ध्याद्रि, सह्याद्रि, महेन्द्राचल, शुक्तिमान और ऋक्षवान ।

२ नागों के नौ कुल— अनन्त, वासुकी, शेष, पद्मनाभ, कम्बल, शंखपाल, धृतराष्ट्र, तक्षक और कालिय ।

३ पंच वाद्य— तंतिवाद्य, वितन्त, मृदंग, घनकांस्य और अनाहत वेणुनाद ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वरघोडो चडे अनिरुद्धनो, जादव तत्पर थाय रे,
बाणासुरने मांडवे, जादवराणी गीत गाय रे। १७।

अनिरुद्ध की बारात चल दी। (प्रस्थान करने के लिए) यादव तैयार हो गये थे। (इधर) बाणासुर के मण्डप में यादव स्त्रियाँ गीत गा रही थीं। १७

कडवुं ४२ मुं--(वर अनिरुद्ध और वधू ओखा को तेल-हल्दी लगाना)

राग देश

आदितनी घरूणी, हां रे तमे निद्रामां पोहोडो,
अनिरुद्धने तेल सींचारो के, रांदलने जागवो रे। १।
ब्रह्मानी घरूणी, हां रे तमे निद्रामां पोहोडो,
अनिरुद्धने तेल सींचारो के, सावित्रीने जागवो रे। २।
चंद्रमानी घरूणी, हां रे, तमे निद्रामां पोहोडो,
जीयावरने तेल सींचारो के, रोहिणीने जागवो रे। ३।
श्रीकृष्णनी घरूणी, हां रे, तमे निद्रामां पोहोडो,
अनिरुद्धने तेल सींचारो के, लक्ष्मीने जागवो रे। ४।
प्रद्युम्ननी घरूणी, हां रे तमे निद्रामां पोहोडो,
अनिरुद्धने तेल सींचारो के, रति वहुने जागवो रे। ५।

कड़वक ४२--(वर अनिरुद्ध और वधू ओखा को तेल-हल्दी लगाना)

यादव स्त्रियों द्वारा गीत-गान

हे सूर्य की घरनी (गृहिणी, पत्नी), हाँ, तुम तो नींद में पौढ़ी हुई हो। (अब उठ जाओ और) अनिरुद्ध को तेल लगा दो। हाँ, अरी, रन्नादे (सूर्य की पत्नी) को जगा दो। १ हे ब्रह्माजी की घरनी (सावित्री), हाँ, तुम तो नींद में पौढ़ी हुई हो। (अब उठ जाओ और) अनिरुद्ध को तेल लगा दो। हाँ, अरी, सावित्री को जगा दो। २ हे चन्द्रमा की घरनी (रोहिणी), हाँ तुम तो नींद में पौढ़ी हुई हो। (अब उठ जाओ और) अनिरुद्ध को तेल लगा दो। हाँ अरी, रोहिणी को जगा दो। ३ हे श्रीकृष्ण की घरनी (लक्ष्मीस्वरूपा रुक्मिणी), हाँ, तुम तो नींद में पौढ़ी हुई हो। (अब उठो और) अनिरुद्ध को तेल लगा दो। हाँ अरी, लक्ष्मी (रुक्मिणी) को जगा दो। ४ हे प्रद्युम्न की घरनी (रति), हाँ, तुम तो नींद में पौढ़ी

महादेवनी घरूणी हां रे, तमे निद्रामां पोहोडो,
ओखाने तेल सींचारो के, उमियाने जागवो रे। ६ ।
गणपतिनी घरूणी हां रे, तमे निद्रामां पोहोडो,
ओखाने तेल सींचारो के, सूधबूधने जागवो रे। ७ ।
बाणासुरनी घरूणी, हां रे तमे निद्रामां पोहोडो,
ओखाने तेल सींचारो के, बाणमती जागवो रे। ८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

तेल चंपेल चडावो, सजनी सर्व मळीने आवो,
निद्रामांथी जाग्रत थईने, गीत मधुरां गावो। ९ ।

राग धोळ

पीठी चोळो पीठी चोळो पटराणी रे,
मग दळो मग दळो हो राणी रे।
पग धुओ पग धुओ वरनी भाभी रे,
ओखाजी तो रहेजो अखंड सोहागी रे। १० ।
चंदन चरच्यां छे अपार रे,
भूषण पहेराव्यां छे सार रे।
वर तो वरघोडे चडिया रे,
अश्व अनुपम ने हीरा जडिया रे। ११ ।

हुई हो। (अब उठ जाओ और) अनिरुद्ध को तेल लगा दो। हाँ, अरी, रति बहू को जगा दो। ५ हे महादेव (शिवजी) की घरनी (पार्वती), हाँ, तुम तो नींद में पौढ़ी हुई हो। (अब उठ जाओ और) ओखा को तेल लगा दो। हाँ, अरी, उमा (पार्वती) को जगा दो। ६ हे गणेशजी की (सिद्धि और बुद्धि नामक) घरनियो, हाँ, तुम तो नींद में पौढ़ी हुई हो। (अब उठ जाओ और) ओखा को तेल लगा दो। हाँ, अरी, सिद्धि और बुद्धि को जगा दो। ७ हे बाणासुर की घरनी (बाणमती), हाँ, तुम तो नींद में पौढ़ी हुई हो। (अब उठ जाओ और) ओखा को तेल लगा दो। हाँ, अरी, बाणमती को जगा दो। ८ हे सजनी, चम्पा फुलेल से युक्त तेल लगा दो; सब मिलकर आ जाओ। नींद से जाग्रत होकर मधुर (स्वर में) गीत गाओ। ९

हे पटरानी, हल्दी लगा दो, हल्दी लगा दो। हे रानी, मूंग पीस लो, मूंग पीस लो। हे दूल्हे की भाभी, पाँव धो लो, पाँव धो लो। अहो, ओखाजी अखण्ड सौभाग्यवती बन जाए। १० अपार चन्दन लगाया

तेनां तेज तणो नहीं पार रे,
त्यां तो नीरखे नरनार रे।
नीरखी नीरखी दीए छे आशिष रे,
जीयावर जीवजो क्रोड वरीश रे। १२।

गया है। बढ़िया आभूषण पहनाये गये हैं। वर तो (दूल्हे के लिए सुसज्ज) घोड़े पर आरूढ़ हो गया है। वह घोड़ा अनुपम है; उस पर हीरे जड़े हुए हैं। ११ उन (हीरों) के तेज का कोई पार नहीं है। वहाँ उसे पुरुष और स्त्रियाँ ध्यान से देख रही हैं। वे निरख-निरखकर आशिष दे रही हैं— वर कोटि (-कोटि) वर्ष जीवित रहे। १२

कडवुं ४३ मुं--(अनिरुद्ध की वरयात्रा)

राग धन्याश्री

वळी ते विवाह मांड्यो ने, जीत्या जादवराय,
रुकिमणी मन आनंद घणो घणो रे, त्यां तो मानुनी मंगळ गाय।
अनिरुद्धजीनी घोडली। १।
सजन सहु टोळे मळ्या ने, सुरिनर मळ्या छे अपार,
पाननां आप्यां बीडलां, ते पर श्रीफळ फोफळ सार। अनि०। २।
चुवा चंदन छांटणां रे, केसर कुमकुम सार,
भाट बंदीजन बहु मळ्या, ते तो बोले छे जयजयकार। अनि०। ३।

कड़वक ४३--(अनिरुद्ध की वरयात्रा)

यादवराज (श्रीकृष्ण युद्ध में) जीत गये; और अनन्तर (अनिरुद्ध-ओखा की) विवाह (-विधि) का आरम्भ हो गया। रुक्मिणी को मन में बहुत बड़ा आनन्द हुआ। (वहाँ विवाह-स्थान पर) वे मानिनी स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं। अनिरुद्ध की घोड़ी[1]। १ समस्त स्वजन (सगे, रिश्तेदार) टोली-टोली में इकट्ठा हो गये। अनगिनत देव एकत्रित हो गये। पानों के बीड़े (लगाकर) दिये (गये)। उनपर बढ़िया नारियल और पूगीफल (सुपारी रखे हुए) थे। अनिरुद्ध की०। २ विशिष्ट प्रकार का चन्दन (घिसकर) छिड़का दिया गया था। उसमें

१ घोड़ली, घोड़ी : विवाह की वह रस्म जिसमें वर घोड़ी पर चढ़कर वधू के घर जाता है।

वाजित्र वागे अति घणां ने, मांही भेरीनो नाद,
ढोल ददामां गडगडे रे, त्यां तो शहणाइए लीधो वाद । अनि० । ४ ।
अप्सरा नाचे इंद्रनी, मांही नारद तुंबरु गाय,
मधुरीशी वीणा वाजती, एनो आनंद ओच्छव थाय । अनि० । ५ ।
सांबेलां सर्वे शोभतां ने, असवार थया वरराय,
थनगन तेजी नचावता रे, एवा सुरिनर अति हरखाय । अनि० । ६ ।
शोणितपुर पाटण भलुं रे, फूलडे सोहावी वाट,
अनिरुद्ध वर घोडे चढ्या रे, त्यां शेरीए सोहाव्यां हाट । अनि० । ७ ।
चंचळ चाले चालती ने, रंगे राते वान,
मखियरडे मोती जड्यां रे, घोडीनुं पंचकल्याणी नाम । अनि० । ८ ।
पलाण परवाळां तणां ने, नंग पीरोजां सार,
रतन जडित्र बे पेंगडां रे, तेनी झगमग ज्योत अपार । अनि० । ९ ।

बढ़िया केसर और कुंकुम था। बहुत भाट और बन्दीजन इकट्ठा हो गये थे। वे जय-जयकार कर रहे थे। अनिरुद्ध की० । ३ अत्यधिक वाद्य बज रहे थे। उनके (स्वर के) अन्दर भेरी का स्वर (भी मिला हुआ) था। ढोल और दमामे गड़गड़ा रहे थे। (उनकी गड़गड़ाहट के साथ) शहनाई में स्वर भर दिये जा रहे थे (शहनाई बजायी जा रही थी)। अनिरुद्ध की० । ४ इन्द्र की अप्सराएँ नाच रही थीं। उनके साथ में नारद और तुम्बरू गा रहे थे। मधुर स्वर में वीणा बज रही थी। उन (लोगों) के लिए यह तो आनन्दोत्सव हो रहा था। अनिरुद्ध की० । ५ समस्त शहबाले (अपने-अपने घोड़े पर) शोभायमान थे और वरराज (अनिरुद्ध अश्व पर) आरूढ़ हो गये। वे (शहबाले) तेजस्वी घोड़ों को थनथनाहट के साथ नचा रहे थे। उस समय देव अति आनन्दित हो गये थे। अनिरुद्ध की० । ६ पाटनगर अर्थात राजधानी शोणितपुर भली अच्छी (शोभायमान) लग रही थी। मार्ग फूलों से सुशोभित किये गये थे। दूल्हा अनिरुद्ध घोड़े पर सवार हो गये थे। वहाँ गलियों में बाज़ार शोभायमान (दिखायी दे रहे) थे। अनिरुद्ध की० । ७ वह (घोड़ी) चंचल (चपल) चाल (गति) से चल रही थी। वह लाल रंग में रँगी अर्थात लाल रंग की थी। उसकी आँखों पर बैठनेवाली मक्खियों को हटाने के लिए बँधी हुई पट्टी में मोती जड़े हुए थे। उस घोड़ी का नाम पंचकल्याणी था (वह घोड़ी पंचकल्याणी[1] थी)। अनिरुद्ध की० । ८

[1] पंचकल्याणी घोड़ी— वह घोड़ा, जिसका सिर (माथा) और चारों पैर सफ़ेद हों और शेष शरीर लाल (या काला) हो, 'पंचकल्याण' कहाता है। इस प्रकार की घोड़ी।

घाट ते पहेर्यो शोभतो ने, रामणदीवो हाथ,
मोड बांध्यो राणी रुक्मिणी रे, जेने श्रीकृष्ण सरखा नाथ। अनि०। १०।
छत्र, चामर ने वावटा रे, दीवानो नहीं पार,
पूंठे ते आवे जानरडी रे, ते तो मंगल गाती नार। अनि०। ११।
वर वहेला थई तोरण चड्या रे, साळो छांटे नीर,
तेने मनवांच्छित आप्युं रे, पछे बाजठे ऊभा वीर। अनि०। १२।
सासु आवी सज थई रे, पोहोंती मननी आश,
ओखा अनिरुद्ध परणशे रे, गुण गाय प्रेमानंद दास। अनि०। १३।

उसका पलान प्रवाल (मूँगे) का था और उसमें बढ़िया फीरोजा रत्न (नील रत्न बैठाये हुए) थे। दोनों रकाबें रत्न-जटित थीं। उनकी ज्योति (कान्ति) अपार जगमगा रही थी। अनिरुद्ध की०। ९ जिसके श्रीकृष्ण-जैसे पति हैं, उस रुक्मिणी ने (विवाह-जैसे मंगल अवसर पर सिर पर पहना जानेवाला एक प्रकार का) मुकुट (मौर) पहना था। उसमें 'घाट' (विशिष्ट प्रकार का रेशमी वस्त्र) पहन लिया था, जो शोभा दे रहा था। उसके हाथ में 'रामणदीप' (विशिष्ट प्रकार का दीप) था। अनिरुद्ध की०। १० छत्रों, चामरों और ध्वजों तथा दीपों (की संख्या) का कोई पार नहीं था। पीछे से बारात आ रही थी। तब नारियाँ मंगल गीत गा रही थीं। अनिरुद्ध की०। ११ वर (अनिरुद्ध) शीघ्र ही तोरण पर चढ़ गया (तोरण के समीप आ गया), तो श्यालक (साले) ने उसपर पानी सींच लिया। (तब) उसे वर ने मनचाहा (उपहार) दिया। तत्पश्चात वीर अनिरुद्ध चौकी पर खड़ा हो गया। अनिरुद्ध की०। १२

सास सजकर आ गयी थी। उसके मन की अभिलाषा पूर्ण हो गयी। (अब) ओखा-अनिरुद्ध का परिणय सम्पन्न होगा। दास प्रेमानन्द उनका गुणगान कर रहा है। अनिरुद्ध की०। १३

कडवुं ४४ मुं—(वर का परछन करना)

राग त्रिताली चोपाई

अनिरुद्ध त्यां मंडपे आव्या, बाणासुरने मन घणुं भाव्या।
मुखथी बोल्या अमृत वाणी, पूंखे पार्वती पटराणी।
धुसळ मुसळ खाईने त्राक, पूंखी ताण्युं जीयावरनुं नाक। १।

कड़वक—४४ (वर का परछन करना)

वहाँ अनिरुद्ध (विवाह-) मण्डप में आ गये। यह (बात) बाणासुर

राग बिभास

धुसळे मा पूंखीश उमया, धुसळे वृषभनुं जोतरुं रे,
मुसळे मा पूंखीश उमया, मुसळे अमृत खांडणुं रे । २ ।
रवाईए मा पूंखीश उमया, रवाईए महीनुं वलोणुं रे,
तराके मा पूंखीश उमया, तराक ए विश्वनुं ढांकणुं रे । ३ ।
सरैये मा पूंखीश उमया, सरैया वृषभनुं चारणुं रे,
इंडीपिंडीए मा पूंखीश उमया, इंडीपिंडीए उंदर वोखणुं रे । ४ ।

राग त्रिताली चोपाई

कोरी नाखी छे इंडीपिंडी, उमया हरखे हरखे हींडी,
गळे घाट घालीने ताण्या, जीयावरने मायरामां आण्या । ५ ।
आडा अंतरपट धराय, हस्ते हस्तमेलापक थाय,
जोशी कहे छे सावधान, गर्गाचार्यने दे अति मान । ६ ।
सहु मळी त्यां मंगळ गाय, एवा आनंद ओच्छव थाय,
आवी बेठा मोटा राजन, बाणासुर ते दे घणुं मान । ७ ।

के मन को बहुत भायी। वह मुख से अमृत-जैसी मधुर वाणी बोल रहा था। (उसके) पीछे पटरानी बाणमती और पार्वती थीं। उसने जुआ, मूसल, मथानी और तकुआ घुमाते हुए परछन किया और दूल्हे की नाक खींची। १ हे उमा, जुए से परछन मत करो; जुए में तो बैल का जोता (जुए में जोतने की रस्सी) होता है। हे उमा, मूसल से परछन मत करो; मूसल से तो अमृत (-पात्र) खण्डित हो जाता है। २ हे उमा, मथानी से परछन मत करो; मथानी से तो दही बिलोते हैं। हे उमा, तकुए से परछन मत करो; तकुए से तो विश्व के लिए आच्छादन बनाते हैं। ३ हे उमा, सरया (धान विशेष) से परछन मत करो; (क्योंकि) सरया तो बैल का चारा होता है। हे उमा, पिण्डी-इण्डी से परछन मत करो; (क्योंकि) वह तो चूहे की खुराक है। ४ उमा ने रूखी-सूखी (न पकायी हुई) पिण्डी-इण्डी रख दी और वह आनन्द-उमंग के साथ चल दी। उसने गले 'घाट' (वस्त्र) डालकर वर को खींच लिया और उसे वह विवाह-मण्डप में ले आयी। ५ (वर और वधू के बीच तदनन्तर) अन्तरपट आड़ा धरा गया; एक के हाथ का (दूसरे के) हाथ से मिलाप हो गया। पुरोहित ने 'सावधान' कहा। वह आचार्य गर्ग का अति आदर करता था। ६ सबने मिलकर मंगल (विवाह) गीत गाये। इस प्रकार (वहाँ) आनन्दोत्सव (सम्पन्न) हो गया। (वहाँ) बड़े-बड़े राजा आकर बैठ गये, तो बाणासुर ने उनका आदर-सम्मान किया। ७

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कोड पोहोंता मन तणा, प्रेमे आप्यां पान रे,
वरवहु आव्यां चोरीए, दे बाण कन्यादान रे। ८।

(बाण के) मन की कामनाएँ पूरी हो गयीं। उसने प्रेमपूर्वक पान (बीड़े) दिये। (तदनन्तर) वर और वधू चौरी में आ गये। (फिर) बाण ने कन्यादान दिया। ८

कडवुं ४५ मुं—(बाण द्वारा कन्यादान)

राग धन्याश्री

सुर असुर तो आवी मळ्या, मनमां ते आनंद भर,
बाणराय ने प्रद्युमन, करवा बेठा मधुपर्क। १।
हरि हर सभामां बेठा, सुर ते तेत्रीस क्रोड,
अवर राणा ने रायजी, सरखा ते सरखी जोड। २।
वाजित्र वागे अति घणां ने, बंदीजन कहे शुभ कृत्य,
राग रंग थैकार थाय छे, करे अप्सरा नृत्य। ३।
शुक्राचार्य कहे बाणरायने, द्योने कन्यादान,
आ दिवस नहीं आवे फरी, सांनिध्य श्री भगवान। ४।
बाणराय कहे, शीघ्र मंगावुं, जे जोईए ते आज,
कन्यादान दउं कोडथी, अनिरुद्धने श्री महाराज। ५।

कड़वक—४५ (बाण द्वारा कन्यादान)

सुर और असुर आकर इकट्ठा हो गये। उनके मन में आनन्द भरा हुआ था। (तत्पश्चात) बाणराज और प्रद्युम्न मधुपर्क (नामक धार्मिक विधि) सम्पन्न करने के लिए बैठ गये। १ श्रीहरि (श्रीकृष्ण) और शिवजी सभा में बैठे हुए थे। (वहाँ) तैंतीस करोड़ देव (उपस्थित हो गये) थे। अन्य राजा और धनीमानी लोग (वहाँ उपस्थित थे, जो) एक-दूसरे के समान अर्थात जोड़ के थे। २ अति (बहुत) वाद्य बज रहे थे। बन्दीजन (अपने आश्रयदाता राजा बाण के किये हुए) शुभ कार्यों को (वर्णन करते हुए) बताने लगे। (वहाँ) राग, रंग और थयकार— विभिन्न रागों का गान तथा नृत्य हो रहा था— अप्सराएँ नृत्य कर रही थीं। ३ गुरु आचार्य शुक्र बाणराज से बोले, '(अब) कन्यादान दे दो। यह दिन फिर से नहीं आएगा। श्रीभगवान (अपने) सान्निध (विराजमान) हैं'। ४ (इसपर) बाणराज बोला, 'जो (-जो)

जळपात्र, कुमकुम, दधि दूर्वा, श्रीफळ, फोफळ जेह,
कनकपात्र कर ग्रहीने, राणीजी लाव्यां तेह। ६।
वेदमंत्र उच्चारथी, करे पूजा ततखेव,
पूजापो विधविध चडावे, भणीने ऋषिदेव। ७।
कर अंजलि लईने, पछे बोलियो राय बाण,
कन्यादान लियो अनिरुद्धनी, जोडुं छुं बे पाण। ८।
अनिरुद्ध कर आगळ करे, मनमां अति उल्लास,
ओखा अनिरुद्ध राजी थयां, कीधुं नेत्रमां हास्य। ९।
सुतानो संकल्प करीने, हरख्यो राय बाण,
ते दाननी दक्षणा पछी, आपियां कोटीक दान। १०।
गज अश्व ने भूमि, दासी कनकपात्र अनेक,
शुकदेव कहे परीक्षितने, कहेतां न आवे छेक। ११।

चाहिए, वह मैं आज (ही) शीघ्र मँगा लेता हूँ। मैं बड़े चाव के साथ श्रीअनिरुद्ध महाराज को कन्यादान दे देता हूँ'। ५ (तदनन्तर) रानी (बाणमती) जलपात्र, कुंकुम, दही, दूर्वा, नारियल, सुपारी, जो भी (चाहिए) था, उससे भरा स्वर्ण का पात्र हाथ में लेकर ले आयी। ६ (ब्राह्मणों ने) वेदमंत्रों का उच्चारण करते हुए (पठन करते हुए) तत्क्षण पूजन किया। ऋषियों और देवों ने मंत्र पढ़कर भाँति-भाँति की पूजा की सामग्री समर्पित करा दी। ७ पश्चात, करांजलिबद्ध होकर राजा बाण बोला, 'हे अनिरुद्धजी, कन्यादान लीजिए। मैं दो हाथ जोड़ता हूँ'। ८ तो अनिरुद्ध ने हाथ आगे बढ़ा दिया। (उन्हें) मन में अति उल्लास (अनुभव हो रहा) था। ओखा और अनिरुद्ध (दोनों) प्रसन्न हो गये। वे आँखों ही आँखों में हँस दिये (एक-दूसरे की ओर देखकर प्रसन्नतापूर्वक मुस्करा दिये)। ९ (अपनी) कन्या-सम्बन्धी संकल्प सूचित करनेवाला मंत्र पढ़कर राजा बाण आनन्दित हुआ। (फिर) उस (कन्या-) दान के पश्चात दक्षिणा देकर उसने करोड़ों (अन्य) दान दिये। १०

शुकदेव परीक्षित से बोले, 'उसने जो अनेक हाथी, घोड़े और भूमि, दासियाँ, स्वर्णपात्र (दान में) दे दिये, उनको कहते हुए कोई पार नहीं पाएगा (वह वर्णनातीत है)'। ११

कडवुं ४६ मुं—(भाँवर तथा विवाह-विधि का पूर्ण होना)

राग त्रिताल चोपाई

मंगळफेरा त्यां रे फराय, मळी मानुनी मंगळ गाय,
हर्ष धरे बाण मनमांय, सांनिध्य श्री वैकुंठराय। १ ।
पहेले मंगळे त्यां सार, आप्या रथ सहित तोखार,
बीजे धेनु आपी अपार, त्रीजे कुंज केरी हार। २ ।
चोथे कूंची सहित भंडार, आपी कीधो छे नमस्कार,
बाणासुर बोल्यो मुख वाण, संपुट करी बे पाण। ३ ।
हुं तो सेवीश तमारा चर्ण, शुद्ध राखजो अंतरकर्ण,
एम राये कन्यादान दीधुं, विवाह कर्म संपूर्ण कीधुं।
हरिनो कोई न जाणे पार, बंन्यो कीधां स्त्री भरतार। ४ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

कारज पूरण, मंगळ वरत्यां, जोवा मळ्यो संसार रे,
चोरीमां दंपती बंन्यो, आरोगे कंसार रे ५ ।

कड़वक—४६ (भाँवर तथा विवाह-विधि का पूर्ण होना)

वहाँ (विवाह-मण्डप में वर और वधू) मंगल भाँवर फिरने लगे, तो मानिनी स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं। बाण ने मन में हर्ष धारण किया (अनुभव किया)। (उनको) वैकुण्ठराय विष्णुस्वरूप कृष्ण का सान्निध्य (प्राप्त हुआ) था। १ पहले मंगल फेरे के होते हुए (बाण ने) घोड़ों-सहित बढ़िया रथ (उपहार के रूप में) प्रदान किये। दूसरे (फेरे) के साथ असंख्य गायें दीं; तीसरे के साथ हाथियों की मानो पंक्ति ही प्रदान की। २ चौथे फेरे के चलते समय, कुंजी-सहित (धन-) भण्डार देकर नमस्कार किया। (तत्पश्चात) बाणासुर दोनों हाथ जोड़कर मुँह से यह बात बोला। ३ 'मैं आपके चरणों की सेवा करूँगा। आप अपने अन्तःकरण को (हमारे प्रति) शुद्ध (प्रेम, आत्मीयता के भाव से भरा-पूरा) रखना।' इस प्रकार राजा ने कन्यादान दिया और विवाह-विधि को पूर्ण किया। श्रीहरि (की महिमा) का कोई पार नहीं जानता— उन्होंने (ओखा और अनिरुद्ध) दोनों को स्त्री और पति बना दिया। ४ कार्य पूर्ण हुआ। मंगल-विवाह हो गया। (समस्त) संसार (इस विवाह को) देखने के लिए इकट्ठा हुआ था। (तदनन्तर) वे दोनों पति-पत्नी

'कंसार[1] (कसार-जैसा मिष्टान्न विशेष)' का सेवन करने के लिए चोरी में चले गये। ५

कडवुं ४७ मुं—('कंसार[1]' का सेवन और स्त्रियों द्वारा गीत-गान)

राग बिभास

कंसार जमो जमो, रे जमाई, तारी रूडी दीसे छे कमाई,
छोकरा, तुं तो काळो ने कळियो, छोरा, तुं तो शींगोमांथी सळियो। १।
छोरा, तुं तो नख जेवडो नानो, केम आव्यो छैया छानो,
मारी भोळी ओखा बेन, तारां चोर तणां छे चेन। २।
मारी कन्या न जाणे कांई, तेने कपटे लीधुं ते सांई,
छैया छत्रपतिए झाल्यो, केवो कारागृहमां घाल्यो। ३।
तारा बापनो बाप तेडाव्यो, तेणे पगे लागीने छोडाव्यो,
तारी कमळा माता छे धाडी, तुंने नव देखाडे घीनी वहाडी। ४।

कड़वक—४७ ('कंसार' का सेवन और स्त्रियों द्वारा गीत-गान)

हे जमाई, तुम कंसार खाओ, (कंसार) खाओ। तुम्हारी कमाई अच्छी दिखायी दे रही है। हे छोकरे, तुम तो काले में से विकसित हुए हो। हे छोकरे, तुम तो किसी (कोमल) फली में से कठिन सलाई (छड़) जैसे विकसित हुए हो। १ हे छोकरे, तुम तो नाखून के समान नन्हे हो। तुम चुपचाप कैसे आ गये हो? मेरी (हमारी) ओखा बाई भोली है; (परन्तु) तुम्हारे तो चोर के (-से) लक्षण हैं। २ मेरी कन्या तो कुछ भी नहीं जानती है; (फिर भी) तुमने कपट से उसका आलिंगन किया। तुम्हें छत्रपति (बाण) ने (कैसे) पकड़ लिया? (और) कैसे कारागृह में डाल दिया? ३ तुम अपने बाप को बुला लाये और उसने पाँव लगकर (तुम्हें) छुड़ा लिया। तुम्हारी माता कमला (लक्ष्मीस्वरूप रुक्मिणी) उतावली-लुटेरी है। तुम्हें तो उसने (कभी) घी की कटोरी दिखायी नहीं थी (और इस कंसार में घी ही घी भरा पड़ा है)। ४

---

१ 'कंसार'— गुजरात का लोकप्रिय मिष्टान्न विशेष है 'कंसार', जो कुछ 'कसार' जैसा होता है। आम तौर पर मंगल प्रसंगों में यह बनाया जाता है। यह अधपीसे गेहूँ के दानों को घी में भून-सेंककर बनाया जाता है। उसमें काफ़ी शक्कर भी छोड़ी जाती है। विवाह के अवसर पर बनाये जानेवाले मिष्टान्नों में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। दामाद को घी पिलाने के हेतु उसका उपयोग किया जाता है।

तारो पिता जे छे काम, तुंने अचळ चित्त, नहीं ठाम,
शाम-रामे शुं लडाव्या लाड ? जेणे खाधुं अन्न भरवाड । ५ ।
अमने दानवने मानव जोतां खामी, नीच वरे ऊंच कन्या पामी,
तारो वंश तो कीयो काम, तेणे लजाव्युं बाणासुरनुं नाम । ६ ।
क्यांथी पेठो तुं खंखोळी ? तें तो छेतरी ओखा भोळी,
तारां पुण्य तणो नहीं पार, राजपुत्री पाम्यो पींडार । ७ ।
रूडी वहु पाम्यो तुं राय, एक वार अम आगळ नाच,
एम रामा करे बहु रीत, अन्योन्य गाय छे गीत । ८ ।
वळती देवकन्या गाय वरणी, ते तो केशवनी जानरणी,
तमे लांबी शुं लूली हलावो, रूपे भूंडण सरखी भावो । ९ ।
अमारो अनिरुद्ध तीखो मरी, ए तो स्वप्नामां गयो वरी,
कन्याने मन ए वर भाव्यो, तेणे आदर दईने तेडाव्यो । १० ।

तुम्हारे पिता जबकि काम (-देव अर्थात प्रद्युम्न) हैं; इसलिए (उनके स्वभावतः चंचल-चित्त होने के कारण) तुम्हारा चित्त एक स्थान पर स्थिर नहीं रह पाता। जिन्होंने अहीरों (के यहाँ) का अन्न खाया है, तुम श्याम (कृष्ण) और बलराम को कैसे लाड़ लड़ाये हैं ? (अहीर होने पर भी) उन्होंने तुम्हें कैसे लाड़-प्यार से घी खाने नहीं दिया। ५ हम दानवों को देखने पर (हमारी तुलना में) मानव दोषयुक्त अर्थात छोटे जान पड़ते हैं। (तुम जैसे) एक निम्न श्रेणी के वर ने ऊँची जाति की (हमारी) कन्या को प्राप्त किया है। तुम्हारे कुल ने यह ऐसा काम किया है— उससे बाणासुर के नाम लज्जित कर दिया। ६ तुम (मार्ग) खोजकर— तोड़-फोड़कर कहाँ से पैठ गये ? तुमने भोली ओखा को ठग लिया। (जबकि तुम जैसे) एक पिंडारी ने राजपुत्री को प्राप्त किया है, तो तुम्हारे पुण्यों का कोई पार (सीमा, गिनती) नहीं (जान पड़ता) है। ७ हे राजा, तुमने बहुत अच्छी वधू को प्राप्त किया है; (अतः) एक बार (इस ख़ुशी में) हमारे सामने नाच लो। —इस प्रकार नारियाँ (लोक-) रीति का निर्वाह कर रही थीं और एक (पक्षवाली) दूसरी (पक्षवाली) को लक्ष्य करके गीत गा रही थीं। ८

फिर (वधूपक्ष की ओर से गाये गये उपर्युक्त गीत के) उत्तर में देवकन्याएँ गीत गाने लगीं। वे तो केशव अर्थात श्रीकृष्ण के पक्ष की बारातवाली थीं। (वे बोलीं—) ‘तुम अपनी लम्बी जीभ क्या हिला रही हो ? रूप में तो सूअरनियों-जैसी लग रही हो। ९ हमारा अनिरुद्ध तीखी काली मिर्च (जैसा उग्र स्वभाव वाला) है। उसका तो स्वप्न में (ओखा द्वारा) वरण किया गया था। (तुम्हारी) कन्या के मन को यह वर भा

वरवहु बंन्यो एकठां मळियां, बाणासुरनां ते हैडां दळियां,
तेणे कीधो ए उपर कोप, भांग्यां कवच ने वळी टोप । ११ ।
शुं थयुं सिंहसुतने सहाया, हरि हळधर केवा धाया,
अमारा श्याम राम ज्यारे रूठा, त्यारे वेवाई कीधा ठूंठा । १२ ।
रणमां रझळ्या राणाना अंगूठा, छोडी आपीने जीवता छूट्या,
मों मारीने कन्या लीधी, घर वसाववा वहुअर कीधी । १३ ।
एम गीत गाय छे वरणी, वरकन्या ते उठ्यां परणी,
ऋषि सहस्र अठ्यासी धीश, दे छे वधूवरने आशिष । १४ ।
मागण उचित पाम्यां दान, सहुने संतोष भगवान,
अति आनंद ओच्छव थाय, नारी गीत अनुपम गाय । १५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

घर वसाववा वहुअर कीधी, घेर जाशुं आनंद रे,
परस्पर विनोदनी वीरता, कहे भट प्रेमानंद रे । १६ ।

गया, तो वह सम्मान करते हुए उसे बुला ले आयी । १० (जब) वर-वधू दोनों एक-दूसरे से मिल गये, तो वह (घटना) बाणासुर के हृदय पर (मानो) मूँग दलने लगी। उसने (फिर) उन (दोनों) पर क्रोध किया— उसका कवच तथा उसके अतिरिक्त उसका टोप भग्न हो गया। ११ फिर इसमें क्या अनुचित हुआ कि सिंह के पुत्र के श्रीकृष्ण और छत्रधर बलराम सहायक हो गये। वे किस प्रकार दौड़े ? जब हमारे श्याम और बलराम क्रुद्ध हो उठे, तो उन्होंने समधी (बाण) को (उसके सहस्र हाथों में से केवल दो को छोड़कर) ठूँठ बना डाला। १२ युद्धभूमि में राजा बाण के अँगूठे (कटकर तितर-बितर होते हुए जब) घूमने-दौड़ने लगे, तो अपनी छोकरी देकर वह जीवित छूट गया। तब मुँह मारकर, अर्थात निर्भयता से उसका मुँह बन्द करके (हमने) कन्या ले लीं और घर बसाने के लिए उसे (अपनी) बहू बना लिया। १३

इस प्रकार उन्होंने विवाह-गीत गाया। (तदनन्तर) परिणय पूरा होकर वर और वधू उठ गये। तो अठासी सहस्र श्रेष्ठ ऋषियों ने वर और वधू को आशीर्वाद दिया। १४ याचकों ने (वरपक्ष से) उचित दान प्राप्त किये। इस प्रकार भगवान कृष्ण ने सबको तृप्त किया। (उस समय) बड़ा आनन्दोत्सव हो गया। नारियों ने अनुपम (रूप से) गीत गये। १५

(यादवों ने) घर बसाने के हेतु (ओखा को) वधू बना लिया। वे (लोग अब) आनन्दपूर्वक घर जाएँगे। भट्ट प्रेमानन्द कहते हैं— वे एक-दूसरे से विनोद-भरी बातें कह-सुन रहे थे। १६

कडवुं ४८ मुं—(बारातियों का भोजन आदि)

राग रामग्री

सांभळो परीक्षित रायजी, कंसार पूरो थाळ मांय जी,
घृत खांड नाखी लावी जी, राणी मायरा मध्ये आवी जी। १।

ढाळ

कंसार रीते ने परम प्रीते, आरोगे नर नार,
स्वजन नीरखे ने मन हरखे, ऊलट अंग अपार। २।
जादव सघळा जानैया, मानिया जेम देव,
तेलमर्दन अंगमंजन, करे छे सेवक सेव। ३।
खान पान भक्ष भोजन, नाना विध पकवान,
जानने घणुं मान दीधुं, रीझव्या भगवान। ४।
घूघरा घमके, ढोल ढमके, थाय छे संगीत गान,
अप्सरा नाचे ने राय राजे, जाचक पामे दान। ५।
हाथा तोरण बारणे, केसर अंग ढोळाय,
भातभातनां सुगंधादिक, अंग लेपन थाय। ६।

कड़वक—४८ (बारातियों का भोजन आदि)

(श्री शुकदेव बोले—) हे राजा परीक्षितजी, सुनो। कंसार थाली में पूरा (भरा हुआ) था। रानी उसमें घी, शक्कर डालकर उसे विवाह-मण्डप में ले आयी थी। १ पुरुषों और स्त्रियों ने रीति के अनुसार और प्रेमपूर्वक कंसार खा लिया। (उस वक़्त) स्वजनों ने उसे देखा और उनका मन आनन्दित हो उठा। उनके अंग-अंग में उमंग थी। २ (बाणासुर ने) समस्त यादव बारातियों को देवों के समान मान लिया। उसके सेवकों ने तेल लगाकर उनका अंगमर्दन किया और स्नान कराया। ३ (वहाँ) खान-पान, भक्ष्य (खाद्य), नाना विधि पकवानों का भोजन था। बाणासुर ने बारात का बहुत सम्मान किया और भगवान कृष्ण को प्रसन्न कर लिया। ४ घुँघरू झनक रहे थे; ढोल गड़गड़ा रहे थे; संगीत-गान हो रहा था। अप्सराएँ नृत्य कर रही थीं और राजा (बाण) आनन्दित हो गया था। याचकों ने दान प्राप्त कर लिये। ५ द्वारों पर उन्होंने विशिष्ट प्रकार के केले के स्तम्भ के तोरण बनाये। (लोगों के) अंग-अंग पर केसर (मिश्रित जल का) सींचन हो रहा था। भाँति-भाँति के सुगन्धित द्रव्यों से (लोगों का) मानो अंग-लेपन हो रहा था। ६ उस मण्डप की शोभा बड़ी मनोहारी थी। उसमें विविध रचना-शैलियों का काम (कारीगरी)

मंडप शोभा महा मनोहर, विधविध पेरनां काम,
कहे कवि, त्यां शुं वखाणुं ? दीठे पहोंचे हाम । ७ ।
श्रीकृष्णशिव सभा मध्य बेठा, जादव छप्पन क्रोड,
अनिरुद्ध ओखा विराजतां, जाणे मालती चंपक छोड । ८ ।
श्रीकृष्ण जादव वदे वाणी, सांभळो बाणराय,
पेरामणी प्रद्युम्नने करीने, जान करो विदाय । ९ ।
विदाय आपो राय अमने, थाय छे बहु दिन,
बाणासुर कहे, वेगे करीने, आज्ञा देशुं स्वामीन । १० ।
चरणरेणु हुं तमारो, मारो शो अधिकार ?
जे जोईए ते लखावो, हुं आपी करुं नमस्कार । ११ ।

किया गया था। कवि कहता है, मैं वहाँ की क्या सराहना करूँ ? उस (शोभा) को जिसने देखा हो, उसे ही (उसके बारे में कहने की) हिम्मत हो सकती है। ७ श्रीकृष्ण और शिवजी सभा (-गृह) के बीच में बैठे हुए थे। (वहाँ) छप्पन करोड़ यादव (उपस्थित) थे। अनिरुद्ध-ओखा विराजमान थे। मानो चम्पक का पौधा और मालती (लता) ही हों। ८ यादव (राज) श्रीकृष्ण यह बात बोले, 'हे बाणराज, सुनिए। प्रद्युम्न का नेगाचार करके बारात को बिदा कर दीजिए। ९ हे राजा, हमको बिदा कर दीजिए। (घर से निकले हमें) बहुत दिन हो गये हैं।' (इसपर) बाणासुर बोला, 'हे स्वामी, वेगपूर्वक (अर्थात झट से) आज्ञा देता हूँ। १० मैं तो आपका चरणरज (धूलकण) हूँ। मेरा क्या अधिकार है ? जो चाहिए उसे (नेगचार सम्बन्ध में) लिखवाइए। मैं (वह) देकर नमस्कार करूँगा (बिदा कर दूँगा)। ११

कडवुं ४९ मुं—(सात्यकि द्वारा नेग सम्बन्धी माँग)

राग धन्याश्री

सात्यकी कहे छे, लखो कागळमां, एक लाख मातंग, रायजी ।
राजसंगाथे पाणीपंथा, पंच लाख तुरंग । रायजी । १ ।

कड़वक—४९ (सात्यकि द्वारा नेग सम्बन्धी माँग)

सात्यकि कहते हैं— 'हे राजाजी, काग़ज़ पर लिख दो, एक लाख हाथी (दे दो)। हे राजाजी, राजा के साथ पाणीपन्थी पाँच लाख घोड़े दे दो। १ हे राजाजी, रथ, पटकुल (रेशमी वस्त्र), दुपट्टे, सुरभि (कामधेनु) दे दो। जो योग्य हो तो नक़द दे दो।' (इसपर बाण

रथ पटकुळ पामरी सुरभी, घटे जे रोकारोक, रायजी ।
मन इच्छ्युं अमे मागीने लीजे, न रहे मनमां शोक । रायजी । २ ।
छप्पन क्रोड जादवने काजे, आयुध सहित शणगार, रायजी ।
जादवजुवती जे कोई घेर छे, तेने पटकूळ सार । रायजी । ३ ।
देवकी रुकिमणी रोहिणी रेवतीने, आपो सोळ शणगार, रायजी ।
सुभद्राने चीर पांचवरणुं, वळी सोळे शणगार । रायजी । ४ ।
अनेक गाम ने देश ज आपो, तो हाथ धरे श्रीराम, रायजी ।
लक्ष गाम चार देश आपीने, करो प्रभुने प्रणाम । रायजी । ५ ।
रोक जोईए तो सोनुंरूपुं, बळीभद्रने पूछो तेह, रायजी ।
प्रद्युमन वेवाई तमारो, मनगमती वस्तु जेह । रायजी । ६ ।
घणुं अमे शुं लखावियें ? सगपण सांध्यां हाड, रायजी ।
जमाई जे मागे ते आपो, तेमां अमने शो पाड ? । रायजी । ७ ।
भूरसी दक्षिणा ब्राह्मणने आपो, तेनो अहीं शो आंक ? रायजी ।
जन जाचकने सौ कोई आपे, जे होय दरिद्री रांक । रायजी । ८ ।

बोला—) 'हे राजाजी, मैं चाहता हूँ, हमें (भी) माँग लीजिए; मन में कोई सोच न रह जाए'। २ (तब सात्यकि बोले—) 'हे राजाजी, छप्पन करोड़ यादवों के लिए आयुधों-सहित (समस्त वीरपुरुषोचित) शृंगार (साजसज्जा) दो। हे राजाजी, जो कोई यादव युवतियाँ घर पर हैं, उनके लिए बढ़िया रेशमी वस्त्र हों। ३ हे राजाजी, देवकी, रुक्मिणी, रोहिणी, रेवती को सोलह शृंगार[1] दो। हे राजाजी, सुभद्रा को पंचरँगा वस्त्र और उसके अतिरिक्त सोलह शृंगार दे दो। ४ हे राजाजी, अनेक ग्राम और देश ही दे दो, तो ही श्रीबलराम हाथ से ग्रहण करेंगे। हे राजाजी, एक लाख ग्राम और चार देश देकर प्रभु कृष्ण को प्रणाम करो। ५ हे राजाजी, सोने या चाँदी में नक़द चाहिए तो वह बलभद्र से पूछ लो। प्रद्युम्न तुम्हारे समधी हैं, जो (उनकी) मनभायी वस्तु हो, वह (उन्हें) दे दो। ६ हे राणा, हमसे बहुत क्या लिखवा रहे हो ? हे राजाजी, यह सगापन (नाता, रिश्ता, वस्तुतः) हड्डियों के जोड़ों जैसा होता है। हे राजाजी, (तुम्हारा) दामाद जो माँग ले, वह उसे दे दो। उसमें हमारा कैसा उपकार है ? ७ हे राजाजी, ब्राह्मणों को निश्चित रक़म की अर्थात बँधी हुई दक्षिणा दे दो। उसकी यहाँ क्या गिनती करें ? हे राजाजी, यदि कोई दरिद्र, रंक हो, तो भी याचक जनों को सब कोई देते हैं'। ८

---

१ सोलह शृंगार : देखिए कड़वक, २० पृष्ठ ६०।

रीतभात सात्यकीए लखावी, ते सर्वे आपी बाणराय, रायजी ।
कर जोडीने ऊभो सन्मुख, श्रीकृष्णने नम्यो पाय । रायजी । ९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पाय नम्यो परिब्रह्मने, आनंद अंग न माय रे,
छप्पन क्रोडने पेरामणी करी, पूज्या त्रिभुवन राय रे । १० ।
त्रिभुवनपति संतोषिया, आप्यां वस्त्र वाहन रे,
पुत्र आपी पाये लाग्यो, कीधी स्तुतिस्तवन रे । ११ ।

(इस प्रकार) सात्यकि ने रीति-रिवाज के अनुसार लिखवा दिया। हे राजाजी ० । बाणराज ने वह सब दे दिया । (तत्पश्चात) वह हाथ जोड़कर सम्मुख खड़ा रहा और उसने श्रीकृष्ण के पाँवों का नमन किया । हे राजाजी ० । ९

बाणराज ने परब्रह्म श्रीकृष्ण के चरणों का नमन किया । उसके अंग में आनन्द नहीं समा रहा था । उस राजा ने छप्पन करोड़ यादवों को पहनने-ओढ़ने के वस्त्र देते हुए त्रिभुवन के राजा (श्रीकृष्ण) का पूजन किया । १० उसने उन त्रिभुवनपति को वस्त्र और वाहन प्रदान किये और उन्हें सन्तुष्ट कर दिया । अपनी कन्या (उनके पौत्र को पत्नी-रूप में) प्रदान करके उसने उनकी स्तुति और स्तवन किया । ११

कडवुं ५० मुं—(माता बाणमती द्वारा ओखा को सिखावन देना)

राग धन्याश्री

पुत्री पधारो रे, सौभाग्य सासरे,
भाग्य तमारुं रे तुलना कुण करे ?
अमे अपराधी बहु, अवगुणभर्यां,
पुत्री तमने रे, अति दुखियां कर्यां । १ ।

राग बीभासनी

दुःख पामी दीकरी ते, मरण लगी केम वीसरे ?
मातापिता वेरी थयां तारां, मननी खटपट केम नीसरे ? । २ ।

कड़वक—५० (माता बाणमती द्वारा ओखा को सिखावन देना)

(माता बाणमती बोली—) री पुत्री, (अब) तू सौभाग्यशाली ससुराल जा । अरी तेरे भाग्य की तुलना कौन (किससे) कर पाए ? हम तेरे बहुत अपराधी हैं; हम अवगुणों से भरे-पूरे हैं । री पुत्री, हमने तुझे अति दुःखी कर दिया । १ री बेटी, तू (हमारे कारण) दुःख को प्राप्त हो गयी ।

बाई, बापे तुंने बंधनमां राखी, दुःख वेठ्युं बहु दीकरी ?
मोटुं घर कुळ पामी ते तो, तुं तारे भाग्ये करी। ३ ।
उग्र पुण्ये ओखाबाई तमो, पाम्यां अनिरुद्ध नाथने,
ते सुख आगळ दुःख विसार्युं, जोखम बाणना हाथने। ४ ।
शिक्षा दउं तने दीकरी, मारी तारी लाज वधारजे,
जो प्रीते पियु आज्ञा आपे, तो पियर भणी पधारजे। ५ ।
उग्रसेन हळधर प्रद्युमन, वासुदेव त्रिभुवण धणी,
श्वशुर पक्षमां सर्व कुटुंबनी, सेवाभक्ति करजो घणी। ६ ।
रुकिमणी जांबुवती ने भद्रा, सत्यभामा सत्या सुंदरी,
लक्ष्मणा, कालिंदी वृंदा, अष्टा पटराणी खरी। ७ ।
रहि रंभावती देवकी, मायावती सती रेवती,
रखे दीकरी आळस करती, तुं चरण तेना सेवती। ८ ।
रूडीभूंडी वात सांभळी होय, कोई आगळ नव चहेरीए,
उघाडा केश न मूकिये, घणुं झीणुं वस्त्र न पहेरीए। ९ ।

इसे मौत तक हम कैसे भूल सकेंगे ? (तेरे) माता-पिता (तेरे) वैरी हो गये थे। (इससे) उन्हें अनुभव होनेवाली मन की झंझट (से उत्पन्न) व्यथा का निवारण कैसे होगा ? २ री देवी, तेरे बाप ने तुझे बन्धन में रख दिया था। उससे तुझे बड़े दुःख ने घेर रखा था। (परन्तु अब) तू अपने भाग्य से (बड़े) घर और कुल को प्राप्त हो गयी है। ३ ओखादेवी, तू बड़े (उज्ज्वल) पुण्य से पति अनिरुद्ध को प्राप्त हो गयी है। उस सुख के आगे (कारण), दुःख को तथा बाण के हाथों की हानि को भूल गयी है। ४ री कन्या, मैं तुम्हें सीख दे रही हूँ। तेरी और मेरी प्रतिष्ठा को वृद्धिगत कर देना। यदि तेरे प्रिय (पति) तुझे आज्ञा दे, तो पीहर के प्रति आ जाना। ५ उग्रसेन, हलधर बलराम, प्रद्युम्न, त्रिभुवन के स्वामी वासुदेव कृष्ण की, श्वसुर पक्ष के समस्त परिवार की बड़ी सेवा तथा भक्ति करना। ६ रुक्मिणी, जाम्बुवती और सुभद्रा, सत्यभामा, सुन्दरी सत्या, लक्ष्मणा, कालिन्दी, वृन्दा —ये (श्रीकृष्ण की) निश्चय ही (आठ) पटरानियाँ हैं। ७ इनके अतिरिक्त (शेष रही) रम्भावती, देवकी, मायावती, सती रेवती —इन सबके चरणों की सेवा तू बिना आलस्य किये कर। ८ तूने किसी से कोई भली-बुरी बात सुनी हो, तो किसी के सामने उसे अपने चेहरे पर भी प्रदर्शित न करना। बालों को खुले न रखना। बहुत झीना वस्त्र न पहनना। ९ घर के बताये हुए काम करना। (उस सम्बन्ध में) कुछ आगे-पीछे (टालमटोल) न करना।

काम घरनां बताव्यां करिये, न करिये कांई अरुंपरुं,
पूछ्यां पूंठे सूक्ष्म सादे, बोलिये जईने खरुं। १०।
पात्र पगे नव ठेलिये, क्षमा राखिये बहु उदरे,
आधुं ओढी चालिये, राखिये दृष्टि भूमि परे। ११।
संताप सासरे न कीजीए, पियरने न वखाणीए,
लक्ष दुःख होय सासरे, पण स्वामीने न जणावीए। १२।
दासी माणसनो संग न कीजे, नीचने मळे माठुं सही,
सासु रीस करे घणी, पण सामो बोल करीए नहीं। १३।
सासु नणंद ने जेठाणीनी, सेवाभक्ति करजो घणी,
परघेर नित्य जईए नहीं, गये हलकाई थाय आपणी। १४।
मोटे स्वरे हसीए नहीं, कोई साथे ताळी नव दीजीए,
ऊभां रही उघाडे माथे, पुत्री पाणी न पीजीए। १५।
भरथार पहेलुं जमिए नहीं, बाई उच्छिष्ट जमीए नाथनुं,
तुंकारीए नहीं सेवक आदे, मन राखीए सर्व साथनुं। १६।
मातापिता ने भ्रातभगिनी, पियर सुख न संभारीए,
आवो बेसो जी जी कहीने, कुळनी लाज वधारीए। १७।

पूछने पर पीछे जाकर धीमी आवाज़ में बोलना। १० बरतन को पाँव से मत ठेलना, दिल में बहुत शक्ति (सहनशीलता) रखना। (सिर पर) आधा घूंघट ओढ़कर चलना; दृष्टि भूमि पर रखना। ११ ससुराल पर क्रोध न करना; पीहर की प्रशंसा न करना। ससुराल में लाख दुःख हों, तो भी पति को न जतलाना। १२ दासी लोगों की संगति में न रहना (उनका साथ न देना); निम्न श्रेणीवाले से मिले रहने पर सचमुच बुरा होता है। सास बहुत गुस्सा करे, तो भी उसके सामने कोई बात न करना। १३ सास, ननद और जिठानी की बहुत सेवा-भक्ति करना; दूसरे के घर पर नित्य (आती-) जाती न रहना; जाने पर अपने को हलकापन प्राप्त होने से हमारी निन्दा होती है। १४ उच्च स्वर में न हँसना; किसी के साथ ताली न बजाना। री पुत्री, खुले माथे से खड़े रहकर (बिना घूंघट किये) पानी न पीना। १५ पति के पहले भोजन न करना; री देवी, पति का जूठा खा लेना। सेवक आदि को न दुत्कार देना; समस्त साथियों का मन रखना। १६ माता-पिता, भाई-बहिन, पीहर के सुख को याद न करते रहना। 'आओ' 'बैठो', 'जी', 'जी' कहते हुए अर्थात नम्रतापूर्वक बात करते हुए अपने कुल की प्रतिष्ठा की वृद्धि करना। १७ सबसे अच्छी लगनेवाली बात कहना; री देवी,

सहुने गमतुं बोलीए, बाई अहंकार करीए नहीं,
हसतुं वदन नित्य राखीए, सुखदुःख समान गणीए सही । १८ ।
दिवसे न सूईए दीकरी, बहेन वचन पियुनुं पाळीए,
सासुजी ज्यारे साद करे, त्यारे जी जी करी उत्तर आलीए । १९ ।
श्वशुर-जेठनी लाज कीजे, न बोलीए ऊंचे स्वरे,
एम घणी शिक्षा दई माता, पुत्रीने विदाय करे । २० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विदाय करे पुत्रीने, धन वस्त्र दई अपार रे,
मातापिता वळाववा आव्यां, साथे कुटुंबपरिवार रे । २१ ।

अहंकार न करना। सदा मुख को मुस्कराते रखना (सदा सुहास्यवदन—हँसमुख रहना)। सुख-दुःख को निश्चय ही समान गिनना (मानना)। १८ री कन्या, दिन में न सोना; री बहिन, पति के वचन का पालन करना। सास जब आवाज़ दे (बुला ले), तब 'जी', 'जी' कहकर उत्तर देना। ससुर और जेठ के सामने घूँघट ओढ़कर रहना। १९ (उनके सामने) उच्च स्वर में न बोलना। इस प्रकार माता (बाणमती) ने अपनी कन्या (ओखा) को बहुत सिखावन दी और उसे बिदा किया। २०

माता ने अपार धन और वस्त्र देकर अपनी कन्या को बिदा कर दिया। माता और पिता कुटुम्ब-परिवार-सहित उसे बिदा करने के लिए आ गये। २१

कडवुं ५१ मुं—(वर-वधू के विषय में स्त्रियों द्वारा गीत गाना और चित्रलेखा, माता आदि द्वारा ओखा को सिखावन देना)

राग धन्याश्री

बाणासुर मळी घेर जाय रे, सहु सुवासण गीत गाय रे,
अनिरुद्ध पाम्यो शुभ कन्याय रे, त्यां जादव हसता जाय रे । १ ।

कड़वक—५१ (वर-वधू के विषय में स्त्रियों द्वारा गीत गाना और चित्रलेखा, माता आदि द्वारा ओखा को सिखावन देना)

फिर बाणासुर घर चल दिया। (उस समय) समस्त सौभाग्यवती स्त्रियाँ गीत गा रही थीं। अनिरुद्ध ने शुभ (लक्षणों से युक्त) कन्या को (पत्नी के रूप में) प्राप्त किया था। तब वहाँ यादव हँसते हुए जा रहे थे। १ समस्त सखियाँ टोली में इकट्ठा हो गयी थीं। वे

साहेली मळी सहु टोळे रे, अन्योन्य मळीने बोले रे,
पछे गीत गाय छे वरणी रे, ओखाने लई जाय छे परणी रे। २।

राग फटाणांनी चाल

आव्यो आव्यो दुवारकानो चोर, एना वडपिताए चार्यां ढोर,
लाखेणी लाडी गयो रे। (टेक)
एनुं शुं करीए वखाण ? एणे जीत्यो ते राय बाण। लाखेणी। ३।
आव्यो आव्यो कामकुमार, जदुकुळनो ए श्रृंगार। लाखेणी।
आव्यो आव्यो नंद तणो गोवाळ, एतो मामा कंसनो काळ। लाखेणी। ४।
आव्यो आव्यो हळधर केरो वीर, गायो चारी ते जमना तीर। लाखेणी।
आव्यो गोपीओने माखणचोर, ए तो नागर नंद किशोर। लाखेणी। ५।
एनी मधुरी छे बहु वाणी, एनो वडपिता महीनो दाणी। लाखेणी।
एने मन आनंद बहु थाय, सखी ओखाने लई जाय। लाखेणी। ६।
एम सैयरो गाये गीत, मन आणीने बहु प्रीत। लाखेणी।
तिहां आनंद सहुने थाय, भट प्रेमानंद जश गाय। लाखेणी। ७।

एक-दूसरी से मिलकर बोल रही थीं। अनन्तर वे विवाह सम्बन्धी गीत गाने लगीं— "विवाह करके ओखा को लिये जा रहे हैं। २ द्वारका का चोर आ गया, आ गया। उसके दादा ने गोरू को चराया था। वह (चोर) सुलक्षणों से युक्त नवोढ़ा को लेकर चला जा रहा है। उसका बखान क्या करें ? उसने बाणराज को जीत लिया। सुलक्षणा ०। ३ कामदेव (के अवतार प्रद्युम्न) का पुत्र आ गया, आ गया। वह यदुकुल का आभूषण है। सुलक्षणा ०। नन्द का पुत्र गोपाल (कृष्ण) आ गया, आ गया। वह तो अपने मामा कंस का काल है। सुलक्षणा ०। ४ हलधर बलराम का भाई आ गया, आ गया। उसने यमुना के तट पर गायें चरायी थीं। सुलक्षणा ०। गोपियों के मक्खन को चुरानेवाला आ गया, आ गया। वह तो नागर नन्द-किशोर है। सुलक्षणा ०। ५ उसकी वाणी बहुत मधुर है। उसके दादा दही पर चुंगी वसूल करनेवाले थे। सुलक्षणा ०। उसके मन को बहुत आनन्द हो गया है। वह (हमारी) सखी ओखा को लेकर जा रहा है। सुलक्षणा ०"। ६

इस प्रकार, मन में बहुत प्रीति रखते हुए सखियाँ गीत गा रही थीं। सुलक्षणा ०। वहाँ सबको आनन्द हो गया। भट्ट प्रेमानन्द उसके यश का गान कर रहा है। सुलक्षणा ०। ७ चालनहार के साथ ओखाबाई चली जा रही है। उसने (अब) सखियों का साथ छोड़ दिया है। उसने माता-पिता को, परिवार को छोड़ दिया है और यादवों का साथ

राग केदारो

ओखा बाई चाल्यां चालणहार, साथ मूक्यो सहियर तणो रे,
मूक्यां मातापिता परिवार, साथ लीधो जादव तणो रे। ८।
ओखाबाईए भरियां नयणे नीर, मनमां आनंद अति घणो रे,
चित्रलेहा आवी देवा धीर, मिलाप करी ओखा तणो रे। ९।
बंन्यो भेट्यां हैडां साथ, मनमां आनंद पाम्यां रे,
भले पामी तुं अनिरुद्ध नाथ, दुःख ते सघळां वाम्यां रे। १०।
आपण रमतां सहियर साथ, सुखमां ते बहु महालतां रे,
हवे लीधो बाई जादव साथ, अमने मूकी थयां चालतां रे। ११।
मोहोटुं घर पामी सहियर तुं, राजी हुं मनमां थई रे,
सुखमां तारे बाकी शुं ? पीडा तुज मन तणी गई रे। १२।
बेनी, डाह्यां थाजो आप, माया मनमां राखजो रे,
बोल्युं चाल्युं करजो माफ, वहेलां ते दर्शन दाखजो रे। १३।
त्यारे कहे छे ओखाबाई, चित्रलेहाने पाये पडी रे,
बेनी, तुज साची सगाई, सहु सहियरमां तुं वडी रे। १४।

(स्वीकार) कर लिया है। ८ ओखाबाई ने आँखों में अश्रुजल भर लिया है; (फिर भी दूसरी ओर उसे प्रियतम के साथ मन में जाने में) अति आनन्द हो रहा है। (उस समय) चित्रलेखा उसे ढाढ़स बँधाने आ गयी। उसने ओखा को गले लगाया। ९ वे दोनों एक-दूसरी के हृदय से लग गयीं, तो वे मन में आनन्द को प्राप्त हो गयीं। (चित्रलेखा बोली—) 'अच्छा हुआ, तूने अनिरुद्ध को पति-रूप में प्राप्त किया है। उससे समस्त दुःख का शमन हो गया। १० हम सखियाँ साथ में खेलती थीं। (उस समय) बहुत ठाठ-बाट से सुखपूर्वक रलला करती थीं। री देवी, अब तूने यादवों का साथ स्वीकार कर लिया है; हमें छोड़कर जा रही है। ११ री सखी, तू बड़े घर को प्राप्त हो गयी है। (इसलिए) मैं मन में बहुत खुश हो गयी हूँ। तेरे सुख में (अब) क्या बाक़ी (कमी) है ? तेरे मन की पीड़ा (अब दूर) हो गयी है। १२ री बहिन, स्वयं समझदार बनी रह जा। (हमारे प्रति) मन में माया रखना। कहा-सुना माफ़ करना; शीघ्र ही (फिर से) दर्शन देना'। १३ तब ओखाबाई चित्रलेखा के पाँव लगकर बोली, 'री बहिन, तेरा मेरे साथ (मित्रता का) सच्चा सम्बन्ध है; सब सखियों मे तू ही बड़ी है। १४ री बाई, तूने मेरा हाथ पकड़ लिया, तूने मेरी रक्षा की। तूने मेरे प्रति बड़ी दया करके मुझे पति अनिरुद्ध से मिला

बाई, तें झील्यो मारो हाथ, रक्षा कीधी मुज तणी रे,
मेळवी आप्यो ते अनिरुद्ध नाथ, दया आणी तें घणी रे। १५।
ज्यारे जपती पति मननी मांही, व्याकुळ बेनी हुं थती रे,
सुबोध करती मुजने त्यांही, समज मुजमां न हती रे। १६।
अनेक गुण छे तारा, बेन, ते मुजने नहीं वीसरे रे,
तुज विना मुजने नहीं चेन, हेते मुज हैडुं ठरे रे। १७।
बाई, तुजने कहुं आपोआप, सहियर को दिन आवशुं रे,
अपराध मारो माफ करजो, कुशळता अमो कहावशुं रे। १८।
एम कही भरती नयणे नीर, चित्रलेहा छानी राखती रे,
बेनी, भींजे तारां चीर, हैडां साये चांपती रे। १९।
एटले आळी ओखानी मात, नयणे नीरधारा वहे रे,
पुत्री, मारी सांभळ वात, मुज शिखामण मन लहे रे। २०।
तुजने कहेती गुंजनी वात, दूर पधारशो दीकरी रे,
हवे मुजने कोण करशे शांत, कोने जोई ने रहुं ठरी रे ?। २१।
बेनी मधुरी बोलती वाण, ते मुजने बहु सांभरे रे,
वहाली, तुं तो मारा प्राण, विसारी नहीं वीसरे रे। २२।

दिया। १५ जब मैं मन में पति (के नाम) को जपती-रटती थी, री बहिन, मैं व्याकुल हो जाती थी, तब तू मुझे अच्छी सीख दिया करती थी। मुझमें (उस समय) कोई समझ-बूझ नहीं थी। १६ री बहिन, तेरे तो अनेक गुण हैं। वे मुझसे भुलाये नहीं जाएँगे। बिना तेरे मुझे चैन नहीं आता। तेरे प्रेम के कारण मेरा हृदय (मानो) जमता जा रहा है। १७ री बाई, मैं तुझे बता रही हूँ, री सखी, किसी दिन हम तेरे घर अपने-आप (स्वयं ही) आ जाएँगी। मेरा अपराध क्षमा कर। हम अपना कुशल-क्षेम कहलवा देंगी'। १८ —ऐसा कहते हुए वह आँखों में अश्रुजल भरती रही; तो चित्रलेखा उसे शान्त-चुप करती रही। वह बोली, 'बहिन, तेरा वस्त्र (आँसुओं से) भीग रहा है।' (ऐसा कहते हुए) उसने उसे हृदय से लगा लिया। १९ उतने में (वहाँ) ओखा की माँ आ गयी। उसकी आँखों से अश्रुजल की धारा बह रही थी। (वह बोली—) "बेटी, मेरी बात सुन ले। मेरी सिखावन मन में रख ले। २० तुझे मैं मर्म-भरी बात कह रही हूँ। री कन्या, तू दूर जा रही है। अब मुझे कौन शान्त करेगा ? मैं किसे देखकर स्थिर (-चित्त) रह जाऊँ। २१ सखी[1],

---

१ ज्येष्ठ पुत्री को 'सखी' सदृश मानकर उसे माता भी 'बेनी' अर्थात 'सखी' शब्द से सम्बोधित करती है।

होनी रूडां तारां भाग्य, दीपाव्यो जादव साथने रे,
पुत्री रहेजो अखंड सौभाग्य, पाम्यां अनिरुद्ध नाथने रे। २३।
एम दीधो त्यां आशीर्वाद, महियर वहेलां आवजो रे,
सेवो पवित्र सासुना पाद, दुःख होय दोह्यलां कहावजो रे। २४।
ओखाबाई, रहेजो द्वारिकामांही, त्यां एमने संभारजो रे,
गोमती नहाजो जईने त्यांही, त्रणे पक्षने तारजो रे। २५।
एम कही दूर रही त्यां मात, नीरखे छे नयणां भरी रे,
एटले आव्यो सहियर साथ, मळवा तैयारी करी रे। २६।
सासरे जाओ छो तमे, बेन, गमशे नहीं अमने कई रे,
तुज विना नहीं अमने चेन, सही, तुं समी को नहीं रे। २७।
बेनी, रमतां आपण साथ, सहियर टोळे सहु मळी रे,
हवे पाम्यां अनिरुद्ध नाथ, पाछां पियर आवजो वळी रे। २८।
बेनी, तुं मा आंसु पाड, छानी रहे ने तुं जरी रे,
एटले त्यां आव्यो कौभांड बेनी, वात कहुं खरी रे। २९।

तू मीठी-मीठी बातें करती है। वह मुझे बहुत याद आता है। री लाडली, तू तो मेरी प्राण है; तुझे भुलाने (का यत्न करने) पर भी नहीं भूल पा रही हूँ। २२ सखी, तेरे भाग्य उत्तम हैं। तूने साथ ही यादव (कुल) की भी उज्ज्वल कर दिया है। री पुत्री, अखण्ड सौभाग्यवती रह। पति अनिरुद्ध को तूने प्राप्त कर लिया है"। २३ उसने उसे ऐसा आशीर्वाद दिया। (फिर वह बोली—) 'शीघ्र ही मैके आ जाना। सास के पवित्र चरणों की सेवा कर; दुःख हो, संकट हो, तो कहलवाना। २४ ओखाबाई, तू द्वारका में रहना; वहाँ हमें याद करना। वहाँ जाकर गोमती में नहा लेना और तीनों पक्षों[1] का उद्धार करना'। २५ ऐसा कहकर माता वहाँ दूर (खड़ी) हो गयी। आँखों में आँसू भरकर वह उसे देखती रही। इतने में सखियों की टोली आ गयी। उन्होंने उससे मिलने की तैयारी की। २६ (वे बोलीं—) 'बहिन, तुम ससुराल जा रही हो। हमें कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है। बिना तुम्हारे हमें चैन नहीं आएगा। री सखी, अन्य सबमें कोई तुम-जैसी नहीं है। २७ री बहिन, हम सब सखियाँ टोली में मिलकर साथ में खेलती थीं। अब पति अनुरुद्ध को तुम प्राप्त हो गयी हो। फिर (कभी) पीछे पीहर लौट आना। २८ बहिन, तुम आँसू न बहाना। तुम जरा चुप रह जाओ।' इतने में वहाँ कौभाण्ड आ गया (और बोला—) 'बहिन,

१ तीन पक्ष : मातृकुल, पितृकुल और श्वसुरकुल।

अदकी ओछी कही होय वात, ते मनमां नव राखजो रे,
क्षमा करजो, माहारी मात, वहेलां मुखडुं दाखजो रे। ३०।
एम सर्वे मळी भेट्यां त्यांहे, मातपिता सहियर सहु रे,
वात करे छे मांहे मांहे, मनमां आनंद छे वहु रे। ३१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ओखाने संतोषियां, न्यून न राखी कांय रे,
जानवासे गोत्रज आगळ, दोरडो केम छोडाय रे ? ३२।

सच्ची बात कहता हूँ। २९ मैंने कुछ अधिक-न्यून बात कही हो, तो उसे मन में न रखना। मेरी बात को क्षमा करो। फिर शीघ्र ही (यहाँ आकर) अपना मुँह दिखाना (दर्शन देना)'। ३० इस प्रकार माता-पिता, समस्त सखियाँ —सब वहाँ (ओखा से) मिल गये। बीच-बीच में वे बातें कर रहे थे। उन (सब) के मन में बहुत आनन्द अनुभव हो रहा था। ३१

(सबने) ओखा को सन्तुष्ट किया— उसमें कोई कोर-कसर नहीं रखी। (फिर अब) जनवासे में कुलदेवता के सामने (लग्न-गाँठ का) डोरा कैसे खोला जाए ? ३२

कडवुं ५२ मुं—(लग्न-गाँठ खोलना)

राग धोळ मंगळ

ब्रह्माए वाळी गांठ, छबीली, दोरडो नव छूटे,
तारे, महादेव बाप तेडाव, हो लाडी, दोरडो नव छूटे। १।
तारी पार्वती मात तेडाव, छबीली, दोरडो नव छूटे,
तारो गणपति भ्रात तेडाव, छबीली, दोरडो नव छूटे। २।

कड़वक—५२ (लग्न-गाँठ खोलना)

ब्रह्मा ने (लग्न-) गाँठ लगा दी है; अरी छबीली ! उसका डोर नहीं छूटेगा। अरी दुलहन, तू अपने पिता महादेव (शिवजी) को बुला ला। (तो भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। १ अरी दुलहन, तू अपनी माता पार्वती को बुलाकर ले आ। (फिर भी) डोरा न छूटेगा। अरी छबीली, तू अपने भाई गणेशजी को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। २ अरी दुलहन, तू अपने बाप बाणासुर को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। अरी छबीली, तू अपनी माता

तारो बाणासुर बाप तेडाव, हो लाडी, दोरडो नव छूटे,
तारी बाणमती मात तेडाव, दोरडो नव छूटे। ३ ।
तारो कौभांड काको तेडाव, छबीली, दोरडो नव छूटे,
सगां सर्वेने वेगे कहाव, छबीली, दोरडो नव छूटे। ४ ।
हवे कन्यानी जानरडी गाय, हो लाडी, दोरडो नव छूटे,
त्यां तो आनंद ओच्छव थाय, छबीला, दोरडो नव छूटे। ५ ।
ब्रह्माए वाळी गांठ, हो लाडा, दोरडो नव छूटे,
तारो श्रीकृष्ण वडवो तेडाव, छबीला, दोरडो नव छूटे। ६ ।
तारो प्रद्युम्न बाप तेडाव, हो लाडा, दोरडो नव छूटे,
तारो हळधर काको तेडाव, हो लाडा, दोरडो नव छूटे। ७ ।
तारी रति मात तेडाव, हो लाडा, दोरडो नव छूटे,
तारी गोवाळ मंडळीने कहाव, छबीला, दोरडो नव छूटे। ८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

एम रीतभात त्यां करी, गोत्रजने लाग्यां पाय रे,
गोर आशिष दे घणी, बाणासुरनी कीधी रक्षाय रे। ९ ।

बाणमती को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। ३ अरी दुलहन, तू अपने चाचा कौभाण्ड को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। अरी छबीली, तू वेगपूर्वक अर्थात झट से अपने समस्त रिश्तेदारों को कहलवा दे। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। ४

अब कन्या (पक्ष) की बारातवाली स्त्रियाँ गाने लगीं— हे दूल्हे, यह डोरा नहीं छूटेगा। हे छबीले, वहाँ तो आनन्दोत्सव हो रहा है। यह डोरा नहीं छूटेगा। ५ ब्रह्मा ने यह (लग्न-) गाँठ लगायी है। हे दूल्हे, यह डोरा नहीं छूटेगा। अरे छबीले, तू अपने दादा श्रीकृष्ण को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। ६ अरे दूल्हे, तू अपने पिता प्रद्युम्न को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। अरे छबीले, तू अपने चाचा हलधर बलराम को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। ७ अरे दूल्हे, तू अपनी माता रति को बुलाकर ले आ। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। अरे छबीले, तू अपनी (मित्र) मण्डली (के) गोपालों को कहलवा दे। (फिर भी) यह डोरा नहीं छूटेगा। ८

इस प्रकार लोकाचार, लोकरीति-रिवाज का उन्होंने निर्वाह किया और (वर-वधू) कुलदेवता के पाँव लग वेगये। (फिर) गुरु (शुक्राचार्य) ने बहुत आशीर्वाद दिये और बाणासुर की रक्षा (की शुभकामना व्यक्त) की। ९

कडवुं ५३ मुं—(उपसंहार)

राग सिंधुडो

पवित्र कीधुं असुरकुळ जे, वेवाई विश्वंभर थया,
पुण्य मारां पूर्वजन्मनां, प्रभुजीए कीधी दया। १।
प्रह्लाद अर्थे नृसिंह हवा, ने हिरण्यकशिपु उद्धारियो,
बलि कारण वामन हवा, मारा भुजनो भार उतारियो। २।
हिरण्याक्ष माटे वामन हवा, एम बाणे वाणी ओचरी,
सर्वपें मुने घणी कृपा जे, अनिरुद्धे ओखा वरी। ३।
अपराध मारो क्षमा करिये, हरि तम समो हुं वढ्यो,
एवुं कहीने राय बाणासुर, कृष्णने पाये पड्यो। ४।
बेठो कीधो कर ग्रही, श्रीकृष्णे वखाण्यो बहु,
जदुकुळ दीपाव्युं अमारुं जे, तेम पुत्री थयां वहु। ५।
अन्योन्ये मान दीधुं, जादव सहु तत्पर थाय,
सासरे वळावी ओखाने ते वारे, माता दे शिक्षाय। ६।

कड़वक—५३ (उपसंहार)

(बाणासुर बोला—) "आप विश्वम्भर (भगवान कृष्ण मेरे) समधी हो गये हैं, जिससे आपने (मेरे इस) असुर-कुल को पवित्र बना दिया। मेरे पूर्वजन्मों के (किये) पुण्य (वे कारण) हैं, (जिसके फलस्वरूप) प्रभु ने (मुझपर) दया की। १ प्रह्लाद (की रक्षा) के हेतु (भगवान) नरसिंह (के रूप में अवतरित) हो गये और उन्होंने (उसके पिता असुरराज) हिरण्यकशिपु का उद्धार किया। (दैत्यराज) बलि के निमित्त (भगवान) वामन (के रूप में अवतरित) हुए, (जबकि) आपने मेरे (लिए अवतरित होकर) हाथों को काटकर उनका भार उतार डाला। २ (दैत्यराज) हिरण्याक्ष के लिए (भगवान) वराह (रूप में अवतरित) हो गये।" —इस प्रकार बाण ने बात कही। "अनिरुद्ध ने ओखा का वरण किया, जिससे (आपने) मुझपर सबसे बड़ी कृपा की। ३ हे हरि, मैं आपसे लड़ा; मेरे इस अपराध को क्षमा कीजिए।" ऐसा कहते हुए (दैत्यों के) राजा बाणासुर कृष्ण के पाँव लग गये। ४ तो श्रीकृष्ण ने उसका हाथ पकड़कर उसे बैठा लिया और उसकी बहुत प्रशंसा की। (वे बोले—) "तुम्हारी पुत्री हमारी बहू हो गयी, जिससे हमारा यदुकुल उज्ज्वल शोभा को प्राप्त कराया है"। ५ (तदनन्तर भगवान कृष्ण और बाणासुर) एक-दूसरे ने एक-दूसरे का सम्मान किया (और तत्पश्चात) समस्त यादव (द्वारकापुरी जाने के लिए) तैयार हो गये। उस समय

पुत्री, पियरने दीपावजो, जो पाम्यां मोटुं सासरुं,
जश कमाजो दीकरी, डहापण जश राखो खरुं। ७ ।
एम कहीने ओखा वळाव्यां, भेट्यां पुत्री माय,
जान वळावी वळ्यो पाछो, आनंदे बाणराय। ८ ।
कैलास गया गिरिजापति, कृष्ण पधार्या द्वारामती,
ओखा अनिरुद्ध घेर आव्यां, भेट्यां रुक्मिणी रेवती। ९ ।
उत्तम कथा भागवत तणी, सांभळतां सुखकारी,
पाप सघळां प्रलय थाये, परम पद पामे भारी। १० ।
व्याधि ने सप्त ज्वर समे, जो सांमळे स्नेह करी,
सुख संपत्ति परिवार वाधे, मनकामना पूरे हरि। ११ ।
श्री रामचंद्र प्रतापथी, पदबंध कथा हवी,
कालावाला मानी लेजो, जथारथ कहे कवि। १२ ।
वीरक्षेत्र वडोदरुं, गुजरात मध्ये गाम,
चर्तुवंशी ज्ञाति ब्राह्मण, कृष्णसुत प्रेमानंद नाम। १३ ।

ओखा को ससुराल के प्रति जाने के लिए बिदा करते हुए उसकी माता ने उसे यह सिखावन दी। ६ "री पुत्री, जबकि तू बड़ी ससुराल को प्राप्त हो गयी है, तो अपने (आचरण से) मैके (के नाम) को उज्ज्वल बना देना। री कन्या, सत्कीर्ति प्राप्त करना; समझदारी से यश को सच्चा सिद्ध कर दे"। ७ पुत्री और माता (फिर) गले लग गयीं और माता ने ऐसा कहते हुए ओखा को बिदा किया। बाणराज ने बारात को बिदा किया और वह आनन्दपूर्वक पीछे लौटा। ८ (तदनन्तर) गिरिजापति शिवजी कैलास चले गये (और) भगवान कृष्ण द्वारावती पधारे। ओखा-अनिरुद्ध घर आ गये और रुक्मिणी तथा रेवती से मिल गये। ९

(कवि की उपसंहारात्मक उक्ति)

यह भागवत पुराण की कथा उत्तम है। सुनने में वह सुखकारी है। उससे समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और (श्रोता) बड़े परमपद को प्राप्त हो जाते हैं। १० यदि प्रेमपूर्वक सुनते हैं तो व्याधियाँ तथा सप्त ज्वरों का शमन हो जाता है। सुख-सम्पत्ति तथा परिवार की संवृद्धि हो जाती है और श्रीहरि (उनकी) मनोकामनाओं को पूर्ण करते हैं। ११ श्रीरामचन्द्र के प्रताप से यह कथा पद्यबद्ध रूप में प्रस्तुत हुई है। कवि प्रेमानन्द ने यथार्थ रूप से वह कही है— उसकी इस विनती को मान लीजिए। १२ गुजरात में वीरक्षेत्र वडोदरा नामक ग्राम है। उसमें

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नाम नारायण तणुं, भांगे भवजंजाळ रे,
भट्ट प्रेमानंद कहे कथा, भजो श्री गोपाळ रे। १४।

रहनेवाले चतुर्वंशी ब्राह्मण ज्ञाति के कृष्ण (नामक गृहस्थ) का मैं प्रेमानन्द नामक पुत्र हूँ। १३

भगवान नारायण का नाम सांसारिक जंजाल को भग्न कर डालता है। भट्ट प्रेमानन्द ने यह कथा कही है। (आप सब) श्रीगोपाल का भजन कीजिए। १४

॥ प्रेमानन्द-रसामृत (ओखाहरण) समाप्त ॥

प्रेमानन्द-रसामृत

(द्वितीय कलश)

नलोपाख्यान आरम्भ

प्रेमानन्द-रसामृत

नलोपाख्यान

कडवुं १ लुं—(कथा-कथन-सन्दर्भ : युधिष्ठिर-बृहदश्व-संवाद)

राग केदारो

शंभुसुतनुं ध्यान ज धरुं, सरस्वतीने प्रणाम ज करुं,
आदरुं, रूडो नैषधनाथ (-आख्यान) रे। १।

ढाळ

नैषधनाथनी कहुं कथा, पुण्यश्लोक जे राय,
वैशंपायन वाणी वदे, अर्णिक पर्व महिमाय। २।

कड़वक—१ (कथा-कथन सन्दर्भ : युधिष्ठिर-बृहदश्व-संवाद)

मैं शिवजी के पुत्र गणेश जी का ध्यान करता हूँ; सरस्वती (देवी) को प्रणाम करता हूँ। (अनन्तर) मैं निषध देश के स्वामी नल का सुन्दर आख्यान आरम्भ करता हूँ। १ जो राजा पुण्यश्लोक अर्थात विशुद्ध कीर्ति से युक्त (माने जाते) हैं, उन निषधराज नल की कथा मैं कहने जा रहा हूँ। वैशम्पायन[1] ने (महाभारत के अन्तर्गत) आरण्यक अर्थात बन-पर्व में अपनी वाणी में (अपने शब्दों में इस कथा की) महिमा कही है। २

---

१ वैशम्पायन— महर्षि वैशम्पायन वेद-व्यास के चार वेद-प्रवर्तक शिष्यों में से प्रमुख शिष्य थे तथा कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय संहिता के प्रवर्तक थे। 'विशम्प' वंश में उत्पन्न होने के कारण वे 'वैशम्पायन' कहाते थे। वे व्यास के महाभारत परम्परा के प्रतिभाशाली शिष्य थे। उन्होंने व्यास-विरचित मूल ग्रन्थ 'जय' का श्रवण किया था और कहते हैं, उन्होंने उसके आधार पर 'भारत' की रचना की। वैशम्पायन राजा जनमेजय के पुरोहित थे। उन्होंने तक्षशिला के सर्पयज्ञ के अवसर पर जनमेजय को (महा-) भारत सुनाया था।

राज्य हारी गया पांडव, वस्या द्वैतवन मोझार,
एकलो अर्जुन गयो कैलासे, आराध्या त्रिपुरार। ३।
पशुपताकास्त्र पशुपतिए आप्युं, पछे गयो स्वर्गमांहे,
कालकेतु पुलोमा मार्यो, पंच वर्ष रह्यो तांहे। ४।

(कौरवों के साथ द्यूत खेलते-खेलते) पाण्डव राज्य हार गये; (और तत्पश्चात शर्त[1] के अनुसार) वे द्वैतवन के अन्दर बस गये। (वहाँ से आगे) अकेले अर्जुन कैलास पर्वत पर गये और उन्होंने वहाँ त्रिपुरारि शिवजी[2] की आराधना की। ३ (उससे उनपर प्रसन्न होकर) पशुपति[3] शिवजी ने उन्हें पाशुपत नामक (एक भीषण शूल जैसा) अस्त्र प्रदान किया। अनन्तर वे (वहाँ से) स्वर्ग में चले गये। (इन्द्र के हित के लिए) उन्होंने कालकेतु पुलोमा[4] को मार डाला। वे (वहाँ, स्वर्ग में) पाँच वर्ष रहे। ४

१ द्यूत खेलने से पूर्व दुर्योधन के कहने के अनुसार शकुनि ने युधिष्ठिर से यह शर्त स्वीकार करायी— द्यूत में हारनेवाला मृगचर्म धारण करके बारह वर्षों तक वन में रहे और तेरहवाँ वर्ष जनसमुदाय में रहने पर भी अज्ञात रूप से व्यतीत करे; ज्ञात होने पर दुबारा बारह वर्ष वन में रहे।

२ त्रिपुरारि— मय नामक असुर सर्वश्रेष्ठ शिल्पी के रूप में विख्यात था। वह मानो प्रति-ब्रह्मा था। तारकासुर के पुत्र ताराक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली उसके मित्र थे। देवों से उनकी रक्षा करने के हेतु उसने उनके लिए तीन नगरों का निर्माण किया, जिनमें से एक था लोहमय, दूसरा था रौप्यमय, और तीसरा था स्वर्णमय। वे तीनों असुर उनके अधिपति हो गये। ये तीनों पुर तथा उनके अधिपति असुर भी 'त्रिपुर' कहे जाते थे। उन्होंने उन्मत्ततापूर्वक अधर्माचरण करके देवों को बहुत सताया; फलस्वरूप देवासुर युद्ध आरम्भ हुआ। उसमें शिवजी ने उन तीनों पुरों को जला डाला। तब वे तीनों असुर भी नष्ट हुए। तबसे शिवजी को त्रिपुरारि, त्रिपुर-दहन आदि नामों से जाना जाता है।

३ पशुपति— पाशुपत नामक एक शैव सम्प्रदाय के दर्शन के अनुसार 'जीव' को 'पशु' कहते हैं; अतः जीवों के स्वामी शिवजी 'पशुपति' माने जाते हैं।

४ कालकेतु पुलोमा वस्तुतः महाभारत, वनपर्व अध्याय १७३ के अनुसार कालकेय और पौलोम हैं। दैत्यवंशोत्पन्न कन्या पुलोमा तथा असुरवंशीय कन्या कालका ने एक सहस्त्र वर्ष कठोर तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न कर लिया और यह वरदान पाया कि उनके पुत्र देवों, नागों और राक्षसों के लिए अवध्य हों, उनका नगर तेजःपुंज तथा आकाश में विचरण करनेवाला हो; देवों-यक्षों-राक्षसों से उसका विध्वंस न हो; वह शोक-रहित तथा धन आदि से सम्पन्न हो। ब्रह्मा के वरदान से निर्मित वह नगर हिरण्यपुर कहाने लगा। वहाँ कालकेय कालकंज और पौलोम निवास करने लगे। अर्जुन पाशुपतास्त्र प्राप्त करके देवलोक गये। वहाँ उन्होंने इन्द्र से अस्त्र-विद्या अर्जित की। गुरुदक्षिणा के रूप में अर्जुन ने इन्द्र के शत्रु निवातकवच दैत्यों का संहार करके लौटते समय हिरण्यपुर पर आक्रमण किया। उन्होंने वहाँ पाशुपतास्त्र से उस नगर को नष्ट करके कालकंज दैत्यों और पौलोम का वध किया। इस अद्भुत कार्य से अर्जुन इन्द्र के विश्वासपात्र बन गये।

युधिष्ठिरराय अति दु:ख पाम्या, ऊपन्यो अति उद्वेग,
पुनरपि पारथ नहीं आव्यो, भाईए कीधो तहां नवो नेग । ५ ।
एवे समे एक तापस आव्या, बृहदश्व एवुं नाम,
पूजा कीधी पांडवे, आप्यो वसवानो ठाम । ६ ।
चातुरमास ते तहां रह्या, कुंतीसुत करे सेवाय,
रात रातना वाराफरती, पांडव चांपे पाय । ७ ।
एक वार युधिष्ठिर बेठा, तळांसवाने चर्ण,
ते समे अर्जुन सांभर्यो, भरायुं अंतस्कर्ण । ८ ।
धर्मरायने ऋषिजी पूछे, जळे भीना पग महारा,
शे दु:खे सतवादी राजा, नेत्रे भरे जळधारा ? । ९ ।

(बन्धु अर्जुन के वियोग के कारण) राजा युधिष्ठिर बहुत अधिक दु:ख को प्राप्त हो गये। (उनके मन में) अति चिन्तायुक्त आशंका उत्पन्न हो गयी। (फिर भी) पार्थ नहीं लौटे। (उन्हें जान पड़ा कि) बन्धु ने वहाँ पर नया स्नेह-सम्बन्ध[1] बना लिया (हो) । ५ उस समय वहाँ एक तापस आ गये। उनका नाम बृहदश्व[2] था। पाण्डव युधिष्ठिर ने उनका पूजन किया और (उन्हें) रहने के लिए स्थान प्रदान किया । ६ वे (तापस) चातुर्मास में वहाँ रहे। युधिष्ठिर (उन दिनों) उनकी सेवा करते थे। पाण्डव रात रात की बारी-बारी से उनके पाँव दबाते थे । ७ एक बार युधिष्ठिर (बृहदश्व के) पाँव दबाने के लिए बैठ गये। उस समय उन्हें अर्जुन का स्मरण हुआ, तो उनका अन्त:करण गद्गद हो उठा । ८ (तब) ऋषि बृहदश्व ने धर्मराज से पूछा (कहा), 'मेरे पाँव जल से भीग रहे हैं। हे सत्यबादी राजा, आप किस दु:ख से अपने नेत्रों को (अश्रु-) जल-धारा से भर रहे हैं ?' ९ तो धर्म बोले, "हे स्वामी, सुनिए। अर्जुन (यहाँ से)

१ निवातकवचों, कालकेयों और पौलोम का संहार करके अर्जुन जब इन्द्रलोक लौटे, तब इन्द्र ने उनका प्रमपूर्वक स्वागत किया। इससे पहले भी इन्द्र ने उन्हें सुयोग्य जान कर अस्त्र-शस्त्रविद्या तथा संगीत-वाद्यवादन आदि कलाएँ सिखायी थीं। इन्द्र ने उन्हें अपने आधे सिंहासन पर तक बैठा लिया। उन्हें उर्वशी के प्रति आसक्त समझकर उसे उनकी सेवा के लिए भेज दिया। फिर भी अर्जुन ने उस काम-पीड़ित अप्सरा की सेवाओं को अस्वीकार किया।

यहाँ पर इन्द्र से अर्जुन द्वारा स्थापित स्नेह-सम्बन्ध की ओर संकेत है।

२ बृहदश्व नामक ऋषि काम्यक वन में युधिष्ठिर से मिलने आये और उनके यहाँ ठहर गये। युधिष्ठिर के दु:ख को जानकर उन्हें नल-दमयन्ती की कथा सुनायी। अन्त में बृहदश्व ने युधिष्ठिर को अक्ष-हृदय और अश्वशिर नामक दो विद्याएँ प्रदान करके उनसे विदा ली।

धर्म कहे सांभळीए स्वामी, ऊठी गयो अर्जुन,
अवळासवळा साले सव्यसाची, माटे करुं छौं रुदन। १०।
भीमसेनती पासे जो हुं, मागुं दातणपाणी,
बबडतो जाए रिसाई, लावे वृक्ष महोटुं ताणी। ११।
प्रातःसामग्री नकुल पासे, कदापि जो में मागी,
एक पहोर तो वार लगाडे, एटली करे वरणागी। १२।
सहदेवने जो काम देउं, साधु मन न आणे रोष,
पण मध्याह्ने घरमांथी नीसरे, जोतो जोतो जोष। १३।
दक्षिण दिशाए जोगणी जो, जाउं तो दुःख पामुं,
पूर्व दिशाए परवरुं तो, चंद्रनुं घर छे सामुं। १४।
एवी रीत तो त्रणे भाईनी, मुजथी नव सहेवाय,
द्रौपदीने मोकलुं तो, हरण करी को जाय। १५।

उठकर (दूर) चला गया है। सव्यसाची अर्जुन (का स्मरण) मुझे उलटा-पलटा दुःख दे रहा है। इसलिए मैं रुदन कर रहा हूँ। १० (उसके स्मरण से मेरे अन्य बन्धु भी बहुत व्याकुल हो गये हैं; जान पड़ता है, उनका मन ठिकाने नहीं है। उसके फलस्वरूप) यदि मैं भीमसेन से दातुन-पानी माँगता हूँ, तो वह झुँझलाकर बड़बड़ाता हुआ चला जाता है और बड़ा वृक्ष खींचकर लाता है। ११ यदि मैं कभी नकुल से प्रातःकाल (के नित्यकर्मों के लिए) सामग्री माँगता हूँ, तो (उसे ला देने में) वह एक पहर लगा देता है– इतना बनाव-सिंगार वह करता रहता है (बनाव-सिंगार करने में वह इतना समय मग्न रह जाता है)। १२ यदि मैं सहदेव को कोई काम(करने को बता) दूँ, तो वह भला मनुष्य मन में क्रोध तो नहीं करता; फिर भी वह ज्योतिष देखते-देखते (यथाशीघ्र चला नहीं जाता, परन्तु बहुत विलम्ब के पश्चात्) मध्याह्न के समय घर में से निकल जाता है। १३ (वह कदाचित् ज्योतिष[1] के आधार पर यह मानता है कि) यदि मैं दक्षिण दिशा में चला जाऊँ, तो वहाँ कोई योगिनी है; (अतः) मैं दुःख को प्राप्त हो जाऊँगा। यदि पूर्व दिशा में जाऊँ, तो (कुण्डली में) सामने चन्द्र का घर है (सामने वाले घर में– खाने में चन्द्र ग्रह है, जो हानिकारी सिद्ध हो सकता है)। १४ इन तीन बन्धुओं (के आचार-विचार) की ऐसी रीति मुझसे सही नहीं जा रही है। यदि (कहीं) द्रौपदी को भेजना चाहूँ, तो (आशंका होती है कि) कोई अपहरण करके (उसे) ले जाएगा। १५ जो (मुझे) चाहिए,

---

1 कहते हैं कि सहदेव ज्योतिष-शास्त्र के वेत्ता थे। उनके द्वारा लिखित 'शकुन-परीक्षा' नामक ग्रन्थ बताया जाता है।

वणमागे वेळाए आपे, जे जोईए ते आणी,
फळजळ मुख आगळ लई मेले, ते तो गांडीवपाणि । १६ ।
तेहना गुण हुं नथी वीसरतो, रह्यो छौं हृदया राखी,
सुख संतोष विना छौं सूनो, मुनि हुं पारथ पाखी । १७ ।
निःश्वास मूकी धर्म एम पूछे, कहोने बृहदश्व ऋखी,
वन वसवुं ने विजोग पडियो, हुं सरखो को दुःखी ? । १८ ।
राज्यासन धन भुवन रिध, तेह अमो सर्व हारी,
एहवुं कोने हवुं हशे स्वामी, पीडा पामे नारी । १९ ।
वळतां वाणी वदे बृहदश्वजी, शुं आणे वैराग्य ?
नळ दुःख पाम्यो अरे पांडव, नथी तेहनो सोमो भाग । २० ।
रूप राज्य ने धन बळ ते, न मळे नळ समान,
अनेक कष्ट तेहना जेवुं, को न भोगवे राजान । २१ ।
भीमककुमारी नळनी नारी, रूप शुं कहुं मुख मांडी ?
ते राणी जहां नहीं फळपाणी, नळे वनमां छांडी । २२ ।

उसे बिना माँगे, समय पर (यदि) कोई लाकर देता था, मुख के सामने फल-जल लाकर (यदि कोई) इकट्ठा करके देता था, तो वह था (अकेला) गाण्डीव धनुष को हाथ में धारण करनेवाला अर्जुन (और वह तो अब यहाँ नहीं है)। १६ मैं उसके गुणों को नहीं भुला पाता। मैं (उन्हें) हृदय में धारण करके (जीवित) रह रहा हूँ। हे मुनि, पार्थ के बिना (पार्थ की अनुपस्थिति में) और बिना सुख-सन्तोष के सूना-सूना (हो गया) हूँ'। १७ उसाँस छोड़कर (साँस लेकर फिर) धर्मराज ने ऐसा पूछा (कहा—) 'हे ऋषि बृहदश्वजी, कह दीजिए न कि मुझ जैसा कौन वन में रहा और किसे ऐसा वियोग हो गया था ? मुझ जैसा उस (वियोग) से कौन दुःखी हो गया था ? १८ राज्यासन, धन, भुवन (घर), ऐश्वर्य (हमारा जो भी था)— मैं वह सब हार गया हूँ। हे स्वामी, हमारी स्त्री पीड़ा को प्राप्त हो रही है। ऐसा किसके सम्बन्ध में हुआ होगा'? १९ फिर प्रत्युत्तर में बृहदश्व जी बोले, '(ऐसा) वैराग्य (मन में) क्या ला रहे हैं (अनुभव कर रहे हैं) ? अहो पाण्डव, नल (जिस) दुःख को प्राप्त हो गया था, उसका सौवाँ भाग भी तुम्हारा (यह दुःख) नहीं है। २० नल के समान रूप, राज्य, धन, बल किसी अन्य को प्राप्त नहीं हुआ था। फिर भी हे राजा, उसके समान, अनेक कष्टों को कोई भी नहीं भोग सका है। २१ भीमक राजा की कन्या (दमयन्ती) नल की स्त्री थी। उसके रूप को अपने मुँह से बताना आरम्भ करके मैं (पूर्ण रूप से उसे) कैसे कह सकूँगा। नल ने उस रानी को वन में परित्यक्त किया, जहाँ फल-पानी (तक) नहीं

दासी रूप धर्युं दमयंती, कूबडुं थयुं नळगात्र,
तेहनां दुःख आगळ युधिष्ठिर, ताहरुं दुःख कोण मात्र ? । २३ ।
कर जोडीने धर्म एम पूछे, कहो मुजने ऋषिराय,
घणुं दुःख पाम्यो नळराजा, शा कारण कहेवाय ? । २४ ।
कोण देशनो नरेश कहावे ? केम परण्यो दमयंती ?
ते राणी नळे केम छांडी ने, कहां मूकी भमयंती । २५ ।
उतपत्य कह्यो नळ दमयंतीनी, अथ इति कथाय,
दुखियानुं दुःख सांभळतां माहरी, भागे मननी व्यथाय । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

व्यथा भागे माहरा मननी, कहे युधिष्ठिर राजान रे,
वदे विप्र प्रेमानंद ते, नळतणुं आख्यान रे । २७ ।

था । २२ दमयन्ती ने (आगे चलकर) दासी का रूप धारण किया । नल का शरीर कूबड़ा हो गया । हे युधिष्ठिर, उनके दुःख के सामने (तुलना में) आपका दुःख किस मात्रा में है ? ' २३ (यह सुनकर) हाथ जोड़कर युधिष्ठिर ने इस प्रकार पूछा (कहा)— ' हे ऋषिराज, मुझसे कहिए नल राजा (जिस) बड़े दुःख को प्राप्त हो गये, उसके क्या (-क्या) कारण कहे जा सकते हैं । २४ वे किस देश के राजा कहाते थे ? उन्होंने दमयन्ती से किस प्रकार विवाह किया ? नल ने उस रानी को किस प्रकार (क्यों) परित्यक्त किया और उसे (अकेली) भ्रमण करने के लिए कहाँ छोड़ दिया ? २५ नल-दमयन्ती का जन्म, उनकी अथ से इति तक कथा कहिए । किसी दूसरे दुःखी (व्यक्ति) का दुःख सुनते-सुनते मेरे मन की व्यथा नष्ट हो जाएगी ' । २६

राजा युधिष्ठिर ने (बृहदश्व ऋषि से) कहा, ' मेरे मन की व्यथा भाग जाएगी (नष्ट हो जाएगी) ' । (अब) विप्र प्रेमानन्द (कवि) नल का वह आख्यान कहने जा रहे हैं । २७

कडवुं २ जुं—(ऋषि बृहदश्व द्वारा नल का परिचय देना)

राग गोडी

बृहदश्वजी मुख वाणी वदे, राय युधिष्ठिर धरता हृदे,
नैषध नामे देश विशाळ, राज्य करे वीरसेन भूपाळ। १।
तेहने सुरसेन बांधव जन, ते बेउने एकेको तन,
ते रूपे फूटडा जेवा काम, नळ पुष्कर बंन्योनां नाम। २।
पछे नळने आपी राज्यासन, पिता काको बंन्यो गया वन,
चलावे राज्य नळ महामति, पुष्करने कीधो सेनापति। ३।
जीत्या देश वधारी ख्यात, शत्रुमात्र पमाड्या शांत,
भूपति सर्वे नैषधने भजे, नळ पुष्करे कीधो दिग्विजे। ४।
प्रजा सूए उघाडे बार, न करे चोरी चोर चखार,
सत्ये यमपति कीधो साध, पुरमांहे कोने नहीं व्याध। ५।

कड़वक—२ (ऋषि बृहदश्वजी द्वारा नल का परिचय देना)

बृहदश्वजी अपने मुँह से यह बात कहने लगे। युधिष्ठिर उसे हृदय में धरते रहे, अर्थात युधिष्ठिर उसे ध्यान से सुनते रहे। (वे बोले—) "निषध नामक एक विशाल देश था। वीरसेन नामक राजा उसपर राज करता था। १ उसके शूरसेन नामक एक बन्धु था। उन दोनों के एक-एक पुत्र था। वे (पुत्र) रूप में कामदेव जैसे सलोने थे। उन दोनों के नाम नल और पुष्कर थे। २ अनन्तर नल को राजगद्दी देकर उनके पिता (बीरसेन) और चाचा (शूरसेन) दोनों बन (-वास के लिए, वानप्रस्थाश्रम स्वीकार करके चले) गये। (इधर) महामति नल राज्य चलाने लगे। उन्होंने पुष्कर को (अपना) सेनापति (नियुक्त) कर दिया। ३ उन्होंने अनेक देश जीत लिये; (उससे) उन्होंने अपनी कीर्ति बढ़ा दी। उन्होंने शत्रु मात्र को शान्ति को प्राप्त करा दिया (शत्रुओं को चुप कर दिया)। समस्त राजा नल की (मानो) भक्ति करते थे। नल-पुष्कर ने (इस प्रकार) दिग्विजय की। ४ प्रजा द्वार खुले रखकर सो जाती थी। चोर-उचक्के (उस देश में) चोरी नहीं करते थे (अर्थात उसमें कोई चोर-दग़ाबाज रहा ही नहीं था)। सत्य (-पालन) से उन्होंने यमदेव को साध लिया (अर्थात अपने वश में करके उसे ऐसा साधु पुरुष बना लिया कि वह किसी को पीड़ा न पहुँचाता था)। नगर में किसी को कोई व्याधि नहीं रही थी। ५ कोठियाँ (भण्डार) सोने से भरे हुए थे। जैसा (जितना) धन था, वैसे ही (उतने) दानी थे। नल ने मुँह-माँगा

कनके भरिया छे कोठार, जेहवां धन तेवा दातार,
जाचकनां दारिद्रच कापियां, नळे मुख माग्यां धन आपियां। ६।
भिक्षुक कहे भलुं नळनुं राज, गयुं दुःख होलाणी दाझ,
कीर्ति थई नळनी विस्तीर्ण, जेम सूरजनां प्रसरे कीर्ण। ७।
पुण्यश्लोक धराव्युं नाम, वैष्णव कीधुं बाधुं गाम,
घेर घेर हरिकीर्तन, एकादशी व्रत करे हरिजन। ८।
चारे वरण पाळे निजधर्म, ध्याये देव व्यापक परिब्रह्म,
नळे लीधो एटलो नेम, माग्युं दान आपे करी प्रेम। ९।
जो आवे मस्तक मागनार, तो आपतां न लगाडे वार,
उत्तर दक्षिण पूरव दश, वीरसेन सुतनो वाध्यो यश। १०।
त्यारे पुष्करने थई अदेखाई, मुज थकी वाध्वो पितराई,
नळने नमे प्रजा समस्त, ए आगळ हुं पाम्यो अस्त। ११।
एहवुं जाणी मन आणी वैराग्य, गयो वन घर कीधुं त्याग,
नळनो वाळ्यो ते नव वळ्यो, दारुण वनमां पोते पळ्यो। १२।

धन दिया, (इस प्रकार) उन्होंने याचकों-भिखमंगों की दरिद्रता दूर की। ६ भिखारी कहते— 'नल का राज भला है। (हमारा दरिद्रता-जन्य) दुःख चला गया, आग बुझ गयी'। जिस प्रकार सूर्य की किरणें फैलती हैं, उसी प्रकार नल की कीर्ति (चारों ओर) विस्तार को प्राप्त हो गयी। ७ उन्हें 'पुण्यश्लोक' नाम (पद, उपाधि) धारण कराया गया (लोग उन्हें 'पुण्यश्लोक' कहने लगे)। उन्होंने समस्त ग्राम को वैष्णव बना दिया। (उसमें) घर-घर हरि-कीर्तन हुआ करता था; (हरि के) भक्तजन एकादशी व्रत का आचरण किया करते थे। ८ (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—) चारों वर्ण अपने-अपने धर्म का पालन करते थे। सब सर्वव्यापक देव— परब्रह्म (विष्णु) का ध्यान करते थे। नल ने इतना ही व्रत धारण किया कि यदि किसी ने दान माँग लिया, तो उसे वह प्रेमपूर्वक दे दें। ९ यदि कोई सिर माँगनेवाला आ जाता, तो भी वे उस (माँगनेवाले) को वह देने में देर न लगाते। (इससे) उत्तर, दक्षिण, पूर्व (और पश्चिम) दिशा में वीरसेन-सुत नल की कीर्ति बढ़ गयी (फैल गयी)। १० तब पुष्कर को (उनसे) यह ईर्ष्या हो गयी कि मुझसे (यह मेरा) चचेरा भाई बढ़ गया है, अर्थात इतने बड़े वैभव और कीर्ति को प्राप्त हो गया है। समस्त प्रजा नल का नमन करती है। उसके सामने तो मैं (मानो) अस्त को प्राप्त हो गया हूँ। ११ ऐसा मानकर मन में वैराग्य धारण करके वह वन में गया; उसने घर का परित्याग किया। नल द्वारा लौटाने (का यत्न करने) पर भी वह नहीं लौटा। वह स्वयं

जईने सेव्युं पर्वतश्रृंग, तळे वहे छे निर्मळ गंग,
शल्यानुं कीधुं आसन, पांदडानुं कीधुं छत्र राजन। १३।
मानसी राज मांड्युं वन तणुं, कोकिला गान करे छे घणुं,
आ मृग ते अश्व माहरे कारणे, द्रुम प्रतिहार ऊभा बारणे। १४।
भंड हस्ती पृथ्वी परजंग, ए राज केमे न पामे भंग,
को लूंटी लेवा आवी नव चडे, उघाडे बार खातर नव पडे। १५।
एणी पेरे मांड्युं राज्यासन, अणचालते वश कीधुं मन,
ए कथा एटलेथी रही, नळराजा शुं करतो तहीं। १६।
ज्यारे पुष्कर ऊठी वनमां गयो, भाई विना भूप एकलो रह्यो,
निष्कंटक राज्य एकलो करे, धर्म आण राजानी फरे। १७।
मागां मोकले देशदेशना भूप, नळ जोवडावे कन्यानुं रूप,
शरीरकुळ मांहे कहाडे खोड, कहे न मळे को मारी जोड। १८।

भीषण वन के अन्दर चला गया। १२ जाकर उसने एक पर्वत-शिखर पर निवास किया। उस पर्वत के तले (तलहटी में) निर्मल गंगा (-सी एक नदी) बहती थी। उसने (अपने लिए) शिला का आसन बना लिया। उस राज-पुरुष ने वृक्षों के पत्तों का अपने लिए छत्र कर लिया (पत्तों को छत्र माना)। १३ उसने मन से वन (रूपी राज्य) पर राज करना आरम्भ किया। (वहाँ उस वन-राज्य में) कोकिल बहुत गान किया करते। (वह मानता—) यह मृग तो मेरे लिए (मानो) घोड़ा है; वृक्ष द्वार पर (मानो) प्रतिहारी (बनकर) खड़े हैं। १४ सूअर (मानो) मेरे लिए हाथी हैं; भूमि पलंग है। यह राज्य किसी भी द्वारा (कभी) नाश को प्राप्त नहीं कराया जा पाएगा। कोई भी लूट लेने के लिए आकर (इसपर) आक्रमण नहीं करेगा। द्वार खोले हुए हैं, तो (दीवार में) सेंध नहीं लगेगी। १५ इस प्रकार उसने (पुष्कर ने वन में) राज्य-शासन आरम्भ किया। बिना किसी यत्न के उसने अपने मन को वश में कर लिया। यह कथा इतनी रही। उधर नल राजा क्या कर रहे थे ? १६ जब से पुष्कर (घर से) उठकर (निकलकर) वन के प्रति चले गये, तब से वे राजा (नल) बिना बन्धु के, अकेले रह गये। वे अकेले निष्कण्टक राज कर रहे थे। राजा (नल) के राजधर्म अर्थात राजधर्म के अनुसार चलाये जाने की आन (सर्वत्र) फिर रही थी। १७ देश-देश के राजा (अपनी-अपनी) कन्या की (उनसे) मँगनी कराने के लिए (रिश्ता लेकर) दूत भेजते; अपनी-अपनी कन्या का रूप नल को दिखलाते। परन्तु नल (उस-उस कन्या के) शरीर में, कुल में (कोई-न-कोई) दोष निकालते (देखकर बता देते) और कहते, 'कोई भी मेरे जोड़ की (मेरे योग्य लड़की)

बत्रीस होय लक्षण संपूर्ण, तेमनुं हुं करुं पाणिग्रहण,
एम करतां वही गया दन, एवे आव्या नारद मुन। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नारद मुनि पधारिया, सुण युधिष्ठिर भूपाळ रे,
पछे वेणापाणिए केम मेळव्युं, नळनुं वेविशाळ रे। २०।

नहीं मिल रही है'। १८ जिसमें सम्पूर्ण बत्तीस लक्षण हों, मैं उसका पाणिग्रहण करूँगा'। ऐसा करते-करते (बहुत) दिन व्यतीत हो गये। (तब) उस समय (वहाँ) नारद मुनि आ गये। १९

हे युधिष्ठिर भूपाल, सुनो। (वहाँ) नारद मुनि पधारे। अनन्तर, बीणापाणि (नारद मुनि) ने नल की सगाई किस प्रकार करा दी (सुनिए)।" २०

कडवुं ३ जुं—(नारद द्वारा नल को दमयन्ती के जन्म के बारे में कहना)

राग रामग्रीनी देशी

एणी पेर बोल्या बृहदश्व वाणी जी, नळने घेर आव्या वेणापाणिजी,
वीरसेनसुते दीधुं मान जी, अर्घ्यपाद्ये पूज्या भगवानजी। १।

ढाळ

पूज्या नारद आदर आणी, हृदेमां अति प्रेम,
अन्योन्ये पूछियो, समाचार कुशळ क्षेम। २।
राज्यासन सूनुं नळनुं देखी, नारद ऋषि एम पूछे,
पटराणी दीसतां नथी ए, कहोनी कारण शुं छे ?। ३।

कड़वक— ३ (नारद द्वारा नल को दमयन्ती के जन्म के बारे में कहना)

बृहदश्वजी ने इस प्रकार यह बात कही— वीणापाणि नारद मुनि नल के घर आ गये। तो वीरसेन-सुत नल ने भगवान नारद का सम्मान किया और अर्घ्य-पाद्य से उनका पूजन किया। १ नल ने हृदय में आदर और अति प्रेम धारण करके नारद का पूजन किया। (तत्पश्चात) एक-दूसरे ने कुशल-क्षेम सम्बन्धी समाचार पूछा। २ नल का राज्यासन सूना देखकर नारद ऋषि ने (उससे) इस प्रकार पूछा, 'पटरानी नहीं दिखायी दे रही है? कहो इसका क्या कारण है। ३ बिना रानी के (राज्य-) आसन पर

आसने बेसवुं राणी विना, तेहनो मोटो दोष,
पछे प्रतिउत्तर विचारी नळ, बोलिया धरी शोष। ४ ।
नळ कहे तमो प्रजापतिना, पुत्र वेणाधारी,
जाणता हशो ब्रह्माजीए, माहरे निरमी छे को नारी ? । ५ ।
सप्त द्वीप नव खंड मांहे, कांई कन्या कोटाकोट।
ऋषि हुं वरुं एवी नव मळे, शके छे कन्यानी खोट। ६ ।
रूप तहां कुळ नहीं, कुळ तहां नहीं चातुरी चाल,
को सकळ लक्षण होय पूरण, तो हुं परणुं तत्काळ। ७ ।
नारद ऋषि तव ओचर्या, एम न कीजे भूप,
तारा सरखुं नव मळे, को श्यामानुं स्वरूप। ८ ।
पण ते कन्या अलौकिक छे, वेद जेहने वरणे,
ते इंद्रने इच्छे नहीं तो, तुंने कांहांथी परणे ? । ९ ।

बैठना ! —इसमें बड़ा दोष है '। अनन्तर प्रत्युत्तर का विचार करके नल रूखाई (अर्थात खेद को) धारण करते हुए बोले। ४ नल ने कहा, ' हे वीणाधारी, आप प्रजापति (ब्रह्माजी) के पुत्र हैं। जानते होंगे कि मेरे लिए ब्रह्माजी ने किस नारी का निर्माण किया है। ५ सातों द्वीपों[1], नवों खण्डों[2] में कई कोटि (-कोटि) कन्याएँ हैं। हे ऋषि, (फिर भी) जिसका वरण मैं कर सकूँ, ऐसी कोई (लड़की मुझे) नहीं मिल रही है। मानो (मेरे योग्य) कन्या का अभाव हो। ६ (जहाँ) रूप है, वहाँ (उत्तम) कुल नहीं; (जहाँ उत्तम) कुल हो, वहाँ चातुर्य तथा (अच्छी) आचरण रीति (चाल-चलन) नहीं है। यदि कोई (कन्या) समस्त लक्षणों से पूर्ण हो, तो मैं तत्काल परिणय करूँगा '। ७ तब नारद ऋषि बोले, ' हे राजा ऐसा न करें। आपके रूप के अनुरूप किसी नारी का रूप नहीं मिलेगा। ८ फिर भी वेद जिसका वर्णन करते हैं, ऐसी वह एक अलौकिक कन्या है। वह इन्द्र (तक) की भी कामना नहीं करती, तो आपसे कहाँ से परिणय करेगी '। ९ नल बोले, ' हे महामुनि, उस कन्या का क्या नाम है ? वह

---

१ सप्त द्वीप— पौराणिक मान्यता के अनुसार सृष्टि सात द्वीपों अर्थात भू-भागों में विभक्त मानी गयी है। ये द्वीप हैं— जम्बु द्वीप, प्लक्ष द्वीप, शाल्मलि द्वीप, कुश द्वीप, क्रौंच द्वीप, शक द्वीप और पुष्कर द्वीप।

२ नव खण्ड— पौराणिक मान्यता के अनुसार पृथ्वी निम्न-लिखित नौ खण्डों में विभक्त हैं— इलावृत, भद्राश्व, हरिवर्ष, किंपुरुष वर्ग, केतुमाल, रम्यक, भरतवर्ष, हिरण्मय और उत्तर कुरु। (अन्य मान्यता—) भरत खण्ड, पुष्कर खण्ड, हरि खण्ड, रम्य खण्ड, सुवर्ण खण्ड, इलावृत खण्ड, कौरव खण्ड, किन्नर खण्ड और केतुमाल खण्ड। इनके अतरिक्त कुछ अन्य नामावलियाँ भी उपलब्ध हैं।

नळ कहे ओ महामुनि, ते कन्यानुं कोण नाम ?
कवण रायनी दीकरी ने, कवण तेहनुं गाम ? । १० ।
नारद कहे सकळ देश मध्य, उत्तम विदर्भ देश,
तांहां राज्यासन करे छे, भीमक नाम नरेश । ११ ।
तेहने घेर एक तारुणी, वज्रावती नाम रूपनिधान,
पुण्यदान अपार कीधां, पण पेटे नहीं संतान । १२ ।
एवे समे एक दमन नामे, आवियो तापस,
आतिथ्य कीधुं तेहनुं, ने जमाड्यो खटरस । १३ ।
घणा दिवसनी गई क्षुधा, ने पामियो संतोष,
त्रिकाळ ज्ञाने जाणियो, राणीनो वंझादोष । १४ ।
पूछीने त्यां खरुं कीधुं, निश्चे नहि संतान,
करुणा आणी आपियुं, रायराणीने वरदान । १५ ।
त्रण पुत्र ने एक पुत्री, हशे रूपनां धाम,
एधाणी राखजे एटली, जे माहरे नामे नाम । १६ ।
एहवुं कहीने ऋषिजी, पामिया अंतरधान,
केटले दिवसे राणीने पछे, आवियां संतान । १७ ।

किस राजा की कन्या है ? उसका कौन ग्राम है'? १० (इसपर) नारद बोले, 'समस्त देशों में उत्तम, विदर्भ नामक एक देश है। वहाँ भीमक नामक राजा राज्य करते हैं। ११ उनके घर (उसकी पत्नी) एक तरुण स्त्री है। उसका नाम वज्रावती है। वह रूप (सौन्दर्य)की निधान थी। उसने अपार पुण्यकर्म तथा दान किये, फिर भी उसके कोई सन्तान नहीं थी। १२ उस समय, दमन नामक एक ऋषि (वहाँ) आ गये। उन्होंने उनका आतिथ्य किया और उन्हें छहों[1] रसों से युक्त भोजन कराया। १३ उससे उन ऋषि की बहुत दिनों की भूख मिट गयी और वह सन्तोष को प्राप्त हो गये। उन्होंने त्रिकाल ज्ञान से रानी का वंध्यादोष जान लिया। १४ उन्होंने पूछकर वहाँ (उससे) यह सत्य जान लिया कि उसके निश्चय ही कोई सन्तान नहीं है। तो उन्होंने दया करके राजा-रानी को यह वरदान दिया। १५ 'रूप का मानो निवास-स्थान जैसे (तुम्हारे) तीन पुत्र और एक पुत्री होगी। जो मेरा नाम है, उसपर नाम रखकर मेरी इतनी पहचान (स्मृति) रखना'। १६ ऐसा कहकर ऋषि अन्तर्धान को प्राप्त हो गये। कितने ही दिन के पश्चात रानी के सन्तान उत्पन्न हुई। १७ उनके नाम

१ छः रस— आम्ल (खट्टा), खारा, कडुवा, कसैला, मीठा, तीखा।

दमन, दंतु, दुर्दमन, दमयंती नाम ज धर्यां,
हर्ष पाम्यो भूपति, बाळक चारे ऊछर्यां । १८ ।
दमयंती जे दीकरी ते, मुखे वरणी न जाय,
अंगतणी तो उपमा, नळ कशीये न अपाय । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

उपमा न अपाय नळ में, एम बोल्या वेणाधारी रे,
नळ कहे नारद प्रत्ये तेहनुं, रूप कहो विस्तारी रे । २० ।

(दमन ऋषि के कहने के अनुसार) दमन, दन्तु, दुर्दमन, दमयन्ती रखे। राजा हर्ष को प्राप्त हो गये। चारों बालक पलते रहे। १८ जो दमयन्ती नामक लड़की थी, उसका वर्णन मुख से नहीं किया जा सकेगा। हे नल, उसके अंग की उपमा किसी से भी नहीं दी जा पाती। १९

हे नल, मेरे द्वारा उपमा नहीं दी जा सकती।" इस प्रकार वीणाधारी नारद बोले। (फिर भी) नल नारद के प्रति बोले 'उसके रूप को तो विस्तारपूर्वक कहिए'। २०

कडवुं ४ थुं—(नारद द्वारा दमयन्ती का रूप-वर्णन)

राग आशावरी

नारदनां वचन सुणी, बोल्या नैषध धणी,
भीमकतणी कुंवरी छे, कहेवी फूटडी रे? । १ ।

ढाळ

फूटडी कहेवी दमयंती, कहो तेहनु विखाण,
नारद कहे रे सांभळो, वीरसेनसुत सुजाण । २ ।
गुण, चाल ने चातुरी, अद्‌भुत सुंदर वेष,
तेहने हुं केम वर्णवुं? वर्णवी न शके शेष । ३ ।

कड़वक—४ (नारद द्वारा दमयन्ती का रूप-वर्णन)

नारद के वचन सुनकर निषध के स्वामी नलराज बोले, 'भीमक की कन्या कैसी सलोनी है? १। दमयन्ती कैसी सलोनी है? उसका वर्णन करके कहिए'। तो नारद बोले, 'हे सुजान वीरसेन-सुत, सुनिए। २ (उसके) गुण, चाल (-चलन), चातुर्य, अद्‌भुत सुन्दर वेश— इन (सब)

बुद्धि प्रमाणे मानवीनुं, करुं छुं वरणन,
ज्यम सागरमांथी चांच, जळनी भरे पक्षीजन । ४ ।
दमयंतीनो चोटलो, देखी अति सोहाग,
अभिमान मूकी लज्जा आणी, पाताळ पेठो नाग । ५ ।
भीमकसुतानुं वदन सुधाकर, देखीने शोभाय,
चंद्रमा तो क्षीणता पामी, आभमां संताय । ६ ।
सृष्टि करतां ब्रह्माजीए, भर्युं तेजनुं पात्र,
ते तेजनुं प्रजापतिए घड्युं दमयंतीनुं गात्र । ७ ।
तेमांथी कांई शेष वाध्युं, घडतां खेरो पडियो,
ब्रह्माए एकठो करीने, तेनो चंद्रमा घडियो । ८ ।
नळ कहे नारदने, ए वखाण भाव न पहोंतो,
दमयंती हमणां अवतरी, चंद्र पहेलो नहोतो ? । ९ ।
नारद कहे ब्रह्माजीए, सउ पहेली घडीने राखी,
पण पृथ्वीमां अवतारी नहि, भरथार एवा पाखी । १० ।
विरंचिए वैदर्भी नांखी, उदय हवडे पामी,
ते जो अहींया अवतरी, तो निर्म्यो हशे को स्वामी । ११ ।

का मैं कैसे वर्णन करूँ ? (सहस्रमुखधारी) शेष (भी) उसका वर्णन नहीं कर सकता । ३ (फिर भी) मैं मानवीय (अल्प) बुद्धि के अनुसार उसका वर्णन करता हूँ, जिस प्रकार पक्षी सागर के पानी को चोंच-भर लेता है । ४ दमयन्ती की चोटी (कैसी) ? उसकी अति शोभा देखकर (शेष) नाग अभिमान छोड़कर लज्जा अनुभव करके पाताल में (रहने के हेतु) पैठ गया । ५ भीमक-सुता दमयन्ती के मुख-चन्द्रमा की शोभा देखकर चाँद तो क्षीणता को प्राप्त होकर आकाश में छिप गया । ६ सृष्टि का निर्माण करते समय ब्रह्माजी ने तेज से एक पात्र भर लिया । प्रजापति (ब्रह्मा) ने उस तेज से दमयन्ती का शरीर गढ़ लिया । ७ उसमें से कुछ शेष (अंश) बचा था; (दमयन्ती की देह को गढ़ते समय) उसके कुछ कण नीचे गिर गये । उन्हें इकट्ठा करके ब्रह्माजी ने उनसे चन्द्रमा का निर्माण किया था । ८ यह सुनकर नल नारद से बोले, 'यह वर्णन (सत्य) भाव तक नहीं पहुँचता । दमयन्ती तो अभी अवतरित हुई । क्या चन्द्र पहले नहीं था' ? ९ तो नारद बोले, 'ब्रह्माजी ने उसे सबसे पहले गढ़कर रख दिया था । परन्तु ऐसे (सुयोग्य) पति के अभाव में उसे पृथ्वी पर नहीं अवतरित कर दिया (किया) । १० ब्रह्माजी ने उसे दूर रख दिया था । वह अभी उदय (प्राकट्य, जन्म) को प्राप्त हुई है । वह यदि यहाँ अवतरित

नळ कहे आगळ विस्तारो, ए भेद में सांभळियो,
चंद्र पहेली चतुरा, संदेह मननो टळियो। १२।
नारद कहे सांभळो राजा, मीन ने मधुकर,
नेत्र भ्रूकुटी देखीने, जळ कमळ कीधां घर। १३।
नासिका वेसर देखीने, कळाधर ने कीर,
तेणे अरण्य-पर्वत सेवियां, धारी शक्या नहि धीर। १४।
दमयंतीना अधर देखी, पेट वेध्युं प्रवाळी,
ए कामिनीनो कंठ सांभळी, कोकिला थई काळी। १५।
रसना वाणी सांभळी, सरस्वतीने आव्यो वैराग्य,
कुंवारी पोते रही, संसार कीधो त्याग। १६।
दंत देखी दाडम फाट्युं, कपोत संताडे मोंने,
ते नाद करतो फरे वनमां, कहे दुःख कहुं हुं कोने ? । १७।
दमयंतीना कुच देखी, हार्युं कुंजर कुळ,
ते हींडतां चालतां हाथी, माथे घाले धूळ। १८।

है, तो (ब्रह्माजी ने उसके लिए) कोई पति भी उत्पन्न किया होगा'। ११ नल बोले, 'आगे विस्तार करके कहिए। यह रहस्य तो मैंने सुना। चन्द्र से पहले यह चतुरा (निर्मित हुई) थी— (इस सम्बन्ध में) मेरे मन का सन्देह दूर हो गया'। १२ नारद बोले, 'हे राजा, सुनो, मीन (मछली) और मधुकर (भ्रमर) ने उसके नेत्रों और भौंह को देखकर (लज्जित होकर भाग जाते हुए) पानी और कमल को (अपना-अपना) घर बना लिया। १३ (दमयन्ती की) नाक और उसमें पहना हुआ बेसर देखकर मोर और तोते (लज्जित होकर) अरण्य और पर्वत में निवास करने लगे। वे धीरज धारण नहीं कर सके। १४ दमयन्ती के ओठों को देखकर प्रवाल का पेट बिंध गया। उस कामिनी का कण्ठ (-स्वर) सुनकर कोयल काली हो गयी। १५ उसकी जिह्वा का स्वर(वाणी) सुनकर सरस्वती को वैराग्य अनुभव हो आया; (इसलिए) वह स्वयं क्वांरी रह गयी और उसने घरबार (का प्रपंच) छोड़ दिया। १६ दाँत देखकर दाड़िम (अनार) फट पड़ा। कपोत (उसकी सुडौल ग्रीवा को देखकर मारे लज्जा के)मुँह को छिपाने लगा। (तब से) वह तो बोलते-चीखते वन में घूमता-फिरता रहता है और कहता है— 'मैं (अपना) दुःख किससे कहूँ ? '। १७ दमयन्ती के कुच देखकर हाथी कुल की (-गरिमा) को हार बैठा। उससे घूमते-फिरते हाथी मस्तक पर धूल डालता है। १८ (दमयन्ती के) हस्तरूपी कमल से कमल (पुष्प) हार

हस्तकमळथी कमळ हायुं, जळमां कीधुं घर,
उदर देखी दमयंतीनुं, सुकायुं सरोवर । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सरोवर सुकायुं सांभळी, नळराय मनमां रंज्या,
दमयंतीनी जंघा देखी, केळ रही काक - वंझा । २० ।

चुका और उसने पानी में घर बना लिया। दमयन्ती के उदर को देखकर सरोवर सूख गया। १९

'सरोवर सूख गया'— यह सुनकर नलराज मन में खिन्न हो उठे। (फिर नारद बोले—-) 'दमयन्ती की जाँघ को देखकर केला काकबंझा[1] हो गयी'। २०

कडवुं ५ मुं—(दमयन्ती का रूप-वर्णन सुनकर नल राजा का उसके प्रति आसक्त हो जाना)

राग सामेरी

दमयंती छे दोष - रहिता, तेना गुणनी गाउं गीता,
नारदजी वायक एम बोले, नहि उपमा तारुणीनी तोले ।
दमयंती छे दोष-रहिता, तेना गुणनी गाउं गीता । (टेक) । १ ।
जोई भीमकसुतानी कटी, सिंहनी जात वनमां घटी,
हंसने पण थई चटपटी, चाल्य गोरीनी आगळ मटी । दमयंती, । २ ।

कड़वक— ५ (दमयन्ती का रूप-वर्णन सुनकर नल राजा का उसके प्रति आसक्त हो जाना)

'दमयन्ती (सौन्दर्य आदि सम्बन्धी) दोष से रहित है। उसके गुणों की गीता का गान (गुण-महिमा का गान) मैं कर रहा हूँ।' नारदजी इस प्रकार बात कह रहे थे—'उस तरुणी की उपमा देने योग्य तुलना में कोई नहीं है। दमयन्ती (इतनी) दोषरहित है। मैं उसके गुणों की गीता का गान (महिमा का वर्णन) कर रहा हूँ। १ भीमक-सुता दमयन्ती की कटि देखकर बन में सिंह का वंश घट गया (मानो, सिंह लज्जित होकर

---

[1] वंध्या स्त्री के तीन भेद माने जाते हैं— एक ही बार प्रसूत होकर फिर से गर्भ धारण नहीं करती वह 'काकवंध्या' कहाती है। जो ऋतुधर्म को ही प्राप्त नहीं होती उसे 'अपुष्पा वंध्या' कहते हैं और जो गर्भधारण करने में असमर्थ हो, वह 'वंध्या' मानी जाती है।

रामाअंगनी रोमावलि, वनस्पति दवे मरे छे बळी,
तेनां वस्त्र रह्यां झळहळी, देखी आभमां पेसे वीजळी। दमयंती०। ३ ।
पगपानीथी हार्यो अळतो, रहे अबळाने पागे लळतो,
नेपुरनो नाद सांभळतो, रहे गंधर्वनो साथ बळतो। दमयंती०। ४ ।
वरणथी चंपक नव भजियो, माटे मधुकरे तेने तजियो,
एवुं रूप ब्रह्माए सजियुं, बीजुं कोई नथी नीपजियुं। दमयंती०। ५ ।
हवे शणगार बखाणुं सोळ, मंजन चीर हार तंबोळ,
ऊठे सुगंधना कल्लोल, अंगे अरगजाना रोळ। दमयंती०। ६ ।
शीशफूल - रत्न राखडी, शोभे भमरमां चूनी जडी,
गोफणो रह्यो अंगशुं अडी, कटि मेखलाशुं पडे वढी। दमयंती०। ७ ।

प्राण देने लगे हों)। (उसकी चाल को देखकर) हंस को भी घबराहट अनुभव हुई; (इसलिए) स्त्री के आगे उसका चलना बन्द हो गया। दमयन्ती०। २ उस अंगना के अंगों की रोमावली को देखकर वनस्पतियाँ डाह के दावानल में जलते हुए मरने लगीं। उसके वस्त्र जगमगाते हैं। उन्हें देखकर बिजली (भागकर) आकाश में प्रविष्ट हो गयी। दमयन्ती०। ३ पाँवों और हाथों (की लालिमा) के सामने अलता हार गया। तब से वह अबलाओं के पाँवों में झुक जाता है। नूपुरों की ध्वनि सुनते ही गन्धर्वों का (वाद्य-) समूह मारे ईर्ष्या के जलने लगा। दमयन्ती०। ४ उसके वर्ण के कारण भ्रमर चम्पक की सेवा नहीं करता अर्थात चम्पक के समीप नहीं आता (कवि-संकेत के अनुसार भ्रमर चम्पक पुष्प के समीप नहीं आता)। उसने उसका त्याग कर दिया। इस प्रकार ब्रह्माजी ने (दमयन्ती के) रूप को सजा लिया। (उसके समान) दूसरा कोई भी उत्पन्न नहीं हुआ। दमयन्ती०। ५ अब मैं (दमयन्ती के) मंजन, वस्त्र, हार, ताम्बूल आदि सोलह शृंगारों[१] का वर्णन करता हूँ। (उसके) अंग में अरगजा का लेपन किया हुआ रहता है। उससे सुगन्ध की (मानो) लहरें उभर रही हैं। दमयन्ती०। ६ शीर्षफूल, रत्नजटित राखडी शोभायमान है, भौंहों में चुन्नी जड़ी हुई है। गोफन अर्थात फन्नी (नामक आभूषण) देह को छूती हुई अड़ रही है, कटि करधनी से मानो झगड़ रही है। दमयन्ती०। ७ नवरंग वाला गुलूबन्द नामक आभूषण

---

१ सोलह शृंगार— स्त्रियों द्वारा निम्नांकित सोलह शृंगार सजना अपेक्षित है— मज्जन (स्नान), चीर (वस्त्र), हार, तिलक, अंजन, कुण्डल (कर्णभूषण), नासा-मौक्तिक, केशपाशरचना, कंचुकी, नूपुर, सुगन्ध (अंगराग), कंकण, चरणराग (अलक्तक), ताम्बूल और करदर्पण (दर्पण से युक्त अँगूठी जैसा आभूषण)।

गळुबंध कंठे नवरंग, मुक्ताहार छे बे संग,
शके गिरि करीने भंग, स्तन मध्ये वहे छे गंग। दमयंती०। ८।

वाये ओढणी रही छे ऊडी, खळके कंकण ने कर चूडी,
रूपे रति तो संभ्रमे बूडी, एवी कोई मळे नहि रूडी। दमयंती०। ९।

वाजे नेपुर केरो झणको, अंगूठे अणवटनो ठणको,
अंगुलीए वीछवानो रणको, बोले मधुर झांझरनो झणको। दम०।१०।

जेणे दमयंती नव जोई, तेणे उंमर एळे खोई,
जाणे काया कनकनी लोई, एवी जगमां बीजी न कोई। दमयंती०।११।

जेम नदीमां भागीरथी, तेम श्यामामां श्रेष्ठ सर्वथी,
त्रण लोकमां जोडी नथी, जाणे सागरथी काढी मथी। दमयंती०। १२।

इंद्रादिक परणवा फरे, महिला मनमां नव धरे
अश्विनीकुमार आगळ पळे, ते न आवे आंख्य ज तळे। दमयंती०।१३।

गले में (बँधा) है। दो मुक्ताहार साथ में हैं। जान पड़ता था कि कुच-गिरि को बीच में काटकर गंगा ही बह रही हो। दमयन्ती०। ८ हवा से ओढ़नी उड़ती रहती है। हाथों में कंकण और चूड़ियाँ खनकती रहती हैं। (उसको देखकर उसके) रूप के कारण रति सम्भ्रम में डूब गयी है। इस प्रकार की सुन्दरी और कोई नहीं मिल सकेगी। दमयन्ती०। ९ नूपुर की झनकार झनझनाती रहती है। अँगूठों में पहने हुए अनवटों का टनत्कार होता रहता है। अंगुलियों में पहने बिछुए रुनझुनाते रहते हैं। पैंजनियों की झनकार मधुर ध्वनि उत्पन्न करती रहती है। दमयन्ती०।१० जिसने दमयन्ती को न देखा हो, उसने अपनी आयु व्यर्थ ही गँवा दी है। उसका शरीर मानो सोने का पिण्ड हो— इस प्रकार की स्त्री जगत में कोई दूसरी नहीं है। दमयन्ती०। ११ जिस प्रकार, नदियों में भागीरथी (सर्वश्रेष्ठ) है, उसी प्रकार वह सब स्त्रियों में श्रेष्ठ है। तीन लोकों[1] में उसके जोड़ की कोई नहीं है। मानो सागर को मथकर उसे निकाल लिया हो। दमयन्ती०। १२ इन्द्र आदि विवाह करने के लिए घूम रहे हैं। फिर भी, वह महिला (दमयन्ती) उन्हें मन में धारण नहीं करती है। अश्विनीकुमार उसके आगे-आगे चलते हैं फिर भी वे उसकी आँखों के तले तक नहीं आ रहे हैं। दमयन्ती०। १३ जब से यह पुतली अवतरित हुई, तब से नारी मात्र का अभिमान छूट गया है। अपने उदय से उसने जगत

---

१ तीन लोक, त्रिभुवन— स्वर्गलोक, मृत्युलोक और पाताल।

ज्यारथी ए पूतळुं अवतर्युं,
नारीमात्रनुं मान उतरियुं,
दम्युं जगत स्वरूप. उदे करियुं,
माटे दमयंती नाम धरियुं । दमयंती० । १४ ।
जोगी थई तज्युं हशे सर्वस्व, तीर्थ नाह्यो हशे समस्त,
गाळ्यां हशे हिमाळे अस्त, ते ग्रहशे दमयंतीनो हस्त । दमयंती० ।१५।
वखाण सांभळीने सबळ, रुधिर अटवायुं पळपळ,
नारद प्रत्ये बोल्यो नळ, स्वामी परणवानी कहो कळ। दमयंती० ।१६।
नारद कहे मारुं कहेण न लागे, हुं नव जाउं तारे मागे,
मने मोहनां बाण वागे, ब्रह्मचर्य व्रत मारुं भागे। दमयंती० । १७ ।
एवुं कही पाम्या अंतरधान, मोह पाम्यो नळ राजान,
लाग्युं दमयंतीनुं ध्यान, कामज्वर थयो वह्नि समान। दमयंती० ।१८।
वैद मोटा मोटा आवे, वगडानी औषधि लावे,
ताप कोईए न शमावे, मंत्री कहे शुं थाशे हावे ? दमयंती० । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

हवे शुं थाशे कहे मंत्री, विचारे छे मन रे,
नीलां वस्त्र पहेरी अश्वे बेसी, नळराय चाल्यो वन रे। दमयंती० ।२०।

के स्वरूप का दमन कर डाला । इसलिए, उसने 'दमयन्ती' नाम धारण किया । दमयन्ती० । १४ जिसने जोगी बनकर सर्वस्व का त्याग किया हो, जो समस्त तीर्थों में नहाया हो, जिसने हिमालय पर रहते हुए अस्थियाँ गलायी हों, अर्थात कठोर तपस्या की हो, वह दमयन्ती का हाथ थाम सकता है'। दमयन्ती० । १५ (दमयन्ती का) यह बहुत (विस्तार-सहित) वर्णन सुनकर (नल का) रक्त पल-पल घुटने लगा । (फिर) नल नारद से बोले, 'हे स्वामी, (दमयन्ती से) विवाह करने की कोई युक्ति कहिए । दमयन्ती०'। १६ नारद बोले, 'मुझे यह कहना आवश्यक नहीं है कि मैं तुम्हारे मार्ग पर नहीं जाता । मुझे मोह के बाण लग जाएँ, तो मेरा ब्रह्मचर्य व्रत नष्ट होगा'। दमयन्ती० । १७ ऐसा कहकर वे अन्तर्धान को प्राप्त हो गये । (इधर) राजा नल मोह को प्राप्त हो गये । उन्हें दमयन्ती का ध्यान लग गया । उनके लिए काम-ज्वर आग के समान हो गया । दमयन्ती० । १८ बड़े-बड़े वैद्य आये, वन्य ओषधियाँ लाये; परन्तु (नल के) ताप का किसी के द्वारा भी शमन नहीं हो पाया । तो मंत्री ने कहा, 'अब क्या होगा ?' दमयन्ती० । १९

मंत्री बोला, 'अब क्या होगा ?' वह मन में सोचने लगा। (इधर) नीले वस्त्र पहनकर नलराजा घोड़े पर सवार होकर वन के प्रति चले गये। दमयन्ती०। २०

कडवुं ६ ठ्ठुं—(नल द्वारा वन में हंस को देखना और उसे पकड़ना)

राग वसंत

अनंग अनळ ते नळने प्रगट्यो, वन गयो वह्नि समावा,
हये बेठो चितामां पेठो, लाग्यो आकुळव्याकुळ थावा।अनंग० (टेक) १
नीलां वस्त्र ने नीलो वाघो, मृगयानो शणगार,
अघोर वनमां राये दीठुं, मानसरोवर सार। अनंग०। २।
सुभट साथे कोय मळे नहि, एकलो न पडे गम्य,
हय थकी हेठो ऊतरीने, वन जोवा लाग्यो रम्य। अनंग०। ३।
वृक्ष चारु चारोळीनां, चंदन चंपा अनेक,
नाना विधनां पुष्पने भारे, वळी रह्यां छे वंक। अनंग०। ४।
मोगरो मरडाई रह्यो ने मगी, अरणी ने मरेठी,
आंबली, आवळ ने अगथिया, एखरा ने अरेठी। अनंग०। ५।

कड़वक— ६ (नल द्वारा वन में हंस को देखना और उसे पकड़ लेना)

नल में कामानल उत्पन्न हुआ। तो वे उस आग का शमन करने के लिए वन में चले गये। वे घोड़े पर बैठे; वे चिन्ता में प्रविष्ट हो गये (चिन्ता में डूब गये)। वे आकुल-व्याकुल होने लगे। अनंग-अनल०। १ उन्होंने नीले वस्त्र और नीला बाना पहन लिया; शिकार के लिए (आवश्यक) साज-शृंगार कर लिया। राजा ने अति भयानक वन के अन्दर एक सुन्दर मानसरोवर (जैसा सरोवर) देखा। अनंग-अनल०। २ साथ में कोई भी अन्य वीर पुरुष मिलकर नहीं आये थे। उन्हें (नल को) अकेले चैन नहीं आ रहा था। वे घोड़े से नीचे उतरकर उस रम्य-वन को देखने लगे। अनंग-अनल०। ३ (उस वन में) चिरौंजी, चन्दन, चम्पा के अनेक वृक्ष थे। वे नाना प्रकार के फूलों के भार से झुककर वक्र हो रहे थे। अनंग०। ४ मोगरा झुका हुआ रहा था। और (वहाँ) मूंग, अरनि तथा मरेठी, इमली, आँवला और अगस्त्य, इक्षुरक और अरीठे के पेड़ थे। अनंग०। ५ कदली-स्तम्भ अति सुन्दर शोभायमान थे। ईख शक्कर जैसा था। लौंग की बेलों और सुन्दर नीबू के अतिरिक्त (अनेक

कदलीथंभ शोभे अति सुंदर, साकर सरखी शेलडी,
लवंग लता ने लींबुँ ललित वळी, विराजे वृक्ष वेलडी। अनंग०। ६।
नाळियेरी नारंगी नौतम, नीचां नम्यां बहु नेत्र,
फोफळी फालसी सुंदर दीसे, खजूर खारेकनां क्षेत्र। अनंग०। ७।
पीपळा, पीपळी, वड ने गूलर, दाडमडी ने पलाश,
अश्वथी ऊतरी नळराजाए, वन नीरख्युं चोपास। अनंग०। ८।
जळ फळ सबळ देखी नळ हरख्यो, उत्तम आंबासाख,
बाबची बिजोरी ने चिनीकबाला, झूले झूमखां द्राख। अनंग०। ९।
सुंदर कुमुदिनी सरोवर मांहे, वायु प्रहारे नमंती,
देखी अनळ ते बमणो व्याप्यो, सांभळी दमयंती। अनंग०। १०।
शीतळ वायु वह्नि सरखो, लागे रायने तन,
नग्र वृक्ष छे कदळीनां, तेने देतो आलिंगन। अनंग०। ११।
रंभन चुंबन करे केळने, थडथी मरडी पाडे,
मुखथी शब्द करे जेम कोई, मोटो मेगळ त्राडे। अनंग०। १२।
एवे समे बहु हंस त्यां दीठा, सुवर्णनां छे अंग,
ते देखी दमयंती वीसरी, टळी गयो अनंग। अनंग०। १३।

प्रकार के) वृक्ष और लताएँ विराजमान थे। अनंग०। ६ नवीनतम नारियल और नारंगी (संतरे) के पेड़ थे। बेंत बहुत नीचे झुके हुए थे। सुपारी, फालसा, खजूर, छुआरे के (वृक्षों से युक्त) क्षेत्र सुन्दर दिखायी दे रहे थे। अनंग०। ७ पाकर और पीपल, बरगद और गूलर, अनार और पलाश के वृक्ष थे। नलराज घोड़े पर से उतरकर उस वन में चारों ओर निरखने लगे। अनंग०। ८ उत्तम (किस्म के) कलमी आम, बाबची, बिजौरा (नीबू) और चीनीकबाला तथा अंगूर (के वृक्ष) झूमते-डोलते थे। (वहाँ) विपुल मात्रा में जल और फल देखकर नल आनन्दित हो गये। अनंग०। ९ सरोवर के अन्दर सुन्दर कुमुदिनी पुष्प वायु के (झोंके के) प्रहार से झुकते-झूमते थे। उन्हें देखने पर नल को कामानल दुगुना व्याप्त कर गया। उन्हें दमयन्ती याद आने लगी। अनंग-अनल०। १० राजा के शरीर को शीतल वायु आग जैसी लगने लगी (जान पड़ने लगी)। वहाँ कदली (केले) के नग्न पेड़ थे। राजा नल उनका आलिंगन करने लगे। अनंग-अनल०। ११ राजा नल उन केले के वृक्षों का आलिंगन-चुम्बन करने लगे। उन्हें उन्होंने तने में मोड़कर गिरा दिया। वे मुँह से ऐसी ध्वनि करने लगे, जिस प्रकार कोई बड़ा हाथी चिंघाड़ता हो। अनंग-अनल०। १२ ऐसे समय उन्होंने वहाँ बहुत

नहोतुं दीठुं ते में दीठुं, आव्यो दीसे अनुक्रमी,
आवी कनकनी जात पंखीनी, ब्रह्माए क्यारे निरमी ? अनंग० । १४ ।
एक हाथ पडे एमांथी, पाळुं पासे राखुं,
रमाडुं जमाडुं एने, दुःख दहाडा खोई नाखुं । अनंग० । १५ ।
शरप्रहार करुं जो एने, तो ए थाय निधन,
ग्रहण करवुं जोईए जीवतुं, भूप विमासे मन । अनंग० । १६ ।
एवे सकळ पंखीनो राजा, दीठो पृथ्वीमांय,
वृक्षतणे थड निद्रा करीने, ऊभो छे एक पाय । अनंग० । १७ ।
तेने देखी नळ मनमां हरख्यो, भेद करी परवरियो,
अंबर ओढी अंग संकोडी, श्वास रुंधन करियो । अनंग० । १८ ।
द्रुमथड पूठे नळ भड आव्यो, बेसी आघो चाल्यो,
लांबो करी लघुलाघवीमां, पंखीनो पग झाल्यो । अनंग० । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

झाल्यो पंखी जागी उठ्यो, नळने कीधा चंचना पहार रे,
पछे पोतानी वाणीए करी, कखा लाग्यो पोकार रे । २० ।

हंस देखे । उनका अंग सुवर्ण का था । उन्हें देखकर उन्हें दमयन्ती विस्मृत हो गयी; काम (-ज्वर) दूर हो गया । अनंग-अनल० । १३ (नल सोचने लगे—) जो कभी देखा नहीं था, वही मैंने (आज) देखा। एक के पीछे एक क्रम से (हंस) आ रहे हैं । ब्रह्माजी ने स्वर्ण पक्षी की इस जाति का कब निर्माण किया ? अनंग-अनल० । १४ इनमें से एक मेरे हाथ पड़ जाए, तो मैं उसका पालन करूँगा, उसे अपने पास रखूंगा । उसे खेलाऊँगा, खिलाऊँगा और अपने दुःख के दिन खो दूंगा (बिता दूंगा) । अनंग-अनल० । १५ यदि मैं इस पर बाण से आघात करूँ, तो वह मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा । इसे तो जीवित ही पकड़ना चाहिए । —राजा (इस सम्बन्ध में) सोच-विचार करने लगे । अनंग-अनल० । १६ उस समय उन समस्त पक्षिओं का राजा पृथ्वी पर दिखायी दिया । वह एक वृक्ष के मूल के समीप सोते हुए एक पाँव पर खड़ा था । अनंग-अनल० ।१७ उसे देखकर नल मन में आनन्दित हो गये और रहस्यपूर्वक अर्थात छिपकर (आगे) चले । वस्त्र खींच लेकर, अंग को सिकोड़ते हुए उन्होंने साँस को भी रोक लिया । अनंग-अनल० । १८ पेड़ के तने के पीछे से वे वीर (नल) आगे आ गये । वे बैठते-बैठते आगे चले जा रहे थे । बड़ी लाघवना (कौशल) से उन्होंने हाथ लम्बायमान किया और उस पक्षी का पाँव पकड़ लिया । अनंग-अनल० । १९

उन्होंने (जब) उस पक्षी को पकड़ लिया, तो वह जग उठा और चोंच से नल (के हाथ) पर आघात करने लगा। फिर वह अपनी भाषा में चीखने-चिल्लाने लगा। २०

कडवुं ७ मुं—(हंस का विलाप)

राग मारु

हंसे मांड्यो रे विलाप, पापी माणसां रे,
शुं प्रकट्युं मारुं पाप ? पापी०।
ओ काळा माथाना धणी, पापी०,
जेने निर्दयता होय घणी। पापी०। १।

ए तो जीवने मारे ततखेव, पापी०,
हवे हुं मूओ अवश्यमेव, पापी०।
टूंपी नाखशे माहरी पंखाय, पापी०,
मुने शेकशे अग्नि महांय, पापी०। २।

कोण मुकावे करी पक्ष ? पापी०,
माहरे मरवुं ने एने भक्ष, पापी०।
आ मुख सरखुं रतन, पापी०,
ते एळे थाशे निधन, पापी०। ३।

कड़वक— ७ (हंस का विलाप)

हंस ने विलाप करना आरम्भ किया। (वह बोला—) 'अहो पापी मनुष्यो ! मेरा कौन-सा पाप (इस दण्ड के रूप में) प्रकट हुआ ? पापी०। हे पापी मनुष्यो, जिनकी निर्दयता इतनी बड़ी है, ऐसे हे काले मस्तकों के स्वामियो (जिनके मस्तक पर काले बाल हैं, जो कलंक की कालिमा को धारण किये हैं) ! हे पापी०। १ अहो पापियो ! ये तो प्राणियों को तत्क्षण मार डालते हैं। हे पापियो ! मैं तो अवश्यमेव मरा (ही) हूँ। हे पापियो ! यह तो मेरे पंखों को उखाड़ डालेगा। अहो पापियो ! यह मुझे आग में भून डालेगा। २ हे पापियो, मेरा पक्ष लेकर (मेरी सहायता करते हुए) मुझे कौन छुड़ाएगा ? हे पापियो, मेरे लिए तो (अब) मौत है और इनके लिए भक्ष्य है। हे पापियो ! यह मुख रत्न सदृश है। हे पापियो ! (अब) इसका व्यर्थ ही निधन (नाश) हो जाएगा। ३

टळवळी मरशे मारी नार, पापी०,
ते जीवशे केहने आधार ? पापी० ।
ग्रह्यो नारीए दीठो नाथ, पापी०,
धायो सहस्र स्त्रीनो साथ, पापी० । ४ ।
नाथ उपर भमे स्त्री-वृंद, पापी०,
घणुं करवा लाग्यां आक्रंद, पापी० ।
हंसीए दीधो शाप, पापी०,
तारी स्त्री एम करजो विलाप, पापी० । ५ ।
हंस नारीने कहे वचन, हंसी सांभळो रे,
तमे जाओ सर्व भुवन, आंहींथी पाछां वळो रे । ६ ।
जे कांई लख्युं हशे ब्रह्माय, हंसी०,
ते अक्षर नव धोवाय, आंहांथी० ।
केम छूटीए कर्मना बंध, हंसी०,
आपणे आटलो हशे संबंध, आंहांथी० । ७ ।
जो अणघटतुं कीधुं अमे, हंसी०,
मने वारी राख्यो नहि तमे, आंहांथी० ।
आपणे वसवुं वृक्ष ने व्योम, हंसी०,
आज में निद्रा कीधी भोम, आंहांथी० । ८ ।

हे पापियो ! मेरी स्त्रियाँ (अब) तड़प (-तड़प) कर मर जाएँगी। हे पापियो ! वे किसके आधार से जिएँगी ? ' जब नारियों ने अपने स्वामी को पकड़े हुए देखा, तो सहस्र स्त्रियों का बृन्द (झुण्ड) दौड़ा। ४ उन स्त्रियों का वृन्द अपने पति के ऊपर मँड़राने लगा। वे बहुत आक्रन्दन करने लगीं। उन हंसियों ने (राजा नल को) यह अभिशाप दिया— 'हे पापी, तेरी स्त्री भी इसी प्रकार विलाप करे'। ५ (यह सुनकर) हंस ने नारियों से यह बात कही, 'री हंसियो, सुनो। तुम सब घर जाओ। यहाँ से पीछे लौट जाओ। ६ हंसियो, ब्रह्मा ने जो कुछ (भाग्य में) लिखा होगा, वह अक्षर (अर्थात क्षय-रहित, अटल) है, वह धोया (मिटाया) नहीं जा सकता। (अतः) यहाँ से तुम०। हंसियो, कर्म के बन्धन कैसे छूटें ? अपना तो इतना ही सम्बन्ध (रहा) होगा। (अतः) यहाँ से तुम०। ७ हंसियो, हमने (मैंने) यदि अनुचित किया (भूमि पर सो गया), तो तुमने मुझे रोककर नहीं रखा। अतः यहाँ से तुम०। हंसियो, हमें तो वृक्ष और आकाश में निवास करना होता है, (फिर भी) मैंने आज भूमि पर नींद ली। (अतः) यहाँ से तुम०। ८ हंसियो, जो (अपने

जे थाये थानक भ्रष्ट, हंसी०,
ते पामे मारी पेर कष्ट, आंहांथी० ।
सर्वने देउं छौं शिखामण, हंसी०,
तमो धरणी मा मूकशो चर्ण, आंहांथी० । ९ ।
एम कहेतो स्त्रीने भरथार, हंसी०,
देखी नळे कीधो विचार, आंहांथी० ।
पंखी सर्व पाम्यां छे रोष, हंसी०,
ते दे मुजने दोष, आंहाथी० ।
तमो हंस धरो विश्वास, हंसी०,
हुं नव करवानो नाश, आंहांथी० । १० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नव करवानो नाश एवी, वाणी नळे कही रे,
वचन सुणी नळरायनां, हंसने वाचा थई रे । ११ ।

उचित) स्थान से भ्रष्ट हो जाते हैं, वे मेरी तरह कष्ट को प्राप्त हो जाते हैं । (अतः) यहाँ से तुम० । हंसियो, मैं सबको सिखावन दे रहा हूँ, तुम धरती पर चरण मत रखना । (अतः) यहाँ से तुम० ' । ९ इस प्रकार पति को स्त्रियों से कहते देखकर नल ने विचार किया (यह मान लिया)— समस्त पक्षी क्रोध को प्राप्त हो गये हैं । वे मुझे दोष दे रहे हैं । (वे बोले—) ' हे हंस, तुम विश्वास करो, मैं (तुम्हारा) नाश नहीं करनेवाला हूँ ' । १०

" मैं नाश नहीं करनेवाला हूँ " —नल ने इस प्रकार बात कही । नलराज की ये बातें सुनकर हंस को यह वाणी स्फुरित हो गयी (हंस बोलने लगा) । ११

कडवुं ८ मुं—(हंस द्वारा नल से प्रार्थना करना और उनके हाथों से मुक्त हो जाना)

राग मारु

मनुष्यनी पेरे पंखी बोल्यो, मुने मूकी जुओ एक वार,
प्राणदान तुं आपीश तो, कंई करीश उपकार । १ ।

कड़वक— ८ (हंस द्वारा नल से प्रार्थना करना और उनके हाथों से मुक्त हो जाना)

मनुष्य की भाँति, अर्थात मनुष्य की वाणी में वह पक्षी बोला, ' एक बार मुझे छोड़ देकर तो देखो । (यदि) तुम मुझे प्राणदान दे दोगे, तो मैं

मूक मुजने सर्वथा, आ रूवे छे सहस्र सुंदरी,
एहने आसना - वासना करीने, हुं आवीश तुज कने फरी । २ ।
वचन सुणी वीर विस्मे पाम्यो, अल्या हवे नहि चूकुं,
रूप ने वाणी बे गुण तुजमां, मरतां लगे नव मूकुं । ३ ।
हंस कहे विश्वास आणो, अमो ब्रह्मानां वाहन,
आकाश अवनी एक थाये तो, जूठुं न बोलुं वचन । ४ ।
नळ कहे हुं वीरसेन-सुत छौं, नैषध महारुं नाम,
देशपति ने क्षत्री केवळ, नळराय महारुं नाम । ५ ।
हुंथी विघ्न थाये नहीं, प्राणनी पेरे पाळुं,
अमो राजवंशीने रूडुं लागे, तारुं बोलवुं रढियाळुं । ६ ।
खटपट टाळो मरणनी, ने रखे आणो शोक,
एम जाणी रहो मुज पासे, जावानी आशा फोक । ७ ।
पंखी कहे रे पुण्यश्लोक, मारी माता रोई रोई मरशे,
एकनो एक छौं तेहने, माता केहने जोई ठरशे ? । ८ ।

तुम्हारा कुछ उपकार कर दूँगा । १ मुझे बिलकुल अर्थात पूर्णतः छोड़ दो। ये एक सहस्र सुन्दरियाँ (स्त्रियाँ) रो रही हैं। उनको (सान्त्वना देते हुए) आश्वस्त करके मैं फिर से तुम्हारे पास आ जाऊँगा'। २ यह बात सुनकर वे वीर (पुरुष) विस्मय को प्राप्त हो गये। (वे बोले—) 'अरे, मैं अब नहीं चूकूँगा (कोई भूल नहीं करूँगा)। रूप (सुन्दरता) और (मनुष्य की-सी) वाणी— ये दो गुण तुममें हैं। मैं मरने तक तुम्हें नहीं छोड़ूँगा'। ३ हंस बोला, 'विश्वास करो। हम ब्रह्मा के वाहन हैं। आकाश और धरती एक हो जाएँ, तो भी मैं झूठी बात नहीं बोलूँगा'। ४ (यह सुनकर) नल बोले, 'मैं (राजा) वीरसेन का पुत्र हूँ; निषध देश मेरा ग्राम (निवास-स्थान) है। मैं केवल देशपति अर्थात राजा और क्षत्रिय हूँ। मेरा नाम नलराज है। ५ मुझसे (तुम्हें) कोई विघ्न (कष्ट) नहीं होगा; मैं प्राणों की तरह (तुम्हारा) पालन करूँगा। हम राजवंशीय को तुम्हारा ऐसा मनोहारी बोलना अच्छा लग रहा है। ६ मौत की चिन्ता छोड़ दो और शोक न करो। ऐसा जानकर मेरे पास रहो (यहाँ से) चले जाने की आशा (करना) व्यर्थ है'। ७ (इस पर) पक्षी बोला, 'हे पुण्यश्लोक (राजा), मेरी माता रो-रोकर मर जाएगी। मैं उसका एक ही एक (इकलौता) पुत्र हूँ। मेरी माता किसे देखकर ठहरेगी (जीवित रहेगी)? ८ (मेरी) एक सहस्र स्त्रियाँ रो रही हैं; घर में तीन पटरानियाँ हैं। मेरे बन्धन (में पड़ने) को जान कर सब कोई तत्क्षण

एक सहस्त्र रुए छे नारी, घेर त्रण छे पटराणी,
महारुं बंधन जाणी सर्व को, तत्क्षण तजशे प्राणी । ९ ।
वहाली स्त्रीए पुत्र, प्रसव्यो, में तेहनु मुख नथी जोयुं,
अरे नळराजा हुं रंकनुं ते, सुतनुं सुख कां खोयुं । १० ।
आपण बंन्यो मित्र थया, तेहनो सूरज देवता साखी,
रौरव नरके हुं पडुं जो, न पाळुं वाचा भाखी । ११ ।
गुरुद्रोही स्वामीद्रोही, ए पातिक लागे मुजने,
जो नारीने मळी आवी, शीश न नमावुं तुजने । १२ ।
त्राडे त्राडें करी नळ बोल्यो, मूकुं छुं निरधार,
तुं जाणे परमेश्वर जाणे, समतणो विचार । १३ ।
प्रतिज्ञा माटे मूकुं छुं, मळवाने तारी नार,
नहि आवे तो शुं कटक चढावुं, के तुंने कहाडुं न्यात बहार । १४ ।
एहवुं कहीने पंखी मूक्यो, हंस ऊड्यो आकाश,
रुदन मा करशो एम कहेतो, आव्यो प्रेमदा पास । १५ ।
समाचार कह्यो श्यामाने, समजावी सुंदरी,
वळावी नारीने पोते, आव्यो नळ कने फरी । १६ ।

प्राणों को त्यज देंगी । ९ (मेरी) एक प्यारी स्त्री ने (अभी-अभी) पुत्र को जन्म दिया है । मैंने (अभी तक) उसका मुख (भी) नहीं देखा है । अहो नलराज, मुझ रंक के पुत्र सम्बन्धी उस सुख को तुमने क्यों नष्ट किया । १० (अब) हम दोनों मित्र हो गये हैं; उसके लिए सूर्य-देवता साक्षी है । यदि मैं अपनी कही बात का पालन न करूँ, तो मैं रौरव नरक में पड़ जाऊँगा । ११ यदि मैं अपनी स्त्रियों से मिलकर न आकर, तुम्हारे सामने सिर न झुकाऊँ, तो गुरुद्रोही, स्वामीद्रोही का (-सा) वह पातक मुझे लग जाए '। १२ तब चीख-चीखकर नल बोले, 'मैं (तुमको) निश्चय छोड़ देता हूँ । यह शपथ का विचार है— तुम जानो, परमेश्वर जाने । १३ (तुम्हारी) प्रतिज्ञा के हेतु मैं तुम्हें तुम्हारी अपनी स्त्रियों से मिलाने के लिए छोड़ देता हूँ । (यदि) तुम (लौटकर) न आओगे, तो क्या मैं तुम पर सेना को चढ़ा दूँ अथवा तुम्हें जाति के बाहर निकलवा दूँ ? ' १४ ऐसा कहकर उन्होंने उस पक्षी को छोड़ दिया, तो वह हंस आकाश में उड़ गया । 'रुदन न करो ' ऐसा कहता हुआ, वह (अपनी) स्त्रियों के समीप आ गया । १५ उसने उन स्त्रियों से (समस्त) समाचार कह दिया । उन सुन्दरियों को समझाया-बुझाया । उन स्त्रियों को लौटा देकर वह स्वयं फिर नल के प्रति आ गया । १६ किसी अन्ध को फिर से नेत्र प्राप्त हों, तो

जेम को अंध आनंद पामे, फरी आवे लोचन,
तेम रायनुं हंसने देखी, हरख्युं अतिशे मन । १७ ।
भूप कहे आ काळने विषे, पंखी बहु सतवंत,
प्रतिज्ञा पाळी पोतानी तुंने, वहाला हशे भगवंत । १८ ।
हंस कहे हो भूपति, सांभळ महारा मित्र,
बोल्युं वायक पाळीए नहि, तो, काग ने अमो शो अंत्र । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अंतर शो अमो काग करतां, मित्र जो अमारी पेर रे,
हंस साथे अश्व बेसी, नळराय चाल्यो घेर रे । २० ।

वह जिस प्रकार आनन्द को प्राप्त हो जाए, उसी प्रकार हंस को (लौटे) देखकर राजा का मन अत्यधिक आनन्दित हुआ । १७ राजा बोले, 'इस काल में पक्षी (भी) बहुत सत्यवादी हैं । तुमने अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया है । अतः तुम भगवान के प्रिय हो जाओगे' । १८ तो हंस बोला, 'अहो भूपति, मेरे मित्र, सुनो । कही बात का निर्वाह न करें, तो कौओं और हममें क्या अन्तर होगा ? १९

कौए की तुलना में उस से हम में क्या अन्तर है ? हे मित्र, हमारा (व्यवहार-आचरण का) ढंग तो देखिए ।' (तत्पश्चात्) हंस-सहित घोड़े पर बैठकर नलराज घर की ओर चले । २०

कडवुं ९ मुं—(हंस और नल की घनिष्ठ मित्रता; नल द्वारा हंस को दमयन्ती सम्बन्धी बात बनाना)

राग देशाख

नळराजा मंदिर आवियो, सुभट हंस साथे लावियो,
सैन्य सघळुं सामुं जाय, हंसने देखी विस्मे थाय । १ ।

कड़वक—९ (हंस और नल की घनिष्ट मित्रता; नल द्वारा हंस को दमयन्ती सम्बन्धी बात बताना)

वीर पुरुष (योद्धा) नलराज (वन से लौटकर) अपने प्रासाद आ गये; वे साथ में हंस को ले आये । (उनकी) समस्त सेना उनके सम्मुख गयी, तो हंस को देखकर उसे विस्मय हो गया । १ 'यह वस्तु,

आ वस्त कहांथी पाम्या राजान, एणी पेरे पूछे परधान,
नळ कहे सरोवर मान, तहांथी मुने आप्यो भगवान। २।
ए महारे थयो छे वीर, एम कही आव्यो मंदिर,
कनकनुं कीधुं पिंजर, हंसने रहेवानुं घर। ३।
एकठा बेसी बन्ने जमे, द्यूतक्रीडा ते रसिया रमे,
अन्योन्य काढी ले तंबोल, मुखे वाणी करता कल्लोल। ४।
हंसा विना न चाले घडी, प्रेमरेणे प्रीत जे जडी,
अशोकवाटिकामां एक वार, बन्ने बेठा गुणभंडार। ५।
हंसे वात व्रेहनी करी, त्यारे नळने दमयंती सांभरी,
दीठो जाम्यो अकस्मात, नेत्रे कीधुं आंसुपात। ६।
हंस पूछे मारा वीर, ताहरे नयने कां वहे छे नीर ?
नळ कहे शुं पूछे मुने एटलुं, सूझ नथी पडे तुंने ?। ७।
परण्या कुंवारा न जुओ अमो, घरमां भाभी दीठी हशे तमो ?
हंस बोले ने कर घसे, में जाण्युं भाभी पियर हशे। ८।

हे राजा, आपने कहाँ से प्राप्त की ? ' —इस प्रकार मंत्री ने पूछा। (इस पर) नल ने (प्रत्युत्तर में) कहा, 'मान (मानस नामक एक) सरोवर है; भगवान ने मुझे इसको वहाँ से दिया। २ यह मेरा (अब) बन्धु (-सा) हो गया है।' —ऐसा कहकर वे अपने प्रासाद (में) आ गये। हंस के लिए उन्होंने एक सोने का एक पिंजड़ा बना दिया। ३ (तब से) वे दोनों इकट्ठा बैठकर खाना खाते; वे (दोनों) रसिक द्यूत-क्रीड़ा करते। वे एक-दूसरे (के मुँह में) से ताम्बूल (बीड़ा) निकाल लेते; मुँह से (मुँह लगाकर) बातें करते हुए हर्ष-विभोर हो जाते। ४ बिना हंस के एक घड़ी तक उनकी न चलती —इसलिए कि उनकी प्रीति प्रेमस्वरूप झलाई से जुड़ी हुई थी। वे दोनों गुण-भण्डार (-से मित्र) एक बार अशोक-वाटिका में बैठे। ५ (उस समय) हंस ने विरह की बात (चर्चा) की; तब नल को दमयन्ती का स्मरण हो गया। देखा कि वह अप्रत्याशित घटना मन में जम गयी है। (फिर) वे आँखों से आँसू बहाने लगे। ६ (यह देखकर) हंस ने पूछा, 'मेरे भाई, तुम्हारे नयनों से (अश्रु-) जल क्यों बह रहा है ?' तो नल बोले, 'तुम मुझसे क्या पूछ रहे हो ? तुमको इतना (तक) नहीं सुझायी पड़ता ? ७ हमें तुम विवाहित अथवा क्वाँरे नहीं देख रहे हो ? घर में तुमने भाभी को देखा होगा'। (यह सुनकर) हंस हाथ मलने लगा और बोला— 'मैंने समझा पीहर गयी होगी। ८ मैंने तुम्हें क्वाँरा पुरुष नहीं समझा। क्या पृथ्वी

तमो कुंवारा न जाण्या माट, शुं पृथ्वीमां कन्यानो दाट,
पोतानी पांखे लोह्युं जळ, खगे रोतो राख्यो नळ। ९।
मरकलडुं करी महीपति, मित्र साथे बोल्यो विनति,
जे दहाडे में तमने ग्रह्या, ते बोल शुं वीसरी गया ? । १०।
तें कह्युं नळ मूक एक वार, कांई हुं करीश उपकार,
भाई ते बोल्युं कहीए पाळशो, ए मोटुं दुःख क्यारे टाळशो ? । ११।
वळतो हंस कहे महाराज, हुं सरखुं कोई सोंपो काज,
महा कठण जे कारज हशे, ते हुं सेवकथी सर्वे थशे। १२।
नळ कहे तमो करो सर्वथी, पण मारी जीभ ऊपडती नथी,
कपरुं काम केम देवाय ? कदापि थाय के नव थाय ? । १३।
न थाय तो तमो पामो खेद, लाजे घेर नावो वायक वेद,
हंस कहे अमथो नव वळुं, हुं रिसावानुं नोहुं पूतळुं। १४।
चौद लोकमां गयानी गत्य, तहारुं कारज थाशे सत्य,
नळ कहे हो पंखीजन, शरीर सुनानुं चंच रतन। १५।

में कन्याओं का नाश हो गया है (जो तुम अब तक इस प्रकार क्वाँरे रह गये हो) ?' (फिर) अपने पंखों से (उनका अश्रु-) जल उस पक्षी ने पोंछ लिया और नल को रोने से दूर (कर) रखा (उनको चुप कर दिया)। ९ तो राजा मुस्करा उठे। वे अपने मित्र से विनती करते हुए बोले, 'जिस दिन मैंने तुम्हें पकड़ा था, क्या उस दिन की वह बात तुम भूल गये ? १० तुमने कहा था— हे नल, मुझे एक बार छोड़ दो, मैं (तुम्हारा) कुछ उपकार करूँगा। भाई कहो, (अपने) उस कहे हुए का पालन करोगे ? यह मेरा दुःख कब टाल दोगे ?' ११ प्रत्युत्तर में हंस बोला, 'महाराज, मेरे योग्य कुछ काम (मुझे) सौंप दो। जो काम अति कठिन होगा, वह (भी) सब मुझ (जैसे) सेवक से (पूरा) हो जाएगा'। १२ नल बोले, 'तुम सब (प्रकार) से करोगे, फिर भी मेरी जिह्वा खुलती नहीं है (मैं नहीं बोल सकता)। कठिन काम (तुम्हें करने के लिए) कैसे दिया जाए ? कदाचित (तुमसे) वह (पूरा) होगा, अथवा नहीं (भी) होगा। १३ (यदि) वह (पूरा) न हो जाए, तो तुम खेद को प्राप्त हो जाओगे। लज्जा से तुम घर लौट नहीं आओगे— यह बात समझना'। हंस बोला, 'मैं व्यर्थ ही नहीं लौटूँगा। मैं बात-बात पर रूठनेवाला पुतला तो नहीं हूँ। १४ चौदह लोकों[1] में गये हुए की (जाने की सामर्थ्य रखनेवाले की) यह गति

---

[1] चौदह लोक (भुवन)— भूः, भुवर्, स्वर्, महर्, जन, तप, सत्य, अतल, वितल, सुतल, महातल, तलातल, रसातल और पाताल।

एहवी तमारी दीसे देह, कहांथी वर पाम्या भाई एह,
हंस भणे सांभळ हो नळ, सरोवरमां छे सोनानां कमळ। १६।

नित्य भोजन करवुं तेह, जेवुं जमवुं तेवी देह,
पाळ पगतीए जड्यां रतन, चंच घसुं अमो पंखीजन। १७।

तेहनी वळगे छे रेखाय, माटे रत्नजडित चंचाय,
हवे मा पुछशो आडी वात, काम शुं छे कहोनी भ्रात। १८।

नळ कहे एक विदर्भ देश, कुंदनपुर भीमक नरेश,
तेहने दमयंती दीकरी, कारणरूपे ते अवतरी। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कारणरूपे ते अवतरी, वणदीठे मोह थयो अमने,
ते नारीशुं वेहवा मेळवो, एहवुं मागुं छौं तम कने। २०।

है। तुम्हारा कार्य सत्य (सिद्ध) हो जाएगा'। तो नल बोले, 'हे खगजन, तुम्हारा शरीर सोने का है और चोंच रत्न (की) है। १५ ऐसी तुम्हारी देह (अद्‌भुत) दिखायी देती है। हे भाई, तुमने यह वर कहाँ से प्राप्त किया?' तो हंस बोला, 'हे नल, सुन लो। सरोवर में सोने के कमल हैं। १६ मैं नित्य उनका भोजन करता हूँ। जैसा खाता हूँ, वैसी (मेरी) देह (हो गयी) है। (उस सरोवर के) कगार की सीढ़ियों में रत्न जड़े हुए हैं। हम पक्षी लोग (अपनी-अपनी) चोंच (उन पर) घिसते हैं। १७ उन (रत्नों) की रेखाएँ (मेरी चोंच पर) अंकित हो गयी हैं। इसलिए (मेरी) चोंच रत्न-जटित (दिखायी देती) है। अब आड़ी-टेढ़ी (इधर-उधर की) बातें मत पूछो। हे भाई, कहो न, क्या काम है?' १८ (तो इसपर) नल बोले, 'विदर्भ नामक एक देश है। उस देश की राजनगरी कुन्दनपुर में भीमक नामक राजा हैं। उनके दमयन्ती नामक एक कन्या है; वह (मेरे) कारण-स्वरूप (मेरे लिए) अवतरित है। १९

वह (मेरे) कारण रूप से (मेरे लिए) अवतरित है। उसे बिना देखे ही हमें उसके प्रति मोह हो गया है। उस नारी से विहाह द्वारा मुझे मिला दो। —मैं तुमसे इतना माँग रहा हूँ'। २०

कडवुं १० मुं—(हंस का नल को आश्वस्त करना और दमयन्ती के पास जाना)

राग रामग्री

हसीने बोल्यो विहंगम वाणी जी,
भ्रात शुं माग्युं लज्जा आणी जी । १ ।

ढाळ

मागी मागीने शुं रे माग्युं, एक दमयंती नारी,
देवकन्याने आणी आपुं, तो कवण भीमकुमारी । २ ।
विद्याधरी ने किन्नरी, गांध्रवी रूपनिधान,
ते नारीना रूप आगळ, दमयंती मूके मान । ३ ।
कोटी कन्या परणावुं, पद्मिनी गौरगात्र,
तेह्नी कांति आगळ दमयंती, ते दीसे दासीमात्र । ४ ।
अतळ वितळ सुतळ तळातळ, रसातळ पाताळ,
त्यां पेसी नागकन्या आणी आपुं, कोण भीमकनी बाळ ? । ५ ।

कड़वक— १० (हंस का नल को आश्वस्त करना और दमयन्ती के पास जाना)

वह पक्षी (हंस) हँसकर यह बात बोला, 'हे भाई, लज्जा अनुभव करते हुए तुमने (माँगा तो) क्या माँगा ? १ माँगते-माँगते, अहो, तुमने क्या माँगा ? दमयन्ती नामक कोई एक नारी माँगी ? मैं तो देवकन्या लाकर (तुम्हें) दे सकूँगा, तो फिर भीमक (राजा) की कन्या (की) कौन (बात) है ? २ विद्याधरियाँ, किन्नरियाँ और गन्धर्वियाँ रूपनिधि होती हैं। उन नारियों के रूप के सामने दमयन्ती तो (अपने रूप सम्बन्धी) घमण्ड को छोड़ देगी । ३ मैं तो ऐसी कोटि (-कोटि) कन्याओं से (तुम्हारा) विवाह करा दे सकता हूँ। पद्मिनी जाति[1] की स्त्रियाँ गौर शरीरधारी होती हैं। उनकी कान्ति के सामने दमयन्ती तो दासी मात्र (-सी) दिखायी देती होगी । ४ अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, पाताल में से— वहाँ पैठकर मैं नाग-कन्याएँ ले आऊँगा। फिर भीमक की कन्या कौन (क्या) है ? ' ५ (इसपर) नल बोले, 'हे पक्षिराज !

१ पद्मिनी— कामशास्त्र के अनुसार रूप, शील और स्वभाव की दृष्टि से निर्धारित स्त्रियों के चार वर्गों में से प्रथम वर्ग की स्त्री। उसका शरीर चम्पा की भाँति गौर वर्ण-वाला होता है, कमल-दल की भाँति कोमल होता है और उसके अंग-प्रत्यंग से कमल की-सी सुगन्ध निकलती रहती है। वह अत्यन्त लज्जाशील, किन्तु बहुत मानिनी भी होती है।

नळ कहे हुं सकळ श्यामा, पाम्यो पंखीराय,
कोटी कारज तें कर्यां, मेळव वैदर्भी शुं वेहवाय। ६ ।
एक मासनो वायदो, हंसे कर्यो सुजाण,
त्यारे नळ कहे त्रीस दहाडा, त्रीस जुग प्रमाण। ७ ।
त्यारे दिवस आठनी अवध करी, कहेतो गयो गुणवान,
पीठी करजो राजाजी, तत्पर करजो जान। ८ ।
भूप कहे प्रयाण ते, हंस में न कहेवाय,
हुं तो तुं विना एकलो, प्राण विना जेम काय। ९ ।
हवे एम जाणी विलंब मा करशो, रखे करता कोशुं स्नेह,
जो अवध वटशे आव्यानी, तो पडशे माहरो देह। १० ।
विश्वास आप्यो वीरने, पछे परवर्यो खगेश,
थोडे काळे आवियो, जहां विदर्भ देश। ११ ।
भीमक रायना घरनी वाडी, त्यां दमयंतीनुं धाम,
ते वाडी मध्ये आवी हंसे, लीधुं नळनुं नाम। १२ ।

(माना कि) मैं (ऐसी) समस्त नारियों को प्राप्त हो चुका हूँ— (माना कि) तुमने (मेरे) कोटि (-कोटि) कार्य किये हैं। (फिर भी) मुझे वैदर्भी अर्थात दमयन्ती से विवाह में मिला दो'। ६ (तब) उस सुजान हंस ने इस काम को पूरा करने के लिए एक मास का वादा किया। तब नल बोले, 'तीस दिन तो तीस युगों के प्रमाण (बराबर) हैं'। ७ तब आठ दिन की अवधि निर्धारित करते हुए वह गुणवान पक्षी (यह कहकर) चला गया, 'हलदी (तैयार) करके रखो। हे राजाजी, तुम बारात तैयार करके रखना'। ८ राजा बोले, 'हे हंस, मेरे द्वारा तुमसे प्रयाण करने को नहीं कहा जा रहा है। मैं तो बिना तुम्हारे अकेला हूँ, जैसे बिना प्राणों के शरीर हो। ९ अब यह जानकर विलम्ब न करोगे (न करना)। कदाचित, तुम किसी दूसरे से स्नेह करते रहते हो। (यदि) तुम्हारी आ जाने की अवधि बीत जाए (उसके अन्दर तुम न आओगे), तो मेरी यह देह छूट जाएगी (मैं मर जाऊँगा)'। १० (अनन्तर) उसने उन वीर (बन्धु) को विश्वास दिला दिया और फिर वह खगराज (हंस) चला गया। वह थोड़े ही समय में (वहाँ) आ गया, जहाँ विदर्भ देश है। ११ जहाँ भीमक राजा के (राज-) गृह की फुलवारी थी, वहाँ दमयन्ती का निवास-स्थान था। उस फुलवारी के मध्यभाग में आकर हंस ने 'नल' नाम कहा ('नल' नाम का उच्चारण किया)। १२। वह पौणिमा की मध्यरात्रि थी। चन्द्रमा मस्तक पर (मध्याकाश में) आया हुआ था। (तब)

चंद्रमां मस्तके आव्यो, पूर्णिमा मध्य जामनी,
सखी साथे द्यूत रमे छे, दमयंती जे भामनी । १३ ।
तेणे समे तांहां हंसे, वखाण्यो नळ राजान,
शब्द सुंदर सांभळी, श्यामाए धरियो कान । १४ ।
हरिवदनीए हंस दीठो, बेठो चंपक छोड,
आ शुं सुनानुं सावजुं, थयुं झालवानुं कोड । १५ ।
शोभतुं ने बोलतुं, करे नळनी विखाण,
ए पंखी कर चडे नहीं, तो तजुं माहरो प्राण । १६ ।
अबळा हेठी ऊतरी, झांझर काढ्यां तत्काळ,
हंसे दीठी कामनी, त्यारे बेठो नीची डाळ । १७ ।
दोडे आडीअवळी अंगना, करे झालवानो उपाय,
हाथमांथी हंस नहासे, चपळ नव झलाय । १८ ।
पंखी कहे रे प्रेमदा, अमो कमळना रहेनार,
नळ विना को न झाले, तुं कोण छे ग्रहेणार ? । १९ ।

दमयन्ती नामक जो भामिनी (नारी वहाँ) थी, वह (अपनी) सखी के साथ द्यूत खेल रही थी । १३ (उस समय वहाँ) हंस ने नल राजा का (स्तुतियुक्त) बखान किया। उस सुन्दर शब्द (ध्वनि) को सुनते ही उस स्त्री ने (उस ओर) कान दिये (वह उसे ध्यान से सुनने लगी) । १४ उस चन्द्रमुखी ने हंस को देखा। वह चम्पक के पौधे पर बैठा हुआ था। यह क्या (कैसा) सोने का पक्षी है ! (उसे देखकर उसके मन में) उसको पकड़ने की इच्छा हुई । १५ 'यह शोभायमान है और बोलनेवाला भी है ! यह नल का बखान कर रहा है —फिर यह पक्षी यदि (मेरे) हाथ नहीं आएगा, तो मैं अपने प्राण त्यज दूंगी ' । १६ —(ऐसा सोचकर) वह स्त्री नीचे उतर गयी। उसने (पहनी हुई) झांझर तत्काल उतार दी (ताकि कोई ध्वनि न हो) । हंस ने उस कामिनी को देखा, तो तब वह नीचली डाल पर (आकर) बैठ गया । १७ वह नारी इधर-उधर दौड़ती रही और उसे पकड़ने का उपाय (यत्न) करती रही। (फिर भी) वह हंस उसके हाथ से (दूर) भागया रहा। वह चपल (पक्षी) पकड़ा नहीं जा रहा था । १८ (अनन्तर) वह पक्षी बोला, ' हे प्रमदा, हम तो कमल में (कमलों के बीच) रहनेवाले हैं। हमें नल के सिवा कोई भी नहीं पकड़ सकता। तुम कौन हो, जो हमें पकड़नेवाली हो (पकड़ना चाहती हो) ? १९

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ग्रहेनार तुं कोण मूर्खी, तुंने कहांथी नळनी शुद्ध रे ?
वचन सुणीने वामाए, विचारी झालवानी बुद्ध रे। २०।

अरी मूर्खा ! तुम (हमें) कौन पकड़नेवाली हो ? तुम्हें नल का कहां से परिचय है ? ' उस स्त्री ने यह बात सुनकर उसे पकड़ने की बुद्धि (युक्ति) सोची (सोचकर तय की) । २०

कडवुं ११ मुं—(दमयन्ती द्वारा हंस को चतुराई से पकड़ना)

राग मारु

चतुर भीमकनी कुमारी, तेणे अकलित वात विचारी,
नथी हंस देतो मुने सहावा, पण नव देउं एहने जावा। १।
पंखी धीरे कमळने काजे, हाथ आप्या मने महाराजे,
जोगवाई जगदीशे मेली, महारी कमळ जेवी हथेली। २।
शरीर सघळुं कहींए संताडुं, पाणपंकज एहने देखाडुं,
पोतानां वस्त्र दासीने पहेरावी, बेठी चेहेबचामां आवी। ३।
मस्तक मूक्युं पलाशनुं पान, विकासी हथेली कमळ समान,
मध्य मूक्युं जांबुनुं फळ, जाणे भ्रमर ले छे पीमळ। ४।

कड़वक— ११ (दमयन्ती द्वारा हंस को चतुराई से पकड़ना)

(राजा) भीमक की कन्या (दमयन्ती) चतुर थी। उसने ऐसी बात सोची कि जिसकी कोई (अन्य) कल्पना (तक) नहीं कर सके। (उसने यह तय किया—) यह हंस तो मुझे स्पर्श (भी) नहीं करने दे रहा है; फिर भी मैं उसे (यों ही) जाने नहीं दूंगी। १ यह (हंस जैसा) पक्षी कमल के सम्बन्ध में विश्वास करता है। मुझे तो भगवान ने हाथ दिये हैं। भगवान जगदीश ने यह व्यवस्था कर दी है— मेरी हथेली कमल जैसी है। २ (अब—) मैं अपने पूरे शरीर को कहीं छिपा देती हूँ और उसे अपने कर-कमल (ही) दिखा देती हूँ। (ऐसा विचार करके) उसने अपने वस्त्र दासी को पहना दिये और वह स्वयं उस शैवाल आदि से युक्त जलाशय में आकर बैठ गयी। ३ उसने अपने मस्तक पर पलाश का पत्ता रख लिया और अपनी हथेली को कमल सदृश विकसित किया (फैला लिया)। उसके बीच में उसने जामुन का फल रखा, मानो कोई भ्रमर सुगन्ध का सेवन कर रहा हो। ४ वह स्त्री अपनी नाक में से

पोते नासिकाए गणगणती, भामा भमरानी पेरे भणती,
हंसे हरिवदनी जाणी, न होय पंकज, प्रेमदानो पाणि। ५।
बेसुं जई थई अज्ञान, परणाववो छे नळ राजान,
आनंद आणी अंबुज भणी चाल्यो, बेसतां अबळाए झाल्यो। ६।
दमयंती कहे शें न नाठो, हल्या गाठुओ थईने गाठो,
मुने दोडावी कीधी दुःखी, मूवा पहेलां हुं न ओळखी। ७।
तारा अवगुण नहीं संभारुं, मुने बापना सम जो मारुं,
हंस कहे शुं जाओ छो फूली, नथी बेठो हुं भ्रमे भूली। ८।
हुं मां प्राक्रम छे अति घणुं, चंचप्रहारे तारा हस्त हणुं,
दमयंती कहे हंस भाई, तारे मारे थई मित्राई। ९।
अन्योन्ये ते बोल ज दीधो, हाथेथी मूकीने खोळे लीधो,
तमो विखाण कीधुं सबळ, ते भीआ कोण छे नळ ? । १०।
तेनां कोण मात ने तात, मुने विखाणी कहो वात,
हंस बोल्यो मुखे तव हसी, अबळा दीसे घेली कशी। ११।

गुनगुनाने लगी; वह मानो भ्रमर की तरह बोलने लगी (ध्वनि करने लगी)। हंस ने उस चन्द्रानना को जान लिया (उसे कोई स्त्री ही समझा) —(यह जाना कि) यह कोई कमल नहीं है, किसी प्रमदा का हाथ है। ५ फिर भी 'अज्ञान बनकर मैं जाकर (वहाँ) बैठ जाता हूँ —मुझे नल राजा का (उससे) परिणय तो कराना है'। —(ऐसा सोचकर) आनन्द अनुभव करते हुए (आनन्दपूर्वक) वह उस कमल के प्रति चला गया। उसके बैठ जाते ही उस स्त्री ने उसे पकड़ लिया। ६ दमयन्ती बोली, 'अब क्यों नहीं भाग गया ? अरे, तू ठग होकर भी (मुझसे) ठगा गया है। तूने मुझे दौड़ा (-दौड़ा) कर दुःखी बना दिया। अरे मुए, मैं तेरे द्वारा पहले नहीं पहचानी गयी। ७ (फिर भी) मैं तेरे अवगुणों का स्मरण नहीं करूँगी (अवगुणों पर ध्यान नहीं दूँगी)। मुझे अपने पिता की सौगन्ध है, यदि मैं तुझे मार डालूँ'। (यह सुनकर) हंस बोला, 'तुम (घमण्ड से) फूली क्यों जा रही हो। मैं भ्रम से भूलकर नहीं बैठा था। ८ मुझमें बहुत पराक्रम है। (यदि मैं चाहूँ तो) अपनी चोंच के आघात से तुम्हारे हाथों को काट दूंगा'। तो दमयन्ती बोली, 'अरे भाई हंस, तेरी-मेरी (अब) मित्रता हो गयी (समझ ले)'। ९ (अनन्तर) उन्होंने एक-दूसरे को अभिवचन ही दिया, तो (दमयन्ती ने) उसे हाथ में से छोड़कर गोद में (बैठा) लिया। (फिर वह बोली—) 'तुमने (जिनका) बड़ा बखान किया (बड़ी प्रशंसा की), रे भाई, वे नल कौन हैं ? १० उनके कौन माता और पिता हैं ? मुझे इस (सब) का वर्णन

तेना गुण ब्रह्मसभामां गवाय, नळ ते विष्णु आगळ वखणाय,
ए भीआ मोटा चतुरसुजाण, जे हुं नळनी करुं रे विखाण । १२ ।
नळ दीठो नहीं ते रोझ, सांभळ्यो नहीं ते ब्रखडोज,
जोयो नहीं तेनां लोचन कहेवां, मोरपीछ चांदलिया जेवां । १३ ।
एटलामां मन विह्वल कीधुं, चित्त महिलानुं आकर्षी लीधुं,
बेउ कर जोडीने नमयंती, हंस प्रत्ये कहे दमयंती । १४ ।
हुं पूछुं छौं बीती बीती, नळनी कथा कहो अथ इति,
छे बाळक वृद्ध जोबन धाम, शे अर्थे नळ धराव्युं नाम ? । १५ ।
तमे आवडो जीभे वरण्यो, छे कुंवारो के परण्यो ?
एवां वचनने सांभळी, त्यारे हंस बोल्यो कळकळी । १६ ।
नळ छे कुंवारो, नथी कन्या, छे ब्रह्मानो मोटो अन्या,
अमे कोटानकोट नारी नीरखी, न मळे नळने परणवा सरखी । १७ ।
एक वार ब्रह्माए शुं करियुं, सकळ तेज एक पात्रमां भरियुं,
ते तेजनो घड्यो नळराय, कांई एक रज वाधी पात्रमांय । १८ ।

करके बता दो '। (यह सुनकर) तब मुख से हँसते हुए वह हंस बोला, 'यह अबला तो कैसी पागल दिखायी दे रही है। ११ उनके गुण ब्रह्मा जी की सभा में गाये जाते हैं; नल की प्रशंसा तो (भगवान) विष्णु के सामने की जाती है। वे भाई तो बड़े चतुर, सुजान हैं। मैं उनका वर्णन (कैसे) कर सकूँगा। १२ जिसने नल को देखा नहीं, वह पुरुष नीलगाय जाति का नर है; जिसने उनको, अर्थात उनके विषय में सुना नहीं हो, वह तो बैल है। जिसने उन्हें नहीं देखा हो, उसके नयन तो मोर-पंख पर के चँदोवे जैसे कहे जाएँ '। १३ इतने (कहने) में उस (हंस) ने उस नारी का मन विह्वल बना दिया; उसके चित्त को आकर्षित कर लिया (मोहित किया)। तो दमयन्ती दोनों हाथों को जोड़कर नमस्कार करती हुई, हंस से बोली। १४ "मैं तो डरते-डरते पूछ (कह) रही हूँ कि नल की कथा अथ से इति तक (मुझे) बता दो। (क्या) वे बालक हैं, वृद्ध हैं (अथवा) यौवन के (साक्षात्) धाम (निवास-स्थान) हैं। उन्हें 'नल' नाम किस अर्थ से धारण कराया गया ? १५ तुमने अपनी जिह्वा से इतना तो वर्णन किया। (परन्तु यह नहीं कहा कि) वे क्वारे हैं अथवा विवाहित हैं"। तब इस प्रकार की बातें सुनकर हंस कलकल (ध्वनि) करते हुए बोला। १६ 'नल क्वारे हैं। (उनके योग्य) कोई कन्या नहीं जनमी है— ब्रह्मा द्वारा किया हुआ यह बड़ा अन्याय है। मैंने कोटि-कोटि नारियों को ध्यान से देखा है, परन्तु नल से विवाह कराने योग्य कोई (कन्या) नहीं मिल रही है। १७ एक बार ब्रह्माजी ने क्या किया ?

तेनी एक थपोली हवी, आकाशे ऊपन्यो रवि,
वहाणे सांजे नळ बाहेर नीसरे, तेजवत् वनमां फरे। १९।
सूरज झांखी कहाडे कोर, वहाणु सांज तेणे टहाडो पोहोर,
अदृष्ट ज्यारे थाय राजान, निश्चित भानु तपे मध्याह्न। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मध्याह्न नळ जाय मदिरमां, माटे सूरज तपे घणुं
हंस कहे हो हरिवदनी, शुं विखाण करुं ते नळतणुं। २१।

समस्त तेज एक पात्र में भर दिया। उस तेज से नल को गढ़ लिया। (उस तेज के) कुछ (रजः-) कण उस पात्र के अन्दर बचे रहे। १८ उसकी एक राशि बन गयी। उससे आकाश में सूर्य उत्पन्न हुआ। सवेरे और शाम को नल बाहर निकलते हैं और वे तेजस्वी (पुरुष) बन में घूमते रहते हैं। १९ तो सूरज धुँधली कोर निकालता है; उससे सवेरे और शाम के समय वह शीतल हो जाता है। (परन्तु) जब राजा (नल) अदृश्य हो जाते हैं (अर्थात प्रासाद के अन्दर रहते हैं), तब मध्याह्न के समय चिन्ता-रहित होकर सूर्य तपता रहता है। (अर्थात्) राजा के प्रासाद के अन्दर रहने पर ही सूर्य तेजस्वी दिखायी देता है; उनके बाहर रहने पर सूर्य फीका पड़ जाता है)। २०

मध्याह्न के समय राजा अपने प्रासाद में (विश्राम के लिए) जाते हैं; (तब) इसलिए सूर्य बहुत तपता रहता है'। (फिर) हंस बोला, 'हे चन्द्र-वदना, मैं ऐसे नल का क्या वर्णन करूँ?' २१

कडवुं १२ मुं—(हंस द्वारा नल राजा की प्रशंसा करना और दमयन्ती का उनके प्रति आसक्त हो जाना)

राग जेतश्री

हंस भणे हो भामिनी, ब्रह्मांड त्रण जोयां सही,
नळनी तुलना मेळवुं पण, महीतळमां तुलना को नहीं। तुलना०। १।

कड़वक— १२ (हंस द्वारा नल राजा की प्रशंसा करना और दमयन्ती का उनके प्रति आसक्त हो जाना)

हंस बोला, "हे भामिनी, मैंने सचमुच तीनों ब्रह्माण्डों को देखा— नल की तुलना करने के हेतु योग्य वस्तु प्राप्त करने के लिए खोजकर देखा; परन्तु पृथ्वी-तल पर उनकी कोई तुलना नहीं है (उनसे तुल्य वस्तु या

जुग्म रविसुत रूप, आगळ जाय नाखी वाट,
गंभीरताए वर्णवुं, पज अर्णवमां खाराट। तुलना०। २।
शीतळताए शशी हार्यो, मूके कळा पामे कष्ट,
तेजथी आदित फरे नाठो, मेरु केरी पृष्ठ। तुलना०। ३।
ऐश्वर्य युद्ध इंद्र हार्यो, उपाय कीधा लाख,
नळ आगळ महिमा गयो माटे, महादेव चोळे राख। तुलना०। ४।
नैषधरायना रूप आगळ, देवने थई चिंताय,
रखे आपणी स्त्रीओ वरे नळने, सर्वे मांडी रक्षाय। तुलना०। ५।
लक्ष्मीनुं मन चंचळ जाणी, विष्णु मन विमासे,
प्रेमदाने लई पाणीमां पेठा, बेठा शेषने वांसे। तुलना०। ६।
हिमसुताने हर लई नाठा, गया गुफामांय,
सहस्र आंखो इंद्रे करी, करवा नारीनी रक्षाय। तुलना०। ७।
सिद्धि बुद्धिने धीरे नहीं, राखे गणपति अहोनिश पास,
ऋषिपत्नीने ऋषि लई नाठा, जई रह्या वनवास। तुलना०। ८।

व्यक्ति कहीं कोई नहीं है)। तुलना०। १ सूर्य के जुड़वां पुत्रस्वरूप (दोनों) अश्विनीकुमार (नल के सामने निस्तेज होने के डर से) अपना मार्ग छोड़कर किसी दूसरे मार्ग से जाते हैं। गम्भीरता में सागर से तुलना करके उनका वर्णन करूँ, तो सागर में तो पानी खारा होता है। तुलना०। २ शीतलता में चन्द्र (उनके सामने) हार चुका है; वह तो कला (तेज, कान्ति) छोड़ता जाता है और कष्ट को प्राप्त हो जाता है। तेज के साथ सूर्य तो घूमता है; फिर भी नल के सामने हार मानकर वह मेरु पर्वत के पृष्ठभाग में भाग गया। तुलना०। ३ ऐश्वर्य सम्बन्धी तुलना रूपी युद्ध में इन्द्र हार गया। उसने लाख-लाख उपाय किये (पर कुछ नहीं हो सका)। नल के सामने महिमा नष्ट हो गयी, इसलिए महादेव शिवजी (शरीर में) राख मलने लगे। तुलना०। ४ नैषधराज नल के रूप के सामने (के कारण) देवों को यह चिन्ता हुई कि कदाचित हमारी स्त्रियाँ (अब) नल का वरण करेंगी; इसलिए वे सब उनकी रखवाली करने लगे। तुलना०। ५ लक्ष्मी के मन को चंचल जानकर भगवान बिष्णु का मन बहुत सोच-बिचार में पड़ गया; इसलिए वे अपनी स्त्री को लेकर पानी में प्रबिष्ट हुए और (बहाँ) शेष की पीठ पर बैठ गये। तुलना०। ६ शिवजी हिमालय की कन्या पार्वती को लेकर भाग गये और गुफा के अन्दर गये। अपनी स्त्री की रक्षा करने के लिए इन्द्र ने (अपने लिए) एक सहस्र आँखें निर्मित कीं। तुलना०। ७ श्रीगणेशजी (अपनी स्त्रियों-) सिद्धि और बुद्धि का विश्वास नहीं करते; (इसलिए) वे उन्हें

पाताळमां लई पद्‌मिनीने, वसिया वरुण ते भूप,
स्वाहाने साचववा वह्निए, धर्या अडतालीस रूप । तुलना० । ९ ।
चंद्र ने सूरज नाठा फरे छे, रखे वरती नारी,
नारदजी आगळथी चेत्या, माटे रह्या ब्रह्मचारी । तुलना० । १० ।
हंस भणे हो भामिनी, एम सउए श्यामा संताडी,
नळे रूप गुण जसथी, सर्व सृष्टि कष्ट पमाडी । तुलना० । ११ ।
पुरुषने अदेखाईनुं बळवुं, नारीने दहे काम,
अनल प्रगट्यो सर्वने, माटे नळ धराव्युं नाम । तुलना० । १२ ।
जपव्रत जेणीए कर्यां हशे, सेव्यो हिमपर्वत,
ते नारी नळने परणशे, जेणे काशी मुकाव्युं करवत । तुलना० । १३ ।
ब्रह्माजीने सृष्टिमां, को न मणे जाचकरूप,
नळने दाने द्रारिद्र्य छेद्यां, भिक्षुक किधा भूप । तुलना० । १४ ।
त्यारे नरम थई दमयंती बोली, निर्मळ नळ भूपाळ,
जेम तेम करतां भाई मारो, त्यां मेळाव वेविशाळ । तुलना० । १५ ।

दिन-रात अपने पास रखते हैं। ऋषि अपनी (-अपनी) पत्नियों को लेकर भाग गये और जाकर वन में निवास करके रहने लगे। तुलना०। ८ पद्‌मिनी को लेकर वरुण राजा पाताल में बस गये। अपनी स्त्री स्वाहा की रखवाली करने के लिए अग्नि ने (और) अड़तालीस रूप धारण किये। तुलना०। ९ कदाचित नारी (नल का) वरण करेगी, (इस डर से) सूर्य और चन्द्र भाग गये और वे (नित्य) घूमते रहते हैं। नारदजी तो पहले से ही सचेत हो गये; इसलिए वे ब्रह्मचारी हो गये'। तुलना०। १० हंस (फिर) बोला, 'हे भामिनी, इस प्रकार सबने (अपनी-अपनी) स्त्री को छिपाकर रखा। नल ने रूप, गुण, यस से समस्त सृष्टि कष्ट को प्राप्त करायी। तुलना०। ११ पुरुषों को ईर्ष्या की आग जलाती रही, तो कामभाव नारियों को जलाने लगा है। (इस प्रकार नल से) सबके लिए अनल (आग) पैदा हुआ; इसलिए उनको 'नल' नाम धारण कराया गया। तुलना०। १२ जिसने जप, व्रत किये हों, हिमालय पर्वत में निवास किया हो, जिसने काशी में जाकर आरे से अपने आपको चीर डाला हो (अर्थात चीर डालने की तैयारी की हो), वह नारी नल का वरण कर पाएगी। तुलना०। १३ ब्रह्मा की इस सृष्टि में याचक रूप में कोई भी नहीं मिल रहा है। नल ने दान से (सबकी) दरिद्रता का उच्छेद कर डाला; भिक्षुकों को राजा (जैसा धनवान) बना दिया है"। तुलना०। १४ तब कुछ नम्र होकर (अर्थात घमण्ड छोड़कर नम्रता के साथ) दमयन्ती

हंस कहे फोकट फांफां जेम, वामणो इच्छे आंबाफळ,
तेम तुजने इच्छा थई, भरतार पामवा नळ । तुलना० । १६ ।

हजार हंस हुं सरखा फरे छे, नैषधपतिना दूत
खप करी परणावीए, तो तुं सरखुं कंई भूत । तुलना० । १७ ।

वचन सुणी विहंगमनां, अबळाए मूक्यो अहंकार,
भूंडा एम शुं मने निभ्रंछा, आपणे मित्राचार । तुलना० । १८ ।

स्नेह तो सत्कर्मनो, एम वदे वेद ने न्याय,
एम जाणी परणाव मुजशुं, लागुं तारे पाय । तुलना० । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पाये लागुं ने नळ मागुं हवे आवी तारे शर्ण रे,
नहींतर प्राण जाशे माहरा, ने पिंड पडशे धर्ण रे । तुलना० । २० ।

बोली, '(जान पड़ता है—) भूपाल नल निर्मल हैं। हे मेरे भाई, जैसे-वैसे करके वहाँ (उनके साथ) सगाई करा दो'। तुलना० । १५ (इसपर) हंस बोला, 'ये यत्न व्यर्थ हैं, जैसे कोई वामन (नाटा मनुष्य) ऊँचे वृक्ष पर से) आम का फल प्राप्त करना चाहता हो (उसके हाथ फल तक नहीं पहुँच सकते; इसलिए उसके द्वारा किये यत्न व्यर्थ सिद्ध हो जाते हैं), उसी प्रकार नल को पति के रूप में प्राप्त करने की (व्यर्थ ही) इच्छा हो गयी है। तुलना० । १६ मुझ जैसे हज़ार(-हज़ार) हंस नैषधपति नल के दूत बनकर घूम रहे हैं। यत्न करके हम उनका विवाह करा देंगे—तुम जैसे तो कई भूत हैं (क्या तुम जैसी भूतनी को उनसे व्याह दें ?)। १७ उस पक्षी की बात सुनकर उस स्त्री (दमयन्ती) ने अहंकार का त्याग किया (और वह बोली—) 'अरे दुष्ट, तुम मेरी इस प्रकार क्या निर्भर्त्सना कर रहे हो ? अपनी तो मित्रता है। तुलना० । १८ वेद और न्याय ऐसा कहते हैं कि स्नेह सत्कर्म के लिए होता है। ऐसा जानकर उनका मुझसे विवाह करा दो। मैं तुम्हारे पाँव लगती हूँ। तुलना० । १९

मैं तुम्हारे पाँव लगती हूँ और (अपने लिए पति के रूप में) नल की याचना करती हूँ। अरे, मैं अब तुम्हारी शरण में आ गयी हूँ। नहीं तो मेरे प्राण जाएँगे और यह शरीर धरणी पर गिर पड़ेगा'। तुलना० । २०

कडवुं १३ मुं—(हंस द्वारा दमयन्ती को आश्वस्त करना)

राग वेराडी

हंस भणे हो भगिनी मारी, भीमक राजकुमारी,
निश्चय नळ तुजने परणावुं, मुने दया आवे छे तारी । हंस० । १ ।
अमो मळतांने प्राण ज आपुं, पूरुं मननी आश,
तारो मोह लगाडुं नळने, नाखी ऊँचानीचा पाश । हंस० । २ ।
एक जडीबुट्टी सुंघाडुं नळने, तत्क्षण थाशे घहेलों,
आफणीए आंहां आवीने रहेशे, वहेलो सर्वनी पहेलो । हंस० । ३ ।
नळने तुं निरधार परणशे, ए महारो संकेत,
रखे त्यारे पहेली कोने वरे, पछे हुं थाउं फजेत । हंस० । ४ ।
आवशे नळनां रूप लईने, देवता मोटा घाती,
वण तपासे वरीश मा, रखे डाही थई वहवाती । हंस० । ५ ।
नळ अमरमां वहेरो शुं छे, ओळखाव्यो ते वेश,
देव रहेशे अंतरिक्ष ऊभा, नव मळे निमेष । हंस० । ६ ।

कड़वक— १३ (हंस द्वारा दमयन्ती को आश्वस्त करना)

हंस बोला, ‘ हे मेरी भगिनी, भीमक राजा की कन्या, मैं निश्चय ही तुमसे नल का विवाह करा दूँगा। मुझे तुम पर दया आ रही है। हंस०। १ (अपने) मित्र के लिए मैं प्राण ही दे सकता हूँ (और उसके) मन की आशा को पूर्ण करता हूँ। (कुछ) ऊँचे-नीचे पाश डालकर मैं नल (के मन) में तुम्हारे प्रति मोह (आसक्ति) लगा दूँगा (उत्पन्न कर दूँगा)। हंस० । २ मैं नल को कोई एक जड़ी-बूटी सुँघाऊँगा, तो वे तत्क्षण पागल हो जाएँगे। (फिर) वे शीघ्रता से सबके पहले, यहाँ स्वयं आकर रह जाएँगे। हंस० । ३ मेरा वही संकेत है कि तुम नल का निश्चय ही वरण करोगी। शायद उससे पहले तब किसी का वरण करोगी, तो फिर मैं दुर्दशा को प्राप्त हो जाऊँगा। हंस० । ४ बड़े घात करनेवाले (कपटी) देवता नल का रूप धारण करके आएँगे। (फिर भी) बिना परीक्षा किये, किसी का वरण नहीं करोगी (मत करो)। शायद (अधिक) सयानी वनकर तुम बह जाओगी (धोखा खाकर बहक जाओगी)। हंस० । ५ नल और देवों में क्या अन्तर है ? मैं उनके वेश की परख कराये देता हूँ। देव अन्तरिक्ष में खड़े रहते हैं (उनके पाँव भूमि को स्पर्श नहीं करते)। उनकी पलकें मिलती अर्थात झपती नहीं। हंस० । ६ अपने घर में तुम स्वयंवर का आयोजन कराओ। इसके अतिरिक्त एक बात

स्वयंवर तुं घर रचावे, वळी करे एक वातुं,
तारो पिता नहोतरुं मोकले, तुं पत्र लखजे छानुं। हंस०। ७।
हंसरायनां वचन सुणीने, वामा करे विदाय,
जाओ कहुं तो मारी जीभ कापुं, गया विना काम न थाय। हंस०। ८।
हो रे विहंगम हो रे विहंगम, मारो विरहनो वह्नि समावो,
वीरसेनसुतने विवाह अर्थे, वीरा पहेलां वहेलां लावो। हो०। ९।
तारा वहोणी नळनो विजोग छे, हुं ए बे दुःखे दुखाळी,
अन्न न भावे, निद्रा न आवे, मेळाप तमारा टाळी। हो०। १०।
विश्वास आपीने वात वहेवानी, रखे जातो वीसरी,
स्वयंवरमां नळ नहीं आवे तो, प्राण जाशे नीसरी। हो०। ११।
जों तमो नाथ आणी नहि आपो, तो कोण आपशे वळतुं,
मोटुं पुण्य छे मनुष्य राख्यानुं, अनंग अग्निथी बळतुं। हो०। १२।
मात, तात ने सगा भाई, हुं तेने लाजुं कहेती,
केम कहुं नळने परणावो मुंने, सर्वे कहे अलेती। हो०। १३।

करो। तुम्हारे पिताजी (वैसे तो) निमंत्रण भेज देंगे। (फिर भी) तुम गुप्त रूप से उनके (नल के) नाम एक पत्र लिख देना'। हंस०। ७

हंसराज की बात सुनकर उस स्त्री ने उसे विदा किया। (वह बोली—) "(यदि) तुम्हें 'जाओ' कहूँ, तो (जान पड़ता है—) मैं अपनी जिह्वा को काट रही हूँ। (परन्तु) बग़ैर तुम्हारे गये, काम नहीं होगा। हंस०। ८ हे विहंग, हे विहंग, मेरी विरह की आग का शमन कर दो। विवाह के लिए वीरसेन के पुत्र (नल) को, हे भाई, शीघ्रता-पूर्वक (सबके) पहले ले आओ। हो रे०। ९ (एक तो) तुम्हारे विहीन (मैं रह जाऊँगी) और दूसरे नल का विरह है—इस प्रकार मैं इन दो दुःखों से दुखिया बन रही हूँ। तुम दोनों के मिलाप के टल जाने पर मुझे अन्न अच्छा नहीं लगेगा; मुझे नींद नहीं आएगी। हो रे०। १० विश्वास देकर कदाचित, विवाह की बात को तुम भूल जाओगे और यदि स्वयंवर में नल न आ जाएँ, तो (मेरे) प्राण निकल जाएँगे। हो रे०। ११ यदि मेरे अपने नाथ (स्वामी) को नहीं लाकर दोगे, तो बाद में कौन ला देगा। काम की आग में जलनेवाले मनुष्य के मन को रखने में (मनुष्य की कामना को पूर्ण करने में) बड़ा पुण्य होता है। हो रे०। १२ मेरे अपने माता, पिता और सगे बन्धु हैं। पर मैं उनसे यह कहने में लज्जा को प्राप्त हो जाती हूँ। मैं उनसे यह कैसे कहूँ कि मेरा नल से विवाह करा दो। सब इसे बचकानापन कहेंगे। हो रे०। १३ गुह्य बात तो मित्र से कहें। (क्या)

गुह्य वात ते मित्रने कहीए, वहालानी होय चोरी,
वणरोगे आ वपुनी वेदना, तुं हंस जाणे मोरी । हो० । १४ ।
तारा आशा-सूत्रनो तंतु, प्राण रह्यो छे वळगी,
वहेवा वात मिथ्या सांभळतां, देह था प्राणथी अळगी । हो० । १५ ।
विश्वासघातनुं पाप छे मोटुं, तमो डाह्याने शुं कहीए ?
वृद्धनी वात करी जाओ छो, नथी कीधी नाहाने छैये । हो० । १६ ।
हंस कहे हो भामिनी, निश्चे रहे तुं विश्वासे,
एम कहीने खग तांहां थकी, ऊडी गयो आकाशे । हो० । १७ ।
आवी मळ्यो नळराजाने, वात कही जे वीती,
समाचार कह्यो जई हंसे, नळने अथी इति । हो० । १८ ।
पंखी कहे पुण्यश्लोकजी, वीती वात शुं करुं ?
दिन दश-पांचमां आव्युं देखशो, परण्यानुं नहोतरुं । हो० । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नहोतरुं आवशे स्वयंवरनुं, हंसे वात नळने कही रे,
वेविशाळ मळ्युं, दूतत्व फळ्युं, तेमां काई संदेह नहीं रे । हो० । २० ।

प्यार करने में चोरी होती है ? हे हंस, बिना रोग के मेरे इस शरीर की मेरी वेदना को तुम जानते हो । हो रे० । १४ मेरे प्राण तुम्हारे आशा रूपी तन्तु को पकड़कर रह रहे हैं । री देह, विवाह की बात को मिथ्या (व्यर्थ) हुई सुनने पर, तू प्राणों से अलग हो जा । हो रे० । १५ विश्वासघात का पाप बड़ा होता है । तुम (जैसे) समझदार से क्या कहें । तुम वृद्ध (अर्थात प्रौढ़, अनुभवी) की (-सी) बात करके जा रहे हो— तुमने किसी छोटे बच्चे की (-सी) बात नहीं की है (जिससे कि उसका कोई विश्वास न करे) । हो रे० । १६

तो हंस बोला, 'हे भामिनी, तुम निश्चय ही विश्वास के साथ रह जाओ'। ऐसा कहकर वह पक्षी वहाँ से आकाश में उड़ गया । हो रे० । १७ वह आकर नल राजा से मिला और जो घटित हुई, सो बात उसने उनसे कही । हंस ने जाकर नल से अथ से इति तक समाचार कह दिया । हो रे० । १८ वह पक्षी बोला, 'हे पुण्यश्लोक राजाजी, घटित बात क्या कहूँ ? तुम, दस-पाँच दिन में विवाह करने के निमंत्रण आया हुआ देख लोगे'। हो रे० । १९

हंस ने नल से यह बात कही, 'स्वयंवर का निमंत्रण आ जाएगा । (समझो कि—) सगाई हो गयी, दूतत्व फल को प्राप्त हुआ । उसमें कोई सन्देह नहीं है'। हो रे० । २०

कडवुं १४ मुं—(हंस द्वारा कुंदनपुर और उद्यान का वर्णन करना)

राग मलारनी देशी

बंन्यो मित्र मळीने बेठा, पूछे नळ भूपाळजी,
वीर विहंगम कहोने वारता, केम मेळ्यो वेविशाळ जी । १ ।
गाम, ठाम ने रूप भूप गुण, गोत्र ने आचार्य जी,
सर्वांगे संपूर्ण श्यामा, मान्युं तारुं अंतःकरण जी । २ ।
केम गयो, तेम दूत थयो, वात कहो मुंने मांडी जी,
ते कन्या केम बोली तुज साथे, लज्जा मननी छांडी जी । ३ ।
पंखी कहे सांभळीए स्वामी, कन्या वर्णन विवेक जी,
शेष छेक न पामे स्तवतां, शुं कहुं जिह्वा एक जी । ४ ।
कुंदनपुर ते कुंदन जेवुं, जोतां मोह उपजावे जी,
वैकुंठ त्यां आण्युं प्रस्थाने, अमरापुरीने लजावे जी । ५ ।
चारे वर्ण धर्म ने पाळे, जे पोतानां कर्म जी,
सुखनिवृत्त निरभे प्रजा ने, आण भीमकनी धर्म जी । ६ ।

कड़वक— १४ (हंस द्वारा कुन्दनपुर और उद्यान का वर्णन करना)

वे दोनों मित्र मिलकर (एक स्थान पर) बैठ गये । तो भूपाल नल ने हंस से पूछा (कहा), ' हे वन्धु पक्षी (हंस), समाचार कहो न कि किस प्रकार मँगनी हुई । १ ग्राम, स्थान और रूप, राजा के गुण, गोत्र, आचार्य, उस स्त्री के सर्वांग का सम्पूर्ण रूप-वर्णन करके कह दो । मैंने तुम्हारे अन्तःकरण की बात मान ली है । २ कैसे गये ? वैसे ही दूत (कैसे) बन गये ? मुझे ठीक से वह बात कह दो । मन की लज्जा को छोड़कर वह कन्या तुमसे किस प्रकार बोली ? ' ३ (इसपर) वह पक्षी बोला, ' हे स्वामी, उस कन्या का वर्णन विवेकपूर्वक सुनो । (एक सहस्र जिह्वाओं वाला) शेष तक उसकी स्तुति करने की क्षमता को प्राप्त नहीं हो जाएगा, तो मैं एक जिह्वा से क्या कहूँ । ४ वह कुन्दनपुर (नामक नगर) कुन्दन जैसा है । देखने पर, वह मोह उत्पन्न कर देता है । वहाँ (उसकी तुलना में) वैकुण्ठपुर को तो प्रस्थान करने (भागकर निकल जाने की स्थिति) तक ला दिया; उसने अमरापुरी को लज्जित कर दिया है । ५ चारों वर्ण (के लोग) अपने-अपने धर्म का और जो अपने कर्तव्य हैं, उनका निर्वाह करते हैं । प्रजा सुख (-लोलुपता) से निवृत्त (अनासक्त) तथा निर्भय है । भीमक राजा के राजधर्म की (धर्मानुसारी राज्य-शासन की) आन फिरती है । ६ (वहाँ) आनन्दोत्सव होते रहते हैं और श्रीहरि की

आनंद ओच्छव ने हरिसेवा, घेर घेर वाजित्र वाजे जी,
वासव विष्णु विरंचि इच्छे, वास सुखने काजे जी। ७।
विद्या मुकावी निशाचरनी, ते शीख्या दिवाचर काम जी,
जुग्म कपाट विजोगपुरमां, जुदां रहे अष्ट जाम जी। ८।
कर्मत्याग पारधीए कीधां, गुणिकाए ग्रही लज्जा जी,
उचाट एक अधर्मीने वर्ते, सकंप एक ध्वजा जी। ९।
भुवन भव्य भूप भीमकनां, भुवन त्रण व्यतिरेक जी,
घरनी वाडी परम मनोहर, मध्ये आवास छे एक जी। १०।
सप्त भोम ते व्योम समाने, फरती बारी जाळी जी,
दश सहस्र नारी आयुधधारी, करे कन्या रखेवाळी जी। ११।
चंदन चंपक चारोळी ने, वट वाळो वेलडी जी,
फणसी फोफळी ने श्रीफळी, आंबा साख सेलडी जी। १२।

सेवा चलती है। घर-घर वाद्य बजते रहते हैं। सुख (-प्राप्ति) के हेतु इन्द्र, विष्णु और ब्रह्मा (वहाँ) निवास करना चाहते हैं। ७ (उसके राजा ने) निशाचरों (चोरों-उचक्कों) की विद्या को छुड़वा दिया, तो वे निशाचर (चोर आदि लोग) दिवाचरों (दिन में खुले रूप में काम करनेवाले भले लोगों) का-सा काम सीख गये— अर्थात चोरी आदि कुकर्म से मुक्त होने के लिए विवश बनाकर राजा भीमक ने उन्हें दिन (-दहाड़े) प्रकट रूप में घूमने-फिरने, काम करने योग्य कर दिया और अन्य लोगों जैसे कार्य करने योग्य बनाये रखा— अर्थात अच्छे काम करते हुए वे प्रकट रूप में दिन में इधर-उधर विचरण कर सकते हैं। द्वार के दोनों किवाड़ (एक-दूसरे से) बिछुड़े हुए रहते हैं; वे आठों पहर एक-दूसरे से जुदा रहते हैं (वहाँ द्वार दिन-रात खुले रहते हैं; क्योंकि चोर आदि का अस्तित्व वहाँ नहीं है)। ८ बहेलियों ने अपने (हिंसात्मक) कामों को छोड़ दिया है। गणिकाओं ने लज्जा धारण की है (वे अब वेश्या-व्यवसाय नहीं करतीं)। चिन्ता एक (केवल) अधर्माचरणियों में रहती है। सकम्पन एक (केवल) ध्वज ही होता है (और कोई कम्पायमान नहीं है)। ९ भीमक राजा का वह भुवन त्रिभुवन से अधिक भव्य है। उनके घर का उद्यान परम मनोहारी है। उसके मध्य में एक हवेली है। १० उस (हवेली) के सातों खण्ड (मंज़िलें) तो आकाश के समान (विशाल) हैं। उसके चारों ओर जालीदार खिड़कियाँ हैं। (वहाँ) आयुध धारण की हुई दस सहस्र नारियाँ उस कन्या (दमयन्ती) की रखवाली कर रही हैं। ११ (उस उपवन में) चन्दन, चम्पक, चिरौंजी और बरगद (के पेड़) तथा खस की लताएँ हैं। पनस (कटहल), सुपाड़ी, नारियल, आम, साखू और

बीली कोठी द्राख दाडमी, नारंगी ने नेत्र जी,
अखोड, खजूर ने लवंगलता, बहु खारेकना क्षेत्र जी। १३।
शीतळ जळाशय कमल केतकी, कुसुम पूरण कुंज जी,
मलियागर मोगरा मालती, खटपद गुंजागुंज जी। १४।
वेल वालो खलोखली, शीतळ वाय समीर जी,
वयण पंखी रयण बोले, डोले राजा गीर जी। १५।
साग सीसम ने सरगवा, सादडिया ताल तमाल जी,
करेण काम बाबची बद्रिका जावंत्री जायफल जी। १६।
वाड वाटिका वंक वेलामणी, केळ-वंन बिजोरी जी,
बेलडीए साहेलडी वळगी, हींडे गुणवंत गोरी जी। १७।
ते वनमांहे हुं गयो ने, हवो ते हर्ष पूर्ण जी,
वृक्षजूथमां पेसी बेठो, गोपवीने चर्ण जी। १८।
दासी सर्व थई निद्रावश, इंदु आव्यो माथे जी,
दमयंतीए द्यूत आरंभ्युं, माधवी सखी साथे जी। १९।
तेणे समे में तमो वर्णव्या, श्यामाए धरिया श्रवण जी,
ऊठी बाळी अटाळीए आवी, जोती नेत्रे तीक्ष्ण जी। २०।

घीगुवाँर के पेड़ हैं। १२ बेल, कैथ, अंगूर, अनार, नारंगी और बेंत (के पेड़-पौधे) हैं। अखरोट, खजूर और लौंग-लताएँ हैं। छुआरे के (पेड़ों के) बहुत क्षेत्र हैं। १३ (वहाँ) शीतल जलाशय हैं। उनमें कमल हैं। (वहाँ केवड़े के फूलों से भरे-पूरे कुंज हैं। मलयागरु, मोगरा, मालती के पेड़-लताएँ हैं। (वहाँ) भ्रमर गुंजारव करते रहते हैं। १४ (वहाँ) खस की बेलों का गृह (लता-मण्डप) है; उसमें शीतल पवन बहता है। पक्षी रात को (भी) बोलते रहते हैं। (उनकी मधुर) गिरा (वाणी) सुनकर राजा आनन्द को प्राप्त होकर डोलते रहते हैं। १५ सागौन, सीसम और सहिजन, अर्जुन (ककुभ), ताल, तमाल, कनेर, काम (कांब), बाबची, बदरिका (बेर), जायत्री, जायफल, झाड़बन्दी, वाटिका, टेढ़ी-मेढ़ी लताएँ, केले के बन, बिजौरा के पेड़ हैं। (वहाँ) गुणवती गोरियाँ (लड़कियाँ) एक-दूसरी से सटकर घूम रही थीं। १६-१७ मैं उस वन में गया और (यह देखकर) मुझे परिपूर्ण हर्ष हुआ। मैं अपने पाँवों को छिपाये हुए, वृक्ष-समूह में पैठकर बैठ गया। १८ (कुछ समय के पश्चात दमयन्ती की) समस्त दासियाँ निद्राधीन हुईं। चन्द्रमा सिर पर आ गया था। (तब) दमयन्ती ने माधवी नामक अपनी सखी के साथ द्यूत खेलना आरम्भ किया। १९ उस समय मैंने तुम्हारा वर्णन किया

पासे दासी बंन्यो राखी, चतुरा चोदश भाळे जी,
आ वनमां कोई जन आव्यो छे, बोली करे आ काळे जी । २१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आ काळे बोली कोण करे छे, जुए वनमां फरीफरी रे,
हंस कहे हुं हवो विस्मय, शुं वखाणुं ए सुंदरी रे ? । २२ ।

और उस स्त्री (दमयन्ती) को वह श्रवण कराया । (उसे सुनते ही) वह बाला उठ गयी और अटारी पर आ गयी । वह पैनी आँखों (दृष्टि) से देखने लगी । २० उसने अपने पास दो दासियों को ले रखा था और वह चारों दिशाओं में देखने लगी । (उसे लगा—) इस वन में कोई मनुष्य आया हुआ है और वह इस समय बोल रहा है । २१

वह वन के अन्दर बार-बार देखने लगी कि इस समय कौन बोल रहा है । (फिर) हंस (नलराज से) बोला— 'मैं विस्मित हुआ । उस सुन्दरी का मैं क्या वर्णन कर पाऊँगा ' । २२

•

कडवुं १५ मुं—(हंस द्वारा नल राजा से दमयन्ती-भेंट सम्बन्धी समाचार कहना)

राग धनाशरी

भूप में दीठी गर्वघेलडी, सखी बे मध्य ऊभी अलबेलडी,
कदळीस्थंभ जुगल साहेलडी, वच्चे वैदर्भी कनकनी वेलडी । १ ।

ढाळ

जाणे वेलडी हेमनी, अवेव फूल फूली,
चकित चित्त थयुं मारुं, ने गयो दूतत्व भूली । २ ।

कड़वक— १५ (हंस द्वारा नल राजा से दमयन्ती-भेंट सम्बन्धी समाचार कहना)

हे राजा, (रूप के) अभिमान से उन्मत्त उस नारी को मैंने देखा । वह अलबेली दो सखियों के बीच में खड़ी थी । वे दोनों सहेलियाँ (मानो) कदली-स्तम्भ थीं और उनके बीच वैदर्भी दमयन्ती स्वर्ण की लता (जैसी) थी १ । मानो वह सोने की लता थी । वह (देह रूपी) लता अंगों रूपी फूलों से फूली हुई थी । (उसे देखकर) मेरा चित्त आश्चर्य-चकित हुआ और मैं दूतत्व को भूल गया । २ आकाश में (एक) और भूमि पर (एक) आमने-सामने दो चन्द्र शोभायमान थे (एक था आकाशस्थ

सामासामा रह्या शोभे, व्योम भोम बे सोम,
इंदुमां बिंदु विराजे, जाणे उडगण भोम । ३ ।
ऊभे अमिनिधि किरण प्रगट्यां, कळा थई प्रकाश,
ज्योत-ज्योतथी स्थंभ प्रकट्यो, शुं एथी थंभ्यो आकाश ? । ४ ।
कामिनीनो परिमळ बहेके, कळा शोभे लक्ष,
शके धराधर वास लेवा, चड्यो चंदन वृक्ष । ५ ।
कुरंग-मीननी चपळता, शुं खंजन जाळे पडियां ?
नेत्रअणि अग्रे श्रवण वींध्या, सोय थई नीमडियां । ६ ।
शके नेत्र खेत्र छे मोहनुं, डोडाळां अंबुज,
भ्रुव शरासन दृष्टि शर, हाव-भाव बे भुज । ७ ।
गळस्थळ नारंग फळ शा, आदित्य इंदु अकोटी,
रक्तहेम अधर ;दंत हीरा, जिह्वा जाणे कसोटी । ८ ।

चन्द्रमा और दूसरा था दमयन्ती का मुख रूपी चन्द्रमा) । इधर (मुख-) चन्द्र पर बिन्दु (बिन्दी नामक आभूषण) शोभायमान था । जान पड़ता था कि आकाश के तारागण भूमि पर (उतरे हुए) हैं । (उसके आभूषणों में स्थित रत्न तारे जान पड़ते थे ।) ३ उन दोनों चन्द्रों से किरणें प्रकट हो रही थीं; उनकी (समस्त) कलाएँ प्रकाश से युक्त हो रही थीं । एक-एक किरण रूपी ज्योति-ज्योति से (प्रकाश-) स्तम्भ प्रकट हो रहा था । (लगता था—) क्या उन्हीं (स्तम्भों के बल) पर आकाश टिका हुआ है । ४ उस कामिनी (की देह) से सुगन्ध महक रही थी । उस (कामिनी) की लाख (-लाख) कलाएँ (अंग-प्रत्यंग का अंश-अंश) शोभायमान थीं । कदाचित शेषनाग सुगन्ध का सेवन करने के लिए (चोटी के रूप में उसके शरीर रूपी) चन्दन वृक्ष पर चढ़ गया हो । (मैंने देखा कि—) उसके नेत्रों में कुरंग (मृग) और मीन (मछली) की चपलता है । अथवा (जान पड़ा कि) क्या जाल में (दो) खंजन पक्षी पड़े हुए हैं ? (जाल में फँसे रहने के कारण वे अन्दर ही अन्दर चपलता से हिल-डुल रहे हों ।) उसकी आँखें आकर्ण हैं । जान पड़ता था कि उन) आँखों की अनियों के अग्र से उसके कान बींधे हुए हैं । वे ही (आँखों की अनियाँ) कटारें बनी हुई हैं । ५-६ जान पड़ता था कि उसके नेत्र मोह के दो क्षेत्र (खेत) हैं । उसकी पलकें कमल (की पंखुड़ियाँ) हैं । उसकी भौंहें शरासन (धनुष) हैं, तो दृष्टि बाण है । उसके हाव-भाव दो भुज हैं । (अर्थात वह हावभाव रूपी हाथों द्वारा भौंह रूपी धनुष से दृष्टि रूपी शर चलाती है) । ७ उसके गाल नारंगी के फल हैं । उसके कर्णभूषण सूर्य-चन्द्र (जैसे) हैं । उसके होंठ लाल-लाल स्वर्ण (के

कीर आनन पर श्रीखंड शोभे, कोयल बोले अणछती,
तनलता पर पंखी बेठा, नव रहेवायुं मारी वती। ९।
अधररस स्पर्शित स्वाति बिंदु, में जाण्युं करुं ग्रास,
उदर सर आभरण अंबुज, जईने पूरुं वास। १०।
नाभि नीरज पाळ मेखला, रहे गमन साथ अमारो,
रोमावलि द्रुम कुच टोडा, उरमंडळ शुं उवारो। ११।
अंग तरंग यौवन, जोतां तृप्त न थईए,
क्षुधा तृषा पीडे नहीं, रूपसुधामां रहीए। १२।
कचभूषण कदळीपत्र उपर, शब्द तेनो ऊठे,
तां बोले पंचानन प्रहारथी, शुं लागो मेगल पूठे। १३।

बने) हैं, तो दाँत हीरे (जैसे) हैं। जिह्वा मानो (लाल रंगवाली) कसौटी है (जिसके आधार से होंठ रूपी स्वर्ण तथा दाँत रूपी हीरे की परख की गयी हो)। ८ उसके मुख पर तोता और मोर विराजमान हैं (तोता नाक के रूप में और मोर उसमें पहनी हुई बेसर के रूप में; अर्थात, उसकी नाक तोते की चोंच-सी जान पड़ती है और उसकी बेसर मयूराकृति है, अथवा उसमें मयूराकृति रत्न जटित है)। (उसका स्वर सुनकर जान पड़ता था कि कहीं) कोयल छिपकर (बैठी हुई) बोल रही है। (इस प्रकार) उसकी तनु रूपी लता पर ये तीन पक्षी (तोता, मोर और कोकिल) बैठे हुए हैं। (तब) मुझसे रहा नहीं गया। ९ उसके अधरों को स्वाति-बिन्दु, अर्थात मोती (जो नाक में पहनी बेसर में था) छू रहा था। (यह देखकर) मैंने समझा (चाहा) कि मैं उसे (चुगकर) खा लूं। उसका उदर (मानो) कोई सरोवर है; उस पर धारण किया हुआ आभूषण कमल है; (तो मुझे लगा कि) जाकर मैं उस (सरोवर) में निवास कर लूं। १० उसकी नाभि (मानो) कमल है; (कटि में बँधी) मेखला (उस सरोवर का) तट है। उसकी चाल मेरी चाल के साथ, अर्थात मेरी चाल जैसी है (दमयन्ती हंस-गामिनी थी)। उसकी रोमावलि (उदर रूपी सरोवर के तट पर स्थित) वृक्ष हैं, उसके कुच कँगूरे हैं, तो (समस्त) उर-मण्डल (उस सरोवर का) घाट जैसा है। ११ उसके अंग (-प्रत्यंग) की (हलचल-स्वरूप) तरंगें उसका यौवन हैं। उन्हें देखते रहते कोई तृप्त नहीं हो सकता। उसे भूख और प्यास पीड़ा नहीं पहुँचा सकती। (इस दशा में) उसके रूप रूपी अमृत में (गोते लगाते) रह जाएँ। १२ उसकी पीठ रूपी कदली-पत्र पर उसके द्वारा बालों पर (गोफन नामक) आभूषण पहना हुआ है। उसकी ध्वनि उठ रही है। (जान पड़ता है कि) वहाँ उस आभूषण के प्रहार से उत्पन्न होनेवाले शब्द

केळ शाखाये जलज जुगम चढ्यां, गजथी पाम्या खेद,
युग्म अंबुज तांहां मळियां, मळ्यां मधुकर वेद। १४।
स्कंध पदना ते कदळी सरखा, खट तोयज तोय पाखे,
सुद्ध बुद्ध नव रही मारी, हुं बोली ऊठ्यो अभिलाखे। १५।
वदी वाणी व्योमचरनी, पड्यो मूर्च्छा खाई,
हाटकरूप देखी सखी साथे, मुजने ग्रहवा धाई। १६।
मोहबारुणी पी पड्यो, कन्याए ग्रह्यो आवी,
भुज अंबुज में पण भेद्यां, तोये मन नव लावी। १७।
नात, गाम ने नाम पूछ्युं, स्वामी तारो कोण ?
रटण रसनाए करे बांधी, एवो वरणन पोण। १८।
स्वामी नळ ने वर्णन नळनुं, दूत नळनो छुंय,
गिरि, तरुवर के धातु फळ के, कुसुम नळ ते शुंय। १९।

के रूप में कोई सिंह गरज रहा हो और वह मानो हाथी के पीछे पड़ा हो। (दौड़ रहा हो। दमयन्ती की कटि सिंह की-सी है और चाल हाथी की-सी है)। १३ दो कमल (दमयन्ती की देह में, चाल में स्थित) हाथी से खेद को प्राप्त हुए (यह हाथी कुचल डालेगा, इस आशंका से खिन्न हुए) और पदों रूपी कदली को दो शाखाओं— स्तम्भों पर चढ़ गये (वे कमल ही स्तन हैं)। वहाँ उन्हें दो और कमल (अर्थात नेत्र-कमल) मिल गये। (वहाँ) काले स्तनाग्र रूपी दो तथा नेत्रों की पुतलियों रूपी दो भ्रमर निश्चय ही मिल गये। १४ उसके पैरों के स्कन्द कदली (-स्तम्भ) सदृश हैं। (इस प्रकार) बिना पानी के (पानी का अस्तित्व न होने पर भी, वहाँ दो कर-कमल, दो स्तन-कमल, दो नेत्र-कमल— कुल) छः कमल मिल गये। (उन्हें देखकर) मुझे सुध-बुध नहीं रही। मैं (उत्कट) अभिलाषा के साथ (सहसा) बोल उठा। १५ मैं पक्षी की वाणी में बोलने लगा। (फिर भी) मूर्च्छा के आने से गिर पड़ा। मुझे स्वर्ण-रूप देखकर अपनी सखियों को साथ में लेकर वह (दमयन्ती) पकड़ने के लिए दौड़ी। १६ मैं मोह रूपी वारुणी पीकर पड़ा हुआ था; (तब) उस कन्या ने आकर मुझे पकड़ लिया। परन्तु मैंने उसके कर-कमलों को (चोंच से) काट लिया, फिर भी उसने (उस ओर) मन नहीं लगा दिया (उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया)। १७ (अनन्तर) उसने मेरी जाति, ग्राम और नाम पूछा। (और यह भी पूछा—) 'तुम्हारे कौन स्वामी हैं?— तुम इस प्रकार (मानो) उनका वर्णन करने की प्रतिज्ञा (वा प्रण) करके अपनी जिह्वा से उन (के नाम) की रट लगाये हुए हो'। १८ (इसपर मैं बोला—) 'मेरे स्वामी नल हैं और यह नल का वर्णन है। मैं नल का

प्राण नळ के उदर नळ, के जळ नळ गेहनो,
रहे तुज मळ्यो कांति कमळे, ए वरण तेनी देहनो। २०।
पर अग्र वृश्चिक आंकडो, भेद्युं निज भुजतळ,
शके तारा नाथनी एवी, काया छे कोमळ। २१।
शब्द सुणी श्यामा तणो, हुं सही रह्यो ते काळ,
तम प्रतापे तारुणीने, में नाखी मोहजाळ। २२।
अमृतघट थाये जो ऊणो, अमर पान ज्यारे करे,
वैदर्भीनी वाणी सुधा जाणी, लेई कुंभ पूरो भरे। २३।
वनितावदन विधिए कीधुं, सार शशीनुं लीधुं,
नक्षत्रनाथने लांछन भासे, कलंक लागट कीधुं। २४।
ग्रहेश ने शर्वरीपति ते, गोप्य ऊभा फरे,
वैदर्भीना वक्त्र आगळ अमर ते आरती करे। २५।
कचसमूहनी राव करवा, विधि कने कळाधर गया,
करे अरधचंद्र काढ्यो ठेसी, ते अद्यापि अंक अंगे रह्या। २६।

दूत हूं'। (तो वह बोली—) 'वह नल क्या पर्वत है या तरुवर है, वा धातु अथवा फल है, वा फूल है? १९ नल क्या प्राण है वा नल क्या उदर है, अथवा वह घर का पानी का नल है? कदाचित, तुम्हें कमल से यह कान्ति मिली है—यह उसकी देह का भी वर्ण हो। २० परन्तु तुम्हारा अग्र (चोंच) बिच्छू का डंक (सदृश) है। उससे तुमने मेरे कर-तल को काट डाला है। कदाचित, तुम्हारे स्वामी की काया ऐसी (ही) कोमल है'। २१ उस स्त्री के शब्द सुनकर मैं उस समय सहन करता रहा। आपके प्रताप से मैंने उस तरुणी पर मोह-जाल बिछा दिया। २२ जब देव अमृत-पान करते हैं, तो यदि अमृत-घट कुछ रिक्त हो जाए, तो वैदर्भी दमयन्ती की वाणी को अमृत मानकर उसे लेकर उस कुम्भ को (फिर से) पूरा भर लेते हैं। २३ विधाता ने चन्द्र का सार-तत्त्व लेकर उस स्त्री के वदन की रचना की। इससे नक्षत्र-पति चन्द्रमा में कलंक आभासित होता है—वह कलंक (उसमें) निरन्तर बना हुआ है। २४ ग्रहेश सूर्य और निशापति चन्द्र (मारे संकोच के) उससे छिपकर खड़े-खड़े घूमते रहते हैं। दमयन्ती के मुख के सामने देव तो आरती करते (उतारते) हैं। २५ मोर उसके कच समूह के बारे में शिकायत करने के लिए विधाता के पास गये। उन्होंने हाथ से अर्धचन्द्र देते हुए उन्हें ठेलकर निकाल दिया, तब से अभी तक उनके अंग में उसके चिह्न बने हुए हैं। २६ उस (दमयन्ती) की दिव्य देह को गढ़ने के लिए (विधाता ने) समस्त संसार का सार-तत्त्व ले लिया।

संसार सर्वनुं सार लीधुं, दिव्य देहडी थवा,
घडी दमयंती ने भुज खंखेर्या, तेना तो तारा हवा। २७।

जज्ञ जाग ने धर्म ध्यान तीरथ, कीधां हशे समस्त,
तेने पुण्ये पुण्यश्लोकजी, ग्रहशो दमयंतीनो हस्त। २८।

भाग्य भूप ए तमतणुं, जे वश वैदर्भी वळी,
वेविशाळ मळ्युं ने दूतत्व फळ्युं, नव शके तेनुं मन चळी। २९।

काले आमंत्रण आवशे, तमे करो तत्पर जान,
ए वात निश्चे जाणजो, तेना साक्षी श्रीभगवान। ३०।

आनंद नळ पाम्यो घणो, पण स्वप्ना सरखुं भासे,
विश्वास मन नथी आवतो, जे विवाह केई पेरे थाशे। ३१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

थाशे संबंध भीमकसुतानो, ए आश्चर्य मोटुं सर्वथा,
कहे प्रेमानंद कहुं हवे, दमयंतीनी कथा। ३२।

उससे दमयन्ती का निर्माण किया और हाथ झटकते हुए झाड़ लिये— उससे तारे निर्मित हुए। २७ हे पुण्यश्लोक राजाजी, आपने यज्ञ-याग और धर्म (-कर्म), ध्यान, तीर्थ-यात्रा सब किया है। उसके पुण्य के बल पर आप दमयन्ती का पाणिग्रहण कर लेंगे। २८ हे राजा, यह आपका भाग्य है कि वैदर्भी (प्रवृत्त होकर) वश में हो गयी। (अब) सगाई हुई (समझना), और मेरा दूतत्व (दौत्य कर्म) सफल हुआ। (अब) उसका मन विचलित नहीं हो सकेगा। २९ कल निमंत्रण आएगा। आप बारात तैयार कीजिए। यह बात निश्चित समझना। श्रीभगवान इसके साक्षी हैं।' ३० (यह सुनकर) नल बहुत आनन्द को प्राप्त हो गये; फिर भी यह उन्हें स्वप्न-जैसा आभासित हो रहा था। मन में यह विश्वास नहीं हो रहा था कि किसी प्रकार (उनका दमयन्ती से) विवाह हो जाएगा। ३१

भीमक-सुता दमयन्ती से विवाह-सम्बन्ध (स्थापित) हो जाएगा— सब प्रकार से यह एक बड़ा आश्चर्य था। प्रेमानन्द कहते हैं— मैं अब दमयन्ती की कहानी कहता हूँ। ३२

कडवुं १६ मुं—(दमयन्ती की विरह-दग्ध स्थिति को देखकर माता-पिता द्वारा उसके स्वयंवर का आयोजन करना)

राग गोडी

हंस वळावीने वळी वनिता, ज्यां पोतानुं धाम,
दमवा लाग्यो दमयंतीने, नळना विरहनो काम। १।
वखाण बाण श्यामाने वाग्यां, पंखी गयो मोह मेली,
रोमे रोमे वह्नि प्रगट्यो, लागी तालावेली। २।
घडीए घरथी बहार नीसरे, बेसे जईने अटाळी,
चंद्रकिरण अग्निथी अदकां, मारशे मुजने बाळी। ३।
वणपरण्यांने व्याकुळ करवा, व्योम वस्यो छे पापी,
शुं कहीए कमळापतिने, राहुनुं मस्तक नाख्युं कापी। ४।

कड़वक— १६ (दमयन्ती की विरह-दग्ध स्थिति को देखकर माता-पिता द्वारा उसके स्वयंवर का आयोजन करना)

हंस को बिदा करके वह वनिता (दमयन्ती) वहाँ लौट गयी, जहाँ उसका अपना घर था। नल के विरह के कारण काम-भाव दमयन्ती को पीड़ा पहुँचाने लगा। १ उस स्त्री पर (नल के हंस-कृत) बखान रूपी बाण आघात कर गये थे। (इस प्रकार) वह पक्षी (उसपर) मोहिनी डालकर चला गया। (उस स्त्री के) रोम-रोम में (काम-भाव रूपी) आग प्रकट हो गयी। उसे (उनसे मिलने के लिए) आतुरता हो गयी। २ एक घड़ी में वह घर से बाहर निकल गयी और अटारी पर जाकर बैठ गयी। (उसे जान पड़ा—) आग से अधिक (ताप वाली) चन्द्र की किरणें मुझे जलाकर मार डालेंगी। ३ मुझ अपरिणीता को व्याकुल करने के लिए यह पापी (चन्द्र) आकाश में रह रहा है। कमलापति भगवान विष्णु को (अब) क्या कहें, जिन्होंने राहु के मस्तक को काट डाला[1]। ४ सिंहिका के उस पुत्र के शरीर होता, तो मेरी चिंता

[1] राहु का मस्तक काटा जाना— राहु कश्यप से उत्पन्न सिंहिका का पुत्र था। वह दानव था। समुद्र-मन्थन द्वारा जब अमृत उपलब्ध हुआ, तो देव अमृत का पान करने लगे। उस समय प्रच्छन्न रूप से दानव अमृत पान करने के लिए आ गये। उनमें राहु भी था। सूर्य-चन्द्र ने उसे पहचाना और विष्णु को संकेत से सूचित किया, तो उन्होंने तत्काल उसका सिर काट डाला। उसके कटे सिर से केतु का निर्माण हुआ। तदनन्तर राहु-केतु सूर्य-चन्द्र से द्वेष करने लगे। राहु-केतु के कारण सूर्य-चन्द्र को ग्रहण लगता है। यदि राहु मस्तक से युक्त होता, तो वह चन्द्र को निगल डालकर नष्ट कर देता।

सिंहिकासुतने शरीर होत तो, मुजने चिंता थोडी,
सुधाकरने गळत पेटमां, बळी थात राखोडी। ५।
जळपात्र विषे इंदुबिंब दीठुं, सखीने कीधी शान,
लाव्य भोगळ रिपुने मारुं, प्रहारे पिष्ट समान। ६।
एम करतां प्रातःकाळ थयो, तारुणीने आव्यो ताव,
अन्न न भावे, निद्रा न आवे, वाततणो नहि भाव। ७।
अग्निना तणखा सरखा लागे, टाढक चरचे जेह,
वायु व्याधना बाण सरीखो, नीसरे सोंसरो देह। ८।
दुखतुं जाणी आवी राणी, जोयुं वस्त्र उघाडी,
चुंबन करीने पूछे माता, शुं दुःख छे तने माडी। ९।
लाडकवाई क्यां थकी जीवे, छे कर्म अमारां दोखी,
अक्षत उतारो दृष्टि बेठी होय, कोईनी मेली चोखी। १०।
परण्यानो ओरियो नव वीत्यो, जात सासरे समोती,
रत्न दीकरी क्यांथी जीवे, त्रण भाईनी बहेन पनोती। ११।

थोड़ी हो जाती; (क्योंकि) वह चन्द्रमा को निगलकर खा जाता, तो वह (वहाँ) जलकर राख हो जाता (और मुझे सताने के लिए जीवित न रह जाता)। ५ उस (दमयन्ती) ने जल के पात्र में चन्द्र के बिम्ब को (प्रतिबिम्बित) देखा, तो उसने अपनी सखी को आँख से संकेत किया (और कहा—), 'अगरी ले आओ, मैं शत्रु को आघात से आटे के समान बनाकर (पीसकर चूर-चूर करके) मार डालती हूँ'। ६ इस प्रकार करते-करते सबेरा हो गया। उस तरुणी को ज्वर आ गया। उसे न अन्न अच्छा लगता था, न नींद आती थी। वायु सम्बन्धी (भी) कोई इच्छा नहीं थी। ७ जो ठण्डक– ठण्डी वस्तुएँ लगाते, वे उसे आग की चिनगारियों जैसे लगती थीं। हवा के झोंके व्याध के बाण जैसे (जान पड़ते और उसे जान पड़ता कि वे) देह में से आरपार निकलते जा रहे थे। ८ दर्द होते जानते ही रानी (उसके पास) आ गयी। उसने वस्त्रों को हटाकर देखा। माता ने उसका चुम्बन करके पूछा, 'अरी मैया, तुझे क्या दुःख है? ९ यह लाड़ली (बेटी) कब तक जीवित रह जाए। (इसके लिए) हमारे कर्म (ही) दोषी हैं। (अरी,) किसी की बुरी-भली दीठ लग गयी हो, तो (इसपर से) अक्षत उतार दो। १० विवाह करने का इसका मनोरथ पूरा नहीं हुआ— इसकी बराबरी वाली (लड़कियाँ अपनी-अपनी) ससुराल जा रही हैं। यह रत्न-सी कन्या (इस स्थिति में) कब तक जीवित रह जाए। तीन भाइयों की यह (अकेली) बहिन सकुशल

आवडो ताव ते तारुणीने शो, दैवने घेर वाळ्यो डाट,
कहे कुंवरी अंतरनी आपदा, अमने थाय उचाट। १२।
मुख मरडी दमयंती बोली, घरडां माणस नठोर,
परण्यां कुंवारां कांई न प्रीछे, फोकट करवो शोर। १३।
हुं समाणी जाय सासरे, तेना जोने भोग,
तेनी पेरे मारे थाशे, आफूरो जाशे रोग। १४।
वचन सुणीने समज्यां राणी, पुत्री थई परणनारी,
भामिनीए कह्युं भीमकने, पुत्री कां लगी रखशो कुंवारी ? । १५।
वहाणुं वाय ने दुखवा आवे, जो जीवे आ वारकी,
कहोने भाएगे काळथी ऊगरे, परणावी करो पारकी। १६।
दीकरी माणस मोटी थई त्यारे, पियेर नव सोहाये,
स्वयंवर करी परणावो, जहां एनी इच्छाये। १७।
राये पुत्र तेडाव्या पोताना, कह्युं बहेनने परणावो,
देशदेशना जे राजा, दूत मोकली तेडावो। १८।

रहे। ११ इस तरुणी को इतना कैसा ताप है ? दैव ने घर का नाश कर डाला। री कुँवरी, अपने मन की विपत्ति कह दे। हमें चिन्ता हो रही है'। १२ तो मुँह टेढ़ा करके दमयन्ती बोली, 'बूढ़े लोग तो निर्लज्ज हो गये हैं; विवाहितों-अविवाहितों को वे कुछ भी नहीं समझते। व्यर्थ शोर मचाना है। १३ मेरी बराबरी वाली ससुराल जा रही हैं। उनके (सुख-) भोगों को देखो। उनकी भाँति मेरा (भी) हो जाए, तो अपना रोग (भी) चला जाएगा'। १४ वह बात सुनकर रानी समझ गयी कि पुत्री विवाह करनेवाली, अर्थात विवाह करने योग्य हो गयी है। तो उस स्त्री ने भीमक से कहा (पूछा)— 'अपनी पुत्री को कब तक क्वारी रखेंगे ? १५ यदि उस समय तक वह जीवित रहे (शीघ्र ही विवाह न करें), तो बहुत दिन बीत जाएँगे और दुःख (का समय) आ जाएगा। कहिए न, यह अपने भाग्य से (दुःखदायी) काल से बच जाएगी। इसका विवाह करा दीजिए। १६ यह कन्या अब बड़ी (सयानी) हो गयी है। तब इसका पीहर में रहना शोभा नहीं दे रहा है। स्वयंवर का आयोजन करके, इसका जहाँ इसकी इच्छा हो, वहाँ (उसके साथ) विवाह करा दीजिए'। १७ यह सुनकर राजा अपने पुत्रों को बुलाकर ले आये और उनसे कहा, 'अपनी बहिन का विवाह करा दो। देश-देश के जो राजा हों, उनके पास दूत भेजकर उन्हें बुला लाओ। १८ अन्न, धान्य, तृण (आदि) सामग्री इकट्ठा करो। मण्डपों का निर्माण करवा दो। विवाह के मंगल-

अंन धंन तृण सामग्री, मंडपने रचावो,
धवल मंगळ गीत नफेरी, अपछरा नचावो। १९।
स्वयंवरनी सामग्री मांडी, मोटा मळ्या राजन,
नळने तेडवा भीमके मोकल्यो, सुदेव नामे प्रधान। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

प्रधान नैषध मोकल्यो नारदे, कीधुं हतुं विखाण रे,
दमयंतीए पत्र पाठव्यो, वांची नळे दीधां निशाण रे। २१।

गीतों को गाने और मंगल नगाड़े (आदि बाजे) बजाने का प्रबन्ध कर दो। अप्सराओं को नचा लो'। १९ स्वयंवर की सामग्री सजाकर रख दी (गयी)। बड़े (-बड़े) राजा इकट्ठा हुए। भीमक ने नल को बुलाने के लिए सुदेव नामक (अपने) मंत्री को भेज दिया। २०

भीमक ने निषध देश में अपने मंत्री को भेज दिया। नारद ने (नल का) बखान (पहले ही) किया था। (इधर) दमयन्ती ने (भी लिखकर) पत्र भेज दिया। उसे पढ़कर नल ने नगाड़े पर चोट कर दी (नगाड़े बजवा दिये)। २१

कडवुं १७ मुं—(हंस का नल से बिदा हो जाना और नारद द्वारा देवों को दमयन्ती-स्वयंवर सम्बन्धी समाचार कहते हुए उकसाना)

राग सारंग

आवी सुदेवे आप्यो कागळ, हृदया चांपी वांचे नळ,
स्वस्ति श्री नैषधपुर गाम, पुण्यवंत पुण्यश्लोक नाम। १।
छे कालावालानी कंकोतरी, लखितंग दमयंती किंकरी,
आंहां आवी गया खगपत, कहे ते वारता मानजो सत। २।

कड़वक—१७ (हंस का नल से बिदा हो जाना और नारद द्वारा देवों को दमयन्ती-स्वयंवर सम्बन्धी समाचार कहते हुए उकसाना)

सुदेव ने आकर पत्र दिया, तो उसे हृदय से (दबाकर) लगाकर नल उसे पढ़ने लगे। "स्वस्ति॥ श्री॥ नैषधपुर ग्राम॥ पुण्यवान पुण्यश्लोक नाम॥ १ गिड़गिड़ाकर प्रार्थना करते हुए लिखित यह विवाह-पत्रिका है। लिखनेवाली है दासी दमयन्ती। यहाँ पक्षिराज (हंस) आकर (लौट) गया। वह जो समाचार कहेगा, उसे सच्चा समझिए। २

में तमने समर्प्युं गात्र, आ स्वयंवर ते निमित्त मात्र,
मीन-नीरनी करजो प्रीत, माहरा सरखुं करजो चित्त। ३।

वांच्यो कागळ ने हरख्यो नळ, तत्पर कीधुं जाननुं दळ,
अति शीघ्रे सांचरे राय, शुकने मळी सवच्छी गाय। ४।
कोरंग-कोरंगनी साथ, साहामां ऊतर्यां दक्षिण हाथ,
हंस भणे भलां शुकन, तुं दमयंती पामे राजन। ५।
विदर्भ जईने सिध कीजीए, मने आज्ञा हवे दीजीए,
वळी को समे आवीश राजन, तुं छे मारो प्राणजीवन। ६।
भाई तुजने कहुं विनति, द्यूत ना रमशो नैषधपति,
नव करशो स्त्रीनो विश्वास, ए बे थकी थाय विनाश। ७।
चाल्यो खगपति विनति करी, नळराजाए आंखडी भरी,
हंस कहे सांभळ राजन, एम करीए न काचुं मन। ८।
माता पिता सुत बांधव जेह, सर्वे वेर संबंधे मळ्युं तेह,
तारे काजे में राजा एह, खगपतिनो धार्यो देह। ९।

मैंने आपको यह देह समर्पित की है। यह स्वयंवर तो मात्र निमित्त है (बहाना है)। मछली और पानी की-सी प्रीति कीजिए। अपने चित्त को मेरे योग्य (अनुकूल) बना दीजिए। ३

नल ने पत्र को पढ़ा और वे आनन्दित हो उठे। उन्होंने बारात के लिए जन-समुदाय को सिद्ध किया। राजा नल (तत्क्षण) अति शीघ्रता से चल पड़े। (मार्ग में) शुभ शकुनस्वरूप स-वत्स गाय मिली। ४ हिरन और हिरनी साथ में (जोड़े में) सामने से दाहिनी ओर उतरकर चले गये। (यह देखकर) हंस बोला, 'ये शुभ शकुन हैं। हे राजन, आप दमयन्ती को प्राप्त करेंगे। ५ विदर्भ देश में जाकर (इस बात को) प्रमाणित कर दीजिए। अब मुझे आज्ञा दीजिए। हे राजा, मैं फिर से किसी समय आ जाऊँगा। आप तो मेरे प्राणों के (लिए) जीवन (-स्वरूप) हैं। ६ हे बन्धु, मैं आपसे विनती करता हूँ। हे नैषधपति, आप द्यूत न खेलना। स्त्री का विश्वास न करना। इन दोनों से विनाश हो जाता है'। ७ वह खगपति (पक्षिराज हंस) ऐसी विनती करके चला जाने लगा, तो नल राजा ने आँखों को (आँसुओं से) भर दिया। तो हंस बोला। 'हे राजन, सुनिए। इस प्रकार मन को कच्चा (अर्थात् धैर्य-हीन, कमजोर) न करें। ८ माता, पिता, पुत्र, बन्धुजन जो भी होते हैं, सब वैर-सम्बन्ध से मिले हैं। हे राजा, आपके (कार्य के) लिए मैंने यह पक्षिराज की देह को धारण किया है। ९ मैं पूर्व जन्म की कथा कहता

हुं छुं ब्राह्मण ने तुं छे भीलराय, पूर्वजन्मनी कहुं कथाय,
मारा घरमां हुं दुखियो थयो, काशी करवत मुकावा गयो । १० ।
एवो समो मनमां धरी, चाल्यो वनमां समर्या हरी,
अघोर वनमां भूलो पड्यो, तारे स्थानक आवी चड्यो । ११ ।
तेवा मांहे रजनी थई, द्वादश कोशमां वस्ती नहि,
तेवा वनमांहे रहेतो तुंय, त्यां आवीने चडियो हुंय । १२ ।
तारे स्थानके आवी रह्यो, त्यां तुं पण चिंतातुर थयो,
मारी आगतास्वागता करी, पण सूवानी चिंता धरी । १३ ।
नहानी हती गुफा छेक, आव्युं माणस माय न एक,
तारी साधवी नारी सुजाण, मारुं आसन कर्युं निर्वाण । १४ ।
तुं तो वीरा बहार रहियो, राक्षसे आवी तने मारियो,
मांस चरण हस्त हेठे रह्युं, नव जाणुं तेनुं शुं थयुं । १५ ।
तारी स्त्रीए तज्यो प्राण, काष्ठ भक्ष करी निरवाण,
मरतां एवुं बोली सती, ए ज वर देजो कमळापति । १६ ।

हूँ— (पूर्व जन्म का) मैं ब्राह्मण हूँ और आप भीलराज हैं। अपने घर में मैं दुःखी हुआ था। अतः काशी जाकर आरे से अपने को चीरकर देह-त्याग करने गया (जा रहा था)। १० ऐसा निश्चय मन में धारण करके, मैं वन में से जा रहा था। मैं श्रीहरि का स्मरण कर रहा था। उस अति घोर वन में मार्ग भूल गया (मार्ग-भ्रष्ट हो गया)। तो (घूमते-घूमते) अकस्मात आपके निवास-स्थान आ पहुँचा। ११ उतने में रात हो गयी। बारह कोस में कहीं बस्ती नहीं थी। उस समय आप वन में रहते थे। मैं आकर वहाँ यकायक पहुँच गया। १२ आपके निवास-स्थान में आकर मैं ठहर गया। तब आप भी चिन्तातुर हो गये। आपने मेरी आवभगत तो की, फिर भी मेरे सोने के बारे में आप चिन्ता करने लगे। १३ वह गुफा बिलकुल छोटी थी। कोई (अन्य) मनुष्य आ गया, तो उसमें वह नहीं समा पाता था। (परन्तु) आपकी साध्वी नारी सुजान थी। उसने मेरे लिए अवश्य आसन (शय्या) बिछा दिया। १४ तब भाई, आप तो (गुफा के) बाहर रह गये, तो एक राक्षस ने आकर आपको मार डाला। (आपके) मांस, चरण, हाथ नीचे पड़े रह गये। मैं नहीं जानता कि (तदनन्तर) उनका क्या हुआ। १५ तब अग्निकाष्ठ भक्षण करके (आग में जल जाकर) निर्वाण को प्राप्त होकर आपकी स्त्री ने प्राणों को त्यज डाला। मरते-मरते वह सती इस प्रकार बोली, 'हे कमलापति (भगवान विष्णु), मुझे (आगामी जन्म में) यही वर (पति) देना'। १६

एवुं ज्यारे स्त्री बोली वचन, त्यारे में विचार्यु मन,
शुं जीवुं हत्या लई करी, एने तुं मेळवजे हरि । १७ ।
एवुं कहीने हुं ते वार, पड्यो बळता अग्नि मोझार,
ते माटे पंखी अवतार, लीधो नैषधमां आ वार । १८ ।
एवो बोल खगपतिए कह्यो, शिर नामीने ऊभो रह्यो,
आज्ञा आपो तो तत्पर थाउं, अमो अमारे स्थानक जाउं । १९ ।
एवी विनंती हंसे करी, नळराये आंखडी भरी,
ए शुं बोल्यो तुं मारा वीर, तारा विना धरुं केम धीर ? । २० ।
आप्युं तें मने प्राणनुं दान, तुं छे मारो बंधु समान,
हंस कहे ते खरुं कह्युं वीर, पण सांभळ परम सुधीर । २१ ।
तारुं ऋण छूट्यो हुं भ्रात, हवे रहेवानी करीश न वात,
एम कहीने ऊड्यो आकाश, त्यारे नळे मूक्यो निःश्वास । ३२ ।
नळ पहोंतो विदर्भ देश, तहां मळ्या मोटा नरेश,
चोहोफेर सबीरनां धाम, वस्यां राजा तेटलां गाम । २३ ।

जब उस स्त्री ने ऐसी बात कही, तब मैंने मन में यह विचार किया— 'मैं हत्या को (सिर पर) लेकर जीवित क्यों रह जाऊँ ? हे हरि, आप उन्हें (फिर से अगले जन्म में) मिला देना '। १७ ऐसा कहकर मैं उस समय जलती हुई आग के अन्दर कूद पड़ा। उसके कारण इस समय मैंने निषध देश में पक्षी का अवतार (जन्म) ग्रहण किया '। १८ उस खगपति हंस ने इस प्रकार बात कही और वह सिर नवाकर खड़ा रहा। (वह बोला—) 'आप आज्ञा दीजिए, तो मैं तैयार हो जाता हूं— मैं अपने निवास-स्थान चला जाता हूँ '। १९ हंस ने ऐसी विनती की, तो नल राजा ने आँखों को (आँसुओं से) भर दिया। (वे बोले—) 'हे मेरे भाई, तुम यह क्या बोल रहे हो ? बिना तुम्हारे मैं धीरज कैसे धारण करूँ ? २० तुमने मुझे प्राणों का दान दिया है; तुम मेरे बन्धु के समान हो '। (इसपर) हंस बोला, 'हे भाई, आपने सच तो कहा है। फिर भी हे परम सुधीर (राजा), सुनिए। २१ हे भाई, आपके ऋण से मैं छूट गया हूँ (मुक्त हो गया हूं)। अब (मेरे) रहने की बात न करना '। ऐसा कहते हुए वह आकाश में उड़ गया; तब नल ने साँस ली। २२ (तदनन्तर) नल विदर्भ देश में पहुँच गये। वहाँ बड़े (-बड़े) राजा इकट्ठा हुए थे। चारों तरफ़ तम्बुओं के बने निवास-स्थान थे। राजाओं के (मानो) उतने ग्राम ही बस गये थे। २३ जैसे सागर में कोई नौका हो, वैसे (राजाओं के निवास-स्थान रूपी सागर के बीच) भीमक राजा

सागरमां नाव होये जेम, भीमकनुं नग्र दीसे तेम,
गजदळ हयदळ ने मानव, तेणे अंन थयुं मोंघुं सरव । २४ ।
रसकस साहामुं नव जोवाय, तृण जळ टांके तोळाय,
रंक लोकनी चाले अरज ना, माग्यां मूल आपे गरजना । २५ ।
भीमक ले सर्वनो तपास, छे जोईए ते फेरवे दास,
नगर भरायुं खचखची, राये मंडप-रचना रची । २६ ।
हींडोळा बांध्या धारणे, कदळी स्तंभ रोप्या बारणे,
चित्रामण चीतरियां भींत, नाना प्रकारनी करी रीत । २७ ।
मंडप लींप्यो कनकनी गार, साहामा साहामी आसननी हार,
जेहने जांहां बेठानो ठाम, तांहां राजानां लखियां नाम । २८ ।
ए कथा एटलेथी रही, एक नवीन वारता थई,
नारदने कलहनी टेव, गया स्वर्ग जांहां बेठा देव । २९ ।
पूज्या-अर्च्या प्रीत अपार, तव इंद्र पूछे समाचार,
कहो ऋषि पृथ्वीनी पेर, को पुरुष न आवे अमारे घेर । ३० ।

का नगर दिखायी दे रहा था। हस्ति-दल, अश्व-दल और मानव (पदाति) दल (इकट्ठा हुए) थे। उससे समस्त अन्न महँगा (दुर्लभ) हो गया था। २४ रस-कस वाली, अर्थात घी, तेल, अनाज आदि वस्तुएँ तो सामने दिखायी तक नहीं दे रही थीं (इतनी वे दुर्लभ हो गयी थीं)। तृण, जल तो काँटे पर तोला जा रहा था। रंक लोगों की कोई विनती नहीं चलती थी (नहीं मानी जाती थी); क्योंकि धनी-मानी लोग मुँह-माँगा दाम आवश्यक वस्तुओं के लिए देते थे। २५ (फिर भी) राजा भीमक उन सबकी देखभाल करते थे। जो (लोगों को) चाहिए था, उसे वे दासों द्वारा पहुँचवा देते थे। नगर खचाखच भराये गये थे। राजा ने मण्डप का निर्माण कर दिया। २६ धरनों पर झूले बाँधे; द्वार पर केले के स्तम्भ खड़े कर दिये। दीवारों को नाना प्रकार की प्रणालियों की चित्रकारी से चित्रित कर दिया। २७ मण्डप को सोने के गारे से लीपा-पोता। आमने-सामने आसनों की पंक्तियाँ लगा दीं। जिस-जिसका जहाँ बैठने का स्थान हो, वहाँ राजाओं के नाम लिख दिये। २८ यह कथा इतनी ही से रह जाए। (इधर) एक नई घटना घटी। नारद की तो कलह लगाने की टेव है। वे (तब) स्वर्ग में गये, जहाँ देव बैठे हुए थे। २९ इन्द्र ने अपार प्रीति से उनका पूजन-अर्चन किया; तब उन्होंने समाचार पूछा। (इन्द्र बोले—) 'हे ऋषि, पृथ्वी पर का समाचार (हाल-चाल) बताइए। (आजकल) कोई पुरुष हमारे घर नहीं आ रहा है। ३०

पृथ्वीमां पडती साधुनी काये, ते आवता स्वर्गमांहे,
अमरावतीनो सूनो घाट, जमपुरनी वहे छे वाट। ३१।
जमपुर भराई वस्युं, आंहां को नावे ते कारण कशुं,
कहे नारद सांभळीए सत्य, हवडां मनुष्य जाये अवगत्य। ३२।
दमयंती दमयंती करता मरे, ते सर्व जमपुरी सांचरे,
त्यां स्वयंवर मंडायो आज, मळ्या छे पृथ्वीना राज। ३३।
शुं अप्सरानां वोहो छो वना, दमयंतीनी दासी देवांगना,
विदर्भ देश ने कुंदनपुर, जाओ जोवा शुं बेठा सुर। ३४।
कही नारद थया अंतरधान, छाना देव थया सावधान,
संभारी रूप मनमां फूलता, चार देवने लागी ललुता। ३५।
इंद्र अग्नि वरुण ने जम, ऊठी चाल्या जे ज्यम त्यम।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ज्यम त्यम चाल्या देवता, धरी जाजवां रूप रे,
विदर्भ गया मनभंग थया, देखी नळनुं रूप रे। ३६।

पृथ्वी पर साधुओं की देह छूट जाती है, तब वे स्वर्ग में आ जाते हैं। (परन्तु आजकल) अमरावती का घाट सूना पड़ गया है और यमपुरी का मार्ग बहता रहता है। ३१ यमपुर तो भरा-पूरा बसा हुआ है। यहाँ कोई नहीं आ रहा है, उसका कैसा (क्या) कारण है ?' तो नारदजी बोले, "सच्ची बात सुनिए। अब मनुष्य अवगति को प्राप्त हो रहे हैं। ३२ वे 'दमयन्ती', 'दमयन्ती' कहते-कहते मर रहे हैं। वे सब यमपुरी में चले जाते हैं। वहाँ (कुन्दनपुर में) आज स्वयंवर का आयोजन किया जा रहा है। (वहाँ) पृथ्वी के राजा इकट्ठा हुए हैं। ३३ तुम अप्सराओं के हावभाव में क्या बहते जा रहे हो ? देवांगनाएँ तो दमयन्ती की दासियाँ (जैसी जान पड़ती) हैं। विदर्भ देश और कुन्दनपुर को देखने के लिए जाओ। हे देव, बैठे क्या हो ?" ३४ यह कहकर नारद अन्तर्धान हो गये। देव चुप और सावधान हो गये। अपने रूप का स्मरण करते हुए चार देव मन में अभिमान से फूल उठे। उन्हें लोलुपता अनुभव होने लगी। इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम उठकर जैसे-वैसे चल पड़े। ३५

वे देव विविध रूप धारण करके जैसे-तैसे चल पड़े। वे विदर्भ देश में गये, तो नल के रूप को देखकर वे मनोभंग को प्राप्त हो गये (उनके मनोरथ भग्न हो गये, वे निराश हो गये)। ३६

कडवुं १८ मुं—(इंद्र आदि देवों का नल राजा से मिलना)

राग सारंग

नळने जोवा इंद्र रह्या छे, एटले आव्या जम जी,
अग्नि वरुण पूंठेथी आव्या, पूछे मांहोमांहे क्यम जी। १।
अन्योन्ये चोरी करता, बोले जूजवाँ काम जी,
चारे देव मांहोमांहे छेतरे, न ले परण्यानुं नाम जी। २।
अग्नि कहे शुं अधर्म बोलवुं, सर्व दमयंतीना लोभी जी,
मनना मनोरथो राखो मनमां, नळ आगळ कांति न शोभी जी। ३।
पछे ताळी देई हस्या मांहोमांहे, कपट कीधुं त्याग जी,
स्वयंवरमां चारे जई जोईए, कोहोनुं फळशे भाग्य जी। ४।
वरुण भणे वैद्रभी वर्यानी, मूको मननी आशा जी,
परणशे नळ आपणा फजेता, छेदाशे अधरशुं नासा जी। ५।
अग्नि कहे हो वासव राजा, मूको हैयानो हर्ष जी,
दमयंतीने तमो न पामो, जो तपो शत वर्ष जी। ६।
भीमकसुताने आलिंगन नहि दे, अभागियां आपणां गात्र जी
वीरसेनसुतआगळ विष्णु न पामे, तो आपण कोण मात्र जी। ७।

कड़वक— १८ (इंद्र आदि देवों का नल राजा से मिलना)

इन्द्र नल को देखते ही रहे थे, उतने में (वहाँ) यम आ गये। अग्नि और वरुण पीछे से आ गये। वे (एक-दूसरे से) आपस में पूछने लगे— 'कैसे हैं'। १ अन्य-अन्य देवों ने चोरी करते हुए (अर्थात सच्ची बात को छिपाते हुए) भिन्न-भिन्न काम कह दिये। वे चारों देव आपस में एक-दूसरे को ठग रहे थे। उन्होंने विवाह का नाम नहीं लिया। २ (परन्तु अन्त में) अग्नि ने कहा, 'अधर्म की बात, अर्थात झूठ क्या बोलना ? (हम) सब तो दमयन्ती के लोभी हैं। मन की कामनाएँ मन में रखो। नल के सामने (हमारी) कान्ति शोभायमान नहीं है'। ३ अनन्तर वे आपस में ताली बजाकर हँसने लगे। उन्होंने कपट का त्याग किया। (वे फिर बोले—) 'चारों स्वयंवर (-मण्डप) में जाकर देखें कि किसका भाग्य फल को प्राप्त हो जाएगा'। ४ वरुण बोले, 'वैदर्भी (दमयन्ती) का वरण करने की मन की आशा छोड़ दो। वह नल का वरण करेगी, तो अपनी दुर्दशा हो जाएगी। हमारे होंठों-सहित नाक काट दी जाएगी'। ५ तो अग्नि बोले, 'हे राजा इन्द्र, अपने हृदय का हर्ष त्यज दो। यदि सौ वर्ष तपस्या करोगे, तो भी तुम दमयन्ती को नहीं प्राप्त कर पाओगे। ६

जदपि मनसा नळनी मूकी, आपणी ममता करे जी,
गुणविहोणी जो होय दययंती, बला आपणी वरे जी। ८।
लक्षणविहोणी दमयंती छे, रूप यौवन उन्मत्त जी,
गोळ मूकीने खोळने खाये, नोहे चतुर पशुवत जी। ९।
बेउ प्रकारे एहने न वरवी, माटे पाछा फरवुं जी,
माणस वरे ने देव फरे एथी, आपे भलुं मरवुं जी। १०।
शक्र कहे नळराज्ने, जमराज लो जमलोक जी,
आफणीए आपणे वरशे, थशे हंसनुं कीधुं फोक जी। ११।
वरुण भणे जे ए शी ललुता, वणखूटे मरे क्यम जी,
एम चालतुं होय तो लउं दमयंतीने, एम कहेवा लाग्या जम जी। १२।
अग्नि कहे रे भलो श्रम कीजे, कदापि थाय साचो जी,
दमयंती भणी दूत थई जाय, चारे नळने जाचो जी। १३।
पछे नळ पासे आव्या स्वर्गवासी, वेश विप्रनो धारी जी,
त्रिपुंड ताण्यां पुस्तक करमां, ग्रही सुंदर झारी जी। १४।

हमारे गात्र (शरीर) अभागे हैं; (क्योंकि) भीमक की कन्या का आलिंगन वे नहीं कर पाएँगे। वीरसेन-पुत्र नल के सामने (होते हुए) विष्णु (तक) उस (दमयन्ती) को प्राप्त नहीं कर सकते, तो हम किस मात्रा में (गिनती में) हैं। ७ यद्यपि यह दमयन्ती नल-सम्बन्धी अपनी ममता छोड़कर हमारे प्रति प्रेम करने लगे, यद्यपि दमयन्ती गुण-बिहीन (सिद्ध) हो, तो भी हमारी बला उसका वरण करे। ८ दमयन्ती (देवों के) लक्षणों से रहित है। वह अपने रूप और यौवन के कारण उन्मत्त हुई है। (अतः) गुड़ को छोड़कर खली को खा जाएँ —ऐसे पशु की भाँति हम चतुर नहीं हैं। ९ दोनों प्रकार से उसका वरण (अब) नहीं करना है। इसलिए पीछे लौटना है। वह मनुष्य का वरण करे। इसलिए देव लौटकर चलें। (इसकी अपेक्षा) अपने आप मरना अच्छा है'। १० (इसपर) इन्द्र बोले, 'हे यमराज, तुम नल राजा को यमलोक ले लो (ले जाओ)। उससे वह (दमयन्ती) अपने आप हमारा वरण करेगी। (उससे) हंस का किया हुआ (परिश्रम) व्यर्थ सिद्ध हो जाएगा'। ११ वरुण बोले, 'यदि (हम में) ऐसी लोलुपता हो, तो बिना उसकी पूर्ति किये कैसे मर जाएँ ?' यम इस प्रकार कहने लगे— 'ऐसा चलता हो, तो मैं दमयन्ती को लेता हूँ'। १२ (इसपर) अग्नि बोले— 'अच्छा परिश्रम (यत्न) कर लो— कदाचित सच्चा (सफल) हो जाए। हम चारों जने नल से यह प्रार्थना करें कि वे (हमारे) दूत बनकर दमयन्ती के प्रति चले जाएँ'। १३

नळे निर्मळ ब्राह्मण दीठा, आप्यां आदरमान जी,
आसन आपी पूजा कीधी, पछे पूछे राजान जी। १५।
कामकाज अम सरखुं कहीए, हरि मोहोटा छे करनार जी
विप्र कहे अमो आप्या छैए, तुंने जाणी गुण-भंडार जी। १६।
नळ कहे जे मागो ते आपुं, मानजो अवश्यमेव जी,
वचन लेई विप्र-वेश मूकीने, थया प्रत्यक्ष देव जी। १७।
वज्रपाश ज्वाळा ग्रही, जमे ग्रह्यो जमदंड जी,
झळहळ मंदिर थई रह्यां, जाणे उदया मार्तंड जी। १८।
चकित राजा थई रह्यो, करतो दंड प्रणाम जी,
नळ विना को देखे नहीं रे, देव रूपनां धाम जी। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रूपधाम ते देवता, विनति नळरायने करे रे,
तुं दूत थई जा कन्या कने जो, दमयंती अमने वरे रे। २०।

अनन्तर वे स्वर्ग के निवासी देव ब्राह्मणों का वेश धारण करके नल के पास आ गये। उन्होंने त्रिपुण्ड अंकित किया, हाथों में पुस्तक और सुन्दर झारी ग्रहण की। १४ नल ने जब उन निर्मल (पवित्र) ब्राह्मणों को देखा, तो उन्हें आदर-सम्मान प्रदान किया (उनका आदर-पूर्वक सम्मान किया)। उन्हें आसन प्रदान करके उनका पूजन किया। अनन्तर राजा (नल) ने उनसे पूछा (कहा)। १५ 'मेरे योग्य कोई कामकाज कहिए। श्रीहरि बड़े करनेवाले हैं'। तो विप्र बोले, 'तुम्हें गुणों का भण्डार समझकर आ गये हैं'। १६ तो नल बोले, 'जो आप माँग लेंगे, वह दे दूंगा। इसे अवश्य (सत्य) ही समझिए'। (इस प्रकार) अभिवचन लेकर वे ब्राह्मण-वेश त्यजकर प्रत्यक्ष देव-रूप हो गये। १७ इन्द्र, वरुण और अग्नि ने (क्रमशः) वज्र, पाश, ज्वाला ग्रहण की; यम ने यम-दण्ड ग्रहण किया। उस मन्दिर को जगमगा देते हुए वे वहाँ प्रस्तुत हो गये— मानो सूर्य ही उदित हुए हों। १८ नल (यह देखकर) चकित हो गये। उन्होंने उनको दण्डवत् प्रणाम किया। नल के अतिरिक्त कोई अन्य रूप के धाम उन देवों को नहीं देख सका। १९

वे देवता रूप के निवास-स्थान थे। नलराज से उन्होंने विनती की— 'यदि आप (हमारे) दूत बनकर कन्या दमयन्ती के पास जाएँगे तो वह हमारा वरण करेगी'। २०

कडवुं १९ मुं—(देवों के दूत के रूप में नल का दमयन्ती के अन्तःपुर में आगमन)

राग बेहागडो

देव कहे हो राजा मित्र, पुण्यश्लोक परम पवित्र,
कृपा करी कन्या कने जाओ, वेविशाळिया अमारा थाओ । १ ।
महिलाने मारो मोहनां वाण, चारे चतुरनां करजो वखाण,
भाग्य होशे तेहने वरशे, जेहेना कर्मनुं पांदडुं फरशे । २ ।
नळ कहे रक्षक बळिया होय, मुने पेसवा नव दे कोय,
देव कहे जाओ जोगीने वेखे, दमयंती विना को नव देखे । ३ ।
चारे करे नळने अणसारा, बे गुण अदका बोलजो मारा,
एवुं सांभळी चाल्यो नळराय, त्यारे देवने विमासण थाय । ४ ।
रूपवंत नळने रे जोशे, कन्यानुं सधे मन मोहोशे,
वात कहे नहीं आपणी वरणी, वेविशाळियो बेसशे परणी । ५ ।
दृष्टेदृष्ट ज्यारे मळशे, गुण आपणा नव सांभळशे,
नळने लेवडाव्यो जोगीनो वेष, शीखव्युं तेम करजो विशेष । ६ ।

कड़वक— १९ (देवों के दूत के रूप में नल का दमयन्ती के अन्तःपुर में आगमन)

देव बोले, 'हे मित्र राजा, आप परम पवित्र पुण्यश्लोक हैं। कृपा करके आप उस कन्या के प्रति जाइए और हमारे लिए (विवाह करानेवाले) मध्यस्थ बन जाइए। १ उस महिला पर मोह के बाण चला दीजिए और हम चारों चतुर (देवों) की प्रशंसा करना। जिसके कर्म का पत्ता पलटेगा, अर्थात् जिसके भाग्य जग जाएँगे, जिसके भाग्य (अनुकूल) होंगे, वह उसका वरण करेगी'। २ (यह सुनकर) नल बोले, '(वहाँ तो) बलवान रखवाले होंगे; मुझे कोई (भी अन्दर) पैठने नहीं देगा'। तो देव बोले, 'आप योगी के वेश में जाइए। दमयन्ती के बिना, कोई आपको देख नहीं पाएगा'। ३ उन चारों ने नल को सूचनाएँ कर दीं—'हमारे दो (-एक) विशिष्ट गुण कह देना'। ऐसा सुनकर नलराज चल पड़े, तो तब देवों को यह चिन्ता उत्पन्न हुई। ४ (वे बोले—) 'अरे, वह (जब आप) रूपवान नल को देखेगी, तो उस कन्या का मन पूर्ण रूप से आप मोहित कर लेंगे। (अतः) अपनी बात का वर्णन करके न कहिए। (नहीं तो) मध्यस्थ ही विवाह कर बैठेगा। ५ जब आप दृष्टि-दृष्टि से अर्थात् आमने-सामने एक-दूसरे से मिलेंगे, तो आप अपने गुणों की ओर ध्यान नहीं देंगे'। (ऐसा कहते हुए) उन्होंने नल को योगी का वेश धारण करा दिया (और फिर कहा—) 'जैसे सिखाया है, वैसी ही विशेषतः

रूप पालटीने नळ पळीओ, देवे अनुचर एक मोकलीओ,
दूतने देखे नहीं नळराय, आगळ पाछळ बंन्यो जाय। ७ ।
पेठा घरमां पाधरा दोर, को नव देखे देहीना चोर,
ज्यां दमयंतीनु अंतःपुर, त्यां आव्यो नळराय शूर। ८ ।
दीठी देवकन्या जेवी दास, जे रमती राणीनी पास,
कोई नायका तो त्यां नाहाती, कोई कन्याना गुण गाती। ९ ।
कोई श्यामळी ने कोई गोरी, कोई मुग्धा ने कोई छोरी,
कोई काम करंती हेठले माले, कोई वस्त्र बांधे घडी वाळे। १० ।
रहे आप आपणे साजे, हार गूंथती कन्या काजे,
एम जोयो हेठले माळे, पछे बीजे चडचो भूपाळ। ११ ।
त्यां दासीनु जूथ जोयुं, पछे चडचो ज्यां त्रीभोयुं,
वसे छे दमयंती नारी, सहस्र दासी सेवा करनारी। १२ ।
केटली गान करे स्वर झीणा, को नाचे वजाडे वीणा,
वाते रीझवती चतुरसुजाण, केटली करती कन्यानु विखाण। १३ ।

(बात) करना।' ६ (जब) रूप को बदलकर नल चल पड़े, तो देवों ने (उनके पीछे-पीछे एक अनुचर को भेज दिया। नलराज तो (देवों के) उस दूत को नहीं देख रहे थे। वे दोनों (इस प्रकार एक-दूसरे के) आगे-पीछे जारहे थे। ७ वे दोनों सीधे घर में प्रविष्ट हो गये। देह के चोरों अर्थात् अदृश्य देह वाले उन (दोनों) को किसी ने नहीं देखा। जहाँ दमयन्ती का अन्तःपुर था, वहाँ शूर नल राजा आ गये। ८ उन्होंने देवकन्या जैसी दासी को देखा, जो रानी के पास (साथ) खेल रही थी। कुछ नायिकाएँ अर्थात नारियाँ तो वहाँ नहा रही थीं; कोई-कोई उस कन्या (दमयन्ती) के गुणों का गान कर रही थीं। ९ कोई श्यामवर्ण की थी, तो कोई गोरी थी; कोई मुग्धा थी, तो कोई किशोरी थी। कोई नीचे वाले खण्ड (मंज़िल) में काम कर रही थी; कोई वस्त्र इकट्ठा कर रही थी, तो कोई उन्हें तह कर रही थी। कन्या (दमयन्ती) के लिए कोई (पुष्प-) हार बना रही थी। इस प्रकार, राजा नल ने नीचे के खण्ड में देखा। अनन्तर वे दूसरे खण्ड पर चढ़ गये। १०-११ वहाँ दासियों के वृन्द को देखा, तो फिर वे (वहाँ) चढ़ गये, जहाँ तीसरा खण्ड (मंज़िल) था। वहाँ नारी दमयन्ती रहती थी; (वहाँ) उसकी सेवा करनेवाली (एक) सहस्र दासियाँ थीं। १२ कितनी ही (अनेकानेक दासियाँ) कोमल स्वर में गायन कर रही थीं; कोई-कोई नाच रही थीं; कोई-कोई वीणा बजा रही थीं। कुछ चतुर-सुजान (दासियाँ दमयन्ती को) बातों से रिझा रही थीं, तो कितनी ही उस कन्या की प्रशंसा कर रही थीं। १३ वहाँ (अन्तःपुर के)

एकांत त्यां छे ओरडी, हींडोळा गांध्या हीर दोरडी,
हरिवदनी बेठी हींचे, दासी केशमां धूपेल सींचे । १४ ।
किंकर पासे माथुं गूंथावे, कहे सेंथो रखे वांको आवे,
भींत मांहे जडिया खाप, वण धरे दीसे छे आप । १५ ।
आगळ दमयंती पाछळ दासी, साहामां प्रतिबिंब रह्यां प्रकाशी,
मुखकमळ कन्यानुं झळके, सामो चंद्र बीजो जाणे चळके । १६ ।
शोभे नारी जोबनधाम, मुखे नळराजानुं नाम,
एवुं भूपतिए रूप जोयुं, मोहबाणे मनडुं परोयुं । १७ ।
अंगरंगथी आडो आंक, मोह्या देव तणो शो बांक ?
चारमां कोनुं भायग फळशे ? रत्न आ कर कोने चढशे ? । १८ ।
मुंने परणत मननी रचे, अंतराई थया देव आवी वचे,
भलुं भावी पदार्थ थयो, नळे विवेक मनमां ग्रह्यो । १९ ।

उस दालान में एकान्त था; (वहाँ) रेशम की डोरियों से झूले बाँधे हुए थे। वह चन्द्रवदना (दमयन्ती) एक झूले पर बैठकर पेंग ले रही थी। कोई एक दासी उसके बालों में सुगन्धि-युक्त मसाले वाला तेल सींच रही थी (लगाकर मल रही थी) । १४ वह दासी द्वारा बाल गुँथा रही थी। उसने कहा, 'शायद माँग टेढ़ी निकल रही है'। दीवार में दर्पण जड़ाये हुए थे। इसलिए बिना (दर्पण सामने धरे) अपने आपको (कोई भी) देख सकता था । १५ दमयन्ती आगे थी, दासी पीछे थी। सामने (दर्पण में) उनके प्रतिबिम्ब प्रकट होकर (दिखायी दे) रहे थे। उस कन्या का मुख-कमल झलक रहा था। मानो सामने (दर्पण में प्रतिबिम्ब के रूप में) दूसरा चन्द्र ही चमक रहा था । १६ (साक्षात्) यौवन धाम-स्वरूप वह नारी शोभायमान दिखायी दे रही थी। उसके मुख में नल राजा का नाम था। (वह नल राजा के नाम का जाप कर रही थी)। इस प्रकार (नल) राजा ने उसके रूप को (उसके प्रतिबिम्ब को) देखा, तो मोह रूपी बाण से उनका मन बिंध गया । १७ (उन्हें लगा—) यहाँ तो अंग-रंग- (कांति) की चरम सीमा है। देव (इसके प्रति) मोहित हो गये, इसमें उनका क्या दोष है ? उन चारों में से किसका भाग्य फल को प्राप्त हो जाएगा ? यह रत्न किसके हाथ आ जाएगा । १८ इसने तो मन की रुचि से (चाह) से मेरा वरण किया है; (परन्तु) ये देव आकर बीच में विघ्न हो गये हैं। जो हुआ, सो भावी के विचार से अच्छा ही हुआ। (ऐसा विचार करते हुए) नल ने मन में विवेक धारण किया । १९

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ग्रह्यो विवेक शोकने तजी, ज्ञान ते हृदये धरे रे,
सत्य पोतानुं पाळवा, देवनुं मागुं करे रे । २० ।

नल ने शोक को त्यजकर विवेक धारण किया; हृदय में ज्ञान धारण किया। अपने वचन का निर्वाह करने के लिए उन्होंने देवों की माँगी (कही हुई) बात की (करने के लिए वे तैयार हो गये) । २०

कडवुं २० मुं—(नल और दमयन्ती का दृष्टि-मिलन)

राग सामेरी

बैठी दमयंती शीश गूंथावा, स्वयंवरने सांतरी थावा,
सामी भींतमां जडी छे खाप, वण धरे दीसे छे आप । १ ।

ढाळ

आ दीसे वण धरे, प्रतिबिंब जोती दृष्टे,
दासी ने दमयंती बेठां, नळ आवी रह्यो छे पृष्ठे । २ ।
प्रतिबिंब पड्युं दर्पणमां, प्रेमदाए दीठो पूर्ष,
गई खूणे नहासी तेडी दासी, शुं बेसी रही छे मूर्ख ? । ३ ।
माधवी वळतुं वदे बाई, शा माटे नहासी गयां ?
में को न दीठुं तमे देखी, आवडुं शुं विस्मय थयां ? । ४ ।

कड़वक-- २० (नल और दमयन्ती का दृष्टि-मिलन)

स्वयंवर (-मण्डप में जाने) के लिए योग्य होने के हेतु दमयन्ती सिर अर्थात बेनी गुँथवाने बैठी थी। सामने वाली दीवार में दर्पण जड़ा हुआ था। (इसलिए) बिना (दर्पण सामने) धरे, वह अपने आपको दिखायी दे सकती थी। १

बिना (दर्पण) धरे, वह अपने आपको दिखायी दे रही थी। वह अपनी दृष्टि से प्रतिबिम्ब देखती थी। दासी और दमयन्ती (वहाँ) बैठी हुई थीं, तो नल राजा पीछे आकर (खड़े) रह गये थे। २ उनका प्रतिबिम्ब दर्पण में पड़ा था। उस प्रमदा ने पुरुष (-प्रतिबिम्ब) को देखा। तो वह दौड़ती हुई कोने में गयी और दासी को बुला लायी। (वह बोली—) 'री मूर्ख, क्या बैठी हुई है ?' ३ तो (दासी) माधवी

घेली तहारी मीट मस्तकमां, में दर्पण राख्युं दृष्टिमां,
स्वरूप दीठुं दिव्य नळनुं, न मळे बीजो सृष्टिमां। ५।
वेश छे वेरागीनो जाणे, नाटक कोएक लाव्यो,
शके तो ए प्राणजीवन, नळराय निश्चय आव्यो। ६।
साहेली कहे प्रीछो तमो, कां दीठुं छे जे झंखना,
नळ आवी ते केम शके ज्यां, ना आवे प्राणी पंखना। ७।
कामनी कहे ते प्रीछीयुं, तुं दासी माणसनो अवतार,
न माने तो आव कौतक, देखाडुं बीजी वार। ८।
पुनरपि बेठां पूंठे पूंठे, दर्पणमां मीट जोड,
स्वरूप नळनुं देखाड्युं, जेनी कांति कंदर्प क्रोड। ९।
दासी राणी थयां बेठां, झलकारे झबकी वीजळी,
दमयंती कहे दासीने कां, महारी वात कहेवी मळी। १०।
पछे स्तुति मांडी श्यामाए, अंतरपट आडो धरी,
दिव्यस्वरूप द्यो रे देखता, त्यारे नळे देह प्रकट करी। ११।

ने प्रत्युत्तर में कहा, 'हे देवी, आप किसलिए दौड़कर गयीं ? मैंने तो किसी को नहीं देखा; आपने (कहाँ) देखा। इतनी क्यों विस्मित हो गयी हैं'। ४ (दमयन्ती बोली—) 'अरी पगली, तेरी नजर मस्तक में है। मैंने दृष्टि में दर्पण रखा है (आँखों के सामने दर्पण रखा है)। मैंने नल के दिव्य स्वरूप को देखा, ऐसा (स्वरूप) सृष्टि में कोई दूसरा नहीं मिल सकता। ५ जान पड़ता है, उनका वेश बैरागी का है। वे कोई-एक नाटक (के पात्र अर्थात अभिनेता का-सा) वेश लाये हैं। कदाचित, निश्चय ही वे (मेरे) प्राण-जीवन नलराज आये हैं'। ६ (यह सुनकर) वह सखी बोली, 'परख लीजिए; कुछ (सचमुच) देखा है कि आतुरता-पूर्वक चिन्तन करते रहने से केवल आभास हुआ है। जहाँ पंख-धारी कोई प्राणी तक नहीं आ सकता, वहाँ नल तो किस प्रकार आ सकेंगे'। ७ वह कामिनी (दमयन्ती) बोली, 'तू (ही) परीक्षा कर। तू दासी-जन का अवतार है। नहीं मानती तो आ जा, मैं दूसरी बार वह कौतुक दिखा देती हूँ'। ८ (तत्पश्चात्) वे (दोनों) पीछे-पीछे दर्पण की ओर दृष्टि लगाये बैठ गयीं। (दमयन्ती ने फिर दासी को) नल का वह रूप (प्रतिबिम्ब) दिखा दिया, जिसकी कांति कोटि-कोटि कामदेवों की-सी थी। ९ (फिर वहाँ) दासी और रानी (दमयन्ती) चकित होकर बैठ गयीं, तो सामने चमकारे के साथ बिजली चमक गयी। (तब) दमयन्ती दासी से बोली, 'क्यों ? तू मेरी बात सच्ची पा गयी'। १० अनन्तर उस स्त्री ने अन्तरपट (पर्दा) आड़े धरे उन (नल) की स्तुति करना आरम्भ किया। (वह बोली—)

आपी आसन करी पूजन, पछे पूछे किंकरी,
कहो देवपुरुष कांहांथी आव्या, वेश जोगीनो धरी। १२।
नळ कहे तुं नीच माणस, केम वदुं हुं वैखरी ?
दमयंती पूछे तो बोलुं, नहीं तर जाउं पाछो फरी। १३।
दमयंती कहे देव जद्यपि, पण थई आव्या संन्यासी,
कपट रूपने कन्या केम पूछे, माटे पूछे दासी। १४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

दासी संन्यासी जोग छे, केवळ नोहे अतीत रे,
वचन सुणीने नळ मन हरख्यो, हरी लीधुं चित्त रे। १५।

'अपने दिव्य स्वरूप को तो दिखा देना'। तब नल ने अपने शरीर को प्रकट किया। ११ उनको आसन देकर उनका पूजन करने के पश्चात उस दासी ने पूछा। 'कहिए हे देवपुरुष, जोगी का वेश धारण करके आप कहाँ से आ गये हैं ?' १२ तो नल बोले, 'तू नीच श्रेणी की मनुष्य है। मैं तुझसे किस प्रकार बात कहूँ ? यदि दमयन्ती पूछे (कहे), तो बोलूँगा, नहीं तो मुड़कर पीछे लौट जाऊँगा'। १३ तब दमयन्ती बोली, 'यद्यपि ये देव हैं, फिर भी संन्यासी बनकर आये हैं। आप कपट-रूप धारी से कोई कन्या बात कैसे पूछ (करे) ? इसलिए यह दासी पूछताछ कर रही है (बोल रही है)। १४

दासी (द्वारा बोलना) संन्यासी के लिए योग्य है। परन्तु आप केवल जोगी-अतिथि नहीं हैं'। यह बात सुनकर नल का मन आनन्दित हो उठा। उनके चित्त का उसने हरण कर लिया। १५

कडवुं २१ मुं—(नल द्वारा दमयन्ती को देवों में से किसी एक का वरण करने का उपदेश देना)

राग मारु

मन मोह पाम्यो महीपति, धन्य देव, जे वरशे सती,
भोगी भूपने भामिनी भोग्य, घटे देवने, अमो अयोग्य। १।

कड़वक —२१ (नल द्वारा दमयन्ती को देवों में से किसी एक का वरण करने का उपदेश देना)

(दमयन्ती को देखकर) महीपति नल का मन मोह को प्राप्त हुआ। (उन्होंने माना कि) यदि देव इस सती का वरण कर सकेंगे, तो वे धन्य होंगे।

नारी प्रत्ये नळ एम कहे छे, जो तुं जोगीरूपने लहे छे,
अमो न जाउं विषयानी वाटे, अहींयां आव्यो तुं साधवी माटे । २ ।
हुं तो दूत छुं देवतातणो. पाळुं छुं आचार आपणो,
तारुं पूर्वजन्मनुं पुन्य, भाग्य मांहीं कांई नथी न्यून । ३ ।
जे देवदूत घेर आव्यो, मोदवर्धन वारता लाव्यो,
अळगुं करोने अंतरपट, करुं वात आणीने ऊलट । ४ ।
अमो रूप कोटान कोट धरुं, तजी स्वारथ परमार्थ करुं,
सांभळीने बोल रसाळा, पट तजीने नीसरी बाळा । ५ ।
परिस्वेद मुक्ता रह्यां टपकी, बहार नीसरी वीजळी झबकी,
हींडतां हाले ज्यम द्रुमवेली, नळ निकट थई गर्वघेली । ६ ।
तारुणीनो प्रताप न मायो, झबकारे नळ झंखवायो,
दीठी मदपूरण मातंगी, नळ तकिये बेठो उठंगी । ७ ।

कोई (मानव) राजा भोक्ता और यह भामिनी (उसके लिए) भोग्या हो (कैसे) ? यह तो देवों के लिए उचित है। मैं (इसके लिए) अयोग्य हूँ। १ अनन्तर नल ने उस नारी से इस प्रकार कहा, 'यदि तुम योगी-रूप को धारण करोगी, तो भी मैं (भोग के) विषयों के मार्ग पर नहीं जाऊँगा। मैं यहां तुम्हें वश में करने के लिए आ गया हूँ। २ मैं देवों का दूत हूँ। मैं अपने आचार-धर्म का निर्वाह करूँगा। तुम्हारे पूर्व-जन्म का यह पुण्य (का फल) है कि तुम्हारे भाग्य में कुछ भी न्यून नहीं है। ३ (और यह भी कि) देव-दूत घर में आ गया है। वह आनन्द की वृद्धि करनेवाला समाचार लाया है। (अतः) तुम बीच के पर्दे को दूर कर दो न ? तो मैं उत्साह को लाकर, अर्थात उत्साह-उमंग से बात कर सकूंगा। ४ मैं कोटि-कोटि रूप धारण कर सकता हूँ। मैं स्वार्थ छोड़कर परमार्थ सिद्ध कर रहा हूँ'। ये रसपूर्ण वचन सुनकर वह बाला (दमयन्ती) पट (पर्दा) छोड़कर बाहर (निकल) आयी। ५ (उसके मुख पर से) पसीने के मोती (जैसे बिन्दु) टपक रहे थे। वह (जब) बाहर निकल आयी, तो (मानो) बिजली चमक गयी। चलते समय वह वृक्ष में लिपटी लता जैसी हिल रही थी। गर्व से उन्मत्त-सी वह नल के निकट आ गयी। ६ उस तरुणी (के रूप) का प्रताप (कहीं) नहीं समा रहा था। अपने चमकारे से उसने नल को निस्तेज कर डाला। नल ने (उसके रूप में) एक मद से भरी-पूरी हथिनी को देखा। नल तकिये से सटकर बैठ गये। ७ उसकी झाँझर के घुँघरू झनक रहे थे। वह पाँव के अँगूठे से भूमि को कुरेदने लगी। उसने अपना हाथ गाल में टिका दिया। नल ने इस प्रकार (से खड़ी) नारी को देखा। ८ प्रेम से प्रेम में वे दोनों घुल-

घूघरी झांझरनी झणझणती, पगने अंगूठे पृथ्वी खणती,
कर दीधो छे गळस्थळे, एवी नारी दीठी नळे। ८।
प्रेम प्रेमे थयां बे भेळां, मोह्यो महीपति देखी महिला,
सत्यवादी सत्य ज राख्युं, मनथी परणवुं काढी नाख्युं। ९।
रखे इंद्र नारीने नीरखे, नळ मन पाछुं आकरखे,
बेठो आसने आसन वाळी, मांडी वात ते सत्य संभाळी। १०।
परमारथे देवनी वती, गोष्ठी मांडी छे नैषधपति,
अहो ललिता अंबुजलोचनी, सुखवर्धनी दुःखमोचनी। ११।
बेसो आसने लज्जा छांडी, पूछुं वात कहो मुख मांडी,
कन्या कहे कहो जे कहवुं, मुंने घटे छे ऊभां रहेवुं। १२।
परपुरुष बेठां केम बेसुं ? जाणे नळ तो कहेशे ए शुं ?
वारु थयुं जे तमे मळिया, शुं नैषधनाथे मोकलिया ? । १३।
वळी कहोने कहाव्युं जेह, सांभळवा इच्छुं छुं तेह,
वळता बोल्या वीरसेनसुत, नहि हुं नळनो, देवनो दूत। १४।
नळ नळ मुख शुं भाखे ? तजी सुधा विष कां चाखे ?
तजी स्वजन शत्रुने केम मळीए ? मूकी चंदन कां वळगे बावळिये ?।१५।

मिल गये। उस महिला को देखते ही नल मोहित हो गये। (फिर भी) उन सत्यवादी ने अपने प्रण का निर्वाह किया। उन्होंने मन से बिवाह करने की बात को निकाल डाला। ९ (जान पड़ता था कि) शायद इन्द्र उस नारी को निरख रहे हों। नल का मन बाद में आकर्षित हुआ हो। नल उस आसन पर आसन जमाकर बैठे और उन्होंने अपने प्रण का स्मरण करके वह बात ठीक से कहना आरम्भ किया। १० निषधराज ने देवों के परमार्थ के लिए वह बात ठीक से कहना आरम्भ किया। वे बोले, 'अहो ललिता, हे कमल-लोचना, हे सुख-वर्धिनी, हे दुःख-मोचनी। ११ लज्जा-संकोच छोड़कर आसन पर बैठ जाओ। मैं एक बात पूछता हूँ। अपने मुँह से ठीक से कह दो'। वह कन्या बोली, 'जो कहना है, वह कहिए। मुझे खड़ा रहना ही उचित लगता है। १२ पर-पुरुष के बैठे रहने पर मैं कैसे बैठूं ? यदि नल जान लें, तो कहेंगे, यह क्या है। यह अच्छा हो गया कि आप मिल गये। क्या आपको निषधराज ने भेजा है। १३ फिर जो कहना हो, वह कह दीजिए न। मैं उसे सुनना चाहती हूँ'। तो इसके प्रत्युत्तर में वीरसेन-सुत नल बोले, "मैं नल का नहीं, देवों का दूत हूँ। १४ मुख से 'नल', 'नल' क्यों बोल रही हो ? अमृत को छोड़कर विष क्यों चख रही हो ? अपने लोगों को छोड़कर, शत्रु से कैसे मिलें ? चन्दन

तजी रत्न कोडी को आणे ? तजी मदगळ महिष पलाणे ?
तजी धेनु अजा को बांधे ? तजी शाळ कुशका कोण रांधे ? । १६ ।
माटे हुं छौं तारो वगियो, देव तेजपुंज नळ आगियो,
घेली नळ मानव शा लेखे, अमरने तुं कां उवेखे ? । १७ ।
वासव वह्नि ने वरुणराय, जम आदे वर्यानी इच्छाय,
मोकल्यो छौं मळीने चारे, तो हुं आव्यो छौं मानवी-द्वारे । १८ ।
तुं त्रिभुवनपतिने भज, नळ अल्प जीवने तज,
माग अमरावतीनो वास, अमर इक्षु ने नळ घास । १९ ।
सुर परणे तुंने नहि मर्त, नळ वरे दुःखनुं नहि निवर्त,
सुर संगे भोगववा भोग, नळ अल्प आयुष्य भर्यो रोग । २० ।
मनुष्यने व्याधि शत ने आठ, मरी मरी अवतारनो ठाठ,
मनुष्यने विजोग पीडे, आयुष्य उतावळुं हींडे । २१ ।
मनुष्यनी घडीए शत घात, पीडे ज्वर शीत सन्निपात,
मानव भर्या होय मळ-मूत्र, घेली ते साथे घरसूत्र । २२ ।

को छोड़कर बबूल से क्यों चिपक जाएँ । १५ रत्न को छोड़कर कौड़ी को कौन लाए ? हाथी को त्यजकर भैंसे पर कौन आरूढ़ हो जाए ? गाय को छोड़कर बकरी को कौन बांध ले ? शाली (एक क़िस्म के बढ़िया चावल) को छोड़कर भूसे को कौन पकाए ? १६ इसलिए, मैं तुम्हारा हितैषी (बनकर आ गया) हूँ । देव तेजःपुंज (सूर्य जैसे) हैं; नल तो (उनकी तुलना में) जुगनू है । अरी पगली, नल तो मानव है । किसके लिए तुम उनकी उपेक्षा कर रही हो ? १७ इन्द्र, अग्नि और वरुणराज, यम आदि तुम्हारा वरण करना चाहते हैं । उन चारों द्वारा मैं भेजा गया हूँ । अतः मैं (तुम जैसी) मानव स्त्री के द्वार पर आ गया हूँ । १८ तुम त्रिभुवन-पति की सेवा करो । अल्पजीवी नल को छोड़ दो । तुम अमरावती का निवास माँग लो (उसकी कामना करो) । अमर (देव) ईश हैं, तो नल घास हैं । १९ (उचित यही है कि) देव तुमसे परिणय करें— कोई मर्त्य नहीं । (यदि) नल वरण करें, तो दुःख से कोई निवृत्ति नहीं होगी । देवों के साथ भोग का उपभोग करना । नल तो अल्पायुषी हैं, रोग से भरे-पूरे हैं । २० मनुष्य में एक सौ आठ व्याधियाँ होती हैं । वह मर-मरकर (पुनश्च) अवतार (जन्म) ग्रहण करनेवाला दिखावटी ढाँचा होता है । मनुष्य को विरह पीड़ित करता है । उसकी आयु तेजी के साथ चलती है । २१ मनुष्य को सौ-सौ घाव लगते हैं; उसे ज्वर, ठण्ड और सन्निपात पीड़ा पहुँचाते हैं । मानव (-शरीर) मल-मूत्र से भरा

गंगाजळ तजी कूपनुं अणावे, तजी कीर को काग भणावे,
देव सुखसमूहना दाता, नव ओसरे अमृत पाता । २३ ।
इंद्र मंदिरे हिंडोळे हींच, तुंथी देवांगनावृंद नीच,
पी सुधा भोगनी वारुणी, था त्रैलोकपतिनी तारुणी । २४ ।
थईश अमर सुधाने पीती, परण इंद्रने जग जीती,
छासठ सहस्र रंभा आदे, थई तृप्त वासव संगस्वादे । २५ ।
इंद्राणीने छे तारी बीक, रखे दमयंती थाती अधिक,
परणी इंद्र साचव आ तक, जोनी कल्पवृक्ष पारिजातक । २६ ।
रथ ऐरावतनुं सुख ले रे, वरवा वासवने हा कहे रे,
करी शणगार सर्वांगे, घटे रहेवुं इंद्र अर्धांगे । २७ ।
वर वह्निने हो बाळी, नहि समो आवे वळी वळी,
सर्व देवतानुं ए वदन, अग्निरूप ते कोटि मदन । २८ ।
वळी वरवा इच्छे छे जम, तेने ना कहेवाशे केम ?
छे वरुणने इच्छा घणी, रढ लागी छे तमतणी । २९ ।

होता है । अरी पगली, उसके साथ घर-गृहस्थी का कैसा सम्बन्ध-सूत्र । २२ गंगाजल का त्याग करके कुएँ का पानी कौन मँगाए ? तोते को छोड़कर कौए को कौन बुलाए ? देव (समस्त) सुखों के समूह के दाता होते हैं। उनके द्वारा अमृत पीते रहते हुए भी घटता नहीं । २३ इन्द्र के प्रासाद में झूले पर तुम पेंग लगाओ । तुमसे देवांगनाओं का वृन्द (महत्त्व में) छोटा है। अमृत तथा भोग रूपी वारुणी (सोमरस) को पी लो। (हे दमयन्ती) तुम त्रैलोक्यपति की स्त्री बन जाओ । २४ अमृत को पीनेवाली तुम अमर बन जाओगी। जगत को जीतकर इन्द्र का वरण करो। इन्द्र की संगति के स्वाद से रम्भा आदि छियासठ सहस्र अप्सराएँ तृप्त हो गयी हैं । २५ इन्द्राणी को तुम्हारे बारे में यह भय लग रहा है कि तुम दमयन्ती उससे अधिक (रूपवती) ठहरायी जा सकती हो। इन्द्र से विवाह करके तुम कल्पवृक्ष, पारिजात को देखने का अवसर प्राप्त करो । २६ रथ और ऐराबत (पर आरूढ़ होने) का सुख ग्रहण कर लो। इन्द्र से विवाह करने के लिए 'हाँ' कह दो। समस्त अंगों को सजाते हुए तुम इन्द्र के अर्धांग में निवास करने योग्य हो । २७ (अथवा) हे बाला, तुम अग्निदेव का वरण करो। मुड़-मुड़कर, लौट-लौटकर कोई तुम्हारे सामने नहीं आएगा। वे समस्त देवों का मुख हैं। अग्निदेव का रूप तो कोटि (-कोटि) कामदेवों का-सा है । २८ इसके अतिरिक्त यदि तुम यम का वरण करने की कामना करती हो, तो उससे (किसी द्वारा) 'नहीं' कैसे

मूको बाळ अवस्थानी टेव, फरी मागुं न मोकले देव,
हंस मिथ्या करी गयो लव, रूपहीण छे नळ मानव । ३० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नळ मानव कदरूप काया, नळ निर्भ्रंछ्यो नळे रे,
पोते पोतानुं आप निर्भ्रंछ्युं, ते देवतानो दूत सांभळे रे । ३१ ।

कहला जाएगा । यदि वरुण (का वरण करने) की तुम्हारी बड़ी इच्छा हो, तो उन्हें तो तुम्हारी लगन लगी है । २९ तुम बाल्यावस्था की टेव छोड़ दे । (यदि ऐसा न करोगी, तो) देव ऐसी माँग को फिर से नहीं भेजेंगे । हंस झूठी बकवास कर गया है । (वस्तुतः) नल तो रूप-हीन मनुष्य है । ३०

नल तो कुरूप देह-धारी मनुष्य है ।" इस प्रकार नल ने नल की निर्भत्सना की । उन्होंने अपने स्वयं (के रूप) की निर्भर्त्सना की । देवों के उस दूत ने उसे सुन लिया । ३१

कडवुं २२ मुं—(देवों के दूत नल और दमयन्ती का संवाद)

राग रामग्री

नळने निंद्यो प्रेमदा दाधी जी, दूतत्व न सीध्युं विष्टि न वाधी जी,
बे दुःख दाधी गुणवंत गोरीजी, वह्नि विजोगनो मूक्यो संकोर जी।१।

ढाळ

निंदा कीधी नळ तणी छे, विनोग वह्नि प्रथम,
कोमळ कदळी कुहाडाना, घाव सहे कहो क्यम ? । २ ।

कड़वक— २२ (देवों के दूत नल और दमयन्ती का संवाद)

नल (-स्वरूप दूत) ने नल की निन्दा की और उस प्रमदा को जलाकर दग्ध कर दिया । उनका न दूतत्व सिद्ध (सफल) हुआ, न मध्यस्थता वृद्धि को प्राप्त हुई । उस गुणवती गोरी (सुन्दरी को) दो (प्रकार के) दुःख जलाने लगे (एक तो विरह का दुःख और दूसरा प्रिय स्वामी नल की निन्दा के श्रवण से उत्पन्न) । उससे वियोग की आग ने सीमा को छोड़ दिया । १

(देवों के दूत ने अब) नल की निन्दा की है । पहले से उनके वियोग की अग्नि (उसे जला रही) थी (ही) । कहिए तो, कोमल

विरहिणी घणी विकळ थईने, पडी पृथ्वीमांहे,
साहेली चांपे हृदे ने, मुखे वदे त्राहे त्राहे। ३ ।
आश्वासना करती किंकरी, वळी श्यामाने सान,
दूत प्रत्ये कहे कन्या, शुं करुं सुर राजान। ४ ।
अप्राप्ति अमने अमरतानी ने, अल्प मानव काय,
जई कहो तमो देवने, जे ए कारज नव थाय। ५ ।
उत्कृष्ट अमर निकृष्ट नळ में, तमथी जाण्युं आज,
पण नैषधपतिने पिंड सोंप्यो, अन्यतणुं नव काज। ६ ।
अकळ अज ने अनंग-अरि जो, वरवा आवे त्रण,
तोहे पण मूकुं नहि चित्त, चोहोंट्युं नळने चर्ण। ७ ।
वीरसेन सुतनो दूत हंस, में दीधी तेने आश,
ना कहुं तो लाजे जनुनी, जनमां होये हास। ८ ।
तमे पधार्या दूत थईने, देवनुं करवा हेत,
शके तो नळ विष्टिए आव्या, सुरशुं करी संकेत। ९ ।

कदली कुल्हाड़ी के घावों को किस प्रकार सहन कर पाएगी। २ वह विरहिणी बहुत विकल होकर भूमि पर गिर पड़ी। उसकी सहेली ने उसे अपने हृदय से दृढ़ता के साथ लगा लिया और वह मुख से बोली, 'त्राहि, त्राहि (बचा लो, बचा लो)'। ३ दासी ने उस स्त्री को सान्त्वना देते हुए आश्वस्त किया और फिर उसे संकेत किया। तो वह कन्या (दमयन्ती) दूत से बोली, 'मैं देवों के राजा का वरण करके क्या करूँ? ४ हमें अमरता की प्राप्ति नहीं हो पाएगी और मानव देह तो छोटी (आयु वाली) होती है। आप जाकर देवों से कहिए कि यह कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। ५ मैंने आज आप से जान लिया कि देव उत्कृष्ट हैं और नल निकृष्ट हैं। परन्तु मैंने अपनी देह निषधपति नल को समर्पित की है; (अतः) मुझे किसी अन्य से कोई काम नहीं है। ६ यदि श्रीविष्णु, ब्रह्मा और कामदेव के शत्रु शिवजी —तीनों मेरा वरण करने आ जाएँ, तो भी मैं अपने मन को (अपने निश्चय से) नहीं हटा लूंगी। नल के चरणों में ही लिपटी रहूँगी। ७ वीरसेन-सुत नल का दूत हंस (यहाँ आया हुआ) था। मैंने उसे आशा लगा दी है। यदि (अब) 'नहीं' कहूँ, तो (मेरी) जननी लज्जा को प्राप्त हो जाएगी; लोगों में (हमारी) हँसी हो जाएगी। ८ देवों का हित करने के लिए आप दूत बनकर आये हैं। शायद देवों से संकेत निर्धारित करके नल मध्यस्थता के लिए आ गये हैं। ९ हे जोगी, यथार्थ बात बोलिए— आप (जोगी हैं अथवा) कोई

जथारथ बोलो रे जोगी, भोगी छो भूपाळ,
मनमां छौं तेवा देखुं छौं, हंसे नाखी मोहजाळ। १०।
संन्यासी कहे सुंदरी, कोण मात्र नैषधपत्य ?
देव विना नोहे मनुष्यने, अगोप आव्यानी गत्य। ११।
बुद्धिहीण बाळा देखाय छे, मानव उपर मोह,
स्वर्ग सदन मूकीने कां, इच्छे नळ घर खोह। १२।
तुं नहि वरे तो देव चारे, करशे बळात्कार,
कल्पवृक्ष तुंने ताणी लेशे, जो जाचशे सुर लगार। १३।
दमयंती कहे देह पाडुं, जळमां करुं जळशायी,
वरुण वसे छे नीरमां तुंने, सद्य जाशे साही। १४।
पावक प्रगटी काष्ठ सींची, मांहे करुं झंपापात,
वह्नि वरवा बेसी, वारु विवाहनी वात। १५।
कंठ पाश करुं के विष पीउं, जेम तेम पाडुं काय,
तो अवगते जमलोग पामे, सद्य वरे जमराय। १६।

भोगी भूपाल हैं ? हंस ने (मुझ पर) मोह-जाल बिछा दिया है, अतः मेरे मन में आप जैसे हैं, मैं वैसे ही आपको देख रही हूँ'। १० तो संन्यासी (जोगी) बोले, 'हे सुन्दरी, निषधपति कौन हैं ? देवों के अतिरिक्त किसी मनुष्य में अगोचर रूप में आ जाने की गति (शक्ति) नहीं हैं। ११ तुम बुद्धिहीन बाला मनुष्य के प्रति मोह दिखा रही हो। स्वर्ग-सदन को छोड़कर नल के खोह जैसे घर की क्यों इच्छा कर रही हो। १२ यदि तुम वरण नहीं करोगी, तो चारों देव (तुम्हारे साथ) बलात्कार करेंगे। यदि वे तनिक (भी) माँग लें (इच्छा करें), तो कल्पवृक्ष तुम्हें खींच ले जाएगा'। १३ (इसपर) दमयन्ती बोली, 'मैं पानी में देह-पात करूँगी, उसे जलशायी कर दूँगी'। (तो दूत बोले—) 'वरुण पानी में निवास करते हैं, वे तुम्हें तुरन्त पकड़ लेंगे'। १४ मैं अग्नि को प्रकट (प्रज्वलित) करते हुए उसमें लकड़ी डालकर कूदकर गिर जाऊँगी'। (तो नल बोले—) तब तो अग्नि के लिए तुमसे विवाह कर बैठने की दृष्टि से यह अच्छी बात है'। १५ (दमयन्ती बोली—) 'मैं कण्ठ में पाश डालूँगी, अथवा विष पीऊँगी; जैसे-वैसे मैं देह को गिरा दूँगी'। (यह सुनकर दूत बोले—) 'तो तुम अधोगति से यमलोक को प्राप्त हो जाओगी। (तब वहाँ) यमराज तुरन्त तुम्हारा वरण कर लेंगे'। १६ (दमयन्ती बोली—) 'मैं किसी गुफा में पैठकर अनशन व्रत लेकर तपस्या

अनशन व्रते तप करुं, मरुं गुफामां पेसी,
तुं पुन्ये तुं स्वर्ग पामशे, इंद्र रह्यो छे बेसी। १७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बेसी रह्यो छे सुरपति, तूं मूए न छूटशे घेली रे,
अंते अमर वरे खरा, माटे परण प्रेमदा पहेली रे। १८।

करूँगी और मर जाऊँगी'। (इसपर दूत बोले —) 'उस पुण्य से तुम स्वर्ग को प्राप्त हो जाओगी। (वहाँ) इन्द्र तो बैठे रहे हैं। १७

(वहाँ) सुरपति इन्द्र बैठे रहे हैं। हे पगली, तुम मरने पर भी नहीं छूट पाओगी। अन्त में देव ही तुम्हारा वरण करेंगे। इसलिए, हे प्रमदा, पहले ही तुम उनसे परिणय कर लो'। १८

कडवुं २३ मुं—(दमयन्ती के यहाँ से लौटकर नल का देवों से मिलना)

राग देशाख

दूत कहे सांभळ सुंदरी, अमर न मूके परणे खरी,
तव कन्या कहे जोगी जन, तमारुं नळनां जेवुं रे वदन। १।
जेवुं हंसे रूप वर्णव्युं, तेवुं तमारुं दर्शन हवुं,
नें हुं नळ देवनो दास, नारी कहे न आवे विश्वास। २।
ब्रह्मा करे कोटि उपाय, नळ जेवो अन्य नहि निरमाय,
जो सत्यवादी हो तो सत्य वदो, तातना सम जो मिथ्या वदो। ३।

कड़वक— २३ (दमयन्ती के यहाँ से लौटकर नल का देवों से मिलना)

दूत बोले, 'हे सुन्दरी, सुन लो। देवों को मत छोड़ो। सचमुच उनका वरण करो'। तब कन्या (दमयन्ती) बोली, 'हे योगीजन, आपका वदन नल का-सा है। १ हंस ने जैसे रूप का वर्णन किया था, आपमें वैसे ही रूप के दर्शन हुए हैं'। (तो दूत बोले—) 'मैं नल नहीं हूँ, देवों का दास हूँ'। (तब) वह नारी बोली, 'विश्वास नहीं आता। २ ब्रह्मा ने कोटि (-कोटि) यत्न किये हों, तो भी वे नल जैसे (किसी अन्य) को नहीं निर्मित कर सके हैं। यदि आप सत्यवादी हों, तो सत्य कहिए। यदि झूठ बोलेंगे, तो पिता की सौगन्ध है'। ३ यह सुनकर नल को हँसी

सांभळी नळने आव्युं हास्य, देखी दमयंती गई प्रभु पास,
शीद नहासो अरापरा, प्रीछ्या स्वामी तमे खरा। ४ ।
तोये नळ सत्यथी नव चळे, ते सर्व देवना दूत सांभळे,
धसी दमयंती गई प्रभु पास, नळ अंतर्धान हवो आकाश। ५ ।
ज्यारे मीटामीट ज टळी, त्यारे भीमकतनया धरणी ढळी,
मूळ स्वामीनी लहे छे सदा, मळी जातां वाधी आपदा। ६ ।
दासी प्रतिबोधे छे सबळ, बाई तमने वरशे नळ,
वदे बृहदश्व हो धर्मराय, नळ पहेलो दूत शीघ्रे जाय। ७ ।
वदे सेवक इंद्रने नमी, शे अर्थे रह्यां छो टमटमी ?
नळनुं कांई ए न लाग्युं कहेण, न छूटे हंसे झायुं प्रेमरेण। ८ ।
कामिनी कुंदन नळ हीरो सार, जडनारो हंस सोव्रणकार,
नळे दूतत्व मन मूकी कर्युं, पण कन्याए श्रवणे नव धर्युं। ९ ।
जेम गति करे बळियो मारुत, तेम वर्त्यो वीरसेननो सुत,
नळने सत्ये मेघवृष्टि करे, नळने सत्ये धरा शेष धरे। १० ।

आयी। यह देखकर दमयन्ती प्रभु (अपने स्वामी नल) के पास गयी (और बोली--) 'इधर-उधर क्यों भाग रहे हैं ? (इधर-उधर की बातें कहते हुए टालमटोल क्यों कर रहे हैं ?) हे स्वामी, मैंने आपको सचमुच पहचाना है'। ४ तो भी नल अपनी प्रतिज्ञा से विचलित नहीं हुए। देवों का वह (दूसरा) दूत यह सब सुन रहा था। जब दमयन्ती तेज़ी से अपने प्रभु नल के पास गयी, तो वे आकाश में अन्तर्धान हो गये। ५ जब दृष्टि से दृष्टि ही मिलना टल गया (आँख से आँख ही नहीं मिल पायी), तब भीमक-कन्या दमयन्ती धरती पर लुढ़क गयी। पहले तो उसे अपने स्वामी के प्रति सदा लगन लगी रही थी। फिर मिलकर जाने पर उसके लिए (मानो) विपत्ति (ही) बढ़ गयी। ६ तो दासी ने (यह कहकर) बहुत समझाया-बुझाया— 'हे देवी, नल तुम्हारा वरण करेंगे'। बृहदश्व बोले, 'हे धर्मराज, नल से पहले (देवों का वह दूसरा) दूत शीघ्रता से चला गया'। ७ वह (दूत) इन्द्र को नमस्कार करके बोला, 'आतुर होकर किसलिए रह गये हैं ? नल का वह कहना कुछ भी प्रभाव नहीं कर सका ? हंस ने (जो) प्रेम के रजःकण झाल दिये हैं, वे नहीं छूटे। ८ वह कामिनी कुन्दन है, तो नल सुन्दर हीरा। उन्हें (एक-दूसरे से) जड़ देनेवाला सुवर्णकार है हंस। नल ने दूतत्व (दूत का काम) तो मन खोलकर (मन लगाकर) किया; फिर भी उस कन्या ने उसे कानों पर नहीं धरा (कुछ सुनकर माना ही नहीं)। ९ जिस प्रकार बलशाली वायु स्थिति-

नळ नोहे तो मेरु निश्चे डगे, धर्म रह्यो छे नळराय लगे,
तमे न परणो तो कर्मनो वांक, बाकी नळे वाळ्यो आडो आंक । ११ ।
एवे समे राय आव्या तहीं, अथ इति वार्ता सहु कही,
स्वामी मारुं कह्युं मन नव धरे, बीजो मोकलो जेनुं कह्युं करे । १२ ।
मारे विषे लीनता तो हवी, बीजी न गमे वार्ता नवी,
त्यारे देवता करे विचार, फरी जातां हसे संसार । १३ ।
आपणो श्रम केम जाये वृथा ? ते माटे वरवी सर्वथा,
जो कन्याने गम्यो नळ भूप, तो आपण लीजे नळनां रूप । १४ ।
देव कहे सुणो नैषधराय, अमो धरुं तमारी काय,
पंच नळ रहीए एक हार, भाग्य होय तेने वरशे नार । १५ ।
नळ कहे रे कां नहीं स्वाम ? में आववुं तमारे काम,
मानव क्यांथी सुरनी संगत ? देव चारनी पामुं पंगत । १६ ।
बोल बंध कीधो नळ देव, काले एम करवुं अवश्यमेव,
ए कथा करी धर्म एटले, हवे कन्यानी कोण थई वले ? । १७ ।

गति कर देता है, उसी प्रकार वीरसेन के सुत नल ने आचरण किया। नल के सत्य से मेघ वृष्टि करता है; नल के सत्य से शेष पृथ्वी को (सिर पर) धारण करता है । १० नल न हों, तो मेरु निश्चय ही विचलित हो जाएगा; नलराज के आधार से धर्म रह गया है। आप (उस कन्या से) परिणय न कर सकें, तो यह कर्म का दोष है। और फिर जो शेष रहा, उस दृष्टि से नल तो चरम सीमा तक गये हैं। ११ उस समय (नल) राजा वहाँ आ गये। उन्होंने अथ से इति तक समस्त समाचार कह दिया। (वे बोले—) 'हे स्वामी, वह मेरे कहे पर मन नहीं धरती (ध्यान नहीं देती)। किसी दूसरे को भेज दीजिए, जिसकी कही (बात) वह कर दे। १२ मुझमें उसकी लीनता हुई है; (अतः) उसे कोई दूसरी बात अच्छी नहीं लग रही है।' तब देवों ने विचार किया— 'लौट जाने पर संसार (हमें) हँसने लगेगा। १३ हमारा परिश्रम कैसे (क्यों) व्यर्थ हो जाएगा। इसलिए उसका सर्वथा वरण करना है। यदि कन्या को नल राजा अच्छे लगते हैं, तो हम नल के रूप धारण कर लें'। १४ (अनन्तर) देवों ने कहा, 'हे नैषधराज, सुनिए। हम आपके शरीर (-से शरीर) धारण करेंगे। एक पंक्ति में पाँच नल रह जाएँ। जिसका भाग्य हो, उसका वरण वह नारी कर लेगी।' १५ तो नल ने कहा, 'हे स्वामी, क्यों नहीं ? मुझे आपके काम आना है। मानव को देवों की संगति कहाँ से हो ? मैं चार देवों की पंक्ति (-लाभ) को प्राप्त करूँगा'। १६

गई दमयंती ज्यां छे मात, तव स्वयंवरनी कीधी वात,
लाडवचन कन्यानां गमे, घरमां भीमक आव्या ते समे । १८ ।
पुत्रीने शिरे मूक्यो भुज, काले वरने वरजे तुं ज,
झंखना तुंने छे जे तणी, ते आव्यो छे नैषधधणी । १९ ।
पुत्री मनमां प्रसन्न थई, पोताने अंत:पुर गई,
राय भीमक सभामां आव्या, शत पडादारने तेडाव्या । २० ।
आगना दीधी वैदर्भराय, जाओ वजाडो पडो सेनामांहे,
आवजो सभामां राजकुमार, काल कन्या आरोपशे हार । २१ ।
प्राणी मात्र आवनो सज थई, जाओ पडो वजाडो एम कही,
जेणे शिबिर ऊतर्या होय घणा, त्यां सेवक फरे भीमकतणा । २२ ।
ठाम ठाम पडा वातता, क्षत्री शणगारे साजता,
मलस्नान करे ने अंग ऊलट, फरी फरी बांधे मुगट । २३ ।
रातमां शीखे चातुरी चाल, रखे वीसरी जाता काल
आखी रात थया सांतरा, ढळी ढळी पडे छे उजागरा । २४ ।

(इस प्रकार) देवों ने नल राजा को वचन-बद्ध कर लिया— कल ऐसा अवश्य ही करना है । यह कथा इतनी धर्मराज को बतायी गयी । अब कन्या की कौन (क्या) स्थिति हुई ? १७ दमयन्ती (वहाँ) गयी, जहाँ (उसकी) माता थी । तब उसने स्वयंवर के सम्बन्ध में बात की । कन्या के लाड़-भरे वचन उसे अच्छे लगे । उस समय घर में भीमक राजा आ गये । १८ उन्होंने पुत्री के सिर पर हाथ रखा (और कहा)— ‘ कल तुम ही (अपनी इच्छा के अनुसार) किसी वर का वरण कर लो । तुम्हें जिसकी लगन लगी है, वे निषधपति आ गये हैं ’। १९ यह सुनकर वह कन्या मन में प्रसन्न हुई और अपने अन्तःपुर में चली गयी । (इधर) राजा भीमक सभा (-मण्डप) में आ गये । वे एक सौ डंका बजानेवालों को बुलाकर लाये । २० विदर्भराज भीमक ने उन्हें आज्ञा दी— “ जाओ, सेना (शिविरों) में डंका बजा दो । (कहो–) हे राजकुमारो, सभा (-मण्डप) में आ जाइए । कल कन्या (दमयन्ती वर-) माला पहनाएगी । २१ प्राणी मात्र सजकर आ जाएँ ’। जाओ, ऐसा कहते हुए डंका बजा दो ”। जिन शिविरों में बहुत (लोग) ठहरे थे, वहाँ भीमक के सेवक घूमते रहे । २२ स्थान-स्थान पर डंके बज रहे थे । क्षत्रिय शृंगार सजते रहे । उन्होंने स्नान किया और उनके अंग-अंग में उल्लास (भरा हुआ) था । वे बार-बार मुकुट (साफा) बाँधने (सँवारने) लगे । २३ रात में वे चातुर्य भरी चालें सीख रहे थे (चालों का अभ्यास करते रहे)— (नहीं तो) शायद कल भूल जाएँ । पूरी रात भर वे मनसूबे रचते रहे । लेटे-लेटे उन्हें रतजगा हो गया । २४

वलण (तर्ज़ बदलकर)

उजागरा आखी रातना, शणगार सजतां थयुं व्हाणुं रे,
स्वयंवरमां भूपति मळिया, कवि कहे शुं वखाणुं रे ? । २५ ।

पूरी रात भर उन्हें रतजगा हो गया। श्रृंगार सजते-सजते सबेरा हो गया। तो राजा स्वयंवर (-मण्डप) में इकट्ठा हो गये। कवि कहता है, ' मैं उनका वर्णन क्या करूँ ? ' २५

कडवुं २४ मुं—(राजाओं का स्वयंवर-मण्डप के प्रति गमन)

राग सोरठी

वैशंपायन कहे राजन, सांभळ स्वयंवरनुं वर्णन,
पडो वाज्यो सुण्यो सर्व राते, ऊठ्या उजम थाते प्रभाते । १ ।
शीघ्रे जईए वर्यानी तके, तेडां मोकल्यां भाईओ भीमके,
नोहे अति काळ कीधानुं काम, मांडवे नव मळशे बेसवानां ठाम । २ ।
भीड भराई गाम भागळथी, रंक जाये राय आगळथी,
मळे शुकन सामा तेडे, शुकन वदे ने रथ खेडे । ३ ।
करे तिरस्कार सेवक पर रीस, पडे मुगट उघाडां शीश,
जाये अस्वार बहु अलबेला, हय हींडे जाणे जळना रेला । ४ ।

कड़वक-- २४ (राजाओं का स्वयंवर-मण्डप के प्रति गमन)

वैशम्पायन बोले, ' हे राजा, स्वयंवर का वर्णन सुनिए। रात में (कुछ रात के रहते) नगाड़ा बजा। सबने उसे सुना; फिर प्रभात काल में प्रकाश फैल जाते ही वे उठ गये। १ भीमक ने (दमयन्ती के) बन्धुओं से यह कहकर सबको बुलाने के लिए भेज दिया— ' वरण करने के समय के अन्दर शीघ्रतापूर्वक जाइए। अति विलम्ब से किया काम नहीं बनता। मंडप में बैठने के लिए स्थान नहीं मिलेगा '। २ नगर की सीमा से (लोगों की) भीड़ लग गयी। रंक लोग राजाओं के आगे से जा रहे थे। (मार्ग में) उनको सामने एक पक्षी मिला। वह पक्षी बोला। (उसे शुभ शकुन मानकर) उन्होंने रथ हाँक दिये। ३ वे सेवकों के प्रति क्रुद्ध होकर उनसे तिरस्कार करने लगे। उनके मुकुट गिर पड़े, तो उनके मस्तक खुल गये (अनावृत हो गये)। बहुत अलबेले सवार जा रहे थे। घोड़े ऐसे चल रहे थे, मानो पानी के रेले हों। ४ (सवारों से) भरे हुए

भराये रथ मांहोमांहे अटके, त्राडे हस्ती घोडा भडके,
अस्वार पडे छे नीसरी, ते मळे कहीए नव फरी। ५।
वाहन पडघानो चाल्यो छब, चरण रेणुए छायो नभ,
थई रह्युं छे अंधारुं घोर, पडी रह्यो छे शोहोराशोहोर। ६।
बोले दुंदुभिना बहु डंक, अकळामणनो वळ्यो अंक,
सर्वने दमयंतीनुं ध्यान, प्राणी मात्र वर, नहि को जान। ७।
स्वयंवर जोवा कारणे, प्रजा मळी मंडप बारणें,
द्वारे ऊभा छे ज्येष्टिकादार, तेडे जेने जेवो अधिकार। ८।
डाह्या थई मंडपमां पेसे, नाम वांचे ने आसने बेसे,
एक मंत्री सेवक खवास, त्रण त्रण सेवक रायने पास। ९।
कोण रूप मंडपनी रचना, वर्णवी शके शुं एक रसना ?
कदली स्तंभ रोप्या द्वारे, मांड्यां आसन हारोहारे। १०।
यशगीत बंदीजन बोले, महा उन्मत्त मेगळ डोले,
नानाविध चित्र चीतरियां, जाणे देववृंद ऊतरियां। ११।

रथ बीच-बीच में अटकते जाते थे; हाथी चिंघाड़ते हुए गरज रहे थे। घोड़े भड़क उठते थे। घुड़सवार फिसलकर गिर रहे थे। कहिए कि वे फिर से नहीं मिल रहे थे (गिरे हुए अश्वारोही फिर से अपने-अपने घोड़ों को प्राप्त नहीं कर सकते थे)। ५ वाहनों की पद-ध्वनि का घोष हो रहा था। उनके चरणों से उछली हुई धूल से आकाश आच्छादित हो गया। घना अँधेरा हो गया। कोलाहल हो रहा था। ६ दुन्दुभियों की बड़ी ध्वनि हो रही थी। (सबकी) व्याकुलता की कोई सीमा नहीं रही। सबको (केवल) दमयन्ती का ध्यान (लगा हुआ) था। प्रत्येक प्राणी मात्र वर (बना हुआ) था, कोई भी बाराती नहीं था। ७ स्वयंवर देखने के लिए प्रजा मण्डप के द्वार पर इकट्ठा हो गयी। द्वार पर चोबदार खड़े थे। वे जिसका जैसा अधिकार (योग्यता) था, उसे बुला रहे थे। ८ वे (लोग) समझदार होकर मण्डप में प्रवेश करने लगे। वे अपने-अपने नाम पढ़ते थे और अपने-अपने (लिए निर्धारित) आसन पर बैठ जाते थे। प्रत्येक राजा के पास एक-एक मंत्री, एक-एक सेवक और एक-एक खवास (जाति-विशेष का राजसेवक) इस प्रकार तीन-तीन सेवक थे। ९ कौन अपनी एक जिह्वा से उस मंडप की सुन्दर रचना का वर्णन कर पाएगा ? द्वार-द्वार पर कदली-स्तम्भ लगाये हुए थे। आसन पंक्ति-पंक्ति में लगाये हुए थे। १० बन्दीजन यशोगीत गा रहे थे। महा उन्मत्त हाथी डोल रहे थे। नाना प्रकार के चित्र अंकित थे। जान

ऊडे अबील गुलालनां छंटा, वाजे ढोल ने घूघरा घंटा,
सभामांहे बेठा महामुनि, लागी वेदशास्त्रनी धुनी। १२।
जति जोगी बेठा पावन, रायना भाट भणे भावन,
रायने छत्र चामर ढळे, मुगटे मणि झळहळे। १३।
अगर धूप त्यां उवेखे, वाजित्र नाद आवे अलेखे,
नटुआ करे छे नर्त्त, फरे फूदडी कहाडे सर्त। १४।
बोले घूघरी केरा रणका, गर्वघेली नाचे गुणिका,
पगपानीए शोभे धरा, वाजे कंकण ने घूघरा। १५।
गीत गाये कोकिलस्वरा, अनंत वधारे अप्सरा,
जाणे मंडप नगरी अमरा, नाचे नारी नरचित्तहरा। १६।
भीमक भूपने दे छे मान, आवी रह्या सर्व राजान,
गानारी गाये गीतगाथा, बांध्यां तोरण देवाय हाथा। १७।
वस्त्र केसरमांहे झकझोळ, बेसे आसने आरोगे तंबोळ,
वर थई बेठा प्राणीमात्र, समां कर्यां छे वरवां गात्र। १८।

पड़ता था कि देव-समुदाय ही उतरकर आ गये हों। ११ अबीर और गुलाल के छींटे (कण) उड़ रहे थे। ढोल, घुँघरू और घंटे बज रहे थे। सभा में महान मुनि बैठे हुए थे। (उनके द्वारा) वेद-शास्त्रों (के मंत्रों) की ध्वनि हो रही थी। १२ (मंडप में) पवित्र (आचार-विचार वाले) यति और योगी बैठे हुए थे। राजा के भाट प्रशस्ति (-मय उक्तियाँ) बोल रहे थे। राजाओं पर छत्र धरे हुए थे और चामर ढल रहे थे। मुकुटों में रत्न चमक रहे थे। १३ वहाँ (सेवक) अगरु और धूप डाल रहे थे। वाद्यों की ध्वनि असीम रूप में हो रही थी। नट नर्तन कर रहे थे। वे छलाँग लगाते हुए घूम रहे थे और (आपस में) होड़ लगा रहे थे। १४ घुँघरुओं की झनक-झनक हो रही थी। गर्व में चूर गणिकाएँ नाच रही थीं। उनके पाँवों की एड़ियों से धरती शोभायमान थी। उनके कंकण और घुंघरू बज रहे थे। १५ कोयल के-से स्वर वाली अप्सराएँ गीत गा रही थीं और अपार बधावा कर रही थीं। मानो वह मंडप अमरावती नगरी (देवनगरी) थी। मनुष्यों के चित्त का हरण करनेवाली नारियाँ नाच रही थीं। १६ भीमक राजाओं का सम्मान कर रहे थे। समस्त राजा आ गये। गवैये (यशो-गीत-गाथा) गा रहे थे। तोरण (बन्दनवार) सिद्ध किये गये थे। कुंकुम की हस्त-मुद्राएँ अंकित की गयी थीं। १७ केसर में भिगोये-रँगे वस्त्र झलक रहे थे। वे (राजा) आसन पर बैठे हुए थे और बीड़े खा रहे थे। प्राणी मात्र

शरीर क्षुद्र काष्ठनां खोड, तेने दमयंती परण्याना कोड,
बाळ यौवन ने वळी वृद्धा, तेने दमयंती परण्यानी श्रद्धा। १९।
को तो मोटा घरना कुंवर, को कहे आद्य अमारुं घर,
आशा अभिमाने भर्या नर, वांका मुगट धर्या शिर पर। २०।
घरडा थया नाना वर, वतां करावतां वाग्या छर,
तन मन कन्याने अर्पण, आगळथी नहीं टाळे दर्पण। २१।
केटलाक करे तिलकनी रेष, केटलाक करे मांहोमांहे द्वेष,
केटलाक करे पूछापूछ, हुं कहेवो कही मरडे मूछ। २२।
जेनां मुखमांहे नहीं दंत, तेने परणवानुं चंत,
केवळ वृद्ध डाचां गयां मळी, ते बेठा टुंपावी पाळी। २३।
जोशीनी प्रणिपत करी, देखाडे हाथ ने जन्मोतरी,
जो दमयंती मुने परणे, तो जोशी हुं लागूं चरणे। २४।
जेनां बेसी गयां गळस्थळ, मुखमां राख्यां बब्बे फोफळ,

वर बनकर बैठे हुए थे। उन्होंने अपने कुरूप गात्रों को ठीकठाक कर लिया था। १८ जिनका शरीर (सूखी) लकड़ी का ठूंठ (बन गया) था, उन्हें भी दमयन्ती का वरण करने की हविस थी। बाल, युवक और उनके अतिरिक्त वृद्धों को भी दमयन्ती द्वारा वरण किये जाने की श्रद्धा थी (विश्वास था कि दमयन्ती उनका वरण करेगी)। १९ कोई तो बड़े घर के कुँवर थे। कोई कहता कि हमारा घर (कुल) आद्य (सबसे पुराना) है। वे नर आशाओं-अभिलाषाओं से भरे हुए थे। उन्होंने सिर पर मुकुट टेढ़े धारण किये थे। २० अनेकानेक वर बूढ़े हो गये थे। क्षौर (हजामत) बनाते समय उन्हें छुरा लग गया था। (फिर भी) उन्होंने उस कन्या पर अपना तन-मन अर्पित किया था। वे अपने सामने से दर्पण दूर नहीं कर रहे थे। २१ कितने ही (वर) रेखाकार तिलक लगाये हुए थे। कितने ही परस्पर द्वेष कर रहे थे। कितने ही पूछताछ कर रहे थे और हुंकार भरकर मूँछों को मरोड़ रहे थे। २२ जिनके मुख में दाँत नहीं थे, उन्हें भी परिणय करने की चिन्ता (इच्छा) थी। जो पूर्ण रूप से वृद्ध थे, जिनके मुख पर झुर्रियाँ पड़ी हुई थीं, वे अपने-अपने पके (श्वेत) केश जड़-मूल से उखाड़कर बैठे हुए थे। २३ कुोई ज्योतिषि को प्रणिपात (नमस्कार) करके अपना हाथ और जन्म-पत्री दिखा रहा था। (वह कह रहा था—) 'हे ज्योतिषि, यदि दमयन्ती मुझसे परिणय करे, तो मैं आपके पाँव लगूँगा'। २४ जिनके गाल बैठ गये थे, वे मुँह में दो-दो सुपारियाँ रखे हुए थे। इस प्रकार अपने गालों को फुलाये हुए वे पगले

एम ऊंचां करी गलोठां, घेला जुए काचमां कोठां,
पूरण आशाए सर्व कोय, पण कन्या नळनी वाट जोय । २५ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

वाट जुए छे नळतणी, दासीने कहे छे सती रे,
हुं मंडपमां पछे आवुं, प्रथम आवे नैषधपति रे । २६ ।

कांच में अपना-अपना मुँह देख रहे थे। सब आशा से परिपूर्ण थे। परन्तु (उधर) दमयन्ती नल की बाट जोह रही थी । २५

वह सती नल की वाट जोह रही थी। उसने दासी से कहा— 'मैं मण्डप में बाद में आ जाऊँगी; पहले नैषध-पति नल तो आ जाएँ'। २६

कडवुं २५ मुं—(विवाह-मण्डप में दमयन्ती का आगमन)

राग रामग्री

मंडप मांहे भूपति मळिया जी, अभिमाने भर्यां रूप बुद्धि बळिया जी,
तेडो कन्याने भीमक ओचरे जी, वैदर्भी शणगार अंगे धरे जी । १ ।

ढाळ

शणगार सजती सुंदरी ते, शोभती श्रीकार,
नळ नथी आव्यो मंडपे, माटे लगाडे वार । २ ।
कृष्णागर मर्दन वास वर्धन, महिला करे मंजन,
बहु नार आवे वधावे, बरसे मुक्ता परजन । ३ ।

कड़बक—२५ (विवाह-मण्डप में दमयन्ती का आगमन)

मंडप में राजा इकट्ठा हो गये। वे रूप और बुद्धि सम्बन्धी अभिमान से भरे-पूरे थे; वे बलवान थे। राजा भीमक बोले, 'कन्या को ले आओ'। (इधर अन्दर) विदर्भराज की कन्या दमयन्ती शरीर में साजश्रृंगार धारण कर रही थी । १ वह सुन्दरी श्रृंगार सज रही थी। वह लक्ष्मीस्वरूप (जैसी) शोभायमान (दिखायी दे रही) थी। राजा नल मण्डप में (तब तक) नहीं आये हुए थे। इसलिए वह देर कर रही थी । २ उस महिला ने कृष्णागरु (काले अगरु) का (शरीर में) मर्दन करते हुए (अपनी देह की स्वाभाविक) सुगन्ध को बढ़ाने के लिए (सुगन्धित द्रव्य से) मार्जन किया। (वहाँ) अनेक स्त्रियाँ आ गयीं और

शुभ वचन बोले शकुन वदे, उदयो हर्ष अनंत,
भेरी नाद थाये ने गीत गाये, बहु किंकरी नाचंत। ४।
मान पूरण मानुनी, महीपत मोहवा काज,
स्वयंवरना सुभट जीतवा, धरे श्यामा साज। ५।
प्रेमपाश लीधो प्रेमदा, नाखवा मंडपक्षेत्र,
भ्रूकुटिधनुष आर्कांषियुं ने, बाण बंन्यो नेत्र। ६।
तारुणीने तेडां मोकले, राय भीमक वारोवार,
कुंवरी बाहेर नीसरो, करमां ग्रहीने हार। ७।
वाजित्र वाजे घोष गाजे, थाये कुसुमनी वृष्ट,
राजामात्र जुए वारणे, केम मळे दृष्टे दृष्ट ?। ८।
ओ कन्या आवी ओ कन्या आवी, घोष एवो थाय,
पंच शब्द वाजे गान थाये, वांका वळी जुए राय। ९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जुए राजा फरी फरी, केवुं हशे कन्यानुं रूप रे,
एवे समे देव चार साथे, आवियो नळ भूप रे। १०।

उन्होंने शुभ कामनाओं के साथ आशीर्वाद दिया। उन्होंने मोतियों की बौछार की। ३ उन्होंने शुभ वचन कहे; (शुभ) शकुन (सूचक) बातें कहीं। (वहाँ) अपार हर्ष हो गया। भेरियों का गर्जन होने लगा और वे (स्त्रियाँ) गीत गाने लगीं। बहुत दासियाँ नाच रही थीं। ४ मान-सम्मान के भाव से भरी-पूरी वह मानिनी, वह सुन्दरी महीपतियों को मोहित करने के लिए, स्वयंवर में आये हुए योद्धाओं को जीतने के लिए शृंगार सज रही थी। ५ उस प्रमदा ने मंडप-क्षेत्र पर डालने के लिए प्रेम-पाश ग्रहण किया। उसने भौंह रूपी धनुष को खींच लिया। दोनों नेत्र (उसके) बाण (बने हुए) थे। ६ राजा भीमक बार-बार उस तरुणी को (यह कहते हुए) बुलावे भेज रहे थे— 'री कुँवरी, हाथ में (वर-)माला लेकर बाहर निकल आओ'। ७ वाद्य बजने लगे। वे घोषपूर्वक गरज रहे थे। पुष्पों की वर्षा हो रही थी। राजा मात्र (सब उपस्थित राजा) द्वार की ओर (इस अभिलाषा से) देख रहे थे कि किस प्रकार उस (कन्या) से दृष्टि जुड़ जाए (साक्षात्कार हो जाए)। ८ (फिर) ऐसी घोषणा हो गयी, '(देखिए, देखिए,) वह कन्या आ रही है, वह कन्या आ रही है।' पंच वाद्यों[1] की ध्वनि हो रही है। गीत-गान हो रहा है। (तब वह घोषणा सुनकर) वे राजा झुक-झुककर देखने लगे। ९

---

१ पंचवाद्य— तंत्री, ताल, झाँझ, नगाड़ा और तुरही।

वे राजा बारबार देख रहे थे कि उस कन्या अर्थात दमयन्ती का रूप कैसा है। उस समय नल राजा चार देवों के साथ (वहाँ) आ गये। १०

कडवुं २६ मुं—(स्वयंवर-सभा में नलराज का आगमन)

राग मारु

वागी स्वयंवरमां हाक, ते नळ आव्यो रे,
भांग्यां भूप सर्वनां नाक, ओ नळ आव्यो रे। १ ।
जाणे उदयो नैषधभाण, ते नळ आव्यो रे,
अस्त थया सौ तारा समान, ओ नळ आव्यो रे। २ ।
तेज अनंगनुं अंग, ते नळ आव्यो रे,
जाणे कनक कायानो रंग, ओ नळ आव्यो रे। ३ ।
झळके झळहळ ज्योत, ते नळ आव्यो रे,
मुगट पर चळके उद्योत, ओ नळ आव्यो रे। ४ ।
ज्योत रविनी पेर कुंडळ लहेके, ते नळ आव्यो रे।
अरगजा अंगे बहेके, ओ नळ आव्यो रे। ५ ।
शोभे वदन पूनमनो चंद, ते नळ आव्यो रे,
कमळनयन प्रेमनो फंद, ओ नळ आव्यो रे। ६ ।

कड़वक— २६ (स्वयंवर-सभा में नलराज का आगमन)

नल आ गये, तो स्वयंवर (-सभा) में (उनकी) धाक जम गयी। समस्त राजाओं की नाक कट गयी। नल आ गये। १ नल आ गये; तो जान पड़ा कि निषधराज नल (के) रूप (में) सूर्य उदित हुआ। (फलस्वरूप) समस्त राजा तारों के समान अस्त को प्राप्त हो गये। नल आ गये। २ नल आ गये। उनके अंग में अनगिनत अनंगों (कामदेवों) का तेज (समाया हुआ) था। मानो उनकी देह का रंग सुवर्ण का-सा था। नल आ गये। ३ नल आ गये। (जान पड़ता था कि) झलझलाहट के साथ कोई ज्योति ही झलक रही थी। उनके मुकुट पर (अपार) तेज झलक रहा था। नल आ गये। ४ नल आ गये। उनके कुण्डल सूर्य की ज्योति (कान्ति से युक्त) जैसे झलक रहे थे। उनके शरीर से अरगजा महक रहा था। नल आ गये। ५ नल आ गये। उनका मुख पौर्णिमा के चन्द्र जैसा शोभायमान था। उनके कमल-से नयन (मानो) प्रेम का पाश (ही बिछा रहे) थे। नल आ

जाणे नासा कीरनी चंच, ते नळ आव्यो रे,
कोये न देखे सरखा पंच, ओ नळ आव्यो रे। ७।
कंठे गज-मुक्तानो हार, ते नळ आव्यो रे,
कर कुंजर-शुंडाकार, ओ नळ आव्यो रे। ८।
हृदे नाभिकमळ शोभाळ, ते नळ आव्यो रे,
कटीए जीत्यो कुंजरकाळ, ओ नळ आव्यो रे। ९।
चालतो शार्दूलनी गत्य, ते नळ आव्यो रे,
निराश थया नरपत्य, ओ नळ आव्यो रे। १०।
ए तो दमयंतीनो प्राण, ते नळ आव्यो रे,
हवे ए परणे निर्वाण, ओ नळ आव्यो रे। ११।
कन्याने थयुं तव जाण, ओ नळ आव्यो रे,
जेनुं हंस कीधुं वखाण, ते नळ आव्यो रे। १२।
तेजे तो तपे जाणे भाण, ओ नळ आव्यो रे,
शीतळ ए सोम समान, ते नळ आव्यो रे। १३।
गते करीने जेवो वाय, ओ नळ आव्यो रे,
महिमाए शंकर राय, ते नळ आव्यो रे। १४।
मन स्थिरताए जेम मेर, ओ नळ आव्यो रे
जाणे धने बीजो कुबेर, ते नळ आव्यो रे। १५।

गये। ६ नल आ गये। मानो उनकी नाक तोते की चोंच ही थी। उन पाँचों के समान कोई भी अन्य नहीं दिखायी दे रहा था। नल आ गये। ७ नल आ गये। उनके गले में गजमुक्ताओं का हार था। उनके हाथ हाथी की सूँड़ के-से आकार वाले थे। नल आ गये। ८ हृदय (वक्षः-स्थल के पास) में उनका नाभि रूपी कमल शोभायमान था। उनकी कटि ने (आकार में मानो) हाथी के शत्रु सिंह को जीत लिया था। नल आ गये। ९ नल आ गये। वे सिंह की-सी गति से चल रहे थे। (उन्हें देखते ही दमयन्ती को पत्नीस्वरूप पाने में समस्त) राजा निराश हो गये। नल आ गये। १० (उन्हें जान पड़ा—) नल आ गये (हैं, अब तो चूँकि) ये तो दमयन्ती के प्राण हैं, ये निश्चित रूप से उससे परिणय कर सकेंगे। नल आ गये। ११ नल आ गये। तब कन्या को यह जानकारी हो गयी कि हंस ने जिनका बखान किया था, वे नल आ गये। १२ नल आ गये। मानो तेज में सूर्य ही तप रहा हो; (फिर भी) ये चन्द्र के समान शीतल (सौम्य) थे। नल आ गये। १३ नल आ गये। गति के विषय में वे वायु जैसे थे। महिमा में वे राजा शिवजी (जैसे) थे। नल आ गये। १४

सत्यवादी शिबि समान, ओ नळ आव्यो रे,
ऐश्वर्ये नहुष राजान, ते नळ आव्यो रे। १६।
ए तो जुद्धे जाणे इन्द्र, ते नळ आव्यो रे,
त्यागी जेवो हरिश्चंद्र, ओ नळ आव्यो रे। १७।
विद्याए गुरु शुक्र जेम, ओ नळ आव्यो रे
दुःखहर्ता धन्वंतरि तेम, ओ नळ आव्यो रे। १८।

नल आ गये। स्थिरता में उनका मन मेरु जैसा था। वे मानो धन में दूसरे कुबेर थे। नल आ गये। १५ नल आ गये। वे शिबि[1] के समान सत्यवादी थे। ऐश्वर्य में वे नहुष[2] (जैसे) थे। नल आ गये। १६ नल आ गये। वे तो मानो युद्ध (करने) में इन्द्र (जैसे) थे। वे हरिश्चन्द्र[3] जैसे त्यागी हैं। नल आ गये। १७ नल आ गये। विद्या में वे (देव-) गुरु (बृहस्पति)

---

१ शिबि— शिबि नामक राजा अति उदार और सत्यव्रती था। उसकी परीक्षा करने के लिए एक बार इन्द्र श्येन (बाज़) बनकर अग्नि रूपी कपोत का पीछा करते हुए आया। शिबि ने शरणागत कपोत की रक्षा की, तो इन्द्र रूपी श्येन ने अपने भक्ष्य स्वरूप कपोत के वज़न के बराबर मांस माँगा। तब शिबि अपने शरीर का मांस काट-काटकर तुलायंत्र में डालने लगा, तब भी वह श्येन के वज़न के बराबर नहीं हुआ। तो वह स्वयं तुलायंत्र में बैठ गया। शिबि की उदारता, शरणागत-वत्सलता और सत्यवादिता देखकर इन्द्र और अग्नि उसपर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने उसे अनेकानेक वर प्रदान किये। दूसरी एक कथा के अनुसार एक अतिथि ब्राह्मण की इच्छा पूर्ण करने के हेतु शिबि अपने पुत्र को मार डालकर उसका मांस उसे देने चला और उस अतिथि के आदेश के अनुसार स्वयं भी मांस को खाने के लिए तैयार हो गया था।

२ नहुष— इक्ष्वाकु-कुलोत्पन्न राजा नहुष असाधारण रूप से वीर तथा वैभव-शाली था। उसने देवों की सहायता करते हुए 'हुण्ड' राक्षस का बध किया; च्यवन ऋषि को मछुओं से मुक्त किया। जब एक ब्राह्मण की हत्या के पाप के कारण इन्द्र को इन्द्र-पद का त्याग करना पड़ा, तो देवों और ऋषियों ने अपना तपोबल नहुष को प्रदान किया। 'नहुष' एकमात्र ऐसा नर है, जिसे इंद्र-पद पर विराजमान होने और समस्त वैभव का उपभोग करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। (परन्तु आगे चलकर उसमें अहंकार और तमोगुण की वृद्धि हुई और समस्त सद्धर्मों का त्याग करके वह भोग-विलास में मग्न रहने लगा। अन्त में उसने इन्द्राणी को कामलालसा से देखकर उसकी अभिलाषा की। इधर सप्तर्षियों द्वारा अपनी पालक उठवायी। तब एक ऋषि पर उसने लत्ता-प्रहार किया, तो उसने उसे 'सर्प' हो जाने का अभिशाप दिया। इस प्रकार एक महान वैभव-सम्पन्न नरेन्द्र का अन्त में अधःपात हुआ)।

३ हरिश्चन्द्र— इक्ष्वाकु-कुलोत्पन्न राजा हरिश्चन्द्र महान वीर तथा सत्यनिष्ठ परम प्रतापी पुरुष था। उसे राजसूय यज्ञ के बल पर इन्द्र-सभा में स्थान प्राप्त हुआ था। उसने यज्ञ के अवसर पर पुरोहित विश्वामित्र को अपमानित किया, अतः उससे बदला लेने के हेतु विश्वामित्र ने उसे अनेक प्रकार से पीड़ित किया। उसने स्वप्न में एक*

दमयंती घणुं हरखे, ओ नळ आव्यो रे,
रखे लागे मन फर्के, ओ नळ आव्यो रे। १९।
एक आसने बेठी नार, ओ नळ आव्यो रे,
दासी ऊंचली चाले चार, ओ नळ आव्यो रे। २०।
शोभे सुंदर अति सुकुमार, ओ नळ आव्यो रे,
नई पहोंतां मंडपद्वार, ओ नळ आव्यो रे। २१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बाहेर पधार्यां प्रेमदा, चतुरां ऊंचले चार रे,
नळ बेठो सिंहासन, चतुरा चिंतती तेणी वार रे। २२।

और (दैत्य-गुरु) शुक्र जैसे थे। वे दुःख हरण करनेवाले धन्वन्तरि[1] के समान थे। नल आ गये। १८ नल आ गये। (यह जानकर) दमयन्ती बहुत आनन्दित हो गयी। कदाचित विलम्ब हो जाए —इस भय से उसका मन काँप उठा। नल आ गये। १९ नल आ गये। तो वह नारी एक (सुख-) आसन में (पालकी) में बैठी हुई थी। चार दासियाँ (उसकी उस पालकी को) उठाये हुए चल रही थीं। नल आ गये। २० नल आ गये। वह सुन्दर, अति सुकुमार नारी शोभायमान थी। वे (सब) मंडप के द्वार तक पहुँच गयीं। नल आ गये। २१

वे चार चतुर नारियाँ पालकी को उठाकर ले आयीं और वह प्रमदा दमयन्ती उसमें से बाहर पधारी। (इधर) नल सिंहासन पर बैठ गये, तो वह चतुरा (दमयन्ती) उस समय चिन्तन (विचार) करने लगी। २२

---

*ब्राह्मण को दान दिया; उसे जाग्रत् होते ही पूर्ण किया। ब्रह्म-पुराण के अनुसार उसे विश्वामित्र की दक्षिणा चुकाने के लिए परिवार-सहित अपने आपको बेचना पड़ा। इसमें वह स्वयं श्मशानाधिकारी चण्डाल का क्रीत दास बन गया। विश्वामित्र ने अपनी माया से उसके पुत्र को सर्पदंश से मरवा डाला; तो वह अपनी पत्नी तारामति सहित अग्नि में प्रवेश करने के लिए उद्यत हुआ। अन्त में वसिष्ठ ऋषि और देवों ने उसे समस्त विपत्ति से बचा लिया, तो वह अपने विगत वैभव और राज्य को पुनश्च प्राप्त हुआ।

१ धन्वन्तरि— समुद्र-मन्थन के अवसर पर निकले हुए चौदह रत्नों में से एक है धन्वन्तरि, जो हाथ में अमृत-कलश लेकर समुद्र से निकला। धन्वन्तरि को आयुर्वेद-शास्त्र का प्रणेता और भगवान विष्णु का अवतार माना जाता है। उससे अणिमादि अष्ट सिद्धियों का निर्माण हुआ कहा जाता है। उनके चिकित्सापद्धति और वैद्यक-शास्त्र पर लिखित अनेक ग्रन्थ बताये जाते हैं।

कडवुं २७ मुं—(वधू दमयन्ती का रूप-वर्णन और राजाओं की अधीरता)

राग सारंग

मंडप मध्ये मानुनी, आसन बेठी जाय,
स्वयंवरमां सुभटने जीतवा, सुंदरी वर्णवु ते शोभाय । १ ।

छंद-हरिगीतनी चाल

नृप भीमकतनया, रूप बनया, रसीली रंग-पूरणा,
नर अंगना देवांगना, मानिनी मनमद चरणा । २ ।
दुःखमोचनी मृगलोचनी, छे ललित लक्षणवंती ए
निज मन उलासी, वेण वासिक, अलक लट विलसंती ए । ३ ।
राखडी अमूल्य, शीश फूल, सेंथे सिंदूर शोभियां,
शुभ झाळ झळकित, रत्न चळकित, भूपनां मन लोभियां । ४ ।
अधर सुधासिंधु, वदन इंदु, भ्रूकुटि भमर बे गुंज छे,
बे नेत्र निर्मळ, दीसे छे कमळ, फूल फूल्यां कुंज छे । ५ ।

कड़वक— २७ (वधू दमयन्ती का रूप-वर्णन और राजाओं की अधीरता)

मंडप में वह मानिनी सुन्दरी (दमयन्ती) स्वयंवर में सुभटों अर्थात बड़े-बड़े वीर पुरुषों को जीतने के लिए सुखासन में बैठकर (आ) गयी। उसकी सुन्दरता का मैं (अब) वर्णन करता हूँ। १ नृप भीमक की तनया दमयन्ती विवाह के (अवसर के लिए) योग्य रूप से बनी-सजी हुई थी। वह सलोनी-सजीली तथा (सुन्दर) कान्ति से भरी-पूरी थी। (अपने रूप के बल से) वह मानिनी (उस समय) मानव जाति की स्त्रियों तथा देवांगनाओं के मन के (सौंदर्य सम्बन्धी) मद को चूर-चूर करनेवाली थी। २ वह दुःख से मुक्ति देनेवाली थी; मृग की-सी आँखों वाली थी तथा सुन्दर (शुभ) लक्षणों से युक्त थी। वह अपने मन में उल्लसित थी। उनकी बेनी सुगन्धि-युक्त थी। उसके बालों की लटें शोभायमान थीं। ३ उसके सिर पर अनमोल राखी थी, फूल थे। वह माँग में सिन्दूर से शोभायमान थी। उसके कानों में जालीदार शुभ बालियाँ चमक रही थीं; उनमें रत्न जगमगाते थे। उस (दमयन्ती के सौंदर्य) ने राजाओं के मन को लुब्ध कर डाला था। ४ उसके होंठ (मानो) अमृत का समुद्र थे; मुख चन्द्रमा था और उसकी भौंहों में (मानो) दो भ्रमर उलझे हुए थे। दोनों नेत्र निर्मल कमल जैसे दिखायी दे रहे थे। वह दमयन्ती (मानो) प्रफुल्लित फूलों का कुंज ही थी। ५ उसने आँखों में अंजन लगाया था। वे

आंजेल अंजन, चपल खंजन, मीन मृग बे हारियां,
पडचा राय शूरा, धाए पूरा, कटाक्षे मारियां। ६।
जुए विविध पेरे, नयन घेरे, तिलक भाले कीधलां
दीपक प्रकाशा, एम नासा, कीरनां मन लीधलां। ७।
शोभित दाडम, बीज रद ज्यम, चिबुक मधुकर बाळ रे,
गळबंधु जुगता, हार मुकता, माणिकमय शोभाळ रे। ८।
अबळाना अंबुज, ज्यम जुग्म भुज, बाजुबंध फूमतां झूले,
थाय नाद रणझण, चूडी कंकण, छे मुद्रिका बहु मूले। ९।
दश आंगळी, मगनी फळी, नख जोत्य ज्यम पुखराज रे,
फूलना मनोहर, हार उपर, आभूषण बहु साज रे। १०।
पडी वेणि कटि पर, जाणे विषधर, आवी करे पयपान रे,
गुच्छ कुसुम उदे, कुच हृदे,, कुंजर कुंभस्थळ मान रे। ११।
अलकावलि ललिता, वहे सरिता, उदर पोयणपान रे,
छे विचित्रलंकी, कटी वंकी, मेखला घूघरगान रे। १२।

नयन (मानो) खंजन थे। उन्होंने (चपलता में) मछली और मृग दोनों को पराजित किया था। अपनी तिरछी चितवन से उस (दमयन्ती) ने शूर राजाओं को मार डाला; वे (मानो) उसके आघात से पूरे-पूरे गिर गये। ६ वह विविध प्रकार से देखती थी। उसके नयन मद-भरे थे। उसने भाल पर तिलक लगाया था। दीपक की ज्योति के आकार जैसे आभासित होनेवाली उसकी नाक ने तोते के मन को हरा लिया था। ७ उसके दाँत अनार के बीजों (दानों) जैसे थे। उसकी ठोड़ी पर भ्रमर-बाल (का-सा चिह्न गोदा हुआ) था। उसके गले में गुलुबन्द सदृश (आकार वाला) मोतियों का मानिकों से युक्त हार शोभा दे रहा था। ८ उस स्त्री के दोनों बाहुओं में धारण किये हुए बाजुबन्दों से कमल-से गुच्छे झूम रहे थे। उसकी चूड़ियों और कंगनों की झनकार से रुनझुन ध्वनि उत्पन्न हो रही थी। उसकी अँगूठियाँ मूल्य में बहुत अर्थात् अति मूल्यवान थीं। ९ उसकी दसों अँगुलियाँ मूँग की फलियाँ थीं; नख ज्योति (कांति) में पुखराज (-से) थे। उसने फूलों का मनोहारी हार धारण किया था और उसमें बहुत सजीले आभूषण (जटित) थे। १० उसकी कटि पर उसकी बेनी पड़ी हुई थी। मानो वह कोई सर्प था, जो आकर वहाँ अमृत का पान कर रहा हो। उसके हृदय-स्थल पर पुष्प-गुच्छों-से कुच उदित (उभरे) थे। वे (मानो) हाथी के कुम्भ-स्थल ही थे। ११ उसकी अलकावलि सुहानी थी; मानो कोई सरिता ही हो। उसका उदर

बे जंघा, रंभातणा थंभा, हंसगत्य पग हींडती,
सुखपाळ मूकी, राय ढूंकी, जाय पगलां मांडती। १३।
नेपुर झमके, अणवट ठमके, घूघरीनो घमकार छे,
घाघरे घूघर, अमूल्य अंबर, फूलेल छांट्यां अपार छे। १४।
त्यां अगरबत्ती बले, चमर शिर ढळे, रसीली रामा राजती,
गाय गीतक लोलक, चंग ढोळक, मृदंग वेणा वाजती। १५।
वळी कीर्ति अति घणी, बोले बंदणी, चाले ज्येष्टिकादार त्यां,
पंच बाणे, फरी संधाणें, राजपुत्रने मार त्यां। १६।
भरमाईने भूप, पडचा मोहकूप, प्रेमपाशे बांधिया,
ठामथी डगिया, स्वार्थ रगिया, को सामी मीट न सांधिया। १७।
को आडा ऊतरे, खूंखारा करे, भामिनी नव भाळे रे,
को आसने पडचा, लथडचा, शके आवी लीधो काळे रे। १८।

मानो कुमुदिनी का पत्ता (जैसा कोमल) था। उसकी बाँकी कटि विचित्र अर्थात अद्भुत घुमाव वाली थी। उसमें बँधी मेखला के घुंघरू (मानो) गान कर रहे थे। १२ उसकी दोनों जंघाएँ (मानो) कदली के स्तम्भ थे। वह हंस की-सी गति से युक्त पाँव से चलती थी। पालकी को छोड़कर (पालकी से उतरकर) वह डग भरती हुई राजा के पास गयी। १३ (उसके पाँवों में) बँधे नूपुर रुनझुना रहे थे, अनवट ठनक रहा था, घुँघरुओं का खनक शब्द हो रहा था। उसके घाघरे में घुंघरू (टाँके हुए) थे। उसका वस्त्र अनमोल था; उसपर अपार फुलेल (इत्र) छिड़काये हुए थे। १४ वहाँ अगरबत्तियाँ जल रही थीं। उसके सिर पर चँवर हिलायी जा रही थी। वह छबीली स्त्री (इस प्रकार) शोभायमान थी। वहाँ नारियाँ आनन्द-प्रद गीत गा रही थीं; चंग (डफलियाँ), ढोलक, मृदंग, वीणा बज रहे थे। १५ इसके अतिरिक्त बन्दीजन अति बहुत कीर्ति का गान कर रहे थे। वहाँ चोबदार (इधर-उधर) चल रहे थे। कामदेव ने (मानो) सन्धान करके वहाँ राजकुमारों को आहत कर डाला। १६ वे राजा भ्रमित होकर मोह रूपी कूप में गिर पड़े। प्रेम-पाश ने उन्हें आबद्ध कर लिया था। वे अपने-अपने स्थान से डगमगा उठे। वे अपने स्वार्थ अर्थात उद्देश्य पर हठपूर्वक डटे हुए थे। वे सामने (दमयन्ती से) दृष्टि मिला नहीं पा रहे थे। १७ उनमें से कोई-कोई आड़े-टेढ़े उतरे (बैठ गये)। वे खँखारने लगे। फिर भी वह स्त्री (दमयन्ती) उनकी ओर नहीं देख रही थी (उन राजाओं की ओर आँखें उठाकर देख तक नहीं रही थी)। कोई-कोई (राजा अपने-अपने) आसन पर लुढ़क गये; कुछ एक लड़खड़ाते रहे। (जान पड़ा—)

बोली न शकिया, चित्र लखिया, को नमे वारेवारे रे,
को समीप धसिया, मुगट खसिया, पूंठेथी सेवक धारे रे। १९।
को कनक कापे, लांच आपे, साहेलीने साधे रे,
जोईए ते लीजे, वखाण कीजे, विवाह मारो बाधे रे। २०।
लांबी डोक करता, नथी नरता, कहे हार आरोप रे,
फरी मुगट बांधे, प्रेम फंदे, पड्या नवग्रहे कोप रे। २१।
रायनां गोरां गात्र, तृण मात्र, ते तारुणी मन लेखती,
जोई मुख मरडे, आंख थरडे, सर्वने उवेखती। २२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अनेकने उवेखती, आघी चाली नार रे,
गई एक नळ जाणी करी, दीठी पंच नळनी हार रे। २३।

कदाचित काल ने आकर उन्हें पकड़ लिया। १८ वे बोल नहीं पा रहे थे; वे चित्र-लिखित-से रह गये। कोई-कोई (दमयन्ती को) बार-बार नमस्कार कर रहे थे; कोई-कोई उसके समीप धँसते-लपकते गये, तो उनके मुकुट गिर गये। तब पीछे से सेवकों ने (आगे बढ़कर) उन्हें (उठाकर) उनके सिर पर (फिर से) धारण करा दिया। १९ किसी ने अपने आभूषणों में से सोना काट लिया और वह घूस के रूप में देने लगा, वह (दमयन्ती की) सखियों को पटाने (का यत्न करने) लगा। (वह उनसे बोला—) 'जो चाहिए वह ले लो, मेरी (उसके पास) प्रशंसा कर लो। मेरा उससे विवाह करा दो'। २० कोई-कोई अपना सिर लम्बा कर (आगे की ओर बढ़ाते हुए) बोला, 'हम कुछ घटिया नहीं हैं; हमें हार पहना दो'। वे (राजा) फिर से मुकुट बाँधते-सँवारते रहे, प्रेम के फंदे में पड़े रहे। (उपेक्षित होने पर भी) वे क्रोध को धारण नहीं कर रहे थे। २१ उन राजाओं के गोरे-गोरे अंगों को वह तरुणी अपने मन में घास (के तिनके जैसा) मानती थी। उनकी ओर देखकर उसने मुँह फेरा, आँखें अप्रसन्नता-पूर्वक टेढ़ी कीं और सबकी उपेक्षा की। २२

अनेकों की उपेक्षा करते हुए वह नारी आगे चली। वह एक (राजा) को नल समझकर आगे गयी, तो उसने पाँच नलों की पंक्ति देखी (पाँच नलों को एक पंक्ति में बैठे देखा)। २३

कडवुं २८ मुं—(नल-दमयन्ती का विवाह और कलि का उनके प्रति ईर्ष्या करना)

राग सारंग

मनइच्छा नैषधरायतणी कन्या, गई पंच नळ भणी,
जुए तो ऊभा छे नळ पंच, कन्या कहे आ खोटो संच । १ ।
हंसनुं कह्युं अवरथा गयुं, नळ नाथनुं वरवुं रह्युं,
एक नळ सांभळियो धरा, आ कपटी को आव्या खरा । २ ।
पांच नळ चेष्टाने करे, लेवा माळ कंठ आगळ धरे,
त्यारे दमयंती थई गाभरी, दीठुं विपरीत ने पाछी फरी । ३ ।
आवी जांहां पिता भीमक, अरे तात जुओ कौतक,
हुं एक नळने आरोपुं हार, देखी पंचने पड्यो विचार । ४ ।
भीमक कहे आश्चर्य ज होय, तुं विण पंच न देखे कोय,
शके देवता तांहां निरधार, थई आव्या नळने आकार । ५ ।

कड़वक— २८ (नल-दमयन्ती का विवाह और कलि का उनके प्रति ईर्ष्या करना)

मन में निषधराज नल (का वरण करने) की कामना रखते हुए वह कन्या (दमयन्ती स्वयंवर-मण्डप में) पाँच नलों (अर्थात नल जैसे दिखायी देनेवाले व्यक्तियों) की ओर गयी। उसने देखा कि वहाँ पाँच नल खड़े (उपस्थित) हैं। वह कन्या (मन-ही-मन) बोली— यह तो खोटे (माया रूपधारी) पुरुषों का समुदाय है। १ (उसे जान पड़ा कि) हंस द्वारा बतायी हुई अवस्था नष्ट हो गयी, (अब) नल नाथ का वरण करना धरा रहा। मैंने धरती पर एक ही नल (के बारे में) सुना है। (अतः) सचमुच ये कोई कपटी पुरुष (नल का रूप धारण करके) आ गये हैं। २ (दमयन्ती को देखकर) वे पाँचों नल हावभाव करने लगे। वरमाला पहनवा लेने के लिए उन्होंने अपने-अपने कण्ठ आगे बढ़ाये। तब दमयन्ती भयभीत हुई। उसने स्थिति को (आशा के) विपरीत देखा और वह पीछे लौटी। ३ वह वहाँ लौट आयी, जहाँ उसके पिता भीमक थे (और बोली—) 'हे तात, कौतुक (तमाशा) तो देखिए— मैं तो एक नल को माला पहनानेवाली हूँ; (परन्तु यहाँ) पाँच नलों को देखकर मैं सोच-विचार पड़ गयी (मैं दुविधा में पड़ गयी) हूँ'। ४ तो भीमक बोले, 'यह तो आश्चर्य की ही बात है। बिना तुम्हारे, कोई भी पाँच नलों को नहीं देख रहा है। जान पड़ता है, निश्चय ही वहाँ देव नल का रूप लेकर आ गये हैं। ५ देवों की परीक्षा ऐसे होती है— उनके नेत्रों की पलकें नहीं झपतीं; उनके वस्त्र रजःकण-विहीन होते हैं (और) वे अन्तरिक्ष

ए परीक्षा निमेष नहीं चक्ष, वीरज वस्त्र ऊभा अंतरिक्ष,
वात सांभळी भीमकतणी, कन्या आवी पंच नळ भणी। ६।
पिताए मारग देखाडचो, नारीए नळ शोधी कहाडचो,
दमयंती जेम वरवाने जाये, धसी इंद्र नळ आगळ थायो। ७।
एक एकने अळगा करे, लेवा हार कंठ आगळ धरे,
नहीं आवे संच फरी, त्यारे दमयंती थई गाभरी। ८।
इंद्रे मनमां शाप्यो हुताशन, वांदराना जेवुं थयुं वदन,
अग्निए जाण्युं ए इंद्रनुं काज, रींछ मुख थाजो महाराज। ९।
वरुणे शाप मनमांहे दीधो, जमने मांजरमुखो कीधो,
धर्मे अंतर इच्छ्युं एवुं, वरुणनुं मुख थाजो श्वानना जेवुं। १०।
रीछ, वानर, श्वान, मांजर, कन्या कहे वर रूडा चार,
इंद्रराय वाणी एम भणे, आदवेर मांडचो आपणे। ११।
जम कहे कां हसावो लोक ? शाप कीधा मांहोमांह फोक,
दमयंती विचारे वळी, समान शोभे पंच नळी। १२।

में ही खड़े रहते हैं (उनके चरण भूमि को नहीं छूते)।' भीमक की बात सुनकर वह कन्या (फिर से) उन पाँच नलों की ओर आ गयी। ६ पिता (भीमक) ने उसे मार्ग दिखाया (उसका मार्गदर्शन किया)। (उसके आधार से) उस नारी ने नल को खोज निकाला। जैसे दमयन्ती (नल का) वरण करने चली, वैसे ही इन्द्र नल के आगे झट से बढ़कर खड़े हो गये। ७ उन्होंने (देवों ने) एक-दूसरे को अलग (दूर) किया और वरमाला स्वीकार करने के लिए कण्ठ आगे बढ़ाया। सच्चे नल को बार-बार ढूँढ़कर भी उनके गले में वरमाला पहनाने का अवसर दमयन्ती को नहीं मिला। तब वह भयभीत हो उठी। ८ (इधर) इन्द्र ने मन-ही-मन अग्नि को अभिशाप दिया, तो (उसके फल-स्वरूप) उनका मुख वानर का-सा हो गया। (इधर) अग्नि ने जान लिया कि यह इन्द्र का ही काम है। तो उन्होंने इन्द्र को यह (कहकर) अभिशाप दिया—'हे महाराज, आप ऋक्ष-मुख हो जाइए'। ९ वरुण ने मन-ही-मन (यम को) अभिशाप दिया और यम को मार्जार-मुख (बिल्ली के-से मुख वाले) बना दिया; तो धर्म (यम) ने मन में ऐसी इच्छा की— वरुण का मुख कुत्ते के मुख जैसा हो जाए। १० रीछ, वानर, कुत्ता, बिल्ली के-से मुख-धारियों को देखकर वह कन्या बोली, 'ये चार अच्छे वर हैं'। तो इन्द्रराज ने इस प्रकार बात कही— 'हमने तो आपस में ही पक्का वैर आरम्भ किया'। ११ (इसपर) यम बोले, 'लोगों को (हम पर) क्यों हँसने दें ?' फिर उन्होंने

कोने वरीए ? कोने उवेखीए ? वरमाळा कोने आरोपीए ?
जोवाने मळ्या राजकुमार, ते एक नळ देखे निरधार । १३ ।
बुद्धिमान नारी छे घणुं, मान मुकावे देवतातणुं,
चारोने पूछे करी प्रणाम, तारां तातनां शां शां नाम ? । १४ ।
लोभ विषे नहीं गण्युं पाप, वीरसेन पांचेनो बाप,
कन्या वळती करने घसे, सखी सामुं जोई जोई हसे । १५ ।
सखी कहे शुं घेलां थयां ? शुं कपटरूपने वळगी रह्यां ?
बीजा पुरुष छे रूपनां धाम, सांभळो देश देशनां नाम । १६ ।
देश सकळ नरेशनां नाम, दासी कहे वर्णवी गुणग्राम,
तोये कन्याने न गम्यो कोय, फरी फरी पांचे नळने जोय । १७ ।
'हुं हुं नळ' —पांचे ओचरे, पण कन्या कोने न जव रे,
नारदजी अंतरिक्ष आविया, इंद्राणी आदे तेडी लाविया । १८ ।
चारे देवनी चारे नार, गगने दीठी भरतार,
लज्जा पाम्या लोभी तणुं, ए कारज ते नारदतणुं । १९ ।

आपस में दिये हुए अभिशापों को निरर्थक कर दिया । दमयन्ती फिर से बिचार करने लगी— (यहाँ तो) पाँच नल एक-दूसरे के समान शोभायमान हैं । १२ किसका वरण करें ? किसकी उपेक्षा करें ? किसे वरमाला पहना दें ? जो राजकुमार देखने के लिए इकट्ठा हो गये थे, वे निश्चय ही एक ही नल देख रहे थे । १३ वह नारी (दमयन्ती) बहुत बुद्धिमान थी । उसने देवों के घमण्ड को छुड़ा दिया । उसने चारों को प्रणाम करके पूछा, 'आपके पिता के क्या···क्या नाम हैं ?' १४ लोभ के कारण (देवों ने) पाप की परवाह नहीं की । अतः वीरसेन पाँचों नलों के पिता हो गये (पाँचों ने अपने-अपने पिता का नाम वीरसेन कहा) । ऐसा उत्तर सुनते ही फिर वह कन्या हाथ मलने लगी । उसकी सखी सामने देख-देखकर हँसने लगी । १५ फिर सखी बोली, 'क्या पागल हो गयीं ? क्या इन कपट-रूपधारियों से चिपकी अर्थात् प्रभावित हो गयी हैं ? दूसरे अन्य पुरुष रूप के धाम हैं । देश-देश (के राजाओं) के नाम सुनिए' । १६ अनन्तर दासी ने समस्त देशों के राजाओं के नाम, उनके गुण-समुदाय का वर्णन करते हुए कह दिये । फिर भी (उनमें से) कोई भी उस कन्या को अच्छा नहीं लगा । वह बारबार उन पाँचों नलों को देख रही थी । १७ 'मैं नल हूँ— मैं नल हूँ ···' पाँचों ने कहा । परन्तु उस कन्या ने (उनमें से) किसी का वरण नहीं किया । (उस समय) नारद अन्तरिक्ष में आ गये । वे इन्द्राणी आदि को (अपने साथ) बुला लाये थे । १८

कन्याए दीठी देवांगना, अमर जाणीने मांडी वंदना,
अमो अल्प जीव करूप, तमो भारेखम छो भूप। २०।
अमो जम जराथी त्रासीए, पूजनिक तमने उपासीए,
तमो अमने भीमक राजान, हुं तमने पुत्री समान। २१।
एम कहीने भरियां चक्ष, लाज्या देव थया प्रत्यक्ष,
इंद्र वरुण वह्नि जमराय, शोभे मंडपे जय जय थाय। २२।
नळने थया तुष्टमान, देव कहे मागो वरदान,
बब्बे वर आपे सुरराज, नळनुं सहजे सरियुं काज। २३।
कमळमाळ आपी इंद्रराय, लक्ष वर्षे नहीं सुकाय,
अश्वमंत्र आप्यो राजन, दिन एके हींडे शत जोजन। २४।
कहे अग्नि नव दाझे तुंय, ज्यां समरे त्यां प्रगटुं हुंय,
धर्म कहे भोगवे राजभोग, त्यां लगे पुर मध्ये नहीं रोग। २५।

उन चार देवों की चार स्त्रियाँ (वहाँ आ गयी) थीं। तो उन पतियों ने अपनी-अपनी स्त्री को आकाश में देखा। तो वे लज्जा को प्राप्त हो गये। वे बहुत लोभी थे। (उन्होंने जान लिया कि) यह काम तो नारद का था। १९ कन्या (दमयन्ती) ने उन देवांगनाओं को देखा। तो देवों को जानते-पहचानते हुए उसने उनकी स्तुति आरम्भ की। (वह बोली—) 'मैं तो अल्प जीव (अल्पायु) वाली हूँ, कुरूप हूँ। आप प्रतिष्ठावान राजा हैं। २० मुझे यम तथा बुढ़ापा कष्ट पहुँचाते हैं। आप पूजनीय हैं, आपकी उपासना करते हैं। आप मेरे लिए (मेरे पिता) भीमक राजा (जैसे) हैं, मैं आपकी पुत्री के समान हूँ'। २१ ऐसा कहकर उसने (अश्रुजल से) आँखों को भर लिया, तो देव लज्जित हुए और अपने रूप में प्रकट हुए। उस मंडप में इन्द्र, वरुण, अग्नि और यमराज शोभायमान हो गये, तो जय-जयकार हो गया। २२ देव नल से सन्तुष्ट हुए और बोले, 'वरदान माँग लो'। सुरराज इन्द्र ने (तथा अन्य देवों ने) नल को दो-दो वर प्रदान किये। (इस प्रकार) नल का कार्य आसानी से सिद्ध हो गया। २३ इन्द्रराज ने उन्हें कमल-पुष्पों की माला प्रदान की, जो लाख वर्षों तक नहीं सूखनेवाली थी। उन्होंने नल राजा को अश्वमंत्र भी दिया। उसके बल से वे एक दिन में सौ योजन जाने में समर्थ हो गये। २४ अग्नि ने कहा, 'अग्नि आपको नहीं जलाएगी और जहाँ आप मेरा स्मरण करेंगे, मैं वहाँ प्रकट हो जाऊँगा'। धर्म (यम) ने कहा, 'जब तक आप राज्य का उपभोग करते रहेंगे, तब तक नगर में कोई रोग नहीं (उत्पन्न) होगा। २५ जो आपकी कथा का पठन करेगा,

जे करशे तारी कथा वाचना, तेने नव होय जमजातना,
वरुण भणे सांभळ नळराय, सूकुं वृक्ष नवपल्लव थाय । २६ ।
समर्यु जळ ऊपजे तत्काळ, आठे वर पाम्यो भूपाळ
पछी दमयंतीने आप्यो वर, अमृत-स्राविया थजो तुज कर । २७ ।
सर्वे स्तुति कीधी देवतणी, विमाने बेसी गया स्वर्ग भणी,
दमयंती हरखी तत्काळ, नळने कंठे आरोपी माळ । २८ ।
साधु राजा सर्वे बेसी रह्या, अदेखिया ऊठीने गया,
वरकन्या परण्यां रीत करी, भीमके पहेरामणी भली करी । २९ ।
लाडकोड पहोंतां कुंवरीतणां, नळने वानां कीधां घणां,
नळ दमयंती बंन्यो जाय, वोळावी वळ्यो भीमकराय । ३० ।
वाजते गाजते नळ वळ्यो, एवे कलियुग सामे मळ्यो,
वरवा वैदर्भी नारदे मोकल्यो, आवे उतावळ श्वासे हळफल्यो । ३१ ।
बेठो महिष उपर कळिकाळ, कंठे मनीषनां शीशनी माळ,
करमां कातुं लोह शणगार, शिर सगडी धीके अंगार । ३२ ।

उसे यम-यातना नहीं होगी'। वरुण ने कहा, 'हे नलराजा, सुनिए। सूखा वृक्ष नवपल्लवों से युक्त हो जाएगा। २६ जल का स्मरण करने पर वह तत्काल प्रकट होगा'। इस प्रकार नलराज आठ वरों को प्राप्त हो गये। अनन्तर उन्होंने दमयन्ती को यह वर दिया— तुम्हारे हाथ अमृतस्रावी हो जाएँगे (तुम्हारे हाथों से अमृत निःसृत होता रहेगा)। २७ (अनन्तर) सबने देवों की स्तुति की, तो वे विमान में बैठकर स्वर्ग की ओर चले गये। दमयन्ती आनन्दित हुई। उसने तत्काल नल के गले में वरमाला पहना दी। २८ साधु प्रवृत्ति के समस्त राजा बैठे रहे, तो ईर्ष्यालु (राजा) उठकर चले गये। रीति के अनुसार वर और कन्या का परिणय कराकर भीमक ने भली भाँति उपहार देते हुए बिदाई दी। २९ उन्होंने अपनी कुमारी (कन्या) के लाड़-प्यार को पूर्ण करने के लिए अनेक प्रकार के कार्य किये। नल को बहुत प्रकार से मना लिया। अनन्तर नल और दमयन्ती दोनों चले गये। उन्हें विदा करके भीमकराज लौट आये। ३० वाद्यों के बजने-गरजने के साथ नल लौटे जा रहे थे, तो उस समय कलियुग (-पुरुष) सामने मिला। नारद ने उसे दमयन्ती का वरण करने के लिए भेजा था। वह अधीरता पूर्वक हाँफता हुआ आ रहा था। ३१ कलिकाल भैंसे पर बैठा हुआ था; उसके गले में मनुष्यों के मस्तकों की (मुण्डों की) माला (पहनी हुई) थी। हाथों में लोहे की छुरी (काँता) और लोहे के आभूषण थे; मस्तक पर अँगीठी थी; उसमें अंगार धधक रहे थे। ३२ (वह

जो वरुं दमयंती रूपनिधान, जुए तो मळी सामी जान,
जाण्यो कन्याने नळ वर्यो, कळि क्रोधे पाछो फर्यो। ३३।
जो नळे परणवा दीधो नहीं, आजथी लागुं पूंठे थई,
नळराजा आव्या पुर विखे, करे राज नारीशुं सुखे। ३४।
भोगवे भोग विविध पेर, स्वर्गतणुं सुख पामे घेर,
प्रभु-पत्नीने वाध्यो प्रेम, साचवे बहु सत्य ने नेम। ३५।
चोहो वर्ण पाळे कुळकर्म, चाले यज्ञादिकनां कर्म,
तेणे कळिनुं चाले नहीं, हींडे छिद्र जोतो अहीं तहीं। ३६।
नगर पूंठे फेरा बहु खाय, संत आगळ प्रवेश न थाय,
सहस्र वर्ष वहीने गयां, दमयंतीने बे बाळक थयां। ३७।
जुग्म बाळ साथे प्रसव्यां, पुत्र पुत्री रूपे अभिनवां,
नळ दमयंती हरखे घणुं, बाळक वडे शोभे आंगणुं। ३८।
एक दिवस नळ भूपाळ, मंगाव्युं जळ थयो संध्याकाळ,
रही पाहानी कोरडी धोतां पाग, कळी पाम्यो पेठानो लाग। ३९।

सोच रहा था—) मैं रूप-निधान दमयन्ती का वरण करूँगा; परन्तु उसने देखा तो सामने बारात मिल गयी। कलि ने जान लिया कि नल ने उस कन्या का वरण किया है, तो वह क्रोध से पीछे लौट पड़ा। ३३ (उसने सोचा—) यदि नल मुझे (दमयन्ती से) परिणय करने नहीं दें, तो आज से मैं उसके पीछे पड़ जाऊँगा। (तदनन्तर) नलराजा नगर में आ गये। वे अपनी स्त्री-सहित सुखपूर्वक राज करने लगे। ३४ वे विविध प्रकार से भोग भोग रहे थे। वे घर में (ही) स्वर्ग के सुख को प्राप्त हो रहे थे। पति और पत्नी में प्रेम बढ़ता रहा था। वे बहुत सत्य (व्रत) और नियमों का निर्वाह करते थे। ३५ (उसके राज्य में) चारों वर्ण अपने-अपने कुल-धर्म का पालन करते थे; यज्ञ आदि कर्म (भली भाँति) चलते थे। इसलिए कलि की कोई चलती नहीं थी। अतः वह (पैठने के लिए) इधर-उधर छिद्र को ढूँढ़ते हुए भ्रमण करता था। ३६ वह नगर के पीछे बहुत चक्कर लगा रहा था; फिर भी सन्तों (सज्जनों) के सामने उसका प्रवेश नहीं रहा था। (इस प्रकार) एक सहस्र वर्ष बीत गये। दमयन्ती के दो बालक उत्पन्न हुए। ३७ उसने पुत्र-पुत्री रूप में दो अभिनव यमल बालकों को जन्म दिया। नल-दमयन्ती बहुत हर्षित हुए। उन (दोनों) बालकों से आँगन शोभायमान हो रहा था। ३८ एक दिन नल राजा ने पानी मँगाया। शाम हो गयी थी। (उस समय) पाँव धोते समय उनकी एक एड़ी सूखी रह गयी। तो कलि को प्रवेश करने के

संध्यावंदन कीधुं राजान, प्रवेश कळीनो थयो ते स्थान,
ज्यां शय्या सूतो भोपाळ, सर्वांगे व्याप्यो कळिकाळ। ४०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कळिकाळ व्याप्यो रायने, भ्रष्ट थयो नैषधधणी रे,
हवे वहराडुं पित्राईने, कही चाल्यो पुष्कर भणी रे। ४१।

लिए अवसर मिल गया। ३९ राजा ने (तत्पश्चात् वैसे ही) सन्ध्या-वन्दन किया। कलि का प्रवेश उस स्थान पर हो गया। जब राजा नल शय्या पर सो गये, तब कलि उनके समस्त अंग में व्याप्त हो गया। ४०

निषध-पति नल राजा जब भ्रष्ट हुए, तो कलिकाल ने उन्हें व्याप्त किया। अनन्तर वह यह कहते हुए पुष्कर की ओर चला गया कि मैं अब पितृव्य सम्बन्धी फूट (दुराव, विरोध) उत्पन्न कर दूंगा। ४१

कडवुं २६ मुं—(कलि और द्वापर द्वारा पुष्कर को उकसाकर नल से द्यूत खेलने के लिए ले आना)

राग कहालेरो

कळिजुग द्वापर मळीने आव्या, पुष्कर केरे पास रे,
हस्त घसे ने मस्तक धूणे, मुखे मूके निश्वास रे। कळिजुग०। १।
वेश विप्रनो धर्यो अधर्मी, ने बंन्यो मस्तक डोले रे,
नैषधपति बेठो तप करवा, थई तरणांनी तोले रे। कळिजुग०। २।
एक कुळमां उदय बंन्योना, तुं जोगी नळ राणो रे,
ते भोग भोगवे नाना विधना, तारे नहीं जळ-दाणो रे। कळिजुग०। ३।

कड़वक—२६ (कलि और द्वापर द्वारा पुष्कर को उकसाकर नल से द्यूत खेलने के लिए ले आना)

कलियुग और द्वापर (युग) मिलकर पुष्कर के पास आ गये। वे हाथ मल रहे थे और सिर आवेशपूर्वक हिला रहे थे। वे मुँह से साँस ले रहे थे। कलियुग०। १ उन अधर्मियों (पापियों) ने ब्राह्मण का वेश धारण किया था। वे दोनों मस्तक हिला रहे थे। वे बोले,) ' हे निषधराज, तुम तिनके से तुल्य (अर्थात् कृश) होते हुए तप करने बैठे हो। कलियुग०। २ तुम (और नल)

कळि कहे छे जो जो भाईओ, कर्मे वाळ्यो आडो आंक रे,
एक ज बोरडीना बे कांटा, एक पाधरो एक वांको रे ।कळिजुग० । ४ ।
तारा पिताशुं अमारे मैत्री, ते माटे हित कीजे रे,
एम कही कर ग्रही उठाड्यो, आव आलिंगन दीजे रे। कळिजुग०। ५ ।
भेटतामां पिंड पुष्करना मध्ये, कीधो कळिए प्रवेश रे,
तेडी चाल्यो नैषधपुर भणी, करवा नळशुं क्लेश रे । कळिजुग० । ६ ।
वाटे जातां वारता परठी, नवळवुं नांखो जाशा रे,
कळि कहे तुं द्यूत रमजे, हुं थाउं बे पाशा रे । कळिजुग० । ७ ।
प्रथम पोण करजे वृषभनुं, द्वापर थाशे पोठी रे,
सर्वस्व हरावी लेजे नळनुं, ए वात गमती गोठी रे । कळिजुग० । ८ ।
जद्यपि पुष्कर पवित्र हुतो, नहोती राजनी अभिलाषा रे,
ऊपजी ईर्ष्या नळराय उपर, मल्या जुग बे अदेखा रे। कळिजुग० । ९ ।
वृषभवाहन पासा करमां, आव्यो राजसभाय रे,
बांधव जाणी दया मन आणी, नळ ऊठी बेठो थाय रे । कळिजुग । १० ।

दोनों का एक (ही) कुल में जन्म हुआ। (परन्तु) तुम योगी बन गये हो और नल राजा बन बैठा है। वह नाना प्रकार के भोगों का उपभोग कर रहा है; (परन्तु) तुम्हारे लिए दाना-पानी (तक) नहीं (मिल) रहा है'। कलियुग० । ३ कलि बोला, 'देख लो, देख लो भाइयो, उसके कर्म चरम सीमा तक पहुँच गये हैं। एक ही बेर के दो काँटे हैं— एक सीधा है, (जब कि दूसरा) एक टेढ़ा है। कलियुग० । ४ तुम्हारे पिता से हमारी मित्रता थी। इसलिए तुम्हारा हित कर रहे हैं।' ऐसा कहते हुए उसने उसका हाथ पकड़कर उठा लिया और कहा 'आओ, हमारा आलिंगन करो'। कलियुग० । ५ गले लगते ही पुष्कर के शरीर के अन्दर कलि ने प्रवेश किया। अनन्तर उसे बुलाकर (साथ में लेकर) वह नल को क्लेश उत्पन्न करने के लिए नैषधपुर के प्रति चला गया। कलियुग० । ६ मार्ग में जाते हुए यह बात तय हुई कि विनती करने पर भी (पुष्कर नल से) नहीं मिले। कलि बोला, 'तुम द्यूत खेलो। मैं दो पाँसे बन जाऊँगा। कलियुग० । ७ पहले बैल का प्रण करो। यह द्वापर टाँड़े का बैल बन जाएगा। तुम नल का सरबस हराकर ले लो। यह बात हमें अच्छी लगती है'। कलियुग० । ८ यद्यपि पुष्कर पवित्र (आचरण तथा विचार वाला) था, उसे राज्य (पाने) की कोई अभिलाषा नहीं थी, फिर भी, उससे दो ईर्ष्यालु युग मले थे, इसलिए लसमें नल से ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी। कलियुग० । ९ पाँसे का वाहन वृषभ (बैल) हाथ में पाँसा

भले पधार्या पुष्कर भाई, जोगी वेशने छांडो रे,
आ घर राज तमारुं वीरा, राजनी रीति मांडो रे । कळिजुग०।११।
आसन आपी करे पूजन, पूछे कुशळी क्षेम रे,
नळने कहे बीजी वाते न राचुं, द्यूत रमवानो प्रेम रे । कळिजुग०।१२।
नळ कहे बांधव द्यूत न रमीए, ए अनर्थनुं मूळ रे,
तुं जोगेश्वर कां उपजावे, उदर चोळीने शूळ रे ? कळिजुग०।१३।
पुष्कर कहे मारो पांच मुद्रानो, पोठी जीतुं के हारुं रे,
एकी पासे बळद मारो, एकी पासे राज तारुं रे । कळिजुग०।१४।
कळिने संगे पुण्यश्लोकने, पापतणी मति आवी रे,
द्यूत रमवुं अप्रमाण छे पण, वात आगळ भावी रे । कळिजुग०।१५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भावी पदारथ भूपने, वेठवुं छे बहु कष्ट रे,
द्यूत रमवा बेठो राजा, कीधो कळिए भ्रष्ट रे । १६ ।

लिये हुए वह राज-सभा में आ गया। तो उसे अपना बन्धु जानकर मन में (उसके प्रति) दया लाकर (अनुभव करके) राजा नल उठकर बैठ गये। कलियुग०।१० (वे बोले—) 'हे पुष्कर भाई, तुम अच्छे पधारे। तुम (अब) जोगी-वेश को छोड़ दो। हे भाई, यह घर, राज तुम्हारा है। राज्य सम्बन्धी नीति (के अनुसार कार्य) आरम्भ करो।' कलियुग०।११ (अनन्तर) उसे (बैठने के लिए) आसन देकर उन्होंने उसका पूजन किया; (और) कुशल-क्षेम पूछी। तो वह नल से बोला, 'मैं दूसरी किसी बात में कोई रस नहीं लेता। मुझे द्यूत खेलने में प्रेम (रुचि) है'। कलियुग०।१२ (यह सुनकर) नल बोले, 'हे बन्धु, द्यूत न खेलें। (क्योंकि) वह तो अनर्थ की जड़ है। तुम योगेश्वर हो; पेट में, मल-मलकर (बलात्) शूल (दर्द) क्यों उत्पन्न कर रहे हो ?' कलियुग०।१३ इसपर पुष्कर बोला, 'मेरा पाँसा पाँच मुद्राओं वाला है और मैं बैल को (प्रण पर लगाकर) जीत लूंगा या हारूँगा। एक पाँसे पर मेरा यह बैल (लगा) है और एक (दूसरे) पर तुम्हारा राज्य है'। कलियुग०।१४ कलि की संगति (के प्रभाव) से उन पुण्यश्लोक नलराज में पाप की बुद्धि उत्पन्न हो आयी। द्यूत खेलना अप्रमाण अर्थात शास्त्र-प्रमाण के विरुद्ध है। फिर भी आगे बात होनी की थी। कलियुग०।१५

होनी तो बड़ा तत्त्व है। आगे राजा नल को बहुत कष्ट झेलने हैं (थे), (इसलिए) वे राजा द्यूत खेलने बैठ गये। कलि ने उनको (मति-) भ्रष्ट कर डाला था।१६

कडवुं ३० मुं—(द्यूत में नल की हार होना)

राग मेवाडो

नळराजाए द्यूत आरंभ्युं, सत्य थयुं सर्व फोक जी,
नग्र मध्ये वारता जाणी, त्राहे त्राहे करे लोक जी। १ ।
दमयंतीए नळने कहाव्युं, बळद भणी मा जोशो जी,
ए वृषभमां वेरी छे कारमो, राज रमतां खोशो जी। २ ।
डाह्या लोक नगरना वारे, घणुं वारे परधान जी,
कळिजुगे बुद्धि भ्रष्ट ज कीधी, कह्युं कोनुं न धरे कान जी। ३ ।
बेठा बांधव पोण परठीने, डोले पुष्कर राय जी,
जे हारे ते राज मेली, त्रण वरस वन जाय जी। ४ ।
त्रण वरस गुप्त ज रहेवुं, वेष अन्य धरी जी,
कदाचित प्रीछ्युं पंडे तो, वन भोगवे फरी जी। ५ ।
महिमा मोटो कळिजुग केरो, नळने गमी ते वात जी,
नळ कहे रे नाख पासा, त्यारे वरस्यो शोणित वरसाद जी। ६ ।
हाहाकार हवो पुर मध्ये, वायु सामटो वाय जी,
नाख्या पासा पुष्कर जीत्यो, सर्वस्व हार्यो राय जी। ७ ।

कड़वक—३० (द्यूत में नल की हार होना)

नलराजा ने द्यूत खेलना आरम्भ किया। उनका समस्त सत्य (धर्म) व्यर्थ (सिद्ध) हो गया। नगर में यह समाचार (लोगों को) विदित हुआ। तो लोग त्राहि-त्राहि करने लगे। १ दमयन्ती ने नल को कहलवा दिया कि बैल की ओर न देखना। इस वृषभ के अन्दर बड़ी कुटिल प्रकृतिवाला शत्रु है। आप खेलते-खेलते राज्य खो बैठेंगे। २ नगर के समझदार-सयाने लोगों ने (राजा को) रोकने का यत्न किया; मंत्रियों ने बहुत रोका। (फिर भी) कलियुग ने (राजा की) बुद्धि को भ्रष्ट किया था। इसलिए उन्होंने किसी के कहे पर कान नहीं दिया (किसी की बात को सुनकर नहीं माना)। ३ दोनों बन्धु प्रण निर्धारित करके बैठ गये। पुष्कर और राजा (मारे खुशी के) डोल रहे थे। प्रण यह था—) जो हारेगा, वह राज्य छोड़कर तीन बरस के लिए वन में जाएगा। ४ उसे तीन बरस कोई दूसरा वेश धारण करके गुप्त रूप से रहना है। यदि कदाचित पहचाना जाए, तो फिर से वन(-वास) भोग ले। ५ कलियुग की महिमा बड़ी है। नल को वह बात अच्छी लगी। नल बोले, ‘ अरे, पाँसा फेंको ’। तब रक्त की बौछार हुई। ६ नगर में

हार्यो नळ ने पुष्कर जीत्यो, जई बेठो सिंहासन जी,
आण पोतानी वर्तावी पुरमां, कहे नळने जाओ वन जी। ८।
वनकुळ पहेरी वन वसो, ने करो वनफळ आहार जी,
एक वस्त्र राखो शरीरे, बाकी उतारो शणगार जी। ९।
सर्व तजी एक वस्त्र राखी, ऊठ्यो नळ भूपाळ जी,
दमयंतीने कहावियुं तुं, पियर जाजे आ काळ जी। १०।
रुदन करती राणी आवी, बाळक झाल्यां हाथ जी,
शीश नामीने स्वामीने कहे, मुंने तेडो साथ जी। ११।
सुखदुःखनी कहीए वारता, एकलां नव सोहाय जी,
हुं सेवाने आवुं सही रे, थाको तो चांपुं पाय जी। १२।
कंथ कहे हो कामिनी, तुं आवे मुजने जंजाळ जी,
ए दुःख सघळां वेठीए पण, टळवळी मरे बन्ने बाळ जी। १३।
रोती कहे छे कामिनी रे, जेम छाया देहने वळगी जी,
तेम हुं तमारी तारुणी रे, केम रे थाउं अळगी जी। १४।

हाहाकार मचा; साथ में (प्रचण्ड) वायु बहने लगी। पाँसे चलाये (गये), पुष्कर जीत गया और नल राजा सरबस हार बैठे। ७ नल हारे और पुष्कर जीता। तो जाकर वह सिंहासन पर बैठ गया। उसने नगर में अपनी आन फिरवा दी (डंका बजवाया) और नल से कहा, 'बन में जाओ। ८ वल्कल पहनकर वन में निवास करो। और वन्य फल खाया करो। शरीर पर एक वस्त्र धारण करो, शेष शृंगार उतार दो'। ९ सबका त्याग करके, (केवल) एक वस्त्र (शरीर पर) रखकर राजा नल उठ गये (चले जाने के लिए तैयार हो गये)। उन्होंने दमयन्ती से कहला दिया— 'इस समय तुम पीहर चली जाओ'। १० तो रानी दमयन्ती रुदन करती हुई आ गयी। उसने बच्चों को हाथ से पकड़ लिया। सिर नवाकर वह अपने स्वामी से बोली, 'मुझे अपने साथ ले चलिए। ११ (मुझसे) सुख-दुःख की बात कहें। अकेले (रहना) शोभा नहीं देता। मैं आपकी सेवा के लिए (साथ में) निश्चय ही मुच आ जाती हूँ। आप थक जाएँ, तो मैं आपके पाँव दबाऊँगी'। १२ तो पति (नल) बोले, 'हे कामिनी, तुम आओगी, तो मेरे लिए झंझट खड़ी हो जाएगी। ये समस्त दुःख झेल लें, फिर भी ये दोनों बालक छटपटाते हुए मर जाएँगे'। १३ तो कामिनी रोते-रोते बोली, 'जिस प्रकार परछाईं देह से चिपकी हुई होती है, उसी प्रकार मैं आपकी स्त्री हूँ। मैं आपसे कैसे अलग हो जाऊँ? १४

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जो अळगी करशो नाथ जी, तो प्राण तजुं तत्काळ रे,
नळ कहे आवो वन विषे तो, पियेर वळावो बाळ रे। १५।

हे नाथ, यदि मुझे आप अलग कर देंगे, तो मैं तत्काल प्राणों को त्यज दूंगी'। तो नल बोले, '(मेरे साथ) वन में चली आओ; (परन्तु) बच्चों को पीहर के प्रति बिदा कर (भेज) दो'। १५

कडवुं ३१ मुं—(दमयन्ती द्वारा बच्चों को ननिहाल भेजना)

राग मेवाडो

मोसाळ पधारो रे, मोसाळ पधारो
मोसाळ पधारो बाडुआं रे, मारां लाडकवायां बे बाळ;
नमायां थई वरतजो, सहेजो मामीनी गाळ—मोसाळ०।१।
हृदया चांपे रे, राणी हृदया चांपे,
हृदया चांपे पेटने रे, ए छेल्लुंवहेलुं लाड;
हवे मळवां दोहलां रे, मळीए तो प्रभुनो पाड—मोसाळ०।२।
थयां मात-वोहोणां रे, थयां मात-वोहोणां
मात-वोहोणां थयां दामणां रे, नहि को रुडो साथ,
रुए राणी हृदयाफाटे रे, कोण माथे फेरवशे हाथ—मोसाळ०।३।

कड़वक— ३१ (दमयन्ती द्वारा बच्चों को ननिहाल भेजना)

'ननिहाल पधारो, (रे बच्चो) ननिहाल पधारो। हे बेचारो, ननिहाल पधारो। मेरे लाड़ले दोनों बच्चो! (ननिहाल पधारो)। मातृ-हीन बच्चे होकर (उस स्थिति के अनुरूप) आचरण करते रहो। मामी की गालियां सहन करो। ननिहाल०'। १ रानी दमयन्ती उन्हें हृदय से लगा रही थी, हृदय से लगा रही थी। अपने पेट से उत्पन्न उन बच्चों को वह हृदय से लगा रही थी। (उसे लग रहा था कि) यह तो अन्तिम-अन्तिम लाड़-प्यार है। अब (फिर से) मिलना कठिन है। मिलें तो भगवान का उपकार होगा। ननिहाल०। २ (वह बोली—) 'तुम अब मातृ-बिहीन हो गये हो, मातृविहीन हो गये हो। तुम (अब) मातृ-विहीन, पराधीन हो गये हो। कोई अच्छा साथ में (साथी) नहीं है'। रानी कलेजा फाड़कर रो रही थी। (उसे सान्त्वना देते हुए उसके) सिर पर

मंदिरना गुरुजी रे, मंदिरना गुरुजी;
मंदिरना गुरुजी सुदेवजी रे, तमारे खोळे सोंपुं बे तन;
जई कहेजो मारी मातने रे, जीवनी पेरे करजो जतन—मोसाळ०।४।
पुत्री जमाई रे, तमतणां पुत्री जमाई,
पुत्री जमाई तमतणां, कहेजो वनमां पूर्यो वास;
जई कहेजो मारा तातने रे, अम जोगीनो ले तपास—मोसाळ०।५।
चुंबन करती रे, मावडी चुंबन करती,
चुंबन करती मावडी रे, फरी फरी मुख जोय,
हैयेथकां ऊतरे रे, एम कही दमयंती रोय—मोसाळ०।६।

वलण (तर्ज बदलकर)

रोये राणी अति घणुं, वत्स सोंप्यां गुरुकरमांहेरे;
ऋषि साथे बे बाळाकां, वोळव्यां नळराये रे। ७ ।

कौन हाथ फेरेगा। ननिहाल०। ३ (दमयन्ती ने कहा—) 'हे मन्दिर के गुरुजी, हे मन्दिर के गुरुजी, हे मन्दिर के गुरुजी सुदेवजी, मैं तुम्हारी गोद में इन दो जनों को सौंप रही हूँ। जाकर मेरी माता से कहिए कि प्राणों की भाँति इनकी रखवाली करना। ननिहाल०। ४ कह दीजिए कि पुत्री और दामाद, (तुम्हारी) पुत्री और दामाद, (तुम्हारी) पुत्री और दामाद ने वन में निवास किया है। जाकर मेरे पिता से कहिए कि हम जोगियों (वनवासियों) की खोज-खबर लीजिए। ननिहाल०'। ५ (दमयन्ती) बच्चों को चूम रही थी, मैया (बच्चों को) चूम रही थी, मैया (बच्चों को) चूम रही थी; बार-बार उनके मुख को देख रही थी। 'वे मेरे हृदय में से नहीं उतर सकते'—ऐसा कहते हुए दमयन्ती रोने लगी। ननिहाल०। ६

रानी दमयन्ती अत्यधिक रो रही थी। उसने अपने बछड़ों (बच्चों) को गुरुजी के हाथों में सौंप दिया। नलराज ने (अनन्तर) ऋषि सुदेव के साथ उन दो बालकों को बिदा किया। ७

कडवुं ३२ मुं—(नल द्वारा क्रुद्ध होकर दमयन्ती को छोड़कर जाना)

राग वेराडी

बाळकां वोळाव्यां ऋषि संगाथे, दमयंती करे आक्रंद,
हाहाकार हवो पुर मध्ये, मळ्यां सहियरनां वृंद । १ ।
पडो वागो पुष्कर पापीनो, नळने को नव राखे,
एक अंजलि जळ न पाम्यां, जो भम्यां पुर आखे । २ ।
द्वार अडकावे नळने देखी, जे पोतानां लोक,
तरसी दमयंती पाणी न पामी, कंठे पडियो शोष । ३ ।
एक रात रह्यां नगरमां, चाल्यां वहाणुं वाते,
पुण्यश्लोकनी पूंठ ज लीधी, कळि थयो संगाते । ४ ।
ज्यां वाव सरोवर कूवा आवे, पाकां फळनी वाडी,
रिपु कळिजुग आगळ जईने, सर्व महेले उजाडी । ५ ।
फळ जळ ने पत्र न पाम्यां, राणी करे आंसुपात,
वनमां फरतां रुदन करतां, वही गया दिन सात । ६ ।

कड़वक— ३२ (नल द्वारा क्रुद्ध होकर दमयन्ती को छोड़कर जाना)

नलराज ने उन दो बच्चों को ऋषि सुदेव के साथ बिदा किया, तो दमयन्ती आक्रन्दन करने लगी। (उधर) नगर में हाहाकार मच गया। (दमयन्ती की) सखियों का वृन्द इकट्ठा हुआ। १ पापी पुष्कर का नगाड़ा बजा (पुष्कर ने डौंड़ी बजाते हुए यह आदेश दिया) कि नल को (अपने यहाँ) कोई भी न रख ले। (फल-स्वरूप) यद्यपि वे पूरे नगर में घूमते रहे, तो भी एक अंजलि भर पानी को वे प्राप्त नहीं हो सके। २ जो उनके अपने लोग (प्रजाजन) थे, वे नल को देखते ही द्वार बन्द करते थे। दमयन्ती (मारे प्यास के) तरसने लगी। वह पानी को प्राप्त नहीं कर सकी। (फलतः) उसका कण्ठ-शोष हो गया (उसका गला सूख गया)। ३ वे एक रात नगर में ठहर गये और सबेरा होने पर चल पड़े। कलि तो पुण्यश्लोक नल के पीछे ही पड़ा रहा। वह (भी) उनके साथ हो गया। ४ जहाँ बावली, सरोवर, कुआँ आ जाता, पके फलों का बगीचा आ जाता, तो वहाँ शत्रु कलियुग आगे जाकर समस्त मुहल्लों-बस्तियों को उजाड़ (नष्ट-भ्रष्ट) कर डालता। ५ (अतः) वे (नल और दमयन्ती) फल, जल और पत्ते को प्राप्त नहीं हो सके। रानी आँसू बहाती रही। (इस प्रकार) वन में घूमते-घूमते, रुदन करते-करते सात दिन बीत गये। ६

अकेकुं पटकूळ पहेयुं, प्रेमदा कोमळ काया दाझे,
पाय पंकजपत्र जेवा, तीव्र कांटा भाजे। ७।
एक मानसरोवर आगळ आव्युं, तेमां दीठुं पाणी,
घणा दिवसनी तृष्णा समाववा, पीधुं राय ने राणी। ८।
वारंवार पाणी पीए ने, बेसे वळी हींडे,
नर नारी वारिए तृप्त थयां, पण क्षुधा पापणी पीडे। ९।
स्वामी कहे सांसतां थईए, श्यामा बेस थईने स्वस्थ,
जौं सरोवरमां शोधी लावुं, जो जडे एक बे मच्छ। १०।
थोडा जळमां पेठो नळराजा, ढीमरनुं आचरण,
साधु रायने श्रम करतां, मच्छ जडियां त्रण। ११।
आणीने अबळाने आप्यां, वामा कहे थयुं वारु,
नळ कहे आपण बे प्राणीने, शुं होशे एटला सारु। १२।
भार्याना भुज मध्ये सोंपी, भूप गयो बीजी वरां,
कळिजुग सर्प थईने बिहावे, मच्छ नासे अरांपरां। १३।
नळे श्रम कीधो घटी बे, मच्छ न चढियां हाथ,
पेलां त्रणे मच्छ वहेंचीने लीजे, विचार्युं मन साथ। १४।

उन्होंने एक-एक वस्त्र पहना था। उस स्त्री की कोमल देह झुलसती रहती। कमल-पत्र जैसे उसके (कोमल) पाँवों में नुकीले काँटे चुभकर टूट जाते थे। ७ आगे (जानेपर) एक मानसरोवर (जैसा सरोवर) आ गया। उसमें उन्होंने पानी देखा। राजा और रानी ने बहुत दिनों की प्यास बुझाने के लिए पानी पिया। ८ वे बार-बार पानी पीते और बैठ जाते। फिर घूमने लगते। वे नर-नारी पानी से तृप्त हो गये (उनकी प्यास तो बुझ गयी); परन्तु पापिनी भूख उन्हें सता रही थी। ९ तो स्वामी (पति नल) बोले, 'हम धैर्ययुक्त हो जाएँ (धैर्य धारण करें)। अरी स्त्री, शान्त होकर बैठ जाओ। मैं जाकर सरोवर में खोज लेता हूँ कि उसमें एक-दो मछलियाँ मिल सकती हैं (या नहीं)'। १० नलराज थोड़े पानी में पैठ गये। उन्होंने मछुए का काम किया। श्रम करने पर उन भले राजा को तीन मछलियाँ मिल गयीं। ११ लाकर उन्होंने (वे मछलियाँ) उस स्त्री को दे दीं, तो वह स्त्री बोली, 'अच्छा हो गया'। (फिर) नल बोले, 'हम दो मनुष्यों का इतने से भला क्या हो सकता है'। १२ पत्नी के हाथों (मछलियाँ) सौंपकर राजा नल दूसरी बार चले गये। तो कलि ने (पानी में) साँप बनकर डरा दिया, तो मछलियाँ इधर-उधर भाग जाने लगीं। १३ नल ने दो घड़ियाँ परिश्रम किया, परन्तु उनके हाथ (और)

नळ आव्यो निराश थईने, त्रण मीनमां चित्त,
एटलामां दमयंतीने, थई आव्युं विपरीत। १५।
अमृतस्त्रविया कर अबळाना, सजीवन थयां मच्छ पळमां,
हाल्यां महिला मूकी दीधां, ऊडी पड्यां जई जळमां। १६।
घेली सरखी मीनने काजे, पाणीमां वेवलां वीणे,
हवे स्वामीने शो उत्तर आपीश ? रुदन करे स्वर झीणे। १७।
वीले मुख दीठी वैदर्भी, नाथ आवतो नीरखे,
चौदश भाळे आंसु ढाळे, स्वातिबिंदु शुं वरषे। १८।
रोती पत्नी पतिए दीठी, धोळुं मुख थयुं दीन,
कहे रे पापिणी शके मुज पाखे, भक्ष कर्यां तें मीन। १९।
हुं क्षुधातुर फरीने आव्यो, रझळ्यो पांणीमांहे,
दोढ दोढ मच्छ भोजन कीजे, लाव पापिणी कांहे। २०।
हृदे फाटते बोली राणी, आंसु पडे मोती दाणा,
क्षुधातुर पापिणीए मच्छ भक्ष्यां, में न रहेवायुं राणा। २१।

मछलियाँ नहीं आयीं। (इसलिए) उन्होंने मन में यह विचार किया कि पहले पायी हुई तीन मछलियों को हम बाँट लें। १४ नल निराश होकर (लौट) आये। उनका चित्त उन तीन मछलियों में (लगा हुआ) था। इतने में दमयन्ती के साथ एक विपरीत बात (घटित) हुई। १५ उस स्त्री के हाथ (इन्द्र के वर से) अमृत-स्रावी (बन गये) थे। (अतः हाथ में रखी हुई मृत) मछलियाँ पल में जीवित हो गयीं। वे हिलने लगीं, तो उस महिला ने उन्हें छोड़ दिया; (फिर) वे उछलते हुए जाकर जल में गिर गयीं। १६ वह पगली जैसी, मछलियों के लिए व्याकुल होकर पानी में छानने-बिनने लगी। (उसने सोचा—) अब मैं पति को क्या उत्तर दूँ ? वह धीमे स्वर में रुदन करने लगी। १७ उसने पति को आते हुए देखा। उन्होंने उसे लज्जित-मुख देखा। वह चारों ओर देख रही थी और आँसू बहा रही थी। मानो स्वाति नक्षत्र के जल-बिन्दु बरस रहे थे। १८ पति ने रोती हुई पत्नी को देखा। उसका गोरा मुख दीन हुआ था। वे बोले, 'जान पड़ता है, जैसे बिना मेरे (मेरी अनुपस्थिति में) तुमने मछलियों को खा डाला है। १९ मैं भूख से व्याकुल होकर लौटकर आ गया हूँ— पानी में व्यर्थ ही घूमता रहा। (सोचा था—) डेढ़-डेढ़ मछली खा लेंगे। अरी पापिनी, लाओ। मछलियाँ कहाँ हैं'। २० तो रानी हृदय के फटते रहते बोली। (उसकी आँखों से) मोतियों के दानों से अश्रु गिर रहे थे। 'हे राजा, क्षुधातुर होकर

नळ कहे हंसे शिखामण दीधी, विदाय थयो आकाश,
एक द्यूत न रमीए बीजुं, न कीजे नारीनो विश्वास । २२ ।
बे वानां वार्यां ते कीधां, हाथे दुःख लीधुं मागी,
हुं भूख्यो ने तें मच्छ खाधां, शुं आग पेटमां लागी ? । २३ ।
दमयंती हा हा करे, जाणे सम खाउं साने,
सजीवन थयां ऊडी गयां, कहुं तो राय नव माने । २४ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

न माने राजा ए आश्चर्य मोटुं, ऊठी चाल्यो नळराय रे,
अणतेडी राणी दमयंती, पतिनी पूंठे धाय रे । २५ ।

मैं पापिनी ने मछलियाँ खा डालीं। मुझसे रहा नहीं गया'। २१ तो नल बोले, 'हंस ने मुझे यह सीख दी और वह आकाश में बिदा हुआ—एक, द्यूत न खेलें और दूसरे, नारी पर विश्वास न करें। २२ उसने (जिन) दो बातों का निषेध किया था, वे मैंने कीं। मैंने अपने हाथों से दुःख माँग लिया। मैं भूखा रह गया हूँ और तुमने मछलियाँ खा डालीं। क्या पेट में आग लगी थी'? २३ दमयन्ती हाय-हाय करती रही। उसने समझा कि मैं शपथ कर लूं (और कहूँ) कि मछलियाँ (फिर से) सजीव होकर उछल पड़ीं, तो भी राजा नहीं मान जाएँगे। २४

राजा नहीं मान जाएंगे। यह (मछलियों का पुनर्जीवित होकर उछल पड़ना) बड़ा आश्चर्य है। (तदनन्तर) नल राजा उठकर चले जाने लगे, तो रानी दमयन्ती (पति द्वारा न बुलाये जाने पर भी) पति के पीछे दौड़ी। २५

कडवुं ३३ मुं—(कलि द्वारा नल की बुद्धि को भ्रष्ट कर देना और नल द्वारा दमयन्ती का परित्याग करना)

राग वेराडी

आगळ नळ पूंठे प्रेमदा, सतीने अंतर आपदा,
नळ तिरस्कार हींडतां करे, हृदे फाटे अबळा आंख भरे। १ ।

कड़वक— ३३ (कलि द्वारा नल की बुद्धि को भ्रष्ट कर देना और नल द्वारा दमयन्ती का परित्याग करना)

आगे-आगे नल जा रहे थे, तो उनके पीछे-पीछे वह प्रमदा (दमयन्ती) चली जा रही थी। उस सती को अन्तःकरण में दुःख अनुभव हो रहा था।

खाधां मच्छ हशे गत घणी, तो हींडे छे रे पापिणी,
पी रे पाणी फरी फरी, कां जे मच्छ खाधां पेट भरी। २।
बे मारग आव्या आगळे, विदाय कीधी नारी नळे,
तुं नहीं नारी, हुं नहीं कंथ, आ तारा पियरनो पंथ। ३।
मारो संग तुजने नहीं गमे, पियरमां पेट भरीने जमे,
मुंने नाथजी करजो क्षमा, मारे नथी पियरनी तमा। ४।
फोकट करो मुज पर रीस, अजुगत आळ चडावो शीश,
देवतानुं मुंने वरदान, ते कां नव जाणो राजान? । ५।
होती वात कामिनीए कही, कळिने जोगे नळ माने नहीं,
आगळ-पाछळ बन्ने जाय, कळिए कीधी खगनी काय। ६।
थोडी पांख ने मांस ज घणुं, लोभाणुं मन राजातणुं,
पंखीमां दीसे घणो भार, नरनारीनो पूरण आहार। ७।
कोण प्रकारे खगने हणुं? उपर वस्त्र नाखुं मुजतणुं,
उफराटी करी सुंदरी, नळ चाल्यो देह नग्न करी। ८।

चलते हुए नल उससे तिरस्कार (व्यक्त) कर रहे थे। उस अबला का हृदय फटता जा रहा था। वह आँखों को (आँसुओं से) भर रही थी। १ (नल ने कहा—) 'तुमने मछलियाँ खायी होंगी। अतः तुम्हारी गति बहुत है फिर री पापिनी, तुम (यों) चल रही हो। बार-बार पानी इसलिए पियो कि पेट भरकर मछलियाँ खायी हैं'। २ आगे (जाने पर) दो मार्ग आ गये, तो नल ने (अपनी) स्त्री को बिदा किया (करना चाहा)। (वे बोले—) 'तुम (मेरी) स्त्री नहीं हो— न मैं (तुम्हारा) पति हूँ। यह तुम्हारे पीहर का मार्ग है। ३ मेरा साथ तुम्हें अच्छा नहीं लगता। तो पीहर में (रहकर) पेट भरकर भोजन करती रहो।' (यह सुनकर दमयन्ती बोली—) 'हे नाथ, मुझे क्षमा करना। मुझे पीहर की कोई चिन्ता नहीं है। ४ आप मुझपर व्यर्थ ही क्रोध कर रहे हैं। मेरे सिर पर अनुचित दोषारोप लगा रहे हैं। हे राजा, मुझे देवों का वरदान (प्राप्त) है, क्या आप उसे नहीं जानते?' ५ उस कामिनी ने घटित बात कही, फिर भी कलि के (प्रभाव के) योग से नल उसे (सत्य) नहीं मान रहे थे। फिर वे (एक-दूसरे के) आगे-पीछे चलने लगे, तो कलि ने एक पक्षी की देह धारण की। ६ उस पक्षी के पर कम थे और मांस ही बहुत (दिखायी दे रहा) था; तो राजा का मन लालच में पड़ गया। (उन्हें जान पड़ा—) इस पक्षी में बहुत भार (मांस का) दिखायी दे रहा है, अतः वह नर-नारी के लिए पूर्ण आहार (सिद्ध हो सकता) है। ७

लाज्युं पंखी ने लाज्युं वन, लाज्या सूरज मीच्यां लोचन,
स्वादइंद्रिये पीडचो महाराज, थयो नग्न ने लोपी लाज । ९ ।
पीतांबर झाली भूपाळ, जेम माछी ग्रही नाखे जाळ,
खग निकट गयो जव राय, तेम तेम कलि आघेरो जाय । १० ।
धाई वस्त्रनो नाख्यो पास, कळिजुग लै ऊडचो आकाश,
एक वस्त्र पंखी गयो लई, नळ बेठो कपाळे कर दई । ११ ।
अरे दैव तें ए शुं कर्युं ? वस्त्र जतां कांई न ऊगर्युं,
गयुं राजछत्र महिमा घणो, न रह्यो अंगे सूत्रतांतणो । १२ ।
विहंगम वस्त्र गयो रे हरी, दमयंती मा जोशो फरी,
पाछे पगे गई स्त्रीजन, आप्युं अर्धुं वस्त्र 'स्वामी ढांको तन' । १३ ।
अक्केको छेडो पहेर्यो ऊभे, तीरथ नाहे तेवां शोभे,
अन्न विना अडवडियां खाय, सतने आधारे चाल्यां जाय । १४ ।

मैं इस पक्षी को किस प्रकार मार डालूं ? मैं अपना वस्त्र उस पर डाल देता हूँ । (ऐसा सोचकर) नल ने सुन्दरी दमयन्ती को मुँह फेरकर खड़ा कर दिया और वे देह को नग्न करके (वस्त्र उतारकर) चले गये । ८ (यह देखकर) पक्षी लज्जित हुआ और वन भी लजा गया । सूर्य (भी) लज्जित हुआ; (और) उसने (मानो) अपनी आँखें मूंद लीं । स्वाद लेने की इन्द्रिय ने अर्थात जिह्वा ने महाराज नल को पीड़ित कर दिया था; इसलिए वे नग्न हो गये । (इसमें) उनकी लज्जा भावना का लोप हो गया । ९ जिस प्रकार मछुआ (हाथों में) जाल लेकर डालता है, उसी प्रकार राजा ने (अपना) पीताम्बर हाथ में धर रखा । जब वे राजा उस पक्षी के निकट (-निकट) जाने लगे, तब वैसे-वैसे (पक्षी रूप-धारी) कलि आगे-आगे जाने लगा । १० उन्होंने दौड़कर वस्त्र का पाश डाल दिया, तो (पक्षी रूपी) कलियुग उसे लेकर आकाश में उड़ गया । एक (मात्र) वस्त्र लेकर पक्षी चला गया, (यह देखकर) राजा सिर में हाथ लगाये बैठ गये । ११ (वे बोले—) 'अरे दैव, तूने यह क्या किया ? वस्त्र के जाने पर कुछ भी नहीं बचा । राजछत्र चला गया, बड़ी महिमा गयी । शरीर पर सूत का तन्तु (तक) नहीं रहा । १२ पक्षी वस्त्र हरण करके चला गया । हे दमयन्ती, तुम (इस ओर) मुड़कर न देखना ।' (यह सुनकर) वह नारी (फिर) उलटे पाँव गयी और उसने अपना आधा वस्त्र उन्हें दिया । (फिर वह बोली—) 'हे स्वामी, तन ढँक लीजिए' । १३ उन दोनों ने वस्त्र का एक-एक छोर पहन लिया । वे तीर्थजल में नहाये-जैसे शोभायमान थे । अन्न के बिना (अभाव के कारण) वे लड़खड़ा रहे थे । वे (केवल अपने) सत्य के आधार से चले जा रहे थे । १४ (आगे जाने पर) एक महावन की

महावननी आवी जंखजाळ, ते स्थानके थयो संध्याकाळ,
बन्ने बेठां द्रुमने तळे, चूंटी पत्र पाथर्यां नळे। १५।
दु:खनी वात करी नव नवी, दमयंती निद्रावश हवी
क्षुधा अंगोअंग रही हसी, मुख जाणे पूनमनो शशी। १६।
नळे सूती दीठी सुंदरी, निश्वास मूक्यो नयणां भरी,
कोण दिवस आव्यो श्रीहरि, ए दु:खे प्राण न जाय नीसरी। १७।
वैदर्भी वसुधाए पडी, दु:ख नोतुं दीठुं एक घडी,
घणे दोहले वरी में एह, रूए राजा जोईने देह। १८।
नखथी नीरखतां जोयुं मुख, त्यारे मनमां लागुं दु:ख,
कलि वळी तेनुं चित्त फेरवे, राजा मनमां द्वेष मेळवे। १९।
शी सगाई पर-तनयातणी ? दुष्ट दमयंती ए पापिणी,
शी प्रीत छेह दीधो जेणीए, हुं विना मच्छ खाधां एणीए। २०।
मलिन मन एनुं निर्धार, को समे मारो करे आहार,
न घटे एशुं रहेवुं मळी, रायने उपजावे बुद्धि कळि। २१।

झाड़-झंखार आयी। उस स्थान पर शाम हो गयी। वे दोनों एक पेड़ के तले बैठ गये। नल ने (फिर) पत्ते चुनकर उन्हें बिछा दिया। १५ दमयन्ती दु:ख सम्बन्धी नयी-नयी बातें करती हुई निद्राधीन हो गयी। भूख अंग-अंग में (व्याप्त) थी; (फिर भी) वह हँसती मुस्कराती रही। उसका मुख मानो पूनो का चन्द्र था। १६ नल ने उस सुन्दरी को सोयी हुई देखा। उन्होंने (आँसुओं से) आँखें भरकर लम्बी साँस ली। (उन्होंने सोचा—) 'हे श्रीहरि, यह कौन (कैसा) दिन आया ! इस दु:ख से प्राण तो कहीं निकलकर नहीं जाएँ। १७ वैदर्भी दमयन्ती भूमि पर पौढ़ी है। उसने एक घड़ी भर तक दु:ख नहीं देखा होगा। मैंने इसका बड़ी कठिनाई से वरण किया है।' उसकी देह को देखकर राजा नल रोने लगे। १८ उन्होंने उसको (पाँव के) नख से मुँह तक निरखते हुए देखा; तब उनके मन में दु:ख अनुभव हुआ। तो कलि ने फिर उनके चित्त को फेर लिया और (फलस्वरूप) राजा ने मन में द्वेष इकट्ठा किया। १९ (वे सोचने लगे—) 'दूसरे की कन्या से कैसा सगापन। यह दमयन्ती दुष्ट है, पापिनी है। जिसने (मेरे साथ) विश्वासघात किया, उसकी (मुझसे) कैसी प्रीति ? इसने बिना मेरे (मेरी अनुपस्थिति में) मछलियाँ खा डालीं। २० निश्चय ही इसका मन मलिन है। किसी समय इसने मेरे हिस्से का आहार खा लिया। इसके साथ में इकट्ठा (मिलकर) रहना उचित नहीं है'। कलि ने राजा में इस प्रकार बुद्धि उत्पन्न कर दी। २१

ते समेनी हृदेनी दाझ, मूकुं वनमां एकली आज,
बुद्धि भ्रष्ट मन राजातणुं, कळिनो प्रेर्यो क्रोधे घणुं। २२।
मनमांहे आशंका गणे, एक वस्त्र पहेयुं बे जणे,
मध्ये चीर फाडुं बळ करी, थाय शब्द जागे सुंदरी। २३।
होय छूरी तो छेदुं पटकूळ, कळि थयो कां तुं अनर्थनुं मूळ ?
नळे लीधुं छूरिका शस्त्र, वच्चेथी वहेयुं अडधुं वस्त्र। २४।
कटका बे पटकूळना करी, मूकी नळ चाल्यो सुंदरी,
गयो डगला सात ज भरी, प्रीत श्यामानी सांभरी। २५।
नळ विमासण मनमां करे, एकली ए फाटीने मरे,
वर्यो हुं देवता परहरी, वळी वनमां साथे नीसरी। २६।
त्रैलोकमोहन ए मानिनी, केम वेदना सहेशे राननी,
न घटे मूकी जवुं मने, नळ आव्यो दमयंती कने। २७।
दीठुं मुख अंतर परजळ्यो, संभारी मच्छने पाछो वळ्यो,
कळि ताणे वाट वनतणी, प्रेम ताणे दमयंती भणी। २८।

'उस समय से मेरे हृदय में द्वेष है। (अतः) मैं आज इसे वन में अकेली छोड़ देता हूँ।' राजा की बुद्धि और मन भ्रष्ट हुआ। कलि ने बहुत क्रोध से उन्हें ऐसा प्रेरित किया। २२ मन में वे आशंका अनुभव करने लगे। '— हम दो जने एक वस्त्र को पहने हुए हैं। (अतः) मैं बल से वस्त्र को फाड़ दूँ, तो आवाज़ होगी और यह सुन्दरी (स्त्री) जग उठेगी। २३ यदि छुरी हो, तो वस्त्र को काट लेता हूँ।' हे कलि, तू अनर्थ की जड़ क्यों हुआ ? (अनन्तर) नल ने छुरिका-जैसा शस्त्र लिया और बीच में आधे वस्त्र को चीर डाला। २४ उस वस्त्र के दो टुकड़े करके नल उस सुन्दरी (स्त्री) को छोड़कर चले। वे सात ही डग भरकर गये, तो उन्हें उस स्त्री की प्रीति का स्मरण हुआ। २५ नल मन में पछतावा करने लगे। (उन्हें लगा—) यह अकेली मारे दुःख के टूटकर मर जाएगी। देवों को छोड़कर उसके द्वारा मेरा वरण किया गया है। इसके अतिरिक्त, वह (मेरे साथ) वन में निकल आयी है। २६ यह मानिनी स्त्री तीनों लोकों (स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल) को मोह लेनेवाली है। वन (के कष्ट) की वेदना को कैसे सहन कर पाएगी। इसे छोड़कर जाना मेरे लिए उचित नहीं है। (ऐसा सोचते हुए) नल दमयन्ती के पास (लौट) आये। २७ उसके मुख को देखा, तो उनका अन्तःकरण जल उठा। वे मछलियों का स्मरण करके पीछे लौटे। कलि उन्हें बन के मार्ग पर खीच रहा था, तो प्रेम दमयन्ती के प्रति। २८ वे

विचारवारि-निधिमां पड्यो, आवागमन-हिंडोळे चढ्यो,
सात वार आव्यो फरी फरी, तजी न जाये साधु सुंदरी । २९ ।
बळ प्रबळ कळिनुं थयुं, प्रेमबंधन त्रूटीने गयुं,
सर्प कंचुकीने तजे जेम, में दमयंती तजवी तेम । ३० ।
वृक्ष पत्रने जेम परहरे, नरपि ते अंगी नव करे,
जेवुं होय वमननुं अन्न, तेवी मारे ए स्त्रीजंन । ३१ ।
को वेळा मुंने मारे नेट, हुंपे वहावुं एने पेट,
एवुं कहीने मूकी दोट, उंवाटे दोड्यो सासोट,
त्यां लगे धायो भूपाळ, रह्यो ज्यां थयो प्रातःकाळ । ३२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

काळ उदे अरुण तणो, त्यां लगे धायो धीश रे,
जाग्यो हृदे थयुं दुःख उदे, ज्यारे दीठो दिश रे । ३३ ।

विचार के समुद्र में गिर पड़े; (दमयन्ती के पास) आने और (उससे दूर) जाने के झूले में चढ़े रहे (दुविधा में पड़े रहे)। वे सात बार पुनःपुनः आ गये। उनके द्वारा वह भली सुन्दरी स्त्री छोड़ी नहीं जा रही थी। २९ (परन्तु फिर से) कलि का बल प्रबल हुआ, तो उनके प्रेम का बन्धन टूट गया। (उन्होंने सोचा—) 'जैसे सर्प केंचुली को छोड़ देता है, वैसे मुझे दमयन्ती का त्याग करना है। ३० जिस प्रकार वृक्ष पत्ते को त्याग देता है और फिर से उसका अंगीकार नहीं करता, उसी प्रकार मुझे दमयन्ती को त्याग देते हुए उसे फिर से नहीं अपनाना है। जैसा वमन किया हुआ अन्न होता है, वैसी मेरे लिए यह स्त्री जन है। ३१ (न जाने) किस समय यह मुझे मार डालेगी ? निश्चय ही इसका पेट मेरे द्वारा उठाकर ले लिया जा रहा है (मैं इसके बोझ को वहन कर रहा हूँ)'। ऐसा कहकर (सोचकर) वे दौड़ने लगे, आड़े-टेढ़े मार्ग से वे हाँफते हुए दौड़े। वे राजा तब तक दौड़ते रहे, जब प्रातःकाल हुआ और वे ठहर गये। ३२

अरुणोदय की बेला आ गयी, तब तक वे राजा दौड़ते रहे। जब उन्होंने दिशाओं को (प्रकाश से युक्त) देखा, तब मानो वे जाग उठे। तो उनके हृदय में दुःख का उदय हुआ। ३३

कडवुं ३४ मुं—(शोकाकुल नल की कर्कोटक नाग से भेंट)

राग रामग्री

नळ जळ नयणे भरे ने, करे विविध विलाप,
व्याकुळ अंग पोतातणुं, अवनी पछाडे आप। १।
वैदर्भी वामा, रंक रामा, एकलडी वन मध्य,
भय धरशे ने फाटी मरशे, जीव्यानी टळी अवध्य। २।
नहीं मळे फरी, कोकिलास्वरी, शो उपन्यो विखवाद ?
मनगमयंती, बोल दमयंती, नळे मांडचो साद। ३।
विश्व-मोहिनी, सृष्टि-दोहिनी, सुंदरी सुजाण,
विरहिणी वल्लभ, दर्शन दुर्लभ, बोल पियुना प्राण। ४।
नव फरतो, रुदन करतो, जोतो आव्यानी वाट,
कळिए चरण धरणनां भूस्यां, वन कीधुं निर्वाट। ५।
वडडाळे भूपाळ वळग्यो, ते रूए हृदयाफाटे,
मोहधारण, कर्मकारण, कहे भुज देई ललाटे। ६।

कड़वक—३४ (शोकाकुल नल की कर्कोटक नाग से भेंट)

नल अपने नयनों में अश्रुजल भरते जा रहे थे और वे विविध (प्रकार से) विलाप करने लगे। उनका अपना अंग-अंग व्याकुल हो गया। उन्होंने अपने आपको भूमि पर लुढ़का दिया। १ (उन्हें जान पड़ा—) मेरी स्त्री वैदर्भी दमयन्ती, रंक (ग़रीब, असहाय) स्त्री वन के अन्दर अकेली है। वह भय धारण करेगी और (हृदय) फटकर मर जाएगी। उसके जीवित रहने की अवधि (उसकी आयु) समाप्त हुई। २ वह कोयल के-से स्वर वाली फिर से नहीं मिलेगी। कैसा विषैला झगड़ा पैदा हुआ ? 'हे मनभावनी दमयन्ती, बोलो'। नल ने उसे आवाज़ लगाना (पुकारना) आरम्भ किया। ३ 'हे विश्वमोहिनी, हे सृष्टि-दोहिनी (सृष्टि की स्वाभाविक सुन्दरता का दोहन करनेवाली), हे सुन्दरी, हे सुजान, हे प्रिय पति से बिछुड़ी हुई, हे दर्शन-दुर्लभ, हे प्रियपति के प्राण, बोलो'। ४ वे (इस प्रकार पुकारते हुए, शोक करते हुए) वन में घूमने लगे। वे रुदन करते रहे। वे उस (के आने) की बाट जोहते रहे। (इधर) कलि ने (भूमि पर के) पाँवों के धरने के चिह्नों (चरण-चिह्नों) को मिटा डाला और वन को मार्ग-रहित बना दिया। ५ वे वटवृक्ष की शाखा से लिपट गये और हृदय को (मानो) फाड़ते हुए रोने लगे। वे ललाट पर हाथ टिकाये बोले— (मेरे मन में) मोह को उत्पन्न करनेवाला कर्म (दैव ही इस

राय विलपे, घणुं कळपे, संभारे सुख-स्नेह,
कबुध आवी, मन भावी, अन्याये दीधो छेह। ७।
अजगर वाघ, वरु नाग छे, दारुण वननी हद्य,
कराड कोतर, सिंहना स्वर, श्यामा फाटी मरशे सद्य। ८।
दोहले पामी, गजगामी, देव गया निर्मुख,
स्वयंवर साथ, सांभळी वात, सर्व पामशे सुख। ९।
कोण नेत्र लूहे ? राय रूए, एवे शब्द सांभळ्यो गाढो,
लाह प्रेमजळ, मुकाव राय नळ, बळताने बाहेर काढो। १०।
सांभळ वाणी, जाणी राणी, रोई रोई बेठो स्वर,
हरखे भरायो, स्वरे धायो, वीरसेन कुंवर। ११।
पाडे बराडा, बळे दवाडा, तरफडे मोटा व्याळ,
कहे दयासिंधु दीनबंधु, काढ नळ भूपाल। १२।
वह्नि वरदान, गयो सुजाण, नागे कीधो नमस्कार,
आप प्राणदान, हो गुणवान, कांई हुंये करीश उपकार। १३।

समस्त घटना का) कारण है। ६ राजा विलाप कर रहे थे, बहुत विलख-बिलखकर रो रहे थे। वे (दमयन्ती से प्राप्त) सुख और स्नेह को स्मरण कर रहे थे। (उन्हें जान पड़ा—) 'मुझे कुबुद्धि प्राप्त हुई; मेरे मन को वही अच्छी लगी। इसलिए अन्यायपूर्वक मैंने उसका विश्वासघात किया है। ७ इस दारुण वन की सीमा में अजगर, बाघ, भेड़िये, नाग हैं। चट्टानें हैं; खोह-गड्ढे हैं; सिंह का दहाड़ना है। यह स्त्री अब हृदय के फट जाने पर मर जाएगी। ८ यह गजगामिनी संकट को प्राप्त हुई है। देव (स्वयंवर-मण्डप में) विमुख होकर चले गये। मुझे स्वयंवर में इसका साथ प्राप्त हुआ। (परन्तु) आज यह बात सुनकर वे सब सुख को प्राप्त हो जाएँगे। ९ उसकी आँखें कौन पोंछेगा ?' राजा (इस प्रकार विलाप करते हुए) रो रहे थे। उस समय उन्होंने एक गम्भीर शब्द (स्वर) सुना। 'हे राजा नल, प्रेम-जल, प्राप्त करा दो (मुझे) छुड़ा लो, जलते हुए को बाहर निकाल लो'। १० यह बात सुनकर राजा ने (उस बोलनेवाले को) रानी दमयन्ती समझा— (माना कि) रोते-रोते उसकी आवाज बैठ गयी हो। वे वीरसेन-कुमार नल आनन्द से भर उठे, वे उस शब्द की दिशा में (अथवा उससे प्रेरित होकर) दौड़े। ११ (आगे) दावानल जल रहा था। एक बड़ा सर्प चीख रहा था, तड़प रहा था। वह बोला, 'हे दया-सिंधु, हे दीन-बन्धु, हे नल भूपाल, (मुझे बाहर) निकालो'। १२ उन्हें अग्नि (देव) का वरदान प्राप्त था। अतः वे सुजान राजा (निकट)

विषथी न बीधो नाग लीधो, जोजन देह प्रमाण,
खांधे चडावी, मूक्यो बहार लावी, शाता पाम्यो प्राण । १४ ।
पुण्यश्लोक साचा, विप्र वाचा, मळ्यो वैदर्भीकांत
पूछे नळ, दाधो सबळ, मुंने कहे मांडी वृतांत्त । १५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वृत्तांत कहे भाई कोण छे, पाम्यो बहु परताप रे,
सर्प कहे राय सांभळो, मुंने हवो ऋषिनो शाप रे । १६ ।

गये, तो उस उस नाग ने उन्हें नमस्कार किया । वह (फिर) बोला, 'मुझे प्राणदान दीजिए । हे गुणवान (राजा), मैं आपका कुछ उपकार करूँगा '। १३ राजा विष से नहीं डरे । उन्होंने उस नाग को उठा लिया । उसकी देह एक योजन (दीर्घ) थी । अपने कन्धे पर चढ़ाकर (राजा ने) उसे बाहर लाकर छोड़ दिया, तो उसके प्राण शान्ति को प्राप्त हुए । १४ (वह नाग बोला—) 'हे पुण्यश्लोक, उन विप्रों की बातें सच्ची हैं— मुझे आप वैदर्भी-पति नल मिले '। नल ने पूछा (कहा)— 'तुम बहुत जल गये हो, मुझे अपना वृत्तान्त (परिचय) ठीक से कह दो । १५

तुम अपना वृत्तान्त कह दो । भाई, तुम कौन हो ? तुम बहुत परिताप को प्राप्त हुए हो '। (इसपर) उस सर्प ने कहा, 'हे राजा, सुनिए । मुझे ऋषियों से अभिशाप प्राप्त हुआ था '। १६

कडवुं ३५ मुं—(कर्कोटक नाग द्वारा नल को काटना और कुरूप होकर नल का अयोध्या की राजसभा में आगमन)

राग देशाख

बोल्यो नाग करी प्रणाम, राय मारुं करकोटक नाम,
हुं प्राचीन कर्मे पाम्यो संताप, सप्तऋषिए दीधो शाप । १ ।

कड़वक— ३५ (कर्कोटक नाग द्वारा नल को काटना और कुरूप होकर नल का अयोध्या की राजसभा में आगमन)

वह नाग प्रणाम करके (नल से) बोला, 'हे राजा, मेरा नाम कर्कोटक है । मैं अपने प्राचीन (काल में किये हुए) कर्म से क्लेश को

विमान जातुं हतुं स्वर्ग भणी, अज्ञानता जागी मुजतणी,
फुत्कारी फणा नाखी ज्वाळ, दाधा सप्तऋषि चड्यो काळ। २।
पतित तें नाखी विषनी लहेर, बळ दवमां अवनी उपेर,
बहु काळ लगे वसो वह्निमांय, भोगव दुःख जीव नहि जाय। ३।
में जाण्युं शाप टळे नहि खरो, मुंने शापनो अनुग्रह करो,
वह्नि वेदना दोहली घणुं, कह्युं दर्शन थाशे नळतणुं। ४।
पुण्यश्लोक बाहेर काढशे, ते तुंने शाता पमाडशे,
ते दिवसनो वन दाझुं छौं अहीं, सात सहस्र वरस गयां वही। ५।
ते तमो आज दुःख टाळियुं, पुण्यश्लोकपणुं पाळियुं,
मारी देहने अति सुख थयुं, ऋषिवचननुं फळ लह्युं। ६।
एवुं कहीने सर्प ज धस्यो, करकोटक नळने कंठे डस्यो,
लागी विषज्वाळ दाधो भूप, काळी काया थयुं कूबडुं रूप। ७।

प्राप्त हो गया हूँ। मुझे सप्तर्षियों[1] ने अभिशाप दिया है। १ उनका विमान स्वर्ग की ओर जा रहा था। (उस समय) मेरी अज्ञानता जग गयी (अर्थात मैं अज्ञान के प्रभाव में आकर विवेक को खो बैठा)। अपने फन से फुफकारते हुए मैंने (विष की) ज्वाला उगल डाली, तो वे सात ऋषि उसमें जलने लगे। उन्हें क्रोध आ गया। २ (उन्होंने कहा—) 'रे पतित, तूने (हमारे प्रति) विष की लहर चला दी। (अतः) तू पृथ्वी पर दावाग्नि में जलता रह। तू दीर्घ काल तक आग में निवास कर और दुःख का भोग कर; (फिर भी) तेरे प्राण नहीं जाएँगे'। ३ मैं जानता था कि यह अभिशाप सच्चा होगा, टलेगा नहीं। (अतः मैं बोला—) 'मुझ पर शाप के सम्बन्ध में अनुग्रह कीजिए, अर्थात् कृपापूर्वक शाप-मोचन बताइए। आग में जलते रहने से बड़ा दुःख होगा'। तो वे बोले, 'तुझे नल के दर्शन होंगे। ४ वे पुण्यश्लोक राजा तुझे बाहर निकालेंगे। वे तुझे शान्ति को प्राप्त कराएँगे'। उस दिन से मैं इस वन में यहाँ जलता रहा हूँ। सात सहस्र वर्ष बीत गये हैं। ५ उस दुःख को आज आपने नष्ट कर दिया और अपने पुण्यश्लोकत्व का निर्वाह किया। मेरी देह को (अब) अति सुख हुआ है। (इस प्रकार) ऋषियों के वचन के अनुसार मैंने फल प्राप्त किया है'। ६ऐसा कहकर वह सर्प कर्कोटक आगे ही लपका और उसने नल के कण्ठ में काट लिया। विष की ज्वाला लग गयी, तो राजा जल जाने लगे। उनकी काया काली हो गयी, उनका रूप कूबड़ा

---

१ सप्तर्षि— कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वसिष्ठ। अथवा मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ।

काजळपें श्यामता विशेष, वांकुं मुख पंख पंचवर्णा केश,
छते दांते डाचां गयां मळी, नीसरी खूंध कही बेवड वळी । ८ ।
नळ कहे धन्य कद्रुकुमार, घणो रूडो कर्यो उपकार,
तुंने में आप्युं प्राणदान, तें हुं कीधो शाही समान । ९ ।
नाग कहे रे रखे दुःख धरो, जोतां ए उपकार छे खरो,
गुप्त रहेवुं संवत्सर त्रण, को नव ओळखे एवुं वर्ण । १० ।
त्रण वस्त्र आपुं छउं भूप, परिधाने थाशे मूळगुं रूप,
ते जोयां पहेरी परीक्षा करी, तत्क्षण कांति भूपनी फरी । ११ ।
हरख्यो नळ थयुं दिव्य काम, नागे बाहुक धरियुं नाम,
भूपाळ व्याळ थया विदाय, गयो अयोध्या नैषधराय । १२ ।
देखी माणस नहासे अरांपरां, धाये बाहुक पूंठे छोकरां,
जे जे मारग महीपति पळे, त्यां माणस जोवाने मळे । १३ ।

हो गया । ७ उनके (द्वारा प्राप्त) काजल जैसे काले वर्ण में विशिष्ट (बहुत अधिक) कालापन था । उनका मुख पक्षाघात से टेढ़ा बन गया; उनके केश पाँच रंगों से युक्त हो गये । दाँतों के रहते हुए भी जबड़े (के दोनों भाग) मिल गये; (शरीर में) कूबड़ निकल आया और वह झुककर मानो दोहरे हो गया । ८ (यह देखकर) नल ने कहा, 'रे कद्रु-कुमार, तू धन्य है । तूने मेरा बहुत अच्छा उपकार किया । मैंने तुझे प्राण-दान दिया । (परन्तु) तूने मुझे स्याही के समान (काला) बना दिया'। ९ तो नाग बोला, 'कदाचित आप दुःख धारण करेंगे (मान लेंगे), फिर भी देखने पर यह सचमुच उपकार है । आपको तीन वर्ष गुप्त रहना है । इस वर्ण में आपको कोई नहीं पहचान सकेगा । १० हे राजा, मैं आपको तीन वस्त्र प्रदान करता हूँ । उनको परिधान करने पर मूल रूप बन जाएगा (अर्थात आप अपने मूल रूप को प्राप्त हो जाएँगे)'। उन्हें पहनकर राजा ने परीक्षा की, तो तत्काल उनकी कान्ति बदल गयी । ११ राजा नल आनन्दित हुए । (उन्होंने माना—) दिव्य (अद्भत) काम हो गया । उस नाग ने उन्हें 'बाहुक' नाम रख दिया । (तत्पश्चात्) राजा नल और कर्कोटक नाग (एक-दूसरे से) बिदा हुए । (फिर) निषध-राज अयोध्या चले गये । १२ बाहुक को देखकर लोग खिसक जाने लगे । वे इधर-उधर दौड़ने लगे, फिर भी बच्चे उनके पीछे लग गये (उनका पीछा करने लगे) । राजा नल (बाहुक के रूप में) जिस-जिस मार्ग से जाने लगे, वहाँ लोग उनको देखने के लिए इकट्ठा हो जाते थे । १३ उन्हें (देखकर) लोग हँसते थे । (उन्हें लगा—) रूप की तो हद हो

हसे लोक रूपे लीह वाळी, पूंठे छोकरां पाडे ताळी,
राजसभामां राजा गयो, प्रतिहार साथ खसीने रह्यो। १४।
हसी सभा हस्यो ऋतुपर्ण, विधिए आ क्यां निम्युं वर्ण,
हरे काजळ ने जांबूफळ, जाणे रूपे बीजो नळ। १५।
कहे कोण छो स्वरूपना धाम ? केम आववुं पड्युं शुं काम ?
नळ कहे मारुं बाहुक नाम, आव्यो उदर भरवा काम। १६।
अश्वमंत्र जाणुं राजन, एक दिवसे खेडुं सत जोजन,
कहे ऋतुपर्ण मोटुं कारण, आ रूपने विद्या असाधारण। १७।
नळ इंद्र विना को जाणे नहीं, मंत्रप्राप्ति तुने क्यांथी थई ?
मंत्रपाठ करता नळराय, हुं नळनो सेवक शीख्यो विद्याय। १८।
को समे प्रकाशी भणता तेह, त्यांथी विद्या हुं पाम्यो एह,
नैषधनाथ ते वनमां गयो, ते दुःखे हुं आवो थयो। १९।
आव्यो छउं रहेवा तम कने, अन्न वस्त्र आपजो मने,
नहीं करुं हुं नीचुं काम, नहीं धरावुं सेवक नाम। २०।

गयी। बच्चे पीछे से तालियाँ बजाते थे। (इस प्रकार आगे चलते-चलते) राजा नल राज-सभा में गये। प्रतिहारियों (द्वारपालों) का दल खिसककर (दूर) रह गया। १४ (उन्हें देखते ही) सभा हँसने लगी। (राजा) ऋतुपर्ण हँसने लगे— विधाता ने यह वर्ण कहाँ निर्मित किया ? वर्ण में यह काजल और जामुन फल को पराजित कर देता है। मानो रूप में दूसरे नल हों। १५ राजा ऋतुपर्ण बोले, 'हे स्वरूप (सुन्दरता) के धाम, तुम कौन हो ? कैसे आये ? क्या काम पड़ा है ?' तो नल बोले, 'मेरा नाम बाहुक है। पेट भरने के काम से (यहाँ) आया हूँ। १६ हे राजा, मैं अश्व-मंत्र जानता हूँ। एक दिन में मैं (घोड़े को) सौ योजन चला सकता हूँ'। (यह सुनकर) ऋतुपर्ण बोले, 'यह तो बड़ा कारण (काम) है। इस रूप को यह असाधारण विद्या (कैसे) प्राप्त हुई है। १७ नल और इन्द्र के अतिरिक्त उसे कोई नहीं जानता; तो तुम्हें उस मंत्र की प्राप्ति कहाँ से हुई ?' (तो नल ने कहा—) "नल राजा मंत्र का पठन करते थे। मैं नल का सेवक था। (वहाँ) मैंने वह विद्या सीखी है। १८ किसी समय वे प्रकट रूप से वह (मंत्र) पढ़ रहे थे। वहाँ से (सुनकर) मैंने उस विद्या को प्राप्त किया। वे निषधपति तो वन में चले गये। उस दुःख से मैं (यहाँ) आ गया हूँ। १९ मैं आपके पास रहने के लिए आ गया हूँ। मुझे आप अन्न और वस्त्र दीजिए। फिर भी मैं कोई निम्न प्रकार (स्तर) का काम नहीं करूँगा— मैं 'सेवक' नाम धारण नहीं

रायजी तमने नहीं नमुं, स्वयंमुंपाक करीने जयुं,
राजा कहे रहो जेम तेम, विद्यावान जवा देउं केम ? । २१ ।

हयदासपतिनो अधिकार, सेवक मात्र करे नमस्कार,
जद्यपि मान पामे घणुं, पण कहेवाये दासत्वपणुं । २२ ।

अश्वपति महाराजा थयो, हयशाळामां वासो रह्यो,
छे विजोगनी वेदना घणी, नित्ये सुए श्लोक एक भणी । २३ ।

श्लोक—स्वागतावृत्तम्

आतपे धुतिमता सह वध्वा यामिनी·विरहिणा विहगेन ।
सेहिरे न किरणा हिमरश्मेर्दुःखिते मनसि सर्वमसह्यम् ।।

भावार्थ— वसंततिलका छंद

जे चक्रवाक दिवसे वहु साथे राखे
ते संगरंग रमतां रविताप सांखे
राते विजोग थकी चक्रप्रकाश खूंचे
जो दुःख होय दिलमां कशुंये न रुचे । २४ ।

कराऊँगा (आप मुझे ‘ सेवक ’ नहीं कहिए) । २० हे राजा, मैं आपको नमस्कार नहीं करूँगा । मैं (अपने लिए) रसोई बनाकर खा लूँगा । ” (यह सुनकर) राजा ने कहा— ‘ जैसे-वैसे रह जाओ । मैं विद्यावान को कैसे जाने दूँ ? २१ तुम्हें घोड़ों के कामवाले सेवकों के स्वामी (हय-दास-पति, अश्वपति) का अधिकार (प्राप्त) होगा । सब सेवक तुम्हें नमस्कार करेंगे । यद्यपि तुम बहुत मान-सम्मान को प्राप्त होगे, तो भी वह (सब) दासत्व कहा जाएगा ’ । २२ (इस प्रकार) महाराज नल अश्वपति हो गये । वे अश्व-शाला में रहने लगे । उन्हें वियोग की बड़ी वेदना अनुभव होती थी । वे नित्य (सोने के लिए) लेटते समय एक श्लोक पढ़ा करते थे । २३

(श्लोक का भावार्थ)— दिन में चक्रवाक पक्षी (नर तथा मादा) (एक-दूसरे के) बहुत साथ रहते हैं । वे (एक-दूसरे के) साथ में विहार करते हुए सूर्य के ताप को सहन करते हैं; (परन्तु) रात में (एक-दूसरे के) वियोग के कारण चन्द्र-प्रकाश उन्हें चुभने-सालने लगता है । यदि मन में दुःख हो, तो कुछ भी अच्छा नहीं लगता । २४

राग चालतो

एवुं कहीने करे शयन, विस्मय थाय पाडोशी जन,
बाळ विहामणो आवी वस्यो, कदर जने विजोग ते कशो । २५ ।
ते स्त्रीए सुकृत शुं कयुं, जेणे आ स्वरूपने वयुं,
वारु थयुं जे विपत पडी, आ भूतथी छूटी बापडी । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बापडी छूटी लोक कहे, रह्यो रायने रीझवी रे,
बृहदश्व कहे युधिष्ठिरने, दमयन्तीनी शी गत हवी रे । २७ ।

ऐसा कहकर (श्लोक पढ़कर) वे शयन करते। पड़ोस के लोग विस्मित हो गये थे। (उन्हें जान पड़ता—) यह भयानक बेटा आकर (यहाँ) रह रहा है। इस क्षुद्र (मनुष्य) को वियोग किसका है ? २५ उस स्त्री ने क्या सुकृत (पुण्यकर्म) किया था, जिसने इस स्वरूप का वरण किया ? अच्छा हुआ कि यह विपत्ति आ गयी, इस भूत से तो बेचारी मुक्त हो गयी । २६

लोग कहते— 'वह बेचारी मुक्त हो गयी। (और) यह (इधर) राजा को रिझाता रह रहा है'। बृहदश्व ऋषि युधिष्ठिर से बोले, (अब सुनिए, उधर) 'दमयन्ती की क्या स्थिति-गति हुई'। २७

कडवुं ३६ मुं—(दमयन्ती का विलाप)

राग दोहरा

स्वप्नुं आव्युं नारने, मूकी जाय छे नाथ,
जागी उठी अचानके, ग्रहेवा प्रभुनो हाथ । १ ।
वैदर्भी थई गाभरी, वळी जुए चोपास,
अम अबळाना हृदे कारमां, बीहुं तमारे हास । २ ।

कड़वक— ३६ (दमयन्ती का विलाप)

उस नारी (दमयन्ती) के देखने में एक स्वप्न आया— (उसने देखा कि) स्वामी नल उसे छोड़कर चले जा रहे हैं। वह अपने पति का हाथ पकड़ने के लिए अचानक जग गयी । १ वैदर्भी (दमयन्ती) भयभीत हुई।

जोयुं वन फरी करी, सम देई कीधा साद,
पछी रुए बहुविध करी, पामी अति विषाद। ३।

राग मारु

अमो अबळा माणस बीजे, नव कीजे हास। हो नळराय,
केम धीरज धरुं हुं नारी, तमारी दास? हो नळ०।४।
रात अंधारी तो माहरी, वले कोण थाशे? हो नळ०।
तम चर्ण केरी आण, प्राण मुज जाशे। हो नळ०।५।
आंहां तो बोले सावज, नाग वाघ न वरु। हो नळ०।
बोलो बोलो वाहो छो क्यम? सम हुं तो मरुं। हो नळ०।६।
हां हां जी जाओ छो हाड, राढ थशे फांसु। हो नळ०।
अगोप रह्यां न आवे दया, देखी आंखडीए आंसु। हो नळ०।७।
तमारां पगलां नव पेखुं कंथ, पंथ केम लहुं रे? हो नळ०।
निशा अंधारी भयानक, स्थानक केम रहुं रे? हो नळ०।८।
नैषध देशनी राणी, ताणी अतीशे रोय रे। हो नळ०।
प्रभुजी अंग अवेव मारा, तारा जोय रे? हो नळ०।९।

फिर उसने चारों ओर देखा। (वह बोली—) 'अबलाओं के हृदय अद्भुत (रूप से कोमल) होते हैं। आपकी ऐसी हँसी-ठठोली से मैं डर रही हूँ'।२ उसने वन में बार-बार देखा। शपथ दिलाते हुए उसने पुकारा। फिर वह बहुत प्रकार से रुदन करने लगी। वह अति बिषाद को प्राप्त हो गयी।३ (वह बोली—) 'हम अबला जन डर जाते हैं। हे नलराज, आप हँसी-ठठोली न करें। मैं तुम्हारी दासी कैसे धीरज धारण करूँ? हे नलराज ०।४ रात अँधेरी है। (अब) तो मेरी क्या दशा होगी? हे नलराज ०। आपके चरणों की शपथ है। मेरे प्राण निकल जाएँगे। हे नलराज ०।५ यहाँ तो नाग, बाघ और भेड़िये जैसे श्वापद (जानवर) बोल रहे हैं। हे नलराज। बोलिए, बोलिए, (मुझसे) कैसे रहा जाए? शपथ है, मैं तो मर जाऊँगी। हे नलराज ०।६ हाँ, हाँ जी। हड्डियों तक (बहुत गहरे) जा रहे हो; व्यर्थ ही क्लेश हो जाएगा। अदृश्य होने पर, मेरे आँसुओं को देखकर आपको दया नहीं आ रही है (क्या)। हे नलराज ०।७ हे कान्त, आपके चरणों (के चिह्नों) को नहीं देख रही हूँ, तो मैं मार्ग कैसे ग्रहण करूँ? हे नलराज ०। रात अँधेरी और भयानक है। मैं (किसी) स्थान पर कैसे रह जाऊं? हे नलराज ०'।८ निषध देश की रानी ऊँचे स्वर में (ज़ोर से) अतिशय रो रही है। 'हे नलराज ०। हे प्रभुजी, मेरे अंगों-अवयवों को (आकाश

घेली सरखी चाले, वहाले वछोडी रे। हो नळ०।
मांड्युं वनडुं जोवुं रोवुं मूक्युं छोडी रे। हो नळ०।१०।
वलवलती वैदर्भी वाटे, उचाटे भरी। हो नळ०।
कारण स्वामी शुंय, हुंय परहरी। हो नळ०।११।
वहाला नव दीजे छेय, नेह विचारो। हो नळ०।
कर्मे वाळ्यो आडो आंक, वांक शो मारो। हो नळ०।१२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शो अपराध मारो स्वामी, दारुण वनमां मूकी गया रे,
अल्प भ्रांते हुं तजी, अंतर न ऊपजी दया रे।१३।

के) तारे देख रहे हैं। हे नलराज०'।९ वह पगली जैसी चल रही थी। वह प्रिय द्वारा दुत्कारी हुई थी। हे नलराज०। वह वन को देखने लगी। (फिर) उसने रोना छोड़ दिया। हे नलराज०।१० वैदर्भी दमयन्ती अधीरता से भरी हुई विलाप करने लगी। 'हे नलराज०। हे स्वामी, क्या कारण है, जिससे मैं (आपके द्वारा) परित्यक्त हुई? हे नलराज०।११ हे प्रियजी, विश्वास-घात न कीजिए, स्नेह का विचार कीजिए। हे नलराज०। कर्म (दैव) ने चरम सीमा कर दी है। मेरा क्या दोष है? हे नलराज०।१२

हे स्वामी, मेरा क्या अपराध है, जो आप मुझे वन में छोड़कर चले गये हैं? अल्प भ्रम (भूल) से मैं त्यक्त कर दी गयी हूँ। आपके अन्तः-करण में क्या दया नहीं उत्पन्न हो रही है?'१३

कडवुं ३७ मुं—(विलाप करते-करते दमयन्ती द्वारा वन में भ्रमण करना)

राग रामग्री

वैदर्भी वनमां वलवले, घोर अंधारी रात,
भामिनी भय पामे घणुं, एकलडी रे जात। वैदर्भी०।१।
रसनाए नाम ज नळ तणुं, मुख जपती रे जाय,
सुध नथी शरीरनी, भाजे कंटक पाय। वैदर्भी०।२।

कड़वक— ३७ (विलाप करते-करते दमयन्ती द्वारा वन में भ्रमण करना)

विदर्भ-राज-कन्या दमयन्ती वन में बिलाप करती (हुई जा रही) थी। भयानक अँधियारी रात थी। वह स्त्री बहुत भय को प्राप्त हुई थी। (उसी स्थिति में) वह अकेली जा रही थी। वैदर्भी०।१

रोई रोई राती आंखडी, भरे आंसु नीर,
नयणे धारा बब्वे झरे, वहे अंग रुधिर। वैदर्भी०। ३।
हींडतां ते आखडे, पगमां वागे ठेश,
चालतां ऊभी रहे, भराये कांटे केश। वैदर्भी०। ४।
अंगे उझरडा पड्या घणा, वहें शोणित धार,
'हो नळ! हो नळ!' बोलती, बीजो नहि विचार। वैदर्भी०। ५।
ऊंडां कोतर ऊतरे, चढे गिरि कराड,
अशुद्धे उधडके नहीं, पाडे वाघ बराड। वैदर्भी०। ६।
वांकी वाट टींबा टेकरा, भयानक खोह,
राफमांहे साप फूंफवे, घणुं घूघवे घोह। वैदर्भी०। ७।
शब्द पशुपंखीतणा, न पडे कोई प्रीछ,
वरु वणियर बीहावे अरण्यमां, धाये वळगवा रींछ। वैदर्भी०। ८।
शूकर, रोझ, चिकारडां, चीतरा दे फाळ,
फालु नाद होये घणा, बहु बोले शियाळ। वैदर्भी०। ९।

उसकी जिह्वा पर नल ही का नाम था। मुख से उसी नाम का जाप करती हुई वह जा रही थी। उसे शरीर की कोई सुधि नहीं रही थी। उसके पाँवों को काँटे (मानो) भग्न कर रहे थे। वैदर्भी ०। २ रोते-रोते उसकी आँखें लाल हो गयीं। उनमें अश्रु-जल भर रहा था। उसकी (एक-एक) आँख से दो-दो (अश्रु-) धाराएँ बह रही थीं। शरीर से रक्त बह रहा था। वैदर्भी ०। ३ घूमते-घूमते वह ठोकर खा रही थी। पाँवों में ठेंस लगती थी। (बीच-बीच में) चलते-चलते वह (क्षण भर के लिए) खड़ी रहती, तो बाल काँटों से भर जाते थे। वैदर्भी ०। ४ उसके शरीर में बहुत खरोंचें लगीं; रक्त की धाराएँ बहती थीं। वह 'हे नल', 'हे नल' बोलती (पुकारती) जा रही थी। उसे कोई दूसरा विचार नहीं आ रहा था। वैदर्भी ०। ५ वह गहरे गड्ढ़ों-नालों में उतरकर (पार) जाती थी; पर्वतों-चट्टानों पर चढ़ती थी। बाघ गरजते-चीखते थे। तो भी उसके प्रति अचेत-सी होने के कारण वह (भय से) काँप नहीं रही थी। वैदर्भी ०। ६ राह टेढ़ी-मेढ़ी थी। उसमें टीले-पहाड़ियाँ थीं, भयानक गुफाएँ थीं। बिलों में से साँप फुफकार रहे थे। गोधे घुघुत्कार कर रहे थे। वैदर्भी ०। ७ पशु-पक्षियों की आवाज़ हो रही थी; (फिर भी) कोई दिखायी नहीं पड़ रहा था। भेड़िये जैसे वन्य प्राणी अरण्य में उसे डरा रहे थे। रीछ उसे लिपट जाने के लिए दौड़ रहे थे। वैदर्भी ०। ८ सूअर, नीलगायें, हिरन, चीते छलाँग लगा रहे थे। लोमड़ियों की बड़ी आवाज़ हो रही थी। सियार बहुत बोल

आंबा, आंबली, लीमडा, अरीठा अपार,
शीमळ, समळी, सेगठा, न सूझे पंथ विचार । वैदर्भी० । १० ।
खेर, खाखर ने कांचकी, कंटाळा थुएर,
बावळिया बहु बोरडी, सरगवा समेर । वैदर्भी० । ११ ।
आखडी पडती सुंदरी, चरणे वेला वींटाय,
छूटा केश कामिनी तणा, झांखरे झींटाय । वैदर्भी० । १२ ।
वृक्ष अथडाये अंगशुं, मूके कांटामां पाय,
सुद्ध नथी रे शरीरनी, भजती नळराय । वैदर्भी० । १३ ।
दिवस निशा प्रीछे नहीं, एवुं घाडुं अरण्य,
दमयंती भूली भमी, त्यां दिवस त्रण । वैदर्भी० । १४ ।
अन्न उदक पामी नहीं, नहि बेसवुं शयन,
त्रण दिवस एम वही गया, भमयंतां वन । वैदर्भी० । १५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वन भयानक भामिनी भमी, दिवस त्रण गया वही रे,
वाट घाट ने गाम ठाम कांई, प्रेमदा पामी नहि रे । १६ ।

रहे थे । वैदर्भी ० । ९ आम, इमली, नीम, अरिष्ट, सेमल, शमी, सहिजन के असंख्य पेड़ थे । (इसलिए) मार्ग सम्बन्धी विचार सुझायी नहीं पड़ रहा था (मार्ग दिखायी नही दे रहा था) । वैदर्भी ० । १० खैर, टेसू और काचकी, काँटेदार थूहर, बबूल, बेर, सहिजन, समेर बहुत (संख्या में) थे । वैदर्भी ० । ११ वह सुन्दरी (नारी दमयन्ती) ठोकर खाकर गिर जाती थी । पाँवों को लताएँ लपेट लेती थीं । उस कामिनी के बाल खुल गये । वे झाड़-झंखाड़ में उलझ रहे थे । वैदर्भी ० । १२ उसके शरीर से वृक्ष घिसते-टकराते थे । वह काँटों में पाँव रखती थी । उसे शरीर की कोई सुधि नहीं थी । वह तो नलराज को भजती (जा रही) थी । वैदर्भी ० । १३ वह अरण्य ऐसा गहन-घना था कि दिवस-रात समझ में नहीं आ जाता था । उसमें भूल-भटककर दमयन्ती तीन दिन (इस प्रकार) भ्रमण कर रही थी । वैदर्भी ० । १४ उसे अन्न, पानी नहीं प्राप्त हुआ । न बैठना हुआ, न सोना । वन में भ्रमण करते-करते इस प्रकार तीन दिन बीत गये । वैदर्भी ० । १५

वह वन भयानक था । वह भामिनी उसमें भ्रमण कर रही थी । (इस प्रकार) तीन दिन बीत गये । वह प्रमदा बाट-घाट और ग्राम-ठौर कुछ भी नहीं प्राप्त कर सकी । १६

कडवुं ३८ मुं—(व्याध द्वारा दमयन्ती को अजगर से छुड़ाना)

राग रामग्री

भूली भमे छे भामिनी, नैषधनाथनी नार रे,
'हो नळ! हो नळ!' बोलती, भीमकराज-कुमार रे। भूली०। १।
धोवायुं काजळ आंसुए करी, वेदनाए व्याकुळ रे,
अर्ध उघाडी देहडी, नाथे फाड्युं छे पटकूळ रे। भूली०। २।
एवे दीठो एक चीतरो, धाई दमयंती ऊलट रे,
पूछे भाळ नळ भूपाळनी, छे तारा जेवी कट रे। भूली०। ३।
शार्दूल दीठो वाटमां, वैदर्भी पूछे धरी वहाल रे,
नैषधनरेश वाटे मळ्या छे? तारा जेवी चाल रे। भूली०। ४।
सावज थाये गाभरा, भय पामी नासी जाय रे,
रखे वनदेवी अमने झालती, पशुअरि कंपाय रे। भूली०। ५।
पूछे ऊंचा द्रुमने, तारी गगने गई डाळ रे,
तरुवर जो मारी वती, कहीं दीसे भूपाळ रे। भूली०। ६।

कड़वक— ३८ (व्याध द्वारा दमयन्ती को अजगर से छुड़ाना)

वह स्त्री, निषधराज की स्त्री दमयन्ती (वन में मार्ग) भूलकर भ्रमण कर रही थी। वह भीमकराज-कुमारी (दमयन्ती) 'हे नल', 'हे नल' बोलती-पुकारती जा रही थी। भूलकर ०। १ आँसुओं से (उसकी आँखों का) काजल धोया गया। वह वेदना से व्याकुल हो गयी थी। उसके पति ने उसका वस्त्र फाड़ लिया था। इसलिए (आधा वस्त्र पहन लेने के कारण) उसकी देह आधी अनावृत थी। भूलकर ०। २ उतने में (उस समय) दमयन्ती ने एक चीता देखा। तो वह उत्साह-उमंग से दौड़ी और उसने उससे नल राजा की खोज-खबर पूछी। (वह बोली—) 'तुम्हारी जैसी ही उनकी कमर है'। भूलकर०। ३ रास्ते में दमयन्ती ने (अनन्तर) एक सिंह को देखा, तो उसके प्रति प्रेमभाव धारण करके (अर्थात प्रेमपूर्वक) उसने पूछा, 'क्या तुमसे रास्ते में निषधराज मिले थे? उनकी तुम्हारी-सी चाल है'। भूलकर ०। ४ (उसे देखकर) श्वापद भयभीत हो गये। वे भय को प्राप्त होकर भाग जाने लगे। (उन्हें लगा,) शायद (यह कोई) वनदेवी (हो, जो) हमें पकड़ लेगी। पशुओं के शत्रु सिंह (भय से) काँपते थे। भूलकर ०। ५ वह ऊँचे वृक्ष से पूछती, 'तुम्हारी डाल गगन में गयी है। हे तरुवर, मेरे लिए देख लो कि कहीं राजा (नल) दिखायी दे रहे हैं। भूलकर ०। ६

पर उपकारी सदा तमो, वळी शीतळ तारी छांय रे,
नैषधनाथ क्यहुं दीठडा, जोउं छौं वनमांय रे । भूली० । ७ ।
तरु उत्तर आपे नहीं, तेम तेम राणी रोय रे,
पुण्यश्लोक ज्यारे परहर्यां, शत्रु थया सर्व कोय रे । भूली० । ८ ।
अजगर पड्यो छे वाटमां, विकासी मुख भाग रे,
दमयंतीए जाण्युं नहीं, तेना मुखमां मूक्यो पाग रे । भूली० । ९ ।
चरण गळ्यो जानु लगे, विष चढी गयुं शरीर रे,
पडी भोम साद नळने करे, मुखे पाडे रीर रे । भूली० । १० ।
अजगर आनंद पामियो, भलुं जड्युं भक्ष रे,
वैदर्भी घणुं वलवले, ऊंचां चढी गया चक्ष रे । भूली० । ११ ।
कंठे बंधाई कांचकी, मुखे पडियो शोष रे,
मरण समे मूके नहीं, हृदे रसना पुण्यश्लोक रे । भूली० । १२ ।
रोती राणी सांभळी, पारधी आव्यो धाई रे,
पग दीठो अजगरमुखमां, तेणे श्यामाने साही रे । भूली० । १३ ।

तुम सदा परोपकारी (बने रहते) हो । इसके अतिरिक्त, तुम्हारी छाँह शीतल है । क्या कहीं निषधराज नल दिखायी दिये ? मैं उन्हें वन में देख (खोज) रही हूँ ' । भूलकर ० । ७ वृक्ष उत्तर नहीं दे रहे थे; वैसे-वैसे रानी दमयन्ती रोती रही । (उसे जान पड़ा—) जब से पुण्यश्लोक (नल राजा ने) मेरा परित्याग कर दिया है, तब से सब कोई (मेरे) शत्रु हो गये हैं । भूलकर ० । ८ अपने मुख-भाग (थूथने) को फैलाये हुए रास्ते में एक अजगर पड़ा हुआ था । (परन्तु) दमयन्ती ने (उसे ठीक से देखकर) नहीं जाना; (अतः) उसने उसके मुँह में पाँव रखा । भूलकर ० । ९ उस (अजगर) ने घुटने तक पाँव को निगल डाला । उसका विष (दमयन्ती के) शरीर के अन्दर चढ़ने-फैलने लगा । तो वह भूमि पर गिर पड़ी । (फिर) वह नल को पुकारने लगी । वह मुँह से चीखती-चिल्लाती रही । भूलकर ० । १० अजगर तो (इस विचार से) आनन्द को प्राप्त हो गया कि अच्छा भक्ष्य मिल गया । (इधर) वैदर्भी बहुत विलाप कर रही थी । उसकी आँखें (उलटकर) ऊँची चढ़ गयीं । भूलकर ० । ११ गले में हिचकी लग गयी । मुख में शोष अनुभव होने लगा । फिर भी वह मृत्यु के समय भी हृदय और जिह्वा से पुण्यश्लोक का नाम-स्मरण नहीं त्यज रही थी । भूलकर ० । १२ रानी को रोते सुनकर एक व्याध दौड़कर (वहाँ) आ गया । उसने अजगर के मुँह में उस स्त्री के पाँव को (धँसे) देखा, तो उसने उसे पकड़ लिया ।

पारधीए अजगर मारियो, कोहावाडाने धाय रे,
जतन करीने मुकावियो, नळपत्नीनो पाय रे। भूली०। १४।
वैदर्भी विष चढ्युं नहीं, छे वासवनुं वरदान रे,
करतळ वास सुधातणो, देह रही परम निधान रे। भूली०। १५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

देह रही परम निधान, हळाहळ गयुं ऊतरी रे,
कहे भट प्रेमानंद पछे, शुं दुःख पामी सुंदरी रे ? । १६ ।

भूलकर ०। १३ उस व्याध ने उस अजगर को कुल्हाड़ी के आघात से मार डाला। उसने यत्न करके नल की पत्नी के पाँव को (उसके मुँह से) मुक्त कर लिया। भूलकर ०। १४ (अजगर का) विष वैदर्भी के शरीर में (अधिक) नहीं चढ़ा, (क्योंकि) उसे इन्द्र का वरदान प्राप्त हुआ था। उसके करतल पर अमृत का निवास था। अतः उसकी देह परम निधि (जैसी) थी। भूलकर ०। १५

उसकी देह परम निधि थी; (अतः) हलाहल उतर गया। भट्ट प्रेमानन्द अब कहने जा रहे हैं कि फिर वह सुन्दरी किस दुःख को प्राप्त हो गयी। १६

कडवुं ३६ मुं—(दमयन्ती द्वारा व्याध को अभिशाप देना)

राग मारु

विषधर मार्यो व्याधे आवी, महिला मृत्यु थकी मुकावी,
व्याधे अजगर लीधो हाथे, चाल्यो तेडी दमयंती साथे। १ ।
पारधी हींड्यो जगने जीती, वेदर्भी जाय व्हीती व्हीती,
गयो एक तळावने तीर, प्रक्षालन कीधुं सर्प शरीर। २ ।

कड़वक-- ३६ (दमयन्ती द्वारा व्याध को अभिशाप देना)

व्याध ने आकर उस साँप को मार डाला और स्त्री (दमयन्ती) को मृत्यु से छुड़ा (बचा) लिया। (अनन्तर) उस व्याध ने अजगर को हाथ में लिया और वह दमयन्ती को बुलाकर साथ में लेकर चला। १ वह व्याध उस बड़े काम को जीतकर, अर्थात उस बड़े काम में सफल होकर जा रहा था। वैदर्भी दमयन्ती डरते-डरते (उसके पीछे-पीछे) जा रही थी।

देखतां दमयंती प्रत्यक्ष, ते अजगर कीधो भक्ष,
मुखनुं पासुं रहेवा दीधुं, बाकी शरीरनुं भोजन कीधुं। ३।
दमयंती विस्मय हवी, आ तो वार्ता दीठी नवी,
जीवांतक कहे हो नारी, तमो दीठी विद्या अमारी। ४।
मननी खटपट सघळी छांडो, प्रेम कटाक्ष मुज पर मांडो,
हुं तो पारधीपति छौं व्याधी, पटराणी करुं भले लाधी। ५।
कुण मात तात ? कुण स्वामी ? वन नीसर्यां वैराग पामी,
एकलां आव्यां आणी दिशे, कोण नाम बोलो वळी रसे ?। ६।
कोणे वचन कह्युं कवरधुं ? कां अंबर अंगे अरधुं,
शुं नळ नळ मुखे जपो ? छो डाह्यां घेलामां खपो। ७।
जद्यपि दुःख तमने पडियुं, पण भाग्य मारुं ऊघडियुं,
एम कहीने गयो स्पर्श करवा, त्यारे अबळा लागी ओसरवां। ८।
धस्यो राहु चंद्रने चांपे, तेम दमयंती थरथर कांपे,
मा भरीश ओरुं डग, तुज पर तूटी पडशे खड्ग। ९।

वह एक तालाब के तट पर गया। उसने उस सर्प के शरीर को धो लिया। २ फिर दमयन्ती के प्रत्यक्ष देखते-देखते उसने उस अजगर को खा डाला। मुख के पास वाले भाग को उसने रहने दिया और शेष शरीर को खा लिया। ३ (यह देखकर) दमयन्ती विस्मित हुई। यह घटना तो उसने नयी (अपूर्व) देखी थी। फिर वह जीवान्तक (प्राणी को मार डालनेवाला वहहिंसक) बोला, " अरी नारी, तुमने हमारी विद्या को देखा। ४ अपने मन के समस्त जंजाल को छोड़ दो। मेरी ओर प्रेम से युक्त दृष्टि से देख लो। मैं व्याध व्याधों का राजा हूँ। मुझे तुम प्राप्त हुई हो। मैं तुम्हें अपनी पटरानी बना देता हूँ। ५ तुम्हारे माता-पिता कौन हैं ? स्वामी (पति) कौन हैं ? वैराग्य को प्राप्त होकर तुम क्यों वन में चली जा रही हो ? इस दिशा में अकेली (क्यों) आ गयी हो ? तुम्हारा क्या नाम है ? फिर आनन्द-रस से बोलो। ६ किसने तुमसे कटु बात कही है ? शरीर पर आधा वस्त्र (ही) क्यों है ? मुँह से ' नल ', ' नल ' क्या जप रही हो ? तुम समझदार-सयानी हो, फिर भी पागलपन के साथ खप रही हो (कष्ट कर रही हो)। ७ यद्यपि तुम्हारे लिए (भाग्य में) दुःख आया है, फिर भी मेरा भाग्य जग गया है। " ऐसा कहते हुए वह (व्याध) स्पर्श करने चला, तब वह स्त्री (दमयन्ती) पीछे हटने लगी। ८ जैसे राहु चन्द्र को (पकड़कर) दबाने लगा हो, वैसे दमयन्ती थरथर काँपने लगी। (वह बोली—) ' आगे और पाँव मत बढ़ाओ। तुम पर खड्ग

हुं तो भीमकरायनी बाळी, अल्या हुं नहि चकलावाळी,
हुं तो दमयंती, नळनी नारी, पारधी कहे भाग्यदशा मारी । १० ।
एवुं कहीने पारधी धसियो, अबळाने क्रोध मन वसियो,
मूर्ख कह्युं मान रे मारुं, हो जमपुरना वटेमागु । ११ ।
उपकार तारो हुं जाणुं, ते माटे हुं दया कांई आणुं,
बळ मा कर तुं मुज साथे, मूर्ख मरण चढ्युं छे माथे । १२ ।
केम जावा दउं भोळी भाम, हुं विरहीतणो विश्राम,
हुंमां शो अवगुण ज देखो ? मने शा माटे उवेखो । १३ ।
मारे मंदिर स्त्री छे तरण, ते रहेशे तमारे चरण,
आपण बे जीव जीवशुं जडियां, कोण सुकृतथी सांपडियां । १४ ।
थनार हशे ते देईश थावा, पण नहि दउं तमने जावा,
सुखे पारधी वंशमां वरतो, हुं नळथी नथी कंई नरतो । १५ ।
लक्षणवंती मने लोभावो, पूरी वास सदन शोभावो,
अन्न वस्त्र विना न दुभावो, ल्यो गृहस्थाश्रमनो लावो । १६ ।

टूट कर गिर पड़ेगा । ९ मैं तो भीमक राजा की कन्या हूँ । अरे मैं कोई चौक वाली अर्थात वेश्या नहीं हूँ । मैं तो दमयन्ती— नल (राजा) की स्त्री हूँ । ' (इसपर) व्याध बोला, 'यह तो मेरे लिए भाग्य की स्थिति है ' । १० ऐसा कहते हुए वह व्याध आगे लपका, तो उस अबला के मन में क्रोध आ गया । वह बोली, ' अरे मूर्ख, मेरी कही मान लो । (नहीं तो) तुम यमपुरी के पथिक (बन गये) हो । ११ मैं तुम्हारे द्वारा मेरा किया उपकार जानती हूँ । इसलिए तो मैं (तुम्हारे प्रति) कुछ दया कर रही हूँ । मेरे साथ तुम बल (-प्रयोग) मत करो । रे मूर्ख, तुम्हारे सिर पर मौत चढ़ी है ' । १२ तो व्याध बोला, ' तुम भोली स्त्री को मैं कैसे जाने दूँ ? मैं तुम विरहिणी के लिए विश्राम हूँ । मुझमें तुम कौन अवगुन ही देख रही हो ? मेरी किसलिए उपेक्षा कर रही हो ? १३ मेरे घर में तीन स्त्रियाँ हैं । वे तुम्हारे चरणों में रहेंगी । हम दो जीव एक-दूसरे से जुड़कर जीवित रहेंगे । तुम मेरे किस सुकृत (पुण्य) से मुझे मिल गयी हो ? १४ जो होनेवाला हो, उसे होने दूँगा; पर मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगा । व्याध के कुल में सुख के साथ रह जाओ । मैं नल से कुछ भी घटिया नहीं हूँ । १५ हे सुलक्षणों से युक्त, मेरे प्रति लुब्ध हो जाओ । मेरी इच्छा को पूर्ण करते हुए मेरे घर को शोभायमान कर दो । बिना अन्न-वस्त्र के दुःखी मत होना; गृहस्थाश्रम का लाभ ले लो । १६ तुम भक्ष्य सम्बन्धी दुःख (चिन्ता) मन में न धारण करोगी ।

भक्ष दुःख न धरशो चित्त, शत पशु वेधुं छुं नित्य,
ऊंचुं जोई कहे धन्य विधाता, मने दमयंतीनो दाता। १७।
मारी कर्मदशा छे चढती, वैदर्भी पाम्यो रडवडती,
देव नहीं पाम्यां तप करतां, मने वार न लागी वरतां। १८।
तृणनो मेरु ने मेरुनुं तरण, तारी लीला अशरणशरण,
भोगवी न शक्यो नैषधस्वामी, नळे खोई नारी में पामी। १९।
शुं नळ नळ झंखना लागी, पहोर निशाए गयो त्यागी,
शुं लोभे ल्यो नळनुं नाम ? जेणे दुखियां कीधां आम। २०।
बोल्यो आधार प्राणजीवन, धायो देवाने आलिंगन,
क्रोधे सतीए संभाळ्युं सत्य, रोई समर्या कमळापत्य। २१।
विट्ठलजी चडजो वारे, हुं तो रही छुं तम आधारे,
छो विपत समेना श्याम, मधुसूदन राखो माम। २२।
आप्युं पद ध्रुवने अविचळ, ग्राहथी मुकाव्यो मदगळ,
राख्यो प्रह्लाद वसिया थंभ, रक्षा करो धरो न विलंब। २३।

मैं नित्य सौ पशुओं को (हथियारों से) बींध डालता हूँ'। वह फिर ऊपर देखकर बोला, "हे विधाता, धन्य हो। तुम मेरे लिए दमयन्ती देनेवाले (सिद्ध हो गये) हो। १७ मेरी कर्म-दशा उत्कर्ष पर है। इसलिए मैं भ्रमण करती हुई वैदर्भी को प्राप्त हो गया हूँ। देव तो तप करने पर भी उसे नहीं प्राप्त सके। मुझे इसका बरण करने में देर नहीं लगी। १८ हे अशरणों (निराश्रयों) के लिए शरणस्वरूप (भगवान), यह तुम्हारी (अद्‌भुत) लीला है कि तृण को मेरु और मेरु को तृण प्राप्त हो जाता है (यह देवों के योग्य है, पर मुझ जैसे तुच्छ को प्राप्त हो गयी है)। निषधराज इसका उपभोग नहीं कर सके। नल द्वारा खोयी हुई नारी को मैं प्राप्त कर गया हूँ। १९ 'नल' 'नल'—क्या रट लगी है? वे एक पहर रात में तुम्हें छोड़कर चले गये हैं। जिसने तुम्हें यहाँ दुखिया कर दिया, उस नल का नाम किस लोभ से (अब भी) ले रही हो"। २० वह बोला, 'तुम मेरे लिए (जीवन के) आधार हो, प्राणजीवन हो'। फिर वह उसका आलिंगन करने के लिए दौड़ा। तो उस सती ने अपने सत्य (पतिव्रत) का निर्वाह किया। उसने रोते-रोते कमलापति भगवान विष्णु का स्मरण किया। २१ (वह बोली—) 'हे बिट्ठलजी, इस समय पर आ जाओ। मैं तो तुम्हारे आधार से (जीवित) रह रही हूँ। तुम विपत्ति के समय के विश्राम हो। हे मधुसूदन, अपनी टेक निभा लो। २२ तुमने ध्रुव को अविचल पद प्रदान किया; गज को ग्राह से मुक्त कर दिया। तुमने स्तम्भ में निवास किया और प्रह्लाद की रक्षा की। (अब) मेरी

सत्य होय सदा निरंतर, असत्यथी होउं स्वतंतर,
न मूक्या होय नळ मनथी, कुदष्टे न जोयुं होय अन्यथी । २४ ।
आपत्काळे रही होउं सत्ये, नळ समरी रही होउं शुभ मत्ये,
पंच महाभूत साक्षी भाण, न चूकी होउं नळनुं ध्यान । २५ ।
सत्य बळे दउं छौं शाप, भस्म थजो व्यधिनुं आप,
वचन नीसर्युं महिलाना मुखथी, अग्नि लाग्यो पगना नखथी । २६ ।
स्तवन कीधुं बेउ कर जोडी, नमतामां थयो राखोडी,
प्रेमदा पामी परिताप, उपकारीने दीधो शाप । २७ ।
जद्यपि व्रत न मारुं भांगुं, पण लौकिक लांछन लागुं,
लोकने पारधीनो संदेह, माटे पाडुं हुं मारी देह । २८ ।
प्राण त्यागे नथी हुं बीती, शुं करुं स्वामी पाखे जीती ?
केशनो पांगरो गूंथी ग्रंथे, लई भराव्यो फांसो कंठे । २९ ।
हो विष्णु, एटलुं मागती मरुं, नळनी दासी थई अवतरुं,
एवे कळजुगे धार्युं मंन, करुं कौतक हुं उत्पन्न । ३० ।

रक्षा करो; विलम्ब न लगा दो । २३ यदि मेरा सत्यव्रत सदा निरन्तर (अखण्डित) रहा हो, यदि मैं असत्य से स्वतंत्र रह गयी होऊँ, यदि मैंने नल को मन से (कभी) न छोड़ा हो, किसी अन्य के प्रति बुरी दृष्टि से न देखा हो, विपत्ति के समय भी यदि मैं सत्यव्रत में (अविचल) रही होऊँ, शुभ मति से नल का स्मरण करती रही होऊँ, तो मैं अपने उस सत्य (व्रत के आधार) से यह अभिशाप दे रही हूँ कि यह व्याध स्वयं (जलकर) भस्म हो जाए'। —ऐसा वचन उस महिला के मुख से निकला, तो पाँव के नख से (उस व्याध के शरीर में) आग लग गयी । २४-२६ अनन्तर उसने दोनों हाथ जोड़कर स्तुति की, तो उसके द्वारा नमन करते रहते वह (व्याध जलकर) राख हो गया । (यह देखते ही) वह प्रमदा परिताप को (इस बिचार से) प्राप्त हुई कि 'मैंने उपकार-कर्ता को अभिशाप दे दिया । २७ इससे यद्यपि मेरा व्रत भग्न नहीं हुआ, फिर भी लौकिक दृष्टि से लांछन लग गया । लोगों को व्याध (जाति) के प्रति सन्देह होने लगेगा, इसलिए मैं अपनी देह को त्यज दूंगी । २८ मैं प्राण-त्याग करने से नहीं डरती । (फिर भी) मैं स्वामी के बिना, जीवित रहकर क्या करूँ ।' (ऐसा सोचकर) उसने गाँठ लगाते हुए अपने बालों की (बेनी-सी) रस्सी बनायी, और उसे पकड़कर गले में फाँसी लगायी । २९ (वह बोली—) 'हे भगवान विष्णु, मैं इतना ही माँगकर मर जाती हूँ— मैं नल की दासी होकर ही अवतार (पुनर्जन्म) ग्रहण करूँ ।' इतने में (इस समय)

मरणथी उगारी लीधी, त्यां माया कलिए कीधी,
दीठी तापस आश्रम वाडी , गई दमयंती फांसो कहाडी । ३१ ।
नग्न दिगंबर छे महंत, थई पासे हरख्युं चंत,
बोले कळिजुग नासा ग्रही, अप्रीत मच्छ माट थई । ३२ ।
शके भीमकसुता दमयंती, तजी नाथे हींडे भमयंती,
अल्प अपराधनी भ्रांते, कामिनी तजी छे कांते । ३३ ।
भीमकसुता आनंदी अपार, जोगी जगदीशने अवतार,
फरी फरीने पागे नमे, नळनुं प्रश्न करुं जी तमे । ३४ ।
मुनि कहे नळने छे क्षेम, पण ऊतर्यो तुजथी प्रेम,
नळ नारी शोधे छे अन्य, तुं करजे जे ऊपजे मन । ३५ ।
तव हरख्यो प्रेमदानो प्राण, मारा प्रभुने छे कल्याण,
लक्ष नारी करो राजान, पण मारे नळनुं ध्यान । ३६ ।
ठरी ठार ते जाणी नळ, नारीए लीधां जळ फळ,

कलियुग ने मन में यह (विचार) धारण किया— 'मैं एक कौतुक उत्पन्न कर दूंगा'। ३० उसे उसने मृत्यु से बचा लिया। वहाँ कलि ने माया की (मायाजन्य चमत्कार दिखाया)। (फलस्वरूप) दमयन्ती ने तपोवन में एक आश्रम देखा, तो फन्दा निकालकर वह (वहाँ) गयी। ३१ वहाँ (आश्रम में) एक नग्न— दिगम्बर महन्त था। उसके पास में होने पर उसका चित्त आनन्दित हो गया। नाक पकड़कर कलियुग (स्वरूप वह तापस) बोला, 'अप्रीति के (प्रेम के अभाव) से मछली मिट्टी (के बराबर) बन गयी। ३२ शायद यह भीमक-कन्या दमयन्ती पति द्वारा परित्यक्त होकर भ्रमण कर रही है। अल्प अपराध के भ्रम से पति ने इस कामिनी का परित्याग किया है'। ३३ (यह सुनकर) भीमक-सुता दमयन्ती अपार आनन्द को प्राप्त हुई। (उसे जान पड़ा कि) यह योगी जगदीश भगवान का अवतार है। वह बार-बार उसके चरणों में सिर नवाकर नमस्कार करने लगी। (वह बोली—) 'आप से मैं नल सम्बन्धी प्रश्न पूछ रही हूँ (नल के विषय में कोई समाचार जानना चाहती हूँ)'। ३४ तो मुनि बोले, 'नल सकुशल हैं; फिर भी उनका प्रेम तुमसे उतर गया है। नल अन्य नारी की खोज कर रहे हैं। (अतः) मन में जो बात उत्पन्न हो जाए, तुम वही कर लो'। ३५ तब उस प्रमदा के प्राण (इस विचार से) आनन्दित हुए कि मेरे प्रभु का कल्याण हो गया है (मेरे स्वामी सकुशल हैं)। ३६ हे राजा, आप लाख (-लाख) नारियाँ अपना लीजिए। फिर भी मुझे तो आप नल ही ध्यान रहेगा। नल का ठौर-ठिकाना पक्का

पामी विराम कीधुं शयन, निद्रावश थई स्त्रीजन,
स्वप्नांतर दीठा नळराय, जागी तो दुःख बमणुं थाय । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नळनी स्त्री निद्रामां, स्वप्न विषे पुण्यश्लोक रे,
चार गडीए जागी चतुरा तो, आश्रम वाडी फोक रे । ३८ ।

जानकर उसने जल और फल ग्रहण किया । वह विश्राम को प्राप्त हुई; अनन्तर वह सो गयी । वह स्त्री निद्रावश हो गयी । उसने स्वप्न में नल को देखा । फिर जब जग गयी, तो उसे दुगुना दुःख हुआ । ३७

नल की स्त्री निद्राधीन थी । उसने स्वप्न में पुण्यश्लोक नल को देखा । जब चार घड़ियों में वह चतुरा नारी जग गयी, तो (समझ में आया कि) वह आश्रम और उपवन मिथ्या (मायाजन्य) था । ३८

कडवुं ४० मुं—(वन में विलाप करते-करते दमयन्ती का नदी-तट पर व्यापारियों से मिलना)

राग मलार

भीमकसुता जागी करीने, चारे दिशाए जोय रे,
नहि तापस वन बिहामणुं, नळनी नारी रोय रे । १ ।
हुं पापिणिने पगले करीने, मुनिए मूक्यो ठाम रे,
में कोण कृत्य रे आचर्यां जे, विपत पडे छे आम रे ? । २ ।
हींडे साद करती वनमां, त्रिभुवन नायक नर रे,
गगने रह्या हरखे घणुं, में उवेख्यां अमर रे । ३ ।

कड़वक— ४० (वन में विलाप करते-करते दमयन्ती का नदी-तट पर व्यापारियों से मिलना)

जाग्रत् हो जाने पर भीमक-सुता दमयन्ती चारों दिशाओं में देखने लगी । वहाँ वह तापस नहीं था । वन भयावह था । तो नल की वह स्त्री रोने लगी । १ (वह बोली—) 'मुझ पापिनी के आने से मुनि ने इस स्थान को छोड़ दिया । मैंने ऐसे कौन कर्म किये हैं कि (जिसके फल-स्वरूप) यहाँ (मुझपर) यह विपत्ति आ गयी है' । २ वह वन में पुकारती हुई घूमने लगी— 'हे त्रिभुवननायक नर (-पति), (अब यह देखकर) देव आकाश में बहुत आनन्द के साथ रह रहे हैं । मैंने उन देवों

लक्षणवंते लोक हसाव्या, स्वयंवरना शत्रु सर्व रे,
आज रिपुने वही जाय छे, कौतुक करुं पर्व रे। ४ ।
एवुं जाणी मारा नाथ जी, दासीनी लेजो संभाळ रे,
हो विहंगम वेविशाळिया, मने मूकी नळ भूपाळ रे। ५ ।
हो वज्रावती मावडी मारुं, ढांक उघाडुं गात्र रे,
हो भीमक मारा तात जी, शोधी मनावजो जामात्र रे। ६ ।
हो नैषध देशना राजीया, अणचिंत्युं दो दर्शन रे,
भूपरूपने जाउं भामणे, हो, सलूणा स्वामिन रे। ७ ।
वैदर्भी नाथ विजोगणी, विरहे व्याकुळ शरीर रे,
चतुराने वन चालतां, आव्युं सरितातीर रे। ८ ।
आनंदी अबळा अति घणुं, उतरता दीठा लोक रे,
धाईने पूछे प्रेमदा भाई, दीठा कहीं पुण्यश्लोक रे। ९ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

पुण्यश्लोक छे ए साथमां, पूछे नळनी नारी रे,
नदी उतरतां आश्चर्य पाम्या, परदेशी वेपारी रे। १० ।

की उपेक्षा की थी। ३ स्वयंवर के समस्त लोगों द्वारा लक्षणों से युक्त देवों की हँसी करायी। ये सब स्वयंवर के शत्रु (विरोधी) थे। आज उन शत्रुओं के लिए मनोरंजन का पर्व (-काल) व्यतीत हो रहा है। ४

ऐसा जानकर हे मेरे नाथ, अपनी (मुझ) दासी को सम्हाल लीजिए। हे विवाह सम्बन्ध स्थापित कर देनेवाले मध्यस्थस्वरूप पक्षी, नल भूपाल ने मुझे त्यज दिया है। ५ हे मेरी माता वज्रावती, मेरी अनावृत देह को आच्छादित कर लो। हे मेरे पिता भीमकजी, अपने दामाद को खोजकर मना लो। ६ हे निषध देश के राजा, मुझे अचानक दर्शन दीजिए। हे सलोने स्वामी, मैं आपके भूप-रूप पर निछावर हो जाती हूँ। ७ अपने पति से बिछुड़ी हुई उस (वियोगिनी) वैदर्भी दमयन्ती का शरीर विरह से व्याकुल हो गया। उस चतुरा के वन में चलते-चलते, एक नदी का तट आ गया। ८ (उसे देखकर) वह अबला अत्यधिक आनन्दित हुई। उसने लोगों को (नदी-तट पर) उतरते देखा। तो दौड़कर उस प्रमदा ने पूछा, 'हे भाइयो, आपने कहीं पुण्यश्लोक (नल राजा) को देखा है ?' ९

नल की उस स्त्री ने पूछा, 'क्या इस समुदाय में पुण्यश्लोक नल राजा हैं ?' तो वे परदेसी व्यापारी नदी के पार उतरते-उतरते (दमयन्ती को देखकर) आश्चर्य को प्राप्त हो गये। १०

कडवुं ४१ मुं—(दमयन्ती द्वारा व्यापारियों से नल के विषय में पूछताछ करना)

राग मारु

श्वास भरी पूछे सती, वेपारी रे,
क्येहुं दीठा छे नैषधपति, वेपारी रे। १ ।
प्रभु गया छे परहरी, वेपारी रे,
छे तममां, वात कहो खरी, वेपारी रे। २ ।
कांई देखाडो नलनाथने, वेपारी रे,
रूडुं हजो सघळा साथने, वेपारी रे। ३ ।
साचुं बोलो जळ तीर जो, वेपारी रे,
तमे विपत समेना वीर छो, वेपारी रे। ४ ।
रूपे ब्रह्माए वाळी हद्य रे, वेपारी रे,
मारो स्वामी ओळखीए सद्य रे, वेपारी रे। ५ ।
छे अद्‌भुत गोरुं गात्र रे, वेपारी रे,
दीठे अडसठ वळे जात्र रे, वेपारी रे। ६ ।
गोरुं मुख मूछ वांकडी, वेपारी रे,
मोटी आंख चाल छे फांकडी, वेपारी रे। ७ ।

कड़वक— ४१ (दमयन्ती द्वारा व्यापारियों से नल के विषय में पूछताछ करना)

सती दमयन्ती ने (ठण्डी) साँस लेकर पूछा, 'हे व्यापारियो, आपने कहीं निषध-पति नल को देखा ? हे व्यापारियो०। १ हे व्यापारियो, (मेरे) प्रभु मेरा परित्याग करके (चले) गये हैं। हे व्यापारियो, सच्ची बात कहिए— क्या वे आप (लोगों) में हैं। २ हे व्यापारियो, कहीं (मुझे) मेरे नाथ नल को दिखा दीजिए। हे व्यापारियो, आप सबका उनके साथ भला होगा। ३ हे व्यापारियो, देखिए, (नदी के) पानी के तट पर सच बोलिए। हे व्यापारियो, आप मेरे बिपत्काल के बन्धु हैं। ४ हे व्यापारियो, उनके रूप में ब्रह्मा ने (सुन्दरता की) हद कर दी है। (अतः) हे व्यापारियो, मेरे स्वामी को अभी पहचान लें। ५ हे व्यापारियो, उनका अद्‌भुत (रूप से) गोरा (-गोरा) शरीर है। हे व्यापारियो, इनके दर्शन से अड़सठ तीर्थ-क्षेत्रों की यात्रा हुई दिखायी देती है (समझिए)। ६ हे व्यापारियो, उनका मुख गोरा है; मूँछ टेढ़ी (बाँकी) है। हे व्यापारियो, उनकी आँखें बड़ी-बड़ी (विशाल) हैं, चाल बाँकी (अलबेली) है। ७ हे व्यापारियो, उनकी चाल नखरे से युक्त है। हे

चाल जेनी छे लटकती रे,
कांति मणि जेवी चळकती, वेपारी रे। ८ ।
कंठे मोतिनुं लहेरियुं, वेपारी रे,
अरधुं पटकुळ पहेरियुं, वेपारी रे। ९ ।
मुगटे माणेक चळकतां, वेपारी रे,
करणे कुंडळ लळकतां, वेपारी रे। १० ।
अधर आंबानी कातळी, वेपारी रे,
विशाळ हृदे कटि पातळी, वेपारी रे। ११ ।
बोल साकरपें मीठडा, वेपारी रे,
एवा नैषधनाथ दीठडा, वेपारी रे। १२ ।
वणजारा एम ओचरे, सुण श्यामा रे,
निर्लज वनमां शुं फरे ? सुण श्यामा रे। १३ ।
को कहे त्यां वन वसी, सुण श्यामा रे,
को कहे दीसे राक्षसी, सुण श्यामा रे। १४ ।
को कहे हुं नैषधपति, हो घेली रे,
आव आलिंगन दीजे सती, हा घेली रे। १५ ।
वांकी द्रष्टे जोये घणा, हो घेली रे,
दुःख पाम्यामां नहीं मणा, हा घेली रे। १६ ।

व्यापारियो, उनकी कान्ति चमकती है। ८ हे व्यापारियो, उनके गले में मोतियों का हार है। हे व्यापारियो, उन्होंने आधा वस्त्र पहना है। ९ हे व्यापारियो, उनके मुकुट में मानिक (रत्न) चमकते हैं। हे व्यापारियो, उनके कानों में कुण्डल झलकते हैं। १० हे व्यापारियो, उनके होंठ आम की फांक (जैसे) हैं। हे व्यापारियो, उनका हृदय (-स्थल) विशाल है, कटि पतली है। ११ हे व्यापारियो, उनके बोल (वचन) शक्कर से अधिक मीठे हैं। हे व्यापारियो, (क्या) आपने ऐसे निषध-नाथ नल को (कहीं) देखा है ?' १२

(यह सुनकर) वे बनजारे इस प्रकार बोले, 'हे नारी, सुन लो। हे नारी, सुन लो। तुम निर्लज्ज इस वन में क्यों घूम रही हो ?' १३ तो उनमें से कोई बोला, 'हे नारी, सुन लो। तुमने वहाँ वन में निवास किया है (क्या) ? 'तो कोई बोला, 'हे नारी, सुन लो। तुम तो राक्षसी दिखायी दे रही हो'। १४ कोई बोला, 'अरी पगली, मैं निषध-पति हूँ। हे पगली, हे सती, आओ, (मेरा) आलिंगन करो। १५ री पगली, टेढ़ी दृष्टि से

रोती नाव बेठी सुंदरी, सुण राय रे,
लोक मांहे मळी उतरी, धर्मराय रे। १७।
वेपारी त्यां वासो रह्या सुण राय रे,
वे पहोर निशाना गया, धर्मराय रे। १८।
नयणे आंसुडां गळे, सुण राय रे,
दमयंती बेठी झाड तळे, धर्मराय रे। १९।
गजजूथ जळ पीवा आव्यां, सुण राय रे,
सिंह थई कलिए विहावियां, धर्मराय रे। २०।
भडकी मेगल मंडळी, सुण राय रे,
वेपारी मार्या मगदळी, धर्मराय रे। २१।
जे सतीने कुत्सित वाक्य बोलिया, सुण राय रे,
ते पापी गजे रगदोळिया, धर्मराय रे। २२।
अधिष्ठाता वेपारीतणो, सुण राय रे,
तेड्यो जीवतो साथ आपणो, धर्मराय रे। २३।
भाईओ कुतूहळ मोटुं हवुं, सुण राय रे,
मुंने घटे छे वन बीजे जवुं, धर्मराय रे। २४।

बहुत देखते हैं। री पगली, (अतः) दुःख को प्राप्त हो जाने में कोई कमी नहीं है'। १६

(बृहदश्व ने कहा) हे धर्मराज, सुनिए। वह सुन्दरी रोते-रोते नाव में बैठ गयी। हे धर्मराज, उन लोगों के साथ में मिलकर वह (उस पार) उतर गयी। १७ हे राजा, सुनिए। वे व्यापारी वहाँ निवास करते हुए रह गये। हे धर्मराज, रात के दो पहर बीत गये। १८ हे राजा, सुनिए। (दमयन्ती की) आँखों से आँसू बह रहे थे। हे धर्मराज, दमयन्ती पेड़ के तले बैठी हुई थी। १९ हे राजा, सुनिए। हाथियों का एक यूथ (झुण्ड) पानी पीने के लिए (वहाँ) आ गया। तो, हे धर्मराज, कलि ने सिंह बनकर उन्हें डराया। २० हे राजा, सुनिए, (फलतः) हाथियों का वह झुण्ड भड़क उठा और हे धर्मराज, उन्होंने उन व्यापारियों को रौंदकर मार डाला। २१ हे राजा, सुनिए। जो (व्यापारी) उस सती के प्रति कुत्सित वचन बोले, हे धर्मराज, उन पापियों को हाथियों ने कुचल डाला। २२ हे राजा, सुनिए। व्यापारियों के अधिष्ठाता (शासक) ने, हे धर्मराज, अपने साथ जीवित रहे हुए लोगों को बुलाकर ले लिया। २३ हे राजा, सुनिए। हे भाइयो, यह बड़ा कौतुक हो गया। हे धर्मराज, उसने कहा-- दूसरे वन में जाना मुझे उचित जान पड़ता है। २४

एवे कळजुग पापी आवियो सुण राय रे,
वेष ते जोशीनो लावियो, धर्मराय रे । २५ ।
तिथिपत्र वांचीने एम कहे, सुण राय रे,
चेतो वेपारी को जीवतो न रहे, धर्मराय रे ।२६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नहीं रहे को जीवता, उत्पात दारुण होय रे,
ए कृत्या आवी कालनी, तेणीए खाधा सर्व कोय रे । २७ ।

हे राजा, सुनिए। उतने में (उस समय) पापी कलियुग (वहाँ) आ गया। हे धर्मराज, उसने ज्योतिषी का वेश धारण किया था। २५ हे राजा सुनिए। तिथि-पत्र (पंचांग) पढ़कर उसने इस प्रकार कहा। हे धर्मराज, (उसने कहा—) 'इनमें से कोई भी व्यापारी जीवित नहीं रहेगा। २६

कोई नहीं जीवित रहेगा। दारुण उत्पात हो जाएगा। यह तो काल की कृत्या (विनाशकारी शक्ति) आ गयी है। उसने सबको खा डाला है'। २७

कडवुं ४२ मुं—(व्यापारियों द्वारा दमयन्ती को पीटना)

राग मेवाडो

देखाडी दीधी हो, कलिए सुंदरी,
धाया वेपारी हो, लाव्या बंधन करी । १ ।
सर्वे ठरावी हो, अबळा शाकिणी,
नळने समरे हो, मधुरभाषिणी । २ ।
बोल्यो अधिकारी हो, मारो सर्वे मळी,
पडचा तूटी हो, अबळाने नाखी दळी । ३ ।

कड़वक— ४२ (व्यापारियों द्वारा दमयन्ती को पीटना)

कलि ने वह सुन्दरी (दमयन्ती) दिखा दी, तो व्यापारी दौड़े और वे उसे बाँधकर ले आये। १ सबने उस अबला को 'शाकिनी' ठहराया, तो वह मधुरभाषिणी (दमयन्ती) नल का स्मरण करने लगी। २ व्यापारियों का अधिकारी बोला, 'सब मिलकर इसे मारो।' तो वे (उसपर) टूट पड़े। उन्होंने उस अबला को कुचल डाला। ३ घूंसों

गडदा ने पाटु हो, पहाणा ने लाकडी,
एणी पेरे मारी हो, बाळा बे घडी। ४ ।
रह्युं बोलातुं हो, कंठे कांटा पडे,
बंधन त्रूट्युं हो, नासती आखडे। ५ ।
हुं वधूने देखी हो, पूर्वज लाजिया,
मुनि राखो हो, नैषध राजिया। ६ ।
त्रासे त्रासे हो, पाछुं फरी जुए,
राजमार्गे हो, दमयंती रुए। ७ ।
अंगे ढीमां हो, रुधिर धारा झरे,
बहु सळ ऊठ्या हो, अवलोकन करे। ८ ।
उष्ण ज रेणु हो, चरणे दाझे रे,
कलि पूंठे पडियो हो, देवा दुःख काजे रे। ९ ।
नग्र एक आव्युं हो, अबळा ओहोलासी रे,
राज करे छे हो, भानुमती मासी रे। १० ।
पुरमां बेठी हो, आपत अवस्ता रे,
घेली जाणी को, लोक सहु हसता रे। ११ ।
बाळक पूंठे हो, ताळी पाडे रे,
शे ढांके काया हो, रेणु उराडे रे। १२ ।

और लातों, पत्थरों और लाठियों से वे उस बाला (स्त्री) को दो घड़ी तक पीटते रहे। ४ (फलतः) उसका बोलना बन्द हुआ, गला (प्यास से) सूख गया। उसका बन्धन तो टूट गया, फिर भी वह भागते-भागते ठोकर खाकर गिरती जा रही थी। ५ (उसे जान पड़ा—) मुझ वधू को देखकर मेरे पूर्वज लज्जित हुए होंगे। (वह बोली—) हे निषध-राज, मेरी रक्षा कीजिए। ६ डरते-डरते वह पीछे मुड़कर देखती थी। राजमार्ग में दमयन्ती रो रही थी। ७ उसके अंग-अंग में चकत्ते निकले थे, रक्त की धाराएँ बहती थीं। बहुत साँटें भी उभरीं थीं। (इस स्थिति में) वह (इधर-उधर) देख रही थी। ८ धूलिकण गर्म हो गये थे। उसके चरण जलने लगे थे। (इस प्रकार) उसे दुःख देने के लिए कलि पीछे पड़ा था। ९ (आगे जाने पर) एक नगर आ गया, तो वह अबला उल्लसित हो गयी। (वहाँ) उसकी मौसी भानुमती राज कर रही थी। १० वह उस नगर में (आकर) बैठ गयी। उसके लिए वह विपत्ति की अवस्था (स्थिति) थी। कोई-कोई उसे पगली समझ गये। सब लोग उसको हँसते थे। ११ तालियाँ बजाते हुए बच्चे उसके पीछे पड़ गये। वह

वैदर्भी वीली हो, शेरी चौटे फरे रे,
नांखे कांकरा हो, कर आडो धरे रे। १३।
छजे बेठी हो, मासी भानुमती रे,
मोकली दासी हो, तेडावी सती रे। १४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सती तेडावी राणीए, जई अबळा ऊभी रही रे,
भाणेजे मासी ओळखी पण, मासीए भाणेज ओळखी नहीं रे। १५।

अपने शरीर को कैसे ढाँक ले ? उस पर (लोग) धूल उछाल रहे थे। १२ वैदर्भी दमयन्ती लज्जित होकर गलियों में और चौराहों में घूम रही थी। लोग उसपर कंकड़ फेंकते, तो वह हाथ आड़े धरती थी। १३ उसकी मौसी भानुमती झरोखे में बैठी हुई थी। (उसे देखते ही) उसने अपनी दासी को भेजा और उस सती (दमयन्ती) को बुलवा लिया। १४

रानी ने उस सती को बुलवा लिया। वह जाकर (उसके सामने) खड़ी हो गयी। भानजी ने तो मौसी को पहचाना, परन्तु मौसी ने भानजी को नहीं पहचाना। १५

कडवुं ४३ मुं—(दमयन्ती को अपनी मौसी के यहाँ आश्रय प्राप्त होना)

राग गोडी

दमयंती मंदिरमां पळे, आवास न आण्या आंखडी तळे,
भानुमती जोई विस्मय हवी, कहे प्रेमदा कोणे परभवी ? । १ ।
प्रभुता तारा तनमां रमे, भाग्यवान दीसे कां वन भमे ?
छो रुद्राणी ब्रह्माणी के वैष्णवी, कोण कारण रूप धर्युं मानवी ?। २ ।

कड़वक—४३ (दमयन्ती को अपनी मौसी के यहाँ आश्रय प्राप्त होना)

दमयन्ती उस घर के अन्दर गयी। उस निवास-स्थान (प्रासाद) को देखकर उसकी आँखें नहीं चौंधियायीं। उसे देखकर भानुमती विस्मित हो गयी। वह बोली, ‘ अरी प्रमदा, तुम्हें किसने दुःख दिया। १ तुम्हारे शरीर में प्रभुता रम रही है। तुम भाग्यबान दिखायी दे रही हो। फिर भी वन में क्यों घूम रही हो ? तुम रुद्राणी (भवानी, पार्वती) हो, ब्रह्माणी हो अथवा वैष्णवी (लक्ष्मी) हो ? किस कारण से तुमने मानवीय रूप धारण किया है ? २ हे माता, तुम्हें लौकिक कष्ट घेरे हुए हैं। मुझे

लौकिक कष्ट बेठो छो मात, कहो मन मूकी जथारथ वात,
बाई हुं मानवी सर्वथा, कर्मजोगे भोगववी व्यथा । ३ ।
नरनारीए तीर्थजात्रा मांडी, अंतरियाळ प्रभु गया छांडी,
न जाणीए शुं दुःख मनमां धरी, निशाए नाथ गया परहरी । ४ ।
कर्मकथा ए माता मारी, मासी कहे सांभळ नारी,
कहीं एक तुं दीठी छे खरी, जाणे भगिनीनी दीकरी । ५ ।
पण तेने नोहे अवस्था एवी, रूपे छे तुं दमयंती जेवी,
सुखे रहे सदनमां सती, तुं मारे जेवी इंदुमती । ६ ।
सुबाहु मारो सुत जेह, बेन कहीने राखशे तेह,
कहे दमयंती राखी माम, नहि करुं हुं नीचुं काम । ७ ।
दहाडी एक विप्रने आपुं अन्न, अने हविष्यान्न करु भोजन,
एवुं सांभळी हरख्यां राणी, राखी प्रेमदा ऊलट आणी । ८ ।
सती नाम धरावी रही, दमयंती ओळखाई नहीं,
रात दिन करे नळनुं ध्यान, विदेशी विप्रने आपे आमान । ९ ।

खुले मन से यथार्थ (सच्ची) बात बता दो'। (यह सुनकर) दमयन्ती बोली, 'हे देवी, मैं पूर्णतः (सचमुच) मानव-स्त्री हूँ। कर्मयोग मुझे व्यथा भोगवा रहा है। ३ हम पुरुष (पति) और पत्नी ने तीर्थ-यात्रा आरम्भ की। (परन्तु) बीच में ही मेरे प्रभु (पति) छोड़कर चले गये। न जाने, मन में कौन दुःख धारण करके मेरे पति मेरा परित्याग करके रात में ही चले गये। ४ हे माता, मेरे कर्म (दुर्दैव) की यह कथा है'। तो मौसी बोली, "हे नारी, सुनो। सचमुच तुम्हें कहीं देखा है। जान पड़ता है, तुम मेरी भगिनी की कन्या हो। ५ परन्तु उसकी ऐसी स्थिति नहीं हो सकती। (फिर भी) रूप में तुम (मेरी भानजी) दमयन्ती जैसी हो। हे सती, तुम इस घर में सुखपूर्वक रह जाओ। तुम मेरे लिए (मेरी कन्या) इन्दुमती जैसी हो। ६ सुबाहु नामक मेरा जो पुत्र है, वह तुम्हें बहिन की भाँति रख लेगा।' तो दमयन्ती दृढ़ता धारण करके बोली, 'मैं कोई भी छोटा काम नहीं करूँगी। ७ प्रतिदिन एक ब्राह्मण को मैं भोजन दूंगी और (स्वयं) हविष्यान्न भक्षण करूँगी'। ऐसा सुनकर रानी आनन्दित हो गयी और उसने उत्साह-उमंग के साथ उसे (अपने यहाँ) रख लिया। ८ वह 'सती' नाम धारण करके रह गयी और 'दमयन्ती' नाम से जानी-पहचानी नहीं जा रही थी। वह रात-दिन नल का ध्यान किया करती थी और एक परदेसी ब्राह्मण को कच्चा भोजन प्रदान किया करती थी। ९ वह राह चलते साधु को बुलाया करती।

तेडावे टहेलियो वाट जतो, जाणे नळ स्वामी थाय छतो,
हविष्यान्न जमे ने अवनी सूए, देहदमन करी दिन खूए। १०।
सांभळे रे सुख त्यारे तन तपे, रातदिवस नळने जपे,
एम घणा दिवस गया वही, कळिने मन चिंता थई। ११।
नळथी मन चळे नहीं सती, तो केम वराय मारा वती,
जो द्वेष आणे नळ साथे, तो दमयंती आवे हाथे। १२।
कांई वळी विपत पाडुं, एने मासी साथे वढाडुं,
मासीनी कुंवरी इंदुमती, एक दिवसे नहाती हती। १३।
दमयंती पासे ते समे, संग इंदुमतीने गमे,
मोतीनो हार कंठेथी कहाड्यो, भींतने टोडले वळगाड्यो। १४।
टोडलामां पेठो पापी कळि, मुक्ताफळनी माळा गळी,
इंदुमतीए मांड्यो शणगार, जुए तो नव देखे हार। १५।
अहरो पहरो ते खोळ्यो घणुं, विचार्युं ए कृत्य दासी तणुं,
पूछ्युं तेडीने एकांत, बाई तुज पर आवे छे भ्रांत। १६।

उसे जान पड़ता कि (एक न एक दिन) उसके पति नल प्रकट हो जाएँगे। वह (प्रतिदिन) हविष्यान्न खा लेती थी और भूमि पर सो जाती थी। वह देह-दमन करते हुए दिन बिता रही थी। १० जब वह सुख की बात सुनती, तब उसकी देह ताप को प्राप्त हो जाती थी। वह नल का रात-दिन जाप किया करती थी। इस प्रकार बहुत दिन बीत गये, तो कलि को मन में यह चिन्ता अनुभव होने लगी। ११ —यह सती मन में नल से विचलित नहीं हो रही थी, तो फिर उसके द्वारा मेरा बरण कैसे हो सकेगा। (उसने सोचा—) यदि नल के प्रति उसके मन में द्वेष उत्पन्न होगा, तो दमयन्ती मेरे हाथ आएगी। १२ फिर कोई विपत्ति उत्पन्न कर दूंगा; इससे मौसी के साथ झगड़ा लगा दूंगा। मौसी की कन्या इन्दुमती एक दिन नहा रही थी। १३ उस समय दमयन्ती उसके पास थी। इन्दुमती को उसकी संगति अच्छी लगती थी। (तब इन्दुमती ने) मोतियों का हार गले से निकाल लिया और दीवार वाले खूंटे (टोड़े) पर लटका दिया। १४ उस खूंटे में पापी कलि पैठ गया और उसने मोतियों की माला को निगल डाला। इन्दुमती जब सिंगार सजने लगी, तो उसने देखा— उसने हार नहीं देखा (पाया)। १५ उसने उसे इधर-उधर बहुत खोज लिया। उसने सोचा कि यह करनी इस दासी की है। (इसलिए) उसने उसे एकान्त में बुलाकर पूछा (कहा—), 'बाई, तुम पर सन्देह हो रहा है। १६ झट से ले आओ; तुमने माला कहाँ रखी है?' (यह सुनते ही)

लाव वहेली क्यां मूकी माळा ? दमयंतीने लागी ज्वाळा,
बाई बेन, मा चडावो आळ ! पृथ्वी जाशे रसाताळ,
जोई बोलवुं वदने वांक, स्वामी द्रोही पडे कुंभीपाक । १७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कुंभीपाक पडे सर्वथा, साचुं न बोले जेह रे,
घेर राखी रंक जाणी, हशे कां आपो छेह रे । १८ ।

दमयन्ती (के मन) में आग जैसी लग गयी । (वह बोली—) 'हे देवी, हे बहिन, (मुझपर) झूठा आरोप न लगाओ । पृथ्वी रसातल में जाएगी । देखकर ही मुँह से टेढ़ी बात बोलनी चाहिए । स्वामी से द्रोह करनेवाला कुम्भीपाक नरक में गिर जाता है । १७

जो सत्य नहीं बोलता, वह बिलकुल कुम्भीपाक नरक में गिर जाता है । मुझे रंक समझकर (तुम लोगों ने) अपने घर में रखा होगा । तो (हम तुम्हारे साथ) विश्वासघात क्यों करें' । १८

कडवुं ४४ मुं—(इन्दुमती द्वारा दमयन्ती पर हार चुराने का दोषारोप लगाना)

राग परजियो

इन्दुमती कहे बाई सांभळ, लोकने कां संभळावो ?
कहे वैदर्भी वण चोरीए, शा मारे अकळावो ? । १ ।
हाथमांहेथी हार लईने, ना कहे केम चाले ?
तस्कर करीने तो बांधे, जो वस्तु हाथे झाले । २ ।
मिथ्या हुं कहेती नथी, कोण माळा ले तुज पाखे ?
एवी चोरटी हुं हउं तो, राजमाता केम राखे ? । ३ ।

कड़वक— ४४ (इन्दुमती द्वारा दमयन्ती पर हार चुराने का दोषारोप लगाना)

इन्दुमती बोली, 'हे देवी, सुनो । लोगों को क्यों सुना (बता) रही हो ।' तो वैदर्भी दमयन्ती बोली, 'बिना चोरी के (चोरी न करने पर) किसलिए छेड़कर (मुझे) व्याकुल कर रही हो' । १ (इन्दुमती बोली—) "हाथ में से हार लेकर 'ना' कह रही हो, यह कैसे चलेगा ।" (दमयन्ती बोली—) 'यदि वस्तु हाथ में पकड़ी जाए, तो चोर की भाँति उसे बाँधते (पकड़ते) हैं' । २ (इन्दुमती बोली—) 'मैं झूठ नहीं बोल

माता मारीए मान दीधुं, सती सरखी जाणी,
असाधवी मुंने केम ओळखी ? शुं लेतां ग्रह्यो छे पाणि ? । ४ ।
अमे परीक्षा तारी करी, जो भरथारे परहरी,
बाई हुं मेणां जोग थई, तमारा घरनी पेटभरी । ५ ।
चोरी करवी आंख भरवी, ए तो क्यांनो न्याय ?
एवे राजमाता पधार्यां, रोई बन्ने कन्याय । ६ ।
आप आपणुं दुःख कहे, माताने नयणे ढाळी आंसु,
एक कहे मारो हार लीधो, एक कहे चोरी फांसु । ७ ।
चतुरशिरोमणि राजमाता, अंतरमां विमासे,
माळा गई ते मोटुं अचरज, सतीने केम कहेवाशे ? । ८ ।
तुं तो देवी जेवी दीसे, छे नारायणनी दास,
आपो हार क्लेश निवर्ते, जो कीधुं होय हास । ९ ।
सरखे सरखामां होय कौतुक, आपो हार मोती तणो,
राजकुंवर रिसाळ घणुं छे, जाणे थशे क्लेश घणो । १० ।

रही हूँ। तुम्हारे सिवा, माला कौन ले सकता है ? ' (दमयन्ती बोली—) ' (यदि) मैं ऐसी चोरनी होती, तो राजमाता मुझे क्यों रख लेती ? ' ३ (इन्दुमती बोली—) 'मेरी माता ने तुम्हें सती जैसी जानकर आदर-सम्मान प्रदान किया '। (दमयन्ती बोली—) ' तो मुझे असाध्वी कैसे जाना ? क्या हार लेते हुए मेरा हाथ पकड़ा है ? ' ४ (इन्दुमती बोली—) ' हमने इससे तुम्हारी परीक्षा की कि तुम पति द्वारा परित्याग की हुई हो। ' (दमयन्ती बोली—) ' हे देवी, मैं तुम्हारे घर की पेट पालनेवाली दासी ठहरी— मैं ताने देने योग्य हो गयी '। ५ (इन्दुमती बोली—) ' चोरी करना और (तिस पर) आँखें भर लेना —यह तो कहाँ का न्याय है ? ' उस समय राजमाता (वहाँ) पधारी, तो वे दोनों कन्याएँ रोने लगीं। ६ आँखों से आँसू बहाते हुए वे माता से अपना-अपना दुःख कहने लगीं। एक ने कहा— ' (इसने) मेरा हार लिया है '। तो एक ने कहा, ' (यह) चोरी का फन्दा है '। ७ राजमाता चतुर-शिरोमणि थी। वह मन में सोचने लगी। माला (खो) गयी, यह बड़ा आश्चर्य है। (फिर भी) सती को किस प्रकार (चोर) कहा जाए। ८ (वह बोली—) ' तुम तो देवी जैसी दिखायी दे रही हो। भगवान नारायण की दासी हो। यदि हँसी-ठठोली की हो, तो हार दे दो— (उससे) क्लेश का निवारण हो जाएगा। ९ सम-समान में हँसी-ठठोली होती है। मोतियों का हार दे दो। यह राजकन्या बहुत क्रोध करनेवाली है। जान पड़ता है, इससे

माळा होये आपणा घरनी, तो फरी शोध नव कीजे,
छे श्वसुरपक्षनी सर्वे जाणे, तेने शो उत्तर दीजे ? । ११ ।
हृदे फाटते कहे दमयंती, अपवाद दीधो एवो,
हां हां बाईजी, हार तमारो, लीधो छे में देवो । १२ ।
न घटे राजमाताजी तमने, दुःख देवुं घर राखी,
अमो न होउं चोरी करनारा, छौं जशना अभिलाखी । १३ ।
इंदुमती कहे आपे छूटशो, शो शोर करवो ठालो,
माळा मारी करमां मूको, जो जश होये वहालो । १४ ।
सेवक सखीओ एम कहे छे, एणीए माळा लीधी,
मारो बांधो ताणो पछाडो, अबळा आकळी कीधी । १५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कीधी ए निश्चे चोरटी, राजमाताए जणावी रीस रे,
दमयंती दुःख पामी घणुं, पछे समर्या जगदीश रे । १६ ।

बड़ा क्लेश (उत्पन्न) हो जाएगा । १० माला (यदि) अपने घर की हो, तो फिर खोज न करें । (परन्तु) यह तो ससुराल पक्ष की है —यह सब जानते हैं । उन्हें क्या उत्तर दें ' । ११ तो दमयन्ती हृदय को फाड़ते हुए बोली, ' तो इतना (बड़ा) दोष (लगा) दिया है । हाँ, हाँ, देवीजी, मैंने तुम्हारा हार लिया है— मुझे वह देना है । १२ हे राजमाताजी, मुझे अपने घर में रखकर दुःख देना आपके लिए उचित नहीं है । मैं चोरी करनेवाली नहीं हूँ— मैं यश (कीर्ति) की अभिलाषिणी हूँ ' । १३ (यह सुनकर) इन्दुमती बोली, ' (लौटा) दोगी, तो छूट जाओगी । क्यों व्यर्थ ही शोर मचा रही हो ? यदि तुम्हें यश प्यारा हो, तो मेरी माला मेरे हाथ में रख दो । १४ सेवक और सखियाँ ऐसा कह रहे हैं कि इसी ने माला ली है । इसे मारो, बाँध लो, घसीट लो, पटक दो ' । इस प्रकार उन्होंने उस अबला (दमयन्ती) को डराकर आकुल-व्याकुल कर दिया । १५

राजमाता ने क्रोध दिखाया (और कहा—) ' निश्चय ही इस चोरनी ने चोरी की है ' । (यह सुनकर) दमयन्ती बहुत दुःख को प्राप्त हुई । अनन्तर उसने जगदीश भगवान का स्मरण किया । १६

कडवुं ४५ मुं—(कलि के प्रभाव से दमयन्ती का मुक्त हो जाना)

राग मारु

हो हरि सत्यतणा संघाती, हरि हुं कहींये नथी समाती,
हरि मारे कोण जन्मना करतुं ? प्रभु चोरी थकी शुं नरतुं ? । १ ।
हरि हुं शा माटे दुःख पामुं ? प्रभु जुओ हुं रांकडी सामुं,
हरि तमे ग्राहथी गज मुकाव्यो, तो हुं उपर शो रोष आव्यो ? । २ ।
हरि हुं नथी दुःखनी धीर, तमे छो विपत समेना वीर,
हरि तमे मन अपराध न लावो, हरि तमे अनाथ बंधु कहावो । ३ ।
हरि हुं हरखे हणाई, हरि हुं चोरटीमां गणाई,
हरि हुं केनी ने कोण तणी ? हरि जुओ हुं रांकडी भणी । ४ ।

कड़वक—४५ (कलि के प्रभाव से दमयन्ती का मुक्त हो जाना)

"हे हरि, आप सत्य के साथी हैं। हे हरि, मैं कहीं भी नहीं समा पा रही हूँ (मुझे कहीं भी अनुकूल ठौर नहीं मिल रहा है)। हे हरि, मेरे किस जन्म का किया हुआ यह कर्म है ? हे प्रभु, चोरी (के दोषारोप) से (अधिक) बुरा क्या है। १ हे हरि, मैं किसलिए दुःख को प्राप्त हो रही हूँ ? हे प्रभु, देखो, मैं रंक (दीन आपके) सामने हूँ। हे हरि, आपने हाथी को ग्राह (मगर)[1] से छुड़ा लिया। फिर मुझ पर आपको कैसा क्रोध आ गया ? २ हे हरि, मैं दुःख से धीरज धारण नहीं कर सकती हूँ। आप ही मेरे विपत्ति के समय के बन्धु हैं। हे हरि, आप मेरे अपराध को मन में न लाइए (उसपर ध्यान न दीजिए)। हे हरि, आप अनाथों के बन्धु कहाते हैं। ३ मैं हर्ष से मारी गयी हूँ (इनसे मिलने से पहले हर्ष हो

---

१ हाथी और ग्राह— जय-विजय नामक कर्दम प्रजापति के देवहूती से उत्पन्न पुत्र थे। वे बड़े विष्णु-भक्त और यज्ञ-कर्म में निपुण थे। एक समय मरुत राजा के यज्ञ को सम्पन्न करने के पश्चात दक्षिणा के बँटवारे के विषय में उनमें विवाद हुआ, तो जय ने विजय को क्रोध-पूर्वक 'हाथी' बन जाने का अभिशाप दिया; तब विजय ने जय को अभिशाप दिया— तुम 'ग्राह (मगर)' बनोगे। परन्तु वे दोनों पश्चात्ताप-दग्ध होकर भगवान विष्णु की शरण में गये, तो उन्होंने उन्हें यथासमय उपरोक्त शाप से मुक्त करने का अभिवचन दिया। अनन्तर विजय रूपी हाथी गण्डकी नदी के तट पर और जय रूपी ग्राह उस नदी में रहने लगे। कार्तिक मास में जब गज स्नान के लिए नदी में उतरा, तो ग्राह ने उसका पैर पकड़कर अन्दर खींचा। उस समय गज ने रक्षा के लिए भगवान विष्णु को पुकारा, तो उन्होंने अपने भक्त की रक्षा के लिए आकर सुदर्शन चक्र से ग्राह को मार डाला और गज की रक्षा की। इस प्रकार वे दोनों एक-दूसरे के अभिशाप से मुक्त हुए। इस प्रकार भगवान विष्णु शरणागत की रक्षा करते हैं।

हरि हुं तारी सेवा चूकी, तो नळे वनमां मूकी,
हरि में विप्र न पूज्या हाथे, तेथी शुं तरछोडी नाथे ? । ५ ।
हरि में शिव न पूज्या जळे, तो शुं रोती मूकी नळे ?
हरि दोहले उदर भरवुं, हरि मुजने घटे छे मरवुं । ६ ।
हरि हुं भरतारे छांडी, हवे दुःख कहुं कोने मांडी ?
हरि में कोण पातक कीधां ? हरि में साधुने मेणां दीधां । ७ ।
हरि में राख्युं होय सत्य, हरि वहाला होय नळ पत्य,
मारा कोटिक छे अवगुण, पण तमो तो छो रे निपुण । ८ ।
अपराध सर्व विसारी, चडो विट्ठला वहारे मारी,
जो नहीं आवो जगदीश, तो प्राण मारो हुं तजीश । ९ ।
एवुं कहीने आंखे भर्युं जळ, अमो अबळा तणुं शुं बळ ?
एवुं मनमां धरियुं ध्यान, सतीनी वारे चड्या भगवान । १० ।
अंतरजामीए बुध दीधी, सतीए आँख रातडी कीधी ।
कहे मासीने करी क्रोध, फरी करो हारनी शोध । ११ ।

गया था)— अब मैं दुःख को प्राप्त हुई हूँ । हे हरि, (अब) चोरनियों में मेरी गिनती की गयी है । हे हरि, मैं कौन हूँ और किसकी हूँ ? हे हरि, मुझ रंक की ओर देखिए । ४ हे हरि, मैं आपकी सेवा (करने) से चूक गयी हूँ, (इसलिए) तो नल ने (मुझे) वन में त्यज दिया है । हे हरि, मैंने अपने हाथों ब्राह्मण का पूजन नहीं किया (हो), क्या उससे मेरे पति ने मेरा परित्याग किया है ? ५ हे हरि, मैंने पानी में (खड़ी होकर) शिवजी का पूजन नहीं किया, क्या तो (इसलिए) नल ने मुझ रोती हुई को त्यज दिया ? हे हरि, कष्ट-पूर्वक मुझे पेट भरना है । हे हरि, मुझे मर जाना उचित है । ६ हे हरि, मैं पति द्वारा छोड़ी गयी हूँ । अब मैं अपना दुःख ठीक से किससे कहूँ ? हे हरि, मैंने कौन पाप किये हैं ? हे हरि, मैंने साधुओं को ताने सुनाये हों । ७ हे हरि, मैंने अपने सत्य का निर्वाह किया हो, तो हे हरि, मेरे पति नल मेरे लिए प्रिय होंगे । मेरे तो करोड़ों अवगुन हैं । फिर भी आप तो निपुण हैं (उन अवगुनों की ओर ध्यान न देनेवाले, समझदार हैं) । ८ मेरे समस्त अपराधों को भूलकर हे विट्ठल, मेरी सहायता करने के लिए आ जाइए । हे जगदीश, यदि आप नहीं आएँगे, तो मैं अपने प्राणों को त्यज दूंगी" । ९ ऐसा कहते हुए उसने आँखों में अश्रुजल भर लिया । (वह बोली—) 'मुझ अबला का क्या बल हो सकता है ?' मन में इस प्रकार उसने (भगवान का) ध्यान किया । तो उस सती की सहायता के लिए भगवान आ गये । १०

साखी सूरज विष्णु ने वाय, जो में कीधो होय अन्याय,
बाई हार तमारो जडजो, लेनारो फाटी पडजो। १२।
एवुं कहेतामां कळिजुग नाठो, त्यारे तडाक टोडलो फाट्यो,
मांहे थकी पड्यो नीसरी हार, सतीने वूठ्या विश्वाधार। १३।
अंतरिक्षथी अकस्मात्, वरस्यो हारतणो वरसाद,
एक एक पें अदकां मोती, राजमाता टगटग जोती। १४।
पछे दमयंतीने पागे, राजमाता फरी फरी लागे,
बाई, तुं छे मोटी साध, मारो क्षमा करो अपराध,
इंदुमती थई ओशियाळी, मुखडुं न देखाडे वाळी। १५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वाळी मुख देखाडे नहीं, सत सतीनुं रह्युं रे,
बृहदश्व कहे युधिष्ठिरने, वैदर्भ देशमां शुं थयुं रे। १६।

अन्तर्यामी भगवान ने उस सती को यह बुद्धि दी (यह बात सुझायी)। (रो-रोकर) उसने आँखों को लाल कर दिया था। (भगवान द्वारा प्रेरित होकर) वह मौसी से क्रोध-पूर्वक बोली, 'हार की फिर से खोज करो। ११ यदि मैंने कोई अन्याय किया हो, तो उसके लिए सूर्य, भगवान विष्णु और वायु साक्षी हैं। हे देवी, तुम्हारा हार मिल जाए, (और) लेनेवाला टूटकर गिर जाए'। १२ ऐसा कहते ही कलियुग भाग गया, तब तड़तड़ाहट के साथ वह (दीवार वाली) खूंटी फट पड़ी। उसके अन्दर से निकलकर हार (नीचे) गिर पड़ा। विश्व के आधार (-भूत) भगवान सती पर प्रसन्न हो गये। १३ तो अन्तरिक्ष में से अकस्मात हारों की बौछार हो गयी। एक-एक हार में बहुत अधिक मोती थे। राजमाता (इस चमत्कार को) टक लगाये देखती रही। १४ अनन्तर वह राजमाता दमयन्ती के बार-बार पाँव लगी। (वह बोली—) 'हे देवी, तुम बड़ी साध्वी हो। मेरे अपराध को क्षमा करो'। इन्दुमती लज्जित हुई— वह अपना मुँह ढँककर नहीं दिखा रही थी। १५

अपने मुँह को ढँककर वह दिखा नहीं रही थी। (इस प्रकार) सती का सत्य (सुरक्षित) रह गया। बृहदश्व ने युधिष्ठिर से कहा— (तब तक उधर) विदर्भ देश में क्या हुआ ? (सुनिए)। १६

कडवुं ४६ मुं—(बालकों को लेकर सुदेव और दमयन्ती की सखियों का भीमक के पास आ जाना)

राग देशाख

बृहदश्वजी कहे कथा रे, सुणो धर्म भूपाळ,
सुदेव सांचर्यो रे, लेईने त बन्ने बाळ । १ ।
माधवी केशवी रे, सखी दमयंतीनी जेह,
शोभे साहेलडी रे, जेम प्राण विहोणी देह । २ ।
कुंदनपुर आविया रे, ऋषि, सखी ने सुत,
देखीने दोहेलां रे, भीमके जाण्युं थयुं अकृत । ३ ।
छोरुं छेह पामियां रे, राये हृदयाशुं लीधां,
माबापे मूकियां रे, दीसे दामणां बीधां । ४ ।
सुदेव शोके भर्यो रे, दुःखे दाधी दासीनी जोडी,
मीटे मीट मळी रे, मोटे स्वर रुदन मूक्यां छोडी । ५ ।
जातां जामात्रने रे, जाण्युं जोगी थईने जावुं,
सजन सांभर्युं रे, मांड्युं नळना गुणनुं गावुं । ६ ।

कड़वक— ४६ (बालकों को लेकर सुदेव और दमयन्ती की सखियों का भीमक के पास आ जाना)

बृहदश्वजी (नल-दमयन्ती की) कथा कह रहे थे । (वे बोले—) हे राजा धर्म, सुनिए । उन दो बच्चों को लेकर सुदेव चले । १ दमयन्ती की माधवी और केशवी नामक जो सखियाँ थीं, वे दोनों वैसे ही (कम) शोभायमान (अर्थात निस्तेज) थीं, जैसे प्राण-विहीन देह हो । २ ऋषि (सुदेव), सखियाँ और वे पुत्र कुन्दनपुर आ गये । उनके दुःखों को देखकर भीमक को जान पड़ा कि कुछ पाप (अनुचित) बात हो गयी है । ३ ये बच्चे विश्वासघात को प्राप्त हो गये हैं; (यह सोचकर) राजा (भीमक) ने उन्हें हृदय से लगा लिया । (वे बोले—) 'अरे इन्हें माँ-बाप ने छोड़ दिया है । ये पराधीन तथा घबराये हुए दिखायी दे रहे हैं' । ४ सुदेव शोक से भरे-पूरे हो गये थे । दासियों की जोड़ी दुःख (की आग) में जल रही थी । उनकी दृष्टि से दृष्टि मिल गयी, तो वे उच्च स्वर में रुदन करने लगीं । ५ जामाता के (इस प्रकार) चले जाने को उन्होंने उनका जोगी बनकर जाना ही समझा । फिर उसे स्वजन (आप्त जन) का स्मरण हुआ, तो वह नल का गुण-गान करने लगी । ६ वज्रावती ने

पूछे वज्रावती रे, बोलो सुता साहेली,
दीकरी क्यां गई रे, बे बाळकडांने मेली। ७।
नाथ नैषधतणो रे, गयो माया उतारी,
सुदेवे वार्ता रे, भूपने करी विस्तारी। ८।
विलपे विदर्भपति रे, निश्वासे सागर सूके,
भीमकनी भामिनी रे, बालक हृदेथी नव मूके। ९।
कुटुम्ब टोळे मळी रे, भूमि स्वयंवरनी नीरखे,
दमयंतीए ह्यां नळ वर्यो, हींड्यानां पगलां परखे। १०।
राणी कहे रायजी रे, फरी शोध पूज्यनी कीजे,
जमाईजी नव जडे रे, तो आपण जोगवटो लीजे। ११।
शोधी काढो सर्वथा रे, जो मारुं जीववुं जाणो,
दीकरी मळ्या विना रे, मुखे नव मूकुं जळ दाणो। १२।
भीमके मोकल्या रे, सेवक सहस्र एक,
खप करी खोळजो रे, कहाडजो क्षिति केरो छेक। १३।
ऊडती वार्ता रे, भीमके सांभळी कान,
दमयंती एकली रे, नळे रोती मूकी रान। १४।

पूछा' (कहा) 'हे कन्या की सहेलियो, बोलो, दोनों बच्चों को तुम्हें मिलाकर (देकर) कन्या (दमयन्ती) कहाँ गयी ? ७ निषध देश के स्वामी माया (ममता) छोड़कर चले गये'। तो सुदेव ने विस्तार-पूर्वक राजा (भीमक) से समाचार कहा। ८ विदर्भ-पति भीमक विलाप करने लगे। उनकी (साँस-) उसांस से समुद्र (मानो) सूख जाने लगा। भीमक की स्त्री (वज्रावती) उन बालकों को हृदय से दूर नहीं कर रही थी। ९ परिवार के लोग टोली-टोली में मिलकर स्वयंवर की भूमि को देखने लगे। 'दमयन्ती ने यहाँ नल का वरण किया'—(यह कहकर) उसके (चलते समय के) चरणों (के अंकित चिह्नों) को परखने लगे। १० रानी बोली, 'हे राजाजी, पूज्य (दामाद नल) की फिर से खोज कर लीजिए। यदि दामादजी नहीं मिलें, तो हम संन्यास लें। ११ यदि मेरा जीवित रहना जानना (देखना) चाहते हो, तो उन्हें सब प्रकार से खोज निकालिए। बिना कन्या के मिले, मैं मुंह में जल-दाना नहीं डालूँगी'। १२ (अनन्तर) भीमक ने एक सहस्र सेवकों को भेज दिया। (वे बोले—) 'यत्नपूर्वक ढूँढ़ लो, धरती के छोर (अन्त) तक उन्हें खोजकर निकाल लो'। १३ भीमक ने यह उड़ती खबर कानों से सुनी कि नल ने रोती हुई दमयन्ती को वन में अकेले छोड़ दिया। १४ बनजारों ने कहा, 'हमने उसे नदी के

वणजारे कह्युं रे, अमे दीठी सरिताने तीर,
रूप घणुं हतुं रे, जाण्युं शक्तिनुं शरीर । १५ ।
केश छूटा हता रे, वस्त्र ते अडधुं अंग जाण,
वात खरी मळी रे, वदती हती नळ नळ वाण । १६ ।
माता विलपे घणुं रे, दुःखे दीधुं अंतःकर्ण,
मेळावो क्यां हशे रे, दीकरी खडी पामशे मर्ण । १७ ।
वज्रावती मातने रे, नीर आवे नेण अषाड,
पुत्रीने शोधवा रे, सुदेवने चडाव्यो पाड । १८ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

पाड चडाव्यो सुदेवने, कहे राणी ने राय रे,
गुरुजी तम विना अर्थ न सरे, एम कही लाग्यां पाय रे । १९ ।

तीर पर देखा था। उसका रूप बहुत (अच्छा) था। हमने उसे शक्ति (देवी) का शरीर, अर्थात उसे शरीरधारी शक्तिदेवी समझा। १५ उसके केश शोभायमान थे; समझिए कि वस्त्र तो आधे शरीर पर था। बात सच्ची मिल गयी (निकली)— वह वाणी अर्थात मुँह से 'नल', 'नल' बोल रही थी। १६ माता (वज्रावती) बहुत विलाप कर रही थी। दुःख से अन्तःकरण जल रहा था। (वह बोली—) 'मुझसे (कन्या) मिला दो। वह कहाँ है ? मेरी कन्या व्यर्थ ही भ्रमण करते हुए थककर मृत्यु को प्राप्त हो जाएगी'। १७ माता वज्रावती के नयनों में आषाढ़ की वर्षा का-सा अश्रुजल आ रहा था। (वह बोली—) हमने पुत्री को खोज निकालने के हेतु सुदेव के उपकार स्वीकार किये हैं (हम सुदेव के ऋणी हैं)। १८

रानी और राजा ने कहा, 'हम सुदेव के ऋणी हैं। हे गुरुजी, बिना आपके हमारा हेतु सिद्ध नहीं होगा'। ऐसा कहते हुए वे (दोनों) उसके पाँव लगे। १९

कडवुं ४७ मुं—(सुदेव द्वारा दमयन्ती का पता लगाना)

राग रामग्री

ब्राह्मण चाल्यो अनुचर वेश जी, अटण करतो देशदेश जी,
कळा पाडी वरवुं गात्र जी, जीर्ण वस्त्र ग्रह्युं तुंबीपात्र जी। १ ।

कड़वक— ४७ (सुदेव द्वारा दमयन्ती का पता लगाना)

ब्राह्मण (सुदेव) चला। उसका वेश अनुचर (सेवक) का-सा था।

ढाळ

पात्र करमां रहित जोखम, ज्येष्टिका जीर्ण वसन,
दुःखी दरिद्री सरखो देखीए, जद्यपि छे संपन। २।
नीरखे ओवारा नवाणना, ज्यां नीर भरती नार,
जोयां जूथ जुवती तणां, पण न जडी भीमकुमार। ३।
तीर्थजात्रा जगन जाग्रण, ज्यां स्त्रीओनो संवाय,
अजाण्या थई जुए ब्राह्मण, शीश धूणीने जाय। ४।
पगे अटण रसनाए रटण, मुखे दमयंतीनुं नाम,
एम करतां सुदेव आव्यो, राजमाताने गाम। ५।
विप्र पुरमां आवियो, वधामणी पाम्यो तर्त,
सांभळ्युं जे राजमाता, ऊजवे छे वर्त। ६।
पूर्णाहुति वेळा हुती, जोवा मळ्यां बहु जन,
दासी साथे दमयंती, करे पंथीनुं दर्शन। ७।

वह देश-देश में भ्रमण करने लगा। उसने अपने शरीर की कान्ति बदल दी; शरीर विरूप (बेडौल) कर दिया। उसने फटा-पुराना वस्त्र धारण किया और (हाथ में) तूंबीपात्र लिया। १ वह हाथ में एक पात्र लिये हुए था, (जिसके खो वा नष्ट होने पर) हानि का कोई डर नहीं था। पास में एक लाठी थी। उसका (पहना हुआ) वस्त्र फटा-पुराना था। यद्यपि वह (धन-) सम्पन्न था, तथापि वह दुःखी, दरिद्र जैसा दिखायी दे रहा था। २ वह (चलते समय) जलाशय का किनारा ध्यान से देखता, जहाँ स्त्रियाँ पानी भरती थीं। उसने (ऐसे स्थलों पर) युवतियों की टोलियाँ देखीं, फिर भी उसे भीमक-कुमारी दमयन्ती नहीं मिली। ३ तीर्थयात्रा, यज्ञ-याग, (व्रत आदि के निमित्त किया जानेवाला) रतजगा (आदि के स्थानों पर) —जहाँ स्त्रियों का समुदाय होता है, अनजान बनकर वह ब्राह्मण देखता था। परन्तु (दमयन्ती के न मिलने पर) वह सिर धुनकर (वहाँ से) चला जाता था। ४ पाँवों से भ्रमण, जिह्वा से भगवान के नाम की रट, मुँह में दमयन्ती का नाम लेना चल रहा था। इस प्रकार करते-करते सुदेव राजमाता (भानुमती) का ग्राम आ गया। ५ वह विप्र उस नगर में आ गया; तो उसे तत्काल शुभ समाचार प्राप्त हुआ। उसने सुना कि राजमाता व्रत का समापन करने जा रही है। ६ पूर्णाहुति की बेला हो गयी थी। उसे देखने के लिए बहुत लोग (स्त्री-पुरुष) इकट्ठा हुए थे। (वहाँ) दासी के साथ दमयन्ती ने उस पथिक (ब्राह्मण) का दर्शन किया। ७ वह अपूर्व (पहले कभी न देखे हुए) मनुष्यों का दर्शन

अपूर्व मनुष्यनुं करे दर्शन, नीरखे नरनी काय,
विचार एवो वैदर्भीने, आवी मळे नळराय । ८ ।
वेद अध्ययन करे वाडव, अभिषेक आशीर्वाद,
किंकरी बहु गीत गाये, होय भेरी नाद । ९ ।
दीक्षा लेई सुबाहु, बेठो तेजस्वी जन,
हुतद्रव्य होमाये विविध पेरे, धूम्र गयो रे गगन । १० ।
दान आपे गाय सवच्छी, राय भर्यो अहमेव,
जगन केरा कुंडनी आगळ, आवी रह्यो सुदेव । ११ ।
देह दुर्बळ रेणुए भर्यो, ज्येष्ठिकाए तुंबी भराव्युं,
सभा सर्व खडखड हसी, आ रत्न क्यांथी आव्युं ? । १२ ।
जगनमंडप जोयो नहीं, नहीं जोयो दीक्षित नरेश,
घेलो ज शो आव्यो धस्यो, सर्वने मारे ठेश । १३ ।
लोक कहे हो घेलिया, टहेलिया अंतरना अंध,
भिक्षुक भ्रष्ट विकळ दृष्ट ? शो स्त्री साथे संबंध ? । १४ ।

कर रही थी । वह पुरुषों के शरीर को ध्यान से देखती थी । वैदर्भी दमयन्ती का (इसमें) यह विचार (अनुमान) था कि नलराज (यहाँ पर) आकर मिलेंगे । ८ ब्राह्मण वेदों का अध्ययन (पठन) कर रहे थे । अभिषेक चल रहा था । आशीर्वचन कहे जा रहे थे । अनेक दासियाँ गीत गा रही थीं । भेरियों की ध्वनि हो रही थी । ९ तेजस्वी पुरुष सुबाहु दीक्षा ग्रहण करके बैठा हुआ था । विविध प्रकार से होम-द्रव्यों का हवन किया जा रहा था । धुआँ आकाश की ओर जा रहा था । १० राजा ने सवत्स धेनु दान में दी । वह अभिमान से भरा हुआ था । (उस समय) सुदेव यज्ञ के कुण्ड के सामने आकर ठहर गया । ११ उसकी दुर्बल देह धूलि से भरी हुई थी । तूंबी को उसने अपनी लकुटिया से भर दिया था (तूँबी लकुटिया के अग्र से लटकायी थी)। उसे देखते ही सभा खिल-खिलाकर हँसने लगी । (सभाजनों को लगा—) यह रत्न कहाँ से आया । १२ इसने न यज्ञ-मण्डप को देखा, न दीक्षा ग्रहण किये हुए नरेश को । यह कैसा पगला धँसकर आ गया है । उसने सबको ठोकर लगायी है (सबको ठुकराता हुआ वह अन्दर आ गया है) । १३ लोग बोले, 'अरे पगले, अरे (इधर-उधर) घूमनेवाले साधु ! तुम अन्दर के अन्धे हो । तुम क्या (पथ-) भ्रष्ट भिक्षु हो ? तुम्हारी दृष्टि (क्या) विकल (धुँधली) हो गयी है ? तुम्हारा इन स्त्रियों से क्या सम्बन्ध है' । १४ उसने किसी की कही नहीं सुनी । उसकी देह में कष्ट हो रहा था । उस समय सुदेव और दमयन्ती की दृष्टि (से दृष्टि) मिल गयी । १५ नयनों

कह्युं कोने नव सांभळे, छे कलेवरमां कष्ट,
एवे सुदेव ने दमयंतीनी, मळी दृष्टे दृष्ट । १५ ।
निमेष थाती रही नयणे, विचारमां पड्या बेह,
मारे पियेरथी पधारियो, सुदेव साचो एह । १६ ।
विप्र को विदर्भनो ए, नानपण मध्य नेह,
मांहोमांहे जोया करे, सर्वेने थयो संदेह । १७ ।
गुरुए गोरी ओळखी, जड्युं अबळानुं एंधाण,
भामिनीना भाल उपर, विधिए नीर्म्यो भाण । १८ ।
अगोप राखती मासी मंदिर, केश केरी लट,
खसी वेणी सूरज झळक्यो, हृदे भरायुं ऊलट । १९ ।
समीप आव्यां सामसामां, नेत्रजळ जेम नेव,
साथे बंन्यो बोलियां, हो दमयंती हो सुदेव । २० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सुदेव-दमयंती मळ्यां, धरणी ढळ्यां मूर्च्छा हवी रे,
सभा सर्व विस्मय थई, आ तो वार्ता दीसे नवी रे । २१ ।

की पलकें (वैसी ही) ठहर गयीं (वे अपलक देखते रहे)। वे दोनों सोच-विचार में (असमंजस में) पड़ गये। (दमयन्ती को लगा—) 'ये मेरे पीहर से पधारे हैं। ये सचमुच सुदेव हैं। १६ ये कोई विदर्भ के ब्राह्मण हैं। बचपन में इन्हें (मेरे प्रति) स्नेह था'। वे (दोनों) परस्पर देखते रहे, तो सबको सन्देह हुआ। १७ गुरुजी को (जब) उस स्त्री का परिचय देनेवाला चिह्न मिल गया, तो उन्होंने उस गोरी को (दमयन्ती को) पहचान लिया। उस भामिनी के भाल पर विधाता ने सूर्य (-सा चिह्न) बना लिया था। १८ वह अपनी मौसी के घर में बालों की लटों से उस (चिह्न) को (छिपाते हुए) अदृश्य बनाये रखती थी। (तब) बेनी नीचे की ओर आ गयी, तो वह सूर्य (-चिह्न) झलकने लगा, तो (यह देखकर उस ब्राह्मण के) हृदय को उल्लास ने भर दिया। १९ वे दोनों (एक-दूसरे के) आमने-सामने आ गये। आँखों से ओलती में से गिरनेवाले पानी जैसा अश्रुजल बहने लगा। साथ ही (तत्काल) वे दोनों बोले, 'हे दमयन्ती !', 'हे सुदेव'। २०

सुदेव और दमयन्ती (एक-दूसरे से) मिल गये। (तब) दमयन्ती मूर्च्छित हो गयी और धरती पर गिर गयी। तो सभा विस्मय को प्राप्त हुई। (उन्हें लगा—) यह बात तो नयी दिखायी (अनोखी, अपूर्व) दे रही है। २१

कडवुं ४८ मुं—(सुदेव द्वारा दमयन्ती का परिचय देना)

राग वेराडी

मूर्च्छाथी महिला जागी, पूछ्युं गोरने पागे लागी,
शके छो घरना मुनि, हा दीकरी कां तुं सूनी ? । १ ।
दुर्बळ कोण कारणे ? दासी मासीने बारणे,
ओळखी नहीं तुंने माडी, में देहनी कळा पाडी । २ ।
शुं मासीए दुःख दीधुं ? ना जी, वाछळ कीधुं,
नाथजीए तने कां मूकी ? हुं नेट कांई एक चूकी । ३ ।
नथी बाई तुं चूकवावाळी, नहीं तजे अन्या टाळी,
मातापिता जे तारां, रोतां हशे ते चोधारां । ४ ।
पियेरथी आव्यो सती, शुं प्रगट्या नैषधपति,
हा नळनी थई छे शोध, मुजने द्यो छो प्रतिबोध । ५ ।
हा निश्चय नळ प्रगट, छे वाणीमांहे कपट,
छोरुने छेह कां आप्यां ? छते बापे थयां नबापां । ६ ।

कड़वक— ४८ (सुदेव द्वारा दमयन्ती का परिचय देना)

मूर्च्छा से वह स्त्री जग गयी (सचेत हुई), तो वह गुरु (सुदेव) के पांव लगी और उसने पूछा, ‘सम्भवतः (शायद) आप (हमारे) घर के मुनि हैं’। (तो सुदेव ने कहा—) ‘हाय कन्या, तुम अकेली क्यों हो ?। १ तुम किस कारण से दुबली हो गयी हो ? मौसी के द्वार पर तुम दासी (जैसी कैसे रह रही) हो ? अरी मैया, तुम्हें उसने नहीं पहचाना’। (दमयन्ती बोली—) ‘मैंने अपनी देह का रूप बदल दिया है’। २ (सुदेव बोले—) ‘क्या मौसी ने तुम्हें दुःख दिया ?’ (दमयन्ती बोली—) ‘नहीं तो। उसने तो वात्सल्य किया’। (सुदेव ने पूछा—) ‘तुम्हें पति ने क्यों छोड़ दिया ?’ (दमयन्ती बोली—) ‘निश्चय ही मैंने कुछ भूल की’। ३ (सुदेव ने कहा—) ‘हे देवी, तुम भूल करनेवाली नहीं हो’। (तो दमयन्ती बोली—) ‘बिना मेरे दोष के उन्होंने मुझे नहीं त्याग दिया’। (सुदेव बोले—) ‘तुम्हारे जो माता-पिता हैं, वे चार-बार अश्रु-प्रवाह बहाते हुए रो रहे होंगे। ४ हे सती, मैं तुम्हारे पीहर से आ गया हूँ’। (दमयन्ती ने पूछा—) ‘क्या नैषध-पति (नल राजा) प्रकट हो गये हैं ?’ (सुदेव बोले—) ‘हाँ, नल की खोज हुई है’। (तो दमयन्ती ने कहा—) ‘तो मुझे प्रतिबोध करा दीजिए’। ५ (सुदेव बोले—) ‘निश्चय ही नल प्रकट हुए हैं’। (दमयन्ती बोली—) ‘आपकी वाणी में कपट है। उन्होंने बच्चों का विश्वासघात क्यों किया ? वे तो पिता के होते हुए

राजमाताजी एम पूछे, ऋषि तारे ने एने शुं छे ?
ए कोण कोण जाणे जी ? ए तो तमारी भाणेजी । ७ ।
केई भाणेजी ए मारी, दमयंती नळनी नारी,
ए वात ते केम नीपजी, भरतारे एने कां तजी ? । ८ ।
द्यूत रमीने नैषध हार्या, ते माटे वन पधार्या,
शुं जाणीए शा काजे ? त्याज करी महाराजे । ९ ।
तुं दमयंती दीकरी, हा थई रही किंकरी,
सुणी मासी धरणी ढळी, सभा थई व्याकुळी । १० ।
सुदेव कहे छे नाट, एम भूल्यां ते श्यामाट,
जे पोतानुं पेट, तेने केम विसरीए नेट ? । ११ ।
हुं वरांसी रे बाप, एम मासी करे विलाप,
त्यां थई रह्यो हाहाकार, सुदेव कहे सौने धिक्कार । १२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सुदेव कहे धिक्कार रे, ओळखी नहीं सुंदरी सती रे,
राजकुंवर लाज्यो घणुं, रुए अतिशे इंदुमती रे । १३ ।

पितृहीन हो गये'। ६ (तब) राजमाता (भानुमती) ने इस प्रकार पूछा, 'हे ऋषि, आपका और इसका क्या (सम्बन्ध) है ? अजी कौन जानता है कि यह कौन है ?' (तो सुदेव ने कहा—) 'यह तो आपकी भानजी है।' ७ (राजमाता ने पूछा—) 'यह मेरी भानजी कैसे ? (मेरी भानजी) दमयन्ती तो नल की पत्नी है। (इस स्थिति में) यह बात कैसे हुई ? पति ने इसका त्याग क्यों किया ?' ८ (सुदेव ने कहा—) 'निषधराज द्यूत खेलते-खेलते हार गये। उस कारण से वे वन में पधारे। फिर महाराज (नल) ने किस कारण इसका त्याग किया, क्या जानें। ९ हे कन्या दमयन्ती, हाय, तुम दासी बनकर रह रही हो'। यह सुनकर मौसी धरती पर लुढ़क पड़ी, तो सभा व्याकुल हुई। १० सुदेव बोले, 'निश्चय ही तुम स्त्री को वे इस प्रकार भूल गये हैं। परन्तु, जो अपने स्वयं से उत्पन्न हैं, उन्हें निश्चय ही कैसे भूल जाएँ ?' ११ 'अरे बाप, मैं पछता रही हूँ'। इस प्रकार मौसी (भानुमती) विलाप करने लगी। वहाँ (फिर) हाहाकार मच गया। सुदेव ने कहा— 'सबको धिक्कार है'। १२

सुदेव ने कहा, 'सबको धिक्कार है, जो सती सुन्दरी को नहीं पहचाना।' (यह देखकर) राजकन्या इंदुमती बहुत लज्जित हुई। वह बहुत रोने लगी। १३

कडवुं ४६ मुं—(राजमाता आदि द्वारा पछतावा करना)

राग गोडी

काया कुसुमरूपे किंकरीने, देखी दादो सुदेव,
अजाण्यो थईने ईहां रह्यां, थई दासी कीधी सेव। १।
अन्योन्ये वात पूछी, ने हृदये पाम्यां शोक,
राजमाता सुबाहुने, सुदेवे दीधो दोष। २।
मासी मूर्च्छा पामियां रे, हवो हाहाकार,
दमयंती पर दासत्व भोगव्युं, प्रीछ्यो नहि परिवार। ३।
राजमाता लज्जा पाम्यां रे, आव्यां दमयंती पास,
दीकरीए दुःखे दहाडा निर्गम्या रे, वर्त्यां थईने दास। ४।
अधर्म आळ चडावियुं रे, ओछुं आप्युं अन्न,
भोजन पेट भरी नव पामियां रे, वसतुं लेख्युं वन। ५।
छबीली तुं मुजने छानुं कहेत, तो निश्चय न प्रगटत नेट,
पराधीन पिंड पोखियो रे, परवश भरियुं पेट। ६।
रत्नभरी मारी दीकरी, में गणी ठीकरी समान,
वैदर्भी विपत वेठी घणी रे, खोयुं वपुनुं वान। ७।

कड़वक—४६ (राजमाता आदि द्वारा पछतावा करना)

दादा (-सदृश) सुदेव ने (दमयन्ती-स्वरूप) दासी के फूल जैसे शरीर को देखा। वे (बोले—) 'तुम यहाँ अज्ञात (अनजानी) बनकर रह गयी और दासी बनकर तुमने (इन लोगों की) सेवा की'। १ (अनन्तर) उन दोनों ने एक-दूसरे की (कुशल सम्बन्धी) बात पूछी और वे हृदय में शोक को प्राप्त हो गये। सुदेव ने राजमाता और सुबाहु को दोष दिया। २ तो मौसी मूर्च्छा को प्राप्त हुई। (वहाँ) हाहाकार मच गया। उन्होंने दमयन्ती को दासता भुगवा ली। परिवार (में से कोई भी उसे) नहीं पहचान पाया। ३ राजमाता लज्जा को प्राप्त हुई। वह दमयन्ती के पास आ गयी। (वह बोली—) 'अरी कन्या, दिन दुःख में बीत गये। तुम दासी बनकर रह गयी। ४ मैंने अधर्म (अन्याय) से आरोप लगाया। तुम्हें घटिया (दर्जे का) अन्न दिया। तुम भर-पेट अन्न को नहीं प्राप्त हुई। राजभवन में निवास करते रहने पर भी तुमने उसे वन (जैसा) माना। ५ री छबीली, यदि तुम मुझसे गुप्त रूप से कहती, तो वह निश्चय ही प्रकट न हो पाता। तुमने पराधीन होकर पिण्ड (देह) का भरण-पोषण किया; परवश रहकर पेट को पाला। ६ मेरी कन्या-रत्नों

दासपणे रही बापडी रे, तेणे दुःखे हुं बाळी,
दुर्बळ दारिद्र्य जणावियुं रे, पासे नहीं वालनी वाळी। ८।
सूवाने काजे साथरी रे, वस्त्र पहेरवाने जाडुं,
शीतळ नीरे नाही दीकरी, ने नहि नहेरी ने नाडुं। ९।
दाधुं कलेवर मारुं रे, चीरी कोयला कहाढुं,
फूलफूली मारी दीकरी रे, अन्न जमी दीधुं टहाढुं। १०।
हवे जीवीने शुं करुं रे? विष खाईने पहोढुं,
थई गोझारी बेन आगळ रे, शुं देखाडीश महोढुं। ११।
इंदुमती मुख संताडती रे, हुं थई छेक छछोरी,
हुं भूंडी भवोभव वार्ता रे, चडावी हारनी चोरी। १२।
लज्जा-सागरमां बूडी गयो रे, मसियाई जे सुबाहु,
सुत-सूरजने आवी ग्रस्यो रे, अपराधरूपी ओ राहु। १३।
एम ओशियाळां सर्व थयां रे, बोली दमयंती वाण,
मासी तम घेर सुख पामी घणुं रे, साखी सारंगपाण। १४।

से भरी-पूरी है, फिर भी मैंने उसे ठीकरी के समान माना। बैदर्भी दमयन्ती को बड़ी विपत्तियों ने घेर रखा। उसने देह की कान्ति खो दी। ७ वह बापुरी दासता में रही। उसे मैंने दुःख में जला डाला। उसे मैंने दुर्बलता और दरिद्रता का ज्ञान कराया। उसके पास तीन रत्ती भर सोने की नथ भी नहीं है। ८ उसे सोने के लिए साथरी थी और पहनने के लिए मोटा वस्त्र था। यह कन्या ठंडे जल में नहाती थी और इसको (लगाने के लिए) न तेल था, न (चोटी के लिए) फीता था। ९ मेरी देह (दुःख की आग में) जल रही है। मैं काटकर कोयला निकाल रही हूँ। मेरी कन्या खिले हुए फूल जैसी है। (फिर भी) उसने (हमारा) दिया हुआ बासी अन्न खाया। १० अब मैं जीवित रहकर क्या करूँ? विष खाकर पौढ़ जाऊँगी। मैं बहिन के सामने गो-हत्या करनेवाली (पापिनी) ठहरी। (अब) मैं क्या मुँह दिखा सकूँगी'। ११ इन्दुमती मुँह छिपा रही थी। (वह बोली—) 'मैं बिलकुल उथली (अविचारी) बन गयी। मैं दुष्ट हूँ, यह बात जन्म-जन्मान्तर में चलेगी। मैंने उस पर हार की चोरी लगा दी'। १२ सुबाहु, जो मौसेरा भाई था, लज्जा-सागर में डूब गया। अपराध रूपी राहु ने आकर पुत्र (सुबाहु) रूपी सूरज को ग्रस लिया। १३ इस प्रकार सब लज्जित हो गये। तो दमयन्ती ने यह बात कही, 'हे मौसी, तुम्हारे घर में मैं समस्त सुखों को प्राप्त हो गयी। (इसके लिए भगवान) शार्ङ्गपाणि (विष्णु) साक्षी हैं। १४ दुःख के दिन

दोहेला दहाडा ऊतर्या रे, रही मारी लाज,
पुत्री सरखी हुं गणी रे, न दीधुं नीचुं काज। १५।
मासी भाणेज बंन्यो मळ्यां रे, ओळख्यानां आलिंगन,
शतसहस्र स्वागत मांडी पछे रे, मान्यो घणुं मुनिजन। १६।
वस्त्र वाहन आपियां रे, वीनवियो विप्रराय,
घणुंएक दमयंतीने आप्युं रे, मासी लागी पाय। १७।
सुबाहु साथे मोकल्यो रे, वळाव्यां कुंदनपुर,
सुख शोभाए जाए सुंदरी रे, पंथ घणो छे दूर। १८।
भानुमती भेटी घणुं रे, दीकरी मारी साध,
तुं छो छत्रपतिनी अंगना रे, मारो क्षमा करो अपराध। १९।
पगे लागी मारी आज्ञा रे, बेसी खेडी सुखपाल,
बेन मासी जातां मागियु रे, वैदर्भी राखे वहाल। २०।

वलण (तर्ज बदलकर)

वहाल राखे वैदर्भी, क्षेमे मळजो नैषधधणी रे,
थोडे काळे पहोंती प्रेमदा, पियर गई वधामणी रे। २१।

बीत गये, मेरी लाज (मर्यादा सुरक्षित) रह गयी। मैं पुत्री जैसी मानी गयी। (किसी ने) मुझे छोटा काम (करने) नहीं दिया'। १५ (तदनन्तर) मौसी और भानजी दोनों (प्रेमपूर्वक) मिल गयीं (एक-दूसरी के गले लग गयीं)। पहचान हो जाने पर एक-दूसरी का आलिंगन हो गया। (मौसी ने) उसका सौ-सहस्र (प्रकार से) स्वागत ठीक से किया। मुनि (सुदेव) का बहुत सम्मान किया। १६ उस विप्रराज को वस्त्र और वाहन प्रदान किये। उससे चिरौरी-विनती की। मौसी ने दमयन्ती को बहुत कुछ दिया और वह उसके पाँव लगी। १७ सुबाहु को उसके साथ में भेज दिया और कुन्दनपुर पहुँचा दिया। (बिदा करते समय वह बोली—) 'हे सुन्दरी, सुख-शोभा के साथ चली जाना। मार्ग बहुत लम्बा है'। १८ राजमाता बहुत (प्रेम से) मिली। वह बोली, 'मेरी कन्या भली-अच्छी है। तुम तो छत्रपति की स्त्री हो। मेरा अपराध क्षमा करो'। १९ वह उसके पाँव लगी और बोली, 'मेरी आज्ञा है'। अनन्तर वह (दमयन्ती) सुखपाल (पालकी) में बैठी, तो उसने उसे उठवा कर चला दिया। तब बहिन और मौसी ने याचना की। २०

'हे वैदर्भी, (हमारे प्रति) स्नेह रखो। कुशल-पूर्वक निषध-पति से मिलना'। अल्प काल में वह प्रमदा (दमयन्ती) अपने पीहर पहुँची। तो यह आनन्द का समाचार (वहाँ पहुँच) गया। २१

कडवुं ५० मुं—(दमयन्ती का सुदेव के साथ पितृ-गृह के प्रति गमन)

राग मेवाडो

हरख-भर्या सुदेवे वाणी भणी, हो दमयंती,
ओ आवी नगरी भीमकतणी, हो दमयंती । १ ।
कहो तो लई जाउं वधामणी, हो दमयंती,
पियरपुरी जुओ नळनी विजोगणी, हो दमयंती । २ ।
ओ दीसे गढ केरा कांगरा, हो दमयंती,
ओ हस्ती सांकळ लांगर्या, हो दमयंती । ३ ।
ओ पेलां घर वाडी झाडुआं, हो मुनिजी,
शुं करतां हशे मारां बाडुआं ? हो गुरुजी । ४ ।
केम जीवी हशे बे साहेलडी ? हो मुनिजी,
मुंने देखीने माता थाशे घेलडी, हो गुरुजी । ५ ।
ओ जाय स्त्रीनां जोडलां, हो मुनिजी,
ओ हणहणे बापजी केरां घोडलां, हो गुरुजी । ६ ।
ओ दीसे स्थळ स्वयंवरतणुं, हो मुनिजी,
ह्यां हार्युं देवे देवतापणुं, हो गुरुजी । ७ ।

कड़वक—५० (दमयन्ती का सुदेव के साथ पितृ-गृह के प्रति गमन)

हर्ष से भरे-पूरे सुदेव ने यह बात कही, 'हे दमयन्ती, यह भीमक की नगरी आ गयी । हे दमयन्ती० । १ हे दमयन्ती, कहो तो आनन्द का यह समाचार ले जाऊँ । हे दमयन्ती, नल से बिछुड़ी (हुई दमयन्ती), अपने पीहर की नगरी देखो । २ हे दमयन्ती, गढ़ के वे कँगूरे दिखायी दे रहे हैं । हे दमयन्ती, (देखो) वे हाथी साँकल से बाँधे हुए हैं' । ३ (दमयन्ती बोली—) 'हे मुनिजी, वे हैं घर, बाग़ और (पेड़-) पौधे । हे गुरुजी, मेरे बच्चे क्या कर रहे होंगे । ४ हे मुनिजी, मेरी दो (-नों) सहेलियाँ किस प्रकार से जीवित रही होंगी ? हे गुरुजी, मुझे देखकर मेरी माता पागल हो जाएगी । ५ हे मुनिजी, वे स्त्रियों की जोड़ियाँ (टोलियाँ) जा रही हैं । हे गुरुजी, वे मेरे पिताजी के घोड़े हिनहिना रहे हैं । ६ हे मुनिजी, वह स्वयंवर का स्थान दिखायी दे रहा है । हे गुरुजी, यहाँ देव अपना देवत्व हार गये । ७ हे मुनिजी, मुझे वन की स्थिति नहीं भूल रही है । हे गुरुजी, मैं यजमान का कुल कब देखूंगी ? ८ हे मुनिजी, प्रिय (पति) के बिना, पीहर निगलने लगता है । हे गुरुजी, बिना नल के

मुंने न वीसरे अवस्था राननी, हो मुनिजी,
क्यारे देखुं जात जजमाननी ? हो गुरुजी । ८ ।
पियु विना पियरियुं ग्रसे, हो मुनिजी
नळ विना उज्जड को नव वसे, हो गुरुजी । ९ ।
श्वासभर्यो सुदेव पुरमां संचर्यो, सुण रायजी,
वधामणी वधामणी एम ओचर्यो, सुण रायजी । १० ।
सभा सर्व विस्मय हवी, सुण रायजी,
जाणे प्रगट्यो नैषधरवि, सुण रायजी । ११ ।
हरखे भीमक पूछे फरी फरी, हो मुनिजी,
ओ आवे राय तमारी दीकरी, कहे मुनिजी । १२ ।
चाल्यो भीमक कुंवरी भणी, क्यां दमयंती ?
वज्रावती जाती हरखे घणी, क्यां दमयंती ? । १३ ।
धाया भाई ने भोजाई लज्जा वीसरी, क्यां दमयंती ?
हरखे भर्यां झांझर पडे वीसर्यां, क्यां दमयंती ? ।१४।
घेली सरखी साहेली मळवा धसी, क्यां दमयंती ?
शीश उघाडां पालविया जाय खसी, क्यां दमयंती ? । १५ ।

(सब) उजाड़ है— (वहाँ) कोई नहीं (सुखपूर्वक) बस सकता'। ९ फूली हुई साँस के साथ सुदेव नगर में पैठ गये (और बोले—) 'हे राजाजी, सुनिए। हे राजाजी, सुनिए।' वे बोले, 'बधावा……बधावा'। १० समस्त सभा विस्मित हुई। वे बोले, 'हे राजाजी, सुनिए'। उन्हें जान पड़ा, निषध देश के सूर्य (नल राजा) प्रकट हो गये हों। (वे बोले)— 'हे राजाजी, सुनिए'। ११ (यह सुनकर) भीमक राजा हर्षित हुए। वे बार-बार पूछने लगे (कहने लगे)— 'हे मुनिजी'। तो मुनि (सुदेव) बोले— 'हे राजा, वह (देखिए) आपकी कन्या आ रही है'। १२ तो भीमक अपनी कन्या की ओर चले। (वे बोले)— 'दमयन्ती कहाँ है ?' वज्रावती स्वयं अति आनन्दित हुई। (वह बोली)— 'दमयन्ती कहाँ है ?' १३ भाई और भाभियाँ लज्जा छोड़कर दौड़ीं। (उन्होंने पूछा—) 'दमयन्ती कहाँ है ?' वे हर्ष-भरी थीं। उनके नूपुर भुला दिये गये। (वे बोलीं—) 'दमयन्ती कहाँ है ?' १४ सहेलियाँ पगलियों जैसी मिलने के लिए तेज़ी से आगे बढ़ीं। (उन्होंने पूछा—) 'दमयन्ती कहाँ है ?' उनका मस्तक अनावृत रहा। उनका आँचल गिर रहा था। (वे बोलीं—) 'दमयन्ती कहाँ हैं ?' १५ पवन से भरे उनके केश खुले होकर शोभायमान थे। (वे बोलीं—) 'दमयन्ती कहाँ

वायु-भर्या केश शोभे मोकळा, क्यां दमयंती ?
अंबर छूटे त्रूटे कटिमेखला, क्यां दमयंती ? । १६ ।
आवी रे पियर प्रजा सोहामणी, हो दमयंती,
दीठी रे दीकरी दुःखे दामणी, हो दमयंती । १७ ।
भुज भरी महियररियांने मळे, हो दमयंती,
जुए मावडी भुज मूकी गळे, हो दमयंती । १८ ।
मारी मावडी आवडी शें दुबळी ? हो दमयंती,
शुं पूछे मात प्रीत पियुनी टळी, हो दमयंती । १९ ।
आंसु फेडी तेडी मंदिरमां गयां, सुण रायजी,
दासी वेषनां वस्त्र मुकावियां, सुण रायजी । २० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मुकाव्यो वेष मातताते, बाळक मूक्यां खोळे रे,
बे वरसे बाळकां ते, माताने मळियां टोळे रे । २१ ।

है ? ' उनका वस्त्र छूटता जा रहा था; करधनी टूट रही थी । (वे बोलीं—) ' दमयन्ती कहाँ है ? ' १६

अहो, दमयन्ती— पीहर की प्रजा को सुहावनी लगनेवाली दमयन्ती आ गयी । अहो, दमयन्ती को दुःख से दयनीय हुई कन्या को (सबने) देखा । १७ अहो, वह दमयन्ती मायके वालों से बाँहों में भरकर मिली । अहो दमयन्ती को माता ने उसे (ज्यों ही) देखा, (त्यों ही) उसने उसके गले में बाँहें डालीं । १८ (वह बोली—) ' अरी दमयन्ती, मेरी मैया तू इतनी दुबली क्यों है ' । माता ने पूछा, ' री दमयन्ती, क्या तेरे प्रिय (पति) की प्रीति टल गयी (नष्ट हुई) ? ' १९

सुनिए हे राजा जी, आँसू पोंछकर माता (दमयन्ती को) बुला लेकर प्रासाद के अन्दर गयी । हे राजाजी, सुनिए, उसने दासी-वेश के वस्त्र उतरवा लिये । २०

माता और पिता ने उस (दमयन्ती) का (दासी का) वेश उतरवा लिया । उन्होंने उसके बच्चों को उसकी गोद में डाल दिया । वे दो बरस के बच्चे थे । वे अपनी माता से एक साथ मिल गये । २१

कडवुं ५१ मुं—(सुदेव द्वारा वेश बदलकर नल की कुछ खोज-खबर पाना)

राग आशावरी

वैशंपायन वाणी वदे, सुण जनमेजय भूपाळ रे,
बृहदश्व कहे युधिष्ठिरने, मळ्यां बंन्यो बाळ रे। १ ।
साथ भ्रात ने भोजाई मळ्यां, मात ने वळी तात रे,
दमयंतीने नाथ-वियोगे, अंतरमांहे अशांत रे। २ ।
कुटुंब सर्वे पूछे प्रेमे, शी शी वार्ता वीती रे,
घटे तेवो समाचार सतीए, कह्यो अथ इति रे। ३ ।
फरी शोध नळनी मंडावी, भीमके मोकल्या दास रे,
प्रभु पाखे दमयंती, पाळवा लागी संन्यास रे। ४ ।
अलवण अन्न अशन करवुं, अवनी पर शयन रे,
आभूषण-रहित अंग अबळानुं काजळ विना नयन रे। ५ ।
नियम राखे नाना विधनो, उग्र आखडी पाळे रे,
पतिव्रता तो पियुने भजे ने, अन्य पुरुष नव भाळे रे। ६ ।

कड़वक—५१ (सुदेव द्वारा वेश बदलकर नल की कुछ खोज-खबर पाना)

वैशम्पायनजी ने यह बात कही— हे राजा जनमेजयजी, सुनिए। बृहदश्वजी युधिष्ठिर से बोले— (दमयन्ती से) दोनों बच्चे मिले। १ साथ ही, उसके भाई और भाभियाँ मिलीं; इसके सिवा माता और पिता मिले। (फिर भी) पति के वियोग के कारण दमयन्ती के अन्तःकरण में अशान्ति (व्याकुलता, बेचैनी) थी। २ समस्त परिवार (के लोगों) ने (उससे) प्रेमपूर्वक पूछा— 'क्या-क्या बातें (घटनाएँ) हो गयीं ?' तो उस सती ने जो (जो) समाचार उचित था, वह अथ से इति तक कहा। ३ फिर भीमक ने नल की खोज ठीक रीति से आरम्भ करा दी। उन्होंने (उसके लिए अपने) दासों को भेज दिया। (इधर) दमयन्ती अपने स्वामी के बिना (स्वामी की अनुपस्थिति में) संन्यास-वृत्ति का पालन करने लगी। ४ उसके लिए अलोना भोजन करना और भूमि पर शयन करना (उचित लगता) था। उस अबला की देह आभूषणों से रहित थी और नयन काजल-रहित थे। ५ वह नाना प्रकार के नियमों का अनुसरण करने लगी। उसने उग्र व्रत रख लिये। वह पतिव्रता तो अपने प्रिय पति को भजती थी और किसी अन्य पुरुष की ओर देखती (तक) न थी। ६ वह नल का नाम लेती, नल का ध्यान करती और सखियों से नल (ही) की बात करती। (उसके लिए) दिन और रात

नाम नळनुं ध्यान नळनुं, सखी शुं नळनी वात रे,
दुःखे जाये दिवस ने रयणी, नयणे वरसे वरसाद रे। ७।
परदेशी पंच विप्रने, नित्य आपे आमान रे,
वैदर्भी जाणे वाडववेषे, आवी मळे राजान रे। ८।
एवे आवी ऋतु वर्षानी, वैदर्भी विरह वधारण रे,
गाजे मेह उधडके देह, सखी आपे हैयाधारण रे। ९।
विनता हींडे वाडीमांहे, द्रुम लताने तळे रे,
सुगंध संघाते बिंदु शीतळ, गोरी उपर गळे रे। १०।
कोकिला बपैया बोले, ते शब्द भेदे अंग रे,
विरहिणी ते वीजळी जाणे, भेदे हृदया संग रे। ११।
वर्षाकाळे विजोग पीडे, मानिनीने मन भालो रे,
वेदर्भीने वर्षाकाळ वीत्यो, आव्यो शत्रु शियाळो रे। १२।
आकाशे आगिया उडिया, अंबु निर्मळ इंदु शरदे रे,
पतिविजोग पीडे छे पापी, सती रहे छे सत्य बरदे रे। १३।
दुःखे दिवस नाखे दमयंती, एक वरस गयुं वही रे,
त्रण संवत्सरनी अवध वीती, नाथ आव्यो नहीं रे। १४।

दुःख में बीतते थे। नयनों से (अश्रुजल की) बरसात हो रही थी। ७ वह नित्य पाँच परदेसी ब्राह्मणों को कच्चा अन्न (सीधा) प्रदान करती थी। वैदर्भी दमयन्ती को जान पड़ता था कि राजा नल ब्राह्मण के वेश में आकर मिलेंगे। ८ उस समय वर्षाऋतु आयी; तो वैदर्भी दमयन्ती का विरह (-जन्य दुःख) बृद्धि को प्राप्त हुआ। जब मेघ गरजने लगते, तब उसका शरीर (हृदय) धड़कने लगता। (तब) सखियाँ उसे धीरज धारण करातीं। ९ वह वनिता उद्यान में पेड़ों और लताओं के तले घूमने लगती, तो उस गोरी पर सुगन्ध के साथ (अर्थात सुगन्धयुक्त) शीतल जल-बिन्दु टपकते रहते। १० (जब) कोयल और चातक बोलते, (तब) उनके शब्द (उस विरहिणी के) अंग को भेदने लगते। उस विरहिणी को जान पड़ता कि बिजली उसके हृदय को साथ ही भेद रही है। ११ वर्षाकाल में उस मानिनी के मन को बिरह भाले की भाँति पीड़ित करता था। इस प्रकार, वैदर्भी दमयन्ती के लिए वर्षाकाल बीत गया और शत्रु (जैसा) शरदकाल आ गया। १२ आकाश में जुगनू उड़ गये (जुगनू अब नहीं रहे, अदृश्य हो गये); पानी निर्मल हुआ। शरद ऋतु में चन्द्र स्वच्छ (मेघाच्छादन-रहित) था। पापी पति-वियोग उस सती को पीड़ित कर रहा था; (फिर भी) वह अपने सत्यव्रत का निर्वाह कर रही थी। १३

सुदेवनी तेडी स्तुति करी, आंसु नयणे ढाळी रे,
निषधनाथने कोण मेळवे, हो गुरुजी तम टाळी रे। १५।
जन्मना तमे छो हेतस्वी, कारज मनथी करवुं रे,
न घटे कह्यानी वाट जोवी, शोधवा नीसरवुं रे। १६।
धीरज आपी नैषधनारने, वेश नाना विध धरतो रे,
दमयंतीए शीखव्यो हींडे, टहेल सघळे करतो रे। १७।
रथे बेठो फरे मुनिवर, सेवक सेवा करे रे,
ज्यां गाम आवे त्यां कळा पाडी, वेश टहेलियानो धरे रे। १८।
दोढ मास गयो अटण करता, आव्यो अयोध्यामांय रे,
सभा मांहे टहेल नाखी, ज्यां बेठो ऋतुपर्ण राय रे। १९।
अलभ्य वस्तुनी प्राप्ति थई, परित्याज तेनो कीधो रे,
धर्म धोरिंधर धिक् तुजने, फरी तपास न लीधो रे। २०।

दमयन्ती दुःख में दिन बिता रही थी। (इस प्रकार करते-करते) एक वर्ष व्यतीत हुआ। फिर तीन वर्ष की अवधि बीत गयी। (फिर भी) उसके पति नहीं आये। १४ (तब) उसने सुदेव को बुला लाकर उनकी स्तुति की। वह आँखों से आँसू बहा रही थी। (वह बोली—) 'हे गुरुजी, आपको छोड़कर कौन नैषधपति नल से मिला देगा। १५ आप मेरे जन्म (भर) के शुभ-चिन्तक हैं। आपको मन से काम करना है। आपको कहने की प्रतीक्षा करना उचित नहीं है। उन्हें खोज निकालना है'। १६ (यह सुनकर) उन्होंने नैषधराज की स्त्री दमयन्ती को धीरज बँधाया। वे नाना प्रकार के वेश धारण करनेवाले थे (कर सकते थे)। दमयन्ती ने उन्हें जैसे सिखा दिया था, उस प्रकार वे भ्रमण करने लगे (भ्रमण कर सकते थे)। सब प्रकार से ऊँचे स्वर में गाना गाते हुए वे भिक्षा माँगने लगे (माँग सकते थे)। १७ वे मुनिवर रथ पर बैठे और भ्रमण करने लगे। सेवक उनकी सेवा करते थे। जहाँ कोई ग्राम आ जाता, वहाँ वे वेश बदल लेते और भिक्षा माँगनेवाले साधु का वेश धारण करते। १८ (इस प्रकार) भ्रमण करते-करते डेढ़ मास बीत गया। (तब) वे अयोध्या में आ गये। उन्होंने उसकी सभा (-गृह) में (जाकर) यह बार-बार दोहराते हुए गाना आरम्भ किया, जहाँ राजा ऋतुपर्ण बैठे हुए थे। १९ (उन्होंने कहा—) "अलभ्य वस्तु की (तुम्हें) प्राप्ति हुई थी; (फिर भी तुमने) उसका परित्याग कर दिया। हे धर्मधुरन्धर, तुम्हें धिक्कार है। तुमने फिर से उसकी खोज नहीं की। २० रंक (मनुष्य) द्वारा रत्न की रक्षा नहीं हो सकती। उसने स्वयं निर्धारण करके उसे सिद्ध

रंके रत्ननुं जत्न न थाये, जात नीवडी नेट रे,
विलपे छे वस्तु वहोरतिया विना, कां भरे परघेर पेट रे ? । २१ ।
कुळ लजाव्युं करमी माणसे, कीर्ति कीधी झांखी रे,
ज्ञानी पुरुष विचारी जो जो, टहेल सुदेवे नाखी रे । २२ ।
सभा सहु विस्मय थई कांई, टहेल छे मरमाळी रे,
गहेलियो टहेलियो करीने कहाढ्यो, कोई उत्तर ना'पे वाळी रे । २३ ।
सुदेव गयो हयशाळा मध्ये, टहेल नाखी तेणे द्वार रे,
महिलानां कहाव्यां वचन सुणीने, बाहुक नीसर्यो बहार रे । २४ ।
कद्रूप काया कामळ ओढी, करमांहे खरेरो रे,
प्रगट खारे खंखारीने बोल्यो, तीखो ने तरेरो रे । २५ ।
कारमो सरखो कपोळ चडावे, टूंकडा कर नचावे रे,
नासिकाए सडका ताणे ने, नयणां मचमचावे रे । २६ ।
भारे वचन कह्यां तें ब्राह्मण, नीसर्यो महेणां देवा रे,
वस्तु विपत तो वहोरतियो, करतो हशे परघेर सेवा रे । २७ ।

किया था । (अब) बिना ग्राहक के वह (अमूल्य) वस्तु विलाप कर रही है । (इस स्थिति में) तुम दूसरे के घर क्यों पेट पाल रहे हो । २१ धनी-मानी मनुष्य ने अपने कुल को लज्जित कर दिया और अपनी कीर्ति को निस्तेज (फीकी) बना दिया है । हे ज्ञानी पुरुष, विचार करके देख लो, देख लो । '' सुदेव ने (इस प्रकार) दोहराते हुए गाना गाया । २२ (उसे सुनकर) समस्त सभा विस्मित हुई । (उसे जान पड़ा कि) यह टेर रहस्य-भरी है । (लोगों ने) उस गानेवाले भिक्षु साधु को पागल की भाँति (पागल समझकर) निकाल दिया । किसी ने उन्हें मुड़कर उत्तर नहीं दिया । २३ (अनन्तर) सुदेव अश्वशाला के अन्दर गये और उन्होंने उस स्थान पर टेर लगायी । उस स्त्री (दमयन्ती) द्वारा कही हुई बातों को सुनकर बाहुक बाहर निकल आया । २४ उसकी देह कुरूप थी । उसने कम्बल ओढ़ लिया था । उसके हाथ में खरहरा था । वह उग्र और क्रुद्ध (दिखायी दे रहा) था । उसने प्रकट रूप से खँखारते हुए कहा । २५ उसने धनाढ्य व्यक्ति की भाँति गाल फुलाये । अपने छोटे-छोटे हाथों को वह नचाने-हिलाने लगा । नाक से (मैल खींचते हुए) वह चभड़-चभड़ कर रहा था और आँखों को मिचमिचा रहा था । २६ (वह बोला—) 'हे ब्राह्मण, तुमने अनमोल बातें कही हैं । तुम ताने देने (चुभती बात कहने) के लिए (यहाँ) पैठ गये हो । वह वस्तु विपत्ति (जैसी) है । इसलिए ग्राहक पराये घर में सेवा कर रहा होगा । २७

वहोर्युं ते कांई रत्न जाणीने, काच थई नीवड्युं रे,
तत्त्वरहित माटे त्यज्युं छे, नथी छूटी पडियुं रे। २८।
तेह मित्रने तजीए जेनुं, मळवुं मन विना ठालुं रे,
ते स्त्रीने परहरीए जेनुं, पियु करतां पेट वहालुं रे। २९।
वांक नहीं होये वहोरतियानो, रह्यो होशे निजधर्मे रे,
वस्तु विपत पामती हशे ते, पोते पोताने कर्मे रे। ३०।
गूढ वचन कही घोडारमां, बाहुक जईने बेठो रे,
सुदेव तो सांसांमां पड्यो, प्राण विचारमां पेठो रे। ३१।
ए बोली तो नैषधनाथनी, हारद अनाहुत रे,
नळ भूप एने केम करी मानुं? रूपे बीजो भूत रे। ३२।
जठर भरण को रीसनुं जाळुं, फरी न जाय बोलाव्यो रे,
पडोशीने पूछी काढ्युं, त्रण वरस थयां आव्यो रे। ३३।
राजाए प्रीत करीने राख्यो, अश्वविद्या कोई जाणे रे,
पवित्र नैवेद्यने पाळे, विजोगनुं दुःख आणे रे। ३४।

उसने उसे कोई रत्न समझकर ग्रहण किया, (परन्तु) वह काँच सिद्ध हुई। वह तत्त्व-रहित है। इसलिए उसका त्याग किया है। (यों ही) वह छूटकर नहीं गयी है (वह ग्राहक उत्तरदायित्व से विमुख नहीं हुआ)। २८ उस मित्र का त्याग करें, जिसका मिलना बिना मन के, अर्थात (स्नेह से) रिक्त मन से होता है। उस स्त्री का त्याग करें, जिसके लिए पति से पेट प्रिय हो। २९ ग्राहक का कुछ टेढ़ा नहीं होता (नहीं बिगड़ जाता), यदि वह अपने धर्म पर ध्यान-पूर्वक रहता हो। वह वस्तु अपने-अपने कर्म से विपत्ति को प्राप्त होती होगी'। ३० ऐसे गूढ़ वचन कहकर बाहुक घुड़साल में जाकर बैठ गया। (इधर) सुदेव तो उलझन में पड़ गये। उनके प्राण विचार में पैठ गये। ३१ (उन्हें जान पड़ा—) यह उक्ति तो नैषधपति नल की है— यह मर्म तो (बिलकुल) अनाहुत (बिना बुलाये, अनपेक्षित) रूप से पाया है। (फिर भी) मैं इसे नल राजा कैसे मानूँ? रूप में यह तो दूसरा भूत (ही) है। ३२ उदर-भरण तो (मानो) क्रोध का जाला है। इसे फिर से बुलाया नहीं जा सकता। (अतः) उन्होंने पड़ोसी से पूछकर यह बात निकाल ली (यह जान लिया कि)— (यहाँ) उसे आये तीन वर्ष हो गये हैं। ३३ राजा ने उसे प्रीति-पूर्वक रखा है। वह कोई अश्व-विद्या जानता है। वह पवित्र भोजन के सेवन के नियम का पालन करता है और वियोग का दुःख लाता (अनुभव करता) है। ३४ ऐसा सुनते ही सुदेव (वहाँ से) चल पड़े और विदर्भ

एवुं सांभळी सुदेव चाल्यो, आव्यो विदर्भ देश रे,
वैदर्भी तव आनंद पामी, विप्र पूज्यो विशेष रे। ३५।
श्यामाए समाचार पूछ्यो, कही स्वामीनी भाळ रे,
सुदेव कहे निसासो मूकी, जड्यो नहीं भूपाळ रे। ३६।
देशविदेश गाम उपगाम, अवनी खोळी बाधी रे,
अटण करतां अयोध्यामां, शोध कांई एक लाधी रे। ३७।
सभा नव समजी ऋतुपर्णनी, रह्यां मस्तक डोली रे,
बाळ-बिहामणो घोडार मांहेथी, बाहुक ऊठ्यो बोली रे। ३८।
स्वरूप जोई हुं छळ्यो छउं, स्वप्नामां बिहावे रे,
नाठो आव्यो छउं फरी फरी जोतो, रखे पूंठेथी आवे रे। ३९।
भूत पिशाच के जर्मकिंकर, प्रेत अथवा राहु रे,
अयोध्यामां रोता राखवा, बाळकने ते हाउ रे। ४०।
तेणे टहेलनो उत्तर आप्यो, कांई स्वाद-ईंद्रिनो वांक रे,
कहे वस्त खोटी थई नीवडी, शुं करे वहोरतियो रांक रे ? । ४१।
पियुजनथी पेट वहालुं, तेनो संग ते माठो रे,
बेउने दुःख सरखां होशे, कही घोडारमां नाठो रे। ४२।

देश में आ गये। तब वैदर्भी दमयन्ती आनन्द को प्राप्त हुई। उसने उस विप्र का विशेष रूप से पूजन किया। ३५ उस स्त्री ने अपने पति का समाचार पूछा, 'मेरे स्वामी का पता कहिए'। तो सुदेव ने लम्बी साँस लेकर कहा, "भूपाल नहीं मिले। ३६ मैंने देश-विदेश, ग्राम-उपग्राम, समस्त पृथ्वी ढूंढ़ी। भ्रमण करते-करते मैं अयोध्या में गया; तो वहाँ कुछ एक खोज-खबर मिल गयी। ३७ ऋतुपर्ण की सभा (कुछ) समझ नहीं पायी; वे लोग सिर हिलाते रह गये। (फिर भी) बच्चों को भयानक लगनेवाला बाहुक (मानो) घुड़साल में से बोल उठा। ३८ उसके स्वरूप को देखकर मैंने धोखा खाया। (मानो) वह स्वप्न में डराता है। मैं (वहाँ से) बार-बार पीछे (मुड़कर) यह देखते हुए कि शायद वह पीछे से आ जाए, भागकर आ गया हूँ। ३९ वह भूत, पिशाच या यमदूत है, प्रेत है वा राहु है। अयोध्या में बच्चों को रोने से रखनेवाला (चुप करनेवाला) वह कोई हौवा (माना जाता) है। ४० उसने मेरी टेर का उत्तर दिया— 'स्वाद ग्रहण करने की (जिह्वा जैसी) इन्द्रियों का यह कोई दोष है'। फिर वह बोला— 'वह वस्तु खोटी सिद्ध हुई, तो रंक ग्राहक क्या करे। ४१ उस (वस्तु) को प्रिय जन से पेट प्रिय है, उसका संग अनिष्ट है। इससे दोनों को समान दुःख हो जाएगा' —ऐसा कहकर वह घुड़साल के अन्दर

ए बोली तो वाहुकियानी, जुओ विचारी बाई रे,
मर्मवचन सुणी महिलानुं, हृदे आव्युं भराई रे। ४३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भरायुं हृदे राणी तणुं, ने आंसु मूक्यां रेडी रे,
बाहुक नोहे ए नैषधपति, सुदेव लावो तेडी रे। ४४।

भाग गया। ४२ हे देवी, विचार करके देखो। (क्या) यह बोली बाहुक की (अपनी) हो सकती है ?" यह मर्मवचन सुनकर उस महिला का हृदय भर उठा (गद्‌गद हो उठा)। ४३

रानी (दमयन्ती) का हृदय भर गया (गद्‌गद हो उठा) और वह आँसुओं की धारा बहाने लगी। वह बोली, 'हे सुदेव, यह बाहुक नहीं है— यह तो नैषधपति हैं। उन्हें बुलाकर ले आइए'। ४४

कडवुं ५२ मुं—(दमयन्ती द्वारा सुदेव से बाहुक और ऋतुपर्ण को ले आने की विनती करना)

राग सोरठी मारु

आंसु भरीने कामिनी करे, वाणीनो विचार, गुरुजी०,
ए नोहे बाहुकना बोलडा, होये वीरसेनकुमार। गुरुजी०। १।
ए जीवनप्राणाधार, गुरुजी, जाओ मा लगाडो वार, गुरुजी०,
भ्रांत पडे छे रूपनी, ते प्रगट्यां मारां पाप। गुरुजी०। २।
रूप खोयुं कहीं रायजी, ए कोणे दीधो हशे शाप। गुरुजी०,
मारा जाय तनना ताप गुरुजी, तम वडे थाय मेळाप। गुरुजी०। ३।

कड़वक—५२ (दमयन्ती द्वारा सुदेव से बाहुक और ऋतुपर्ण को ले आने की विनती करना)

वह कामिनी (दमयन्ती आँखों में) आँसू भरकर (बहाते हुए बाहुक के) उस वचन पर विचार करने लगी। (वह बोली—)' हे गुरुजी, ये बाहुक के वचन नहीं हैं। वह (बाहुक बस्तुतः) वीरसेन-कुमार नलराज (ही) हैं। १ हे गुरुजी, वे मेरे प्राणों के आधार हैं। हे गुरुजी, जाइए, विलम्ब न लगाइए। उनके रूप के विषय में भ्रम हो गया है; हे गुरुजी, (उस रूप में) मेरे पाप प्रकट हो गये हैं (मेरे किये पापों का वह फल है)। २ हे गुरुजी, राजाजी ने कहीं अपने रूप को खो दिया है। (यह अभिशाप किसने दिया होगा ? हे गुरुजी, मेरे शरीर के ताप नष्ट हो

अश्वरक्षकनो नोहे आशरो रे, जाणे अंतरनी वात, गुरुजी०,
बोले बोले ज मोरियो रे, नोहे घोडारियानी घाट। गुरुजी०। ४।
हुं जाणुं बोल्यानी जात गुरुजी, होय पुष्करजीनो भ्रात, गुरुजी०,
पुनरपि जाओ तेडवा रे, जीवन वसे छे जांहे। गुरुजी०। ५।
परीक्षा ए पुण्यश्लोकनी, एके दिवसे आवे आंहे, गुरुजी०,
जाओ अयोध्यामांहे गुरुजी, हवे बेसी रह्या ते कांहे। गुरुजी०। ६।
जई कहो ॠतुपर्ण रायने, तजी वैदर्भी नळ महाराज, गुरुजी०,
स्वयंवर फरी मांडियो रे, छे लग्ननो दहाडो आज। गुरुजी०। ७।
ए वाते नथी लाज, जेम तेम करवुं काज, गुरुजी०,
कपटे लखी कंकोतरी रे, ॠतुपर्णने निमंत्रण। गुरुजी०। ८।
सुदेव तेडी लावजो जोईए बाहुकियानां आचरण, गुरुजी०,
एनुं केवुं छे अंतःकर्ण, गुरुजी, एनां जोईए वपुने वर्ण। गुरुजी०। ९।

वलण (तर्ज बदलकर)

आचरण अश्वपालच तणां, ह्यां आवे ओळखाय रे,
पत्र लई परपंचनो, सुदेव आव्यो अयोध्यामांय रे। १०।

जाएँगे, यदि आपके द्वारा हमारा मिलन हो जाए। ३ हे गुरुजी, उनके लिए अश्वरक्षक के रूप में आश्रय नहीं दिया (गया) हो। वे (राजा ॠतुपर्ण) अन्दर की बात जानते हैं। हे गुरुजी, वह (बाहुक) मेरे शब्दों के अनुसार बोल रहा है। यह घोड़े की देखभाल करनेवाले का लक्षण नहीं है। ४ हे गुरुजी, मैं बातों का (बोलनेवाले का) स्वभाव जानती हूँ। हे गुरुजी, वे पुष्कर के बन्धु हैं। हे गुरुजी, आप फिर से उन्हें बुलाकर लाने के लिए (वहाँ) जाइए, जहाँ मेरे जीवन (-स्वरूप पति) निवास कर रहे हैं। ५ हे गुरुजी, यह पुण्यश्लोक (नल) की परीक्षा है। वे एक दिन में यहाँ आएँगे। हे गुरुजी, आप अयोध्या में जाइए। हे गुरुजी, अब वे कहीं बैठे रहे होंगे। ६ हे गुरुजी, जाकर ॠतुपर्ण से कहिए कि महाराज नल ने वैदर्भी दमयन्ती को त्याग दिया है। हे गुरुजी, उसने फिर से स्वयंवर आयोजित किया है। आज विवाह का दिन है। ७ हे गुरुजी, इस बात में कोई लज्जा नहीं है, ज्यों-त्यों करके काम (सिद्ध) करना है। हे गुरुजी, मैंने कपटपूर्वक (निमंत्रण—) पत्रिका लिखी है। यही ॠतुपर्ण के लिए निमंत्रण है। ८ हे गुरुजी, हे सुदेव, उसे बुलाकर ले आइए। बाहुक के आचरण (चाल-चलन) को देख लें। हे गुरुजी, (देखें), उनका अन्तःकरण कैसा है? हे गुरुजी, उनके शरीर और वर्ण को देख लें। ९ उस अश्वपालक का आचरण (चाल-चलन) यहाँ पहचानने

में आएगा'। (अनन्तर) वह कपट से लिखा हुआ पत्र लेकर सुदेव अयोध्या में आ गये। १०

कडवुं ५३ मुं—(राजा ऋतुपर्ण को रथ में बैठाकर बाहुक द्वारा एक दिन में कुन्दनपुर में ले आना)

राग सामेरी

सुदेव सभामां आवियो, ज्यां बेठो छे ऋतुपर्ण,
करमांहे आपी कंकोतरी, उपर लख्युं निमंत्रण। १।
प्रीत विशेषे पत्र लीधुं, कीधुं अवलोकन,
स्वस्ति श्री अयोध्यापुरी, ऋतुपर्णराय पावन। २।
विदर्भ देशथी लखितंग भीमक, नळे दमयंती परहरी,
एने देवनुं वरदान छे माटे, स्वयंवर कीजे फरी। ३।
पृथ्वीना भूपति आवशे, तमो आवजो खप करी,
सूरजवंशीने वरवो निश्चे, कुंवरीए इच्छा धरी। ४।
भूपति आनंदे भर्यो, सभामांहे एम भाखे,
भाई वेदवाणी दमयंती, कोने नहीं वरे मुज पाखे। ५।

कड़वक—५३ (राजा ऋतुपर्ण को रथ में बैठाकर बाहुक द्वारा एक दिन में कुन्दनपुर में ले आना)

सुदेव (उस राज-) सभा में आ गये, जहाँ ऋतुपर्णजी बैठे हुए थे। उन्होंने उनके हाथ में वह विवाह-पत्रिका दी, जिसमें निमंत्रण लिखा हुआ था। १ उन्होंने विशेष प्रीति के साथ पत्र लिया और उसका अवलोकन किया (उसे देखा)। (पत्र इस प्रकार था—) '॥ स्वस्ति ॥ श्री अयोध्यापुरी के पावन राजा ऋतुपर्णजी। २ विदर्भ देश से लिखनेवाले (राजा) भीमक। नल ने दमयन्ती का परित्याग किया। उसे देवों का वरदान (प्राप्त) है। इसलिए, उसका फिर से स्वयंवर (आयोजित) कर रहे हैं। ३ पृथ्वी (भर) के राजा आ जाएँगे। आप भी यत्नपूर्वक आ जाना। कुमारी (कन्या) ने यह इच्छा धारण की है कि निश्चय ही सूर्य-वंशोत्पन्न का वरण करना है'। ४ (यह पढ़कर) भू-पति (ऋतुपर्ण) आनन्द से भर उठे। वे सभा में इस प्रकार बोले, 'हे भाइयो, यह वेदवाणी (जैसी सत्य बात) है कि दमयन्ती मेरे सिवा किसी का वरण नहीं करेगी'। ५ उन्होंने ओंठ चबाये, हाथ मींजे और उस ब्राह्मण

अधर डसे कर घसे, विप्र उपर आंख कहाडे,
नहोतरियो निर्माल्य दीसे, आव्यो लग्नने दहाडे। ६।
सुदेव कहे हुं क्यम करुं? वेगळुं तमारुं गाम,
शत ठाम थातां आववुं, कंकोतरीनुं काम। ७।
धाई गया सर्व भूप जे, प्रथम रूपना पळका,
ऋतुपर्ण आसनथी ऊठे बेसे, थाय परणवाना सळका। ८।
आहा गई दमयंती हाथथी, कंकोतरी आवी मोडी,
एक निशानो आंतरो होत तो, जात जेम तेम दोडी। ९।
व्राहे व्राहे बोले मस्तक डोले, निसासा मूके ऊंडा,
वैदर्भी वरतां वेर वाळ्युं, अरे ब्राह्मण भूंडा। १०।
सांढ तो सांपडी नहीं, नहीं पवनवेगी घोडा,
कंसार दमयंतीना करनो, नहीं जमे आ महोढां। ११।
सभामां बेठो निराश थई, प्रधान बोल्यो वचन,
पेलो बाहुकियो शे अर्थ आवशे? बेठो वणसाडे अन्न। १२।

की ओर आँखें तरेरकर देखा। (उन्हें जान पड़ा—) 'निमंत्रण देनेवाला यह व्यक्ति निर्माल्य (पुराना, दुर्बल, वृद्ध) दिखायी दे रहा है। (इसलिए) वह विवाह के दिन आ गया'। ६ (इसपर) सुदेव ने कहा, 'मैं (भी) कैसे करूँ? आपका ग्राम दूर है। मुझे विवाह-पत्रिका के काम के लिए सौ (-सौ) स्थान होते हुए आना था। ७ जो दमयन्ती के रूप के चटोरे अर्थात लोभी हैं, वे समस्त राजा दौड़ते हुए (वहाँ) गये'। (यह सुनकर) ऋतुपर्णजी आसन पर उठने-बैठने लगे। उनके (मन में) विवाह करने की प्रबल इच्छा थी। ८ (उन्हें लगा—) 'हाय, दमयन्ती हाथ से गयी। विवाह-पत्रिका विलम्ब से आयी। यदि अन्तर एक रात का (एक रात में काटे जाने योग्य भी) होता, तो जैसे-वैसे दौड़कर चला जाता। ९ त्राहि-त्राहि (बचा लो, बचा लो)'—वे बोले। वे मस्तक हिला रहे थे, लम्बी साँस ले रहे थे। (वे बोले—) "अरे बीभत्स ब्राह्मण, वैदर्भी दमयन्ती का वरण करने में तुमने बदला लिया। १० साँड़नी तो नहीं मिल रही है, न कोई पवनवेगी घोड़ा मिल रहा है। दमयन्ती के हाथ का 'कंसार' (नामक विशिष्ट मिष्टान्न, जो प्रायः विवाह के अवसर पर खिलाया जाता है) यह मुँह नहीं खा पाएगा"। ११ वे (ऋतुपर्णजी) सभा में निराश होकर बैठे, तो मंत्री बोला, 'वह बाहुक किस काम आएगा? वह तो अन्न बिगाड़ रहा है (व्यर्थ ही खाता हुआ बैठा है)'। १२ (यह सुनकर) ऋतुपर्णजी आनन्द को प्राप्त हुए। उन्होंने (यह कहकर) एक सेवक

ऋतुपर्ण आनंद पाम्यो, मोकल्यो सेवक,
लाव तेडी बाहुकियाने, जे जाणे गयानी तक। १३।
श्वास भरायो दास आव्यो, अश्वपालकनी पास,
उठो भाई भूप तेडे छे, ग्रहो परोणो राश। १४।
बाहुक चाल्यो चाबुक झाल्यो, मुखे ते बडबडतो,
आव्यो नीची नाडे नरखतो, नाके ते सरडकां भरतो। १५।
सभा मध्ये सर्व हस्या, आ रत्न रथ-खेडण,
ऋतुपर्ण बोल्यो मान दई, आव्यो दुःख-फेडण। १६।
घणे दिवसे कारज पड्युं छे, राखो अमारी लाज,
तमो परणावो वैदर्भी, विदरभ जावुं आज। १७।
समुद्र सेव्यो रत्न आपे, में सेव्यो एम जाणी,
आज विदरभ लई जाओ, ग्रहुं दमयंतीनो पाणि। १८।
बाहुक वळतो बोलियो, फुलावीने नासा,
आ भिया परणशे दमयंतीने, अरे पापिणी आशा। १९।
हंसा कन्या केम करे, वायसशुं संकेत ?
निर्लजनी साथे अमे जवुं, तो पछी थाउं फजेत। २०।

को भेजा— 'जो जाने का अवसर जानता है (समय का महत्त्व जानता है), उस बाहुक को बुलाकर ले आओ'। १३ लम्बी साँस लेते हुए वह सेवक बाहुक के पास आ गया (और बोला)— 'भाई, उठ जाओ। राजा ने बुला लाने के लिए भेजा है। (हाथ में) पैना और लगाम लो'। १४ बाहुक चला। उसने हाथ में चाबुक लिया। मुख से वह बड़बड़ा रहा था। वह नीचे ग्रीवा किये (सिर झुकाये) हुए देख रहा था और नाक से चभड़-चभड़ ध्वनि कर रहा था। १५ (उसे देखकर) सभा में (बैठे हुए) सब (लोग) हँसने लगे। (क्या) यह रत्न रथ चलानेवाला है? (परन्तु) ऋतुपर्णजी सम्मान-पूर्वक बोले— 'आओ दुःख-हर्ता। १६ बहुत दिनों में कार्य निकला है। हमारी लज्जा की रक्षा करो। तुम हमारा वैदर्भी से परिणय करा दो। आज मैं विदर्भ देश जाऊँगा। १७ समुद्र की सेवा करें, तो वह रत्न देता है। ऐसा जानकर मैंने तुम्हारी सेवा की। तुम आज मुझे विदर्भ में ले जाओ (वहाँ) मैं दमयन्ती का पाणिग्रहण करूँगा'। १८ तो बाहुक नाक फुलाते हुए प्रत्युत्तर में बोला, 'यह भाई दमयन्ती से परिणय करेगा। हाय रे पापिनी आशा। १९ हंस की कन्या कौए से कैसे (मिलन का) संकेत करेगी। इस निर्लज्ज के साथ में जाऊँ, तो बाद में मैं दुर्दशा को प्राप्त हो जाऊंगा। २० राजाजी, अविवेकी न हों।

छछोरा न थईए रायजी, परपत्नीशुं तलखां
केम वरे वर जीवते तो, मिथ्या मारवां वलखां । २१ ।
पुण्यश्लोकनी प्रेमदा ने, भीमक राजकुमारी,
तमो विषयीने लज्जा शानी ? थाय फजेती मारी । २२ ।
राय कहे हयपति, मारी वती हयने हांको,
मारे तो सर्वस्व गयुं रे, तमो जेवा रे ना कोहो । २३ ।
बाहुक वळतो बोलियो, ज्यां होये स्वयंवर,
अंतर नहीं सेवकस्वामीमां, आपण बंन्यो वर । २४ ।
हास्य करीने कहे राय, वर तमो परथम,
भाग्य भडशे कन्या जडशे, त्यां जईए ज्यम त्यम । २५ ।
दूबळा घोडा चार जोड्या, रथ कर्यो सावधान,
शीघ्रे त्यां शणगार सजवा, सांचर्यो राजान । २६ ।
राणी कहे ऋतुपर्णने, परहरी हुं पर प्रेम,
क्षत्री थईने करो घरघणुं, न होये अंते क्षेम । २७ ।
पतिए तजी ते अणसती, कांई एक गोरी गूध,
बाहुक वडे परणवी राय, थयुं ऊजळुं दूध । २८ ।

पर-स्त्री के प्रति (कैसी) आसक्ति भरी यह छलाँग (लगा रहे हैं)। अपने वर के जीवित रहते वह कैसे वरण करे ? यह तो व्यर्थ ही प्रयत्न करना है। २१ वह तो पुण्यश्लोक (नल राजा) की स्त्री और भीमक राजा की कन्या है। आप विषयी जन को कैसी लज्जा ? इसमें मेरी (ही) दुर्दशा (फ़ज़ीहत) हो जाएगी'। २२ राजा बोले— 'हे अश्व-पति, मेरे लिए घोड़ों को हाँक दो। अरे, मेरा तो सरबस चला गया। तुम जैसा कोई अन्य नहीं है'। २३ (इसपर) प्रत्युत्तर में बाहुक बोला— 'जहाँ स्वयंवर होगा, वहाँ सेवक और स्वामी में कोई अन्तर नहीं होगा। हम दोनों वर हैं'। २४ तो हँसते हुए राजा बोले, 'तुम प्रथम वर हो। (हमारे) भाग्य (एक-दूसरे से) लड़ेंगे, (देखें, किसे) कन्या मिल जाए। वहाँ जैसे-वैसे (पहुँच) जाएँ'। २५ (अनन्तर) बाहुक ने चार दुर्बल घोड़ों को जोत लिया। रथ को सज्ज किया। वहाँ राजा श्रृंगार सजने के लिए चले गये। २६ तो रानी ऋतुपर्ण से बोली, 'मुझपर का प्रेम छोड़कर, आप क्षत्रिय होकर (पति द्वारा) परित्यक्ता स्त्री से सम्बन्ध स्थापित कर रहे हैं, तो अन्त में कुशल न होगी। २७ उस दुराचारिणी को पति ने छोड़ दिया है। अथवा उस गोरी (स्त्री) में कई गुप्त दोष होगा। हे राजा, उसका बाहुक से विवाह करना (उचित) है, तब दूध उजला सिद्ध हो गया

सूरजवंशतणी ए शोभा, तमथी झांखी होय,
रीस चडी ऋतुपर्णने, पछी धणीआणीने धोय। २९।
अमो भ्रमर कोटि कुसुम सेवुं, तुं शुं चलावीश चाल ?
वीजळी सरखी लावुं वैदर्भी, करुं शोकनुं साल। ३०।
एम कही सभामां आव्यो, दुंदुभि रह्यां छे गाजी,
रीस करी कह्युं बाहुकने, कां जोड्या दुर्बळ वाजी ?। ३१।
करण लूला ने चरण रांटा, बगाई बहु गणगणे,
अस्थि नीसर्यां त्वचा गाढी, भयानक हणहणे। ३२।
चारे नोहे चालवाना, आगळ नीचा पाछळ ऊंचा,
खूंधा ने खोडे भर्या, बे करडकणा बे बूचा। ३३।
ऋतुपर्ण जोई शीश धुणावीने, बोल्यो वळती खीजी,
ए जोडी शु कुरूप लाव्या, जोड घणी छे बीजी। ३४।
पवन वेगे पाणीपंथा, शत जोजन हींडे ठेठ,
एवा घोडा मूकीने, कां जोड्या दैवनी वेठ। ३५।

(समझिए)। २८ सूर्यवंश की यह शोभा आपके कारण धूमिल हो रही है।' तो ऋतुपर्णजी को क्रोध आ गया। (अतः) अनन्तर उन्होंने स्वामिनी (रानी) को पीटा। २९ (वे बोले—) 'मैं भ्रमर की श्रेणी का हूँ। मैं फूलों का सेवन करूँगा। तू क्यों चाल चला रही है। मैं बिजली-सदृश (तेजस्वी) वैदर्भी दमयन्ती को ले आऊँगा और मैं दूसरी स्त्री को लाकर (तुम्हारे लिए) कठिनाई उत्पन्न करूँगा'। ३० ऐसा कहकर वे सभा में आ गये। (तब) दुन्दुभियाँ बजती रहीं। उन्होंने क्रोधपूर्वक बाहुक से कहा, 'तुमने दुर्बल घोड़ों को क्यों जोत लिया ? ३१ इनके कान लूले हैं और टाँगें टेढ़ी हैं। ये घोड़ा-गाड़ी (रथ) तो बहुत ढिलाई से चलती है। (इन घोड़ों की) हड्डियाँ निकली हुई हैं, चमड़ी मोटी है। ये तो भयानक रूप से हिनहिना रहे हैं। ३२ इन चारों (घोड़ों) द्वारा (हम) नहीं चलवाये (वहन किये) जा सकेंगे; (क्योंकि) इनमें से आगे के दो निचले (कम ऊँचे, नाटे) हैं और पीछे वाले ऊँचे हैं। वे कूबड़े हैं और चर्म रोग से भरे हैं। दो कटहा (काटनेवाले) और बिना कान के हैं'। ३३ ऋतुपर्णजी उन्हें देखकर सिर पीटते हुए फिर से खीजकर बोले, 'इन कुरूप जोड़ियों को क्यों लाये ? दूसरी तो बहुत जोड़ियाँ हैं। ३४ वे पवन-गति से चलनेवाले पाणिपन्थी (पानी पर से चलनेवाले) घोड़े सीधे शत योजन जा सकते हैं। ऐसे घोड़ों को छोड़कर दैव की बला जैसे इन घोड़ों को क्यों जोत लिया ?' ३५ तो बाहुक बोला, 'कैसी हँसी-ठठोली कर

बाहुक कहे शी चेष्टा मांडी ? शुं ओळखो अश्वनी जात ?
जो पुष्ट हयने जोडशो तो, हुं न आवुं साथ। ३६।
ए अश्व राखवो ने रथ हांकवो, चडी बेठो भूपाळ,
रास परोणो पछाडियो, बाहुकने चड्यो काळ। ३७।
आटली वार लगे लज्जा राखी, बोल्यो नहीं मा मूच,
तुं आगळथी रथे केम बेठो ? हुंपे तु शुं ऊंच ?। ३८।
ऋतुपर्ण हेठो ऊतर्यो, विविध विनय करतो,
जाय राय पासे बाहुक नासे, ते रथ पूंठे फरतो। ३९।
प्रणिपत्य कीधुं ऋतुपर्णे, हयपति हठ मूको,
उपकारी जन अपराध मारो, बेठो ते हुं चूको। ४०।
बाहुक कहे यद्यपि राश झालुं, बेसीए बन्यो जोडे,
तुंने हरख परणा तणो त्यम, हुंये भर्यो छौं कोडे। ४१।
सामसामा चक्र धरीने, बन्ने साथे चढ्या,
एडी दीधी बाहुके त्यारे, अश्व ढळीने पड्या। ४२।
मुगट खसी गयो रायजीनो, मान शुकन हुआ,
बाहुके अश्व उठाडिया, हांके ने कहे धणी मूआ। ४३।

रहे हैं ? क्या आप घोड़ों की जाति को पहचानते हैं ? यदि आप पुष्ट घोड़ों को जोतना चाहेंगे, तो मैं आपके साथ नहीं आऊँगा '। ३६ तो राजा यह कहकर ' इन घोड़ों को रख लो और रथ हाँक लो ' (रथ पर चढ़कर) बैठ गये। उन्होंने रास और पैना ज़ोर से झँझोड़ा, तो बाहुक पर काल (का-सा क्रोध) सवार हुआ। ३७ (वह बोला—) ' इतने समय तक मैंने लज्जा भाव (संकोच) रखा। मैंने ना-हाँ कुछ नहीं कहा। आप आगे से रथ पर क्यों बैठे ? मुझसे क्या आप ऊँचे (बड़े) हैं ? ' ३८ (यह सुनकर) ऋतुपर्ण नीचे उत्तर गये। वे विविध प्रकार से चिरौरी करने लगे (उसे मनाने लगे)। राजा (जब) पास गये, तो बाहुक भाग गया— वह रथ के पीछे गया। ३९ तो ऋतुपर्णजी ने नमस्कार किया (और कहा—) ' हे हयपति, हठ छोड़ दो। हे उपकारी पुरुष, मेरा अपराध है— मैं (रथ पर) बैठा, मैंने यह भूल की '। ४० इस पर बाहुक बोला, ' यद्यपि मैं रास (लगाम) पकड़ लूं, तो भी हम दोनों जोड़ी में बैठेंगे। आपको विवाह करने का हर्ष हो रहा है, तो मैं उमंग से भर उठा हूँ '। ४१ तब सामने-सामने पहिया पकड़कर वे दोनों एक साथ रथ पर चढ़ गये। तब बाहुक ने एड़ लगायी, तो घोड़े एक ओर झुककर गिर पड़े। ४२ इससे राजा का मुकुट खिसक पड़ा। यह तो अपशकुन हुआ। फिर

अन्न एवा अश्व निर्बळ, खांचे खीजी खीजी,
राय कहे लोक सांभळे, ए विना गाळ द्यो बीजी । ४४ ।
सुदेव ताणी बेसाडियो, राय कहाडे छे डोळा,
शेरीए शेरीए जान जोवा, ऊभां लोकनां टोळां । ४५ ।
दुर्बळ घोडा दरिद्र ब्राह्मण, जोग सारथिनो जोडो,
वैदर्भीने वरवा चाल्या, भलो भज्यो वरघोडो । ४६ ।
हांके ने हींडे पाछां, पाछां धूंसरी कहाडी नाखे
ताणी दोडे घर भणी, ऊभा रहे वण राखे । ४७ ।
पृष्ठ उपर पडे परोणा, करडवा पाछा फरे,
पहोळे पगे रहे ऊभा, वारे वारे मळमूत्र करे । ४८ ।
राय कहे हो हयपति, नथी वात एको सरवी,
बाहुक कहे चिंता घणी छे, मारे दमयंती वरवी । ४९ ।
घणे दोहेले गाम मूक्युं, राये निसासा मूक्या,
पुण्यश्लोके हेठा ऊतरीने, कान अश्वना फूंक्या । ५० ।

बाहुक ने घोड़ों को उठा लिया । वह उन्हें हाँकने लगा और बोला—'अरे तुम्हारे स्वामी मरे हैं । ४३ अपने अन्न जैसे ये घोड़े निर्बल हैं (इन्हें सत्त्व-हीन अन्न दिया जाता है, अतः उसके समान ही ये सत्त्वहीन (शक्तिहीन) हैं । वह खीझ-खीझकर उन्हें (पैना) चुभाने लगा । तो राजा बोले, 'लोग सुन रहे हैं । इसके सिवा कोई दूसरी गाली दो' । ४४ सुदेव को तनकर बैठाया गया, तो राजा आँखें फाड़कर देखने लगे । यह बारात देखने के लिए गली-गली में लोगों के झुण्ड (के झुण्ड) खड़े रहे थे । ४५ घोड़े दुबले हैं; (साथ में) दरिद्र ब्राह्मण है । वह उस सारथी के योग्य जोड़ का है । ये वैदर्भी दमयन्ती का वरण करने जा रहे हैं । अच्छे वरघोड़े को भज रहे हैं । ४६ वह उन्हें हाँकता और वे पीछे मुड़कर चलने लगते । वे पीछे से धुरा को निकाल डालते । वे (रथ को) खींचकर घर की ओर दौड़ने लगते, तो (कभी) बिना रखे खड़े रह जाते थे । ४७ जब पीठ में पैना लग जाता, तब वे काटने के लिए पीछे की ओर घूम जाते । वे पिछली टाँगों पर खड़े रहते और बार-बार मल-मूत्र विसर्जित करते थे । ४८ (यह देखकर) राजा बोले, 'हे अश्वपति, इस प्रकार एक बात भी पूरी नहीं होनेवाली है' । तो बाहुक बोला, 'मुझे दमयन्ती का वरण करने की बड़ी चिन्ता है' । ४९ उन्होंने बड़ी कठिनाई से ग्राम छोड़ दिया (ग्राम के बाहर आये), तो राजा ने लम्बी साँस ली । तो पुण्यश्लोक नल ने नीचे उतरकर घोड़े के कानों में (मंत्र) फूंक लिया । ५० राजा (नल) ने

अश्वमंत्र भण्यो भूपतिए, इंद्रनुं धर्युं ध्यान,
अश्व चारे उतपत्या, उच्चैःश्रवा समान। ५१।
अवनीए अडके नहीं, रथ अंतरिक्ष जाय,
दोट मूकी बेठो बाहुक, रखे पडता राय। ५२।
मांहो मांहे वळगीने बेठा, भूप ने ब्राह्मण,
राय विसामे करे कन्या, वरुआमां वशीकर्ण। ५३।
कामणगारो काळियो, एना गुण रसाळ,
त्रण कोडीनां टट्टुआं, एणे कर्यां पंखाळ। ५४।
हसी राजा बोलिया, थाबडी बाहुकनी खंध,
तारे पुण्ये मारे थाशे, वैदर्भीशुं संबंध। ५५।
वाजीविद्या वासवनी, तुज कने परिपूर्ण,
नानी वात नोहे भाई, रहे विद्यानुं स्मरण। ५६।
ऐरावत ने उच्चैःश्रवा हार्यो गरुडनो वेग,
तारे हांकवे हमणां थईशुं, विदर्भ भेगाभेग। ५७।

अश्वमंत्र पढ़ा, इन्द्र का ध्यान किया, तो चारों घोड़े (इन्द्र के) उच्चैःश्रवा (नामक घोड़े) के समान उछल पड़े। ५१ वे भूमि पर नहीं अटक रहे थे। वे अन्तरिक्ष में गये। बाहुक दौड़ना छोड़कर (घोड़ों को हाँकना छोड़कर) बैठ गया। शायद राजा गिर जाते। ५२ राजा और वह ब्राह्मण (सुदेव) मार्ग में बीच-बीच में (एक-दूसरे से) सटकर बैठ जाते। राजा विश्राम करते रहे। (उन्हें जान पड़ा—) 'यह कन्या तो मेरा ही वरण करेगी। फिर भी इस कुरूप वर बाहुक में वशीकरण की विद्या है। ५३ वशीकरण करनेवाला यह (बाहुक) काला (-कलूटा) है। (फिर भी) इसमें सुन्दर गुण हैं। ये तो तीन कौड़ी (मोल) के टट्टू हैं; (फिर भी) इसने इनको (मानो) पंखों से युक्त पक्षी बना दिया (उनमें पक्षियों की-सी गति उत्पन्न कर दी है)'। ५४ बाहुक के कन्धे पर थपथपाते हुए राजा हँसकर बोले, 'तुम्हारे पुण्य (के बल) से मेरा वैदर्भी दमयन्ती से (विवाह) सम्बन्ध स्थापित हो जाएगा। ५५ इन्द्र की अश्व-विद्या तुममें परिपूर्ण (रूप से पायी जाती) है। यह कोई छोटी बात नहीं है कि (इस स्थिति में) विद्या का स्मरण रहा है। ५६ (इन घोड़ों ने) ऐरावत और उच्चैःश्रवा तथा गरुड़ के वेग को हरा दिया। तुम्हारे द्वारा (घोड़ों को) हाँकने से हम साथ-साथ अभी विदर्भ में उपस्थित हो जाएंगे'। ५७ राजा अपने भाग्य का बखान कर रहे थे। वे आनन्द के मारे पागल की-सी बातें करने लगे। (वे बोले—) 'यदि दमयन्ती मेरा

विखाणे पोतानां भाग्यने, भूप कहाडे घेलां,
जो दमयंती मुजने वरे, तो बाहुक पूजुं पहेलां । ५८ ।
भीमकसुताशुं हस्तमेळापक, जो थाशे हयपति,
बाहुक कहे विलंब शो छे, प्रबळ तारी रति । ५९ ।
वाट ओसरे वात करतां, उडता चाले अश्व,
राय विद्याने वखाणे, न जाणे मननुं रहस्य । ६० ।
ताण्या न रहे व्हेहेकता, दे दोट उपर दोटो,
एक झांखरे वळगी रह्यो, रायनी पामरीनो जोटो । ६१ ।
हां हां राख कहेतां हय दोड्या, रथ गयो जोजन,
बाहुके रथ राख्यो, कहे लई आवो राजन । ६२ ।
राय वळतो बोलियो, श्रम मन विचारी,
दमयंतीना नाम उपर, नाखी पामरी ओवारी । ६३ ।
जा लाव बाहुक तुंने आपी, पामरी बेहु जोड,
बाहुक कहे दमयंती उपर, तुं सरखा ओवारुं क्रोड । ६४ ।
राय मोटा दानेश्वरी बोल्या, बाहुक जाचक तुं था,
परणवा जाउं दमयंती, लेउं पामरीना चंथा । ६५ ।

वरण करे, तो हे बाहुक, मैं पहले तुम्हारा पूजन करूँगा । ५८ हे हयपति, यदि भीमक की कन्या से हस्त-मिलाप (पाणिग्रहण) हो जाए…'। (इस पर) बाहुक बोला, 'इसमें क्या विलम्ब है? आपका प्रेम प्रबल है'। ५९ बातें करते-करते रास्ता समाप्त (तय) होता जा रहा था। अश्व उड़ते हुए चल रहे थे। राजा (बाहुक की) विद्या की सराहना कर रहे थे; परन्तु उसके मन के रहस्य को नहीं जानते थे। ६० वे दुर्बल (घोड़े) खींचे नहीं जा रहे थे। वे दौड़ पर दौड़ लगा रहे थे। राजा के दुपट्टे का जोड़ा एक झाँखर से सटकर रह गया। ६१ 'हाँ, हाँ, रोक लो (रुक जाओ)' —कहने पर भी घोड़े दौड़ रहे थे। रथ एक योजन (आगे) गया। तो बाहुक ने रथ को रोक लिया और कहा, 'हे राजा, ले आइए'। ६२ तो प्रत्युत्तर में उन्होंने मन में परिश्रम का विचार करके कहा। उन्होंने दमयन्ती के नाम पर दुपट्टा निछावर कर दिया। ६३ (वे बोले—) 'हे बाहुक, दुपट्टे का यह जोड़ा तुम्हें दे दिया, जाओ, ले आओ'। तो बाहुक बोला, 'दमयन्ती पर मैं आप जैसे करोड़ों निछावर करता हूँ'। ६४ राजा बड़े दानेश्वर (दाताओं में ईश्वर जैसे सर्वश्रेष्ठ) थे। वे बोले, 'हे बाहुक, तुम तो याचक बन जाओ। (मुझसे कुछ माँग लो।)'। (बाहुक बोला—) 'मैं दमयन्ती से विवाह करने जा रहा हूँ। मैं आपके

एवुं कही रथ खेडियो ने, राय मन विमासे,
रांक होय तो सद्य ललचे, मोटो केम वरांसे ? । ६६ ।
हयपति तममां विद्या मोटी, गुणे बळियो छेक,
तारे प्रतापे मुज कने छे, अंक विद्या एक । ६७ ।
गणित शास्त्रने हुं जाणुं छउं, कहो तो देखाडुं करी,
एक बहेडानुं वृक्ष आव्युं, बाहुक पड्यो उतरी । ६८ ।
राय प्रत्ये कहे रे बाहुक, गर्व-वचन शां आवडां ?
बहेडानी जमणी डाळे, केटलां छे पांदडां ? । ६९ ।
राये विचारीने कह्युं, सहस्र त्रण ने शत त्रण,
बाहुके जई वृक्ष छेदी, डाळ पाडी धरण । ७० ।
गणी जोयां बाहुके, ऊतर्यां तंतोतंत,
उत्कृष्ट विद्या देखीने, हरख्युं नळनुं चंत । ७१ ।
फरी आव्यो रथ पासे, कह्युं राय तमो धन्य,
भूप कहे जो मन मळे तो, विद्या लीजे अन्योन्य । ७२ ।
मांहोमांहे मंत्र आप्यो, मने मन गयां मळी,
परीक्षा करवा विद्यानी, नळे डाळ छेदी वळी । ७३ ।

दुपट्टों की चिन्ता क्यों वहन करूँ'। ६५ ऐसा कहते हुए उसने रथ को चला दिया। राजा मन में विचार करने लगे। यह दरिद्र होता, तो वह अभी दुपट्टे के प्रति लालच अनुभव करता। परन्तु कोई बड़ा हो, तो इसके प्रति कैसे मोहित होगा। ६६ (राजा बोले—) 'हे हयपति, तुममें बड़ी विद्या है। (सद्गुणों में) तुम चरम सीमा को प्राप्त हुए हो। तुम्हारे प्रताप से मुझे एक अंक-विद्या (उपलब्ध) है। ६७ मैं गणित-शास्त्र जानता हूँ। कहिए तो (प्रयोग) करके दिखा देता हूँ। (तब) एक बहेड़े का वृक्ष आ गया। तो बाहुक उतर गया। ६८ बाहुक राजा से बोला, 'इतनी अभिमान की बातें कैसी ? बहेड़े की दाहिनी डाल (शाखा) में कितने पत्ते हैं'। ६९ तो राजा ने बिचार करके कहा, 'तीन सहस्र और तीन सौ'। बाहुक ने जाकर वृक्ष को काटकर शाखा को भूमि पर गिरा दिया। ७० (फिर) बाहुक ने गिनकर देखा, तो वे (संख्या में) पूर्णतः ठीक निकले। यह उत्तम विद्या देखकर नल का चित्त आनन्दित हुआ। ७१ वह फिर रथ के पास आ गया और बोला, 'राजा, आप धन्य हैं'। (इसपर) राजा बोले, 'यदि मन चाहता हो, तो अन्यान्य विद्याएँ ले लो'। ७२ तो राजा ने अन्दर ही अन्दर उसे (अन्य) मंत्र प्रदान किये। (फलतः एक के) मन से दूसरे के मन को विद्याएँ मिल गयीं। फिर विद्या की परीक्षार्थ नल

कल्प्यां तेटलां पत्र उतार्यां, गणितसंख्या मळी,
बीजी विद्याने प्रतापे, देहमांथी नीसर्यो कळि । ७४ ।
पाडानुं चर्म पहेरियुं, ऊंट चर्मनां उपरणां,
टूंकडा चरण ने श्याम वरण, केश छे पंचवरणा । ७५ ।
करमां काती आंख राती, मुख रुधिरना ओघराळा,
भर्यो रीसे सगडी शीशे, ऊडे अग्निनी ज्वाळा । ७६ ।
नीसरी नाठो भये त्राठो, ऊठ्यो नळ नरेश,
लपडाक मारी सगडी पाडी, ग्रही कलिना केश । ७७ ।
वीजळी सरखुं खड्ग कहाड्युं, न जाय जीवतो पापी,
राजभ्रष्ट कीधो दुःख दीधुं, रह्यो देहमां व्यापी । ७८ ।
रगदोळ्यो रेणुमांहे रोळ्यो, केम पड्यो हतो पूंठे ?
आंख तरडे दांत करडे, मारे खड्गनी मूठे । ७९ ।
ऊठे अडवडे अवनी पडे, अकळाव्यो अलेखे,
बाहुकना हस्त कलिनां अस्थ, ऋतुपर्ण नव देखे । ८० ।

ने फिर से एक शाखा काट दी । ७३ जितने की कल्पना की, उतने पत्ते उतार दिये । गणित में (गिनती में) उतनी संख्या मिल गयी । दूसरी विद्या के प्रताप से (बाहुक की) देह में से कलि निकलकर चला गया । ७४ उस (कलि) ने भैंसे का चमड़ा पहना था । ऊँट के चमड़े के उपरने (दुपट्टे पहने) थे । उसके पाँव छोटे-छोटे थे और उसका वर्ण काला था; केश पाँच रंगों के थे । ७५ हाथ में छुरी थी; आँखें लाल थीं । मुख पर रक्त के दाग थे । वह क्रोध से भरापूरा था । उसके मस्तक पर अँगीठी थी और उसमें से आग की ज्वाला उभर रही थी । ७६ वह निकलकर भाग गया और भय से चीख उठा । (तब) राजा नल उठ गये । उन्होंने थप्पड़ लगाया और कलि के बाल पकड़कर अँगीठी को गिरा दिया । ७७ फिर बिजली जैसा खड्ग निकाल लिया । वे बोले, ‘ यह पापी जीवित नहीं जा पाएगा । तूने मुझे राज्य-भ्रष्ट किया, दुःख दिया और तू मेरी देह को व्याप्त करके रह गया ’ । ७८ उन्होंने उसे धूल में घसीटकर रगड़ दिया (और कहा)— ‘ (मेरे) पीछे क्यों पड़ा था ? ’ उन्होंने आँखें टेढ़ी कीं, दाँत कटकटाये और वे खड्ग की मुट्ठी से उसे पीटने लगे । ७९ वह (कलि) उठता, लड़खड़ाता और (फिर) भूमि पर गिर जाता । वह अपार घबड़ाकर व्याकुल हो गया । (फिर भी) बाहुक के हाथों और कलि की हड्डियों को ऋतुपर्ण नहीं देख सकते थे । ८० कलि रो रहा था, आँखों को (आँसुओं से) भर रहा था ।

रुदन करतो आंख भरतो, कलि पागे लागे,
पुण्यश्लोकजी उगारीए, नव मारीए घणुं वागे। ८१।
अरे अधर्मनां मूळिया, तुंने जीवतो केम मूकुं ?
अमो घणुं तें रवडाव्या, नथी नेत्रनुं जळ सूक्युं। ८२।
अरे पापी धर्मछेदन, विश्व वेदनाकारी,
विजोगदाता छेदनशाता, तें तजावी नारी। ८३।
अवगुण केहेवा करावी, सेवा पारके मंदिर,
वदे दीन वाणी मरण जाणी, नेत्रे भरियां नीर। ८४।
महाराज वळती मारजो, गुण अवगुण बे जोई,
नळ कहे अवगुण-भाजन, तें सृष्टि सर्व वगोई। ८५।
स्वामी बे गुण मोटा मुजमां, अवगुणना छेदन,
नळ कहे गुण अवगुण, तुं बेउनुं कर वर्णन। ८६।
स्वामी परथम अवगुण वरणवुं, मारुं जे आचरण
ज्यां हुं गयो त्यां धर्म नहि, ने भ्रष्ट चारे वर्ण। ८७।
दंभ लोभी ने ललुता, ब्राह्मणने करुं भ्रष्ट,
अल्प आयुष्य ने अल्प विद्या, अल्प मेघनी वृष्ट। ८८।

वह (नल के) पाँव लगा। (वह बोला—) 'हे पुण्यश्लोक राजाजी, बचा लीजिए। न मारिए। बहुत (घाव) लग गया है'। ८१ तो नल (बाहुक) बोले— 'अरे अधर्म के मूल, तुझे जीवित क्यों छोड़ दूं ? तूने मुझे बहुत भ्रमण करवाया। मेरी आँखों का पानी नहीं सूख गया है। ८२ अरे पापी, अरे धर्म का उच्छेद करनेवाले, रे वेदना उत्पन्न करनेवाले, वियोग-दाता, रे शान्ति को नष्ट करनेवाले, तूने मेरे द्वारा स्त्री का त्याग करा दिया। ८३ तेरे कैसे-कैसे अवगुण हैं ? तूने पराये घर में मुझसे सेवा करायी'। मृत्यु को (निकट) जानकर वह दीन वाणी से बोला। उसने नेत्रों में अश्रुजल भर लिया। ८४ 'हे महाराज, मेरे दो (-एक) गुण-अवगुणों को देखकर फिर (मुझे) मारिए'। तो नल बोले, 'रे गुण-अवगुण-भाजन, तूने समस्त सृष्टि की निन्दा करायी'। ८५ (कलि बोला—) 'हे स्वामी, अवगुणों का उच्छेद करनेवाले दो गुण मुझमें हैं'। तो नल बोले, 'तू गुण-अवगुण दोनों का वर्णन कर'। ८६ (कलि बोला—) 'मेरा जो आचरण है, उसके अवगुणों का मैं पहले वर्णन करता हूँ। (जहाँ-) जहाँ मैं गया, वहाँ धर्म (के अनुकूल आचरण) नहीं रहा और चारों वर्ण (धर्म-नीति-) भ्रष्ट हुए। ८७ मैं दम्भी, लोभी और लोलुप ब्राह्मण को भ्रष्ट कर देता हूँ। वहाँ (उसमें) अल्प आयु

अनाचार ने अपराध बहु, अनंत आभड छेट,
सिद्ध होय संन्यासी शीळियो, भ्रष्ट करुं हुं नेट। ८९।
मर्यादा लाजने मुकावुं, उन्मार्ग मंडावुं,
जप, तप, तीरथ ने जात्रा, दान दया छंडावुं। ९०।
ध्वंस करुं हुं ध्यानमां, तापसने डोलावुं,
अभक्षाभक्ष अस्पर्शास्पर्श, असत्य वाक्य बोलावुं। ९१।
स्वजनवैर ने पर-शुं मैत्री, नीच संगत्य,
वैष्णवता फेडी विषय स्थापुं, एवी मारी मत्य। ९२।
मातपिताने पुत्र उवेखे, देखे श्यामामां सार,
क्रीडा कामे आठे जामे, स्त्रीमां तदाकार। ९३।
विखवाद करतां जन्म जाय, गाय गौरीना गुणग्राम,
लंपट निर्लज थई अति, जपे नारीनुं नाम। ९४।
हेलामां ब्रह्मचर्य मूकावुं, जति पडे मोहमां ज,
पाखंडी लांठ सुखे जीवे, एवुं मारुं राज। ९५।

और अल्प विद्या होती है। (वहाँ) मेघ की वृष्टि थोड़ी होती है। ८८ (वहाँ) अनाचार और बहुत अपराध होता है; अपार छुआछूत होती है। जो कोई सिद्ध, संन्यासी हो, शीलवान हो, उसे मैं निश्चय ही भ्रष्ट कर देता हूँ। ८९ लज्जा (शील) की मर्यादा छुड़ा देता हूँ, उससे उन्मार्ग आरम्भ कराता हूँ। जप, तप, तीर्थ-क्षेत्र की यात्रा, दान, दया छुड़वा देता हूँ। ९० मैं ध्यान में भंग कर देता हूँ और तापस को विचलित कर देता हूँ। उसके द्वारा अभक्ष्य-भक्षण, अस्पर्श्य का स्पर्श कराता हूँ, असत्य वचन कहलवा लेता हूँ। ९१ (मेरे प्रभाव से) स्वजनों से वैर और पराये लोगों से मित्रता होती है; नीचे से संगति होती है। मैं वैष्णव वृत्ति को मिटाकर विषय (-भोग) की स्थापना करता हूँ। मेरी इस प्रकार की मति है। ९२ पुत्र माता-पिता का अवमान करने लगता है; वह अपनी स्त्री में सार-तत्त्व देखने लगता है। वह आठों पहर उससे (रति-)क्रीड़ा की कामना करता है। वह स्त्री के साथ तदाकर (एकात्म) हो जाता है। ९३ विषमय बातें (झगड़ा, कड़वी बातें) करने में उसका जन्म (व्यतीत हो) जाता है; वह स्त्री के गुण-समुदाय का गान करता है। वह अति लम्पट और निर्लज्ज होकर नारी का नाम जपता रहता है। ९४ (रति-) क्रीड़ा द्वारा मैं यति के ब्रह्मचर्य को छुड़ा देता हूँ। वह मोह में ही फँस जाता है। पाखण्डी और धूर्त लोग सुख से जीवित रहते हैं। ऐसा मेरा राज है। ९५ वहाँ मैं (सबको) व्याप्त किये रहता हूँ; वहाँ

हुं व्यापुं त्यां हरिहर नहि, नहि देव देवस्थळ,
ज्ञान गोष्ठि, कथा नहीं, एवुं मारुं बळ । ९६ ।
स्वामीद्रोही ने मित्रद्रोही, गुरुद्रोही नर घणां,
वचनद्रोही ने ब्रह्मद्रोही, ए सउ अवगुण आपणा । ९७ ।
प्रजा खोटी राजा लोभी, निरंकुश लंपट नार,
व्यभिचारिणी, द्रोहकारिणी, भमती हींडे बहार । ९८ ।
भरथार पहेली करे भोजन, सूए स्वामी पहेली,
थाके नहीं ते वात करतां, वढकणी मनमेली । ९९ ।
क्रोधमुखी ने चोरटी, लोभणी ने लडती,
साची वात मळे नहीं ने, आठे पहोर बडबडती ।१००।
थोडा-बोली साधुमुखी ते, सूता स्वामीने वेचे,
पूछ्यो उत्तर आपे नहीं ने, बोले पेचे पेचे ।१०१।
अभडावे रसोई, अन्न चाखे, जणाय परम पवित्र,
कळि कहे छे मारे प्रतापे, एवां स्त्रीनां चरित्र ।१०२।
पंडित दुखिया ने मूर्ख सुखिया, भोगी रोगे भरिया,
असाधु सुखे अन्न पामे, साधु घडी नहि ठरिया ।१०३।

न हरि और शिवजी हैं, न देव और देवालय । वहाँ ज्ञान, (धर्म-नीति-) गोष्ठी, (हरि-) कथा नहीं होती । ऐसा मेरा बल है । ९६ बहुत लोग स्वामी-द्रोही और मित्र-द्रोही, गुरुद्रोही, वचन-द्रोही (दिया हुआ वचन न पालनेवाले) और ब्रह्म-द्रोही होते हैं । ये सब मेरे अपने अवगुण हैं । ९७ प्रजा खोटी होती है और राजा लोभी होता है । नारियाँ निरंकुश और लम्पट होती हैं; व्यभिचारिणी तथा (पति से) द्रोह करनेवाली होती हैं। वे बाहर भ्रमण करती रहती हैं । ९८ वे पति से पहले भोजन करती हैं; स्वामी (पति) से पहले सो जाती हैं । बातें करते-करते वे नहीं थकतीं । वे झगड़ालू तथा मन से मैली होती हैं । ९९ वे क्रोध-मुखी और चोरी करनेवाली होती हैं; लोभी तथा लड़ने-झगड़नेवाली होती हैं । उनसे सच्ची बात नहीं मिलती और आठों पहर वे बड़बड़ाती रहती हैं । १०० वे कम बोलनेवाली और साधुता लिये हुए मुँहवाली होती हैं, फिर भी वे सोये हुए स्वामी को बेच देती हैं । बात पूछने पर उत्तर नहीं देतीं और पेचीदी-टेढ़ी बातें बोलती हैं । १०१ वे रसोई को छूती हैं, अन्न चख लेती हैं और उसे परम पवित्र जतलाती हैं' । कलि ने कहा 'मेरे प्रताप से स्त्रियों के ऐसे चरित्र हैं । १०२ पंडित दुःखी और मूर्ख सुखी होते हैं । भोगी रोग से भरे होते हैं । असाधु सुख से अन्न प्राप्त करते हैं,

दातार ज्यां त्यां धन नहि, दातार नहि त्यां धन,
खानार ज्यां त्यां अन्न नहि, खानार नहीं त्यां अन्न।१०४।
रूप हो त्यां गुण नहीं ने, गुण त्यां नहीं रूप,
शा शा अवगुण वरणवुं? छे प्रताप मारो अनूप।१०५।
शिष्यनी सेवा गुरु करे, साधु असाधुनुं आचरण,
स्त्रीनी सेवा करे स्वामी, शूद्रने सेवे ब्राह्मण।१०६।
छळ छळ भेद अधिकारी, अघटित करे अन्याय,
अन्नविक्रय हयविक्रय, करे विक्रय गाय।१०७।
परपतिसंग ने परनिंदा, ईर्ष्या अपलक्षण,
उपवीत-अन्न, सीमंत-अन्न, क्रिया-अन्न भक्षण।१०८।
कन्याविक्रय भूमिविक्रय, करे अकरानुं काम,
शय्या ले ने गोदान ले, ने बोळे बापनुं नाम।१०९।

साधु (पुरुष) घड़ी भर नहीं (सुख से) ठहर सकते। १०३ जहाँ दाता होते हों, वहाँ धन नहीं होता। जहाँ दाता नहीं हों, वहाँ धन होता है (धनवान लोग कृपण होते हैं)। जहाँ खानेवाले होते हों, वहाँ अन्न नहीं होता। जहाँ खानेवाले नहीं होते, वहाँ अन्न होता है। १०४ जहाँ रूप हो, वहाँ गुण नहीं होते और जहाँ गुण होते हैं, वहाँ रूप नहीं होता। मैं किन-किन अवगुणों का वर्णन करूँ? मेरा प्रताप (इस प्रकार) अनुपम (बेजोड़) हैं। १०५ गुरु शिष्य की सेवा करते हैं; साधु पुरुष असाधुओं का (-सा) आचरण करते हैं। पति स्त्री की सेवा करते हैं। ब्राह्मण शूद्रों की सेवा करते हैं। १०६ अधिकारी बल और छल-प्रपंच से अनुचित (प्रकार से) अन्याय करते रहते हैं। (लोग) अन्न-विक्रय, अश्व-विक्रय और गायों का विक्रय करते हैं। १०७ पर-पति-संगति, परनिन्दा तथा ईर्ष्या करना —ये (स्त्रियों में) कुलक्षण (पाये जाते) हैं। (पुरुष) उपवीत बेचकर पाया जानेवाला अन्न, सीमन्त (प्रथम बार की गर्भवती) स्त्री के हाथ का अन्न, मृतक-क्रिया के अवसर पर बनाया जानेवाला अन्न भक्षण करते हैं। १०८ (पुरुष) कन्या-विक्रय, भूमि-विक्रय तथा करने के लिए अयोग्य काम करते हैं। वे शय्या (-दान) लेते हैं, गो-दान लेते हैं और पिता का नाम डुबो देते हैं। १०९ लोग विश्वास-घाती बनकर (दूसरों को) लुटवाते हैं; आपस में वैर उत्पन्न करते हैं। पंचदेवों[1] का पूजन छोड़कर असुरों की

१— पंचदेव (पंचायतन) — विष्णु, शिव, सूर्य, गणेश और देवी। जो व्यक्ति इनमें से किसी एक का मुख्यतया उपासक होता है, वह उसकी प्रतिमा बीच में स्थापित करके अन्य चारों की प्रतिमाएँ उसके चारों ओर प्रतिष्ठित करके पूजन करता है। इस प्रकार विष्णुपंचायतन, शिवपंचायतन आदि पंचदेव या देवपंचायतन माने जाते हैं।

वाट पडावे विश्वासघाती, मांहोमांहे वेर सांधे,
पंचदेवनुं पूजन तजीने, असुरने आराधे ।११०।
वैरागी, विषयी ने जोगी ते भोगी, खोटा वणज वेपारी,
विषयसेवन करे ने गर्भ धरे, नव वरसनी नारी ।१११।
सुरभि दूध थोडुं करे ने, दुकाळ ने दुर्भक्ष,
शोक रोग विजोग, घेरघेर, सदा भरे जळ चक्ष ।११२।
को'नुं रूडुं नव देखी शकुं, मारे को साथे नहि स्नेह,
कळि कहे नळरायजी छे, अवगुण सारा एह ।११३।
विशेष केश आमळी झाल्यो, चडी रायने रीस,
हवे न मूकुं अधर्मी, हुं छेदुं तारुं शीश ।११४।
अधर्मी अवनी विषे, आवडो तारो उन्माद,
तारो वध जाणी मने, सौ देशे आशीर्वाद ।११५।
भयने धरतो रुदन करतो, रायने कहे कळि,
पछे मुजने मारजो, बे गुण मारा सांभळी ।११६।
कृत त्रेता द्वापरे, सर्व वर्ष तापस तापे,
तोये तेने हरिहर ब्रह्मा, दर्शन कोय न आपे ।११७।

आराधना करते हैं। ११० वैरागी विषयी होते हैं और जोगी भोगी होते हैं। वणिक्-व्यापारी खोटे होते हैं। नौ वर्ष की स्त्री विषय-सेवन करती है और गर्भ-धारण करती है। १११ गाय दूध कम देती है। अकाल और दुर्भिक्ष पड़ता है। घर-घर में शोक, रोग, वियोग होता है। लोग नित्य नेत्रों में अश्रु-जल भरते रहते हैं। ११२ मैं किसी का भला नहीं देख सकता। मुझे किसी से स्नेह नहीं होता'। कलि ने कहा, 'हे नलराजजी, मेरे ये अवगुण हैं'। ११३ (यह सुनकर) राजा (नल) को क्रोध आ गया। उन्होंने उसके विशेष रूप से केश उमेठकर उसे पकड़ा (और कहा—) 'रे अधर्मी, अब मैं तुझे नहीं छोड़ूंगा, मैं तेरा सिर काट डालता हूँ। ११४ हे अधर्मी, पृथ्वी के प्रति तेरा इतना उन्माद! तेरे वध (की बात) को जानकर सब मुझे आशीर्वाद देंगे'। ११५ (तब) कलि ने भय धारण किया। वह रुदन करता रहा। वह (नल) राजा से बोला, 'मेरे दो गुणों को सुनने के पश्चात् मुझे मार डालना। ११६ कृत, त्रेता और द्वापर (युग) में तापस सौ-सौ वर्ष तपस्या करते थे, तो भी, श्रीहरि (विष्णु), शिवजी और ब्रह्मा— कोई भी उन्हें दर्शन नहीं देते थे'। ११७ कलि बोला, '(परन्तु) मेरे राज्य में, यदि कोई विश्वास (श्रद्धा) पूर्वक ध्यान धारण करे, तो उसके इष्टदेवता छः महीने में आकर

कळि कहे मारा राज्यमांहे, ध्यान धरे विश्वासे,
तो तेने इष्ट देवता ते, आवी मळे खटमासे ।११८।
ए गुण छे एक माहरो, हवे बीजो कहुं विस्तारी,
शत वार दान करे त्रण युगे, एक वार पामे फरी ।११९।
भावे कभावे मारा वारामां, जे हेते नरनार,
पुण्य करे जो एक वारे, तो पामे शत वार ।१२०।
नळ कहे जा नहि हणुं, उपजी मुजने माया,
अनंत अवगुण ताहरा, ते बे गुणे ढंकाया ।१२१।
मारा राज्यमां तुं नहि, जो होय जीव्यानुं काम,
कळि कहे हुं क्यां वसुं, वसवानो आपो ठाम ।१२२।
ज्यां जाउं त्यां नाम तमारुं, तो क्यां रहुं हुं हास ?
नळ कहे बेडाना द्रुममांहे, सदा तारो वास ।१२३।
ज्यां कथा होय महारी, अथवा हरिकीर्तन,
एवे स्थानक तुं नहि, तेवुं लीधुं वचन ।१२४।
राय बेठो रथ उपर, ऋतुपर्ण समज्यो नहि,
हर्षपूर्ण-शुं हय हांक्या, जाणे प्रेमसरिता वही ।१२५।

उससे मिलेंगे । ११८ यह मेरा एक गुण है । अब मैं दूसरा विस्तार करके कहता हूँ । उन तीन युगों में कोई सौ बार दान करता था, तो उसे पुनः एक बार मिलता था । ११९ (परन्तु) मेरे समय श्रद्धा से, अश्रद्धा से जो स्त्री-पुरुष प्रेम-पूर्वक यदि एक बार पुण्य करें, तो वे सौ बार (उसका फल) प्राप्त करते हैं'। १२० (यदि सुनकर) नल ने कहा 'जा, मैं तुझे नहीं मार डालता। मुझे (तेरे प्रति) ममता उत्पन्न हुई है। तेरे अवगुण अनन्त हैं। फिर भी उन्हें (तेरे) इन दो गुणों ने छिपा दिया है। १२१ यदि तुझे जीवित रहने की इच्छा हो, तो भी तू मेरे राज्य में नहीं रह पाएगा'। तो कलि बोला, 'मैं कहाँ रहूँ? मुझे निवास करने के लिए ठौर दीजिए। १२२ जहाँ मैं जाता हूँ, वहाँ आपका नाम है। तो मैं आपका दास कहाँ रहूँ?' नल बोले, 'बहेड़े के पेड़ में तेरा नित्य निवास हो। १२३ जहाँ मेरी कथा (चलती) हो, अथवा श्रीहरि-कीर्तन होता हो, उस स्थान पर तू नहीं रह पायेगा'। नल ने वैसा अभिवचन (कलि से) ले लिया। १२४ अनन्तर राजा (नल) रथ पर बैठ गये। ऋतुपर्ण (इसमें से कुछ भी) नहीं समझ सके। फिर नल—बाहुक हर्षपूर्ण होकर घोड़ों को हाँकने लगे। मानो प्रेमसरिता बहने लगी हो। १२५

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वही चाल्यो प्रेमरस, रथ गाजतो गडगडाट रे,
कहे भट प्रेमानंद नाथनी, वैदर्भी जुए वाट रे ।१२६।

प्रेम-रस बहता चला। रथ गड़गड़ाहट के साथ गरज रहा था। (कवि) भट्ट प्रेमानन्द कहते हैं— वैदर्भी दमयन्ती (उधर) अपने पति की बाट जोह रही थी। १२६

कडवुं ५४ मुं—(ऋतुपर्ण और बाहुक का कुन्दनपुर में आगमन)

राग गोड़ी

दमयंती कहे दासीने, सुण साधवी,
छे विप्रनो वायदो आज, महिला माधवी । १ ।
ठेठ ऋतुपर्ण आवशे, सुण साधवी,
जो होशे नळ महाराज, महिला माधवी । २ ।
अवध पहोंती छे वनतणी, सुण साधवी,
थया त्रण संवत्सर, महिला माधवी । ३ ।
एवडा अविनय शा वस्या ? सुण साधवी,
प्रभु फरी न तपास्युं घर, महिला माधवी । ४ ।
न सांभर्यां बाळक बाडुआं, सुण साधवी,
कठण पुरुषनां मन, महिला माधवी । ५ ।

कड़वक—५४ (ऋतुपर्ण और बाहुक का कुन्दनपुर में आगमन)

दमयन्ती दासी से बोली, 'अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, विप्र (सुदेव) ने आज (नलस्वरूप बाहुक को ले आने) का वादा किया है। १ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, यदि (बाहुक) नल महाराज (ही) हों, तो (अयोध्यापति) ऋतुपर्णजी दूर से आ जाएँगे। २ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, वन (-वास) की अवधि पूर्ण हुई है। तीन वर्ष (पूरे) हो गये। ३ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी। मेरे उतने कौन-कौन अविनय (दोष) उनके मन में बस गये ? (मेरे पति दोषों को कैसे नहीं भूल पाये ?) प्रभु (पति) ने फिर घर में नहीं खोज लिया (खोज-ख़बर, पूछताछ नहीं की)। ४ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, उन्होंने बेचारे बच्चों को नहीं याद किया। पुरुष का मन

हुं मोई जीवी जोई नहीं, सुण साधवी,
वेठ्यु हशे केम वन, महिला माधवी। ६ ।
ओ वायस बोले बारणे, सुण साधवी,
मन ऊपजे हरख तरंग, महिला माधवी। ७ ।
आज फरके डाबी आंखडी, सुण साधवी,
वळी फरके डांबु अंग, महिला माधवी। ८ ।
शुं मनतो मान्यो आवशे ? सुण साधवी,
थाशे शुकन केरां फळ, महिला माधवी। ९ ।
श्रवणे वधामणी सांभळुं, सुण साधवी,
को कहे पधार्या नळ, महिला माधवी। १० ।
वध थाशे वेरी वियोगनो, सुण साधवी,
गयो जडशे संजोग, महिला माधवी। ११ ।
वीरसेनसुत आवशे, सुण साधवी,
त्यारे टळशे सघळो रोग, महिला माधवी। १२ ।
को कहेशे आवी वधामणी, सुण साधवी,
नथी आपवा सरखी वस्त, महिला माधवी। १३ ।
अर्पीश हार हृदयातणो, सुण साधवी,
प्रणमीश जोडीने हस्त, महिला माधवी। १४ ।

कठोर होता है। ५ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी। मैं मुई ने जीवित रहते हुए यह नहीं देखा कि उन्होंने वन (के कष्टों) को कैसे सहन किया होगा। ६ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, द्वार पर कौआ बोल रहा है। मन में हर्ष की तरंग उत्पन्न हो रही है। ७ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, आज (मेरी) बायीं आँख फड़क रही है; इसके अतिरिक्त, बायाँ अंग फड़क रहा है। ८ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, क्या मन के माने (भाये) — मनभावन आ जाएँगे ? (क्या यही) शकुन का फल होगा। ९ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, मैं कानों से बधावा सुन रही हूँ। कोई कह रहा है कि नल पधारे। १० अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, वैरी (स्वरूप) वियोग का वध (विनाश) हो जाएगा। नष्ट हुआ संयोग (मिलन फिर से) हो जाएगा। ११ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, वीरसेन-सुत नलराज आ जाएँगे। तब समस्त रोग दूर हो जाएगा। १२ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, कोई कह रहा हो कि शुभ समाचार आया है, (फिर भी मेरे पास) देने योग्य वस्तु नहीं है। १३ अरी साध्वी, सुनो। अरी

बारीए बेसी निहाळीए, सुण साधवी,
एवे ऊडती दीठी रज, महिला माधवी। १५।
आ रथ आवे छे गरजतो, सुण साधवी,
वळी फरके गगने ध्वज, महिला माधवी। १६।
ओ पडघी पडे अश्वचरणनी, सुण साधवी,
ए हांकणीमां छे विचार, महिला माधवी। १७।
ओ परोणो ऊंचो ऊछळे, सुण साधवी,
होय नळ मुखनो टचकार, महिला माधवी। १८।
रथ आव्यो गामने गोंदरे, सुण साधवी,
हा हा होय अयोध्याभूप, महिला माधवी। १९।
दीसे सुदेव मेले लूगडे, सुण साधवी,
पण हांकणहार करूप, महिला माधवी। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

करूप खेडण रथ तणो, क्यम कहीए ए नळराय रे?
अवस्था जोई गामनी, ऋतुपर्ण दुखियो थाय रे। २१।

स्त्री माधवी, मैं हृदय का (हृदयस्वरूप) हार समर्पित करूँगी। हाथ जोड़कर प्रणाम करूँगी। १४ अरी साध्वी, सुनो। अरी महिला माधवी, खिड़की में बैठकर देख लें। उस समय (इतने में) धूल उड़ती दिखायी दी (दिखायी दे रही है)। १५ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, यह तो रथ गरजता हुआ आ रहा है। इसके सिवा, आकाश में ध्वज फहर रहा है। १६ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, घोड़ों के पाँवों की ध्वनि (टापों की आवाज़) गूंज रही है। यह तो हाँकने का विचार (ढंग) है। १७ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, यह तो पैना ऊपर उछल रहा है। नल के मुँह से (हाँकने की) टंकार (ध्वनि) हो रही है। १८ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, रथ नगर की सिवान पर आ गया। अहो, अहो, अयोध्या के राजा (आ गये) हैं। १९ अरी साध्वी, सुनो। अरी स्त्री माधवी, सुदेव मैले वस्त्रों में दिखायी दे रहे हैं। परन्तु (रथ) हांकने वाले कुरूप हैं। २०

रथ के चलानेवाले कुरूप हैं। उन्हें नलराज कैसे कहें?' नगर की स्थिति देखकर ऋतुपर्णजी दुःखी हो गये हैं। २१

कडवुं ५५ मुं—(ऋतुपर्ण और बाहुक का राजसभा में आगमन)

राग केदारो

ऋतुपर्ण कहे छे विप्रने, ए शुं कारण सुदेव रे,
भ्रांत पडे छे मुजने, नथी स्वयंवरनो अवेव रे। १।
मुनि मुने मिथ्या लावियो, कांई दीसे छे कपट रे,
रिपुलोक हसाविया, फेरो पड्यो फोगट रे। २।
विवाहकर्म नथी दीसतुं, नथी रच्यो मांडव रे,
दुंदुभि शे नथी बोलता? नथी थतुं तांडव रे। ३।
सुदेव वळतो बोलियो, छे छानुं विवाहनुं कर्म रे,
कंकोत्री कोने लखी छे, नहीं भांजवो भीमकने भर्म रे। ४।
क्षणुं एक रहीने आवजो, पूंठेथी महाराज रे,
आगळथी ते सांचर्यो, वधामणी लेवा काज रे। ५।
वैदर्भी जुए वाटडी, विप्र आव्यो घरमांय रे,
हरखे भरी तव सुंदरी, मुनिने लागी पाय रे। ६।
रूडी कहेजो वधामणी, शुं पधारे प्राणनाथ रे?
बाई रूडी पेरे नथी ओळख्यो, शत जोजन कीधो साथ रे। ७।

कड़वक—५५ (ऋतुपर्ण और बाहुक का राजसभा में आगमन)

ऋतुपर्णजी ने विप्र सुदेव से पूछा, 'हे सुदेव, इसका क्या कारण है? मुझे भ्रम हो रहा है—(यहाँ) स्वयंवर का कोई उपकरण (व्यवस्था आदि) नहीं है। १ हे मुनि, आप मुझे मिथ्या (झूठ से, व्यर्थ ही) ले आये हैं। (यहाँ) कुछ कपट दिखायी दे रहा है। (अपने) शत्रु लोगों को मैंने हंसवा दिया है (शत्रु लोग मुझे हँसेंगे)। यह व्यर्थ का चक्कर पड़ गया। २ (यहाँ) विवाह-कार्य नहीं दिखायी दे रहा है। मण्डप (भी) छवाया नहीं गया है। दुन्दुभियाँ कैसे नहीं बज रही है? ताण्डव (नृत्य भी) नहीं हो रहा है'। ३ इसपर (प्रत्युत्तर में) सुदेव बोले, 'विवाह-कार्य गुप्त-रूप से (होनेवाला) है। (अतः) विवाह-पत्रिका (भी) किसने लिखी है, इस विषय में भीमक के भ्रम को भंग नहीं करना है। ४ एक क्षण ठहरकर (आप) महाराज (मेरे) पीछे से आ जाइए'। बधावा लेने के लिए वे आगे से चले गये। ५ (उधर) वैदर्भी दमयन्ती बाट जोह रही थी। विप्र सुदेव घर के अन्दर आ गये। तब हर्ष से भरी-पूरी वह सुन्दरी मुनि सुदेव के पाँव लगी। ६ (वह बोली—) 'समाचार अच्छा कहिए। क्या मेरे प्राणनाथ पधारे हैं?' (सुदेव बोले—) 'हे देवी, मैंने सौ योजन साथ किया है (साथ में रहा हूँ); (फिर

छे रूप तेहनुं बिहामणुं, जाणे बीजो नळ रे,
बाहुकने परीक्षाने तेडजो, एकांत नाडी स्थळ रे। ८।
दमयंती हरखे घणुं, जो आव्या छे ऋतुपर्ण रे,
नगरलोक हसे घणु, जोई सारथि केरो वर्ण रे। ९।
भीमकराय सामा गया, रथथी ऊतर्या राय रे,
त्रणे राजकुंवर आवी मळ्या, ऊठी सर्व सभाय रे। १०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सभा सर्व बेठी थई, आसने बेठो भूप रे,
भीमक आदे सर्व को, जुए सारथिनुं रूप रे। ११।

भी) मैंने अच्छी तरह से उन्हें नहीं पहचाना है। ७ उनका रूप भयानक है। (फिर भी) जान पड़ता है, वे दूसरे नल हों। एकान्त स्थान देखकर बाहुक को परीक्षा के लिए बुला लाओ'। ८ दमयन्ती बहुत आनन्दित हो गयी। देखो ऋतुपर्णजी आ गये हैं। सारथी का वर्ण देखकर नगर के लोग हँसने लगे। ९ भीमक राजा (अगुवानी के लिए) सामने (आगे) गये। रथ से राजा (ऋतुपर्णजी) उतर गये। तीनों राजपुत्र आकर मिले। समस्त सभा (ऋतुपर्ण के प्रति आदरभाव दिखाने के हेतु) उठ गयी (खड़ी हो गयी)। १०

(अनन्तर) समस्त सभा बैठ गयी। राजा आसन पर बैठ गये। भीमक आदि सब किसी ने सारथी के रूप को देखा। ११

कडवुं ५६ मुं—(राजा भीमक द्वारा ऋतुपर्ण से पूछताछ करना)

राग केदारो

भूप भीमक स्तुति करे घणी रे, भले पधार्या अयोध्याधणी रे,
थाका अवेव दीसे देहना रे, एकलां शें नथी सेना रे। १।

कड़वक—५६ (राजा भीमक द्वारा ऋतुपर्ण से पूछताछ करना)

राजा भीमक ने (ऋतुपर्ण की) बहुत स्तुति की। (फिर वे बोले—) 'हे अयोध्यापति, आप अच्छे पधारे। आपकी देह के (समस्त) अंग थके हुए दिखायी दे रहे हैं। आप अकेले पधारे हैं। (साथ में) क्यों सेना नहीं है। १ घोड़े दुर्बलता में सीमान्त तक जा पहुँचे हैं।

हय दुर्बळे वळियो छेक रे, सारथि संसार वत्रेक रे,
कांई अटपटुं सरखुं दीसे रे, एहवे बाहुक बोल्यो रीसे रे। २ ।
ऋतुपर्ण मूको रथ ताणी रे, ऊठो घोडाने करो चारपाणी रे,
नाख्यो परोणो ने राश रे, जई बेठो ऋतुपर्ण पास रे। ३ ।
आवे लागतो राय आधो खेसे रे, सभा मुखे वस्त्र देई हसे रे,
तेम मचमचावे आंखडी रे, खोळामां वस्त्रनी गांठडी रे। ४ ।
ऋतुपर्णने बाहुक पूछे रे, कां वेहवानो विलंब शुं छे रे ?
राजा राखे साने वारी रे, तेम बाहुक बोले खंखारी रे। ५ ।
ऋतुपर्णने पूछे भीमक रे, आ शुं सखा करे छे जक रे ?
ए मित्र क्यांथी ऊपज्यो रे, जेथी काम हींडे छे लाज्यो रे। ६ ।
कहो कांहांथी आव्या राणा रे ? घणुं थाका रेण भराणा रे,
ऋतुपर्ण कहे आ भिया गुणी रे, नथी एकु विद्या ऊणी रे। ७ ।
कोई विद्याए न जाय वाधी रे, ते माटे मैत्री बांधी रे,
रथ हांकणी विद्या हाथे रे, में मृगया तेड्या साथे रे। ८ ।
वन भमतां थयो अतिकाळ रे, आंहां आवी चड्या भूपाळ रे,
भीमक कहे कीधी करुणा रे, आज सहेजे स्वामी पहरुणा रे। ९ ।

ऐसा सारथी संसार में एक ही रहता है। कुछ अटपटा जैसा दिखायी दे रहा है'। इतने में बाहुक क्रोधपूर्वक बोला। २ 'हे ऋतुपर्णजी, रथ को खींचकर खोल दीजिए। उठिए घोड़ों को दाना-पानी दे दीजिए'। फिर उसने पैना और लगाम छोड़ दी। वह ऋतुपर्ण के पास जाकर बैठ गया। ३ उसके पास में आने लगते ही राजा आधे खिसक गये। सभाजन मुँह पर वस्त्र रखते हुए हँसने लगे। वह वैसे ही आँखें मिचमिचा रहा था। उसकी गोद में कपड़ों का गट्ठर था। ४ (अनन्तर) बाहुक ने ऋतुपर्णजी से पूछा, 'विवाह करने में क्या कुछ विलम्ब है ?' तो राजा ने उसे संकेत करते हुए रोका। तब बाहुक खँखारते हुए बोला। ५ भीमक ने ऋतुपर्णजी से पूछा, 'आपके ये सखा क्या झकझक कर रहे हैं ? ये मित्र कहाँ से उत्पन्न हुए (मिल गये), जिनसे कामदेव लज्जित हुआ है और भ्रमण कर रहा है। ६ हे राजा ! कहिए तो आप कहाँ से आये ? वे बहुत थके हैं, धूलि से भर गये हैं'। तो ऋतुपर्णजी बोले, 'ये भाई तो गुणवान हैं। इनमें एक (भी) विद्या कम नहीं है। ७ विद्या में (मुझसे) कोई बढ़कर न हो जाए, इसलिए मैंने इनसे मित्रता की है। इनके हाथ में रथ चलाने की विद्या है। इसलिए मैं इन्हें मृगया के लिए साथ में बुला लाया हूँ। ८ वन में भ्रमण करते-करते बहुत समय हो

भूप भीमके हलभल कीधी रे, रसोईनी आज्ञा लीधी रे,
भूप बाहुक नो छे भेदी रे, आ भिया छे आत्मनिवेदी रे। १०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आत्मनिवेदी छे सारथि, हस्यो भीमक भूपाळ रे,
अन्न वमन थाय दर्शने तो, आवडो शो सुगाळ रे ? । ११।

गया। इसलिए, हे राजा, यहाँ आ गया हूँ'। तो भीमक बोले, 'आपने यह कृपा की है। हे स्वामी, आज सहजतया आप अतिथि हो गये हैं'। ९ अनन्तर राजा भीमक ने सम्मान का प्रबन्ध किया और रसोई बनाने की आज्ञा दी। राजा ऋतुपर्णजी बाहुक के रहस्य के जानकार थे। (वे बोले—) 'ये भाई (बाहुक) तो स्वयं-पाकी (अपने लिए स्वयं भोजन बनाने का व्रत रखनेवाले) हैं। १०

सारथी (बाहुक) स्वयं-पाकी (अपने लिए स्वयं रसोई बनाने का व्रत रखनेवाले) हैं। भीमक हँसने लगे। इसके दर्शन से तो (खाया हुआ) अन्न वमन हो जाएगा —यह इतना घिनौना कैसे है। ११

कडवुं ५७ मुं—(दमयन्ती द्वारा बाहुक की परीक्षा करवाना)

राग नटनी

बाहुक मोकल्यो वाडीमांहे, रसोई स्थळ एकांत,
कहे वैदर्भी कीजे परीक्षा, पुण्यश्लोकनी पडे भ्रांत। १ ।
भीमकराये आज्ञा आपी, अश्वनी ल्यो तपास,
ऋतुपर्ण ऊतर्या भव्य भुवने, करे सेवा दास। २ ।

कड़वक— ५७ (दमयन्ती द्वारा बाहुक की परीक्षा करवाना)

(दमयन्ती ने) बाहुक को बगीचे में भेज दिया। (वहाँ उसके लिए) रसोई बनाने की दृष्टि से एकान्त स्थान था। वैदर्भी दमयन्ती बोली, 'उसकी परीक्षा कीजिए। उसके पुण्यश्लोक नलराज होने का भ्रम हो रहा है'। १ भीमकराज ने आज्ञा दी, 'घोड़ों की जाँच-पड़ताल (देखभाल) करो'। (इधर) ऋतुपर्णजी भव्य भवन में ठहर गये। सेवक उनकी सेवा कर रहे थे। २ दमयन्ती ने भीमक को कहलवा

दमयंतीए भीमकने कहाव्युं, आज्ञा तमारी लीजे,
बाहुकमां छे गुण नळरायना, अमे परीक्षा कीजे। ३ ।
एकांत वाडी दमयंतीनी, कीधुं रसोईनुं स्थळ,
ठालो कुंभ आणीने मूक्यां, मूक्यो काष्ठ नहीं अनळ। ४ ।
बीजां पात्र मूक्यां नानाविध, मूक्युं नहीं मेक्षण,
माधवी केशवी मूकी सेवा ते, जाणे सर्व लक्षण। ५ ।
दमयंती बेठी झरूखे, अंतरपट आडो बांधी,
तेडी लावो रूपाळाने, जुओ केम जमे छे रांधी। ६ ।
दासी एक तेडवाने आवी, चालो कंदर्प क्रोड,
अमारी वाडीने शोभावो, चालो चंपक छोड। ७ ।
उठ्यो नळ चाल्यो अंतःपुरमां, आनंद अंतर आणी,
सखी साहेली आश्चर्य पामे, हशे ते सणगट ताणी। ८ ।
जुए हेरीने दमयंती, विस्मे थई मनमांहे,
आ स्वरूपनी न मळे जोडी, जोतां त्रण भुवनमांहे। ९ ।

दिया— 'हम आपकी आज्ञा लेते हैं। इस बाहुक में नलराज के गुण (पाये जा रहे) हैं। (अतः) हम परीक्षा करें'। ३ दमयन्ती का एकांत स्थान वाला उद्यान था। वह रसोई के लिए स्थान (निर्धारित) किया (गया)। (दासियों ने) रीता कुम्भ लाकर रख दिया। (चूल्हे में) उन्होंने लकड़ियाँ डालीं (पर) आग नहीं डाली। ४ नाना प्रकार के दूसरे पात्र उन्होंने (वहाँ) रख दिये। (परन्तु) उन्होंने उनमें कोई करछुली नहीं रख दी। (अनन्तर) माधवी और केशवी ने सेवा करना छोड़ दिया। वे (नल के) समस्त लक्षण जानती थीं। ५ दमयन्ती, आड़े अन्तरपट लगाकर झरोखे में बैठ गयी। (वह बोली—) 'उस सुन्दर पुरुष को बुला लाओ। देख लो कि वह किस प्रकार रसोई बनाकर जीमता है'। ६ तो एक दासी (बाहुक को) बुलाकर लिवा ले जाने के लिए आ गयी। (वह बोली—) 'हे कोटि-कोटि कामदेव (-से सुन्दर), चलिए। हमारे उद्यान को शोभायमान बना दीजिए। (परन्तु) चम्पक छोड़कर चलिए'। (भ्रमर चम्पक के पास नहीं जाता। यहाँ दासी ने व्यंग्य के साथ कहा कि बाहुक चम्पक को छोड़कर जाए, चम्पक के पास न जाए —उसका वर्ण भ्रमर जैसा काला था।) ७ तो नल मन में आनन्द लाकर (अनुभव करते हुए) अन्तःपुर में चले। वे सखी-सहेलियाँ आश्चर्य को प्राप्त हो गयीं। (उन्हें लगा कि) वह घूंघट ओढ़े हुई होगी। ८ दमयन्ती ने उन्हें ध्यान से देखा। वह मन में विस्मित हुई। (उसने माना—) तीनों भुवनों

शरीर दीसे दवनुं दीधुं, स्कंधे जाडो पगे पातळो,
टूंकडा कर ने नस नीसरी, मोटो पेटनो नळो। १०।
कांहां नळ ? कांहां बाहुक ? कांहां सूरज ? राहु मंडळ ?
वाकुं मुख ने मस्तक मोटुं, पाघडी ऊंडळ-गुंडळ। ११।
ए साथे शी गोठडी ? ऋतुपर्णने भावेट लागी भवनी,
हींडतां पगने स्पर्शे करीने, काळी थाय छे अवनी। १२।
पण एहने विद्या हय हांक्यानी, आश्चर्य सरखुं दीसे,
कतरातो आवे नाक फुलावे, भ्रूकुटी भरी छे रीसे। १३।
दमयंती पासे हसती हसती, भाभी आव्यां त्रण,
बाई आ पूतळुं क्यम पधराव्युं, वारु रूप ने वर्ण। १४।
कदाचित नळजी नीवडशे, ने रहेशे एहवुं अंग,
कहो बाई तमो ए पुरुषनो, कई पेरे करशो संग ?। १५।
शाप हशे कोई तापसनो, न जाशे कोई उपांगे,
आ भिया आसन बेसशे, तमो केम रहेशो वामांगे ?। १६।

में (खोजकर) देखने पर भी इस स्वरूप का जोड़ (कहीं) नहीं मिल सकता। ९ शरीर दावानल में (झुलसने के हेतु) वना दिया हुआ (जान पड़ता) है। कन्धों में यह मोटा है; पाँवों में पतला है। इसके हाथ छोटे हैं और नसें निकली हुई (फूली हुई) हैं। इसके पेट की आँते बड़ी है (वह बड़ी तोंद वाला है)। १० कहाँ नल ? कहाँ बाहुक? कहाँ सूर्य और कहाँ राहु-मण्डल ? इसका मुँह टेढ़ा है और सिर बड़ा है। पगड़ी (भी) अस्त-व्यस्त गोले जैसी है। ११ इसके साथ कैसी मित्रता ? (जान पड़ता है—) ऋतुपर्ण को संसार की झंझट लग गयी है। इसके घूमते रहने पर पाँवों के स्पर्श से धरती काली हो रही है। १२ परन्तु इसे घोड़ों को चलाने की विद्या प्राप्त है —यह आश्चर्य-सा दिखायी दे रहा है। वह कतराता हुआ (टेढ़ा) आता है, नाक को फुलाये रहता है। भौंहें क्रोध से भरी हुई-सी हैं। १३ (इतने में) तीनों भाभियाँ हँसते-हंसते दमयन्ती के पास आ गयीं (और बोलीं–) 'हे देवीजी, इस पुतले को कैसे पधरवा लिया ? इसका रूप और वर्ण सुहाना है। १४ कदाचित यह नलजी निकलेंगे (प्रमाणित हो जाएँगे) और उनका ऐसा शरीर रह जाएगा। कहो तो देवीजी, तुम इस पुरुष का संग किस प्रकार करोगी। १५ इन्हें किसी तापस का शाप (प्राप्त हुआ) होगा। वह किसी उपांग (उपाय) से नहीं जाएगा। ये भाई (जब) आसन पर बैठेंगे, (तब) उनके वामांग में कैसे रह पाओगी। १६ हे देवीजी, जहाँ होंगे, वहाँ से तुम्हारे पति कल

जांहां हशे तांहांथी काल आवशे, बाई तमारो स्वामी,
एम बलखां शुं मारो छो ? कांई धीरज धरो गजगामी । १७ ।
वैदर्भी कहे कौतुक मूको, बेसी करो परीक्षा,
जाओ सेवा करो बाहुकनी, दासीने दीधी शिक्षा । १८ ।
केशवी माधवी बन्ने आवी, बाहुकजीनी पास,
हृदे भरायुं नळराजानुं, ओळखी बन्नो दास । १९ ।
सूकां वृक्षने स्पर्श कर्यों ते, ते थयुं नवपल्लव,
दासी तव आनंद पामी, होय वैदर्भीनो वल्लभ । २० ।
कहे सहियारी हो आचारी, मन न आणशो धोको,
द्रुम तळे स्थळ पवित्र कीधुं, अमो दीधो छे चोको । २१ ।
नहावानुं तांहां वस्त्र पहेरे, पाघडी पछेडी वरजे,
जंघाए गूंछळां केशतणां ने, शरीर भर्यु छे खरजे । २२ ।
नीचुं ऊंचुं भाळे, शरीर खंजवाळे, दासीए अवलोकन कीधो,
रांटे पाये हींडे बडबडतो, ठालो कुंभ जई लीधो । २३ ।
वरुण मंत्र भण्यो नळराये, तत्क्षण कुंभ भरायो,
वीस घडा रेड्या शिर उपर, ऊभो रहीने नहायो । २४ ।

आ जाएँगे । इस प्रकार झूठ-मूठ का (व्यर्थ) यत्न क्यों कर रही हो ? हे गजगामिनी, कुछ धीरज तो धारण करो '। १७ (यह सुनकर) वैदर्भी दमयन्ती बोली, ' कौतुक (हँसी-ठठोली) छोड़ दो । बैठकर परीक्षा कर लो '। फिर उसने दासियों को सीख दी (और कहा—) ' जाओ, बाहुक की सेवा करो '। १८ (तदनन्तर) केशवी और माधवी दोनों बाहुक के पास आ गयीं । तो नलराज का हृदय भर उठा । उन्होंने दोनों दासियों को पहचान लिया । १९ (दासियों ने देखा— जब) नल ने सूखे वृक्ष को स्पर्श किया, तो वह नव-पल्लवों से युक्त हो गया । तब दासियाँ आनन्द को प्राप्त हुईं । (उन्हें विश्वास हुआ कि) ये वैदर्भी के वल्लभ (ही) हैं । २० फिर सखी बोली, ' अहो आचार्यजी, मन में कोई धोखे की बात न लाना (मानना) । वृक्ष के तले हमने स्थान को पवित्र बना दिया— हमने चौका (बनाकर) दिया '। २१ वहाँ उसने नहाने के समय धारण किया जानेवाला वस्त्र पहन लिया और पगड़ी तथा दुपट्टा (गूदड़ी, चादर) उतार दी । उसकी जंघाओं पर केश के गुच्छे थे और शरीर खाज से भरा हुआ था । २२ सिर ऊँचा-नीचा था । वह शरीर को खुजलाता था । दासियों ने यह देखा । वह बड़बड़ाते हुए टेढ़े-मेढ़े पाँवों से चलता था । उसने जाकर रीता कुम्भ ले लिया । २३ (अनन्तर)

दासी अति आनंद पामी, कौतुक दीठुं वळतुं,
चहूला मध्ये काष्ठ मूक्यां, अग्नि विण थयुं बळतुं । २५ ।
उभरातुं अन्न करे हलावे, कडछीनुं नहीं काम,
दासी गई दमयंती पासे, बोली करी प्रणाम । २६ ।
वाजी वृक्ष ने जळ अनळ, ए चार परीक्षा मळी,
अन्न लावो अभडावी एहनुं, वैदर्भी कहे जाओ वळी । २७ ।
रमती रमती नेहे नमती, नीरखती निज गात्र,
एक बाहुक बाते वळगाड्यो, एक लई नाठी अन्नपात्र । २८ ।
अरे पापिणी, कही बाहुक ऊठ्यो, दासीए मूकी दोट,
माधवी कहे फरी करो रसोई, हुं दई आपुं अबोट । २९ ।
फरी पाक निपजाव्यो नळराय, बेठो करवा भोजन,
पछे दमयंतीए जोयुं चाखी, अणाव्युं जे अन्न । ३० ।
स्वाद ओळख्यो ए नळ निश्चे, पाक परम रसाळ,
किंकरी फरीने मोकली त्यारे, साथे बन्ने बाळ । ३१ ।

नलराज ने वरुण मंत्र पढ़ा और तत्क्षण वह कुम्भ (पानी से) पूर्ण भर गया। उन्होंने बीस घड़े (पानी) सिर पर उँड़ेल दिये। वे खड़े रहकर नहा रहे थे। २४ वे दासियाँ अति आनन्द को प्राप्त हुईं। उन्होंने फिर से एक आश्चर्य देखा। नल ने चूल्हे में लकड़ियाँ डाल दीं, तो वे बिना आग (डाले) जलने लगीं। २५ उन्होंने उबलते अन्न को हाथ से हिला दिया। (वहाँ) करछुली का कोई काम नहीं था। (यह देखकर) दासी दमयन्ती के पास गयी और उसे प्रणाम करके बोली। २६ 'अश्व, वृक्ष और जल तथा अग्नि— के सम्बन्ध में ये चार परीक्षाएँ मिल गयीं (हो गयीं)'। फिर वैदर्भी बोली, 'लौटकर जाओ और उसके अन्न को छूकर (उठाकर) ले आओ'। २७ (तदनन्तर) खेलते-खेलते, प्रेमपूर्वक नमस्कार करते हुए एक (सखी) अपने गात्रों को निरखती रही। उसने बाहुक को बातों में उलझा दिया, तो दूसरी अन्न का पात्र लेकर भाग गयी। २८ 'अरी पापिनी' कहकर बाहुक उठ गया, तो दासी ने दौड़ लगायी। तो माधवी बोली, 'फिर से रसोई बनाइए। मैं चौका लगा देती हूँ'। २९ (अनन्तर) नलराजा ने फिर से रसोई बना ली और वे भोजन करने बैठे। फिर जो अन्न लाया गया था, दमयन्ती ने उसे चखकर देखा। ३० उसने उस (अन्न) का स्वाद पहचान लिया। वह अन्न रस-भरा था। तो उसे विश्वास हुआ कि निश्चय ही यह (बाहुक) नल (ही) हैं। तब उसने दासी को फिर से भेज दिया। उसके साथ दोनों बच्चे थे। ३१

वलण (तर्ज़ बदलकर)

साथे बन्ने बाळ ने, नळ कने आवी किंकरी,
बाहुके दीठां बाडुआं तांहां रे, आंखडी जळे भरी रे। ३२।

साथ में दोनों बच्चे थे। वह दासी नल के पास आ गयी। वहाँ बाहुक ने उन (दोनों) बच्चों को देखा, तो उसकी आँखें पानी से भर उठीं। ३२

कडवुं ५८ मुं—(दमयन्ती द्वारा परीक्षा के लिए बाहुक को बुलवाना)

राग रामग्री

बाहुके दीठां बाडुआं, उलट्युं अंत:कर्ण,
दामणां माहरां बाळकोने, देखीने आवे मर्ण। बाहुके०। १।
कळजुगे कल्पांत ज कीधुं, बाळक वर्त्यां मोसाळ,
कोण कृत्य में आचर्यां ? तजी अबळा अंतरियाळ। बाहुके०। २।
संजोगसागर ऊलट्यो, नयणां श्रावण समान,
आलिंगन देवा कारणे, सुतने कीधी सान। बाहुके०। ३।
मळवाने तेड्यां मीठडां, कर लांबा कीधा धीश,
छळ्यां बीहीन्यां बाळको ते, त्यां पाडे चीसेचीस। बाहुके०। ४।

कड़वक-- ५८ (दमयन्ती द्वारा परीक्षा के लिए बाहुक को बुलवाना)

बाहुक ने (जब) बच्चों को देखा, तो उसका अन्तःकरण उमड़ उठा। (उसे जान पड़ा—) अपने पराधीन बच्चों को देखकर मौत आ रही है। बाहुक ने०। १ कलियुग ने (यह कैसा) कल्पान्त (करनेवाला प्रलय) ही कर दिया है कि ये (मेरे) बच्चे ननिहाल में रह रहे हैं। मैंने कौन-से काम किये (जिनका यह परिणाम है) ? मैंने उस अबला (दमयन्ती) को अन्तरिक्ष अर्थात निर्जन (वन) में छोड़ दिया। बाहुक ने०। २ मिलन के कारण प्रेम रूपी सागर उमड़ उठा। उनकी आँखें श्रावण मास के समान हो गयीं— अर्थात आँखों से श्रावण की वर्षा-धाराओं-सी अश्रुधाराएँ बहने लगीं। उसने आलिंगन करने के हेतु पुत्रों को (निकट आ जाने का) संकेत किया। बाहुक ने०। ३ उस राजा ने मिलने के लिए मधुर शब्दों में उनको बुला लिया, हाथ लम्बे किये (आगे बढ़ाये) तो वे चौंक उठे और भयभीत हो गये। वे चीखने-चिल्लाने लगे। बाहुक

दासीए चांप्यां हृदे साथे, कीधो बाहुकनो तिरस्कार,
रहेवा दे तारुं रमाडवुं भाई, रुए छे राजकुमार । बाहुके० । ५ ।
बाहुक कहे बाळकने मुंने, सांई देवानो स्नेह,
ना रे भाईडा भेटतां थाए, काळी कुंवरनी देह । बाहुके० । ६ ।
छे छत्रपतिनां छोकरां, तुंने मळवानुं केम मन ?
शे दुःखे थाय छे गळगळो ? रोतां फूटशे लोचन । बाहुके० । ७ ।
बाहुक वळतो बोलियो मारे, एवां बाळकनी जोड,
आ देखीने ते सांभर्यां, थयुं रमाडवानुं कोड । बाहुके० । ८ ।
दासीए कह्युं दमयंतीने, बोल्यो बाहुक जे वात,
बाई आश्चर्य दीठुं अतिघणुं, काळो करे आंसुपात । बाहुके० । ९ ।
दमयंतीए पूछ्युं भीमकने, नळनी पडे छे भ्रांत,
आज्ञा होय तो बाहुकने, पूछुं तेडी एकांत । बाहुके० ।१०।
भीमक कहे सती सुता, तुंने शुं देउं शिक्षा,
सुखे बोलावो बाहुकियाने, करो नळनी परीक्षा । बाहुके० ।११।

ने० । ४ दासी ने उन्हें हृदय से दृढ़तापूर्वक लगा लिया और बाहुक के प्रति तिरस्कार (प्रकट) किया । (वह बोली—) 'अरे भाई, अपना (बच्चों को) खेलवाना रहने दो । ये राजकुमार रो रहे हैं' । बाहुक ने० । ५ बाहुक बोला, 'इन बच्चों का आलिंगन करने में मुझे स्नेह (रुचि) है' । (तो दासी बोली—) 'ना भैया ! तुम्हारे गले लगने से इन कुमारों की देह काली हो जाएगी । बाहुक ने० । ६ ये छत्रपति के बच्चे हैं । उन्हें गले लगाने की तुम्हें कैसी कामना हो रही हैं ? तुम किस दुःख से गद्‌गद हो उठे हो ? रोते-रोते तुम्हारी आँखें फूट जाएँगी' । बाहुक ने० । ७ प्रत्युत्तर में बाहुक बोला, 'मेरे (भी) ऐसे बालकों की जोड़ी है । इन्हें देखकर उनका स्मरण हो आया और इन्हें खेलाने की उत्कट इच्छा हुई' । बाहुक ने० । ८ (तदनन्तर) बाहुक ने जो बात कही, वह दासी ने दमयन्ती से कही । (वह दासी बोली—) 'देवीजी, अति बड़ा आश्चर्य देखा । वह काला आँसू बहा रहा था' । बाहुक ने० । ९ तो दमयन्ती ने भीमक से पूछा (कहा—) '(बाहुक के) नल (होने) का भ्रम (अनुमान) हो रहा । आज्ञा हो तो बाहुक को एकान्त में बुला लाकर पूछ लेती हूँ' । बाहुक ने० । १० भीमक बोले, 'अरी सती कन्या, मैं तुम्हें क्या सीख दूँ ? बाहुक को सुख के साथ बुलाओ और नल की परीक्षा कर लो' । बाहुक ने० । ११ वैदर्भी दमयन्ती अन्तःपुर में, जहाँ उसकी अपनी मंज़िल थी, (वहाँ) आ गयी । उसने दासी को आज्ञा दी— 'बाहुक को

वैदर्भी आव्यां अंतःपुरमां, ज्यां पोतानी मेडी,
आज्ञा आपी दासीने, लावो बाहुकने तेडी। बाहुके० ।१२।
शीघ्र आवी साहेलडी, अंतरमांही उल्लास,
ऊठो बाहुकजी उतावळा, चालो दमयंतीनी पास। बाहुके० ।१३।
रायजी वळतो बोल्यो, हुं छुं दीन कंगाल,
वरुवा साथे वैदर्भीने, वात कर्यानुं शुं वहाल ? बाहुके० ।१४।
सोमवदनी सुंदरी, सारंगनयना सुजाण,
वात करतां ब्रह्मचर्य भांगे, वागे मोहनां बाण। बाहुके० ।१५।
परघरमांहे अमो नव पेसुं, स्त्रीनुं चंचळ मन,
अमो साधु पुरुषने सद्य पाडे, आवीने दे आलिंगन। बाहुके० ।१६।
दासीने तव हास्य आव्युं, दैवनां कौतुक जोय,
विश्वमोहिनी दमयंती ते, आ भियाने क्यम नहि मोहाय? बाहुके०।१७।
बोर न खाय को करतणां, विपरीत वपुनुं वान,
एवा उपर वळी कर्म लड्यां, वळी रूपनुं अभिमान। बाहुके० ।१८।
बलात्कारे तेड्यो बाहुक, दासी थई बांहेधर,
नीची नाडे नळ चालियो, ज्यां गृहिणीनुं घर। बाहुके० ।१९।

बुलाकर लाओ'। बाहुक ने०। १२ वह दासी शीघ्रता से आ गयी। उसके अन्तःकरण में उल्लास था। (वह बोली--) 'हे बाहुकजी, उठो (और) शीघ्रता से दमयन्ती के पास चलो'। बाहुक ने०। १३ तो प्रत्युत्तर में राजा (नल) बोले, 'मैं दीन, कंगाल हूँ। वैदर्भी को वर से बातें करने का क्यों प्रेम हो रहा है?' बाहुक ने०। १४ (वे बोले—) 'वह चन्द्रवदना सुन्दरी है, सारंग-नयना है, सुजान है। उससे बात करने पर (मेरा) ब्रह्मचर्य भंग हो जाएगा। (मुझे) मोह के बाण लग जाएँगे'। बाहुक ने०। १५ (वे बोले—) 'मैं पराये घर में प्रवेश नहीं करूँगा। स्त्री का मन चंचल होता है। वह हम साधु पुरुषों को तत्काल गिरा देती है; वह आकर आलिंगन करती है'। बाहुक ने०। १६ (यह सुनकर) तब दासी को हँसी आयी। वह दैव की लीला देख रही थी। (उसे लगा—) वह विश्वमोहिनी दमयन्ती इस भाई को कैसे मोहित नहीं कर रही है। बाहुक ने०। १७ इसके हाथ के बेर (तक) कोई नहीं खाएगा। इसके शरीर का वर्ण विपरीत है। इसके अतिरिक्त, कर्म लड़ रहे हैं (पूर्वकृत कर्मों का यह फल है)। फिर इसे अपने रूप का अभिमान है। बाहुक ने०। १८ बाहुक (नल) को दासी बलपूर्वक हाथ पकड़कर ले गयी। नल सिर झुकाये हुए चले गये, जहाँ उस गृहिणी (दमयन्ती) का घर था।

जातां कहे छे किंकरीने, ब्रह्मचर्यने छे घात,
वैंदर्भी विकारे भरी, मने वश करवानी वात। बाहुके० ।२०।
माधवी कहे बोल विचारी, कोण भांगे छे धर्म,
वैंदर्भी तने क्यम नहि वरे ? करे अग्नि कर्म। बाहुके० ।२१।
नथी आशरो फरी गयानो, कही भिडाव्यां कपाट,
दासीए देखाडी आंखडी, त्यारे चाल्यो पाधरी वाट। बाहुके० ।२२।
बाहुकने बारणे बेसाड्यो, ढाळी रूपानो बाजठ,
दमयंती ऊमरा पर बेठी, आडुं धरी अंतरपट। बाहुके० ।२३।
बाहुक खूंखारे आळस मोडे, मांड्यो विषयनां चिह्न,
चित्त मळ्युं त्यां चक कशो रे, जो नथी भिन्नाभिन्न। बाहुके० ।२४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जो नथी भिन्नाभिन्न तो, मध्ये अंतरपट कशुं
नहि बोलो जो मन मूकी, तो अमो ऊठीने जशुं ।२५।

बाहुक ने०। १९ जाते-जाते उसने उस दासी से कहा— ‘ (मेरे) ब्रह्मचर्य का घात हो रहा है। वैंदर्भी विकार से भरी हुई है। मुझे वश में कर लेने के लिए यह बात (चल रही) है ’। बाहुक ने०। २० (यह सुनकर) माधवी बोली, ‘ विचार करके बोलो। कौन (तुम्हारे) धर्म को भंग कर रहा है ? वैदर्भी तुम्हारा वरण क्यों नहीं करेगी ? अग्नि अपना काम करेगा ’। बाहुक ने०। २१ लौटकर जाने का कोई आश्रय (मार्ग, उपाय) नहीं था। उससे (वैंदर्भी ने) कहकर किवाड़ बन्द करवा दिये। दासी ने आँखें दिखायीं और तब वह सीधे मार्ग से चला। बाहुक ने०। २२ उसने बाहुक को द्वार पर बैठा लिया। उसने चाँदी की चौकी बिछा दी। दमयन्ती देहली पर बैठी। उसने (बीच में) पर्दा आड़े धर लिया। बाहुक ने०। २३ बाहुक खँखार उठा। उसने अँगड़ाई ली। वह विषय-विकार के लक्षण दिखाने लगा। (उसे लगा—) यदि मन लग गया है, कोई भिन्नता (अन्तर) नहीं है, तो वहाँ चिक क्यों है ? बाहुक ने०। २४

यदि भिन्नता (अन्तर) नहीं है, तो बीच में अन्तर्पट (पर्दा) क्यों है ? (वह बोला—) ‘ यदि मन खोलकर नहीं बोलोगी, तो मैं उठकर चला जाऊँगा ’। बाहुक ने०। २५

कडवुं ५९ मुं—(दमयन्ती की उक्ति बाहुक-स्वरूप नल के प्रति)

राग काफी

विनय संगाथे बोल्यां, वैदर्भी सुंदरी,
शा माटे ऊठी जाओ छो ? तेडाव्या खप करी। १ ।
अमने रहेवुं घटे, बांधी अंतरपटे,
बोलुं केम प्रगटे, परपुरुष निकटे। २ ।
बेसो जी बाजठे, बोलो जी ऊलटे,
न पूछुं कपटे, बोलवुं निर्मळ घटे। ३ ।
पुरुष छेडायो हठे, चाले पोतानी चटे,
हींडे नारीने नटे, लाजे नहीं राजवटे। ४ ।
जे नर जन मने काळा, मुखे विषनी ज्वाला,
मूके विजोगनां भालां, केम सही शके बाळा ? ५ ।
बाहुकजी छो आचारी, सुणो विनति मारी,
को एम मूके विसारी ? दोह्ले पामी नारी। ६ ।

कड़वक--५९ (दमयन्ती की उक्ति बाहुक-स्वरूप नल के प्रति)

सुन्दरी वैदर्भी दमयन्ती विनम्रता के साथ बोली, 'उठकर किसलिए जा रहे हैं ? आपको यत्न-पूर्वक बुलाकर (यहाँ) लाये हैं। १ अन्तर्पट (पर्दा) लगाकर रहना (ही) मेरे लिए उचित (जान पड़ता) है। परपुरुष से मैं प्रकट रूप में निकट से कैसे बोलूँ। २ अहो, चौकी पर बैठिए। उत्साह-उमंग से बोलिए। मैं कपट से नहीं पूछ (बोल) रही हूँ। निर्मलता से (मन को कपट आदि की मैल से मुक्त रखते हुए) बोलना, उचित होता है। ३ पुरुष चिढ़ जाए, तो अपनी धुन में चलता रहता है। वह नारी को अस्वीकार करते हुए (परित्यक्त करते हुए) विचरण कर सकता है। (इसमें) राज-सभा की रीति (व्यवहार) में वह लज्जित नहीं होता। ४ जो पुरुष मन से काला, अर्थात कुटिल हो, उसके मुख में विष की ज्वाला होती है। वह (उस स्त्री पर) वियोग के भाले चलाता है। उससे वह स्त्री किस प्रकार सह सकती है। ५ हे बाहुकजी, आप आचारवान (सदाचारी, धर्म के अनुसार आचरण करनेवाले) हैं। मेरी विनती सुनिए। कौन इस प्रकार विस्मृत करते हुए (स्त्री को) त्यज सकता है। वह नारी तो उससे कष्ट से प्राप्त हो गयी है। ६ (जब पुरुष) के हृदय में (आरम्भ में) नया-नया स्नेह उत्पन्न हो जाता है, तो वह प्रेम की बातें करता है।

नवानवा नेह उदे, वहालनां वायक वदे,
भर्यां होये पण मदे, पुरुषनां कठण हृदे । ७ ।
वळगी हींडे कांडे, नवनवी प्रीत मांडे,
जणाय दुःखने दहाडे, स्नेहीने निश्चे छांडे । ८ ।
जाणीए मळीए वहेलां, देखीने थईए घेलां,
नारी न प्रीछे पहेलां, पुरुषनां मन मेलां । ९ ।
वहालपणां क्यहींए गयां, मुखे कहेता आ भैया,
वज्रपें कठण हैयां, तरछोड्यां नानां छैयां । १० ।
ब्रह्माए पुरुष घडिया, नारीने जीवे जडिया,
दुःखना दहाडा पडिया, वेरीडा थई नीवडिया । ११ ।
प्रीतडी जेनी व्यापी, तेने मारे अद्यापि,
फळ बे रूडां आपे, वृक्षने थडथी कापे । १२ ।
रखे मारी वेल सूके, प्रवासजळ वहेतुं मूके,
ते जाणी चतुरा शुं चूके ? फरी आवी न ढूंके । १३ ।
जे स्थळनुं जळ पीजे, शल्या त्यां केम दीजे?
जे पर दया धरीजे, तेनो जीवडो नव लीजे । १४ ।

परन्तु पुरुष का हृदय मद से भरा होता है, वह कठोर होता है । ७ वह (पुरुष) उसकी कलाई से लिपटकर घूमता रहता हैं; नयी-नयी प्रीति (की बातें) आरम्भ करता है । (परन्तु जब) दुःख के दिन दिखायी देने लगते हैं, तब वह निश्चय ही उसे छोड़ देता है । ८ पहले तो (उसे) लगता है कि (एक-दूसरे को) जान लें (समझ लें), शीघ्रतापूर्वक मिलें, (एक-दूसरे को) देखकर उन्मत्त हो जाएँ । (परन्तु) नारी तो पहले देखती नहीं कि पुरुषों के मन मैले होते हैं । ९ वह प्रेम कहाँ गया ? मुख से वे भाई ऐसा कहते रहे । पुरुषों का हृदय वज्र से कठोर होता है । उन्होंने तो नन्हे बच्चों तक को दुत्कार दिया । १० ब्रह्मा ने ऐसे पुरुष का निर्माण किया । उसने नारी को उसके जीव से जकड़ दिया । दुःख के दिन आ गये, तो वह (पुरुष) वैरी सिद्ध हो गया । ११ जिसके प्रेम ने उस (स्त्री) को व्याप्त किया था, वह उसे अब भी मार रहा है । जिसने दो सुन्दर फल प्रदान किये, उस वृक्ष को उसने तने से काट डाला है । १२ शायद मेरी वेल सूख जाएगी, इस आशंका से प्रवास रूपी बहता पानी डाल दिया । यह जानकर वह चतुरा स्त्री क्या चूकेगी ? उस (पुरुष) ने फिर से आकर झाँका तक नहीं । १३ जिस स्थान का पानी पीते हैं, उसमें शिलाएँ कैसे डालें ? जिस पर दया करते हैं, उसके प्राण नहीं लेते हैं । १४

जेनो हाथ ग्रहीए, तेने मूकी नव जईए,
अमो अबळा छईए, वेदना कोने कहीए ? १५ ।
जेने पामी मानव जने, देवता न आण्या मने,
तेने न मूकीए वने, राखीए पोता कने । १६ ।
बेसीए एक पाटे, कामिनी साथे कनक घाटे,
थोडा अन्याय माटे, न मूकीए उजेड वाटे । १७ ।
अबळानां कोण बळ ? कदळीपें कोमळ,
नयणे भरे जळ, कडवां कर्मनां फळ । १८ ।
वनमां वाघ गाजे, पावलीए कांटा भांजे,
बीजा लोकने दाझे, शठ स्वामी नव लाजे । १९ ।
वनमां रामा रूवे, कोण आंसुडां लूए ?
फरी तपास न जुए, पोतानुं कुळ वगुए । २० ।
आघी धरे अलेखे, वगडामां उवेखे,
स्वामी न आवे तेखे, वेरीडा देव देखे । २१ ।
न जाणे नार मोरी, छे छत्रपतिनी छोरी,
अजगर गळी गोरी, चतुरानी शी चोरी ? २२ ।

जिसका हाथ थाम लेते हैं, उसे छोड़कर नहीं जाएँ । हम अबला (जन) हैं । (अतः) यह वेदना किससे कहें ? १५ जिस मानव जन को वह (स्त्री) प्राप्त हो गयी, जो (स्त्री) देवों (तक) को मन में नहीं लायी, उसे वन में छोड़ नहीं दें (देना चाहिए था) । उसे अपने पास रखें (रखना चाहिए था) । १६ सोने के पीढ़े पर कामिनी के साथ बैठें— थोड़े-से अन्याय (अपराध) के कारण उसे उजाड़ मार्ग में न त्यज दें । १७ अबला के लिए किसका बल ? वह तो कदली से (भी अधिक) कोमल होती है । वह (ऐसे समय) आँखों में जल भर लेती है । कर्म के फल कड़ुवे होते हैं । १८ वन में बाघ गरजते रहते हैं । उसके पाँवों में काँटे चुभकर टूट जाते हैं । दूसरे लोगों के कारण (दुख में) वह जलती रहती है; (परन्तु) उसका वह शठ स्वामी (पति) लज्जित नहीं होता । १९ वन में (जब) वह स्त्री रोती रहती है, तब कौन उसके आँसू पोंछता है । फिर से वह पुरुष उसकी खोज (तक) नहीं करता । वह अपने कुल की निन्दा करता है । २० बिना (उसके किसी दोष को) देखे, वह उसे निर्जन वन में उपेक्षित करके दूर कर देता है । तदनन्तर भी वह पति खोजने के लिए नहीं आता है —वैरी-स्वरूप देव यह देखते हैं । २१ पति यह नहीं जानता (ध्यान नहीं रखता) कि मेरी स्त्री (भी) किसी

नयणे आंसु रेडे, पारधी लागे केडे,
तारुणीने तेडे, छबीलीने छंछेडे । २३ ।
मळ्या लंपट लोको कामी, केम जीवे गजगामी ?
कुळने लागी खामी, न बोले शठ स्वामी । २४ ।
नीचपणुं नफेट, कुळ लजाव्युं नेट,
करी मासीनी वेठ, प्रेमदाए भर्युं पेट । २५ ।
कर्मनी लांबी दोरी, चढी शिर हारनी चोरी,
न जागे नाथ अघोरी, भांगो सिर इंधण धोरी । २६ ।
न करे प्रेमदानी मीट, वळी हवे आडी लीट,
पुरुष हैयाना धीट, मन जेहवां वज्रकीट । २७ ।
कहेतां नहीं आवडे, दुःखे हैयां धडधडे,
खोटुं आळ चडे, गगन त्रूटी पडे । २८ ।
पृथ्वी जाय पाताळे, सतीने जूठे आळे,
आचार भणी न भाळे, जाणे कूडी गाळे । २९ ।

छत्रपति राजा की कन्या है। उस गोरी को अजगर ने निगल डाला। इसमें उस चतुरा (नारी) की क्या चोरी (दोष) है। २२ वह नयनों से आँसू बहाती है, तो एक बहेलिया उसका पीछा करने लगता है। वह उस तरुणी को बुला लेता है, उस छबीली को छेड़ता है। २३ (तदनन्तर) वे लम्पट कामी लोग मिले। (इस स्थिति में) वह गजगामिनी जीवित (रहे तो) कैसे रहे। इससे कुल में कलंक लग जाता है, इसलिए उसका वह शठ पति (कुछ भी) नहीं बोलता। २४ नीचपना, निर्लज्जता ने कुल को निश्चय ही लज्जित किया। (अनन्तर) उस प्रमदा ने मौसी की बिना दाम लिये सेवा की और पेट पाला। २५ कर्म की डोरी लम्बी होती है। (फलस्वरूप) उसके सिर हार की चोरी चढ़ गयी। जो पति अघोरी होता है, उस पुरुष (स्वामी) के सिर पर यद्यपि डंडा भी तोड़ (पटक) दो, तो भी वह जग नहीं जाता। २६ यह सुनते हुए वह उस प्रमदा की दृष्टि से दृष्टि नहीं मिला रहा था। इसके अतिरिक्त उनके बीच (पर्दा-स्वरूप) आड़ी रेखा भी खींची हुई थी। पुरुष तो हृदय के कठोर होते है, जिनके मन तो वज्र के गोले होते हैं। २७ फिर भी उसके द्वारा कहने में (कुछ भी) नहीं आ रहा था। दुःख से उसका हृदय धड़क रहा था। उसके सिर पर झूठा आरोप चढ़ा था। (मानो) उसपर आकाश टूट पड़ा था। २८ (उसे जान पड़ा—) इस सती पर लगे झूठे दोषारोप से पृथ्वी पाताल में चली जाए। वह उसके विचार

जे को विश्वास करे, पुरुषनो आधार धरे,
ते घेलो शीद ठरे ? रोई रोई ने मरे। ३०।
खप करीने वरी, दुःखना अन्ते करी,
बाहुक कहो वात ए खरी, तेने कांई पूछशे हरि। ३१।
छे कर्मनी वसमी गति, भूंसी नव जाये रति,
शत्रु थयो प्रजापति, ब्रह्माने दया नथी। ३२।
भलानो वेरी ब्रह्मा, कठण ते क्रूरकर्मा,
लखे लेख कर्माधर्मा, क्लेशने घाले घरमां। ३३।
क्लेश घाले घर विषे, प्रजापति कठण घणुं,
बाहुकजीने प्रश्न पूछे, जोयुं डहापण तमतणुं रे। ३४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पूछशे हरि ते पुरुषने रे, जेणे प्रभवी नार रे,
बाहुक बळतुं बोलियो, सांभळ भीमककुमार रे। ३५।

(कथन) की ओर देख नहीं सकता था, जैसे कि वह कोई गन्दी गाली हो। २९ जो कोई स्त्री पुरुष का विश्वास करे और उसका आधार स्वीकार करे, वह पगली क्यों ठहरती है ? वह तो रो-रोकर मर जाती है। ३० उसने यत्न करके उस (पुरुष) का वरण किया और अपने दुःख का अन्त कर लिया था। हे बाहुकजी, कहिए, क्या यह बात सही है (न) ? तो क्या श्रीहरि उस (पुरुष) से कुछ पूछेंगे। ३१ कर्म की गति विषम होती है। वह रत्ती भर भी मिटायी नहीं जा सकती। प्रजापति ब्रह्मा शत्रु (सिद्ध) हो गये हैं। उन्हें कोई दया नहीं आती। ३२ ब्रह्मा भले लोगों के वैरी हो गये हैं। वे कठोर और क्रूर कर्म करनेवाले हैं। वे कर्म-धर्म का लेखा (हिसाब) लिखते हैं और घर के अन्दर क्लेश घुसेड़ देते हैं। ३३

प्रजापति घर के अन्दर क्लेश घुसेड़ देते हैं; वे बहुत कठोर हो गये हैं। (यह कहकर) उस दमयन्ती ने बाहुकजी से प्रश्न किया (कहा—) आपकी समझदारी देख ली (देखना चाहती हूँ)। ३४

जिस (भगवान) हरि ने नारी को उत्पन्न किया, क्या वे पुरुष से यह पूछेंगे ?' फिर (उत्तर में) बाहुक ने कहा, 'हे भीमक राजा की कन्या, सुनो'। ३५

कडवुं ६० मुं— (बाहुक-दमयन्ती-संवाद; बाहुक द्वारा नल रूप में प्रकट हो जाना)

राग छंद भुजंगीनी चाल

दहे देह विजोगनी व्रेहज्वाळा,
मारे मर्मनां बाण, पूछे प्रश्न बाळा;
तारी बुद्ध बाहुक बळवंत दीस,
कांई जाणवा भेद मम मंन हीसे। १।
दीसे शारदा वास तम जीभ अग्रे,
भलुं कीधुं पधार्या भीमक नग्रे;
विनययुक्त दीसो सर्व सिद्धिवान,
भूत भविष्य जाणो तमो वर्तमान। २।
एक शोभिता पुरुष ते मूर्ख मोटा,
जेवा सीपमां मोतीना दाणा खोटा;
एक रूपहीण पुरुष बहु गुण भरिया
जेम साचा हीरा रजे जुक्त करिया। ३।
बाहुक बापना सम जो वृथा भाखुं,
तम उपर विभु ओवारी नाखुं;
इंद्रवारुणीनां फळ करमां साये,
पण भक्ष करतां तेना प्राण जाये। ४।

कड़वक—६० (बाहुक-दमयन्ती-संवाद; बाहुक द्वारा नल रूप में प्रकट हो जाना)

विरह की ज्वाला में उस बाला दमयन्ती की देह जल रही थी। वह मार्मिक वचन के बाण मारने लगी और उसने (बाहुक से) यह प्रश्न पूछा— ' हे बाहुकजी, आपकी बुद्धि तो बलवान (प्रौढ़, कुशाग्र) दिखायी दे रही है। अतः कुछ रहस्य जान लेने के लिए मेरा मन आतुर होता जा रहा है। १ शारदा (विद्या और वाणी की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती) का आपकी जिह्वा की नोक पर निवास रहा दिखायी दे रहा है। आपने यह अच्छा किया कि आप भीमक राजा के नगर में पधारे हैं। आप विनय से युक्त तथा (समस्त) सिद्धियों से युक्त दिखायी दे रहे हैं। आप भूत, भविष्य और वर्तमान को जानते हैं। २ एक (केवल) शोभा (सुन्दरता) से युक्त पुरुष बड़े मूर्ख हो सकते हैं, जैसे सीप में मोती का दाना खोटा भी हो सकता है। (उधर) कोई-कोई रूपहीन पुरुष बहुत (सद्) गुणों से परिपूर्ण हो सकते हैं, जैसे सच्चा हीरा भी धूल से युक्त होता है। ३ यदि मैं व्यर्थ (की बात) बोलूँ, तो हे बाहुकजी, मुझे पिता की

एक रूपवंत नारी को नर नीरख्यो,
तेजवंत शोभे कोटि कंदर्प सरखो;
धरे छत्र सर्वत्र जेनी आण वरते,
करे नवनवा भोग जन नित्य प्रत्ये। ५ ।
एवा पुरुषने मोही कोई नार पहेली,
तपतेज सरखी जीवे गर्व-घेली;
नर अमर मुनिवर तणी आश तोडी,
पंखीराजनां वचन पर प्रीत जोडी। ६ ।
तज्यां मात ने तात पियर पडोशी,
नव जाण्युं जे नाथजी छे सदोषी;
सोप्यां तन, मन, प्राण निर्दोष जाणी,
सुणो बाहुकजी, कहुं कर्मकहाणी। ७ ।
जेम पारधी कपटना कण चणावी,
पाडे पंखीने फंदमां स्नेह जणावी;
वेधे मृगने जेम घंटा वजाडी,
तेम प्रेमदा प्रेमने पाश पाडी। ८ ।

सौगन्ध है— आप पर मैं (समस्त) वैभव निछावर कर देती हूँ। इन्द्र-वारुणिका का फल हाथ में (ही) शोभा देता है; परन्तु उसका सेवन करने पर खानेवाले के प्राण निकल जाते हैं। ४ एक रूपवती नारी ने किसी पुरुष को देखा। वह तेजस्वी पुरुष कोटि-कोटि कामदेवों जैसा शोभायमान था। वह पुरुष, जिसकी आन सर्वत्र फिर रही थी, (राज-) छत्र धारण किये हुए था। वह पुरुष नित्यप्रति नये-नये सुखोपभोग करता था। ५ कोई स्त्री ऐसे पुरुष के प्रति मोहित हो गयी। तप के तेज जैसी वह अभिमान से उन्मत्त होकर जीवित थी। नरों, अमरों (देवों), मुनिवरों की आशा छोड़कर उसने पक्षिराज (हंस) के वचन के आधार पर उस (नर के प्रति) प्रीति जोड़ ली। ६ उसने माता और पिता, पीहर, पड़ोसियों को छोड़ दिया और उस (पुरुष) को दोष-हीन समझकर उसको अपने मन, मन और प्राणों को सौंप दिया। हे बाहुकजी, सुनिए। मैं (उसकी) कर्म-कहानी (दुर्दैव की कथा) कहती हूँ। ७ जिस प्रकार कोई बहेलिया कपट से कण चुगाते हुए, स्नेह दर्शाते हुए पक्षी को फंदे में फँसाता है, जिस प्रकार घण्टा बजाते हुए वह मृग को मोहित कर लेता है, उसी प्रकार उस (पुरुष) ने उस प्रमदा को प्रेम के पाश में फँसा दिया। ८ भोग-विलास का बहुत

बहु रंगविलासनां सुख देखाडी,
गया हाड अंते ते विपत्त पाडी;
ज्यां कंद ने मूळ नहीं फळ पाणी,
तेवे ठाम मूकी करी अनाथ राणी । ९ ।

न कोये करे एवुं कर्म कीधुं,
अपराध पाखे घणुं दुःख दीधुं;
शत खंड कीधी ते विजोग शस्त्रे,
फरी वनमां तारुणी अर्ध वस्त्रे । १० ।

त्रण दिवस त्रण रयणी वनमांहे भटकी,
निर्दय नाथने वात शी मन अटकी;
ग्रही अजगरे सुंदरी शिथिल कीधी,
मळ्यो पारधी ईश्वरे राखी लीधी । ११ ।

कही डाकिणी शाकिणी ने शीहारी,
पाश पहाण पाटु बहु मार मारी;
पराधीन थईने नीचुं काम करियुं,
धरी दासी नाम दुर्भर भरियुं । १२ ।

चडी चोरी माथे मोती माळ केरी,
करतां प्रीत वहालां थयां सर्व वेरी;

सुख दिखलाकर अन्त में वह हाथ से निकल गया। उसने (इस प्रकार उसे) विपत्ति में डाल दिया। उसने अपनी रानी (स्त्री) को अनाथ बनाते हुए उस प्रकार के स्थान पर छोड़ दिया, जहाँ कन्द और मूल, फल और पानी (तक) नहीं था'। ९ कोई ऐसा कर्म नहीं कर सकेगा, ऐसा (कर्म) उसने किया। बिना किसी अपराध के उसे बहुत दुःख दिया। उसे वियोग रूपी शस्त्र से सौ-सौ खण्ड कर डाला। वह तरुणी आधे वस्त्र में वन में विचरण करती रही। १० वह तीन दिन और तीन रात वन के अन्दर घूमती रही। उसके निर्दय स्वामी के मन में कौन-सी बात अटकी रही? एक अजगर ने उस सुन्दरी को पकड़कर शिथिल कर डाला। (तब संयोग से) उससे एक बहेलिया मिला और ईश्वर ने उसकी रक्षा की। ११ (लोगों ने) उसे डाकिनी, शाकिनी और शीहारी (वेश्या) कहा और उस पर पाशों, पाषाणों, बातों से बहुत मार की। पराधीन होकर उसने निम्न श्रेणी का काम किया और दासी नाम धारण करके पेट पाला। १२ उसके सिर पर मोती-माला की चोरी चढ़ गयी।

त्रण वर्ष नाख्यां श्वेत वस्त्र पहेरी,
नहीं कंकु काजळ नहीं नाडु नहेरी । १३ ।
हविष्यान्न पराधीन अन्न पामी,
तोये तेणीए न तज्यो निज स्वामी;
तप नियम राखी निज देह बाळ्यो,
गृहस्थराजनी नारे संन्यास पाळ्यो । १४ ।
कहो बाहुकराय, ए धर्म केवो,
घटे नाथने एवो छेह देवो ?
सर्व पापमां श्रेष्ठ विश्वासघात,
तेने पूछशे कहो कांई वैकुंठनाथ ? १५ ।
बाहुक एह प्रश्ननो उत्तर दीजे,
एवा कपटी पुरुषने शुंय कीजे;
सुणी मर्म वाणी नळनाथ रीझ्यो,
जोवा प्रीत विशेष महाराज खीज्यो । १६ ।
सुणो प्रश्नना उत्तर भीमकबाळा,
ते पुरुषने प्रभवी प्रेमज्वाळा;
परी सुंदरी प्रेमदा साधु जाणी,
मोह्यो नाथ तेने कीधी पट्टराणी । १७ ।

प्रेम करने पर भी समस्त प्रिय जन वैरी हो गये। श्वेत वस्त्र धारण करके उसने तीन वर्ष व्यतीत किये; न कुंकुम-काजल लगाया, न बिन्दी तथा तेल लगाया। १३ पराधीन स्थिति में (रहते हुए) उसने हविष्यान्न रूप अन्न पाया। तो भी उसने अपने पति का त्याग नहीं किया (पति का विस्मरण नहीं होने दिया)। तप, नियम (व्रत) रखते हुए वह अपनी देह को जलाती रही। गृहस्थ और राजा की उस स्त्री ने संन्यास धर्म का पालन किया। १४ हे बाहुक-राज, कहिए यह कैसा धर्म है ? क्या इस प्रकार विश्वासघात करना उसके पति के लिए उचित है ? विश्वासघात करना समस्त पापों में श्रेष्ठ (बड़ा) है। कहिए, वैकुण्ठनाथ भगवान उससे कुछ पूछेंगे ? १५ हे बाहुकजी, इस प्रश्न का उत्तर दीजिए— ऐसे कपटी पुरुष से क्या करें ?' ऐसी मर्म-भरी बात सुनकर नलनाथ रीझ गये। वे महाराज (नल अपने प्रति) ऐसी विशेष प्रीति देखकर खीझ उठे। १६ (वे बोले—) 'हे भीमक-बाला, सुनो। उस पुरुष में प्रेम की ज्वाला उत्पन्न हुई। उसने उस सुन्दर प्रमदा को साध्वी माना। उसका वह स्वामी उस पर मोहित हुआ और उसने उसे

बीजी नारीना सामुं न स्वप्ने जोयुं,
गुणहीण स्त्री साथ आयुष्य खोयुं;
सगां मित्रनी प्रीत ते नाथे फेडी,
गयो पुरुष तीर्थे नारी साथ तेडी। १८।
वने सात उपवास भमतां रे कीधा,
मच्छ राखवा नारने त्रण दीधां;
कीधो श्रम बीजां मच्छ नव लाधां,
पेली पापिणी नारे ते मच्छ खाधां। १९।
कहो भीमक बाळा थई वात एवी,
पूछे बाहुक प्रश्न ते नार केवी ?
जोतां छे अपराध ए नोहे नानो,
तेने मूकतां नाथनो वांक शानो ? २०।
ग्रही अजगरे सुंदरी आंसु ढाळे,
तेम कंठ डस्यो हशे सर्प काळे;
थयुं शाकिनी नाम अपवाद एवो,
कह्यो हशे भरतारने भूत जेवो। २१।

पटरानी बना लिया। १७ उसने स्वप्न में भी दूसरी स्त्रियों के सम्मुख (स्त्रियों की ओर) नहीं देखा। (परन्तु उसे पता चला कि) उसने गुण-विहीन स्त्री के साथ अपनी आयु खोयी है। उस पति ने अपने सगे-मित्रों से प्रीति (-सम्बन्ध) को तोड़ डाला और वह पुरुष साथ में उस स्त्री को लेकर तीर्थक्षेत्र की ओर चला गया। १८ उसने वन में भ्रमण करते-करते सात (दिन) उपवास किया। (तदनन्तर) उसने तीन मछलियाँ अपने स्त्री के पास रखने के लिए दे दीं। उसने परिश्रम किया, (फिर भी) वह अन्य मछलियाँ नहीं प्राप्त कर सका। (इधर) उस पापिणी नारी ने वे मछलियाँ खा डालीं। १९ हे भीमक-बाला, कहो। (क्या) बात ऐसी हुई है'। फिर बाहुक ने यह प्रश्न पूछा— 'वह स्त्री कैसी होगी ? देखने पर यह अपराध छोटा नहीं है। तो उसे परित्यक्त करने में उस पति का कैसा दोष'? २० (दमयन्ती बोली—) 'अजगर ने उस नारी को पकड़ लिया। वह आँसू बहाती थी'। (बाहुक बोला—) 'उसी प्रकार, काल जैसे सर्प ने उस पति के गले में काट लिया होगा'। (दमयन्ती ने कहा—) 'उसका नाम शाकिनी हुआ; ऐसी उसकी निन्दा हुई'। (बाहुक बोला—) '(लोगों ने) उसके पति को भूत जैसा कहा होगा'। २१ (दमयन्ती ने कहा—) 'जिस प्रकार उस स्त्री ने दूसरे

जेम स्त्रीए कीधी परघेर वेठ,
तेम तेणे भयुं हशे परघेर पेट;
कोण कोनां दुःखने कहीने रोशे ?
बुद्धिमान प्राणी कर्म सामुं जोशे । २२ ।
धोळो साळू पहेरी स्त्रीए पिंड पीड्यो,
काळुं कामळुं ओढीने कंथ हींड्यो;
ए प्रश्न उत्तर कह्यां में विचारी,
वळी पूछ्युं होय तो पूछ नारी । २३ ।
कही मर्मनी वात निज नाथ जाण्यो,
भाग्यो भेद मनमांहे उत्साह आण्यो;
एवी गुह्य वाणी बीजो कोण भाखे ?
एवुं कोण बोले नळ नाथ पाखे ? २४ ।
थयुं भेटवा मन मर्याद नाठी,
अंतरपटनुं वस्त्र गयुं रे फाटी;
गजगामिनी भामिनी प्रेम माती,
आवी नाथ पासे गुणग्राम गाती । २५ ।

के घर में बेगारी की...... '। (तो बाहुक बोला—) 'उसने भी दूसरे के घर में अपना पेट भर लिया होगा। (इस स्थिति में) कौन किसके दुःखों को देखकर रोएगा ? बुद्धिमान प्राणी तो सामने कर्म (के फल) को देखता है '। २२ (दमयन्ती बोली—) '(इधर) श्वेत साड़ी पहनकर उसने अपने शरीर को पीड़ित किया। ' (बाहुक बोला—) 'तो (उधर) उसका पति काला कम्बल पहनकर घूमता रहा। तुम्हारे प्रश्न के ये उत्तर मैंने सोच-विचार कर कहे हैं। तो (फिर) इसके अतिरिक्त कुछ हो, तो हे नारी, पूछ लो '। २३ ऐसी मार्मिक बात कहने पर उसे दमयन्ती ने अपना पति ही समझा। (उसके प्रति अनुभव होनेवाला अब तक का) अन्तर (दुराव का भाव) भाग गया। वह मन में उत्साह लायी (अनुभव करने लगी)। (उसे लगा—) ऐसी गुह्य बात (नल के अतिरिक्त) और दूसरा कौन कह सकता है ? मेरे नाथ नल के सिवा ऐसा कौन बोल सकता है ? २४ उसे उनसे मिलने की इच्छा हुई, तो (स्त्री-) मर्यादा का भाव भाग गया। उन दोनों के बीच वाले अन्तर रूपी पर्दे का वस्त्र फट गया। तो वह गजगामिनी भामिनी प्रेम से मदमाती होकर अपने पति के पास उनके गुण-समुदाय का गान करती हुई आ गयी। २५ उनकी प्रदक्षिणा करके वह उनके पाँव लगी और अपने गौरव का भाव धारण

करी प्रदक्षिणा पछे पाय लागी,
बोलो नैषधनाथ कह्युं मान मागी;
अपराध प्राणी तणा कोटि होये,
परिब्रह्म तो करुणा मीट जोये । २६ ।
वनमांहे मूकी अपराध पाखी
छे मच्छ आहारना विष्णु साखी;
तम चरण विषे मन राखुं,
तम पाखे हुं पेटमां धूळ नाखुं । २७ ।
अमो अबळा नारीमां बुद्धि थोडी,
करे विनति प्रेमदा पाण जोडी;
नथी रूपनुं काम रे भूप मारा,
थई किंकरी अनुसरुं चरण तारा । २८ ।
सुणी विनति नारनी दीन वाणी,
उठ्यो बाहुक अंतर प्रीत आणी;
कारकोटुक नागनो मंत्र भाखी,
जीर्ण कामळुं दूर दीधुं रे नाखी । २९ ।
त्रण नागनां वस्त्र परिधान कीधां,
हरखी सुंदरी कारज सर्व सीध्यां;

करते हुए बोली, ' कहिए हे निषध-नाथ, किसी प्राणी के कोटि-कोटि अपराध होने पर भी परब्रह्म (भगवान) उसकी ओर करुणा (दया) दृष्टि से ही देखते हैं। २६ आपने मुझे बिना किसी अपराध के वन में त्यज दिया। फिर भी मछलियों को खाने के सम्बन्ध में भगवान विष्णु साक्षी हैं। मैं आपके चरणों में ही मन रख लेती हूँ। बिना आपके मैं पेट में धूल डालूंगी। २७ मुझ जैसी अबला नारी में बुद्धि अल्प होती है'। (ऐसा कहकर) उस प्रमदा ने हाथ जोड़कर विनती की— ' हे राजा, मुझे रूप से कोई काम नहीं है। मैं तो दासी होकर आपके चरणों का अनुसरण करूंगी '। २८ उस स्त्री की दीन वाणी सुनकर बाहुक अन्तःकरण में प्रीति लाकर उठ गये। (फिर) उन्होंने कर्कोटक नाग द्वारा दिया हुआ मंत्र पढ़ा; और (ओढ़े हुए) जीर्ण कम्बल को दूर फेंक दिया। २९ उन्होंने उस नाग द्वारा प्रदत्त तीन वस्त्रों को धारण किया। यह देखकर वह सुन्दरी आनन्दित हुई। उसके समस्त कार्य सिद्ध हो गये। जब महाराज नल ने अपना मूल रूप ग्रहण किया, तो ससुर के घर के समस्त (दुःख रूपी) अन्धकार का तत्काल हरण हो गया। (अनन्तर) जिस

जव मूळगुं रूप महाराज धरियुं,
श्वशुरधामनुं तिमिर ने सद्य हरियुं,
जेम तरुवर पूंठे वींटळाय वेली,
तेम कंथने वळगी रही हर्षघेली । ३० ।

वलण (तर्ज बदलकर)

हर्षघेली सुंदरी, भेटी भीडी बाथ रे,
जयजयकार घरमां थयो, देखी नैषधनाथने रे । ३१ ।

प्रकार लता तरुवर के पीछे (चारों ओर) लिपटी रहती है, उसी प्रकार वह आनन्द से पागल-सी हुई नारी अपने पति से लिपटी रही । ३०

वह आनन्द से पागल-सी हुई सुन्दरी आलिंगन करते हुए पति से मिल गयी । तो निषधराज को देखने पर घर में जय-जयकार हो गया । ३१

कडवुं ६१ मुं—(नल का भीमक आदि से मिलना)

राग सारंग

वरत्यो जयजयकार हो, नैषधनाथने नीरखी जी,
फरी फरी लागे पाय हो, साहेली हृदया हरखी जी । १ ।
नळदमयंतीनी जोडी हो, जोईने दोडी दास जी,
श्वास भरी साहेली हो, आवी भीमकनी पास जी । २ ।
रायजी वधामणी दीजे हो, अद्‌भुत हर्षनी वात जी,
ऋतुपर्णनो सेवक हो, नीवडियो नळनाथ जी । ३ ।

कड़वक—६१ (नल का भीमक आदि से मिलना)

निषध के स्वामी नल को (लोगों द्वारा) देखते ही जय-जयकार हो गया । (दमयन्ती की) सखियाँ हृदय में आनन्दित होकर पुनःपुनः उनके पाँव लगती रहीं । १ नल और दमयन्ती की जोड़ी को देखते ही दासियाँ दौड़ीं । फूलती हुई साँस के साथ, अर्थात् हाँफते-हाँफते वे सखियाँ भीमक के पास आ गयीं । २ (वे बोलीं—) 'हे राजाजी, बधावा दीजिए । अद्‌भुत हर्ष की बात है । ऋतुपर्ण राजा का सेवक नलराज निकला । ३ उन्होंने बाहुक का रूप त्यज दिया और अपने मूल स्वरूप

बाहुक रूप परहर्युं हो, धर्युं मूळगुं स्वरूप जी,
सुणी सैरंद्रिनी वाणी हो, हरख्यो भीमक भूप जी। ४।
वाजे पंच शब्द निशान हो, गुणीजन गाये वधाई जी,
पुण्यश्लोकने मळवा हो, वर्ण अढारे धाई जी। ५।
नाना भातनी भेट हो, प्रजा भूपने लावे जी,
करे पूजा विविध प्रकारे हो, मुक्ताफळ कुसुम वधावे जी। ६।
तोरण हाथा देवाये हो, मानुनी मंगळ गाये जी,
दे मुनिवर आशिष हो, अभिवन्दन बहु थाये जी। ७।
वाजे ढोल निशान हो, मृदंग भेर नफेरी जी,
समग्र नग्रे आनंद वरत्यो हो, शणगार्यां चौटा शेरी जी,। ८।
मन उत्साह पूरण व्याप्यो हो, भीमके दीधां बहु दान जी,
गया अंतःपुरमां राय हो, दीठुं रूप निधान जी। ९।
कांति तपे चंद्र भानु हो, विलसे शक्र समान जी,
कंदर्प कोटि लावण्य हो, दीठो जमाई जाज्वल्यमान जी। १०।

को धारण किया'। दासियों की यह बात सुनकर राजा भीमक आनन्दित हो उठे। ४ पाँच (प्रकार के) शब्दों वाले वाद्य[1] तथा निसान (धौंसे) बजने लगे। गुणीजन (गायक आदि कलाकार) बधाई के गीत गाने लगे। पुण्यश्लोक राजा नल से मिलने के लिए अठारहों वर्णों[2] के लोग दौड़े। ५ प्रजाजन नाना प्रकार के उपहार राजा के लिए ले आये। उन्होंने विविध प्रकार से उनका पूजन किया और मोतियों तथा फूलों से (मोती और फूल समर्पित करते हुए) उनका स्वागत किया। ६ राजद्वार पर बन्दनवार बनाये तथा हस्त-मुद्राएँ अंकित कीं। मानिनियाँ (नारियाँ) मंगलगीत गाने लगीं। श्रेष्ठ मुनियों ने आशीर्वाद दिया। उनका बहुत अभिवादन (स्तुति) हो गया। ७ ढोल, नगाड़े, मृदंग, भेरियाँ, नफेरियाँ जैसे बाजे बज रहे थे। समस्त नगर में आनन्द छा गया। बाज़ार (चौक) और गलियाँ सजाये गये। ८ (राजा भीमक के) मन को पूर्ण रूप से उत्साह व्याप्त कर गया। उन्होंने बहुत दान दिये। अनन्तर राजा नल अन्तःपुर में गये। (वहाँ) नारी-जनों ने उन रूप-निधि को देखा। ९ उनकी कान्ति चन्द्र-सूर्य की-सी तप रही थी। वे इन्द्र-सदृश (जान पडते) थे। उनका लावण्य कोटि-कोटि कामदेवों का (-सा) था।

१ पंच शब्द— तंत्री, ताल, झाँझ, नगाड़ा और तुरुही नामक पाँच प्रकार के वाद्य।

२ अठारह वर्ण अर्थात जातियाँ— ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, कुम्हार, अहीर, तेली, पांचाल (सुनार, बढ़ई, लुहार, ठठेरा और पत्थरतराश), बुनकर, रँगरेज़, दर्जी, नाई, बहेलिया, मातंग, गड़रिया, धोबी, माँग और चमार।

पड्यो भीमक पूज्यने पाये हो, हसी आलिंगन दीधुं जी,
आप्युं आसन आदर मान हो, प्रीते पूजन कीधुं जी । ११ ।
अर्घ आरती धूप हो, भूपतिने पूजे भूप जी,
नखशिख लगे फरी नीरखे हो, जोई जोई रूप जी । १२ ।
श्वसुर श्वशुरपत्नी हो, शालक साळाहेली जी,
दमयंतीने घणुं पूजे हो, गाये दासी साहेली जी । १३ ।
लक्ष्मीनारायण शिवउमिया हो, तेवुं दंपती दीसे जी,
दीधुं मान श्वशुरवर्गे हो, पूछ्युं नैषध ईशे जी । १४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नैषध ईशे पूछियुं, कुशळ क्षेमनी वात रे,
समाचार परस्पर जाण्यो, हरख्यो सघळो साथ रे । १५ ।

ऐसे देदीप्यमान दामाद को (भीमक ने) देखा । १० राजा भीमक पूजनीय नल के पाँव लगे और अनन्तर हँसते हुए उन्होंने उनका आलिंगन किया । ११ फिर राजा (भीमक) ने अर्घ्य, आरती, धूप (जैसे उपचारों) से भूपति नल का पूजन किया । वे फिर उनके नख से शिखा तक के रूप को बार-बार देखकर ध्यान से निरखते रहे । १२ ससुर, ससुर-पत्नी (सास), श्यालकों (सालों)-सलहजों ने दमयन्ती का बहुत पूजन किया । उस वक़्त दासियाँ और सखियाँ (गीत) गा रही थीं । १३ जिस प्रकार लक्ष्मी-नारायण, उमा-शिवजी (दिखायी देते) हों, वैसे ही ये पति-पत्नी (शोभायमान) दिखायी दे रहे थे । (अनन्तर) श्वशुर वर्ग ने (तथोचित) सम्मान किया और निषधेश नल से पूछा । १४

(भीमक आदि ने) निषधेश नल से कुशल-क्षेम की बात पूछी । उन्होंने एक-दूसरे से समाचार जान लिया, तो सब साथ में (तत्काल) आनन्दित हो गये । १५

कडवुं ६२ मुं— (अयोध्यापति ऋतुपर्ण का परिताप)

राग सामेरी

नळरायनुं प्रगट सांभळी, संसार सुखियो थाय रे,
परम लज्जा पामियो, दुःखी थयो ऋतुपर्ण राय।
हावां हुं शुं करुं रे ? १।

में सेवक कहीने बोलावियो, नव जाण्यो नैषधराय रे,
धिक् पापी हुं आत्मा, हवे पाडुं मारी काय रे।
हावां हुं शुं करुं रे ? २।

जव मन कीधुं देह मूकवा, तव हवो हाहाकार रे,
जाण थयुं अंतःपुरमां, नळ भीमक आव्या बहार।
हावां हुं शुं करुं रे ? ३।

हां हां कहीने हाथ झाल्यो, मळ्या नळ ऋतुपर्ण रे,
ओशियाळो अयोध्यापति, जई पड्यो नळने चरण।
हावां हुं शुं करुं रे ? ४।

पुण्यश्लोक पावन सत्य साधु, जाय पातिक लेतां नाम रे,
तेवा पुरुषने में कराव्युं, अश्वनुं नीचुं काम।
हावां हुं शुं करुं रे ? ५।

कड़वक— ६२ (अयोध्यापति ऋतुपर्ण का परिताप)

नलराज के प्रकट होने का समाचार सुनकर (समस्त) संसार सुखी हो गया। (परन्तु) राजा ऋतुपर्ण परम लज्जा को प्राप्त हुए और दुःखी हो गये। (उन्होंने सोचा— कहा—) 'अब मैं क्या करूँ ? १ मैंने सेवक के रूप में उन्हें बुला लिया (कहला लिया); मैंने निषधराज को नहीं पहचाना। मुझे धिक्कार है— मैं आत्मा से पापी (पापात्मा) हूँ। अब मैं अपनी देह को गिरा दूंगा। मैं अब क्या करूँ ?' २ जब उन्होंने देह को त्यज देने की इच्छा (व्यक्त) की, तब हाहाकार मचा। अन्तःपुर में इसकी जानकारी हुई, तो नल और भीमक बाहर आ गये। (ऋतुपर्ण सोच रहे थे—) 'अब मैं क्या करूँ ?' ३ 'हाँ', 'हाँ' कहकर उन्होंने उनका हाथ पकड़ा। नल और ऋतुपर्ण गले लगकर मिले। अयोध्यापति ऋतुपर्ण लज्जित थे। वे जाकर नल के पाँव लग गये (और बोले—) 'अब मैं क्या करूँ ?' ४ ये (नलराज) पुण्यश्लोक हैं, पावन हैं, सत्यवादी साधु हैं। उनका नाम लेने से पाप नष्ट हो जाते हैं। ऐसे पुरुष द्वारा

जेनुं दर्शन देव इच्छे, सेवे सहु नरनाथ रे,
ते थई बेठा मम सारथि, ग्रही पराणो हाथ।
हावां हुं शुं करुं रे? ६।

शत सहस्र जेणे जग्न कीधा, मेरु तुल्य खरच्यां धंन रे,
ते पेट भरी नव पामिया, हुं पापीने घेर अंन।
हावां हुं शुं करुं रे? ७।

जेनां वस्त्रथी लाजे विद्युल्लता, हाटक मूके मान रे,
ते महाराज मारे घेर वस्या, करी कांबळुं परिधान।
हावां हुं शुं करुं रे? ८।

में टुंकारे तिरस्कार कीधो, हस्या पुरना लोक रे,
त्रण वरस दोहेले भोगव्यां, में न जाण्या पुण्यश्लोक।
हावां हुं शुं करुं रे? ९।

आळसुने घेर गंगा आव्यां, उठी नहीं नाह्यो मूर्ख रे,
ते गति मारे आज थई, में जाण्या नहीं महापुरुष।
हावां हुं शुं करुं रे? १०।

मैंने अश्व सम्बन्धी निम्न स्तर का काम करवा लिया। अब मैं क्या करूँ? ५ जिनके दर्शन (करने) की देव इच्छा करते हैं, समस्त नरपति जिनकी सेवा करते हैं, वे मेरे सारथी होकर (रथ पर) बैठ गये और हाथ में उन्होंने पैना धारण किया। अब मैं क्या करूँ? ६ जिन्होंने शत सहस्र (एक लाख) यज्ञ सम्पन्न किये, जिन्होंने (दान देने में) मेरु पर्वत (के आकार) के समान धन खर्च किया, वे मुझ पापी के घर पेट भर अन्न को प्राप्त नहीं हुए। अब मैं क्या करूँ? ७ जिनके वस्त्र के सामने बिजली लज्जित हो जाती है, सोना (अभि-) मान छोड़ देता है, वे महाराज नल कम्बल धारण करके मेरे घर में निवास कर रहे थे। अब मैं क्या करूँ? ८ मैंने उन्हें तुकारते हुए ('तू', 'तू' कहते हुए) उनके प्रति तिरस्कार (प्रदर्शित) किया; नगर के लोग उन्हें हँसते थे। मैंने उन्हें तीन बरस दुःखों का भोग करा दिया। मैं उन पुण्यश्लोक (राजा) को नहीं पहचान पाया। अब मैं क्या करूँ? ९ (यह तो ऐसा ही हुआ कि) किसी आलसी के घर गंगाजी आ गयीं और उठकर वह मूर्ख उन (के जल) में नहीं नहा पाया। आज वही गति मेरी हुई। मैंने उन महापुरुष को नहीं पहचाना। अब मैं क्या करूँ? १० (यह तो ऐसा ही हुआ) जिस प्रकार धराधर शेष किसी केंचुए के वर गया हो, अथवा जिस

श्रावणकीटने घेर जाये, जेम धराधर शेष रे,
जेम नीच मनुष्यने घेर, जाये भिक्षाने महेश।
हावां हुं शुं करुं रे? ११।
जेम चकलीने माळे आवे, गरुड गुणभंडार रे,
तेम मारे घेर आवी वस्या, वीरसेनकुमार।
हावां हुं शुं करुं रे? १२।
जेम कृपणने घेर कमळा वसियां, पेर न प्रीछे व्ययतणां रे,
तेम मारे घेर नळ वस्या जेम, भीलने घेर पारसमणि।
हावां हुं शुं करुं रे? १३।
जेम अंध पत्नीतणां आभूषण ते, वृथा सहु शणगार रे,
जेम तीव्र आयुध कायरने कर, मर्कट मुक्ताहार।
हावां हुं शुं करुं रे? १४।
कळश अमृतनो भर्यो को, मूरखने प्राप्ति थई रे,
छे भूर भोगी वारुणीनो, सुधापान प्रीछे नहीं।
हावां हुं शुं करुं रे? १५।

प्रकार शिवजी भिक्षा के लिए किसी नीच मनुष्य के घर जाएँ (उसी प्रकार पुण्यश्लोक नलराज मेरे घर आये)। अब मैं क्या करूँ? ११ जिस प्रकार किसी चिड़िया के घोंसले में गुणों का भण्डार गरुड़ आ गया हो, उसी प्रकार मेरे घर वीरसेनकुमार नल आकर बस गये थे। अब मैं क्या करूँ? १२ जिस प्रकार किसी कृपण के घर (धन की अधिष्ठात्री देवी) लक्ष्मी निवास कर रही हो और वह व्यय की पद्धति यों (खर्च के मार्गों को) नहीं जानता-समझता हो, जिस प्रकार किसी (ऐसे) भील के घर पारसमणि रह गया हो (जो उसकी महत्ता को नहीं जान सकता), उसी प्रकार मेरे घर में नल ने निवास किया (और मैं अनाड़ी ने उन्हें नहीं पहचाना)। अब मैं क्या करूँ? १३ जिस प्रकार अन्धे मनुष्य की स्त्री के आभूषण और उसके द्वारा किया हुआ समस्त शृंगार (उसके लिए) व्यर्थ होता है, जिस प्रकार डरपोक व्यक्ति के हाथ में तीक्ष्ण आयुध (हथियार व्यर्थ) होता है, मर्कट के लिए मोतियों का हार (व्यर्थ) होता है, उसी प्रकार मुझ मूढ़ के घर में नल का निवास करना व्यर्थ सिद्ध हुआ। अब मैं क्या करूँ? १४ (किसी ने) अमृत से कलश भर दिया और उसकी प्राप्ति किसी मूर्ख को हो गयी हो और वह मूर्ख बारुणी का सेवन करनेवाला हो, तो वह अमृत-पान (का महत्त्व) समझ नहीं पाता। (उसी प्रकार, मुझ जैसे मूर्ख के घर में नल का निवास हो गया था और मैंने उन्हें नहीं

निश्वास मूके ने कंठ सूके, थई भूपने वेदनाय रे,
अपराध विचारी पोतानो, ऋतुपर्ण दुखियो थाय ।
हावां हुं शुं करुं रे ? १६ ।

पुण्यश्लोकने पाये लागे, फरी फरी करे विनति रे,
ए कृतकर्मनां कोण प्रायश्चित ? भर्यां लोचन भूपति ।
हावां हुं शुं करुं रे ? १७ ।

पावकमांहे परजळुं के, हळाहळ भक्ष करुं रे,
जीववुं मारुं धिक् छे, देह हुं निश्चे परहरुं ।
हावां हुं शुं करुं रे ? १८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

परहरुं देह माहरो, गोझारो जीवीने शुं करुं रे ?
ऋतुपर्णनुं परम दुःख देखी, समाधान नळे कर्युं रे । १९ ।

पहचाना) । अब मैं क्या करूँ ?' १५ (राजा ऋतुपर्ण) ने (इस प्रकार कहते हुए) साँस ली और उनका गला सूख गया । उन्हें वेदना अनुभव हो रही थी । ऋतुपर्ण अपने अपराध का विचार करते हुए दुःखी हो गये । (वे बोले—) 'अब मैं क्या करूँ ?' १६ वे पुण्यश्लोक नल के पाँव लगे और बार-बार उनसे विनती करते रहे । (वे बोले—) 'मेरे किये इस कर्म का कौन प्रायश्चित्त है ?' फिर राजा ने आँखों को (आँसुओं से) भर लिया । (उन्होंने कहा—) 'अब मैं क्या करूँ ? १७ क्या मैं आग में जल जाऊँ, अथवा क्या मैं हलाहल का सेवन करूँ ? मेरे जीवित रहने को धिक्कार है । मैं निश्चय ही देह को त्यज दूंगा । अब मैं (इसके सिवा) क्या करूँ ? १८

मैं अपने देह को त्यज देता हूँ । मैं गो-हत्यारा जीवित रहकर क्या करूँ ?' (यह सुनकर) नलराज ने ऋतुपर्ण के परम दुःख को देखकर (जानकर) उन्हें सान्त्वना दी । १९

कडवुं ६३ मुं—(नलराज द्वारा ऋतुपर्ण को सान्त्वना देना)

राग मारु

ऋतुपर्णनी पीडा जाणी, नैषधनाथ बोल्या त्यां वाणी,
न थईए कायर आंसु आणी, एम कही लोह्यां लोचन पाणी। १।
आपत्काळ कर्म शुं कहीए ? जे जे दुःख पडे ते सहीए,
कोने आशरे निश्चे जईए ? पंच रात्रि सेवक थई रहीए। २।
गुप्त रह्यानुं कारज सीधुं, मारुं दुःख तमे हरी लीधुं,
जे जननीनुं पय में पीधुं, तेणे एवडुं सुख नथी लीधुं। ३।
दस मास ते पेटमां राखे, अधिक थाय तो ओछुं भाखे,
त्रण वरस लगी कोण राखे ? भलाई तमारी थई जुग आखे। ४।
ज्यां लगे संपत्ति होय, त्यां लगे प्रीत करे सर्व कोय,
फर्यो समो त्यारे सर्व वगोये, नमतां ते सामु न जोय। ५।
जे लोभना लीधा माया मांडे, थाय परीक्षा दुःखने दहाडे,
क्षत्री जणाये उघाडे खांडे, भूंडा मित्र ते भीडे छांडे। ६।

कड़वक-- ६३ (नलराज द्वारा ऋतुपर्ण को सान्त्वना देना)

ऋतुपर्ण की पीड़ा को जानते हुए निषधनाथ नल वहाँ (उस समय) यह बात बोले, 'आप (आँखों में) आँसू भरकर त्रस्त (कातर, व्यथा से व्याकुल) न हो जाइए'। ऐसा कहकर उन्होंने उनके आँसू पोंछे। १ विपत्ति के समय के कर्म (के बारे में) क्या कहें ? जो-जो दुःख आ जाए, उसे सहन करते रहें। निश्चित रूप से किसके आश्रम में (रहने के लिए) जाएँ ? पाँच रातें सेवक होकर रह जाएँ। २ मेरे गुप्त रहने का कार्य सध गया। आपने मेरे दुःख का परिहार कर लिया। मैंने जिस जननी का दूध पिया था, उससे भी मैंने इतना सुख नहीं प्राप्त किया। ३ माता तो दस मास (बच्चे को) पेट में रखती है। उसके अधिक रहने पर वह भी उसे बुरा कहती है। फिर तीन बरस तक (अपने यहाँ) कौन रख सकता है। आपकी भलाई तो पूरे युग में (फैली) रहेगी। ४ जब तक सम्पत्ति हो, तब तक सब कोई प्रेम करते हैं। (परन्तु) समय फिर गयाहो, तो तब वे तत्काल सब निन्दा करने लगते हैं। जो नमस्कार करते थे, वे सामने देखते तक नहीं। ५ जो लोभ से लुब्ध होकर माया (प्रीति) करते हों, उनकी परख दुःख के दिनों में होती है। नंगा शस्त्र देखने पर क्षत्रिय की परख की जाती है। बुरे मित्र (हों, तो वे) संकट (के समय) में छोड़ देते हैं। ६ मैंने अपनी कर्म-कथा को जान लिया। मैंने चारों वर्णों

कर्मकथा में मारी जाणी, चोहो वर्णनां पोष्यां प्राणी,
ज्यारे वन नीसर्यां हुं ने राणी, प्रजाए न पायुं पाणी। ७।
थयो पुष्कर बांधव वेरी, एकके कुं अंबर नीकळ्यां पहेरी,
कीधां कौतक लोके शेरी शेरी, ते दुःखसागरनी आवे छे लहेरी। ८।
मने भाई प्रजाए कहाडी नाख्यो, स्वाद संसार सगाई चाख्यो,
ऋतुपर्ण तमो शरण राख्यो, ते उपकार न जाये भाख्यो। ९।
शत कल्प करो को गंगास्नान, करे कोटी जगन दे दान,
कुरुक्षेत्र करे जप ध्यान, नहि फळ शरणदान समान। १०।
दुःख देखी कल्पे पुरना लोक, शुभ समे आंसु भरो ते फोक,
एम कही भेट्या पुण्यश्लोक, टाळ्यो ऋतुपर्णनो शोक। ११।
त्यारे ऋतुपर्ण कहे शीश नामी, अपकीर्ति में बहु पामी,
तमो सकळ नरपति स्वामी, स्वारथअंध थयो हुं कामी। १२।
भीमकतनया जनेता जेवी, पतिव्रता साधवी देवी,
ते उपर कुदृष्टि एवी, एथी अन्याय वात बीजी केवी ?। १३।

के प्राणियों (लोगों) का भरण-पोषण किया था। परन्तु जब मैं और रानी वन के प्रति जाने को निकले, तो उस प्रजा ने (हमें) पानी (तक) नहीं पिलाया। ७ मेरा बन्धु पुष्कर वैरी हो गया। हम एक-एक वस्त्र पहने हुए निकल गये। गली-गली में लोगों ने हमारी हँसी उड़ायी। उस दुःख-सागर की (अब स्मृति-स्वरूप) लहरें आ रही हैं। ८ हे भाई, मुझे, प्रजा ने (नगर से) निकाल दिया। संसार के उस सगेपन (आत्मीयता) का स्वाद हमने चखा है। हे ऋतुपर्णजी, आपने मुझे अपने आश्रय में रखा। उस उपकार को (शब्दों में) कहा नहीं जा सकता। ९ यद्यपि कोई शत कल्प काल गंगा-स्नान करे, कोटि-कोटि यज्ञ सम्पन्न करे, दान दे, कुरुक्षेत्र में (रहकर) जप और ध्यान करे, तो भी (उसे उनसे पुण्य प्राप्त होगा। फिर भी) शरण में आये हुए को आश्रय-दान देने के पुण्य के फल के समान अन्य किसी पुण्य का फल नहीं है। १० दुःख को देखकर नगर के लोग दुःखी-व्याकुल हो जाते हैं; परन्तु इस आनन्द के समय तुम यों ही आँसू बहाओगे, तो वह व्यर्थ है। इस प्रकार कहकर पुण्यश्लोक नल-राज ने ऋतुपर्ण को गले लगाया और उनके शोक को दूर किया। ११ तब सिर झुकाकर ऋतुपर्ण ने कहा, 'मैंने बहुत अपकीर्ति प्राप्त की। आप समस्त नरपतियों के स्वामी हैं। मैं तो स्वार्थ से अन्धा तथा विषया-सक्त हो गया हूँ। १२ भीमक-तनया दमयन्ती तो जननी जैसी है; वह पतिव्रता, साध्वी, देवी है। फिर भी मैंने उसपर ऐसी बुरी दृष्टि डाली।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

तेवी वारता अधर्म छे, शुं करुं हुं देह धारी रे ?
वैदर्भी मुज माता जेवी, वखानी में बुद्ध करी रे । १४ ।

इससे (अधिक) अन्याय (अधर्म) की अन्य कैसी (कौन) बात हो सकती है । १३

वैसी बात (करना) अधर्म है । (अत:) मैं देह को धारण करके (रहे) क्या करूँ ? वैदर्भी दमयन्ती तो मेरे लिए माता जैसी है । मैंने (अधर्म से) उसका वरण करने का विचार किया था । १४

कडवुं ६४ मुं— (ऋतुपर्ण-सुलोचना-विवाह; पुष्कर-नल-भेंट; नल के राज्य का वर्णन और कवि-कृत उपसंहार)

राग धवल धन्याश्री

लज्जाकूपमां भूपति पडियो, ऊंचुं न शके भाळी जी,
चतुर शिरोमणि नैषधनाथे, वेळा वात सांभळी जी । १ ।
भीमकरायना पुत्रनी पुत्री, सुलोचना एवुं नाम जी,
दमनकुंवर तणी ते कुंवरी, शुभ लक्षण गुणधाम जी । २ ।
अनंग अंगना सरखी सुंदरी, दमयंती शुं बीजी जी ?
ऋतुपर्णने ते परणावी, दमयंतीनी भत्रीजी जी । ३ ।

कड़वक— ६४ (ऋतुपर्ण-सुलोचना-विवाह, पुष्कर-नल-भेंट; नल के राज्य का वर्णन और कवि-कृत उपसंहार)

राजा ऋतुपर्ण (मानो) लज्जा के कुएँ में गिर गये थे । वे ऊपर (सिर उठाकर) देख नहीं पा रहे थे । तो चतुर-शिरोमणि निषधनाथ नल ने उस विपत्ति के समय बात को सम्हाल लिया । (द्वार पर आये हुए वर का लौट जाना दोनों पक्षों के लिए लज्जा और अपमान का विषय है । इस समय ऋतुपर्ण तथा भीमक दोनों ऐसे ही संकट में उलझ पड़े थे ।) १ भीमक राजा के पुत्र के एक पुत्री थी । उसका नाम सुलोचना था । दमनकुमार की वह कन्या शुभ लक्षणों से युक्त तथा (सद्-) गुणों की धाम थी । २ वह कामदेव की स्त्री रति जैसी सुन्दर थी, अथवा मानो दूसरी दमयन्ती ही थी । दमयन्ती की उस भानजी का परिणय ऋतुपर्ण से कराया गया । ३ (भीमक ने) बहुत प्रेम से मिलनी दी और

पहेरामणी घणुं प्रीते आपी, संतोष्यो ऋतुपर्ण जी,
अयोध्यापति चाल्यो अयोध्या, नमी नळने चर्ण जी। ४।
परस्परे आलिंगन दीधां, नळे आपी अश्व विद्याय जी,
पंच रात्री रह्या स्त्रींपुत्र साथे, पछे विदाय थया नळराय जी। ५।
प्रजा सर्व संगाथे लईने, भेटी नैषध जाय जी,
नानाविधनां वाजित्र वाजे, शोभा न वर्णी शकाय जी। ६।
चतुरंग सैन्य बहु भीमके आप्युं, साथे थयो नरेश जी,
नळराजा घणा जोद्धा संगाथे, आव्या नैषध देश जी। ७।
ते समाचार पुष्करने पोहोंतो, तेम ज ऊठ्यो राय जी,
प्रजा संगाथे सामो मळवा, प्रीत पाये पळाय जी। ८।
हयदळ पायदळ, गजदळ, रथदळ, कळ न पडे केकाण जी,
प्रबळ दळ सकळ पुरवासी, नीरखवा नळ तरसे प्राण जी। ९।
वाहन कुंजर धजा अंबाडी, मेघाडंबर छत्र जी,
कनककळश घंटा बहु धमके, शोभे सूरियांपत्र जी। १०।
भेरी भेर मृदंग दुंदुभि, पटह ढोल बहु गाजे जी,
वेणा वेणु शरणाई शंख धूनी, ताळ झांझ घणुं वाजे जी। ११।

ऋतुपर्ण को सन्तुष्ट कर दिया। (अनन्तर) अयोध्यापति ऋतुपर्ण नल के चरणों को नमस्कार करके अयोध्या की ओर चले। ४ (जाते समय) उन दोनों ने एक-दूसरे का आलिंगन किया। (तब) नल ने उन्हें अश्व-विद्या प्रदान की। (इधर) नलराज भी स्त्री (दमयन्ती) और पुत्रों सहित वहाँ साथ में रहे और अनन्तर वे विदा हो गये। ५ समस्त प्रजा-जनों को साथ में लेकर सबसे मिलकर निषधराज नल चल पड़े। (उस समय) नाना प्रकार के वाद्य बज रहे थे। उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। ६ भीमक ने चतुरंग सेना साथ में भेज दी। उनके साथ स्वयं राजा (चल दिये) थे। इस प्रकार नल राजा के साथ बहुत योद्धा थे। वे निषध देश आ गये। ७ (जब) वह समाचार पुष्कर तक पहुँच गया, तो वैसे ही वह राजा उठ गया। प्रजा के साथ वह सामने जाकर मिलने के लिए प्रेमपूर्वक पैदल ही चला गया। ८ अश्वदल, पदातिदल, गजदल, रथदल —चारों दलों के कोलाहल की कोई सीमा नहीं थी। समस्त पुर-वासियों के समुदायों के प्राण नल को देखने के लिए तरस रहे थे। ९ वाहनों के ऊपर ध्वज थे, अम्मारियाँ थीं, मेघाम्बर छत्र थे, सुवर्ण-कलश था। घण्टे बहुत गरज रहे थे। सर्वत्र सूर्यपत्र शोभायमान थे। १० भेरियाँ, भेर, मृदंग, दुन्दुभियाँ, नगाड़े, ढोल बहुत गड़गड़ा रहे

उदधि पर्वणी जाणे उलट्यो, चंद्र पूर्ण नळ माट जी,
श्रवण पड्युं संभळाय नहीं, थई भारे भीड पुरवाट जी। १२।
भीमकनंदन कहे नळ प्रत्ये, सैन्यने आज्ञा दीजे जी,
पुष्कर आव्यो क्रोध धरीने, सज्ज थाओ जुद्ध कीजे जी। १३।
नळ कहे त्रणे शालक प्रत्ये, मिथ्या विरोध विचार जी,
पुष्करनुं मन थयुं निर्मळ, नाश पाम्यो कळि विकार जी। १४।
साधु पुरुषने कुबुद्धि आवे, ते तो पूर्व कर्मनो दोष जी,
पुष्करे कीधुं कळिनुं प्रेर्युं, कहे विचारी पुण्यश्लोक जी। १५।
ध्रुव चळे रवि पश्चिम प्रगटे, पावक शीतळ थाये जी,
विधि भूले निधि साते सूके, पुष्कर धनुष न साहे जी। १६।
एम गोष्ठि करतो पुष्कर आव्यो, बंधन करी निज हाथ जी,
दंडवत् करतो डगलां भरतो, घणुं लाजतो मन साथ जी। १७।

थे। वीणाओं, मुरलियों, शहनाइयों, शंखों की ध्वनि हो रही थी। करताल और झाँझें बहुत (संख्या में) बज रहे थे। ११ मानो (मानव-समुदाय रूपी) समुद्र (पौर्णिमा की) पर्वणी पर उमंग से भर गया हो—उसके लिए नलराजा रूपी पूर्ण चन्द्र (उदित हुआ) था। कानों पर पड़ी बात सुनने में नहीं आ रही थी। नगर के मार्गों में जन-समुदाय की बहुत भीड़ हो गयी। १२ (इधर) भीमक के पुत्र ने नल से कहा, 'सेना को आज्ञा दीजिए। पुष्कर क्रोध करके आ रहे हैं। सज्ज (तैयार) हो जाइए और युद्ध कीजिए'। १३ (इसपर) नल ने अपने तीनों सालों से कहा, '(यहाँ) विरोध (युद्ध) का विचार मिथ्या (व्यर्थ) है। पुष्कर का मन निर्मल (वैर-विरोध से रहित) हो गया है। कलि (द्वारा मन में उत्पन्न) विकार विनाश को प्राप्त हुआ है। १४ साधु पुरुष में (भी कभी-कभी) कुबुद्धि (उत्पन्न) होती है— वह तो पूर्वजन्म में किये कर्म का दोष है। पुष्कर ने वही किया, जो कलि द्वारा प्रेरित था। —इस प्रकार पुण्यश्लोक नलराज ने विचार करके कहा। १५ (यद्यपि) ध्रुव (अपने स्थान से) विचलित हो जाए, सूर्य पश्चिम में निकले, अग्नि शीतल हो जाए, विधाता भूल करे, सातों समुद्र[1] सूख जाएँ, तो भी पुष्कर (हाथों में धनुष नहीं पकड़ लेगा। १६ ऐसी बातें करते समय पुष्कर अपने हाथों को आबद्ध करके (जोड़कर) आ गया। वह पग बढ़ा रहा था। उसने (आगे आकर) दण्डवत प्रणाम किया। वह साथ ही मन में बहुत लज्जित हो गया था। १७ तो बन्धु को देखकर नल उठे। उसका हाथ थामकर

---

१ सप्त समुद्र— क्षार (लवण), इक्षुरस, घृत सुरा, क्षीर, दधि और शुद्धोदक।

नळ ऊठ्यो बांधवने देखी, ग्रही कर बेठो कीधो जी,
मस्तक सूंघी प्रशंसा कीधी, भुज भरी हृदये लीधो जी । १८ ।
एक आसने बेठा बंने बांधव, शोभे काम वसंत जी,
त्यारे प्रजाए घणी पूजा कीधी आपी भेट अनंत जी । १९ ।
पुष्करे घणुं दीन ज भाख्युं, थयां सजळ लोचन जी,
हुं कृतघ्नी कठण गोझारो, में दंपती कहाड्यां वन जी । २० ।
वण अपराधे विपरीत कीधुं, दीधुं दारुण दुःख जी,
सात समुद्र न जाय श्यामता, धोतां मारुं मुख जी । २१ ।
पुष्कर वीरने नळे समजाव्यो, कहीने आतम ज्ञान जी,
एक गजे बेठा बेउ बांधव, आव्या पुर निधान जी । २२ ।
धजा पताका तोरण बांध्यां, चित्र साथिया शेरी जी,
अगर धूप आरती थाये, वाजे भेरी नफेरी जी । २३ ।
धवळ मंगळ कीर्तन गाथा, हाथा कुंकुमरोळ जी,
चौटां चोक रस्ताने नाके, प्रजा ऊभी टोळेटोळ जी । २४ ।

उन्होंने उसे बैठा लिया । (प्रेम से) उसके मस्तक को सूंघकर उसकी प्रशंसा की । फिर उसे बाहुओं में भरकर अपने हृदय से लगाया । १८ (अनन्तर) वे दोनों बन्धु एक आसन पर बैठ गये । वे कामदेव और वसन्त जैसे शोभा दे रहे थे । तब प्रजा ने (नल का) बहुत पूजन किया और असंख्य उपहार प्रदान किये । १९ पुष्कर ने बहुत दीन (दीनता-पूर्ण) बात कही । उसके नेत्र सजल हो गये । (वह बोला—) 'मैं कृतघ्न हूँ, कठोर (निर्दय) गो-हत्यारा हूं । मैंने आप दम्पती (पति-पत्नी) को बाहर वन में निकाल दिया । २० बिना आपके अपराध के, मैंने विपरीत (अनुचित) बात की; आपको दारुण दुःख दिया । सातों समुद्रों में मेरे मुख को धोने पर भी उसकी कालिमा नहीं (धुल) जाएगी' । २१ (यह सुनकर) नल ने आत्मज्ञान कहकर भाई पुष्कर को समझा दिया । फिर वे दोनों बन्धु एक (ही) हाथी पर बैठ गये और वे (परम) निधान जैसे नगर में आ गये । २२ ध्वज, पताकाएँ, वन्दनवारें, मालाएँ, चित्र, स्वस्तिक चिह्न गली-गली में लगाये गये । अगरु, धूप जलाये जा रहे थे; आरतियाँ सजायी गयीं । भेरियाँ और ढोल बज रहे थे । २३ शुभ मंगल गीत गाये जा रहे थे । (हरि-) कीर्तन तथा (यशो-) गाथाएँ प्रस्तुत हो रहे थे । कुंकुम तथा रोली की हस्त-मुद्राएँ अंकित की गयी थीं । बाज़ारों, चौकों, रास्तों के नुक्कड़ों पर प्रजा जन टोली-टोली में खड़े थे । २४ पुरुष और स्त्रियाँ झरोखों में चढ़कर (झरोखों

कुसुम मुक्ताफळे वधावे, गोख चडी नरनारी जी,
नैषधनगरीनी शोभा सुंदर, शुं अमरापुरी उतारी जी ? । २५ ।
अभिजित लग्न मुहूर्त साधी, नळ बेठो सिंहासन जी,
मळवा सर्व सगां आव्यां ते, वोळाव्यां राजन जी । २६ ।
जुद्धपति पुष्करने कीधो, नळे कीधा जग्न अनंत जी,
धर्मराज कीधुं नळराये, वरस सहस्र छत्रीश पर्यंत जी । २७ ।
नळना राज्यमां बंधन नामे, एक पुस्तकने बंधन जी,
दंड एक श्रीपतिने हाथे, धन्य वीरसेननंदन जी । २८ ।
कंपारव धजाने वरते, पवन रहे आकाश जी,
कुळकर्म पारधी मूक्यां, जीवनो न करे नाश जी । २९ ।
भय एक तस्करने वरते, कमाडने विजोग जी,
हरख शोक समतोल लेखवे, त्याग विषयना भोग जी । ३० ।

के पास खड़े होकर) फूलों और मोतियों के बधावे दे रहे थे । नैषधपुर की शोभा सुन्दर थी । (लगता था कि) क्या अमरापुरी ही (उसके रूप में धरती पर) उतारी गयी है । २५ अभिजित लग्न का शुभ मुहूर्त साधकर नल सिंहासन पर बैठे । (अनन्तर) जो सगे-सम्बन्धी उनसे मिलने के लिए आये हुए थे, उन्हें राजा ने बिदा किया । २६ नल ने पुष्कर को युद्ध-पति (सेनापति) नियुक्त किया । (अनन्तर) उन्होंने असंख्य यज्ञ सम्पन्न किये । नलराज ने छत्तीस सहस्र वर्ष तक धर्म (के अनुसार) राज्य किया । २७

नल के राज्य में 'बन्धन' के नाम पर (केवल) पुस्तक का बन्धन था । (किसी को बन्दी नहीं बनाया जाता था) । "दण्ड" (केवल) संन्यासियों के हाथों में होते थे (राजा के लिए किसी को 'दण्ड' देने की आवश्यकता ही नहीं होती थी; क्योंकि उनके राज्य में कोई व्यक्ति दण्डनीय अपराध ही नहीं करता था) । धन्य थे वीरसेन-नन्दन नलराज । २८ 'कम्पन' की ध्वनि (फड़फड़ाहट) ध्वजों में ही होती थी (कोई भी व्यक्ति भय से काँपता नहीं था) । 'पवन' आकाश में ही होता था (पवन आँधी के रूप में आकर धरती को हानि नहीं पहुँचाता था) । बहेलियों ने कुलधर्म का त्याग किया; वे प्राणियों का संहार नहीं करते थे । २९ 'भय' एक मात्र चोरों को अनुभव होता था; द्वार के (दोनों) किवाड़ों में 'वियोग' हुआ करता था (द्वार के किवाड़ बन्द नहीं किये जाते थे; वे एक-दूसरे से सदा अलग रहते थे । चोरों से भय न होने के कारण लोग द्वार खुले रखते थे । नर-नारियाँ, माता-पिता-बच्चे एक-दूसरे से विरह नहीं अनुभव करते थे) । सुख-भोग के विषयों का उपभोग वे त्याग (-भाव से)

चतुरवर्ण तो सर्वे शूरी, ज्ञान खड्ग तीव्र धारे जी,
देहगेह मध्ये खट तस्कर, पीडी न शके लगारे जी । ३१ ।
शौच, धर्म, दया तत्परी, आडे ते गुप्त दान जी,
हरिभक्ति नथी तेनु नाम दरिद्री, जेने भक्ति ते राजान जी । ३२ ।
तेह मूओ जेनी अपकीर्ति पूंठे, अकाळ मृत्यु न थाय जी,
माग्या मेह वरसे वसुधामां, दूध घणुं करे गाय जी । ३३ ।
मातापिता, गरु, विप्र, विष्णुनी, सेवा करे सर्व कोई जी,
परनिंदा, परधन, परनारी, कुदृष्टे नव जोय जी । ३४ ।
एवुं राज नळनाथे कीधुं, पुण्यश्लोक धराव्युं नाम जी,
पछे पुत्रने राज आपी गया, तप करवा गुणग्राम जी । ३५ ।
अनशन व्रत लई देह मूक्यो, आव्युं दिव्य विमान जी,
वैकुंठ नळदमयंती पहोंतां, पाम्यां पद अविधान जी । ३६ ।

करते थे । ३० चारों वर्ण के समस्त लोग तीव्र धार वाले ज्ञान रूपी खड्ग से युक्त थे । देह रूपी गृह में उस समय छः चोर (षड्-विकार[1] रूपी चोर) पीड़ा नहीं पहुँचा सकते थे । ३१ शौच (मन आदि की शुद्धि, पवित्रता), धर्म, दया (के व्यवहार) में लोग तत्पर थे । वे दान आड़ में, अर्थात् गुप्त रूप से देते थे । (अथवा यदिकोई बात आड़ में की जाती थी तो वह गुप्तदान था) । जिसमें हरिभक्ति नहीं थी, उसका नाम 'दरिद्र' था; जिसमें भक्ति-भावना थी, वह तो राजा (जैसा) ही था । ३२ वही मरा (समझिए) जिसकी अपकीर्ति पीछे रहती थी । किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती थी । माँगा हुआ अर्थात इच्छा-आवश्यकता के अनुसार पृथ्वी पर मेघ बरसता था । गायें बहुत दूध देती थीं । ३३ सब कोई अपने-अपने माता-पिता, गुरु और विप्रों तथा भगवान विष्णु की सेवा करते थे । कोई पर-निन्दा नहीं करता था । कोई भी पर-धन तथा पर-नारी को बुरी दृष्टि से नहीं देखता था । ३४ नलराज ने इस प्रकार राज्य किया और (फलस्वरूप) 'पुण्यश्लोक' नाम (उपाधी) धारण करवायी । (अनन्तर) अपने पुत्र को राज्य प्रदान करके वे गुण-ग्राम (गुण-समुदाय-स्वरूप) तप करने के लिए चले गये । ३५ (अन्त में) अनशन (निराहार) व्रत धारण करके उन्होंने देह का त्याग किया, तो (उनके लिए) दिव्य विमान आ गया । नल और दमयन्ती (उसमें विराजमान होकर) वैकुंठलोक पहुँच गये और (वहाँ) अविचल पद को प्राप्त हो गये । ३६

१ छः चोर अर्थात छः विकार— काम, क्रोध; मद, मत्सर, लोभ और मोह ।

बृहदश्व कहे हो राय युधिष्ठिर, एवां हवां न होय जी,
ए दुःख आगळ तारां दुःखने, युधिष्ठिर शुं रोय जी । ३७ ।

काले अर्जुन आवशे रायजी, करीने उत्तम काज जी.
कथा सांभळी पाये लाग्यो, मुनिवर महाराज जी । ३८ ।

युधिष्ठिर कहे परिताप गयो मननो, सांभळी साधुचरित्र जी,
अविचळ वाणी ऋषि तमारी, सुणी हुं थयो पवित्र जी । ३९ ।

थोडे दिवसे अर्जुन आव्या, रीझ्या धर्मराजान जी,
वैशंपायन कहे जनमेजय, पूर्ण थयुं आख्यान जी । ४० ।

करकोटक ने नळ दमयंती, सुदेव, ऋतुपर्ण राय जी,
ए पांचेनां नाम लेतां, कळजुग त्यांथी जाय जी । ४१ ।

पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, समृद्धि, पामे वळी नर नार जी,
ब्रह्महत्यादिक पाप टळे ने, ऊतरे भवजळ पार जी । ४२ ।

बृहदश्वजी बोले, 'हे राजा युधिष्ठिर, इस प्रकार कहीं अन्यत्र नहीं हुआ है और न होगा। इस दुःख के आगे हे युधिष्ठिर, आप अपने दुःख के कारण क्यों रो रहे हैं ? ३७ हे राजाजी, उत्तम कार्य सम्पन्न करके कल अर्जुन आएँगे।' इस कथा को सुनकर महाराज युधिष्ठिर मुनिवर बृहदश्व के पाँव लगे। ३८ (अनन्तर) युधिष्ठिर ने कहा, 'मेरे मन का परिताप साधु (पुरुष) का यह चरित सुनकर (नष्ट हो) गया। हे ऋषि, आपकी वाणी अविचल (नित्य सत्य) है। उसे सुनकर मैं पवित्र हो गया हूँ'। ३९ थोड़े ही दिनों में अर्जुन (लौट) आये, तो धर्मराजा प्रसन्न हो गये।

वैशम्पायन ऋषि ने कहा, 'हे जनमेजय, यह आख्यान पूर्ण हुआ। ४० कर्कोटक और नल-दमयन्ती, सुदेव और राजा ऋतुपर्ण—इन पाँचों के नाम लेने पर कलियुग (का प्रभाव) उस स्थान से (नष्ट हो) जाता है (कलि उसे मार्गभ्रष्ट करके पीड़ा नहीं पहुँचा सकता)। ४१ इसके अतिरिक्त वे स्त्री-पुरुष (जो इन लोगों का नाम-स्मरण करते हैं) पुत्र, पौत्र, धन-धान्य, समृद्धि को प्राप्त हो जाते हैं। उनका ब्रह्महत्या आदि का पाप टल जाता है (नष्ट हो जाता है) और वे संसार रूपी जल (-सागर) के पार चले जाते हैं। ४२

उपसंहार

वीरक्षेत्र वडोदरा कहावे, गरवो देश गुजरात जी,
कृष्णसुत कवि भट प्रेमानंद, वाडव चोवीसा न्यात जी। ४३।

गुरु प्रतापे पदबंध कीधो, कालावाला भाखी जी,
आरण्यक पर्वनी मूळ कथामां, नैषध लीला दाखी जी। ४४।

मुहूर्त कीधुं सुरतमांहे, थयुं पूर्ण नंदरबार जी,
कथा ए नळदमयंती केरी, सारमांहे सार जी। ४५।

संवत सत्तर बेताळो वर्षे, पोष सुदि गुरुवार जी,
द्वितीया चंद्रदर्शननी वेळा, थई कथापूर्ण विस्तार जी। ४६।

ते दिवसे परिपूर्ण कीधो, ग्रंथ पुनित पदबंध जी,
श्रोता वक्ता सहुने थाशे, श्रीहरि केरो संबंध जी। ४७।

उपसंहार

वीरक्षेत्र वटोदरा (बड़ोदा) गुजरात का गौरवशाली देश (स्थान) कहा जाता है। उस (नगर) में कृष्ण के पुत्र भट्ट प्रेमानन्द (नामक) कवि हैं। उनकी ज्ञाति 'चौबीसा वाडव (ब्राह्मण)' है। ४३ गुरु (की कृपा) के प्रताप (के आधार) से उन्होंने कच्ची-पक्की (अटपटी) वाणी में यह ('नलोपाख्यान' नामक) आख्यान पद्य-बद्ध किया। 'महाभारत' के 'आरण्यक (वन) पर्व' की मूल कथा में नैषध-राज नल की लीला कही है। ४४ कवि ने इस काव्य का मुहूर्त (शुभारम्भ, श्रीगणेश गुजरात के) सूरत नगर में किया और यह (काव्य) नन्दुरबार (नामक महाराष्ट्र में स्थित नगर) में पूर्ण हुआ। नल-दमयन्ती की यह कथा सुन्दर कथाओं में (सर्वाधिक) सुन्दर है। ४५ विक्रम संवत सत्रह सौ बयालीसवें वर्ष के पौष मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया, गुरुवार को चन्द्र-दर्शन (चन्द्रोदय) के समय यह कथा पूर्ण विस्तार को प्राप्त हुई (अर्थात समाप्त हुई)। ४६

(कवि ने) उस दिन इस पावन पद्य-बद्ध ग्रन्थ को परिपूर्ण किया। इसके द्वारा श्रोता तथा वक्ता सबका श्रीहरि से सम्बन्ध (स्थापित) हो जाए। ४७

॥ प्रेमानन्द-रसामृत (नलोपाख्यान) समाप्त ॥

प्रेमानन्द-रसामृत

(तृतीय कलश)

सुदामा - चरित्र

प्रेमानन्द-रसामृत

सुदामा चरित

कडवुं १ लुं--(कवि की प्रास्ताधिक उक्ति। पात्र-परिचयात्मक पृष्ठभूमि)

राग रामग्री

श्री गुरुदेव ने गणपति समरुं अंबा ने सरस्वती,
प्रबल मति विमळ वाणी पामीए रे। १।
रमा-रमण हृदयमां राखुं, भगवद्-लीला भाखुं,
भक्तिरस चाखुं, जे चाख्यो शुक-स्वामीए रे। २।

कड़वक—१ (कवि की प्रास्ताविक उक्ति। पात्र-परिचयात्मक भूमिका)

मैं श्रीगुरुदेव और श्रीगणेश जी, देवी अम्बा जी और सरस्वती जी का स्मरण करता हूँ। (मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि उनकी कृपा से) हमें अति प्रबल गति अर्थात तेजस्वी बुद्धि और निर्मल वाणी (भावों को सम्यक् रूप से अभिव्यक्त करने की दृष्टि से कोई भी दोष न रखनेवाली वाणी) की प्राप्ति हो जाए। १ मैं रमा-रमण भगवान विष्णु को हृदय में (प्रतिष्ठित करके) रखता हूँ और (उनके द्वारा कृष्णावतार में की हुई, अर्थात) भगवान (कृष्ण) की एक लीला का वर्णन करने जा रहा हूँ। जिसे शुक स्वामी[१] (मुनि) ने चखा था, उस भक्ति-रस को मैं चख रहा हूँ (और श्रद्धावान श्रोताओं— पाठकों को चखाने, उसका आस्वादन कराने

१ शुक मुनि पूर्व-जन्म में 'शुक (तोता)' थे और उस रूप में उन्होंने श्रवण करके आत्मज्ञान प्राप्त किया था, जब शिवजी पार्वती को वह सुना रहे थे। आगे चलकर वही 'शुक' व्यास के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ; अतः वह पुत्र 'शुक' कहलाया। वे व्यास-पुत्र शुक आत्मज्ञानी थे। बचपन में ही उन्हें ज्ञान-सम्बन्धी घमण्ड हुआ, तो वे माया के प्रभाव से दूर रहने के हेतु वन में जाकर रह गये। परन्तु नारद द्वारा प्रतिबोधित हो जाने पर वे अपने पिता व्यास मुनि के पास आये और उनसे उन्होंने भागवत संहिता का भक्ति-पूर्वक अध्ययन किया। फल-स्वरूप शुकजी

ढाळ

शुक स्वामी कहे, सांभळ राजा, परीक्षित पुण्यपवित्र,
दशम स्कंध अध्याय एंशीमे, कहुं सुदामाचरित्र । ३ ।
सांदीपनि ऋषि सुर-गुरु सरखा, विद्यावंत अनंत,
तेने मठ भणवाने आव्या, हळधर ने भगवंत । ४ ।

जा रहा हूँ)। २ शुक स्वामी (मुनि) ने कहा, हे पुण्यवान और पवित्र (आचार-विचार वाले) राजा परीक्षित[1], सुनिए। मैं (कवि प्रेमानन्द उनके द्वारा कथित श्रीमद्भागवत पुराण के) दशम स्कन्ध के अस्सीवें अध्याय में से सुदामा-चरित्र का वर्णन करता हूँ । ३ सान्दीपनि[2] नामक ऋषि देवगुरु बृहस्पति[3] जैसे असीम विद्यावान थे। उनके मठ,

---

निष्ठावान विष्णु-भक्त हो गये। श्रृंगी ऋषि द्वारा अभिशप्त राजा परीक्षित जब गंगा-तट पर प्रायोपवेशन करने लगे, तो अन्य ऋषि जनों के साथ शुकजी भी वहाँ पहुँचे। उस समय राजा के प्रश्नों का उत्तर देते हुए उन्होंने उन्हें भागवत पुराण का श्रवण कराया। यह पुराण वेद-रूप कल्पवृक्ष का फल है, जो शुक मुनि-स्वरूप तोते के मुख का सम्बन्ध हो जाने से परमानन्द-मयी सुधा से परिपूर्ण हुआ माना जाता है।

१ राजा परीक्षित अर्जुन के पौत्र तथा अभिमन्यु-उत्तरा के पुत्र थे। धर्मराज ने परीक्षित को राज्य प्रदान करके अपने बन्धुओं-सहित हिमालय की ओर गमन किया। एक समय परीक्षित मृगया के लिए वन में गये। उस समय उन्होंने तृषार्त होकर शमीक नामक मुनि से पानी माँगा। परन्तु शमीक ध्यानस्थ थे, अतः उनका ध्यान राजा की ओर नहीं रहा। उससे क्रुद्ध होकर परीक्षित ने एक मृत सर्प मुनि के गले में डालकर वहाँ से प्रस्थान किया। पिता को इस प्रकार अपमानित हुए जानकर शमीक ऋषि के पुत्र श्रृंगी ने परीक्षित को अभिशाप देते हुए प्रण किया कि उस दिन से सातवें दिन मैं अपने मित्र तक्षक नाग को भेजकर उसके द्वारा राजा को मरवा डालूँगा। यह सुनकर राजा को ग्लानि हुई। उन्होंने अपने पुत्र जनमेजय को राज्य देकर गंगा-तट पर प्रायोपवेशन आरम्भ किया। वे भगवान कृष्ण का स्मरण करने लगे। उस स्थान पर अनेक ऋषि आ गये। उनमें षोड़श-वर्षीय बालयोगी शुक भी थे। मनुष्य के नित्य कर्तव्यों, साधनाओं, मरणासन्न व्यक्ति के कर्तव्यों तथा परम सिद्धि के स्वरूप के विषय में परीक्षित ने जिज्ञासा व्यक्त की; तब शुक मुनि ने उनकी जिज्ञासा का समाधान करते हुए उन्हें भागवत पुराण (स्कन्ध २ से १२ तक) सुनाया। उसे सुनने पर राजा पूर्णतः निर्भय और विरक्त हुए। अन्त में फल के अन्दर क्रमि रूप में बैठकर आये हुए तक्षक ने उन्हें दंश किया, तो वे मृत्यु को प्राप्त हो गये।

२ सान्दीपनि नामक काश्यप गोत्रोत्पन्न ऋषि अवन्तीपुरी (उज्जयिनी) के निवासी थे। उपनयन संस्कार के पश्चात बलराम और श्रीकृष्ण ने उनके आश्रम में रहते हुए उनसे विद्यार्जन किया। सान्दीपनि बुद्धि, बल और ज्ञान में देवगुरु बृहस्पति जैसे थे।

३ बृहस्पति नामक देवर्षि देवों के गुरु माने जाते हैं। वे विद्या, बल, बुद्धि के प्रतीक स्वरूप थे। उन्होंने देवासुर-संग्राम में अपने पुत्र कच को दैत्य-गुरु शुक्राचार्य के यहाँ भेजा, जिसने चतुराई से उनका शिष्यत्व स्वीकार करके संजीवनी विद्या को उनसे प्राप्त किया।

तेनी निशाळे ऋषि सुदामो, वडो विद्यार्थी कहावे,
पाटी लखी देखाडवा राम-कृष्ण, सुदामा पासे आवे। ५।
सुदामो, श्याम, संकर्षण, अन्न भिक्षा करी लावे,
एकठा बेसी अशन करे, ते भूधरने मन भावे। ६।
साथे स्वर बांधीने भणता, थाय वेदनी धुन,
एक साथरे शयन करता, हरि हळधर ने मुन। ७।

अर्थात आश्रम में हलधर[1] बलराम और भगवान श्रीकृष्ण पढ़ने (विद्यार्जन करने) के लिए आ गये। ४ उनकी पाठशाला में सुदामा नामक ऋषि (पढ़ते) थे, जो ज्येष्ठ विद्यार्थी कहाते थे। बलराम और श्रीकृष्ण पटिया पर (कुछ) लिखकर उसे दिखाने के लिए सुदामा के पास आया करते थे। ५ सुदामा, श्याम (श्रीकृष्ण) और संकर्षण[2] (बलराम) भिक्षा (के रूप में) माँगकर अन्न लाया करते और इकट्ठा बैठकर भोजन किया करते थे। भूधर[3] (श्रीकृष्ण) के मन को वह अच्छा लगता था। ६ वे (तीनों) एक साथ स्वर बाँधकर (स्वर मिलाकर, एक स्वर में) पठन करने लगते, तो वेद (-मंत्रों) की (पवित्र) ध्वनि (उत्पन्न) हो (कर गूंजती रह) जाती थी। श्रीकृष्ण, बलराम और सुदामा मुनि एक ही साथरी (तृण-शय्या) पर शयन करते थे। ७ वे दोनों भाई (बलराम और श्रीकृष्ण) चौंसठ दिनों में चौदह विद्याओं[4] को सीख गये।

---

१ हलधर— श्रीकृष्ण के ज्येष्ठ बन्धु बलराम ने तपस्या करके उसके फल-स्वरूप 'संवर्तक' नामक हल और 'सौनन्द' नामक मूसल प्राप्त किया। बलराम के ये आयुध थे। वे हल के धारी थे, इसलिए 'हलधर', 'हलायुध', 'हली' आदि नामों से जाने जाते थे। हलधर बलराम प्रतिद्वंद्वियों को हल से खींचकर मार डालते थे। वे पृथ्वी में हल के फाल की नोक को गड़ाकर, उसे कम्पायमान करने में समर्थ थे।

२ संकर्षण— बलराम का एक नाम है। 'शेष' को संकर्षण कहते हैं; अतः शेषावतार बलराम भी संकर्षण कहाने लगे। एक अन्य मान्यता के अनुसार, पांचरात्र मत में भगवान के व्यूह में उन्हें 'संकर्षण' नाम से समाविष्ट करते हुए उन्हें 'जीव' का प्रतीक माना गया है।

३ भूधर— भगवान विष्णु ने 'कच्छप' अवतार धारण करके समुद्र-मन्थन के समय 'भू' अर्थात पृथ्वी को अपनी पीठ पर उठाये रखा था। इस दृष्टि से भगवान विष्णु 'भूधर' कहाते हैं। दूसरे अर्थ में वे 'भू' के भरण-पोषण, रक्षण आदि स्वरूप भार के धारी हैं। इस दृष्टि से भी वे भू-धर हैं। यहां उनके अवतार श्रीकृष्ण को उसी नाम से अभिहित किया गया है।

४ चौदह विद्याएँ— ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और सामवेद (नामक चार वेद); शिक्षा, छन्दस्, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष् और कल्प (नामक छः वेदांग), न्याय, मीमांसा, तथा पुराणऔर धर्मशास्त्र (नामक कुल चौदह विद्याएँ)।

चोसठ दहाडे चौद विद्या, शीख्या बंनो भाई,
गुरुसुत गुरु-दक्षिणामां आपी, विट्ठल थया विदाय । ८ ।
कृष्ण सुदामो भेटी रोया, बोल्या विश्वाधार,
'मा'नुभाव मुजशुं फरीने मळजो, मागुं छुं एक वार' । ९ ।
गद्गद कंठे कहे सुदामो, 'हुं मागुं देव मुरारि,
सदा तमारां चरण विषे, रहेजो मनसा मारी' । १० ।

(तदनन्तर) विट्ठल-स्वरूप[1] श्रीकृष्ण गुरु-दक्षिणा के रूप में गुरु-पुत्र को[2] लौटा (लाते हुए) देकर बिदा हो गये । ८ (उस समय) एक-दूसरे से मिलकर (एक-दूसरे के गले लगकर) श्रीकृष्ण और सुदामा रो पड़े । (फिर) विश्व के आधार-स्वरूप श्रीकृष्ण बोले, 'मैं एक बार माँग रहा हूँ (विनती कर रहा हूँ)— हे महानुभाव, मुझसे फिर से मिलना' । ९ तो

१ विट्ठल-स्वरूप श्रीकृष्ण— पद्मपुराण के अनुसार इन्द्राणी ने भगवान विष्णु के कृष्णावतार काल में राधा का अवतार धारण किया था । एक समय राधा द्वारका में प्रकट होकर द्वारकाधीश श्रीकृष्ण की गोद में विराजमान हुई । यह देखकर रुक्मिणी ने रूठकर गृह-त्याग किया । उसे खोजते हुए श्रीकृष्ण गोकुल में गये । वहाँ से बालरूप धारण करके वे ग्वाल-बालों, गायों-बछड़ों सहित दक्षिण में दिण्डीर बन में आये । वहाँ उनकी रुक्मिणी से भेंट हुई । पास ही में पिता को भगवत्स्वरूप मानकर भक्त पुण्डलिक उनकी सेवा में व्यस्त होकर रहते थे । जब श्रीकृष्ण उनके समीप पहुँचे, तो वे पिता की चरण-सेवा कर रहे थे । उन्होंने एक ईंट फेंककर श्रीकृष्ण को उस पर तब तक खड़े रहने को कहा, जब तक वे स्वयं पिता की सेवा को पूर्ण करके उनके पास न आएँ । श्रीकृष्ण पुण्डलिक पर प्रसन्न हुए और उन्होंने उनको मुँह-माँगे वर प्रदान किये । उनके अनुसार, श्रीकृष्ण ने 'विट्ठल' नाम धारण किया; वे भक्तों को दर्शन मात्र से मुक्ति प्रदान करने लगे; उन्होंने 'पण्ढरपुर' (जि० शोलापुर, महाराष्ट्र) को अपना निवास-स्थान बनाया और वे रुक्मिणी-सहित वहाँ रहने लगे । पण्ढरपुर नगरी 'दक्षिण द्वारका' कहलाती है । श्रीकृष्ण द्वारका की समस्त सम्पत्ति को इस नगरी में ले आये । ये बिट्ठल-स्वरूप श्रीकृष्ण महाराष्ट्र के 'वारकरी' नामक विख्यात भक्ति-सम्प्रदाय के आराध्य देवता हैं ।

२ मृत गुरु-पुत्र को लौटा लाना— विद्यार्जन को पूर्ण करने पर गुरु से श्रीकृष्ण ने प्रार्थना की कि वे गुरु-दक्षिणा के रूप में चाहे जो माँग लें, तो सान्दीपनि ने अपनी स्त्री से परामर्श करते हुए कहा— 'हमारा दत्त नामक पुत्र प्रभास तीर्थ में डूब मरा है । उसे लौटा दो' । (एक मान्यता के अनुसार, सान्दीपनि श्रीकृष्ण को जाने देना नहीं चाहते थे; इसलिए मृत को जीवित करके लौटाने की बात को असम्भव मानते हुए उन्होंने जान-बूझकर यह बात कही ।) तदनन्तर श्रीकृष्ण ने समुद्र से उस पुत्र को लौटा देने का आदेश दिया, तो उसने कहा, 'मेरे अन्दर रहनेवाले पंजचन्य नामक क्रूरकर्मा दैत्य के पास वह होगा' । तब श्रीकृष्ण ने समुद्र में पैठकर पंचजन्य का वध किया; परन्तु गुरु-पुत्र नहीं मिला । फिर वे यमराज से मिले और बोले, 'उस पुत्र के किये कर्मों का विचार न करते हुए उसे लौटा दें' । इसके अनुसार, यमराज से उस पुत्र को लेकर श्रीकृष्ण ने सान्दीपनि ऋषि को गुरु-दक्षिणा के रूप में लौटा दिया ।

मथुरामांथी कृष्ण पधार्या, पुरी द्वारिकावासी,
सुदामे गृहस्थाश्रम मांड्यो, मन एनुं संन्यासी । ११ ।
पतिव्रता पत्नी मसे पावन, पतिने प्रभु करी प्रीछे,
स्वामी सेवानुं सुख वांछे, माया-सुख नव इच्छे । १२ ।
दस बाळक थयां सुदामाने, दुःख दारिद्रे भरियां,
शीतळाए अमी-छांटो नाख्यो, थोडे अन्ने ऊछरियां । १३ ।
अजाचक व्रत पाळे सुदामो, हरि विना हाथ न ओढे,
आवी मळे तो अशन करे, नहि तो भूख्या पोढे । १४ ।

सुदामा गद्‌गद कण्ठ से बोले, 'हे मुरारि देव[1], मैं (विनम्रता-पूर्वक यह वरदान) माँग रहा हूँ कि मेरी मति नित्य आपके चरणों में (लगी) रहे'। १० (अनन्तर) श्रीकृष्ण (मथुरा में जाकर रह गये; कई वर्षों के पश्चात् वे) मथुरा में से द्वारकापुरी पधारे और वहाँ के निवासी हो गये। (इधर) सुदामा ने, जिनका मन (वस्तुतः) संन्यासी (का-सा समस्त भोग-विलासों के प्रति अनासक्त) था, गृहस्थाश्रम (का जीवन-क्रम) आरम्भ किया। ११ उनकी पत्नी पतिव्रता थी; वह मन से पावन-पवित्र थी। वह पति को प्रभु (परमात्मा) जैसे देखती (मानती) थी। वह पति की सेवा के सुख की कामना करती थी और माया की (माया-स्वरूप सांसारिक सुख आदि की) कोई इच्छा नहीं करती थी। १२ सुदामा के दस बच्चे उत्पन्न हुए; वे दुःख-दरिद्रता से भरे-पूरे थे। शीतला (चेचक रोग की अधिष्ठात्री) देवी ने (उन्हें पीड़ित तो किया; फिर भी) उन पर (मानो) अमृत की बूंद डाली; (उससे वे नहीं मरे; फिर भी) वे थोड़े-से अन्न पर पल-पुसकर बड़े हो गये। १३ (इधर) सुदामा अयाचक व्रत[2] रखा करते थे; (अतः) वे श्रीहरि के अतिरिक्त किसी अन्य के सामने

---

१ मुरारि— ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न तालजंघ नामक दैत्य के पुत्र मुर ने समस्त देवों को पराजित किया। भगवान विष्णु भी उससे हार मानकर बदरिकाश्रम के निकट सिंहावती नामक गुफा में योगमाया के आश्रम में रह गये। मुर के वहाँ आ जाने पर उन्होंने योगमाया से एक देवी का निर्माण करके उससे उस दैत्य का वध कराया। अतः विष्णु 'मुरारि' कहाते हैं। एक दूसरी कथा के अनुसार, कश्यप और दनु के पुत्र मुर नामक दानव ने तपस्या से शिवजी को प्रसन्न करके उनसे यह वर प्राप्त किया— तुम जिसके हृदय-स्थल पर हाथ रखोगे, वह तत्काल मर जाएगा। श्वेत द्वीप में मुर का श्रीकृष्ण से युद्ध हुआ, तो श्रीकृष्ण ने चतुराई से मुर दानव को उसके अपने ही हृदय पर हाथ रखने को बाध्य किया; फलतः मुर की मृत्यु हुई। तब से भगवान विष्णु-स्वरूप कृष्ण को 'मुरारि' कहते हैं।

२ अयाचक व्रत— किसी मनुष्य से किसी भी बात की याचना या माँग न करने का व्रत। (अजाचक व्रत = अयाचक व्रत)।

वलण (तर्ज बदलकर)

पोढे ऋषि संतोष आणी, न इच्छे सुख घरसूत्रनुं,
ऋषि-पत्नी भिक्षा करी लावे, पूरुं पाडे पति-पुत्रनुं । १५ ।

हाथ नहीं बढ़ा सकते थे । आकर मिल जाता, तो भोजन किया करते थे; नहीं तो वे भूखों पौढ़ा करते थे । १४

(मन में) संतोष लाकर (मानकर) ऋषि सुदामा पौढ़ा करते थे । वे घर-संसार सम्बन्धी सुख की इच्छा नहीं करते थे । (इस स्थिति में) उन ऋषि की पत्नी भिक्षा (माँगते हुए घूम-फिरकर उस) के रूप में अन्न लाया करती थी और अपने पति तथा पुत्रों की आवश्यकताओं को पूर्ण कर दिया करती थी । १५

कडवुं २ जुं--(अपने घर की दुरवस्था का वर्णन करते हुए सुदामा की स्त्री द्वारा उनसे श्रीकृष्ण के पास जाने का अनुरोध करना)

राग वेराडी

शुकजी कहे, सांभळ नरपति,
छे सुदामानी निर्मळ मति । १ ।
माया-सुख नव इच्छे रती,
सदा मन छे जेनुं जति । २ ।
मुनिनो मर्म कोई नव लहे,
सौ मेलो घेलो दरिद्री कहे । ३ ।

कड़वक—२ (अपने घर की दुरवस्था का वर्णन करते हुए सुदामा की स्त्री द्वारा उनसे श्रीकृष्ण के पास जाने का अनुरोध करना)

शुकजी ने कहा, 'हे नरपति परीक्षित, सुनिए । सुदामा की मति निर्मल (पाप, छल-कपट आदि की मैल से रहित) थी । १ वे रत्ती भर तक माया-जन्य (सांसारिक) सुख की इच्छा नहीं करते थे । उनका मन नित्य वैसा ही अनासक्त बना रहा था, जैसे किसी यति (संन्यासी) का होता है । २ (परन्तु) कोई भी मुनि सुदामा के मर्म को (उनके ज्ञान-जन्य वैराग्य को, पवित्र अनासक्त वृत्ति को) नहीं जान लेता था । सब उन्हें मलिन, पागल और दरिद्र कहते थे । ३ (फिर) बिना माँगे,

जाच्या बिना कोई केम आपे ?
घणे दुःखे काया कांपे । ४ ।
भिक्षानुं काम कामिनी करे,
कोनां वस्त्र धूए ने पाणी भरे । ५ ।
जेम तेम करीने लावे अन्न,
निज कुटुंब पोषे स्त्री-जन । ६ ।
घणा दिवस दुःख एणी पेरे सह्यु,
पछे पुरमां अन्न जडतुं रह्यु । ७ ।
बाळकने थया बे उपवास,
तव स्त्री आवी सुदामा पास । ८ ।
" हुं वीनवुं जोडीने हाथ ",
अबळा कहे, " सांभळीए नाथ ! । ९ ।
भूखयां बाळक करे रुदन,
नगरमां नथी मळतुं अन्न । १० ।
न मळे कंद, मूळ के फळ,
बे दिवस थया लई रहे जळ । ११ ।
सुख-शय्या, भूषण, पटकूळ,
ते क्यांथी ? हरि नथी अनुकूळ " । १२ ।

कोई (किसी को) कैसे दे ? (सुदामा किसी से कुछ नहीं माँगते थे, अतः कोई भी उन्हें कुछ नहीं देता था।) दरिद्रता-जन्य बहुत दुःख से (शक्तिहीन, जर्जर होने के कारण) उनकी देह काँपती रहती थी। ४ उनकी स्त्री भिक्षा (माँगकर लाने) का काम किया करती थी। (इसके अतिरिक्त) वह किसी के वस्त्र धोती और (किसी के यहाँ) पानी भरती थी। ५ जैसे-वैसे करके वह अन्न लाया करती थी। वह स्त्री (इस प्रकार) अपने परिवार का (भरण-) पोषण किया करती थी। ६ उसने बहुत दिन, इस प्रकार दुःख को सहन किया। अनन्तर नगर में अन्न मिलने से रहा (अन्न मिलना बन्द हो गया)। ७ बच्चों को दो अनशन हो गये, तब वह स्त्री सुदामा के पास आ गयी। ८ वह अबला बोली, ' हे नाथ, सुनिए। मैं हाथ जोड़कर विनती करती हूँ। ९ भूखे बालक रुदन कर रहे हैं। नगर में अन्न (ही) नहीं मिल रहा है। १० कन्द, मूल वा फल नहीं मिल रहे हैं। दो दिन हो गये हैं, जब से वे पानी (पी) लेकर रह रहे हैं। ११ (फिर) सुख (-युक्त)-शय्या, आभूषण

भूख्यां बाळक जुए मानुं मुख,
स्त्री जई कहे स्वामीने दुःख । १३ ।
" हुं कहेतां लागीश अळखामणी,
स्वामी, जुओ आपणा घर भणी । १४ ।
धातु-पात्र नहि कर साहवा,
साजुं वस्त्र नथी सम खावा । १५ ।
जेम जळ विण वाडी झाडुवा,
तेम अन्न विण बाळक बाडुवां । १६ ।
आ नीचुं घर, भींतडीओ पडी,
श्वान मांजर आवे छे चडी । १७ ।
अतीत फरीने निर्मुख जाय,
गवानिक नहि पामे गाय । १८ ।
करो छो मंत्र भणीने सेव,
नैवेद्य बिना पूजाये देव । १९ ।
पूज्य पर्वणी को नव जमे,
जेवो ऊगे तेवो आथमे । २० ।

और वस्त्र तो कहाँ से आएँगे ? (जान पड़ता है कि) भगवान श्रीहरि हमारे प्रति अनुकूल (प्रसन्न) नहीं हैं '। १२

भूखे बच्चे माँ के मुख को देखते रहते थे। तो उस स्त्री ने जाकर अपने स्वामी से (घर का) दुःख कहा। १३ (वह बोली—) " मेरे द्वारा कहने पर आपको अप्रिय लगेगा। परन्तु हे स्वामी, अपने घर की ओर देखिए। १४ हाथ में धरने के लिए (घर में) धातु का कोई पात्र नहीं है। शपथ करने के लिए भी अखण्ड वस्त्र नहीं है। १५ जिस प्रकार फुलवारी में, बिना पानी के पौधे (सूख जाते) हों, उसी प्रकार बापुरे (बेचारे) बच्चे बिना अन्न के, (दीन-हीन) हो गये हैं। १६ यह निचला-छोटा घर है। उसकी भित्तियाँ ढह पड़ी हैं। इसमें कुत्ते, बिल्लियाँ पैठकर आ जाते हैं। १७ अतिथि (कुछ स्वागत आदि न होने की आशंका से) लौटकर, विमुख होकर जाते हैं। गाय गो-ग्रास (तक) को प्राप्त नहीं हो रही है। १८ आप (केवल) मंत्र पढ़कर (देवों की) सेवा करते हैं, बिना नैवेद्य के देवों का पूजन करते हैं। १९ पूज्य (पावन) पर्वणी के दिन कोई भोजन नहीं कर पाता। वह दिन जैसे निकलता है, वैसे ही अस्त को प्राप्त हो जाता है (ढल जाता है)। २० सब कोई संवत्सरी (वार्षिक) श्राद्ध सम्पन्न करते हैं; (परन्तु) आप नहीं

श्राद्ध समछरी सहु को करै,
आपणा पित्री निर्मुख फरे। २१।
आ बाळक परणाववा पडशे,
सतकुलनी कन्या केम जडशे। २२।
अन्न विना पुत्र मारे वागलां,
तो क्यांथी आवे टोपी आंगलां। २३।
वाये टाढ बाळकडां रुए,
भस्म मांहे पेसीने सूए। २४।
हुं ते धीरज केई पेरे धरुं ?
तमारुं दुःख देखीने मरुं। २५।
अखोटियुं पोतियुं नव मळे,
स्नान करो छो शीतळ जळे। २६।
वाध्या नख ते वाधी जटा,
मांहे उडे राखोडी घटा। २७।
दर्भ तणी तूटी सादडी,
ते उपर, नाथ, रहो छो पडी। २८।
बीजे त्रीजे कांई पामो आहार,
ते मुजने दहे छे अंगार। २९।

कर सकते, इसलिए अपने पितर (बिना कुछ पाये) विमुख होकर चले जाते हैं। २१ इन बालकों का विवाह तो करना पड़ेगा, तब (उनके लिए) अच्छे कुल की कन्याएँ कैसे मिलेंगी। २२ बिना अन्न के पुत्र तड़प रहे हैं। तो (फिर उनके लिए) टोपियाँ और अँगरखे कहाँ से आएँगे। २३ (जब) ठण्ड लगती है, तब बच्चे रोते हैं (और फिर उससे बचने के लिए) भस्म (के ढेर) में पैठकर सो जाते हैं। २४ मैं तो किस प्रकार धीरज धारण करूँ ? मैं आपके दुःख को देखकर मर रही हूँ। २५ (पीताम्बर अथवा रेशम आदि का सुमंगल वस्त्र) पाक-साफ़ पवित्र वस्त्र (जो पूजन, भोजन करते समय पहना जाता है) मिल नहीं रहा है। आप स्नान (भी) ठण्डे पानी में करते हैं। २६ आपके नख बढ़े हैं और जटाएँ बढ़ी हैं, उनमें से (मानो) भस्म के बादल (-से) उड़ते रहे हैं। २७ दर्भ की (बनायी हुई) चटाई फट गयी है। (फिर भी) हे नाथ, आप उसी पर पड़े-लेटे रहते हैं। २८ (जब) आप दूसरे-तीसरे दिन आहार को प्राप्त हो जाते हैं (आपको प्रतिदिन तो भोजन नहीं मिल रहा है), तो (यह देखकर) मुझे अंगार जलाते रहते हैं। २९ मैं तो दरिद्रता के सागर

हुं तो दारिद्र-समुद्रमां बूडी,
हेवातणमां एकेकी चूडी । ३० ।
सौभाग्यनो नथी शणगार,
नहि काजळ, नहि कीडियाहार । ३१ ।
नहि ललाटे देवा कंकु,
आ शरीर अन्न बिना सूक्युं । ३२ ।
हुं पूछुं लागीने पगे,
एवुं दुःख सहीशुं क्यां लगे । ३३ ।
तमे दहाडी कहो छो भरथार,
छे माधव साथे मित्राचार । ३४ ।
जे रहे कल्पवृक्षनी तळे,
तेने शी वस्तु नव मळे । ३५ ।
जे जीव जळमां क्रीडा करे,
ते प्राणी केम तरसे मरे ? । ३६ ।
जे प्रकट करी सेवे हुताश,
तेने शीत केम आवे पास । ३७ ।
अमृत-पान कीधुं जे नरे,
ते जम-किंकरथी केम डरे । ३८ ।
जेने सरस्वती जीभे वसी,
तेने अध्ययननी चिन्ता कशी ? । ३९ ।

में डूब गयी हूँ । (मेरे पास) सुहाग में एक-एक चूड़ी (ही) है । ३० सुहाग का (मेरे पास) कोई साज-सिंगार नहीं है— न काजल है, न कांच के मनकों का हार है । ३१ मस्तक पर लगाने के लिए कुंकुम नहीं है । बिना अन्न के यह शरीर सूख गया है । ३२ मैं आपके पाँव लगकर पूछती हूँ— 'मैं ऐसा दुःख कब तक सहती रहूँ ? ३३ हे पति (-राज), आप (मुझसे) प्रति दिन कहा करते हैं कि मेरी माधव (श्रीकृष्ण) के साथ मित्रता है । ३४ तो (फिर) जो कल्पबृक्ष के तले रहता हो, उसे कैसी (कौन) वस्तु नहीं मिल सकती ? ३५ जो जीव पानी में क्रीड़ा करता है, वह प्राणी (प्यास से) तरसते हुए कैसे मर सकता है ? ३६ जो अग्नि को प्रकट, अर्थात प्रज्वलित करके उसे काम में लाता है, उसके पास ठण्ड किस प्रकार आ पाएगी ? ३७ जिस नर ने अमृत का पान किया है, वह यम के दूत से कैसे (क्यों) डरे ? ३८ जिसकी जिह्वा पर सरस्वती ने निवास किया है, उसे अध्ययन की कैसी चिन्ता ? ३९ जिसने सद्गुरु के

सद्गुरुनां जेणे सेव्यां चरण,
तेने शानुं मायावरण ? । ४० ।
जेणे जाह्नवी सेवी सदा,
तेने जन्म-मरणनी शी आपदा ? । ४१ ।
जेनुं मन हरि-चरणे वस्युं,
ते प्राणीने पातक कशुं ? । ४२ ।
जेणे स्नेह शामळिया साथ,
तेनुं घर नव होय अनाथ । ४३ ।
छेल्ली विनति दासी तणी,
प्रभु पधारो भूधर भणी । ४४ ।
ते चौद लोकनो छे महाराज,
ब्राह्मणने भीखतां शी लाज ? । ४५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

लाज न कीजे, नाथजी, माधव मन-वांछित फळ आपशे ।
दीन जाणी त्रूठशे, पछे भवनी भावठ भांगशे" । ४६ ।

चरणों की सेवा की हो, उसके लिए माया का कौन आवरण है ? ४० जिसने सदा जाह्नवी[1] (गंगाजी) के समीप निवास किया हो, उसके लिए जन्म-मरण की आपदा कैसी हो सकती है ? ४१ जिसका मन श्रीहरि के चरणों में बस गया है, उस प्राणी के लिए कैसा पाप ? ४२ (उसी प्रकार) जिसको श्याम श्रीकृष्ण से स्नेह हुआ है, उसका घर अनाथ (आश्रयहीन) नहीं हो सकता । ४३ (इसलिए मुझ) दासी की यह अन्तिम विनती है— हे प्रभु, आप भूधर[2] श्रीकृष्ण के प्रति गमन कीजिए । ४४ वे चौदह लोकों[3] (भुवनों) के महाराजा हैं । (फिर) ब्राह्मण को उनसे भिक्षा माँगने में कैसी लज्जा हो सकती है ? ४५

---

१ जाह्नवी— भगीरथ अपने पितरों का उद्धार करने के लिए स्वर्ग की गंगा को पृथ्वी पर उतार लाये । गंगा के प्रवाह के मार्ग में राजा जह्नु तपस्या-रत थे । उससे उनकी तपस्या में बाधा उत्पन्न हुई, तो उन्होंने उसके समस्त जल को पी डाला । तदनन्तर भगीरथ ने जह्नु को प्रसन्न कर लिया, तो उन्होंने गंगा की धारा को अपने कान द्वारा मुक्त करके बहने दिया । इस दृष्टि से गंगा नदी जह्नु से उत्पन्न हुई, अतः 'जाह्नवी' कहाती है ।

२ भूधर— देखिए टिप्पणी ३, कड़वक १, पृ० ४४१ ।

३ चौदह लोक (भुवन)— भूः, भुवर्, स्वर्, महर्, जनः, तपः, सत्य, अतल, वितल, सुतल, महातल, तलातल, रसातल और पातल (पाताल) ।

हे नाथजी, आप लज्जा न अनुभव करें। माधव (श्रीकृष्ण) आपको (आपका) मनोवांछित (मनचाहा) फल प्रदान करेंगे। वे आपको दीन समझकर आप पर प्रसन्न हो जाएँगे। अनन्तर संसार-भ्रमण का (जन्म-मृत्यु के रूप में बार-बार संसार में आने और उससे जाने के चक्र में फँसकर भ्रमण करते रहने का) दुःख दूर हो जाएगा। ४६

कडवुं ३ जुं-- (सुदामा द्वारा अपनी पत्नी को समझाने का यत्न करना)

राग गोडी

जईने जाचो जादवराय, भावठ भांगशे रे,
हुं तो कहुं छुं लागी पाय, भावठ भांगशे रे।
धन नहि जडे तो गोमती-मज्जन,
दर्शन-फल नहि जाय, भावठ०। १।
सुदामो कहे विप्रने, नथी मागतां प्रतिवाय,
पण मित्र आगळ माम मूकी, जाचतां जीव जाय।
माम न मूकीए रे। २।
प्रेमदा कहे, प्रभुजी, ए चौद भुवननो राज,
शिर उपर छे श्रीपति, त्यां मागतां शी लाज? भावठ०। ३।

कड़वक--३ (सुदामा द्वारा अपनी पत्नी को समझाने का यत्न करना)

(सुदामा की स्त्री बोली--) '(द्वारका) जाकर यादवराज श्रीकृष्ण से (कुछ) माँग लीजिए, तो संसार का जंजाल टूट (नष्ट हो) जाएगा। मैं (आपके) पाँव लगते हुए कह रही हूँ-- (श्रीकृष्ण से विनती करने पर) संसार-भ्रमण का दुःख (संसार का जंजाल भग्न होकर) दूर हो जाएगा। (मान लीजिए कि) धन न मिले, तो भी गोमती नदी में स्नान करने और (भगवान श्रीकृष्ण के) दर्शन का फल तो (कहीं) नहीं जाएगा (यह लाभ तो अवश्य होगा)। सांसारिक जंजाल ०। १ (यह सुनकर) सुदामा ने कहा, 'विप्र को (दान आदि) माँगने में कोई प्रत्यवाय (दोष, पाप) नहीं है। फिर भी अपनी (अयाचक व्रत सम्बन्धी) टेक का त्याग करके मित्र के सम्मुख (जाकर उनसे) माँगने में (जान पड़ता है कि) प्राण निकलकर जा रहे हैं। (अतः अपनी) टेक नहीं छोड़ें'। २ स्त्री बोली, 'हे प्रभुजी, यह चौदह भुवनों का राज्य है। उसके सिर पर (राजा के रूप में) श्रीपति भगवान कृष्ण हैं। उनसे माँगते हुए कैसी

शुं कहेवुं पडशे कृष्णने ? अंतरजामी अजाण ?
घट घटमां व्यापी रह्यो, पूरण पुरुष पुराण। मामo। ४।
उदर कारण नीच कने जई, कीजे विनति प्रणाम,
ए स्थानक छे नमवातणुं, मामे वणसे काम। भावठo। ५।
जादव सघळां देखतां केम, ओढुं जमणो हाथ ?
हुं दुर्बळ मित्रनुं रूप देखीने, लाजे लक्ष्मीनाथ। मामo। ६।
प्रभु, पुरुष ते जे उद्यमी, जई करे पोतानुं काज,
ब्राह्मणनो कुलधर्म छे, तो भीखतां शी लाज ? भावठ। ७।
अंतरजामी अजाण नथी रे, स्त्री तमने कहुं वारंवार,
दश मास गर्भवास प्राणीनी, रक्षा करे मोरार। मामo। ८।
शो उद्यम करीए एवुं जाणी, संतोष आणीए मंन,
सुख लीलामां हरि वीसरे, भाव थाय आपणो भिन्न। मामo। ९।

लाज ? सांसारिक जंजाल ०'। ३ (सुदामा बोले—) 'श्रीकृष्ण से क्या कहना पड़ेगा ? क्या वे अन्तर्यामी (भगवान हमारी स्थिति से) अपरिचित हैं ? वे पूर्णपुराण पुरुष (श्रीकृष्ण) घट-घट में व्याप्त रहे हैं। (अतः अपनी) टेक न छोड़ें'। ४ (स्त्री बोली—) 'उदर (-भरण) के लिए (वैसे तो) नीच (छोटे तक) के पास जाकर विनती करें, उसको प्रणाम करें। (और फिर) यह स्थान तो नमस्कार करने के योग्य है। (आपकी ऐसी) टेक से तो काम बिगड़ जाता है। (श्रीकृष्ण से याचना करने से) सांसारिक जंजाल ०'। ५ (सुदामा ने कहा—) 'मैं समस्त यादवों के देखते रहते, (श्रीकृष्ण जैसे मित्र के सामने) अपना दाहिना हाथ (दान माँगने के लिए) कैसे बढ़ाऊँ ? लक्ष्मी-पति (विष्णु-स्वरूप कृष्ण) मुझ (जैसे) दुर्बल-दरिद्र मित्र को देखकर लज्जित हो जाएँगे। (अतः अपनी) टेक को ०'। ६ (स्त्री बोली—) 'हे प्रभु, वह पुरुष, जो उद्यमी होता है, जाकर अपना काम करता है। ब्राह्मण का (दान-माँगना-लेना) यह कुल-धर्म है, तो भिक्षा माँगने में क्या लाज ? (श्रीकृष्ण से मिलने पर) सांसारिक जंजाल ०'। ७ (सुदामा बोले—), 'अरी स्त्री, मैं तुमसे यह बार-बार कह रहा हूँ कि अन्तर्यामी भगवान (श्रीकृष्ण) अनजान नहीं हैं। मुरारि भगवान तो गर्भ-वास में दस मास तक प्राणी की रक्षा करते हैं। (अतः अपनी) टेक को ०। ८ ऐसा जानकर क्या उद्योग (काम) करें ? मन में (इसी स्थिति में) सन्तोष करें। सुख-लीला (सुखोपभोग की स्थिति) में श्रीहरि विस्मृत हो जाते हैं। अपना भाव (विचार बदलकर) विपरीत हो जाता है। (अतः अपनी) टेक को न छोड़ें'। ९ (यह सुनकर स्त्री बोली—) 'फिर माँगने न जाएँ और

जाचवा न जईए ने पडी रहीए, तो केम जीवे परिवार ?
एक वार जाओ जाचवा, तमने नहीं कहुं बीजी वार । भावठ० । १० ।
जोडवा पाणि, दीन वाणी, थाये वदन पीळुं वर्ण,
ए चिह्न सौ जाचक तणां, माग्यापें रूडुं मरण । माम० । ११ ।
राजा थई विभीषण जाच्या, महावीर धीर जगदीश,
प्रभु सामां पगलां भरे तो, टळे दारिद्र्य ने रीस । भावठ० । १२ ।
जगतना मननी वार्ता, जाणे अंतरजामी राम,
अहीं बेठा नवनिध आपशे, तहीं गयानुं शुं काम ? माम० । १३ ।
सुदामो कहे नारने, क्यम चाले मारा पाय,
मित्र आगळ माम मूकिये, धिक्क पडो मारी काय । माम० । १४ ।
कहेवुं नहि पडे कृष्णजीने, नथी अंतरजामी अजाण,
घटघटमां व्यापी रह्यो छे, पूरण पुरुष पुराण । माम० । १५ ।

(घर में यों ही) पड़े रहें, तो परिवार जीवित कैसे रहेगा ? (अतः) आप एक बार (ही) माँगने के लिए जाइए। आप से मैं दूसरी बार (जाने को) नहीं कहूँगी। (जाने पर) सांसारिक जंजाल ०'। १० (सुदामा ने कहा—) '(माँगने के लिए) हाथ जोड़ते (समय), वाणी दीन होती है, वदन पीले वर्ण का हो जाता है, फीका पड़ जाता है। समस्त याचकों के ये लक्षण हैं। माँगने से मौत अच्छी होती है। (अतः अपनी) टेक को न छोड़ें'। ११ (स्त्री बोली—) 'राजा होकर भी विभीषण ने महावीर धीर (पुरुष) जगदीश (राम) से माँग लिया। प्रभु के सामने पाँव बढ़ा देते हैं, तो दरिद्रता और दुःख टल जाता है। सांसारिक जंजाल ०'। १२ (सुदामा बोले—) 'राम अन्तर्यामी हैं। वे जगत के मन की वार्ता (स्थिति-गति सम्बन्धी समाचार) जानते हैं। वे (चाहें तो हमारे) यहाँ बैठने पर (भी) नौ निधियाँ[1] दे सकते हैं। अतः वहाँ जाने का क्या काम (आवश्यकता)? (अतः अपनी) टेक को न छोड़ें। १३ सुदामा ने अपनी स्त्री से कहा, 'मेरे पाँव कैसे चल पाएँगे ? मित्र के सामने अपनी टेक को त्यज दें, तो धिक्कार है। तब तो मेरी देह गिर जाए। (अतः अपनी) टेक को न छोड़ें। १४ (हमें) श्रीकृष्ण से कहना न हीं पड़ेगा। वे अन्तर्यामी (हैं), अनजान नहीं हैं। वे पूर्ण पुराण पुरुष घट-घट में व्याप्त हैं।

---

१ नव निधियाँ— महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व। अथवा— हय, गज, रथ, दुर्ग, भण्डार, अग्नि, रत्न, धान्य और प्रमदा।

तमो ज्ञानी, त्यागी, वेरागी, छो पंडित गुणभंडार,
हुं जुगते जीवुं केम करी ? नीच नारीनो अवतार। भावठ०। १६।

वलण (तर्ज बदलकर)

अवतार स्त्रीनो अधम कही, ऋषि-पत्नी आंसु भरे,
दुःख पामी जाणी प्रेमदा, पछे सुदामोजी ऊचरे। १७।

(अतः अपनी) टेक को न छोड़ें'। १५ (स्त्री बोली—) 'आप ज्ञानी हैं, त्यागी, विरागी हैं। आप पण्डित हैं, गुण-भण्डार हैं। (फिर भी) मैं युक्ति-पूर्वक किस प्रकार (का आयोजन करके इस दरिद्रता में) जीवित रह सकती हूँ ? मैं तो नीच, स्त्री के जन्म को प्राप्त हुई हूँ। (अतः मुझे लगता है कि श्रीकृष्ण से मिलने पर) सांसारिक जंजाल ०'। १६

स्त्री के जन्म को अधम कहकर ऋषि सुदामा की पत्नी ने आँखों में आँसू भर लिये। फिर अनन्तर यह जानकर कि (अपनी) स्त्री दुःख को प्राप्त हुई है, सुदामाजी बोले। १७

कडवुं ४ थुं-- (सुदामा द्वारा अपनी स्त्री को उपदेश देना; स्त्री द्वारा अन्न का महत्त्व बताते हुए सुदामा से विनती करना)

राग रामग्री

पछे सुदामोजी बोलिया, सुण सुंदरी रे,
हुं कहुं ते शीख मान, घेली कोणे करी रे!। १।
जे निम्युं छे ते पामीए, सुण सुंदरी रे,
विधिए लखी वृद्धि हाण, घेली कोणे करी रे!। २।

कड़वक--४ (सुदामा द्वारा अपनी स्त्री को उपदेश देना; स्त्री द्वारा अन्न का महत्त्व बताते हुए सुदामा से विनती करना)

अनन्तर सुदामाजी बोले, 'अरी सुन्दरी, सुन लो। मैं तुम्हें (जो) सिखावन दे रहा हूँ, उसे तुम (ठीक) मान लो (स्वीकार करो)। तुम्हें किसने पागल बना लिया है ? १ अरी सुन्दरी, सुन लो। जो निर्मित किया गया हो (जो भाग्य में लिखा हो), उसे हम प्राप्त हो जाएँ। विधाता ने वृद्धि (उत्कर्ष, लाभ) और हानि (प्रत्येक मनुष्य के भाग्य में) लिखी है। तुम्हें किसने पागल बना लिया है ? २ हे सुन्दरी, सुन लो। (मनुष्य

सुकृत दुकृत बे मित्र छे, सुण सुंदरी रे,
जाय प्राण आत्माने साथ, घेली कोणे करी रे! । ३ ।
दीधा विना केम पामीए? सुण सुंदरी रे,
नथी आप्युं जमणे हाथ, घेली कोणे करी रे! । ४ ।
जो खडधान खेडी वावीए, सुण सुंदरी रे,
तो क्यांथी जमीए शाळ? घेली कोणे करी रे! । ५ ।
जळ वही गये शी शोचना, सुण सुंदरी रे,
जो प्रथम न बांधी पाळ? घेली कोणे करी रे! । ६ ।
एकादशी-व्रत कीधां नथी, सुण सुंदरी रे,
न कीधां तीरथ उपवास, घेली कोणे करी रे। ७ ।
पितृतर्पण कीधां नथी, सुण सुंदरी रे,
नहीं वाश ने गोग्रास, घेली कोणे करी रे। ८ ।
ब्रह्मभोजन कीधां नथी, सुण सुंदरी रे,
नहि कीधां होमहवन, घेली कोणे करी रे। ९ ।

के) सुकृत (सत्कर्म, उससे प्राप्त पुण्य) और दुष्कृत (असत्कर्म, उससे प्राप्त पाप) नामक दो मित्र होते हैं। प्राण तो आत्मा के साथ जाते हैं (वे पुण्य और पाप मनुष्य के प्राणों के साथ आत्मा से चिपककर आते हैं और जाते हैं)। (अतः हमें जो मिल रहा है या नहीं मिल रहा है, वह हमारे अपने किये पुण्य और पापकर्म के अनुसार मिल रहा है; इसका ध्यान रखो; अधिक की आशा क्यों कर रही हो?) तुम्हें किसने पागल बना लिया है? ३ अरी सुन्दरी, सुन लो। बिना दिये, किस प्रकार प्राप्त करें? मैंने तो (कभी कुछ) दाहिने हाथ से (किसी को) नहीं दिया है। (तो पाऊँगा कहाँ से?) तुम्हें किसने पागल बना लिया है? ४ अरी सुन्दरी, सुन लो। (हम) यदि कोई कदन्न (हलका अनाज), खेत को जोतकर बोएँ, तो शालि नामक बढ़िया जाति का चावल कहाँ से खाएँ? तुम्हें किसने पागल बना लिया है? ५ अरी सुन्दरी, सुन लो। यदि पहले मेड़ (बाँध) न बनायी हो, तो पानी के बह जाने पर कैसा शोक? तुम्हें किसने पागल बना लिया है? ६ अरी सुन्दरी, सुन लो। मैंने एकादशी के व्रत नहीं रखे, न तीर्थक्षेत्र की यात्रा की, न उपवास किये (इस स्थिति में मुझे पुण्य का फल नहीं मिलेगा)। तुम्हें किसने पागल बना लिया है? ७ अरी सुन्दरी, सुन लो। मैंने पितृ-तर्पण नहीं किये। मैंने न (श्राद्ध आदि के अवसर पर दी जानेवाली) काकबलि दी, न (भोजन के समय) गोग्रास दिया। तुम्हें किसने पागल बना लिया है? ८ अरी सुन्दरी, सुन लो। मैंने ब्राह्मणों को भोजन नहीं कराये;

अतीत निर्मुख वाळिया, सुण सुंदरी रे,
तो क्यांथी पामीए अन्न ? घेली कोणे करी रे। १०।
हरिप्रीते प्रसाद लीधो नहि, सुण सुंदरी रे,
हुतशेष न कीधो आहार, घेली कोणे करी रे ! । ११ ।
उदर दुर्भर पापे भर्यु, सुण सुंदरी रे,
छूट्यां पशुनो अवतार, घेली कोणे करी रे !। १२ ।
संतोष-अमृत चाखीए, सुण सुंदरी रे,
हरिचरणे सोंपो मन, घेली कोणे करी रे ! । १३ ।
भक्तिए नवनिध आपशे, सुण सुंदरी रे,
धारो धीर तमे स्त्रीजन, घेली कोणे करी रे ! । १४ ।
जळे आंख भरी अबळा कहे, ऋषिरायजी रे,
मारुं जड थयुं छे मन, लागुं पाय जी रे। १५ ।
ए ज्ञान मने गमतुं नथी, ऋषिरायजी रे,
रुए बाळक, लावो अन्न, लागुं पाय जी रे। १६ ।

न होम-हवन किये। तुम्हें किसने पागल बना लिया है? ९ अरी सुन्दरी, सुन लो। हमने (कुछ न देते हुए, स्वागत न करते हुए) अतिथियों को विमुख लौटा दिया, तो अन्न कहाँ से प्राप्त करें ? तुम्हें किसने पागल बना लिया है ? १० अरी सुन्दरी, सुन लो। मैंने श्रीहरि के प्रेम से (भक्ति-भाव से) प्रसाद नहीं ग्रहण किया। होम-हवन करके शेष हविष्यान्न का सेवन नहीं किया। तुम्हें किसने पागल बना लिया है ? ११ अरी सुन्दरी, सुन लो। मैंने भरने के लिए इस कठिन पेट को पापों से भर लिया (पेट भरने के लिए मैंने बहुत पाप किये)। पिछले जन्म में मेरे द्वारा कोई पुण्यकर्म न करने पर भी (जिसके फल-स्वरूप मुझे पशु का जन्म लेना पड़ जाता), मैं पशु के जन्म से छूट गया हूँ, मैं पशु-रूप में नहीं जनमा। (यह मेरे लिए कम नहीं है)। तुम्हें किसने पागल बना लिया है ? १२ अरी सुन्दरी, सुन लो। (हम) सन्तोष रूपी अमृत को चख लें। तुम अपने मन को श्रीहरि के चरणों पर सौंप दो (लगा लो, समर्पित कर लो)। तुम्हें किसने पागल बना लिया है। १३ हे सुन्दरी, सुन लो। भगवान श्रीहरि (उससे प्रसन्न होते हुए) नौ निधियाँ दे देंगे। अतः हे स्त्री, तुम धीरज धारण करो। (तुम अधीर बनी हुई हो।) तुम्हें किसने पागल बना लिया है ?' १४ (यह सुनकर) अश्रु-जल से आँखों को भरकर वह अबला बोली, 'हे ऋषिरायजी, मेरा मन जड़ बना है (आपके मन की भाँति ज्ञान से युक्त नहीं है)। मैं आपके पाँव लगती हूँ। १५ हे ऋषिरायजी, यह (आप

कोने अन्न विना चाले नहि, ऋषिरायजी रे,
मोटा जोगेश्वर हरि-भक्त, लागुं पाय जी रे। १७।
अन्न विना भजन सूझे नहि, ऋषिरायजी रे,
जीवे अन्ने आखुं जगत, लागुं पाय जी रे। १८।
शिवे अन्नपूर्णा घेर राखियां, ऋषिरायजी रे,
रविए राख्युं अक्षयपात्र, लागुं पाय जी रे। १९।
ऋषि सेवे कामधेनुने, ऋषिरायजी रे,
तो आपण ते कोण मात्र? लागुं पाय जी रे। २०।
देव सेवे कल्पवृक्षने, ऋषिरायजी रे,
मनवांछित पामे आहार, लागुं पाय जी रे। २१।
अन्न विना धरम सूझे नहि, ऋषिरायजी रे,
ऊभो अन्ने आखो संसार, लागुं पाय जी रे। २२।
उद्यम निष्फल जाशे नहि, ऋषिरायजी रे,
जई जाचो हरि बलदेव, लागुं पाय जी रे। २३।

द्वारा बताया हुआ)ज्ञान मुझे अच्छा नहीं लगता। बच्चे रो रहे हैं; उनके लिए (ज्ञानोपदेश न करते हुए) अन्न लाइए। मैं आपके पाँव लगती हूँ। १६ हे ऋषिरायजी, बिना अन्न के, किसी की नहीं चलती; (फिर) वह कोई बड़ा योगेश्वर (महान योगी), श्रीहरि का भक्त क्यों न हो। मैं आपके पाँव लगती हूँ। १७ हे ऋषिराजजी, बिना अन्न के, किसी को भक्ति सुझायी नहीं देती। समस्त जगत अन्न (के आधार) पर (ही) जीवित रहता है। मैं आपके पाँव लगती हूँ। १८ हे ऋषिरायजी, शिवजी ने अन्न-पूर्णा (अन्न की आवश्यकता को पूर्ण करनेवाली, उमाजी) को घर में रखा। सूर्य ने अक्षय-पात्र रखा (जो कभी अन्न के क्षय को प्राप्त नहीं हो जाता है)। मैं आपके पाँव लगती हूँ। १९ हे ऋषिरायजी, (वसिष्ठ) ऋषि कामधेनु को काम में लाते रहे। तो (उनकी तुलना में) केवल हम कौन हैं? मैं आपके पाँव लगती हूँ। २० हे ऋषिरायजी, देव कल्पवृक्ष को काम में लाते हैं और उससे मनोवांछित (मनचाहे) आहार को प्राप्त हो जाते हैं। मैं आपके पाँव लगती हूँ। २१ हे ऋषिरायजी, बिना अन्न के किसी को धर्म (के अनुसार आचरण करना) नहीं सुझायी देता। अखिल संसार अन्न (के आधार) पर खड़ा है। मैं आपके पाँव लगती हूँ। २२ हे ऋषिरायजी, उद्यम (करना) कभी फलहीन नहीं हो जाता। (इसलिए) जाकर श्रीहरि और बलदेव (बलराम) से (कुछ) माँग लीजिए। मैं आपके पाँव लगती हूँ। १२ हे ऋषिरायजी,

भाले लख्या अक्षर दारिद्रना, ऋषिरायजी रे,
धोशे धरणीधर ततखेव, लागुं पाय जी रे। २४।

वलण (तर्ज बदलकर)

ततखेव त्रिकम छेदशे, दारिद्र केरां झाड रे,
प्रभु पधारो द्वारका, हुं मानुं तमारो पाड रे। २५।

(हमारे) मस्तक पर (विधाता द्वारा) दरिद्रता के अक्षर लिखे हैं। धरणीधर (भगवान श्रीकृष्ण) तत्क्षण उन्हें धो डालेंगे। मैं आपके पाँव लगती हूँ। २४

भगवान त्रिविक्रम[1] (वामनावतार धारण करनेवाले भगवान विष्णु-स्वरूप श्रीकृष्ण) दरिद्रता के पेड़ों को काट डालेंगे। इसलिए, हे प्रभु, द्वारका जाइए; (तब) मैं आपका उपकार मानती हूँ (मानूंगी)। २५

कडवुं ५ मुं-- (सुदामा का द्वारका के प्रति गमन)

राग रामग्री

कहे शुक जोगी, सांभळो रायजी,
फरी फरी प्रेमदा लागे पाय जी।

कड़वक--५ (सुदामा का द्वारका के प्रति गमन)

योगी शुकजी बोले, हे राजा (परीक्षितजी), सुनिए। (सुदामा की) स्त्री बार-बार उनके पाँव लग रही थी। तो सुदामा ने स्वयं सोचा (माना)

१ त्रिविक्रम— देवासुर-संग्राम में देवों की हार होकर उन्हें भाग जाना पड़ा। कालान्तर में असुर-राज बलि वैरोचन भूमि का वितरण करने के लिए तैयार हुआ। बलि याचक को मुँहमाँगा दान दिया करता था। उस समय भगवान विष्णु ने कश्यप-अदिति के पुत्र के रूप में वामनावतार धारण किया। 'वामन' का अर्थ है छोटा, नाटा। इस वामन— छोटे बटु ने बलि के पास जाकर दान में तीन पद भूमि की माँग की। गुरु शुक्र ने सच्चाई को जानकर बलि से कहा कि वह उस माँग को स्वीकार न करे। फिर भी बलि ने अपने व्रत में अविचल रहकर 'तथास्तु' कहा। तब वामन ने विराट् रूप धारण करके दो पगों में पृथ्वी और स्वर्ग को व्याप्त कर लिया, तो तीसरा पद रखने के लिए बलि ने अपना मस्तक वामन के सामने झुकाया। तब वामन ने उस पर पाँव रखकर बलि को तत्क्षण पाताल में खदेड़ डाला। तीन पदों में ही समस्त त्रिभुवन को व्याप्त करने के कारण वामन 'त्रिविक्रम' कहाने लगे। इस शब्द से भगवान विष्णु तथा उनके अवतार भी सूचित होते हैं।

विप्र सुदामो आप विचारे जी,
निश्चे जाचवा जावुं पडशे मारे जी। १।

ढाळ

जवुं पडे मुजने सर्वथा, घणुं रुए अबळा रांक,
अन्न विना बाळक टळवळे, तो वामानो शो वांक ?। २।
पत्नी प्रत्ये कहे सुदामो, "तमो जीत्या, हार्यो हुंय,
कहो भामिनी, भगवंतने जई भेट मेलुं शुंय ?। ३।
काका कहीने निकट आवे, कृष्ण-सुत-समुदाय,
ते खावुं मागे, मुने वज्र लागे, ते मूकुं शुं करमांय ?"। ४।
सुणी हरख पामी प्रेमदा, गई पडोशणनी पास,
"बाई, आज काज करो मारुं, तो हुं मूले लीधी दास। ५।
द्वारामती मम पति पधारे, जाचवा जदुराय,
अमो दुगणुं करीने वाळशुं, कांई उछीनुं आपो माय"। ६।
ते पाडोशणने दया आवी जे, दुर्बळ आवी मागवा,
सूपडुं भरीने ऋषिपत्नीने, तेणीए आप्या कांगवा। ७।

कि (अब) मुझे निश्चय ही माँगने के लिए जाना पड़ेगा। १ मुझे किसी भी प्रकार जाना पड़ेगा। यह दीन (-असहाय) अबला बहुत रो रही है। बिना अन्न के (अन्न के अभाव में) बच्चे तड़प रहे हैं, तो उस स्त्री का (इसमें) क्या दोष ? २ (अनन्तर) सुदामा ने पत्नी से कहा, 'तुम जीत गयी, मैं हारा। अरी भामिनी, कहो तो मैं जाकर भगवान को क्या भेंट (उपहार) दूँ ? ३ (मुझे) 'काका' ('काका') कहते हुए कृष्ण के पुत्रों का समुदाय (मेरे) निकट आ जाएगा, वे खाने के लिए (मिठाई, पकवान आदि वस्तु) माँग लेंगे, तो मुझे वज्र (-सा) लगेगा। मैं उनके हाथ में क्या दूँ ?' ४ यह सुनकर वह स्त्री हर्ष को प्राप्त हुई। (फिर) वह पड़ोसिन के पास गयी (और उससे उसने विनती की)— 'बाईजी, आज मेरा काम करोगी, तो मैं तुम्हारी मोल ली हुई दासी हुई (समझो)। ५ मेरे पति यदुराज श्रीकृष्ण के पास (कुछ) माँगने के लिए जा रहे हैं। मैं दुगुना करके लौटा दूंगी; अरी माँ, (मुझे) कुछ उधार दो'। ६ उस पड़ोसिन को उसपर (यह देखकर) दया आ गयी कि एक दुर्बल (दीन स्त्री) कुछ माँगने के लिए आयी है। (अतः) उसने एक सूप भरकर उस ऋषि-पत्नी को कंगु (नामक हलकी जाति के धान के दाने) दिये। ७ (तत्पश्चात् घर लौटकर) उस (ऋषि-पत्नी) ने उन्हें ओखली में डालकर कूटते हुए उनमें से बीज (दाने) निकाल दिये।

ओखणा मांहे घणुं ओखणी, मांह्यथी काढ्यां बीज,
तगतगता तांदुल देखीने, ऋषिजी पाम्या रीझ । ८ ।
मारगमां छोवाय नहि, छे त्रिकमना तांदुल,
लई जवा जुगते करी, नहि बांधवा पटकूल । ९ ।
उपराउपरी बंधन कीधां, चींथरां दश-वीस,
रत्नी पेरे जतन कीधुं, जेम छोडतां चडे रीस । १० ।
ऋषि सुदामाने कहे बाळक, करीने रोतां मुख,
"पिताजी एवुं लावजो, जेणे जाय अमारी भूख" । ११ ।
एवां दीन वायेक सांभळी, मुनिए मूक्यो निःश्वास,
सुदामो कहे पुत्रने 'परिब्रह्म पूरशे आश' । १२ ।
ऋषि सुदामो सांचर्या, वोळावी वळ्यो परिवार,
त्यागी वेरागी विप्रने छे, भक्तनो शणगार । १३ ।
भाले तिलक ने माला कंठे, मुख राम भणतो जाय,
मूंछ-कूछनुं जाळ वाध्युं, कर्दम दीसे काय । १४ ।
पवन जटामांथी भस्म ऊडे, जाणे धूम्र कोटाकोट,
थाये फटक फटक खासडां, ऊडे धूळना गोटेगोट । १५ ।

चमकते हुए चावल देखकर ऋषिजी प्रसन्नता को प्राप्त हुए । ८ (उन्होंने सोचा—) ये भगवान त्रिविक्रम अर्थात श्रीकृष्ण के लिए दिये जानेवाले चावल हैं, (अतः) मार्ग में उन्हें छूकर अपवित्र नहीं करें । उन्हें युक्तिपूर्वक लेकर जाने के लिए, उन्हें बाँधने के लिए (उनके पास) वस्त्र नहीं था । ९ (फिर भी) दस-बीस चीथड़े थे, उनसे उन्होंने ऊपर-ऊपर से उन्हें बाँध लिया । उन्होंने रत्न की भाँति उनकी रक्षा की, जैसे उन्हें खोलनेवाले पर क्रोध आ जाता । १० रोनी मुख-मुद्रा बनाकर बच्चों ने ऋषि सुदामा से कहा, 'पिताजी, (आप कुछ) ऐसा लाइए, जिससे हमारी भूख (मिट) जाए' । ११ ऐसे दीन वचन सुनकर मुनि सुदामा ने ठण्डी सांस ली । (फिर) सुदामा (अपने) पुत्रों से बोले, 'परब्रह्म (-स्वरूप श्रीकृष्ण तुम्हारी) आशा को पूर्ण करेंगे' । १२ ऋषि सुदामा चले गये । उन्हें बिदा करके (समस्त) परिवार लौट आया । उन त्यागी, विरागी ब्राह्मण का सिंगार (साग-सज्जा, वेश-भूषा) भक्त का (-सा) था । १३ उनके भाल पर तिलक (शोभायमान) था और गले में माला (पहनी हुई) थी । मुख से वे 'राम' बोलते (जपते) जा रहे थे । मूंछ-दाढ़ी (के बालों) का (मानो) जाल बढ़ा हुआ था । शरीर कीचड़ (भरा-सा) दिखायी दे रहा था । १४ हवा से जटाओं में से भस्म उड़ रहा था, मानो बहुत

उपान-रेणुए आभ छायो, शुं सैन्य मोटुं जाय,
पथिक मारग जे मळे, ते जोई विस्मय थाय। १६।
तैलाभ्यंग स्वप्ने नहीं, छे रूख ऋषिनुं गात्र,
एक हस्ते ग्रही ज्येष्टिका, ने एक करे तुंबीपात्र। १७।
कोपीन जीरण वस्त्रनुं, वनकूल छे परिधान,
भायेग भानु उदय थयो, करशे कृष्णजी आप-समान। १८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आप-समान करशे कृष्णजी, शुक कहे, सुण नरपति,
थोडे समेमां ऋषिजी आव्या, पुरी द्वारामती। १९।

धूआँ (उड़ रहा) हो। जूते (फटे-टूटे होने के कारण) फटक-फटक (शब्द) कर रहे थे और उनसे धूल की घटाएँ उड़ रही थीं। १५ जूतों से उड़े हुए धूलि-कणों से आकाश आच्छन्न हो गया। (लगता था—) क्या कोई बड़ी सेना जा रही है। जो पथिक मार्ग में मिलता, तो वह उन्हें देखकर विस्मय-चकित हो जाता था। १६ उन्होंने तेल लगाकर अभ्यंग स्नान तो सपने में (तक) नहीं किया था। उन ऋषि का (प्रत्येक अंग) शरीर रूखा-सूखा हुआ था। उन्होंने एक हाथ में लकुटिया (पकड़) रखी थी और एक (दूसरे) हाथ में तूंबी-पात्र था। १७ कौपीन (लँगोटी) जीर्ण वस्त्र का (बना) था, और वल्कल परिधान किया हुआ था। उनके भाग्य (का) सूर्य उदित होने जा रहा था। श्रीकृष्णजी उन्हें अपने समान बना देंगे। १८

शुक मुनि बोले, 'हे नरपति परीक्षित, सुनिए। श्रीकृष्णजी उनको अपने समान बना देंगे'। (इस प्रकार चलते-चलते) थोड़े ही समय में ऋषि सुदामाजी द्वारावती पुरी (के समीप) आ गये। १९

कडवुं ६ ट्ठुं-- (सुदामा का द्वारका में श्रीकृष्ण के राजप्रासाद के द्वार तक पहुँचना)

राग सारंग

शुकजी कहे, सांभळ भूपति, सुदामे दीठी द्वारामती,
कनक-कोट झलकारा करे, मणिक रत्न जड्यां कांगरे। १।

कड़वक--६ (सुदामा का द्वारका में श्रीकृष्ण के राजप्रासाद के द्वार तक पहुँचना)

शुकजी बोले, 'हे भूपति (परीक्षित जी), सुनिए। सुदामा ने द्वारका नगरी को देखा। (उस नगरी के) सोने के प्राचीर जगमगा रहे

वहु कोठार कोशीसां पर्म, जोवा सरखुं विश्वकर्मानुं कर्म,
दुर्गे धजा घणी फरफरे, दुंदुभि ढोल घणां गडगडे। २।
सुदर्शन फरतुं सूसवे, गंभीर नाद सागर घूघवे,
कलोल गोमती-संगम थाय, चतुर्वर्ण त्यां आवी नाह्य। ३।
परम गति प्राणी पामे घणा, नथी मुक्तिपुरीमां मणा,
त्यां ऋषि सुदामे कीधुं स्नान, पछे पुरमां पेठा भगवान। ४।
नगर-लोक बहु जोवा मळे, खीजवे बाळक पूंठे पळे,
जादव स्त्री ताळी दई हसे, "धन्य गाम ज्यां आ नर वसे। ५।
कीधां हशे व्रत तप अपार, ते स्त्री पामी हशे आ भरथार",
को कहे 'इंदु' को कहे 'काम', 'एने रूपे हार्या केशव-राम'। ६।
'पतिव्रतानां मोहशे मन', मर्मवचन बोले स्त्री जन,
को कहे, "हाउ आव्यो विकराळ, देखाडो रोतां रहेशे बाळ"। ७।

थे। उनके कँगूरों में मानिक रत्न जड़े हुए थे। १ उन पर बहुत बुर्ज थे; कपिशीर्ष परम सुन्दर थे। विश्वकर्मा का यह निर्माण-कार्य देखने योग्य था। दुर्ग पर बहुत ध्वज फहर रहे थे। अनेकानेक दुन्दुभियाँ और ढोल गड़गड़ाहट के साथ बज रहे थे। २ सुदर्शन चक्र (जो द्वारका की रक्षा के लिए उसके चारों ओर घूमता रहता था) साँय-साँय करता हुआ भ्रमण कर रहा था। समुद्र गम्भीर ध्वनि करते हुए गरज रहा था। समुद्र की लहरों और गोमती नदी का (जहाँ) संगम होता है; वहाँ चतुर्वर्णों[1] के लोग आकर नहा रहे थे। ३ (वहाँ स्नान करने से) बहुत लोग परम गति, अर्थात मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं। उस मुक्ति प्रदान करनेवाली नगरी में कोई दोष या त्रुटि नहीं थी। सुदामा ऋषि ने वहाँ (संगम में) स्नान किया और अनन्तर वे भगवान (-भाग्यवान पुरुष) उस नगरी में प्रविष्ट हो गये। ४ नगर के बहुत लोग उनको देखने के लिए इकट्ठा हुए। बच्चे उन्हें खिझाने लगे। वे उनके पीछे (-पीछे) जा रहे थे। यादव स्त्रियाँ एक-दूसरी के हाथ पर ताली बजाते हुए हँसती थीं। (उन्होंने कहा—) 'वह ग्राम धन्य है, जहाँ यह पुरुष निवास कर रहा है। ५ वह स्त्री, जिसने अपार व्रतों का निर्वाह और तप किया होगा, इस पति को प्राप्त हुई होगी'। कोई उसे 'चन्द्र' कहती थी, तो कोई 'कामदेव' कहती थी। किसी ने कहा— 'इसके रूप के सामने केशव (श्रीकृष्ण) और बलराम हारे हैं। ६ यह पतिव्रता नारियों के मन को मोहित करेगा'। इस प्रकार वे स्त्रियाँ मार्मिक, अर्थात व्यंग्य भरी बातें कह रही थीं। किसी ने कहा, 'यह कोई विकराल हौआ आया है। दिखा दो,

१ चतुर्वर्ण— ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र।

अनेक चेष्ठा पूंठे थाय, सांभळी ऋषिजी हसता जाय,
पूंठे कांकरा बाळक नांखे, ऋषि 'राम कृष्ण' वाणी भाखे। ८।
पाडे ताळी, वजाडे गाल, आंतरी वळे उछंकल बाल,
को वृद्ध जादवे दीठा ऋषि, साधुनी चेष्टा ओळखी। ९।
तेणे बाळक सौ मेल्यां हांकी, पूछ्यो समाचार ऊभा राखी,
'कृपानाथ क्यांथी आविया ? आ पुरने केम कीधी मया ?'। १०।
प्रति-उत्तर बोल्या ऋषिजन, 'मुजने हरिदर्शननुं मन',
ते जादव कीधो उपकार, देखाडी दीधुं राजद्वार। ११।
हरि-मंदिर आव्या ऋषिराय, रह्या ऊभा, नव चाले पाय,
छे द्वारपाल दिक्पाल समान, धाम ज्योत शुं द्वादश भाण। १२।

तो बच्चे रोने से रह जाएँगे (रोते हुए बच्चे इसे देखकर मारे डर के चुप हो जाएँगे'। ७ (इस प्रकार) उनके पीछे बहुत हँसी-दिल्लगी हो रही थी। उसे सुनकर ऋषि सुदामाजी हँसते हुए (आगे) जा रहे थे। बच्चे पीछे से कंकड़ फेंकते थे। (फिर भी) ऋषि सुदामा वाणी (मुख) से 'राम-कृष्ण' नाम बोलते थे ('राम-कृष्ण' का नाम-जाप करते जा रहे थे)। ८ उच्छृंखल बच्चे तालियाँ बजा रहे थे; गाल फुलाकर (हाथ से) बजा रहे थे; उन्हें (सुदामा को) रोककर चारों ओर से घेर लेते थे। (उतने में) किसी वृद्ध यादव ने ऋषि सुदामा को देखा, तो उसने (सुदामा में स्थित) साधु के लक्षण (देखकर) पहचान लिये (उन्हें कोई साधु पुरुष मान लिया)। ९ उसने समस्त बच्चों को भगा दिया और (सुदामा को) खड़ा करके (रोककर) समाचार पूछा— 'हे कृपानाथ (कृपालु स्वामी), आप कहाँ से आ गये हैं ? इस पुरी पर (अपने आगमन से) कैसे माया की (आत्मीयता प्रदर्शित की) ?'। १० तो ऋषि सुदामा ने प्रत्युत्तर दिया, 'मुझे श्रीहरि के दर्शन की इच्छा है'। (यह सुनकर) उस यादव ने उनका उपकार किया— उन्हें राज (-प्रासाद का) द्वार दिखा दिया। ११ (इस प्रकार) वे ऋषिराज श्रीहरि के मन्दिर (भवन, प्रासाद तक) आ गये। वे वहाँ (देखते ही) खड़े रहे —उनके पाँव (आगे) चल नहीं पा रहे थे। (वहाँ) दिक्पालों[1] के समान द्वारपाल थे। उस भवन की ज्योति, अर्थात राजभवन का तेज बारह सूर्यों[2] का-सा था। १२ (वहाँ) दूकानें,

१ दिक्पाल— पौराणिक मान्यता के अनुसार प्रत्येक दिशा का एक-एक रक्षक देवता है। आठ दिशाओं के आठ दिक्पाल ये हैं— पूर्व- इन्द्र, आग्नेय- अग्नि, दक्षिण- यम, नैर्ऋत्य- निर्ऋति, पश्चिम- वरुण, वायव्य- वायु, उत्तर- कुबेर, ईशान्य- ईश। इनके अतिरिक्त (नवम दिशा) ऊर्ध्व- ब्रह्मा और (दशम दिशा) अधस्- शेष।

२ बारह (द्वादश) सूर्य— मित्र, रवि, सूर्य, भानु, खग, पूषन्, हिरण्यगर्भ, मरीचि,

शोभे हाट चौटां ने चोक, राजे छजां, जरूखा, गोख,
जाळी, अटाळी, मेडी, माळ, जडित कठेडा झाकझमाळ । १३ ।
झळके काम त्यां मीनाकारी, अमरापुरी नाखुं ओवारी,
सभामांहे स्फटिकना स्तंभ, त्यां थई रह्यो छे नाटारंभ । १४ ।
मृदंग उपंग मधुरी ताळ, गुणीजन गाये गीत रसाळ,
झमक झमक घुघरडी थाय, ते सुदामोजी जोता जाय । १५ ।
सुवर्ण-कलश पताका विराजे, झंघड झंघड दुंदुभि वाजे,
वाजे शरणाई, भेर, नफेरी, आनंद ओच्छव शेरीए शेरी । १६ ।
हरता फरता हींसे घोडा, बांध्यां हेम तणा अछोडा,
ऊभा झूले मकना मदगळ, लंगर पाये सोनानी सांकळ । १७ ।
हेम-कलश भरी लावे पाणी, ते दासी जाणे इन्द्राणी,
छप्पन कोट जादवनी सभा, नव राखे दानवनी प्रभा । १८ ।

बाज़ार और चौक शोभायमान थे; छज्जे, झरोखे, गोखे शोभा दे रहे थे। जालियाँ, अटारियाँ, छतें और मंज़िलें, कटहरे (रत्नों से) जटित, अतएव जाज्वल्यमान (देदीप्यमान) थे। १३ वहाँ मीनाकारी का काम झलक रहा था। (देखकर लगता था—) उस पर अमरावती (इन्द्र की नगरी) को निछावर कर दें। (राज-) सभा (-गृह) के अन्दर स्फटिक के खम्भे थे। वहाँ नृत्य और संगीत का कार्यक्रम चल रहा था। १४ मृदंग, उपंग तथा मधुर ध्वनि वाले (कांस्य-) ताल (झाँझें) बज रहे थे। गुणीजन, अर्थात गायक कलाकार रस-भरे गीत गा रहे थे। (घुंघरुओं की) झनक-झनक ध्वनि के साथ चक्राकार नृत्य चल रहा था। सुदामा जी इस (सब) को देखते (-देखते) आगे जा रहे थे। १५ (राज-प्रासाद पर) सुवर्ण-कलश और ध्वज विराजमान थे। गड़गड़ाहट के साथ दुन्दुभी बज रही थी। शहनाइयाँ, भेरियाँ, नफेरियाँ बज रही थीं। गली-गली में आनन्दोत्सव हो रहा था। १६ अच्छ-चंगे घोड़े हिनहिना रहे थे। सोने की साँकल से उन्हें बाँधा हुआ था। मस्ती में मदमाते हाथी खड़े-खड़े झूम रहे थे। उनके पाँवों में सोने की साँकल डालकर उन्हें बाँधा था। १७ (जो) दासियाँ सुवर्ण-कलश भरकर पानी ला रही थीं, वे मानो (सुन्दरता में) इन्द्राणी (-सी) थीं। (वहाँ) छप्पन करोड़ यादवों की सभा थी। उनके सामने दानवों का तेज नहीं रहता थीं [उस यादव-सभा के तेज के सामने (मय दानव द्वारा निर्मित) दानव-सभा का तेज फीका पड़ जाता था]। १८ उत्तम योद्धा प्रतिहारियों के रूप में खड़े रहकर श्याम श्रीकृष्ण

आदित्य, सविता, अर्क और भास्कर। अथवा धाता, मित्र, अर्यमा, शुक्र, वरुण, अंशु, भग, विवस्वान्, पूषा, सविता, त्वष्टा और विष्णु।

उत्तम जोध ऊभा प्रतिहार, साचवे शामळियानुं द्वार,
त्यां सुदामोजी फेरा फरे, संकलपविकल्प अति मनमां करे। १९।
गहन दीसे भाई, कर्मनी गति, एक गुरुना अमो विद्यारथी,
ए थई बेठो पृथ्वीपति, मारा घरमां खावा नथी। २०।
रमाडतो गोकुल मांकडां, गुरुने घेर लावतो लाकडां,
ते आज बेठो सिंहासन चडी, मारे तुंबी ने लाकडी। २१।
वळी ऋषिने आव्युं ज्ञान, हुं अल्प जीव ए स्वयं भगवान,
जो एक वार पामुं दर्शन, जाणुं हुं पाम्यो इंद्रासन। २२।
छे विवेकी हरिना प्रतिहार, पूछे सुदामाने समाचार,
कहो मा'नुभाव, केम करुणा करी? तव सुदामे वाणी ओचरी। २३।
छुं दुर्बळ ब्राह्मणनो अवतार, छे माधव साथे मित्राचार,
जई प्रभुने मारो कहो प्रणाम, आव्यो छे विप्र सुदामो नाम। २४।

वलण (तर्ज बदलकर)

नाम सुदामो जइ कहो, गयो घरमां प्रतिहार रे,
एक दासी साथे कहावियो, श्रीकृष्णने समाचार। २५।

के द्वार की रखवाली करते थे। वहाँ सुदामा जी चक्कर लगाते रहे— वे मन में अति संकल्प-विकल्प कर रहे थे (वे बहुत दुविधा में पड़े हुए चक्कर लगा रहे थे)। १९ (उन्हें लगा—) भाई, कर्म की गति गहन (गूढ़) दिखायी देती है। हम एक ही गुरु के विद्यार्थी हैं। (फिर भी) यह एक पृथ्वी-पति (राजा) होकर बैठा है और मेरे घर में खाने (तक) के लिए नहीं है। २० जो (पहले बचपन में) गोकुल में बन्दरों को खेलाता था, जो (छात्रावस्था में) गुरुजी के घर लकड़ियाँ (इन्धन) लाता था, वह आज सिंहासन पर चढ़कर बैठा है और मेरे लिए तूंबी-(पात्र) और लकुटिया है। २१ फिर ऋषि सुदामा को यह ज्ञान हुआ कि मैं छोटा जीव (अज्ञान तथा मर्त्य) हूँ और ये स्वयं भगवान हैं। यदि मैं एक बार इनके दर्शन को प्राप्त हो जाऊँ, तो समझूंगा कि मैं इन्द्रासन को प्राप्त हो गया। २२ श्रीहरि के प्रतिहारी विवेकवान थे। उन्होंने सुदामा से समाचार पूछा— 'हे महानुभाव, कहिए (यहाँ आने की) कैसे कृपा की?' तब सुदामा ने यह बात कही। २३ 'मैं दुर्बल (दरिद्र) ब्राह्मण का अवतार हूं। मेरी माधव श्रीकृष्ण के साथ मित्रता है। जाकर प्रभु से मेरा प्रणाम कहो (और बताओ)— 'सुदामा नामक ब्राह्मण आया है। २४

जाकर (श्रीकृष्ण से) सुदामा नाम कहो'। (यह सुनकर)

एक प्रतिहारी घर के अन्दर गया। उसने एक दासी के साथ (दासी द्वारा) श्रीकृष्ण से यह समाचार कहलवा दिया। २५

कडवुं ७ मुं— (सुदामा-श्रीकृष्ण-भेंट)

राग मारु

सूता सेजे श्रीअविनाश रे, आठ पटराणी छे पास रे,
रुकिमणी तळांसे पाय रे, श्रीवृंदा ढाळे वाय रे। १।
धयुं दर्पण भद्रावती नारी रे, जांबुवतीए ग्रही जलझारी रे,
यक्षकर्दम सत्या सेवे रे, कालिंदी ते अगर उसेवे रे। २।
लक्ष्मणा तांबुल लावे रे, सत्यभामा बीडी खवडावे रे,
हरि पोढ्या हींडोळाखाट रे, पासे पटराणी छे आठ रे। ३।
बीजी सोळ सहस्त्र शत श्यामा रे, को हंसगति गजगामा रे,
मृगनयनी कोई चकोरी रे, को शामलडी को गोरी रे। ४।

कड़बक— ७ (सुदामा-श्रीकृष्ण-भेंट)

अविनाशी भगवान श्रीकृष्ण शय्या पर सोये (लेटे) हुए थे। उनकी आठ पटरानियाँ[1] उनके पास थीं। (उनमें से) रुक्मिणी धीरे-धीरे उनके पाँव दबा रही थी; श्रीवृन्दा (मित्रवृन्दा पंखे से) हवा कर रही थी। १ उनकी स्त्री भद्रावती (उनके सामने अपने हाथ में) दर्पण लिये हुए थी, तो जाम्बवती ने (हाथ में) पानी की झारी ले रखी थी। सत्यवती यक्ष-कर्दम नामक अंगराग (उबटन) लगा रही थी, तो कालिन्दी अगरु-चन्दन लगा रही थी (अथवा छिटक रही थी)। २ लक्ष्मणा ताम्बूल (बीड़ा) लायी थी, तो सत्यभामा (श्रीकृष्ण को) बीड़ा खिला रही थी। श्रीहरि खटिया वाले झूले पर पौढ़े हुए थे और उनके पास उनकी आठ पटरानियाँ (उनकी सेवा कर रही) थीं। ३ (उनके अतिरिक्त वहाँ पर उनकी) सोलह सहस्त्र एक सौ अन्य स्त्रियाँ थीं। उनमें कोई (-कोई) हंस-गति (हंस की-सी चालवाली) थी, तो कोई (-कोई) गजगामिनी थी। कोई (-कोई) मृग-नयना थी, कोई (-कोई) चकोरी (जैसी अपने प्रिय के प्रेमामृत पर जीवित रहनेवाली) थी; कोई (-कोई) श्यामल वर्ण की, तो कोई

१ श्रीकृष्ण की अष्ट पटरानियाँ (अष्ट नायिकाएँ)— यहाँ नामों में कुछ अन्तर दिखायी देता है। उसे इस प्रकार स्पष्ट किया जाता है— रुक्मिणी, भद्राबती, जाम्बवती, कालिन्दी, सत्यभामा और लक्ष्मणा —ये छः हैं। श्रीबृन्दा— मित्रवृन्दा है; सत्या है याज्ञजिती वा नाग्नजिती।

को मुग्धा बालकिशोरी रे, को छेलछबीली छोरी रे,
खळकावे कंकण मोरी रे, चपलाक्षी ले चित चोरी रे। ५।
कोई चतुरा संगीत नाचे रे, कोई रीझवे ने घणुं राचे रे,
एक बीजीने वात वासे रे, सरखासरखी ऊभी पासे रे। ६।
हरि आगळ रही गुण गाती रे, वस्त्र विराजे नाना भाती रे,
चंग मृदंग उपंग गाजे रे, श्रीमंडळ वीणा वाजे रे। ७।
गांधर्वी कला को करती रे, फटके अंबर घम्मर फरती रे,
चतुरा नव चूके चाल रे, हींडे मर्मे जेम मराल रे। ८।

(-कोई) गोरी थी। ४ कोई (-कोई) मुग्धा, कोई (-कोई) बालकिशोरी थी; कोई (-कोई) छैल-छबीली छोरी (मोह लेनेवाली, रूपवान लड़की) थी। कोई सामने खड़ी रहकर अपने कंगनों को खनका रही थी; तो कोई चपल-नयना चित्त को चुरा रही थी। ५ कोई चतुर नारी संगीत के साथ नृत्य कर रही थी, तो कोई उनको प्रसन्न कर रही थी (उनके मन को रिझा रही थी) और (स्वयं) बहुत प्रसन्न हो रही थी। कुछ एक-दूसरी से काना-फूसी कर रही थीं और कुछ एक जोड़ी-जोड़ी में पास ही खड़ी थीं। ६ कुछ श्रीहरि के सामने उनके गुणों का गान कर रही थीं। उनके (पहने हुए) नाना प्रकार के वस्त्र शोभायमान थे। चंग, मृदंग, उपंग गरज रहे थे; श्रीमण्डल नामक तन्तुवाद्य, वीणा बज रहे थे। ७ कोई (-कोई) गान्धर्वी कला अर्थात नृत्य और गायन कला को प्रदर्शित कर रही थीं (प्रस्तुत कर रही थीं)। वे धमार ताल के साथ घूमती-फिरती हुई अपने वस्त्र से फड़फड़ ध्वनि उत्पन्न कर रही थीं। कोई चतुरा (नृत्य आदि में प्रवीण नारी) नृत्य आदि में किसी चाल को नहीं चूकती थी। वह मार्मिक रीति से भावों की अभिव्यंजना करती हुई हंस जैसी चल रही थी। ८ वे (स्वर्ग की) मेनका, उर्वशी जैसी अप्सराओं की बराबरी की थीं। उनसे श्रीरणछोड़[1] श्रीकृष्ण प्रसन्न हो रहे थे।

१ श्रीरणछोड़— श्रीकृष्ण ने मथुराधिपति कंस का वध किया। तदनन्तर अस्ति और प्राप्ति नामक उसकी स्त्रियों ने अपने पिता मगधपति जरासन्ध से यह समाचार कहा, तो जरासंध ने मारे क्रोध के बदला लेने के हेतु मथुरा पर आक्रमण किया। श्रीकृष्ण और बलराम से पराजित हो जाने पर जरासन्ध ने शिशुपाल-वक्रदन्त की सहायता से पुनश्च मथुरा पर आक्रमण किया। इस स्थिति में बलराम ने जरासन्ध को सत्रह बार पराजित किया और आबद्ध किया। फिर भी प्रत्येक समय उसे मुक्त कर दिया। अन्त में नारद ने जरासन्ध से कहा कि वह कालयवन की सहायता ले। फलस्वरूप, कालयवन, रुक्मी आदि को साथ में लेकर जब जरासन्ध मथुरा की ओर जाने लगा, तो श्रीकृष्ण ने रात-ही-रात में द्वारका नगरी का निर्माण करके समस्त मथुरावासियों को वहाँ भेज दिया और मथुरा को निर्जन अवस्था में छोड़कर वह दक्षिण

मेनका उर्वशीनी जोड रे, तेथी रीझ्या श्रीरणछोड रे,
एम थई रह्यो थेईथेईकार रे, रसमग्न छे विश्वाधार रे। ९।
एवे दासी आवी धाती रे, जोई नाथे पासे बोलावी रे,
बोली साहेली शीश नामी रे, द्वारे द्विज आव्यो कोई स्वामी रे। १०।
न होये नारदजी अवश्यमेव रे, न होये वसिष्ठ ने वामदेव रे,
न होये दुर्वासा ने अगस्त्य रे, में तो जोया ऋषि समस्त रे। ११।
न होये विश्वामित्र ने अत्रि रे, नथी लाव्यो कोनी पत्री रे,
दुःखे दरिद्र सरखो भासे रे, एक तुंबीपात्र छे पासे रे। १२।
पिंगल जटा छे भस्मे भरियो रे, क्षुधा रूपिणी स्त्रीए ते वरियो रे,
शेरीए ऊभा थाक्या-पाक्या रे, तेने जोवा मळ्या छे लोक रे। १३।
तेणे कहाव्युं करी प्रणाम रे, 'मारुं विप्र सुदामो छे नाम रे',
दासीने बोल सांभळियो रे, हें हें! करी ऊठ्यो शामळियो रे।१४।
'मारो बाळस्नेही सुदामो रे, हुं दुखियानो विसामो रे!'
ऊठी धाया जादवराय रे, मोजां नव पहेर्यां पाय रे। १५।

इस प्रकार (उस प्रासाद में नृत्य आदि का) थय-थयकार हो रहा था और विश्व के आधारस्वरूप भगवान श्रीकृष्ण आनन्द रूपी रस में मग्न अर्थात डूबे हुए थे। ९ उस समय वह दासी दौड़ती हुई आ गयी। उसे देखकर श्रीनाथ (श्रीकृष्ण) ने उसे अपने पास बुला लिया। तो वह सखी सिर नवाकर बोली, 'हे स्वामी, द्वार पर कोई एक ब्राह्मण आ गये हैं। १० वे निश्चय ही नारदजी नहीं हैं; वे न वसिष्ठ हैं और न वामदेव हैं। वे न दुर्वासा हैं और न अगस्त्य हैं। मैंने तो उन सब ऋषियों को देखा है (मैं उन्हें पहचानती हूँ)। ११ वे विश्वामित्र नहीं हैं और न अत्रि हैं। वे (ब्राह्मण) किसी का पत्र भी नहीं लाये हैं। वे दरिद्र तथा दुःखी जैसे आभासित हो रहे हैं (लग रहे हैं)। उनके पास एक तूंबी-पात्र है। १२ उनकी जटाएँ पिंगल (भूरे रंग की) हैं; वे भस्म से भरे हुए (जान पड़ते) हैं। क्षुधा (भूख) रूपी स्त्री ने (मानो) उनका वरण किया है। वे गली में बहुत थके-माँदे खड़े हैं। उन्हें देखने के लिए लोग इकट्ठा हुए हैं। १३ उन्होंने प्रणाम करके कहलवा दिया है, 'मेरा नाम विप्र सुदामा है (मैं सुदामा नामक विप्र हूँ)'। दासी की यह बात सुनी, तो श्याम श्रीकृष्ण 'ऐं हाँ, हाँ' करके (कहते हुए) उठ गये। १४ (वे बोले—) 'वे मेरे बाल-मित्र सुदामा हैं। मुझ दुखिया के वे विश्राम-स्थान (जैसे)

की ओर स्वयं भाग गया। इस प्रकार युद्धभूमि को छोड़कर भाग जाने के कारण श्रीकृष्ण को 'रणछोड़' कहा जाने लगा।

पीतांबर भोम भराये रे, जई रुकिमणी ऊंचुं साहे रे,
आनंदे फूली घणी काय रे, हृदियाभर श्वास न माय रे। १६।
ढळी पडे वळी बेठा थाय रे, एक पलक जुग थई जाय रे,
स्त्रीने कहेता गया भगवान रे, "पूजा थाळ करो सावधान रे। १७।
आ हुं भोगवुं राज्यासन रे, ते तो ए ब्राह्मणनुं पुन रे,
जे नमशे एनां चरण झाली रे, ते सहुपें मुजने वहाली रे"। १८।
तव स्त्री सहु पाछी फरती रे, सामग्री पूजानी करती रे,
कहे मांहोमांहे 'बाई रे केवा, हशे कृष्णजीना भाई रे। १९।
जेने शामळियाशुं स्नेह रे, हशे कंदर्प कोटि देह रे',
लई पूजाना उपहार रे, ऊभी रही छे सोळ हजार रे। २०।
'बाई, लोचननुं सुख लीजे रे, आज दियेरनुं दर्शन कीजे रे',
शुकजी कहे सांभळजे राय रे, शामळियोजी मळवा जाय रे। २१।

हैं'। (ऐसा कहते हुए) यादवराज श्रीकृष्ण उठकर दौड़े। उन्होंने पाँवों में मोज़े (तक) नहीं पहने। १५ (बे इतनी अधीरता-पूर्वक दौड़े कि उन्हें अपने वस्त्र तक का ध्यान नहीं रहा।) उनका पीताम्बर भूमि पर घसीटता जा रहा था, तो जाकर रुक्मिणी ने उसे ऊपर से पकड़कर धर रखा। उनकी काया आनन्द से बहुत फूल उठी। हृदय-भर में उनकी साँस समा नहीं रही थी (वे हाँफ रहे थे)। १६ वे (कभी) लुढ़क जाते, तो फिर से बैठ जाते। उनके लिए एक (-एक) पल युग (के समान) होकर बीतता जा रहा था। भगवान श्रीकृष्ण अपनी स्त्रियों से यह कहकर चले गये— 'पूजा का थाल सावधानी से सिद्ध (तैयार) कर लो'। १७ यह मैं (जो) राज्यासन का उपभोग कर रहा हूँ, वह तो उस ब्राह्मण का पुण्य (-फल) है। उनके चरणों को पकड़कर जो उनका नमन करेगी, वह (अन्य) सबसे मुझे प्यारी होगी'। १८ तब समस्त स्त्रियाँ पीछे चली गयीं (लौटीं) और पूजा की सामग्री सजाने (तैयार करने) लगीं। वे आपस में कह रही थीं— 'बाई जी, श्रीकृष्ण के ये बन्धु कैसे होंगे! १९ जिनके प्रति श्याम श्रीकृष्ण को स्नेह है, उनकी देह (-कोटि) कामदेवों के समान होगी'। पूजा की साधन-सामग्री लेकर वे सोलह सहस्र नारियाँ (उनकी प्रतीक्षा करती हुई) खड़ी रह गयीं। २० (किसी ने कहा—) 'बाईजी, आँखों का सुख लो (उनके दर्शन का सुख आँखों द्वारा प्राप्त करो)। आज देवर के दर्शन कर लो'। शुकजी (राजा परीक्षित से) बोले— 'हे राजा, सुनिए। (इस प्रकार) श्याम श्रीकृष्ण (सुदामा से) मिलने के लिए चले गये। २१ छबीले (मोहक-सुन्दर) श्रीकृष्ण अधीरता-पूर्वक चल रहे थे। उन दीन-दयालु (श्रीकृष्ण)

छबीलोजी छूटी चाले रे, मूकी दोट ते दीन-दयाळे रे,
सुदामे दीठा श्रीकृष्णदेव रे, छूट्यां आंसु श्रावण-नेव रे । २२ ।
जुए कौतुक चारे वर्ण रे, क्यां आ विप्र, क्यां अशरण-शरण रे,
जुए देव विमाने चडिया रे, प्रभु ऋषिजीने पाये पडिया रे । २३ ।
हरि उठाड्या ग्रही हाथ रे, ऋषिजी लीधा हैडा साथ रे,
भुज- बंधन वांसा पूंठे रे, प्रेमे आलिंगन नव छूटे रे । २४ ।
पछे मुख अन्योअन्य जुए रे, हरिनां आंसु ऋषिजी लुहे रे,
तुंबीपात्र उलाळीने लीधुं रे, दासत्व दयाळे कीधुं रे । २५ ।
तमो पावन कीधुं आ गाम रे, हवां पवित्र करो मुज धाम रे,
तेडी आग्या विश्वाधार रे, मंदिरमांही हरखथी अपार रे । २६ ।
जोई हास्य करे सहु नारी रे, आ तो रूडी मित्राचारी रे,
घणुं वाकां बोली सत्यभामा रे, आ शुं फूटडा मित्र सुदामा रे । २७ ।
हरि अहींथी उठी शुं धाया रे ! भली नानपणनी माया रे ,
भली जोवा सरखी जोडी रे, हरिने सोंधो, एने राखोडी रे ! । २८ ।

ने दौड़ लगायी (वे दौड़ते हुए चले जा रहे थे) । (जब) सुदामा ने श्रीकृष्णदेव को देखा, तो जैसे श्रावण मास में (भारी वर्षा होने पर) ओलती से पानी गिरने लगता है, उस प्रकार उनकी आँखों से आँसू बहने लगे । २२ चारों वर्ण (वर्णों के लोग) इस कौतुक लीला को देख रहे थे । (उन्हें लगा—) कहाँ यह (दरिद्र, असहाय) विप्र और कहाँ ये अशरण-शरण (आश्रय-हीनों के आश्रय-स्थान भगवान श्रीकृष्ण) । देव विमानों में चढ़ बैठे और यह देख रहे थे । प्रभु श्रीकृष्ण ऋषि सुदामा जी के पाँव लगे । २३ तो हाथ पकड़कर ऋषिजी ने श्रीहरि को उठा लिया और उन्हें हृदय से लगा लिया । उनके हाथ पीठ पीछे बँध गये । प्रेम-पूर्वक किया हुआ आलिंगन (ऐसा दृढ़ था कि वह शीघ्र) छूट नहीं रहा था । २४ अनन्तर वे एक-दूसरे का मुख देखने लगे । (फिर) ऋषि सुदामा जी ने श्रीहरि के आँसू पोंछ लिये । (अनन्तर) दयालु श्रीकृष्ण ने (सुदामा का) तूंबी-पात्र बलपूर्वक खींच लिया और (इस प्रकार) उनका दासत्व किया (मानो वे उनके दास, सेवक बन गये) । २५ (वे बोले—) 'तुमने अपने (आगमन से) इस ग्राम को पावन किया; अब मेरे भवन को पवित्र कर लो ' । (इस प्रकार कहते हुए) विश्व के लिए आधार-स्वरूप श्रीकृष्ण उन्हें अपार आनन्द से अपने प्रासाद में बुलाकर ले आये । २६ समस्त स्त्रियाँ उन्हें देखकर हँसी-ठठोली में बोलने लगीं— 'यह तो सुन्दर मित्रता है ' । सत्यभामा बहुत व्यंग्य करती हुई बोली, 'यह कैसे सुन्दर सलोने मित्र हैं सुदामा । २७ श्रीहरि यहाँ से उठकर क्या दौड़े— बचपन

जो बाळक बहार नीसरशे रे, ते तो जोई काकाने छळशे रे,
तव बोल्यां रुक्मिणी राणी रे, 'तमो बोलो छे शुं जाणी रे ? । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शुं बोलो छो विस्मय थई, हरि-दासने ओळखो नहीं',
बेसाडी मित्रने सज्जा उपर, ढोळे वाय हरि ऊभा रही । ३० ।

कों माया भली है । यह जोड़ी भली देखने योग्य है । श्रीहरि के लिए सुगन्धित उबटन है, तो उनके लिए राख है । २८ यदि बालक बाहर निकल आएँ, तो इस काका को देखकर मारे डर के भाग जाएँगे'। तब रानी रुक्मिणी बोली, 'तुम क्या जानकर (समझकर) बोल रही हो । २९

विस्मित होकर क्या बोल रही हो ? श्रीहरि के दास (भक्त) को तुमने नहीं पहचाना'। (तदनन्तर) श्रीहरि अपने मित्र सुदामा को अपनी शय्या पर बिठाकर स्वयं खड़े रहकर पंखा हिलाकर हवा करने लगे । ३०

कडवुं ८ मुं (भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अपने भक्त सुदामा का पूजन और सम्मान करना)

राग नट

भक्ताधीन दीनने पूजे, दास पोतानो जाणी, (टेक)
सुख-सज्जाए ऋषि बेसाडी, चमर करे चक्रपाणि । भक्ता० । १ ।
नेत्र-समस्या नाथे कीधी, आवी आठ पटराणी,
मन हसे सत्यभामा नारी, आघो पालव ताणी । भक्ता० । २ ।

कड़वक— ८ (भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अपने भक्त सुदामा का पूजन और सम्मान करना)

भक्त के अधीन रहनेवाले भगवान श्रीकृष्ण ने सुदामा को अपना दास (भक्त) समझकर उन दीन (-दरिद्र व्यक्ति का, उनके दीन-दरिद्र होने पर भी उन) का पूजन किया । (टेक) । उन ऋषि सुदामा को अपनी सुख-शय्या पर बिठाकर चक्रपाणि भगवान श्रीकृष्ण उन पर चँवर झुलाने लगे । १ नाथ (पति श्रीकृष्ण) ने आँखों से संकेत किया, तो उनकी आठों पटरानियाँ (वहाँ) आ गयीं । (उनमें से एक) स्त्री सत्यभामा (मुँह पर) आगे आँचल खींचकर मन में (मन-ही-मन, मुँह छिपाकर)

कनकनी थाळी हेठी मांडी, रुकिमणी नांखे पाणी,
सुदामानां चरण पखाळे, हाथे सारंगपाणि। भक्ता०। ३।
नाभिकमलथी ब्रह्मा प्रगट्या, आ जग पळमां कीधुं,
जेणे मुखमांहे संसार देखाड्या, मातानुं मने लीधुं। भक्ता०। ४।
विश्वामित्र सरखा तापसने, दोह्यले दर्शन दीधुं,
तेणे सुदामाना पग पखाळी, प्रीते चरणोदक लीधुं। भक्ता०। ५।
ओढवानी जे पीत-पिछोडी, लोह्या ऋषिना पाय,
षोडश प्रकारे पूजा कीधी, अगर धूप उपाय। भक्ता०। ६।
कर जोडी प्रदक्षिणा कीधी, हरिने हरखे आंसु थाय,
ऊभा रही वींजणो कर, साही विट्ठल ढाळे वाय। भक्ता०। ७।

हँसने लगी। भक्त के०। २ रुक्मिणी ने सोने की थाली नीचे रखी और वह पानी डालने लगी। (स्वयं) शाङ्‌र्ग-पाणि[1] (श्रीकृष्ण) ने सुदामा के पाँवों को अपने हाथों से धोया। भक्त के०। ३ जिनके नाभि-कमल से ब्रह्मा प्रकट[2] हुए, जिन्होंने इस जगत का पल (-भर) में निर्माण किया, जिन्होंने माता यशोदा को अपने मुख के अन्दर संसार (विश्व, ब्रह्माण्ड) दिखाया[3] और उस माता के मन को मोहित कर लिया था, भक्त के अधीन रहनेवाले उन भगवान श्रीकृष्ण ने सुदामा को अपना भक्त समझकर उनका पूजन किया। ४ जिन्होंने विश्वामित्र जैसे तपस्वी को बड़ी कठिनाई पर (बड़ी कठोर दुःसह तपस्या करने पर ही) दर्शन दिये, उन भगवान ने सुदामा के पाँव धोकर प्रेम से वह चरणोदक तीर्थ ग्रहण किया। भक्त के०। ५ ओढ़ने का जो पीताम्बर था, उससे उन्होंने ऋषि सुदामा के पाँव पोंछ लिये। अगरु चन्दन, धूप आदि उपचारों (साधनों) से सोलह प्रकारों (उपचारों) से उनका पूजन किया। भक्त के०। ६ श्रीहरि ने हाथ जोड़कर उनकी परिक्रमा की। (उस समय) उन (श्रीहरि) के

---

१ शाङ्‌र्गपाणि— भगवान विष्णु का शाङ्‌र्ग नामक धनुष था। शाङ्‌र्ग नामक धनुष है, जिनके हाथ में, वे हैं 'शाङ्‌र्गपाणि' भगवान विष्णु। जब जरासन्ध ने मथुरा पर आक्रमण करके उसे सेना द्वारा घेर लिया, तब यह धनुष श्रीकृष्ण को प्राप्त हुआ। लाक्षणिक अर्थ में यह नाम राम, कृष्ण जैसे भगवान के अवतारों के लिए भी प्रयुक्त होता है।

२ पौराणिक मान्यता के अनुसार शेषशायी भगवान नारायण अथवा विष्णु की नाभि में से एक कमल उत्पन्न हुआ। उससे ब्रह्मा प्रकट हुए, जिन्होंने आगे चलकर सृष्टि का निर्माण किया।

३ बालकृष्ण ने एक समय मिट्टी खायी, तो माता यशोदा ने उसे डाँटा। जब उन्होंने अपना निरपराधित्व सिद्ध करने के लिए मुँह खोला, तो उसमें यशोदा को समस्त ब्रह्माण्ड दिखायी दिया। इस छन्द में श्रीकृष्ण की इस बाल-लीला की ओर संकेत है।

थाळ भरीने भोजन लाव्यां, मेवा ने पकवान,
शर्करायुक्त ऋषिने, त्यां कराव्यां पयपान । भक्ता० । ८ ।
शुद्ध आचमन ऋषिए कीधां, आप्यां बीडीपान,
वाध्युं ते प्रसाद प्रमाणे, आरोग्या भगवान । भक्ता० । ९ ।
जे सुख आप्युं सुदामाने, हरिए ब्रह्माने नव आप्युं,
फरी फरी मुख जुए मुनिनुं, आनंदे मन व्याप्युं । भक्ता० । १० ।
पण सुदामाने चंता मोटी, रखे देखे काया कांपे,
पेली गांठडी तांदुल तणी, ते जंघा तळे लई चांपे । भक्ता० । ११ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चरण तळे चांपी रहे, गांठडी तांदुल तणी,
प्रेमानंद-प्रभु परमेश्वरने, जाण्या तणी गत छे घणी । १२ ।

नयनों में आनन्द (की उत्कटता) से आँसू आ गये। (फिर) विट्ठल[1] (श्रीकृष्ण) खड़े रहकर हाथ में पंखा लेते हुए हवा करने लगे। भक्त के०। ७ वे थाल भरकर भोजन (लिवा) लाये। उसमें मेवे और पकवान थे। (फिर) वहाँ उन्होंने ऋषि सुदामा को शक्कर से युक्त दुग्ध का पान करा दिया। भक्त के०। ८ (भोजन के पश्चात्) ऋषि ने शुद्ध आचमन कर लिया, तो उनको पान के बीड़े दिये। (फिर) जो शेष रहा, उसे प्रसाद-स्वरूप भगवान श्रीकृष्ण ने खा लिया। भक्त के०। ९ श्रीहरि ने (इस प्रकार) सुदामा को जो सुख प्रदान कर दिया, वह ब्रह्मा (तक) को नहीं दिया। वे बार-बार मुनि सुदामा के मुख को देखते रहे। आनन्द ने उनके मन को व्याप्त किया था। भक्त के०। १० परन्तु सुदामा को इसकी बड़ी चिन्ता अनुभव हो रही थी कि कदाचित वे देख लेंगे। (इस विचार से) उनकी देह काँपने लगी। (अतः) उन्होंने चावल की वह गठरी अपनी जाँघ के तले लेकर दबाये रखी। भक्त के०। ११

वे चावल की उस गठरी को पाँव (जाँघ) के तले दबाये रहे। (फिर भी) प्रेमानन्द के प्रभु श्रीकृष्ण की (सब बातों को) जान लेने की रीति अति गहन थी (प्रभु अन्तर्यामी हैं, अतः किसी वस्तु को छिपाये रखने पर भी वे उसे जान लेते ही हैं)। १२

---

१ विट्ठल (श्रीकृष्ण)— देखिए टिप्पणी १, कड़वक १, पृष्ठ ४४२ ।

कडवुं ९ मुं— (श्रीकृष्ण द्वारा सुदामा से उनके दुर्बल हो जाने का कारण पूछना)

राग मलार

गोविंदे मांडी गोठडी, कहो मित्र अमारा, (टेक)
अमो सांभळवा आतुर, छउं समाचार तमारा । गो० । १ ।
शे दुःखे तमो दूबळा ? एवी चिंता केही ?
चित्त उदासी देखुं छुं, मारा बाळ-सनेही । गो० । २ ।
कोई सद्‌गुरु तमने मळ्यो, शुं तेणे कान ज फूंक्यो ?
शुं वेरागी त्यागी थया, के संसार ज मूक्यो ? गो० । ३ ।
शरीर प्रजाळ्युं जोगथी ? तेवी दीसे देही,
शे दुःखे दूबळा थया, मारा बाळ-सनेही ? गो० । ४ ।
के शत्रु को माथे थयो, घणां दुःखनो दाता ?
के उपराज्युं चोरीए गयुं, तेणे नहि सुख शाता ? गो० । ५ ।
धातुपात्र मळ्युं नहि, आव्या तूंबडुं लेई ?
वस्त्र नथी शुं पहेरवा, मारा बाळ-सनेही ? गो० । ६ ।

कड़वक— ९ (श्रीकृष्ण द्वारा सुदामा से उनके दुर्बल हो जाने का कारण पूछना)

गोविन्द (श्रीकृष्ण) ने सम्भाषण (बातचीत) आरम्भ किया। (वे बोले—) 'हे मेरे मित्र, कह दो। (टेक)। मैं तुम्हारा समाचार सुनने के लिए आतुर (उत्कण्ठित) हूँ'। गोविन्द ने०। १ 'किस दुःख से तुम दुर्बल हो गये हो ? ऐसी कौन चिन्ता है ? हे मेरे बचपन के स्नेही, मैं तुम्हारे चित्त को उदास (खिन्न) देख रहा हूँ'। गोविन्द ने०। २ 'क्या तुम्हें कोई सद्‌गुरु मिला है ? उसने तुम्हारे कान ही (में कोई मंत्र) फूंक दिया है ? क्या तुम (ऐसे) विरागी (विरक्त), (सुख-भोग के) त्यागी हो गये हो कि तुमने संसार को (सांसारिक सुख-भोग-पूर्ण जीवन को) ही छोड़ दिया ?' गोबिन्द ने०। ३ 'क्या तुमने अपने शरीर को योग से प्रज्वलित करके जला दिया ? तुम्हारी देह वैसी दिखायी दे रही है। हे मेरे बचपन के स्नेही, तुम किस दुःख से दुबले हो गये हो ?' गोविन्द ने०। ४ 'क्या बहुत दुःख देनेवाला कोई शत्रु (तुम्हारे) सिर पर (चढ़ा) है ? क्या तुम्हारा उपार्जित (कमाया हुआ) चोरी में गया (चुरा लिया गया) ? उससे (क्या) तुम्हें सुख और शान्ति नहीं है ?' गोविन्द ने०। ५ '(क्या) तुम्हें धातु का (कोई) पात्र नहीं मिला, जिससे तुम तूंबी-पात्र लेकर आ गये हो ? हे मेरे बचपन के स्नेही, क्या (तुम्हारे पास) पहनने के लिए वस्त्र नहीं है ?' गोविन्द ने०। ६ 'किसी (पूर्वजन्म

के सुख नथी संताननुं, कांई कर्मने दोषे ?
के भाभी अमारां वढकणां, ते शुं तनने शोषे ? गो० । ७ ।
के शुं उदर भरातुं नथी, तेणे सूकी देही ?
एटलामां कियुं दुःख छे, मारा बाळ-सनेही ? गो० । ८ ।
पछे सुदामोजी बोलिया, प्रभुने शीश नामी रे,
तमने शी अजाणी वात छे, मारा अंतरजामी ! गो० । ९ ।
छे मोटुं दुःख विजोगनुं, नहीं कृष्णजी पासे,
आज प्रभुजी मुजने मळ्या, देह पुष्ट ज थाशे । गो० । १० ।

के) कर्म के दोष के कारण तुम्हें सन्तान का सुख नहीं (प्राप्त हुआ) है ? क्या हमारी भाभी झगड़ालू हैं ? क्या वे (तुम्हारे) शरीर का शोषण कर रही हैं (तुम्हें सताकर दुर्बल बना रही हैं ?) ' गोविन्द ने० । ७ 'अथवा क्या तुम्हारा पेट नहीं भरता है? उससे तुम्हारी देह सूख गयी है ? हे मेरे बचपन के स्नेही ! इनमें से तुम्हें कौन-सा दुःख है ? ' गोविन्द ने० । ८ अनन्तर, सुदामाजी, प्रभु श्रीकृष्ण को सिर नवाकर (नमस्कार करते हुए) बोले, 'हे मेरे अन्तर्यामी (भगवान), तुमसे कैसी (कौन) बात अविदित है ? ' गोविन्द ने० । ९

(सुदामा बोले—) 'मेरे पास आप कृष्णजी नहीं (रहे)। अपके बियोग का बड़ा दुःख (रहा) है। आप प्रभुजी आज मुझसे मिले। (इससे मेरी) देह (अब फिर से) हृष्ट-पुष्ट ही हो जाएगी '। गोविन्द ने० । १०

कडवुं १० मुं -- (श्रीकृष्ण-सुदामा का गुरु-गृह में घटित बातों के बारे में संवाद)

राग रामग्री

पछे शामळियोजी बोलिया, तने सांभरे रे ?
हा जी नानपणानो नेह, मने केम वीसरे रे ! । १ ।
आपण बे महिना पासे रह्या, तने सांभरे रे ?
हा जी, सांदीप ऋषि घेर, मने केम वीसरे रे । २ ।

कड़वक— १० (श्रीकृष्ण-सुदामा का गुरु-गृह में घटित बातों के बारे में संवाद)

अनन्तर श्यामजी (श्रीकृष्ण) बोले, '(क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (तो सुदामा बोले—) 'जी हाँ। बचपन का (अपना वह) स्नेह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है? ' १ (श्रीकृष्ण—) 'हम दो मास (एक-दूसरे के) पास रहे (साथ में रहे)। (क्या) तुम्हें वह याद आ

आपण अन्न भिक्षा करी लावता, तने सांभरे रे?
मळी जमता त्रणे भ्रात, मने केम वीसरे रे! । ३ ।
आपण सूता एक साथ रे, तने सांभरे रे?
सुख दुःखनी करता वात, मने केम वीसरे रे! । ४ ।
पाछली रातना जागता, तने सांभरे रे?
हा जी, करतां वेदनी धून, मने केम वीसरे रे! । ५ ।
गुरु आपणा ज्यारे गाम गया, तने सांभरे रे?
कोई एकने जाचवा मुन, मने केम वीसरे रे? । ६ ।
त्यारे काम कह्युं गोराणीए, तने सांभरे रे?
लई आवो, कह्युं काष्ठ, मने केम वीसरे रे! । ७ ।
आंही आपण ऊकळे घणुं, तने सांभरे रे?
हा जी, माथे तहां वरसाद, मने केम वीसरे रे? । ८ ।

रहा है?' (सुदामा—) 'जी हाँ। हम (गुरु) सान्दीपनि ऋषि के घर (आश्रम) में रहे। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है?'। २ (श्रीकृष्ण—) 'हम (तीनों) भिक्षा माँगकर अन्न लाया करते थे। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है?' (सुदामा—) 'हम तीनों बन्धु मिलकर भोजन किया करते थे। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है?'। ३ (श्रीकृष्ण—) 'हम (तीनों) एक साथरी पर सोया करते थे। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है?' (सुदामा—) '(तब) हम सुख-दुःख की बातें (भी) किया करते थे। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है'। ४ (श्रीकृष्ण——) 'हम रात के ढलने लगने पर (तीसरे पहर रात) जाग उठते थे। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है?' (सुदामा——) 'जी हाँ। हम वेदों की ध्वनि (वेदों का पठन) करते थे। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है?'। ५ (श्रीकृष्ण——) 'हमारे गुरुजी जब ग्राम गये··· (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है?' (सुदामा—) 'मुनि सान्दीपनि किसी एक से (कुछ) माँगने के लिए गये थे। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है?'। ६ (श्रीकृष्ण—) 'जब गुर्वाणी (गुरु-पत्नी) ने काम (करने को) कहा था··· (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है?' (सुदामा—) 'उन्होंने कहा— काष्ठ (लकड़ियाँ, इन्धन) ले आओ। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है?'। ७ (श्रीकृष्ण—) 'यहाँ (गुरु के आश्रम में) तो हम तप रहे थे (यहाँ बहुत गर्म था, ऊमस थी)। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है?' (सुदामा—)' जी हाँ। (और) वहां तो सिर पर बारिश हो रही थी। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है?'। ८ (श्रीकृष्ण—) 'हमने (अपने-अपने) कन्धे पर कुल्हाड़ियाँ रखीं। (क्या)

खांधे कुहाडा धर्या, तने सांभरे रे ?
घणुं दूर गया, रणछोड, मने केम वीसरे रे ! । ९ ।
वाद वद्यो बेउ बांधवे, तने सांभरे रे ?
हा जी फाड्युं मोटुं खोड, मने केम वीसरे रे ! । १० ।
त्रण भारा बांध्या दोरडे, तने सांभरे रे ?
सामे आव्या बारे मेह, मने केम वीसरे रे ! । ११ ।
शीतळ शरीर थाये घणुं, तने सांभरे रे ?
टाढे ध्रूजे आपणी देह, मने केम वीसरे रे । १२ ।
नदीए पूर आव्यां घणां, तने सांभरे रे ?
घन वरस्यो मुसळधार, मने केम वीसरे रे ! । १३ ।
आकाश अंधारे आवयुं, तने सांभरे रे ?
थाय वीजळीना चमकार, मने केम वीसरे रे ! । १४ ।

तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' हे रणछोड़ जी (श्रीकृष्ण), हम (वैसे ही) बहुत दूर गये । वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? ' । ९ (श्रीकृष्ण—) ' (हम) दो बन्धुओं में होड़ लगी । (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' जी हाँ । (हमने) बड़े तने को काट लिया । वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? ' । १० (श्रीकृष्ण—) ' हमने (फिर) तीन गट्ठर (तैयार करके) डोरी से बाँध लिये । (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' तो सामने (मानो) बारह मेघ[1] (इकट्ठा होकर बरसने के लिए) आ गये ।' वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? ' । ११ (श्रीकृष्ण—) ' हमारा शरीर बहुत ठण्डा होता जा रहा था । (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' ठण्ड से अपनी (-अपनी) देह काँप रही थी । वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? ' । १२ (श्रीकृष्ण—) ' नदियों में बड़ी बाढ़ आ गयी । (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' मेघ मूसलाधार बरस रहे थे । वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? ' । १३ (श्रीकृष्ण—) ' आकाश अन्धकार से व्याप्त हो गया । (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' बिजली के चमकारे हो रहे थे । वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? ' । १४ (श्रीकृष्ण—)

१ बारह मेघ— मत्स्य पुराण के अनुसार निम्नलिखित बारह मेघ ब्रह्मांड के कवच से निर्मित हुए— द्रोण, काल, नील, पुष्कर, आवर्त, संवर्त, आवर्तक, तम, वायु, वारुण, वृष और नीलक । (कहते हैं, वर्षाऋतु के विभिन्न नक्षत्रों में ये अलग-अलग रूप से बरसते हैं । यहाँ इतनी भारी वर्षा हो रही थी कि जान पड़ा—वे समस्त एक साथ बरसने लगे हैं ।)

सवा शेर शेकेला चणा, तने सांभरे रे ?
गोराणीए बांध्या आप, मने केम वीसरे रे ! । १५ ।
अमो छाना तमो आरोगिया, तने सांभरे रे ?
तमो कह्यो दरिद्र महाराज, मने केम वीसरे रे । १६ ।
पछी गुरुजी शोधवा नीसर्या, तने सांभरे रे ?
कह्युं स्त्रीने, तें कीधो केर, मने केम वीसरे रे ! । १७ ।
आपण हृदियाशुं चांपिया, तने सांभरे रे ?
गुरु तेडी लाव्या घेर, मने केम वीसरे रे ! । १८ ।
गोराणी गाय दोहतां हतां, तने सांभरे रे ?
हती दोणी माग्यानी टेव, मने केम वीसरे रे ! । १९ ।
निशाळे बेठां हाथ वधारियो, तने सांभरे रे ?
तने आणी आपी ततखेव, मने केम वीसरे रे ! । २० ।

'(हमारे पास) सवा सेर सेंके (-भूने हुए) चने थे। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा—) 'गुर्वाणी ने (पोटली में) स्वयं बाँधकर दिये थे। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ?'। १५ (श्रीकृष्ण--) 'तुमने हमसे छिपाकर उन्हें खा डाला। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा--) 'इससे तुमने मुझे दरिद्र महाराज कहा। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ?'। १६ (श्रीकृष्ण--) 'अनन्तर गुरुजी (हमें) खोजने के लिए निकले। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा—) 'उन्होंने (अपनी) स्त्री से कहा— तुमने (इन बच्चों पर) अत्याचार किया। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ?'। १७ (श्रीकृष्ण--) '(हमसे मिलने पर) उन्होंने (हमें) दृढ़तापूर्वक हृदय से लगा लिया। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा—) '(तदनन्तर) गुरुजी हमें (साथ में लेकर) घर लाये। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ?'। १८ (श्रीकृष्ण--) 'गुर्वाणीजी (एक बार) गाय को दुह रही थीं। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा--) '(उन्हें) दुग्ध-पात्र माँग लेने की टेव थी। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ?'। १९ (श्रीकृष्ण--) 'पाठशाला में बैठे (-बैठै) मैंने हाथ बढ़ाया। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा--) 'तुमने (उस प्रकार) लाकर (दुग्ध-पात्र) तत्क्षण दिया। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ?'। २० (श्रीकृष्ण--) 'गुरु-पत्नी को तब ज्ञान (प्राप्त) हुआ। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा—) 'वे तुमको जगत के आधार (-स्वरूप परमात्मा) समझने लगीं। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता

गुरुपत्नीने त्यारे ज्ञान थयुं, तने सांभरे रे ?
तमोने जाण्या जगदाधार, मने केम वीसरे रे ! ।२१।
गुरु दक्षिणामां मागियुं, तने सांभरे रे ?
हा जी, मृत्यु पाम्यो जे कुमार, मने केम वीसरे रे ? ।२२।
में सागरमां झंपलावियुं, तने सांभरे रे ?
शोध्या सप्त पाताळ, मने केम वीसरे रे ! ।२३।
पंचजन सामो आवियो, तने सांभरे रे ?
हा जी दैत्य तणो आण्यो काळ, मने केम वीसरे रे ! ।२४।
पछी जम-गृहे हुं गयो, तने सांभरे रे ?
त्यांहां आवी मळ्या जमराय, मने केम वीसरे रे ! ।२५।

है ? '।२१ (श्रीकृष्ण—) 'गुरु-दक्षिणा (के रूप) में (गुरुजी ने क्या) माँगा ?— (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) 'जी हाँ। उन्होंने उस पुत्र को माँगा, जो मृत्यु को प्राप्त हुआ था[1]। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? '।२२ (श्रीकृष्ण—) 'मैं सागर में कूद गया। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) 'तुमने उसे सातों पातालों[2] में ढूँढ़ लिया। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? '। २३ (श्रीकृष्ण—) 'पांचजन्य[3] नामक दैत्य सामने आ गया। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) 'जी हाँ। उस दैत्य का काल (बुला) ले आये (तुमने उस दैत्य को मार डाला)। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? '।२४ (श्रीकृष्ण—) 'अनन्तर मैं यम के घर गया। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) वहाँ

१ गुरु-पुत्र को गुरु-दक्षिणा के रूप में— देखिए टिप्पणी २, कड़वक १, पृष्ठ ४४२।

२ सप्त पाताल— अतल, वितल, सुतल, रसातल, महातल, तलातल और पाताल। अथवा अहितल, महितल, सुतल, कर्मतल, वितल, शंकातल और रसातल।

३ पांचजन्य (पंचजन्य)— भागवत पुराण (स्कन्ध १०, अध्याय ४५) के अनुसार 'पंचजन' नाम ही ठीक है। पंचजन संह्राद नामक दैत्य का पुत्र था। वह शंख के रूप में समुद्र में रहता था। श्रीकृष्ण ने जब गुरु-पुत्र के बारे में समुद्र से पूछताछ की, तो समुद्र ने कहा कि उसे पंचजन नामक शंखरूपधारी असुर ने चुरा लिया होगा। यह सुनकर श्रीकृष्ण ने जल में पैठकर उस असुर को मार डाला, परन्तु गुरु-पुत्र उसके पेट में नहीं मिला। उस असुर के शरीर-रूप, अस्थियों से बने शंख को श्रीकृष्ण ने स्वीकार किया। उसे ही पांचजन्य शंख कहते हैं। एक मान्यता के अनुसार पंचजन असुर के पेट में गुरु-पुत्र के न मिलने पर श्रीकृष्ण को लगा कि मैंने इसका व्यर्थ ही वध किया। उसे व्यक्त करने पर उन्होंने उस दैत्य को उसका माँगा हुआ यह वर दिया— मेरे कलेवर को आप हाथ में नित्य धारण करें; जो मनुष्य मुझमें डाला हुआ जल आपपर न चढ़ाए, उसका पूजन व्यर्थ सिद्ध हो।

पुत्र गोराणीने आपियो, तने सांभरे रे ?
हा जी, पछी थया विदाय, मने केम वीसरे रे ! । २६ ।
आपण ते दहाडाना जूजवा, तने सांभरे रे ?
फरीने मळिया आज, मने केम वीसरे रे ! । २७ ।
तमो पासे अमो विद्या शीखता, तने सांभरे रे ?
हुंने मोटो कीधो महाराज, मने केम वीसरे रे ! । २८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

महाराज, लाज निज दासनी, वधारो छो श्रीहरि,
पछे दारिद्र खोवा दासनुं, सौम्य दृष्टि नाथे करी । २९ ।

यमराज आकर (तुमसे) मिल गये। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? '। २५ (श्रीकृष्ण—) ' (यम से पुत्र को पुनः प्राप्त करके) वह पुत्र गुर्वाणीजी को प्रदान किया। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ?' (सुदामा—) ' अनन्तर (इस प्रकार गुरु-दक्षिणा के रूप में मृत पुत्र को पुनर्जीवित करके लौटा देकर) बिदा हो गये। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? '। २६ (श्रीकृष्ण—) ' उन दिनों से बिछुड़े हुए हम··· (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' ···फिर से आज मिले हैं। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? '। २७ (श्रीकृष्ण—) ' हम तुम्हारे पास (तुमसे) विद्या सीख रहे थे। (क्या) तुम्हें वह याद आ रहा है ? ' (सुदामा—) ' हे महाराज, तुमने मुझे महान बना दिया (मुझे ऐसा बड़प्पन प्रदान किया)। वह मुझसे कैसे भुलाया जा सकता है ? । २८

हे महाराज, हे श्रीहरि, तुम (इस प्रकार आज यह बताते हुए) मेरी लाज (प्रतिष्ठा) को बढ़ा रहे हो। ' (यह सुनकर) अपने दास (भक्त) की दरिद्रता को नष्ट करने के हेतु नाथ श्रीकृष्ण ने उनके प्रति सौम्य अर्थात कृपा-युक्त दृष्टि की (कृपा-दृष्टि से देखा)। २९

कडवुं ११ मुं— (श्रीकृष्ण द्वारा सुदामा को वैभव-सम्पन्न बना देना)

राग वसंत

सकल सुंदरी देखतां, गोठडी गोविंदे कीधी,
दारिद्र खोवा दासनुं, गांठडी दृष्टिमां लीधी । १ ।
अढळक ढळियो रे शामळियो, मुष्टि तांदुल माटे,
इंद्रनो वैभव आपशे, अल्प सुखडी साटे । अढळक० । २ ।
मन वांछित फल आज हुं पाम्यो, जे मित्र मळवाने आव्या,
कांई चतुर भाभीए भेट मोकली, कहो सखा, शुं लाव्या ? अ० । ३ ।
चरण तळे शुं चांपी राखो ? मोटुं मन करी काढो,
अमी जोग ए न होय तो दूर थकी देखाडो । अ० । ४ ।
ए देवताने दुर्लभ दीसे, कही जाचे जादवराय,
जो पवित्र सुखडी प्रेमे आपो, तो भवनी भावठ जाय । अ० । ५ ।
भगवाननी भारजा भ्रममां भूली, जुए नारी समस्त,
दुर्लभ वस्तु शी छे ऋषि पासे, जे हरि ओढे छे हस्त ! अ० । ६ ।

कड़वक —११ (श्रीकृष्ण द्वारा सुदामा को वैभव-सम्पन्न बना देना)

(अपनी) समस्त सुन्दरियों, अर्थात स्त्रियों के देखते रहते, गोविन्द (श्रीकृष्ण) ने (सुदामा से इस प्रकार) बातचीत की। (और) अपने भक्त की दरिद्रता को नष्ट करने के हेतु उन्होंने (सुदामा द्वारा लायी हुई चावल की) गठरी की ओर दृष्टि लगा ली (गठरी की ओर देखा।)। १ एक मुट्ठी-भर चावल के लिए श्याम श्रीकृष्ण बहुत झुक गये (उदारतापूर्वक देने के लिए प्रवृत्त हुए।) थोड़ी 'सुखड़ी' (जैसी सस्ती साधारण-सी मिठाई) के बदले में वे तो इन्द्र का वैभव प्रदान करेंगे। बहुत०।२ (वे बोले—) 'जब कि मेरे मित्र मुझसे मिलने आये हैं, तो मैं आज मनोवांछित (मनचाहे) फल को प्राप्त हो गया हूँ। मेरी चतुर भाभी ने (मेरे लिए) कोई भेंट भेज दी (होगी)। हे सखा, कहो, क्या लाये हो ?' बहुत०। ३ 'पाँव (की जाँघ) के तले क्या दबाकर रखा है ? मन को बड़ा (उदार) करके निकाल लो। यदि यह हमारे योग्य न हो, तो दूर से दिखा दो।' बहुत०। ४ यह देवताओं के लिए (भी) दुर्लभ दिखायी दे रहा है।'—ऐसा कहते हुए यादवराज श्रीकृष्ण ने माँग लिया। (उन्हें लगा—) "तुम यदि पवित्र 'सुखड़ी' (भी) प्रेम से दे दोगे, तो (हमारा और तुम्हारा भी) सांसारिक जंजाल (दूर हो) जाएगा।' बहुत०। ५ भगवान श्रीकृष्ण की स्त्रियाँ (उस वस्तु के विषय में) भ्रम

आम हरि ज्यारे हाथ लगाडे, ऋषि खसेडे आम,
भक्त हेत पोते देखाडे, सौने सुंदर-श्याम । अ० । ७ ।
अवलोकतां ऊभी सौ नारी, कर धरी कनकनां पात्र,
जदुपतिने जाचे सहु नारी, 'अमने आपजो तलमात्र'। अ० । ८ ।
सुदामो सांसामां पडियो, लज्जा मारी जाशे,
भरम भांगशे तांदुल देखी, कौतक मारुं थाशे । अ० । ९ ।
स्त्रीने कह्ये हुं आव्यो लोभी, तुच्छ भेट में आणी,
लाज लाख टकानी खोई, घर घाल्युं धणियाणी । अ० । १० ।
सुदामानी शोचना ते, शामळिये सहु जाणी,
हसतां हसतां पासे आवी, तांदुल लीधा ताणी । अ० । ११ ।
हेठळ हेमनी थाळी मेली, वस्तु लेवा जगदीश,
छोडे छबीलो पार न आवे, चींथरां दशवीश । अ० । १२ ।
पटराणी जोई विस्मय पामी, छे पारस मोंघुं रत्न,
अमृत-फल के संजीवनमणि, आवडुं कीधुं जत्न । अ० । १३ ।

में भूली हुई थीं। वे समस्त नारियाँ देख रही थीं। (उन्हें लगा—) ऋषि (सुदामा) के पास ऐसी कौन-सी दुर्लभ वस्तु है कि श्रीहरि (उसके लिए) हाथ बढ़ा रहे हैं। बहुत०। ६ श्रीहरि जब इधर हाथ लगाते, तो ऋषि सुदामा (उस गठरी को) इधर खिसका लेते। सुन्दर श्याम श्रीकृष्ण इस प्रकार सबको अपना भक्त-प्रेम दिखा रहे थे। बहुत०। ७ हाथों में सोने के पात्र लेकर वे समस्त नारियाँ देखती हुई खड़ी रही थीं। वे समस्त नारियाँ यदुपति श्रीकृष्ण से विनती करते हुए माँग रही थीं— 'हमको तिल-मात्र तो दीजिए'। बहुत०। ८ सुदामा दुविधा में पड़ गये— (यदि दे दूँ तो) मेरी प्रतिष्ठा चली जाएगी। चावल को देखकर उनका यह भ्रम (कि मैं कोई अनमोल वस्तु लाया हूँ) दूर हो जाएगा और उससे मेरी हँसी हो जाएगी। बहुत०। ९ (उन्हें लगा—) स्त्री के कहने पर मैं लोभी (यहाँ) आया हूँ और तुच्छ (वस्तु) भेंट (के रूप में) लाया हूँ। मैंने अपनी टके की लाज खो दी। घरवाली (स्त्री) ने घर डुबो दिया। बहुत०। १० श्याम श्रीकृष्ण ने सुदामा की वह समस्त दुःख-भरी दुविधा जान ली और हँसते-हँसते उनके पास आकर उन्होंने चावल खींचकर ले लिये। बहुत०। ११ जगदीश श्रीकृष्ण ने उस वस्तु को लेने के लिए नीचे सोने की थाली रख दी। (अनन्तर) वे छबीले (श्रीकृष्ण) गट्ठर खोलने लगे; फिर भी दस-बीस चीथड़े थे— वे उनके पार नहीं आ रहे थे। बहुत०। १२ यह देखकर पटरानियाँ आश्चर्य को प्राप्त हो रही थीं। (उन्हें लगा— इस गट्ठर में) पारस (जैसा कोई) महँगा (क़ीमती) रत्न

वेराया कण ने पात्र भरायुं, जोई रह्यो जुवती-साथ,
तांदुलना कण हृदिया चांपी, बोल्या वैकुंठनाथ। अ०। १४।
सुदामा, में आ अवनीमां, लीधा बहु अवतार,
आ तांदुलनो स्वाद छे केवो! नथी आरोग्या एक वार अ०। १५।

है; अथवा अमृत-फल (अमृत रस-भरा फल) अथवा संजीवनी मणि है। इसलिए तो इतनी उसकी रक्षा की है। बहुत०। १३ श्रीकृष्ण ने (अन्त में) वे कण (चावल) बिखेर दिये (उस थाली में गिरा दिये) और उस पात्र को भर दिया। वे उन युवतियों (स्त्रियों) सहित देखते ही रह गये। चावल के उन कणों (दानों) को हृदय से दृढ़ता-पूर्वक लगाकर वैकुण्ठनाथ भगवान विष्णु (-स्वरूप श्रीकृष्ण) बोले। बहुत०। १४ 'हे सुदामा, मैंने पृथ्वी पर बहुत अवतार धारण किये। फिर भी इस चावल का स्वाद कैसा है? मैंने (अपने अन्य अवतारों में) एक भी बार (ऐसे चावल) नहीं खाये। बहुत०। १५ मैंने ध्रुव[1], अम्बरीष[2], प्रह्लाद[3] जैसे बड़े-बड़े मित्रों, सेवकों (भक्तों) को देखा। फिर भी उनमें

१ ध्रुव – ध्रुव राजा उत्तानपाद का रानी सुनीति से उत्पन्न पुत्र था। बचपन में जब एक बार वह अपने पिता की गोद में बैठा, तो उसे पिता ने अपनी दूसरी पत्नी सुरुचि का रुख देखकर अपनी गोद से उतार दिया। इससे ध्रुव को बड़ी ग्लानि अनुभव हुई, तो वह ऐसे पद की प्राप्ति के लिए यत्नशील हुआ, जो अविचल हो, जहाँ से उसे कोई उतार न पाए। बालक ध्रुव ने नारद के उपदेश के अनुसार 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' मंत्र का जप करते हुए कठोर तपस्या की। उससे प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने उसे राज्य आदि देना चाहा, परन्तु ध्रुव ने उसे स्वीकार नहीं किया। अन्त में उसकी अविचल भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान ने उसे अविचल पद प्रदान किया। आकाशस्थ उत्तर ध्रुव इसी भक्त ध्रुव का प्रतीक है।

२ अम्बरीष– अम्बरीष अयोध्या के सूर्य-वंशोत्पन्न विष्णु-भक्त राजा थे। एक बार कार्तिक की एकादशी के अवसर पर वे व्रत के पारण में लगे रहे, तो अचानक वहाँ दुर्वासा ऋषि आ गये। अपने को राजा द्वारा उपेक्षित समझकर दुर्वासा ने उनके पीछे कृत्या को चला दिया। परन्तु भगवान विष्णु ने अन्त में उससे अपने भक्त अम्बरीष की सुदर्शन चक्र द्वारा रक्षा की। भक्ति के फलस्वरूप उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हुई।

३ प्रह्लाद– विष्णु-भक्त प्रह्लाद दैत्यराज हिरण्यकशिपु तथा कयाधू का पुत्र था। वह बचपन से ही विष्णु की भक्ति में निमग्न रहता था। हिरण्यकशिपु को उसकी यह भक्ति पसन्द नहीं थी। उसके द्वारा बार-बार समझाने पर भी प्रह्लाद हरि-भक्ति से विमुख नहीं हुआ। तो पिता ने उसे अनेक प्रकार से मार डालने का यत्न किया। उसने पहले प्रह्लाद को विष पिलाया, दूसरी बार पर्वत पर से फिंकवा दिया, तदनन्तर हाथी के पाँवों तले कुचलवाने का यत्न किया, फिर सर्प द्वारा डसवाया, फिर भी प्रह्लाद पर इनमें से किसी का कोई प्रभाव नहीं हुआ। अन्त में भगवान विष्णु ने नरसिंह रूप में एक खम्भे में से प्रकट होकर हिरण्यकशिपु का वध किया और प्रह्लाद की रक्षा की।

मोटा मित्र सेवक में जोया, ध्रुव अंबरीष प्रह्लाद,
आ तांदुलनो एके मित्रे, नथी देखाड्यो स्वाद। अ०। १६।
तुच्छ भेट भारे करी, मानी विचार्युं भगवान,
सात जन्म लगी सुदामे, नथी कीधुं एके दान। अ०। १७।
जाचकरूप थया जगजीवन, प्रीत हृदयमां व्यापी,
मुष्टि भरीने तांदुल लीधा, दारिद्र नांख्यां कापी। अ०। १८।
कर मरडीने गांठडी लीधी, साथेनां दु:ख मोड्यां,
जेम जेम चींथरां छोड्यां नाथे, तेम तेम भवनां बंधन तोड्यां। १९।
तांदुल जव मुख्र मांहे मूक्या, ऊडी छापरी आकाश,
तेणे स्थानक सुदामाने थया, सप्त-भोमी आवास। अ०। २०।
ऋषिपत्नी थई रुक्मिणी सरखी, थया सांब सरखा पुत्र
ए वैभवने कवि शुं वखाणे, जेवुं कृष्णनुं घरसूत्र। अ०। २१।

से एक भी मित्र ने ऐसे चावलों का स्वाद नहीं दिखा दिया (चखा दिया)। बहुत०। १६ इस तुच्छ भेंट को बहुत भारी (मूल्यवान) समझकर भगवान श्रीकृष्ण ने सोचा— सुदामा ने (अपने पिछले) सात जन्मों तक एक में भी दान नहीं दिया। (फल-स्वरूप, वे इस जन्म में दरिद्र बन गये हैं।) बहुत०। १७ (फिर भी उनके इस जन्म में) जगज्जीवन भगवान श्रीकृष्ण (उनके सामने) याचक-स्वरूप बन गये। उनके हृदय में प्रीति व्याप्त हो गयी। उन्होंने मुट्ठी भरकर चावल लिये (और बदले में) सुदामा की दरिद्रता को काट (कर नष्ट कर) डाला। बहुत०। १८ (इधर) हाथ मरोड़कर उस गठरी को उन्होंने लिया और उनके साथ वाले दु:ख नष्ट किये। श्रीकृष्ण नाथ ने जैसे-जैसे उन चीथड़ों को खोल लिया, वैसे-वैसे (सुदामा के) संसार के बन्धनों को तोड़ डाला (काट डाला)। बहुत०। १९ जब उन्होंने मुख में चावल डाले, तब (सुदामा की) झोंपड़ी (अपने स्थान से) आकाश में उड़ गयी और उसके स्थान पर सुदामा के लिए सात खण्डों (मंज़िलों) वाला आवास-स्थान निर्मित हो गया। बहुत०। २० ऋषि सुदामा की पत्नी रुक्मिणी जैसी हो गयी; उसके पुत्र साम्ब[1] जैसे हो गये। उस वैभव का वर्णन कवि क्या (कैसे) कर सकता है? वह तो जैसे कृष्ण का (ही) घर-बार था। बहुत० २१ जब वे दूसरी मुट्ठी मुख में डालने लगे, तब रुक्मिणी ने उनका हाथ वहाँ पकड़ा (और कहा—) हे स्वामी, 'इसमें कम क्या है? हे चतुर-सुजान,

१ साम्ब— श्रीकृष्ण का जाम्बवती से उत्पन्न पुत्र, जो परम प्रतापी था। भागवत पुराण के अनुसार वह जाम्बवती का पुत्र है; परन्तु विष्णुपुराण में उसे रुक्मिणी का पुत्र कहा है।

बीजी मूठी ज्यारे मुखमां मूके, त्यां ग्रह्यो रुकिमणिए पाण,
एमां शुं ओछुं छे स्वामी ! अमने आपो चतुर सुजाण । अ० । २२ ।
अष्ट महासिद्धि ते नवे निधि, मोकली वणमागी,
ते सुदामोजी नथी जाणता, जे भवनी भावठ भांगी । अ० । २३ ।
हाथी डोले ने दुंदुभि बोले, गुणीजन गाये साखी,
जडित हींडोळो, हेमनी सांकळ, हींचे छे हरिणाखी । अ० । २४ ।
हीरा रत्न कनकनी कोटी, हार्यो धने कुबेर,
कोटी ध्वज लाखेणा दीपक, वाजे छप्पन उपर भेर । अ० । २५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वागे भेर अखूट भंडारनी, त्रूठ्या श्रीगोपाळ रे,
एम रात वातमां वही गई ने, थयो प्रातःकाळ रे । २६ ।

हमें दे दीजिए '। बहुत० । २२ श्रीकृष्ण ने न माँगने पर भी (सुदामा को) अष्ट महासिद्धियाँ[1] और नौ निधियाँ[2] दे दीं। (पर) सुदामा जी इसे नहीं जानते थे कि उनका सांसारिक जंजाल नष्ट हुआ है। बहुत० । २३ (सुदामा के घर) हाथी झूमने लगे थे और दुन्दुभी बजने लगी थी। गुणी जन (भाट, बन्दी) उनकी कीर्ति का गान करने लगे। (वहाँ) रत्न-जटित झूला था; उसकी डोरियाँ सोने की थीं और (उस पर बैठकर) हरिणाक्षी (उनकी मृग-नयना स्त्री) झूलने लगी। बहुत० । २४ उनकी कोठी हीरों, रत्नों और सोने की थी। उस धन-वैभव (की तुलना) में कुबेर हार गये। उस पर कोटि-कोटि ध्वज (फहर रहे) थे। लाख टके के, अर्थात बहुत मूल्यवान दीपक थे और छप्पन करोड़ से अधिक धन पास रखनेवाले धनवान के यहाँ जैसी भेरी बजती है, वैसी भेरी बजने लगी। बहुत० । २५

(वहाँ) अक्षय भण्डारवाले की-सी भेरी बजने लगी। (इस प्रकार) श्रीगोपाल कृष्ण (सुदामा पर) प्रसन्न हो गये। इस प्रकार बातें करते-करते रात बीत गयी और प्रातःकाल हो गया। २६

---

१ अष्ट महासिद्धियाँ— अणिमा (शरीर को अणु जैसा सूक्ष्म करना), महिमा (शरीर को प्रचण्ड आकार वाला बनाना), लघिमा (उसे बहुत हलका बनाना), प्राप्ति (समस्त प्राणियों की इन्द्रियों से उन-उन इन्द्रियों के अधिष्ठाता देवताओं के रूप में सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता), प्राकाश्य (इहलोक और परलोक में भोग करने और सबको देखने की सामर्थ्य), ईशिता (माया की ईश में स्थित प्रेरणा), वशिता (अपने आपको वश में रखते हुए अन्य किसी की ओर आसक्त न होना), प्राकाश्य (इच्छित सुख इच्छित मात्रा में प्राप्त होना)।

२ नव निधियाँ— देखिए टिप्पणी १, कड़वक ३, पृ० ४५२।

कडवुं १२ मुं-- (श्रीकृष्ण से बिदा होकर सुदामा का अपने ग्राम की ओर लौटना)

राग मेवाडो

शुकजी कहे सांभळ राजन, एक मूठडीए आप्यां ए दान,
वळी विचारे कमळापति, सुदामा सरखुं आप्युं नथी। १ ।
एके को कण जे तांदुलतणो, इंद्रासनपें मोंघो घणो,
दुर्बळ दासनी भावनी भेट, परम विधिए भरायुं पेट। २ ।
हुं ए सरखो थई वन वसुं, वैकुंठ एने आपुं,
सोळ सहस्त्र साथे रुकिमणी, सेवा करे सुदामा तणी। ३ ।
द्वारका आपवानी मनसा करी, बीजी मूठडी नाथे भरी,
रुकिमणीए जई झाल्यो हाथ, 'अमे अपराध शो कीधो नाथ ?'। ४ ।
सामुं जोई हस्यां दंपति, सोळ सहस्त्र को प्रीछती नथी,
सकल नारीने, करुणा करी, तांदुल वहेंची आप्या हरि। ५ ।
तेमां स्वाद मूक्यो सुधासार, स्त्री आगळ राख्यो मित्रनो भार,
हास्य विनोदे वही गई शर्वरी, प्राते सुदामे जाच्या हरि। ६ ।

कड़वक--१२ (श्रीकृष्ण से बिदा होकर सुदामा का अपने ग्राम की ओर लौटना)

शुकजी बोले, 'हे राजा (परीक्षित), सुनिए। (सुदामा ने) एक मुट्ठी भरकर (ये चावल) दान दिये। फिर कमलापति भगवान विष्णु-स्वरूप श्रीकृष्ण ने सोचा— सुदामा (के दान) जैसा किसी ने नहीं दिया। १ (उनके द्वारा दिये हुए) चावल का एक-एक कण इन्द्रासन (इन्द्र-पद) से अधिक मूल्यवान है। यह तो दुर्बल-दरिद्र भक्त की भक्ति-भाव-पूर्वक दी हुई भेंट है। उससे परम (उच्च, उत्तम) प्रकार से (मेरा) पेट भर गया। २ मैं (अब) इसके समान होकर वन में निवास करता हूँ और इसे वैकुण्ठ प्रदान करता हूँ। सोलह सहस्त्र नारियों सहित रुक्मिणी (वहाँ) सुदामा की सेवा करेगी। ३ द्वारका प्रदान करने की इच्छा करते हुए पति श्रीकृष्ण ने (जब) दूसरी मुट्ठी भर ली, तो रुक्मिणी ने जाकर उनका हाथ पकड़ा (और कहा)— 'हे नाथ, हमने क्या अपराध किया है ?'। ४ सामने (एक-दूसरे की ओर) देखकर वे पति-पत्नी हंसने लगे। (फिर भी) सोलह सहस्त्र अन्य नारियों में से किसी ने वह नहीं देखा (इसके रहस्य को नहीं समझा)। तब श्रीहरि ने बीनकर करुणा करते हुए उन समस्त नारियों को चावल प्रदान किये। ५ उन्होंने उनमें अमृत जैसा बढ़िया स्वाद डाल दिया और अपनी स्त्रियों के सामने अपने मित्र के सम्मान की रक्षा की। (तदनन्तर) हास्य-विनोद में रात

'हवे विदाय आपो जगजीवन', हरि कहे, 'पधारीए स्वामिन',
वळी कृपा करजो को समे, ठाले हाथे श्रीहरि नमे। ७।
हरि पोळ लगी वळाववा जाय, कोडी एक न मूकी करमांह्य,
सत्यभामा कहे, 'जांबुवती, कृपण थया घणुं जादवपति। ८।
ब्राह्मण मित्र जे पोता तणो, दीसे दारिद्रे पीड्यो घणो,
तेने वाळ्यो निर्मुख फरी', रुक्मिणी कहे, 'शुं समजो, सुंदरी!'। ९।
बेलडीए वळग्या विश्वाधार, सुदामो जातां करे विचार,
'वैभव आगळ वळियो छेक, पण मने न आपी कोडी एक। १०।
हशे स्त्रीनी चोरी मन धरी, कांई गुप्त आपशे वाटे हरि',
पगे लागी नारी सौ गई, तोये पण कांई आप्युं नहि। ११।
कोस एक वळाववा गया, पछी सुदामोजी ऊभा रह्या,
'भूधरजी हवे पाछा वळो', तव भेटी वळिया श्यामळो। १२।

बीत गयी। (फिर) सबेरे सुदामा ने श्रीहरि से याचना की (विनती की)। ६ 'हे जगज्जीवन, अब मुझे बिदा कर दो', तो श्रीहरि बोले, 'हे स्वामी, जाइए'। फिर किसी समय (यहाँ आने की) कृपा करना'। (अनन्तर) रिक्त हाथों से श्रीहरि ने उन्हें नमस्कार किया (कुछ नहीं देते हुए नमस्कार किया)। ७ श्रीहरि उन्हें बिदा करने के लिए (मुख्य) द्वार तक गये। उन्होंने उनके (सुदामा के) हाथ में एक कौड़ी तक नहीं रखी। (यह देखकर) सत्यभामा बोली, 'अरी जाम्बवती, यादवपति बहुत कृपण हो गये हैं। ८ जो उनके अपने ब्राह्मण मित्र हैं, जो दरिद्रता से बहुत पीड़ित दिखायी दे रहे हैं, उन्हें फिर (बिना कुछ दिये) विमुख लौटा दिया'। (यह सुनकर) रुक्मिणी बोली, 'अरी सुन्दरी, तुम क्या समझती हो?'। ९ विश्व के आधार-स्वरूप श्रीकृष्ण उन (सुदामा) के कन्धे से चिपके रहे (उनके कन्धे पर हाथ रखकर बिलकुल सटकर चल रहे थे)। चलते (-चलते) सुदामा यह विचार कर रहे थे— '(यहाँ) वैभव तो अन्तिम सीमा तक पहुँचा है (वैभव में तो ये उसकी सीमा तक पहुँचकर लौटे हैं, ये असीम रूप से वैभव-सम्पन्न हैं)। परन्तु इन्होंने मुझे एक कौड़ी तक नहीं दी। १० (सम्भव है,) उन्होंने मन में अपनी स्त्रियों से चुराने (छिपाने) की बात धारण की हो; श्रीहरि मार्ग में मुझे गुप्त रूप से कुछ देंगे'। (परन्तु) पाँव लगकर वे सब नारियाँ (लौट) गयीं, फिर भी उन्होंने (श्रीकृष्ण ने) कुछ भी नहीं दिया। ११ श्रीकृष्ण बिदा करने के लिए एक कोस तक गये; फिर सुदामाजी खड़े रहे (और बोले)— 'हे भूधरजी, अब पीछे लौट जाइए'। तब श्याम श्रीकृष्ण उनसे मिलकर (उन्हें गले लगाकर फिर) लौट

'बालमित्र फरी मळशो' कही, पण करमां कांई मूक्युं नहीं,
ऋषिए तव मूक्यो निःश्वास, चाल्यो ब्राह्मण थई निराश । १३ ।

ऋषि पाम्यो अति पश्चाताप, जाय निंदतो पोतानुं आप,
हुं मागवा आव्यो मित्रनी कने, ते समे मृत्यु शे न आव्युं मने ? । १४ ।

स्त्री-जीत नर ते शवने समान, रंडा उपजावे अपमान,
एकांतरा जो पामीए अन्न, अथवा कंदमूल करीए प्राशन । १५ ।

जो भूखे मरे बाळक नांघडां, ती खवडावीए सूकां पादडां,
वा पवन भक्षी भरीए पेट, के कीजिए नीच पुरुषनी वेठ । १६ ।

वा काष्ठ तृणनो विक्रय करीए, अथवा परघेर पाणी भरीए,
वा हळाहळ विष पी पोढीए, पण मित्र आगळ हाथ न ओढीए । १७ ।

अजाचकव्रत में मूक्युं आज, खोई लाख टकानी लाज,
दामोदरशुं कीधी मया, मूळगा मारा तांदुल गया ! । १८ ।

गये । १२ कहा— 'हे बचपन के मित्र, फिर मिलोगे न ? (फिर मिलना ।)' फिर भी उन्होंने (सुदामा के) हाथ पर कुछ भी नहीं रखा । तब ऋषि सुदामा ने ठण्डी साँस ली । वे ब्राह्मण (अन्त में इस प्रकार) निराश होकर चले । १३ वे ऋषि अति पश्चात्ताप को प्राप्त हुए । वे अपने आपकी निन्दा करते हुए जाने लगे । 'मैं मित्र के पास याचना करने (जिस समय) आ गया, उस समय मुझे मौत क्यों नहीं आयी ? १४ स्त्री द्वारा जीता हुआ नर शव के समान होता है । रण्डा (की बात मानने की टेव तो पुरुष के लिए) अपमान (की स्थिति) का निर्माण करती है । (अतः) यदि एक दिन के बाद एक दिन (प्रति दूसरे दिन) अन्न को प्राप्त हो जाएँ, अथवा कन्द-मूल को खा लें । १५ यदि छोटे बच्चे भूख से मरते हों, तो उनको सूखे पत्ते खिलवा दें, अथवा पवन को खाकर पेट भर लें, अथवा नीच पुरुष की सेवा करें । १६ अथवा लकड़ी और घास बेचें, अथवा दूसरे के घर पानी भर दें । अथवा हलाहल विष को पीकर पौढ़ जाएँ; परन्तु मित्र के सामने हाथ न बढ़ाएँ । १७ मैंने आज अपने अयाचक बृत्ति के व्रत को छोड़ दिया और लाख टके की अपनी लाज खो दी । दामोदर[1] (श्रीकृष्ण) से ममत्व किया और मूलधन-स्वरूप चावल भी (हाथ से) गया । १८ इस कृपण के पास बहुत धन है; इसलिए तो

---

[1] दामोदर— दाम (पगहा, रस्सी) बँधा है जिसके उदर में वह । श्रीकृष्ण को यशोदा ने पगहे से ऊखल से बाँधा था । उसपर से श्रीकृष्ण को यह अभिधान प्राप्त हुआ ।

ए कृपणने धन होये घणुं, ते माटे गाम एनुं सोनातणुं,
बांधी मुष्टिनो शो मित्राचार ! मोटो निर्दय नंदकुमार । १९ ।
एने आपतां शुं ओछुं थात ? हुं ब्राह्मणनी भावठ जात,
मने सामा आवी भेट्या हरि, वळी पाग पखाळीने पूजा करी । २० ।
आसन भोजन पूजन भलुं, हुं रांकने कोण करे एटलुं,
ए कपट धूर्तनी सेवा, लटपट कीधी मारा तांदुल लेवा । २१ ।
—वळी ऋषिने आव्युं ज्ञान, हुं अल्पजीव ए श्री भगवान ।
जेनुं ले तेनो नहि राखे भार, हरिने निंदुं मुजने धिक्कार,
गोपीनां मही जो लीधां हरी, तो कमळानुं सुख आप्युं हरि । २२ ।
जो ऋषिपत्नीनां लीधां अन्न, सायुज्य मुक्ति पाम्यां स्त्रीजन,
जो चंदन कुब्जानुं लीधुं, तो स्वरूप कमळानुं कीधुं । २३ ।
जो भाजीपत्रनो कीधो आहार, तो विदुर तार्यो भवसंसार,
श्रीहरि सौनो करे प्रतिकार, पण मारुं कर्म कठोर अपार । २४ ।

इसका ग्राम सोने का है। बाँधी हुई (बन्द) मुट्ठी (वाले) से कैसी मित्रता (जो देने के लिए हाथ की मुट्ठी तक नहीं खोलता, उससे कैसी मित्रता) ? ये नन्दकुमार श्रीकृष्ण बड़े हैं। १९ क्या इनके द्वारा देने पर उनके लिए कुछ कम हो जाता ? (परन्तु मुझे देने पर मुझ जैसे) ब्राह्मण का सांसारिक जंजाल चला जाता। (अगुवानी के लिए) सामने आकर श्रीहरि मुझसे मिले। इसके अतिरिक्त उन्होंने (मेरे) पाँव धोकर मेरी पूजा की। २० आसन, भोजन, पूजन— (यही) भला है। मुझ दरिद्र असहाय के लिए इतना कौन करता है। यह तो कपट करनेवाले धूर्त द्वारा की हुई सेवा है। मेरे चावल लेने के लिए उन्होंने ऐसी चालाकी की'। २१ फिर सुदामा ऋषि को यह ज्ञान हो आया, 'मैं अल्प (छोटा) जीव हूँ और वे श्रीभगवान हैं। जिसका वे लेते हैं, उसका भार (उधार) वे नहीं रखते। मैं श्रीहरि की निन्दा कर रहा हूँ— मुझे धिक्कार है। यदि गोपियों के दही का अपहरण किया था, तो श्रीहरि ने उन्हें कमला अर्थात लक्ष्मी का-सा सुख प्रदान किया था। २२ यदि उन्होंने ऋषि-पत्नियों का दिया हुआ अन्न स्वीकार किया था, तो वे नारियाँ (उसके फल-स्वरूप) सायुज्य-मुक्ति को प्राप्त हो गयीं। यदि उन्होंने कुब्जा से चन्दन लिया, तो उन्होंने उसके स्वरूप को लक्ष्मी का (-सा) कर दिया। २३ यदि उन्होंने शाक-सब्जी के पत्तों का आहार (प्राप्त) किया था, तो (उसके फलस्वरूप) उन्होंने विदुर को भव-संसार से तार दिया (उनका उद्धार किया)। श्रीहरि सबका (इस प्रकार) प्रत्युपकार करते हैं। परन्तु मेरा कर्म तो अपार कठोर है'। २४ इस प्रकार सुदामा ने

विवेकज्ञान सुदामे ग्रह्युं, धन नव आप्युं ते वारु थयुं,
धने करी मद मुजने थात, त्यारे भक्ति हरिनी भूली जात । २५ ।
कृष्णे मुजने करुणा करी, जे दारिद्र दुःख नव लीधुं हरी,
सुख पाम्ये व्यापे क्रोध ने काम, दुःख पाम्ये सांभरीए राम । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

राम सांभरे वैराग्यथी, ऋषि ज्ञान-घोडे चड्यो,
विचारतां निज गाम आव्युं, घर देखी भूलो पड्यो । २७ ।

विवेक-युक्त ज्ञान ग्रहण किया । उन्हें लगा—(श्रीहरि ने) मुझे धन नहीं दिया, वह अच्छा ही किया । धन से मुझे मद (घमण्ड) हो जाता । तब श्रीहरि की भक्ति मुझसे भुला दी जाती । २५ श्रीकृष्ण ने मुझ पर करुणा ही की, जो उन्होंने मेरी दरिद्रता और दुःख का हरण नहीं कर लिया । सुख को प्राप्त हो जाने पर क्रोध और काम व्याप्त कर लेते हैं; दुःख को प्राप्त होने पर राम का स्मरण करते हैं । २६

वैराग्य के कारण राम का स्मरण होता है । (इस प्रकार) सुदामा ऋषि ज्ञान रूपी घोड़े पर चढ़ बैठे । विचार करते-करते (जाते रहने पर) उनका ग्राम आ गया । तो अपने घर को देखकर वे भ्रम में पड़ गये । २७

कडवुं १३ मुं—(सुदामा का अपने ग्राम और गृह में पुनरागमन)

राग रामग्री

ऋषिजी भाखे हरिगुणग्राम जी, गोठवण करतां आव्युं गाम जी,
दीठां मंदिर कंचन-धाम जी, ऋषि विचारे शुं भूल्यो ठाम जी ? । १ ।

ढाळ

ठाम भूल्यो पण ग्राम निश्चे, आ धाम को धनवंतनां,
ए भवनमां वसता हशे, जेणे सेव्यां चरण भगवंतनां । २ ।

कड़बक— १३ (सुदामा का अपने ग्राम और गृह में पुनरागमन)

सुदामा ऋषि ने कहा (सोचा)—' मेरे द्वारा श्रीहरि के (अनन्त) गुणों के समुदाय के विषय में विचार करते-करते, ग्राम आ गया ' । उन्होंने (उसमें) सुवर्ण-भवन देखे । तो ऋषि सुदामा विचार करने लगे कि क्या मैं स्थान भूल गया हूँ ? । १ स्थान तो भूल गया हूँ । परन्तु यह निश्चय

एवुं विचारीने विप्र वळियो, नगरी अवलोकन करी,
एंधाणी सहु जोतो जोतो, आव्यो मंदिर फरी। ३ ।
सुदामोजी सांसे पड्या, विचार कीधो वेगळे रही,
आ भवन भारे कोणे कीधां ? पर्णकुटी मारी क्यां गई ? । ४ ।
ए विश्वकर्माए रची रचना, मनुष्य पामर शुं करे !
पण कुटुम्ब मारुं क्यां गयुं ? ऋषि वाम दक्षिण फेरा फेरे। ५ ।
कोकिल बोले, हस्ती डोले, हयशाळामां हय हणहणे,
दासी कनक-कलशे नीर लावे, ऊभा अनंत सेवक आंगणे । ६ ।
दुंदुभि वाजे ने ढोल गाजे, मांडवे नाटारंभ थाय छे,
मृदंग ढमके, घूघरी धमके, गीत गुणीजन गाय छे। ७ ।
जोई सुदामो निश्वास मूके, को छत्रपतिनां घर थयां,
आश्रम गयानुं दुःख नथी, पण बाळक मारां क्यां गयां ? । ८ ।
होमशाळा रुद्राक्षमाळा, पवित्र कुशनी सादडी,
विभूति मारी क्यां गई ? विपत सामटी ए पडी। ९ ।

ही मेरा ग्राम है। पर ये किन्हीं धनवान मनुष्यों के घर हैं। इन भवनों में वे (मनुष्य) निवास कर रहे होंगे, जिन्होंने भगवान के चरणों की सेवा की हो। २ ऐसा विचार करके वे विप्र सुदामा उस नगरी का अवलोकन करते हुए लौट पड़े। समस्त (परिचय--) चिह्नों को देखते-देखते वे फिर उन भवनों के पास आ गये। ३ सुदामाजी संशय में पड़ गये। उन्होंने दूर खड़े रहकर विचार किया। —ये सम्पन्न भवन (यहाँ) किसने निर्मित किये ? मेरी पर्णकुटी कहाँ गयी ? । ४ यह तो विश्वकर्मा (विधाता) द्वारा की हुई रचना (निर्माण, सृष्टि) है। पामर मनुष्य क्या कर सकता है ? पर मेरा परिवार कहाँ गया ? (ऐसा सोचते-सोचते) वे बायें-दायें चक्कर लगाने लगे। ५ (उन्होंने देखा कि वहाँ पर) कोकिल बोल रहे हैं; हाथी झूम रहे हैं; अश्वशाला के अन्दर घोड़े हिनहिना रहे हैं। दासियाँ स्वर्ण-कलशों में पानी ला रही हैं। आँगन में अनन्त सेवक खड़े हैं। ६ दुन्दुभी बज रही है और ढोल गड़गड़ा रहे हैं। मण्डप में नृत्य और गान हो रहा है। मृदंग धमक रहा है; घुँघरू खनक रहे हैं। गायक गुणीजन (कलाकार) गीत गा रहे हैं। ७ यह देखकर सुदामा ने साँस ली। (उन्हें लगा—) किसी छत्रपति (राजा) के (यहाँ पर) घर हो गये हैं। (मुझे अपने) आश्रम के (नष्ट हो) जाने का दुःख नहीं है। परन्तु मेरे बच्चे कहाँ गये ? । ८ होम-शाला, रुद्राक्ष-माला, कुश की पवित्र साथरी, मेरी विभूति (भस्म), कहाँ गये ? (मुझपर) ये (इतनी) विपत्तियाँ एक साथ (क्यों) आ पड़ीं। ९ दैव की

दैवनी गत गहन दीसे, पड्यो प्राण कर्माधीन,
कुटुंब-विजोगनी विटंबणा, हु दैवे दड्यो दीन। १०।
त्रुटी सरखी झूंपडी, ने लूंटी सरखी सुंदरी,
छळ्यां सरखां छोकरां, ते न मळ्यां मुजने फरी। ११।
संकल्प विकल्प कोटी करतो, आवागमन हींडोळे चढ्यो,
बारीए बेठां पंथ जोतां, निज कंथ स्त्री-दष्टे पड्यो। १२।
साहेली एक सहस्र साथे, सती जाय पतिने तेडवा,
जल-झारी ग्रही नारी जाये, जेम हस्तीनी कलश ढोळवा। १३।
हंसगामिनी हर्ष-पूरण, अभिलाष पूर्या मन तणा,
झमके झांझर, ठमके घूघर, वाजे अणवट बीछुवा। १४।
सुदामे जाणी आवी राणी, इंद्राणी वा रुक्मिणी,
सावित्री के सरस्वती के, शक्ति दीसे शिव तणी! । १५।
सर्वे साहेली वींटी वळी, पद्मिनी लागी पाय,
पूजा करी पालव ग्रह्यो, तव ऋषिजी नाठा जाय। १६।

गति गहन दिखायी दे रही है। प्राण तो कर्म के अधीन हो गये हैं। कुटुम्ब के वियोग की यह (कैसी) विडम्बना ? दैव ने मुझ दीन को दण्डित किया है। १० (मेरी वह) लगभग टूटी हुई झोंपड़ी और लूटी हुई (-सी दीन-हीन मेरी) वह सुन्दरी स्त्री, भयभीत-सदृश (मेरे) बच्चे— वे मुझे फिर से नहीं मिल रहे हैं। ११ वे कोटि (-कोटि) संकल्प-विकल्प करते रहे (क्या करें, क्या नहीं करें, इस सोच-विचार में पड़े रहे); घर के पास आने और फिर उससे दूर जाने के झूले पर चढ़ गये। (इतने में) खिड़की में बैठकर राह देखती हुई स्त्री को अपने पति दिखायी दिये। १२ तो एक सहस्र सहेलियों के साथ वह सती (स्त्री) अपने पति को बुलाने के लिए चली। पानी की झारी लेकर वह स्त्री चली, मानो कोई हथिनी (जल-भरे) कलश को उँड़ेलने चली जा रही हो। १३ वह हंस-गामिनी स्त्री हर्ष से परिपूर्ण थी। उसके मन की अभिलाषाएँ पूर्ण हो गयी थीं। झाँझर झनक रही थी। घुँघरू खनक रहे थे। अनवट और बिछुए बज रहे थे। १४ सुदामा ने समझा कि कोई रानी, इन्द्राणी वा रुक्मिणी आ रही है— सावित्री, सरस्वती अथवा यह शिवजी की शक्ति दिखायी दे रही है। १५ समस्त सहेलियों ने उन्हें घेर लिया, तो वह पद्मिनी (जाति की स्त्री सुदामा के) पाँव लगी। उसने पूजा करके उनके वस्त्र का छोर (उन्हें अन्दर ले जाने के हेतु) पकड़ा, तो ऋषि सुदामाजी भाग जाने लगे। १६ उन्हें सुध-बुध नहीं सुझायी दे रही थी।

सूध न सूझे, वपु ध्रूजे, छूटी जटा उघाडुं शीश,
हस्त ग्रहवा जाये स्त्री, तव ऋषि पाडे चीस। १७।
हुं तो सहेजे जोउं घर नवां, नथी मुजमां कपट विचार,
हुं वृद्ध ने तमो जुवान नारी, छे कठण लोकाचार! । १८।
भोगासक्त हुं नथी आव्यो, मने परमेश्वरनी आण,
जवा दो मने शोभा साथे, हजो तमने कल्याण। १९।
आ नगरमां को नरपति नथी, दीसे स्त्रीनुं राज,
पापणीओ, ईश्वर पूछशे, मने कां आणो छो वाज। २०।
ऋषिपत्नी कहे 'स्वामी मारा, रखे देता मने शाप,
दुःख दारिद्र गयां ने घर गयां, श्रीकृष्ण चरण प्रताप'। २१।
एवुं कही कर ग्रही लई चाली, सांभळो परीक्षित भूप
सुदामो पेठा पोळ मांहे, थयुं हरिना सरखुं रूप। २२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रूप बीजा कृष्ण जाणे, गई जरा जोबन आवियुं,
बेलडीए वळग्या दंपति, रति-काम जोडुं लजावियुं। २३।

उनका शरीर काँपने लगा। उनकी जटाएँ खुल गयीं और सिर खुल गया। (अनन्तर) जब वह स्त्री उनका हाथ पकड़ने के लिए (बढ़) गयी, तो ऋषि सुदामा चीख पड़े। १७ (वे बोले--) 'मैं तो यों ही नये-नये घरों को देख रहा था। मेरे मन में कोई कपट (भरा) विचार नहीं था। मैं वृद्ध हूँ और तुम युवा नारी हो। लोक-व्यवहार कठोर होता है। १८ मुझे परमेश्वर की सौगन्ध है— मैं भोगासक्त होकर (यहाँ) नहीं आया हूँ। मुझे शोभा (प्रतिष्ठा) के साथ जाने दो। तुम्हारा कल्याण हो जाए। १९ इस नगर में कोई नृपति (पुरुष राजा) नहीं है (क्या)? (यहाँ) स्त्रियों का राज्य दिखायी दे रहा है। हे पापिनियो, ईश्वर पूछेगा— तुम मुझे क्यों पीड़ा पहुँचा रही हो'। २० (यह सुनकर) ऋषि-पत्नी बोली— 'मेरे स्वामी, कदाचित, आप मुझे अभिशाप दे रहे हैं। दुःख-दरिद्रता गयी और यहाँ (नये) घर बन गये। यह तो श्रीकृष्ण के चरणों का प्रताप है'। २१ ऐसा कहते हुए वह (सुदामा का) हाथ थामकर उन्हें लेकर चली। शुकजी ने कहा— हे राजा परीक्षित, सुनिये। (तदनन्तर) सुदामा मुख्य द्वार के अन्दर प्रविष्ट हो गये, तो उनका रूप श्रीहरि का (-सा) हो गया। २२

रूप में वे मानो दूसरे कृष्ण हो गये। उनकी जरा (बुढ़ापा)

नष्ट हुई; और उनमें (नव) यौवन उत्पन्न हो आया। वे पति-पत्नी एक-दूसरे के साथ हो गये। उस जोड़ी ने रति और कामदेव को लज्जित कर दिया। २३

कडवुं १४ मुं—(आख्यान का उपसंहार)

राग धनाश्री

निज मंदिर सुदामो गया, तत्क्षण रूपे हरि सरखा थया,
दंपती राज-शोभाने भर्यां, श्रीहरिए दुःख दोह्यलां हर्यां। १।

ढाळ

दोहलां हर्यां ने सोह्यलां कर्यां, भाव माटे भूधरे,
एक मूठी तांदूले जे विभूति, ते लक्ष यज्ञे नव जडे। २।
वसन, वाहन, भवन, भोजन, भूषण, भव्य भंडार,
चमर आसन, छत्र विराजे, इन्द्रनो अधिकार। ३।
मेडी अटाळी, छजां, जाळी, झळके मीनाकारी काम,
स्फटिक-मणिए स्थंभ जडिया, कैलास सरखुं धाम। ४।
विश्वकर्मा भमे भूल्यो, जोई भवननो भाव,
माणेक मुक्ता रत्न हीरा, झवेर-जोत जडाव। ५।

कड़वक-- १४ (आख्यान का उपसंहार)

सुदामा अपने घर गये, तो वे तत्क्षण रूप में भगवान श्रीहरि के समान हो गये। वे दम्पती अर्थात पति-पत्नी राजशोभा (राजा-रानी की-सी रूप सम्पन्नता) से भरे-पूरे हो गये। श्रीहरि ने उनके दुःसह दुःखों का हरण किया। १ भू को धारण करनेवाले भगवान श्रीकृष्ण ने भक्ति-भाव के हेतु उनके दुःसह दुःखों को दूर कर दिया और जो सुख-सुविधाएँ उत्पन्न कर दीं, वे लाख यज्ञ करने पर भी नहीं मिल सकती थीं। २ इन्द्र का जैसा अधिकार है, अर्थात इन्द्र के लिए जो-जो योग्य हैं, वैसे वस्त्र, वाहन, भवन, भोजन (भोज्य-पदार्थ), आभूषण, भव्य भण्डार (धन-कोश), चमर, आसन और छत्र (सुदामा के यहाँ) विराजमान हो गये थे। ३ भवन के खण्डों (मंज़िलों), अटारियों, छज्जों, जालियों में मीनाकारी का काम झलक रहा था। उसके स्तम्भ स्फटिकों तथा रत्नों से जटित थे। वह मानो कैलास सदृश भवन था। ४ उस भवन की रचना को देखकर विश्वकर्मा

गोळी गोळा घडा गागर, छे कनकनां सौ पात्र,
सुदामाना वैभव आगळ, कुबेर ते कोण मात्र! । ६ ।
जाचकनां बहु जूथ आवे, निर्मुख को नव जाय,
जेने सुदामोजी दान आपे, लखपति ते थाय । ७ ।
ऋषि सुदामाना पुर विषे, न मळे दरिद्री कोय,
कोटी धजा घेर घेर बांधी, अकाल मृत्यु नव होय । ८ ।
जदपि वैभव इंद्रनो, पण ऋषि रहे उदास,
विषय राखे भोगनो, पण सदा पाळे संन्यास । ९ ।
वेदाध्ययन अग्निहोत्र होमे, राखे अंतर हरिनुं ध्यान,
माळा न मूके भक्ति न चूके, महा वैष्णव ऋषि भगवान । १० ।
जे सुदामाचरित्र सांभळे, तेनां दारिद्र दोह्यलां जाय,
जन्मदुःख वामे, मुक्ति पामे, मळे माधवराय । ११ ।

(विधाता) भ्रम में (मोहित होकर) भूल गये। मानिक, मोती, रत्न, हीरे, आदि जवाहरात की ज्योति (कान्ति) उसमें (मानो) जटित थी। ५ मटकियाँ, मटके, घड़े, गगरियाँ— सब पात्र सोने के थे। (वैभव में) सुदामा के वैभव के सामने वह कुबेर तो कौन रहा? (कुबेर कुछ नहीं था)। ६ (सुदामा के यहाँ) याचकों के बहुत समुदाय आ जाते, फिर भी उनमें से कोई विमुख होकर (दान न प्राप्त होकर) नहीं जाता था। सुदामाजी जिसे दान देते, वह लखपती हो जाता था। ७ सुदामा ऋषि के नगर में कोई भी दरिद्र नहीं मिलता था। घर-घर पर कोटि-कोटि ध्वजाएँ बाँधी हुई थीं (फहरायी गयी थीं)। किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती थी। ८ यद्यपि इन्द्र का (-सा) वैभव प्राप्त हुआ था, फिर भी सुदामा ऋषि (उसके उपभोग के विषय में) उदासीन (विरक्त) रहते थे। वे (अपने यहाँ) भोग (-विलास) के विषय (साधन-सामग्री) तो रखते थे; परन्तु वे सदा संन्यास-वृत्ति का पालन (निर्वाह) करते थे। ९ वे वेदों का अध्ययन करते रहते थे; अग्निहोत्र-हवन करते थे, अन्तःकरण में श्रीहरि का ध्यान रखते (करते) थे। वे (जाप की) माला (सुमिरनी) नहीं छोड़ते थे (उसे लेकर नित्य नाम-स्मरण करते थे)। भक्ति में चूकते नहीं थे। वे भाग्यवान महान वैष्णव ऋषि (सिद्ध) हो गये। १०

जो सुदामा का यह चरित्र पढ़ता है, उसकी दरिद्रता तथा दुःसह दुःख नष्ट हो जाते हैं। उसके जन्म (-मृत्यु) का दुःख नष्ट हो जाता है। वह मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। उसे माधवराज, अर्थात भगवान श्रीकृष्ण मिलते हैं (उसपर भगवान श्रीकृष्ण की कृपा हो जाती है)। ११

उपसंहार

छे वीरक्षेत्र वडोदरुं, गुजरात मध्ये गाम,
चतुर्विशी न्यात ब्राह्मण, कवि प्रेमानंद नाम। १२।
संवत सत्तर आडत्रीस वरसे, श्रावण सुदि निदान,
तिथि तृतीयाए भृगुवारे, पदबंधन कीधुं आख्यान। १३।
उदर निमित्त परदेश कीधो, सेव्युं नंदरबार,
नंदीपुरामां कथा कीधा, यथा बुद्धि अनुसार। १४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बुद्धिमाने कथा कीधी, करनारे लीला करा,
भट्ट प्रेमानंद नामे शीश, श्रोताजन बोलो जे हरि। १५।

उपसंहार

गुजरात में वीरक्षेत्र वडोदरा नामक ग्राम है। प्रेमानन्द नामक (इस 'सुदामा-चरित्र' का रचयिता) कवि जाति से चौबीसा ब्राह्मण है। १२ उसने विक्रम संवत् के सत्रह सौ अड़तीसवें वर्ष में श्रावण मास की शुद्ध (शुक्ल) तृतीया शुक्रवार को यह आख्यान पद्य-बद्ध किया। १३ उदर-भरण के निमित्त उसने परदेश में गमन किया, (महाराष्ट्र में स्थित) नन्दुरबार नामक ग्राम में निवास किया। उसने अपनी बुद्धि के अनुसार नन्दीपुरा में इस कथा की रचना की। १४

कर्ता (भगवान श्रीकृष्ण) ने (जो) लीला की, उसकी कथा की रचना (कवि ने) अपनी बुद्धि के अनुसार की है। कवि भट्ट प्रेमानन्द सिर नवाकर प्रणाम करता है (और कहता है)— हे श्रोताजनो, 'श्रीहरि की जय' बोलो। १५

॥ प्रेमानन्द-रसामृत (सुदामा चरित्र) समाप्त ॥

भुवनग्रन्थ-गाथा भुवन सन्त-वाणी
देवनागरी अक्षयवट
भारत
एशिया
पूर्व
पश्चिम
एशिया
अफ्रीका
यूरोप
अमेरिका
प्रशांत
महासागर
दक्षिण
एशिया
तथा
भाषा-सुमन-पल्लवित उपजा, भारत में तरु एक अनूप।
'देवनागरी-अक्षयवट' का देखो कैसा भव्य स्वरूप ॥
विश्व-वाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा ।
पहन नागरी-पट सबने अब भूतल भ्रमण विचारा ॥
भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ
प्रतिष्ठाता – पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी

ताज़ी विज्ञप्ति

प्रकाशित हो चुके हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण ग्रन्थः—

१ गुजराती—गिरधर रामायण (रचनाकाल-१८३५ ई०) हिन्दी अनुवाद,
नागरी लिप्यन्तरण पृष्ठ संख्या १४६० मूल्य ६०·००

२ ,, प्रेमानन्द रसामृत—
ना० लिप्य० हिन्दी अनुवाद पृ० संख्या ४९६ मूल्य ३५·००

३ मलयाळम—अध्यात्म रामायण (एळुत्तच्छन् कृत) १५वीं शती हिन्दी
अनुवाद, नागरी लिप्यन्तरण पृ०सं० ७५२ मू० ४०·००

४ ,, —महाभारत-एळुत्तच्छन् (१५वीं शती) पृ० १२१६ मू०६०·००

५ बँगला— कृत्तिवास रामायण (पाँचकाण्ड)—१५वीं शती।
हिन्दी पद्या० सहित नागरी लिप्य० पृ० ६२४ मू० २५·००

६ ,, कृत्तिवास लंकाकाण्ड— ,, गद्यानुवाद पृ० ४८८ मू० २५·००

७ ,, ,, उत्तरकाण्ड ,, ,, मूल्य २५·००

८ कश्मीरी—रामावतारचरित-प्रकाशराम कुर्यग्रामी कृत पृ०४८९ मू०२०·००

९ ,, ललद्यद—(नागरी) हिन्दी गद्य संस्कृत पद्यानु० पृ०१२० ,, १०·००

१० राजस्थानी—रुक्मिणी मंगल पदमभगत कृत। पृ० ३०० मू० १५·००

११ तमिळ— तिरुक्कुरळ्-तिरुवळ्ळुवर कृत। २००० वर्ष से अधिक प्राचीन;
नागरी लिप्यन्तरण, गद्य-पद्य हिन्दी अनुवाद, पृ०३५२मू०२०·००

१२ ,, कम्ब रामायण बालकाण्ड (९वीं शती) पृ०६५२ मूल्य ४०·००

१३ ,, ,, अयोध्या-अरण्य पृष्ठ १०२४ मूल्य ७०·००

१४ ,, ,, किष्किन्धा-सुन्दर ,, १०१६ मूल्य ७०·००

१५ ,, ,, युद्धकाण्ड पूर्वार्ध ,, १०१६ मूल्य ७०·००

१६ ,, ,, ,, उत्तरार्ध ,, ८४० मूल्य ७०·००

१७ कन्नड— रामचन्द्रचरित पुराणं, अभिनव पम्प विरचित (जैन-मतानुसार
रामचरित्र ११वीं शती) पृ० ६९० मूल्य ४०·००

१८ तेलुगु— मोल्ल रामायण (१४वीं शती) पृ० ४०० मूल्य २०·००

१९ ,, रंगनाथ रामायण (१३वीं शती) अनु. पृ. १३३५ मू० ६०·००

२० ,, श्री पोतन्न महाभागवतमु १-४ स्कन्धपृ० ८५६ मूल्य ७०·००

२१ ,, ,, ,, ५-९ ,, मूल्य ७०·००

२२ ,, ,, ,, १०-१२ स्कन्ध मूल्य ७०·००

२३ मराठी—श्रीरामविजय-श्रीधरकृत (१७वीं शती) पृ० १२२८ मू०६०·००

२४ ,, श्रीहरि-विजय (श्रीधर कृत) पृष्ठ १००४ मू० ७०·००

२५ फ़ारसी—सिर्रे अक्बर (दाराशिकोह कृत उपनिषद-व्या०) २८०मू०२०·००

२६ उर्दू— शरीफ़ज़ादः (मिर्ज़ा रुस्वा कृत) पृ० १३६ मूल्य ८·००

२७ ,, गुज़श्तः लखनऊ (मो० शरर) पृ० ३१६ मूल्य २०·००

२८ गुरमुखी—श्री गुरुग्रन्थ साहिब पहली सैंची पृ० ९६८ मूल्य ४०·००
२९ ,, ,, ,, दूसरी सैंची पृ० ९९२ मूल्य ५०·००
३० ,, ,, ,, तीसरी सैंची पृ० ९६४ मूल्य ५०·००
३१ ,, ,, ,, चौथी सैंची पृ० ८०० मूल्य ५०·००

३२ ,, श्री दसम गुरुग्रन्थ साहिब प्रथम सैंची पृ० ८२० मू० ५०·००
३३ ,, ,, ,, ,, दूसरी सैंची पृ० ७०४ मू० ५०·००
३४ ,, ,, ,, ,, यंत्रस्थ मूल्य ५०·००
३५ ,, ,, ,, ,, ,, मूल्य ५०·००
३६ ,, श्रीजपुजी सुखमनी साहब गुरमुखी पाठ तथा ख्वाजः दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानुवाद—दोनों नागरी लिपि में; पृ०१६४मू० १०·००
३७ ,, सुखमनी साहिब मूल गुटका नागरी लिपि। मूल्य ४·००
३८ सिन्धी— सामी, शाह, सचल की त्रिवेणी पृष्ठ ४१५ मू० २०·००
३९ नेपाली—भानुभक्त रामायण पृ० ३४४ मूल्य २०·००
४० असमिया—माधवकंदली रामायण (१४वीं शती) पृ० ९४३ ,, ६०·००
४१ ओड़िआ—बैदेहीश-बिळास उपेन्द्रभञ्ज (१८वीं शती) पृ०१०००,, ६०·००
४२ ,, तुलसी-रामचरितमानस—ओड़िआ लिपि में मूलपाठ तथा ओड़िआ गद्य-पद्य अनुवाद। पृ०सं० १४६४ मू० ६०·००

४३ संस्कृत—मानस-भारती रामचरितमानस-सहित संस्कृत पंक्ति-अनुपंक्ति पद्यानुवाद। पृ० ७४० मू० ५०·००
४४ ,, अद्भुत रामायण हिन्दी अनुवाद सहित पृ० २४४ मूल्य २०·००

प्रचारित प्रकाशन (ल.कि.घ.)

४५ अरबी क़ुर्आन शरीफ़ मूलपाठ अरबी तथा नागरी लिपि में तथा हिन्दी अनुवाद सहित पृ० १०२४ मू० ४६·००
४६ ,, ,, केवल मूल; अरबी, नागरी दोनों लिपि में पृ०५२०मू० २३·००
४७ ,, ,, केवल हिन्दी अनुवाद पृ० ५३० मूल्य २३·००
४८ ,, क़ौरानिक कोश (पठनक्रम) पृ० १९२ मूल्य १०·००
४९ ,, ज़ादे सफ़र (रियाज़ुस्सालिहीन) भाग १ पृ० ३३६ मू० १५·००
५० ,, तफ़्सीर माजिदी (पारः १ से ५) क़ुर्आन शरीफ़ अरबी व नागरी, दोनों में मूल पाठ, तथा स्व० मौलाना अब्दुल् माजिद दर्याबादी का अनुवाद एवं वृहत् भाष्य हिन्दी में पृ० ५१२ मूल्य ५०·००
५१ बहुभाषाई— 'वाणी सरोवर' त्रैमासिक पत्र वार्षिक मूल्य १५·००

प्राप्ति-स्थान— भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३